कृष्णदास संस्कृत सीरीज
२२२

***

श्रीवराहमिहिराचार्यविरचिता

बृहत्संहिता

'माया' नाम्नि हिन्दी व्याख्यया सहिता

सम्पादकोव्याख्याकारश्च
डॉ० सुरकान्त झा
ज्यौतिषशास्त्राचार्य
शिक्षाशास्त्री
चक्रवर्ती (Ph. D.)

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०६६, सन् २००९

ISBN : 978-81-218-0273-3

के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १११८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : (०५४२) २३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : (आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice@satyam.net.in

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
222
***

BṚHATSAṂHITĀ

OF

Varāhamihira

With
'Māyā' Hindi Commentary

By
Dr. Surkant Jha
Jyotishshastracharya
shikshashastri
Chakravarti (Ph.D.)

CHOWKHAMBA KRISHNADAS ACADEMY
VARANASI

Publisher : Chowkhamba Krishnadas Academy, Varanasi
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi

ISBN : 978-81-218-0273-3

Oriental Publishers & Distributors
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Post Box No. 1118, Varanasi- 221001
(INDIA)
Phone : (0542) 2335020

Also can be had from :
CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
Publishers and Oriental and Foreign Book-sellers
K . 37/99, Gopal Mandir Lane
At the North Gate of Gopal Mandir
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi- 221001 (India)
Phone { Office : (0542) 2333458
Resi. : (0542) 2334032, 2335020
Fax : 0542-2333458
e-mail : cssoffice@satyam.net.in

आमुख

मूर्त्तित्वे परिकल्पितश्शवभृतो वर्त्माऽपुनर्जन्मना ।
मात्मेत्यात्मविदां क्रतुश्च यजतां भर्त्तामरज्यौतिषाम् ।।
लोकानां प्रलयोद्भवस्थितिविभुश्चानेकधा यः श्रुतौ
वाचं नस्स ददात्वनेककिरणस्त्रैलोक्य दीपो रविः ।।

हमें प्रसन्नता है कि भारतीय त्रिस्कन्धात्मक ज्यौतिषशास्त्र के पौरुष ग्रन्थों के आचार्यों में प्रथम आचार्य 'वराहमिहिर' विरचित 'बृहत्संहिता', जो आज से लगभग १५०० वर्ष पूर्व रचा गया था, अपने नव कलेवर के साथ आपकी सेवा में प्रस्तुत है। यह ग्रन्थ अपने आदिकाल से ही ज्यौतिषशास्त्र के अनुरागिजनों का सदा प्रेम-प्यार प्राप्त करता रहा है। इस ग्रन्थ की यह विशेषता ही है। इसके सम्पूर्ण स्वरूप दर्शन से यह भी समझ आता है कि इस एक ही ग्रन्थ में ज्यौतिषशास्त्र के तीनों स्कन्धों अर्थात् सिद्धान्त, संहिता और होरा का समावेश-सा कर दिया गया है। ऐसे इसमें तात्कालिक ग्रहचारवश सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि के कारणों का सम्यक् प्रतिपादन तो हुआ ही है, सार्वभौम शुभाशुभ फलों को प्रस्तुत करने में पूर्णतया सक्षम ग्रन्थ भी है, साथ-ही स्वर, मुहूर्त्त, शकुन, पुरुष, स्त्री, गज, तुरग, रत्न, प्रतिमा, वास्तु, प्रासाद के लक्षणों आदि अनेक विषयों का प्रतिपादक ग्रन्थ भी है। कालभेदत्रयीगत तथा इह लौकिक और पारलौकिक समस्त समस्याओं से निजात दिलाने वाला और मुक्तिमार्ग प्रदर्शक ग्रन्थ है। अतः इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ अपने अनुरागिजनों के लिए आगे भी उतना ही उपादेयी रहेगा, जितना यह अपने आदि काल से अब तक रहा है।

प्रस्तुत ग्रन्थ 'बृहत्संहिता' 'माया' नामक हिन्दी व्याख्या के सहित अपने नवजात कलेवर के साथ ज्यौतिषशास्त्रीय प्रायशः सम्पूर्ण विषयों और फलादेशकारक सामग्रियों को लेकर आपकी सेवा में आपके सम्मुख उपस्थित है। इस ग्रन्थ को ज्यौतिष के व्यावहारिक व अनिवार्य विषयों के संक्षिप्त ज्ञानकोश के रूप में ही देखा जाना चाहिए। ज्यौतिष शास्त्र का आद्यन्त परिचयात्मक और ओजपूर्ण गम्भीर विषयों के साथ संसार के प्रायशः विषयों का ज्ञान तथा उपयोगी महत्त्वपूर्ण सामग्री को प्रस्तुत ग्रन्थ में सरल व सहज विवेचन के साथ प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रन्थ को मुख्यतः विषय-वार क्रम से दो भागों और १०७ अध्यायों में विभाजित किया गया है। जिनके अध्यायों का क्रम इस प्रकार है—

१. शास्त्रोपनयननिरूपणम्
२. साम्वत्सरसूत्रविचारः
३. आदित्यचारविचारः
४. चन्द्रचारविचारः
५. राहुचारविचारः
६. भौमचारविचारः
७. बुधचार विचारः
८. बृहस्पतिचारविचारः
९. शुक्रचारविचारः
१०. शनैश्चरचार विचारः
११. केतुचार विचारः
१२. अगस्त्यचार विचारः
१३. सप्तर्षिचाराः
१४. नक्षत्रकूर्म निरूपणम्
१५. नक्षत्रव्यूह विचारः
१६. ग्रहभक्तियोगविचारः
१७. ग्रहयुद्ध निरूपणम्
१८. शशि-ग्रह समागम विचारः
१९. ग्रहवर्षफल विचारः
२०. ग्रहशृङ्गाटक विचारः
२१. गर्भलक्षणविचारः
२२. गर्भधारण निरूपणम्
२३. प्रवर्षणनिरूपणम्
२४. रोहिणी योग विचारः
२५. स्वातीयोग विचारः
२६. आषाढ़ीयोग विचारः
२७. वातचक्र विचारः
२८. सद्योवर्षण विचारः
२९. कुसुमलता विचारः
३०. सन्ध्यालक्षण निरूपणम्
३१. दिग्दाहलक्षण विचारः
३२. भूकम्पलक्षणविचारः
३३. उल्कालक्षण विचारः
३४. परिवेशलक्षण विचारः
३५. इन्द्रायुधलक्षण विचारः
३६. गन्धर्वनगरलक्षण विचारः
३७. प्रतिसूर्यलक्षण विचारः
३८. रजोलक्षण विचारः
३९. निर्घातलक्षण विचारः
४०. सस्य जातक निरूपणम्
४१. द्रव्यनिश्चय विचारः
४२. अर्घकाण्ड निरूपणम्
४३. इन्द्रध्वजसम्पद् विचारः
४४. नीराजन निरूपणम्
४५. खञ्जनकलक्षण विचारः
४६. उत्पात विचारः
४७. मयूरचित्रक निरूपणम्
४८. पुष्यस्नान निरूपणम्
४९. पट्टलक्षण विचारः
५०. खड्गलक्षण विचारः
५१. अङ्गविद्या विचारः
५२. पिटकलक्षण निरूपणम्
५३. वास्तुविद्याविचारः
५४. दकार्गलनिरूपणम्
५५. वृक्षायुर्वेदविचारः
५६. प्रासादलक्षणविचारः
५७. वज्रलेपलक्षणविचारः
५८. प्रतिमालक्षणविचारः
५९. वनसम्प्रवेशनविचारः
६०. प्रतिमाप्रतिष्ठापनविचारः
६१. गोलक्षणविचारः
६२. श्वलक्षणविचारः
६३. कुक्कुटलक्षणविचारः
६४. कूर्मलक्षणविचारः

६५. छागलक्षणविचार:
६६. अश्वलक्षणविचार:
६७. हस्तिलक्षणविचार:
६८. पुरुषलक्षणविचार:
६९. पञ्चमहापुरुषलक्षणविचार:
७०. स्त्रीलक्षणविचार:
७१. वस्त्रच्छेदलक्षणविचार:
७२. चामरलक्षणविचार:
७३. छत्रलक्षणविचार:
७४. स्त्रीप्रशंसा कथनम्
७५. सौभाग्यकरणनिरूपणम्
७६. कान्दर्पिकविचार:
७७. गन्धयुक्ति विचार:
७८. स्त्रीपुँससमायोगविचार:
७९. शय्यासनलक्षणविचार:
८०. रत्नपरीक्षानिरूपणम्
८१. मुक्तालक्षणनिरूपणम्
८२. पद्मरागलक्षणनिरूपणम्
८३. मरकतलक्षणनिरूपणम्
८४. दीपलक्षणविचार:
८५. दन्तकाष्ठलक्षणविचार:
८६. शाकुने-मिश्रफलविचार:
८७. शाकुने-अन्तरचक्रविचार:
८८. शाकुने-विरुतनिरूपणम्
८९. शाकुने-श्वचक्रनिरूपणम्
९०. शाकुने-शिवारुतनिरूपणम्
९१. शाकुने-मृगचेष्टानिरूपणम्
९२. शाकुने-गवेङ्गितनिरूपणम्
९३. शाकुने-अश्वेङ्गितनिरूपणम्
९४. शाकुने-हस्तीङ्गितनिरूपणम्
९५. शाकुने-वायसविरुतनिरूपणम्
९६. शाकुनोत्तरविचार:
९७. पाकविचार:
९८. नक्षत्रकर्मगुणविचार:
९९. तिथिकर्मगुण विचार:
१००. करणकर्मगुणविचार:
१०१. नक्षत्रजातकविचार:
१०२. राशिविभागविचार:
१०३. विवाहपटलविचार:
१०४. ग्रहगोचरविचार:
१०५. रूपसत्रनिरूपणम्
१०६. उपसंहारकथनम्
१०७. शास्त्रानुक्रणीविचार:

उपरोक्त प्राचीनतम भारतीय ज्यौतिष से सम्बन्धित विषयों पर समसामयिक अपेक्षाओं के अनुकूल तो यह ग्रन्थ है ही, संभी वर्ग या सभी स्तर के जन के दैनन्दिनी में अभिन्न सहायक के रूप में भी अधिकतर उपादेयी सिद्ध हो, इसका ध्यान अनिवार्य रूप में रखा गया है। यह ग्रन्थ ज्यौतिषशास्त्र की आलोचनाओं को अपना धर्म मानने वाले महानुभावों के ज्ञान चक्षु को भी समुद्वेलित सतेज कर सके इसका भरसक प्रयत्न किया गया है। इस ग्रन्थ से पाठक निश्चय ही अपने प्राचीनतम ज्योतिर्विज्ञान और उसके प्रमुख लोक जीवन गत विशिष्ट व आवश्यक विषयों से आद्यन्त परिचित होने में सफल तो होंगे ही, उनकी भारतीय होने की गर्वोक्ति पूर्ण भावना और भी सम्पुष्ट होती हुई

काल भेदत्रयी (भूत-वर्तमान-भविष्यत्) के अनुभूत व अकाट्य सिद्धान्तों को भी वे अधिगत कर लाभान्वित हो सकेंगे। इस तरह सर्वतोभावेन आपकी सेवा में यह ग्रन्थरत्न वृहत्संहिता आपको उपलब्ध हो रहा है।

इस ग्रन्थ को आकार प्रदान करने की आवश्यकता उपरोक्त लक्ष्य की सिद्धि तो रहा ही है, साथ ही सामान्यजन के लिए सर्वतोभावेन जीवन के हर पहलु को ध्यान में रखकर उनका मार्गदर्शन करने में कार्य साधक और योग्य सामग्रियों से युक्त कम मूल्य पर उच्चस्तरीय अन्य ग्रन्थ का उपलब्ध न होना भी रहा है। ज्यौतिष का संहितास्कन्ध और उनके सभी आनुषाङ्गिक विषय भी प्राचीन भारतीय अलभ्य विज्ञान है, या नहीं? इस तथाकथित बहस को भी विराम लग सके, इस ग्रन्थ के रूप में एक प्रयासमात्र है। प्राय: ज्योतिर्विज्ञान विषय के रूप में ज्यौतिषशास्त्र विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम (सिलेवस) में सम्मिलित है। यह ग्रन्थ सम्बन्धित संस्थाओं के छात्रों के लिए भी उपादेयी हो, भरसक प्रयास किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ यदि सभी वर्ग या स्तर के पाठकों को कुछ भी मार्गदर्शक के रूप में सहायक सिद्ध हुआ तो हमारा प्रयास सार्थक तो होगा ही, साथ ही हम अपने को धन्य समझेंगे।

अन्त में यह कि ग्रन्थ प्रलेखनादि व प्रूफादिशोधन के समय जिन महानुभावों का मुझे सहयोग प्राप्त हुआ और जिनके ग्रन्थ या पाण्डुलिपियों से सहयोग मिला उन लोगों का हृदय से आभार व्यक्त करना मैं अपना पुनीत कर्त्तव्य समझता हूँ। विशेषकर चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी के व्यवस्थापक महोदय का मैं मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करता हूँ, जिनके सत्प्रयास से ही यह ग्रन्थ आप विज्ञजनों की सेवा में प्रस्तुत हो सका है। इस ग्रन्थ के विभिन्न उपक्रमों में लम्बे समय तक व्यस्त रहने के बाद भी अपने समस्त कुटुम्बजनों का जो मुझे ज्ञाताज्ञात सहयोग मिलता रहा, उसके लिए मैं किन शब्दों-व्यवहारों से उनकी कृतज्ञता ज्ञापन करूँ, विचार करने या सोचने में अपने को असमर्थ पाता हूँ।

वैसे मैंने ग्रन्थ के प्रूफादि शोधन करने में निश्चय ही प्रमाद रहित प्रयास किया है। फिरभी यदि कहीं अशुद्धि रह गई हो, तो गलती करना मानवस्वभाव मान कर विद्वान् पाठक उसे सुधार कर पढ़ेगें और सूचित भी करेंगे, तो बड़ी कृपा होगी।

सधन्यवाद !

कृष्ण जन्माष्टमी-२०६५
युगाब्द-५१०८
वाराणसी

सुधीजन कृपाकांक्षी
सुरकान्त झा

□□□

बृहत्संहिता
ग्रन्थाध्यायपृष्ठश्लोकसंख्यानुक्रमणिका

	अध्याय	पृष्ठ संख्या	कुल श्लोक संख्या
१.	शास्त्रोपनयननिरूपणम्	१-३	११
२.	साम्वत्सरसूत्रविचार:	४-१४	३९
३.	आदित्यचारविचार:	१५-२३	४०
४.	चन्द्रचारविचार:	२४-३१	३२
५.	राहुचारविचार:	३२-५३	९८
६.	भौमचारविचार:	५४-५६	१३
७.	बुधचार विचार:	५७-६१	२०
८.	बृहस्पतिचारविचार:	६२-७३	५३
९.	शुक्रचारविचार:	७४-८५	४५
१०.	शनैश्चरचार विचार:	८६-९०	२१
११.	केतुचार विचार:	९१-१०३	६२
१२.	अगस्त्यचार विचार:	१०४-१०९	२२
१३.	सप्तर्षिचारा:	११०-११२	११
१४.	नक्षत्रकूर्म निरूपणम्	११३-११७	३३
१५.	नक्षत्रव्यूह विचार:	११८-१२४	३२
१६.	ग्रहभक्तियोगविचार:	१२५-१३०	४२
१७.	ग्रहयुद्ध निरूपणम्	१३१-१३६	२७
१८.	शशि-ग्रह समागम विचार:	१३७-१३९	८
१९.	ग्रहवर्षफल विचार:	१४०-१४५	२२
२०.	ग्रहशृङ्गाटक विचार:	१४६-१४७	९
२१.	गर्भलक्षणविचार:	१४८-१५५	३७
२२.	गर्भधारण निरूपणम्	१५६-१५७	८
२३.	प्रवर्षणनिरूपणम्	१५८-१६०	१०
२४.	रोहिणी योग विचार:	१६१-१६९	३६
२५.	स्वातीयोग विचार:	१७०-१७१	६
२६.	आषाढ़ीयोग विचार:	१७२-१७५	१५

अध्याय	पृष्ठ संख्या	कुल श्लोक संख्या
२७. वातचक्र विचार:	१७६-१७९	११
२८. सद्योवर्षण विचार:	१८०-१८५	२४
२९. कुसुमलता विचार:	१८६-१८८	१४
३०. सन्ध्यालक्षण निरूपणम्	१८९-१९५	३३
३१. दिग्दाहलक्षण विचार:	१९६-१९७	५
३२. भूकम्पलक्षणविचार:	१९८-२०३	३२
३३. उल्कालक्षण विचार:	२०४-२१०	३०
३४. परिवेशलक्षण विचार:	२११-२१५	२३
३५. इन्द्रायुधलक्षण विचार:	२१६-२१७	८
३६. गन्धर्वनगरलक्षण विचार:	२१८-२१९	५
३७. प्रतिसूर्यलक्षण विचार:	२२०	३
३८. रजोलक्षण विचार:	२२१-२२२	८
३९. निर्घातलक्षण विचार:	२२३-२२४	५
४०. सस्य जातक निरूपणम्	२२५-२२८	१४
४१. द्रव्यनिश्चय विचार:	२२९-२३१	१३
४२. अर्घकाण्ड निरूपणम्	२३२-२३४	१४
४३. इन्द्रध्वजसम्पद् विचार:	२३५-२४७	६८
४४. नीराजन निरूपणम्	२४८-२५२	२८
४५. खञ्जनकलक्षण विचार:	२५३-२५६	१६
४६. उत्पात विचार:	२५७-२७५	९९
४७. मयूरचित्रक निरूपणम्	२७६-२८२	२८
४८. पुष्यस्नान निरूपणम्	२८३-२९६	८७
४९. पट्टलक्षण विचार:	२९७-२९८	८
५०. खड्गलक्षण विचार:	२९९-३०४	२६
५१. अङ्गविद्या विचार:	३०५-३१५	४४
५२. पिटकलक्षण निरूपणम्	३१६-३१८	१०
५३. वास्तुविद्याविचार:	३१९-३५४	१२३
५४. दकार्गलनिरूपणम्	३५५-३८२	१२५
५५. वृक्षायुर्वेदविचार:	३८३-३८८	३१
५६. प्रासादलक्षणविचार:	३८९-३९५	३१
५७. वज्रलेपलक्षणविचार:	३९६-३९७	८

अध्याय	पृष्ठ संख्या	कुल श्लोक संख्या
५८. प्रतिमालक्षणविचार:	३९८-४०९	५८
५९. वनसम्प्रवेशनाविचार:	४१०-४१२	१४
६०. प्रतिमाप्रतिष्ठापनविचार:	४१३-४१७	२२
६१. गोलक्षणविचार:	४१८-४२१	१९
६२. श्वलक्षणविचार:	४२२	२
६३. कुक्कुटलक्षणविचार:	४२३	३
६४. कूर्मलक्षणविचार:	४२४	३
६५. छागलक्षणविचार:	४२५-४२७	११
६६. अश्वलक्षणविचार:	४२८-४३०	५
६७. हस्तिलक्षणविचार:	४३१-४३३	१०
६८. पुरुषलक्षणविचार:	४३४-४५८	११६
७९. पञ्चमहापुरुषलक्षणविचार:	४५९-४६८	४०
७०. स्त्रीलक्षणविचार:	४६९-४७५	२६
७१. वस्त्रच्छेदलक्षणविचार:	४७६-४७८	१४
७२. चामरलक्षणविचार:	४७९-४८०	६
७३. छत्रलक्षणविचार:	४८१-४८२	६
७४. स्त्रीप्रशंसा कथनम्	४८३-४८७	२०
७५. सौभाग्यकरणनिरूपणम्	४८८-४९०	१०
७६. कान्दर्पिकविचार:	४९१-४९४	१२
७७. गन्धयुक्ति विचार:	४९५-५०३	३७
७८. स्त्रीपुँससमायोगविचार:	५०४-५०९	२६
७९. शय्यासनलक्षणविचार:	५१०-५१७	३९
८०. रत्नपरीक्षानिरूपणम्	५१८-५२१	१८
८१. मुक्तालक्षणनिरूपणम्	५२२-५२८	३६
८२. पद्मरागलक्षणनिरूपणम्	५२९-५३०	११
८३. मरकतलक्षणनिरूपणम्	५३१	१
८४. दीपलक्षणविचार:	५३२	२
८५. दन्तकाष्ठलक्षणविचार:	५३३-५३५	९
८६. शाकुने-मिश्रफलविचार:	५३६-५४५	८०
८७. शाकुने-अन्तरचक्रविचार:	५४६-५६५	४५
८८. शाकुने-विरुतनिरूपणम्	५६६-५७५	४७
८९. शाकुने-श्वचक्रनिरूपणम्	५७६-५८१	२०

अध्याय	पृष्ठ संख्या	कुल श्लोक संख्या
९०. शाकुने-शिवारुतनिरूपणम्	५८२-५८५	१५
९१. शाकुने-मृगचेष्टानिरूपणम्	५८६	३
९२. शाकुने-गवेङ्गितनिरूपणम्	५८७	३
९३. शाकुने-अश्वेङ्गितनिरूपणम्	५८८-५९१	१५
९४. शाकुने-हस्तीङ्गितनिरूपणम्	५९२-५९५	१४
९५. शाकुने-वायसविरुतनिरूपणम्	५९६-६१०	६२
९६. शाकुनोत्तरविचारः	६११-६२६	१७
९७. पाकविचारः	६२७-६३०	१७
९८. नक्षत्रकर्मगुणविचारः	६३१-६३५	१७
९९. तिथिकर्मगुण विचारः	६३६-६३७	३
१००. करणकर्मगुणविचारः	६३८-६४१	८
१०१. नक्षत्रजातकविचारः	६४२-६४५	१४
१०२. राशिविभागविचारः	६४६-६४७	७
१०३. विवाहपटलविचारः	६४८-६५१	१३
१०४. ग्रहगोचरविचारः	६५२-६७०	६४
१०५. रूपसत्रनिरूपणम्	६७१-६७३	१६
१०६. उपसंहारकथनम्	६७४-६७५	६
१०७. शास्त्रानुक्रणीविचारः	६७६-६७८	१४
इस ग्रन्थ के १०७ अध्यायों में कुल श्लोकों की संख्या =		२८०३

□□□

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठांक
शास्त्रोपनयननिरूपणम्–१	१ - ३
मंगलाचरण कथन	१
ग्रन्थ का प्रयोजन	१
अपौरुष और पौरुष ग्रन्थ की साम्यता कथन	१
पुन: दोनों में साम्यता प्रदर्शन के उदाहरण	१
स्वग्रन्थ की विशेषता कथन	२
जगद् उत्पत्ति कथन	२
जगद्-उत्पत्तिवाद कथन	२
उत्पत्तिवाद कथन पूर्वक ग्रन्थ रचना उद्देश्य दर्शन	२
ज्यौतिषशास्त्रस्वरूप दर्शनपूर्वक उसके भेद कथन	३
स्वकृत ग्रन्थ परिचय कथन	३
प्रस्तुत ग्रन्थ प्रशंसा कथन	३
साम्वत्सरसूत्रविचार:–२	४ - १४
ज्योतिष (दैवज्ञ) लक्षण	४
ज्योतिष गुण कथन	४
ज्योतिषों के अन्य लक्षण	५
और भी दैवज्ञ लक्षण कथन	५
और भी दैवज्ञ लक्षण कथन	५
दैवज्ञों के अन्य लक्षण	५
दैवज्ञ लक्षण में और कथन	५
और भी दैवज्ञ लक्षण कथन	६
दैवज्ञ के अन्य लक्षण	६
और भी दैवज्ञ लक्षण कथन	६
और भी दैवज्ञ लक्षण कथन	६
गर्गोक्त दैवज्ञ लक्षण कथन	७
अयोग्य दैवज्ञ लक्षण कथन	७

ज्योतिष वाक् प्रशंसा	७
विष्णुगुप्तोक्त ज्योतिषशास्त्र की प्रशंसा	७
होराशास्त्र पदार्थ निरूपण	७
यात्रा प्रकार वर्णन	८
आचार्य कथन में दैवज्ञ प्रशंसा	८
संहिताशास्त्र की प्रशंसा	९
संहिता पदार्थ निरूपण	९
महर्षि गर्गोक्त दैवज्ञ महात्म्य	१०
दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक कथन	१०
और भी दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शन	११
पुनः दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक कथन	११
पुनः भी दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक कथन	११
दैवज्ञों की और भी महत्त्वप्रदर्शक कथन	११
दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक और कथन	११
पूजित और पंक्तिपावन दैवज्ञ कथन	११
ज्योतिषशास्त्र व ज्योतिष की प्रशंसा	१२
अप्रष्टव्यजन कथन	१२
नक्षत्रसूचक जन कथन	१२
नक्षत्रसूचक की आलोचना	१२
पुनः नक्षत्रसूचक की आलोचना	१२
अज्ञानी ज्यौतिष का त्याग कथन	१३
राजा योग्य ज्योतिष के लक्षण कथन	१३
दैवज्ञ प्रशंसा कथन	१३
तिथि, नक्षत्र आदि के सम्वाद श्रवण फल	१३
यशस्वी दैवज्ञ की प्रशंसा	१४
आदित्यचारविचारः—३	१५-२३
प्रथम अन्य मत से अयन लक्षण कथन	१५
ग्रन्थकार का स्वमत स्थापन कथन	१५
अयन परीक्षण विधि कथन	१५
विकृत सूर्य के अयनगत फलकथन	१५
अतिक्रमित अयनगत सूर्य फल कथन	१६

त्वष्टा नामक ग्रह से आच्छादित सूर्य का अशुभ फल	१६
तामस-कीलक आदि नाम के केतु से आच्छादित सूर्य का फल	१६
तामस-कीलकादि के शुभाशुभ फल	१६
तामस-कीलक आदि के उदय होने का निमित्त	१७
उपरोक्त उत्पातों का निष्फलत्व कथन	१७
केतु आदि दर्शन के शुभाशुभ फल	१७
केतुओं की आकृतिवश फल कथन	१८
केतुओं के और फल कथन	१८
पुन: केतुओं के फल कथन	१८
केतुओं के विशेष फल कथन	१९
सूर्य की रश्मि अनुसार शुभाशुभ फल कथन	१९
सूर्य का ऋतुवर्णवश शुभ फल कथन	१९
पुन: सूर्य का ऋतुवर्णवश फल कथन	२०
सूर्य का ऋतुवश अशुभ वर्ण कथन	२०
सूर्य का ऋतुवश और फल कथन	२०
सूर्य सम्बन्धी अन्य फल कथन	२०
सूर्य सम्बन्धी अन्य और फल कथन	२१
सूर्य सम्बन्धी अन्य और भी फल कथन	२१
सूर्य सम्बन्धी और अन्य फल कथन	२१
सूर्य सम्बन्धी और अन्य फल कथन	२१
सूर्य सम्बन्धी और फल कथन	२२
सूर्य का सन्ध्या के समय शुभाशुभ फल कथन	२२
अर्क से आक्रान्त नक्षत्र का सन्ताप शोधन कथन	२२
प्रतिसूर्य का फल कथन	२२
सूर्य सम्बन्धी अन्य और फल कथन	२२
सूर्य सम्बन्धी शुभफल कथन	२३
चन्द्रचारविचार:—४	**२४-३१**
चन्द्रमा के कृष्ण और शुक्ल भाग का विचार	२४
चन्द्र के स्वप्रकाशाभाव का विचार	२४
चन्द्र के पश्चिम दिग् भाग से शुक्ल वृद्धि विचार	२४
प्रतिदिन चन्द्र गोल में शुक्ल वृद्धि विचार	२४

चन्द्र का नक्षत्र गमन से शुभाशुभ फल कथन २५
चन्द्र का नक्षत्र गमन से और शुभाशुभफल कथन २५
चन्द्र का नक्षत्रों के साथ योग विचार २५
चन्द्र शृङ्ग के दशसंस्थानों में से नौका संस्थान का सफल कथन २६
लाङ्गल संस्थान का सफल कथन २६
दुष्टलाङ्गलसंस्थान का सफल कथन २६
समदण्ड संस्थान का सफल कथन २६
कार्मुक तथा युग संस्थान का सफल कथन २६
पार्श्वशायी संस्थान का सफल कथन २७
आवर्जित संस्थान का सफल कथन २७
कुण्ड संज्ञक संस्थान का सफल कथन २७
चन्द्र सम्बन्धि सामान्य फल कथन २७
और भी चन्द्र के सामान्य फल कथन २८
चन्द्र स्वरूप फल कथन २८
भौमादि ग्रहों से ताडित चन्द्रशृङ्ग फल कथन २८
शुक्र से ताडित चन्द्र बिम्ब फल कथन २९
गुरु से ताडित चन्द्रबिम्ब फल कथन २९
कुज से ताडित चन्द्रबिम्ब फल कथन २९
शनि वेधित चन्द्रबिम्ब फल कथन ३०
बुध वेधित चन्द्रबिम्ब फल कथन ३०
केतु से विद्ध चन्द्रबिम्ब फल कथन ३०
ग्रहणकाल में उल्काहत चन्द्र फल कथन ३०
चन्द्र का वर्णलक्षण कथन ३०
चन्द्र का अन्य शुभलक्षण कथन ३१
पक्ष वृद्धि वा हानि वा समता शुभाशुभ विचार ३१
चन्द्र सम्बन्धी अन्य फल कथन ३१

राहुचारविचारः—५ ३२-५३

राहु का ग्रहत्व प्रतिपादन में मतान्तर प्रदर्शन ३२
फिर भी राहु आकाश में अन्य ग्रह के सृदश क्यों दिखता नहीं? का कथन ३२
राहु सम्बन्धी अन्य मत कथन ३२
राहु सम्बन्धी अन्य मतों में दोष कथन ३२

राहु सम्बन्धी अपरोक्त मतो मे अन्य दोष कथन ३३
उपरोक्त मतान्तरो मे और दोष कथन ३३
राहु को दो मानने वालो के मत मे दोष कथन ३३
स्वसिद्धान्त प्रतिपादनपूर्वक स्पर्श नियम कथन ३३
रात्रि मे भुच्छाया कहाँ होती है, का प्रतिपादनार्थ कथन ३४
प्रत्येक मास के पूर्णिमा को चन्द्रग्रहण असम्भव कथन ३४
ग्रहण में समानता व असमानता कथन ३४
अर्द्धग्रस्त चन्द्र की कुण्डविषाणता और सूर्य की तीक्ष्ण विषाणता में कारण ३४
सूर्य व चन्द्र ग्रहणों में राहु कारण नहीं का ज्ञानार्थ कथन ३४
लोक श्रुति स्मृतिसंहिता आदि के मत का समाधान ३५
गर्गादि कथित उत्पात से ग्रहण ज्ञान स्पष्टीकरण ३५
अन्यत्र कथित ग्रहण प्रसङ्ग के दोष कथन ३५
ग्रहण में ग्रास प्रमाण, दिशा और वेला ज्ञान कथन ३५
कल्पादि से सप्तपर्व देवता कथन ३६
सप्त पर्व देवता फल कथन ३६
वेलाहीन व अतिवेल पर्व फल कथन ३७
यहाँ तक मैने पूर्वशास्त्रानुसार कहा है— ३७
एक मास में होने वाले चन्द्र व सूर्य ग्रहण का फल ३७
ग्रस्तोदयास्त चन्द्र व सूर्य फल कथन ३७
उदय से अस्त पर्यन्त ग्रस्त चन्द्र और सूर्य के सात प्रकार के फल ३८
अयन और दिशा से ग्रहण फल कथन ३९
मेषादि राशियों में ग्रस्त सूर्य चन्द्र का फल; उनमें मेषराशिगत फल कथन ३९
वृषराशिगत सूर्य चन्द्र ग्रहण फल कथन ३९
मिथुन राशिगत सूर्य-चन्द्र ग्रहण फल कथन ४०
कर्क राशिगत चन्द्र सूर्य ग्रहण फल कथन ४०
सिंह कन्या राशिगत सूर्य चन्द्र ग्रहण फल कथन ४०
तुला-वृश्चिक राशिगत सूर्य चन्द्र ग्रहण फल कथन ४०
धनु-मकर राशिगत सूर्य-चन्द्र ग्रहण फल कथन ४१
कुम्भ-मीन राशिगत सूर्य-चन्द्र ग्रहण फल कथन ४१
ग्रहण के दश ग्रास प्रकार कथन ४१
सूर्य व चन्द्र के सव्यापसव्य ग्रास का सफल कथन ४२

सूर्य चन्द्र के लेहसंज्ञक ग्रास के सफल कथन	४२
सूर्य चन्द्र के ग्रसन संज्ञक ग्रास का सफल कथन	४२
सूर्य चन्द्र के निरोध संज्ञक ग्रास का सफल कथन	४२
सूर्य चन्द्र के अवमर्द संज्ञक ग्रास का सफल कथन	४२
सूर्य चन्द्र के आरोह ग्रास का सफल कथन	४३
सूर्य चन्द्र के आघ्रात संज्ञक ग्रास का सफल कथन	४३
सूर्य के मध्यतम संज्ञक ग्रास का सफल कथन	४३
सूर्य चन्द्र के तमोऽन्त्य ग्रास का सफल कथन	४३
ग्रहण सामयिक राहु के वर्ण फल कथन	४४
ग्रहण के समय सूर्य चन्द्र पर ग्रह दृष्टि फल कथन	४५
शुभ दृष्ट ग्रस्त सूर्य-चन्द्र की प्रशंसा	४५
ग्रहणकालिक दृष्ट उत्पातों से अन्य ग्रहण ज्ञान	४५
ग्रस्त पञ्चतारा ग्रहफल में प्रथम ग्रस्त कुज फल कथन	४५
ग्रस्त बुध फल कथन	४६
ग्रस्त बृहस्पति फल कथन	४६
ग्रस्त शुक्र फल कथन	४६
ग्रस्त शनैश्चर फल कथन	४६
मासफल कथन के उद्देश्य से कार्त्तिक मास का फल कथन	४६
मार्गशीर्ष मास का फल कथन	४७
पौषमास का फल कथन	४७
माघ मास फल कथन	४७
फाल्गुन मास फल कथन	४८
चैत्र मास फल कथन	४८
वैशाख मास फल कथन	४८
ज्येष्ठ फल कथन	४८
आषाढ़ मास का फल	४९
श्रावण मास का फल	४९
भाद्रपद् मास़ का फल कथन	४९
आश्विन मास का फल कथन	४९
सूर्यचन्द्र के दश प्रकार के मोक्ष का नाम	५०
मोक्ष के दक्षिण हनु प्रकार का सफल कथन	५०

मोक्ष के वामहनु प्रकार का सफल कथन ५०
मोक्ष के दक्षिण कुक्षि प्रकार का सफल कथन ५०
मोक्ष के बायीं कुक्षि प्रकार का सफल कथन ५१
मोक्ष के दायीं पायु प्रकार का सफल कथन ५१
मोक्ष के सञ्छर्दन प्रकार का सफल कथन ५१
मोक्ष के जरण प्रकार का सफल कथन ५१
मोक्ष के मध्य विदरण प्रकार का सफल कथन ५१
अन्त्य विदरण प्रकार के मोक्ष का सफल कथन ५२
सूर्य ग्रहण में उपरोक्त दश मोक्षों के प्रकार का विचार ५२
ग्रहण मुक्ति पश्चात् सप्ताहान्तर का उत्पात फल कथन ५२
चन्द्रग्रहण पश्चात् सूर्यग्रहण फल कथन ५३
सूर्यग्रहण के अनन्तर चन्द्रग्रहण फल कथन ५३
भौमचारविचारः—६ **५४-५६**
कुज के पञ्चमुख में से उष्णमुख कुज का सफल कथन ५४
अश्रुमुख कुज का सफल कथन ५४
व्यालमुख कुज का सफल कथन ५४
रुधिरानन कुज का सफल कथन ५४
असि मुसल कुज का सफल कथन ५५
नक्षत्र संचारवश विशेष फल कथन ५५
कुज संचारवश और विशेष फल कथन ५५
कुज संचारवश और भी फल कथन ५५
कुज संचारवश और भी फल कथन ५५
संचरित मंगल का और भी फल कथन ५६
संचरणशील कुज का और फल कथन ५६
कुज संचारवश और भी फल कथन ५६
कुजवर्ण फल कथन ५६
बुधचार विचारः—७ **५७-६१**
बुध के उदय का फल कथन ५७
नक्षत्र संचरणवश बुध फल कथन ५७
नक्षत्र संचरणवश बुध का और फल कथन ५७

नक्षत्र संचरणवश बुध का और भी फल कथन	५७
नक्षत्र संचरणवश बुध का और भी फल कथन	५८
नक्षत्र संचरण वश बुध का और भी फल कथन	५८
नक्षत्र संचरणवश बुध का और भी फल कथन	५८
पराशरोक्त बुध की सात गतियों का कथन	५८
बुध की गतियों के नक्षत्रों में स्थिति कथन	५८
पराशर मत से बुध गति का उदयास्त लक्षण कथन	५९
गतिवश बुध का फल कथन	५९
देवलमत से बुध गति कथन	६०
ऋज्वी आदि गति का फल कथन	६०
उदयास्तवश शुभाशुभ फल कथन	६०
उदयास्तवश और भी शुभाशुभ फल कथन	६०
उदयास्तवश बुध का और भी शुभाशुभ फल कथन	६०
बुध के वर्णादि का फल कथन	६१
बृहस्पतिचारविचारः—८	६२-७३
महाकार्तिक आदि वर्ष संज्ञा कथन	६२
नक्षत्रवश द्वादश वर्ष नाम और काल कथन	६२
कार्त्तिक संज्ञक वर्षफल कथन	६२
मार्गशीर्ष संज्ञक वर्ष फल कथन	६२
पौषसंज्ञक वर्ष का फल कथन	६३
माघ संज्ञक वर्ष का फल कथन	६३
फाल्गुन संज्ञक-वर्ष का फल कथन	६३
चैत्र संज्ञक वर्ष का फल कथन	६३
वैशाख नाम के वर्ष का फल कथन	६३
ज्येष्ठ नामक वर्ष का फल कथन	६४
आषाढ़ नाम के वर्ष का फल कथन	६४
श्रावण संज्ञक वर्ष का फल कथन	६४
भाद्रपद् संज्ञक वर्ष का फल कथन	६४
आश्विन संज्ञक वर्ष का फल कथन	६४
संचरणशील गुरु का नक्षत्र जन्य फल कथन	६५
गुरु का नक्षत्र जन्य विशेष फल कथन	६५

वृहस्पति वर्णजन्य फल कथन ६५
सम्वत्सर पुरुष के अङ्ग, नक्षत्र व फल कथन ६५
षष्ट्यब्दानयनरीति ६६
वृहस्पति नक्षत्र ज्ञान उससे वर्ष कथन ६६
६० सम्वत्सर स्थित द्वादश युगों के नाम कथन ६६
पञ्च वर्षात्मक युग के प्रति वर्ष नाम व देवता कथन ६७
उपरोक्त पञ्च सम्वत्सरों का फल कथन ६७
उत्तम-मध्यम-अधम युग कथन ६७
प्रभव सम्वत्सर के प्रवृत्तिकाल कथन ६८
प्रथम युग के प्रभव संज्ञक सम्वत्सर फल कथन ६८
प्रथम युग के अन्य चार सम्वत्सरों का नाम व फल कथन ६८
द्वितीय युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ६८
तृतीय युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ६९
चतुर्थ युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ६९
पञ्चम युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७०
षष्ठयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७०
सप्तमयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७०
अष्टम युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७१
नवमयुगान्तर्गत सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७१
दशमयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७१
एकादशम युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७२
द्वादशमयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन ७२
क्षय सम्वत्सर और उसका फल कथन पूर्वक ६० सम्वत्सरों का कथन ७३
बृहस्पतिबिम्ब का सफल कथन ७३

शुक्रचारविचार:—९ **७४-८५**

प्रथम वीथियों के लक्षण कथन ७४
ग्रन्थकार मत से वीथियों के नक्षत्र कथन ७४
वीथियों के मार्ग विभाग कथन ७५
वीथि मार्ग स्पष्टार्थ चक्र ७५
मतान्तर से मार्ग कथन ७६
पुनः मतान्तर से मार्ग कथन ७६
मतान्तर को व्यक्त करने का प्रयोजन कथन ७६

उत्तरादि वीथि गत शुक्र फल कथन	७६
वीथिगत शुक्र का विशेष फल कथन	७७
षड् मण्डलों में से प्रथम मण्डल का लक्षण तथा तद्गत शुक्र का फल कथन	७७
द्वितीय मण्डल का लक्षण तथा तद्गत शुक्रफल कथन	७७
तृतीय मण्डल का लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन	७८
चतुर्थ मण्डल गत लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन	७८
पञ्चममण्डलगत लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन	७९
षष्ठम मण्डलगत लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन	७९
मण्डलों के विशिष्ट फल कथन	७९
दिवा दृष्ट शुक्र का विशिष्ट फल	८०
शुक्र का कृत्तिका नक्षत्र भेदन फल कथन	८०
शुक्र का रोहिणी शकट भेदन फल कथन	८०
मृगशिर व आर्द्रा नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन	८०
पुनर्वसु व पुष्य नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन	८१
श्लेषा व मघा नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन	८१
पूर्वोत्तराफाल्गुनी नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन	८१
हस्त व चित्र नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन	८१
स्वाती व विशाखा नक्षत्र भेदन शुक्रफल कथन	८२
अनुराधा, ज्येष्ठा व मूल नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन	८२
पूर्वोत्तराषाढ़, श्रवण व धनिष्ठा नक्षत्रगत शुक्र फल कथन	८२
शतभिषा व पूर्वाभाद्रप्रदा नक्षत्रगत शुक्र फल कथन	८२
उत्तरभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी तथा भरणी नक्षत्रगत शुक्रफल कथन	८३
तिथिवश शुक्र का उदयास्त फल कथन	८३
गुरु व शुक्र के संम सप्तक का फल कथन	८३
शुक्र के अग्रस्थित सर्वग्रह फल कथन	८३
शुक्र के अग्रस्थ शनि फल कथन	८३
शुक्र के अग्रस्थित मङ्गल फल कथन	८४
शुक्र के अग्रस्थित गुरु फल कथन	८४
शुक्र अग्रस्थित बुध फल कथन	८४
शुक्र बिम्ब का सफल कथन	८४
पुनः शुक्र के वर्ण का सफल कथन	८५

शनैश्चरचार विचारः—१० ८६-९०

नक्षत्र स्थित शनिचार फल कथन ८६
अश्विनी-भरणी नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८६
कृत्तिका-रोहिणी नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८६
मृगशिरा-आर्द्रा नक्षत्रस्थ शनिफल कथन ८७
पुनर्वसु-पुष्य नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८७
श्लेषा-मघा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८७
पूर्वोत्तरफाल्गुनी नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८७
हस्त नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८८
चित्रा-स्वाती नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८८
विशाखास्थ शनैश्चर फल कथन ८८
अनुराधा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८८
ज्येष्ठा-मूल नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८८
पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८९
उत्तराषाढ़ा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८९
श्रवण व धनिष्ठा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८९
शतभिषा-पूर्वोत्तराभाद्रपदा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ८९
रेवती नक्षत्रस्थ शनि फल कथन ९०
विशाखास्थ गुरु व कृत्तिकास्थ शनि तथा दोनों का एकर्क्षगत फल कथन ९०
शनि के बिम्ब वर्णवश फल कथन ९०
पुनः बिम्बवर्ण वश फल कथन ९०

केतुचार विचारः—११ ९१-१०३

गर्गादि प्रोक्त केतुचार विषयक कथन ९१
केतु के प्रकार व लक्षण कथन ९१
दिव्य से भिन्न केतुओं का स्वरूप कथन ९१
दिव्य-आन्तरिक्ष-भौमात्मक केतु लक्षण कथन ९१
मतान्तर से केतुओं की संख्या कथन ९२
मतान्तर कथन पश्चात् स्वमत प्रतिपादक कथन ९२
केतु के उदयास्त से फल विनिश्चयीकरणार्थ कथन ९२
शुभ केतु लक्षण कथन ९२
अशुभ केतु के लक्षण और फल कथन ९२

सूर्यपुत्र २५ केतुओं के लक्षण व फल कथन ९३
अग्निपुत्र २५ केतुओं के लक्षण व फल कथन ९३
यमपुत्र २५ केतुओं के सलक्षण फल कथन ९३
भूपुत्र बाईस प्रकार से केतु का सलक्षण फल कथन ९३
चन्द्रपुत्र ३ प्रकार के केतु का सफल कथन ९३
ब्रह्मदण्ड नामक केतु के सफल कथन ९४
१०१ केतुओं को कहने के बाद ८९९ केतु क़थन ९४
शुक्र पुत्र केतु के ८४ प्रकार का सफल कथन ९४
शनिपुत्र केतु के ६० प्रकार का सफल कथन ९४
गुरुपुत्र केतु के ६५ प्रकार का सफल कथन ९४
बुध पुत्र केतु के ५१ प्रकार का सफल कथन ९५
कुज पुत्र केतु के ६० प्रकार का सफल कथन ९५
राहुपुत्र केतु के ३३ प्रकार का सफल कथन ९५
अग्निपुत्र केतु के १२० प्रकार का सफल कथन ९५
वायु पुत्र केतु के ७७ प्रकार का सफल कथन ९५
प्रजापतिपुत्र ८ और ब्रह्म पुत्र २०४ प्रकार के केतु का सफल कथन ९६
वरुण पुत्र ३२ प्रकार के केतु का सफल कथन ९६
कालपुत्र ९६ प्रकार के केतु का सफल कथन ९६
विदिशा पुत्र नौ प्रकार के केतु का सफल कथन ९६
वसा केतु के लक्षण और फल कथन ९६
अस्थि व शस्त्र केतु के लक्षण व फल ९७
कपाल केतु के लक्षण व फल कथन ९७
रौद्र नामकं केतु के लक्षण व फल कथन ९७
३६ चल केतु के लक्षण व फल कथन ९७
श्वेत केतु का लक्षण व फल कथन ९८
श्वेत नामक केतु लक्षण कथन ९८
रश्मि केतु का लक्षण व फल कथन ९९
ध्रुव केतु का लक्षण व फल कथन ९९
कुमुद संज्ञक केतु का लक्षण व फल कथन ९९
मणि केतु के लक्षण व फल कथन ९९
जलकेतु का लक्षण व फल कथन १००

भव केतु का लक्षण व फल कथन १००
पद्मकेतु का लक्षण व फल कथन १००
आवर्त केतु का लक्षण व फल कथन १००
संवर्त केतु का लक्षण व फल कथन १००
अशुभ केतु का नक्षत्र सह स्पर्शन व धूपन से फल कथन १०१
अश्विन्यादि चार नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०१
मृगशिरादि चार नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०१
श्लेषादि पाँच नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०१
चित्रा व स्वाती नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०२
विशाखा से तीन नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०२
मूलादि तीन नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०२
श्रवणादि ६ नक्षत्रों के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन १०२
केतु का विशेष फल कथन १०२
केतु का और भी विशेष कथन १०३

अगस्त्यचार विचार:–१२ १०४-१०९

मुनि अगस्त्य की प्रशंसा वचन १०४
अगस्त्य मुनि के प्रसङ्ग में प्रधान समुद्र की शोभा कथन १०४
और भी समुद्र शोभा कथन १०४
पुन: समुद्र शोभा कथन १०५
पुन: समुद्र शोभा कथन १०५
समुद्र प्रशंसा पूर्वक अगस्त्य महात्म्य कथन १०५
विन्ध्याचल स्थिति कथन १०५
अगस्त्य के उदय का महत्त्व प्रदर्शन १०६
शरद् ऋतु की शोभा कथन १०६
पुन: शरद् ऋतु की शोभा कथन १०६
और शरद् ऋतु शोभा कथन १०७
पृथ्वी शोभा कथन १०७
अगस्त्य दर्शन का महत्त्व कथन १०७
अगस्त्य माहात्म्य कथन १०७
अगस्त्योदय लक्षण कथन १०७
अर्घदान काल कथन १०८

अर्घ वस्तुओं के नाम कथन १०८
अर्घदान फल प्राप्ति कथन १०८
ब्राह्मण आदि द्वारा अर्घ दान फल कथन १०८
अगस्त्य वर्ण सफल कथन १०९
पुनः अगस्त्य वर्ण सफल कथन १०९
अगस्त्य के शुभाशुभ व उदयास्त कथन १०९

सप्तर्षिचाराः—१३ ११०-११२

सप्तर्षि दिक्संस्थान लक्षण कथन ११०
ध्रुववश उत्तर दिक्गति कथन ११०
सप्तर्षिचार नक्षत्र कथन ११०
सप्तर्षि नक्षत्र भोगकाल तथा नक्षत्र स्थिति कथन १११
सप्तर्षि संस्थान लक्षण कथन १११
इनका शुभाशुभ फल कथन १११
सप्तर्षियों का अपना वर्ग कथन १११

नक्षत्रकूर्म निरूपणम्—१४ ११३-११७

नक्षत्रों के नौ वर्ग कथन ११३
कृत्तिका आदि तीन नक्षत्रों के प्रथम वर्गस्थ मध्य देशों के नाम ११३
आर्द्रा आदि तीन नक्षत्रों के द्वितीय वर्गस्थ पूर्वीय देशों के नाम ११३
श्लेषादि तीन नक्षत्रों के तृतीय वर्गस्थ आग्नेय देशों के नाम ११४
उत्तराफाल्गुनी आदि तीन नक्षत्रों के चतुर्थ वर्गस्थ दक्षिणी देशों के नाम ११४
स्वाती आदि तीन नक्षत्र के पञ्चमवर्गस्थ नैर्ऋत्यदिक्स्थित देशों के नाम ११५
ज्येष्ठादि तीन नक्षत्रों के षड्वर्गस्थ पश्चिमीय देशों के नाम ११५
उत्तराषाढ़ा आदि तीन नक्षत्रों के सप्तवर्गस्थ वायव्य दिक्स्थित देशों के नाम ११६
शतभिषा आदि तीन नक्षत्रों के अष्टमवर्गस्थ उत्तरीय देशों के नाम ११६
रेवती आदि तीन नक्षत्रों के नवम वर्गस्थ ईशान कोणीय देशों के नाम ११६
कृत्तिकादि नक्षत्रों के वर्ग फल कथन ११७

नक्षत्रव्यूह विचारः—१५ ११८-१२४

किस नक्षत्र के आश्रित कौन-कौन से पदार्थ हैं इसका विचार करने के क्रम में कृत्तिका नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११८
रोहिणी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११८

मृगशिर नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११८
आर्द्रा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११८
पुनर्वसु नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११९
पुष्य नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११९
श्लेषा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११९
मघा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११९
पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन ११९
उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२०
हस्त नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२०
चित्रा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२०
स्वाती नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२०
विशाखा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२०
अनुराधा नक्षत्र से विचारितं वस्तु कथन १२१
ज्येष्ठा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२१
मूल नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२१
पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२१
उत्तराषाढ़ा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२१
श्रवण नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२२
धनिष्ठा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२२
शतभिषा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२२
पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२२
उत्तराभाद्रपद नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२२
रेवती नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२३
अश्विनी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२३
भरणी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन १२३
ब्राह्मणादि वर्णगत नक्षत्र कथन १२३
क्रूर ग्रहों का प्रयोजन कथन १२४

ग्रहभक्तियोगविचार:—१६ **१२५-१३०**

किस देश के किन पुरुषों, वस्तुओं आदि का कौन-से ग्रह अधिपति (स्वामी) हैं, इसे व्यक्त करने के क्रम में सूर्य से सम्बन्धित देश और व्यक्ति का कथन १२५
चन्द्र सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२५

मंगल सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२६
बुध सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२७
बृहस्पति सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२७
शुक्र सम्बन्धित देश व्यक्ति व वस्तु कथन १२८
शनि सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२८
राहु से सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२९
केतु सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन १२९
ग्रहों देश, व्यक्ति व वस्तु के प्रयोजन कथन १३०
पुनः ग्रहों के देश व्यक्ति व वस्तु के प्रयोजन कथन १३०

ग्रहयुद्ध निरूपणम्–१७ **१३१-१३६**

उपोद्घात कथन १३१
ताराग्रहों के युद्ध का कारण कथन १३१
चार प्रकार के युद्ध में से प्रत्येक का पृथक् फल कथन १३१
ग्रहों की यायी, नागर, आक्रन्द आदि संज्ञा कथन १३२
उपरोक्त प्रसङ्ग में विशेष कथन १३२
पराजित ग्रहों के लक्षण कथन १३२
जयी ग्रहों के लक्षण कथन १३३
पुनः जयी ग्रहों का लक्षण कथन १३३
जयी ग्रहों के लक्षणों में विशेष कथन १३३
सभी ग्रहों से पराजित भौम का फल कथन १३३
सभी ग्रहों से पराजित बुध का फल कथन १३४
सभी ग्रहों से पराजित गुरु का फल कथन १३४
सभी ग्रहों से पराजित शुक्र का फल कथन १३५
सभी ग्रहों से पराजित शनि का फल कथन १३५
ग्रहों के विशेष फल कथन १३६

शशि-ग्रह समागम विचारः–१८ **१३७-१३९**

चन्द्रमा की गति लक्षण कथन १३७
मंगल से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन १३७
बुध से उत्तरदिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन १३७
गुरु से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन १३८

शुक्र से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन १३८
शनि से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन १३८
चन्द्र फल मे विशेष कथन १३८
पुनः चन्द्रफल में विशेष फल कथन १३८
ग्रहवर्षफल विचारः—१९ **१४०-१४५**
सूर्य का फल कथन १४०
चन्द्र का वर्षादि फल कथन १४०
मंगल का वर्षादि फल कथन १४१
बुध का वर्षादि फल कथन १४२
गुरु का वर्षादिफल कथन १४३
शुक्र का वर्षादि फल कथन १४३
शनि का वर्षादिफल कथन १४४
ग्रहवर्ष फल में विशेष कथन १४४
ग्रहशृङ्गाटक विचारः—२० **१४६-१४७**
पञ्चतारा ग्रहों के उदयास्त दिशाओं का फल कथन १४६
ग्रहों के संस्थान (आकृति) कथन १४६
आकाश विभागवश अशुभ फल कथन १४६
ग्रहों का नक्षत्रस्थिति वश फल कथन १४६
ग्रहों के छः प्रकार के योगों का नाम कथन १४७
उपरोक्त षड्योगों का सफल कथन १४७
उपरोक्त योग का अन्य फल कथन १४७
गर्भलक्षणविचारः-२१ **१४८-१५५**
गर्भलक्षण प्रयोजन कथन १४८
गर्भलक्षण कथन १४८
गर्भलक्षण मर्मज्ञ दैवज्ञ प्रशंसा कथन १४८
ज्यौतिषशास्त्र प्रशंसा कथन १४८
गर्भलक्षण सम्बन्धि अन्य का गत कथन १४८
गर्ग आदि मुनियों का मत कथन १४९
धारित गर्भ का प्रसवकाल कथन १४९
पुनः धारित गर्भ का प्रसवकाल कथन १४९

गर्भों का विशेष लक्षण तथा कालनिर्देश कथन	१४९
मेघ और वायु लक्षण कथन	१५०
गर्भ सम्भव लक्षण कथन	१५०
ऋतु प्रकृतिवश गर्भलक्षण कथन	१५१
गर्भकाल में मेघों के लक्षण कथन	१५२
गर्भहानि लक्षण कथन	१५२
गर्भहानि में विशेष कथन	१५२
गर्भधारणकालिक नक्षत्रवश अतिवृष्टिकर नक्षत्र कथन	१५३
गर्भधारण कालिक नक्षत्रवश बहुदिन गर्भ पुष्टि का नक्षत्र कथन	१५३
उपरोक्त योग में वृष्टि दिन संख्या कथन	१५३
निमित्तानुसार वृष्टि क्षेत्र प्रमाण कथन	१५३
निमित्तों से सम्पन्न गर्भवश जलमात्रा कथन	१५३
वृष्टि योग में विशेष कथन	१५४
गर्भसम्भव होने का विशेषलक्षण कथन	१५४
यहाँ पर भी विशेष कथन	१५४
यहाँ दृष्टान्त कथन	१५४
गर्भ पुष्टि लक्षण कथन	१५५
गर्भधारण निरूपणम्–२२	**१५६-१५७**
गर्भधारण के लक्षण कथन	१५६
पूर्वोक्त में विशेष कथन	१५६
पुनः पूर्वोक्त में विशेष कथन	१५६
वशिष्ठोक्त कथन	१५६
प्रवर्षणनिरूपणम्–२३	**१५८-१६०**
प्रवर्षण का लक्षण कथन	१५८
जल प्रमाणज्ञानार्थ कथन	१५८
वर्षा प्रमाण कथन	१५८
यहाँ पर मतान्तर कथन	१५८
प्रवर्षण प्रसङ्ग में और विशेष कथन	१५९
नक्षत्रों का वृष्टि प्रमाण कथन	१५९
यहाँ पर विशेष कथन	१६०

रोहिणी योग विचार:— २४	**१६१-१६९**
आगम दर्शनार्थ कथन	१६१
रोहिणी योग काल कथन	१६१
यहाँ पर रोहिणी योग विधान कथन	१६२
कलश स्थापन व हवन विधि कथन	१६२
पताका स्थापन और वायु परीक्षण कथन	१६२
वायुवश इष्टनिष्ट फल कथन	१६२
कुम्भस्थ अंकुरित बीजवश इष्टनिष्ट फल कथन	१६३
रोहिणी चन्द्र समागमकालिक शुभ शकुन कथन	१६३
रोहिणी चन्द्र समागम काल के शुभ योग कथन	१६४
पुन: समागम कालिक शुभ योग कथन	१६४
और भी समागम कालिक शुभ योग कथन	१६४
समागम कालिक और भी शुभयोग कथन	१६४
मेघों की विशेषता कथन	१६५
मेघों की और भी विशेषता कथन	१६५
पूर्वोक्त मेघों की स्थिति फल कथन	१६५
मेघों के अशुभ लक्षण कथन	१६५
मेघों के शुभ लक्षण कथन	१६५
दिशा के अनुसार मेघों का फल कथन	१६६
उत्पातों का सफल कथन	१६६
पूर्वोक्त चारों दिशाओं के स्थापित कुम्भ से शुभाशुभ कथन	१६६
पुन: पूर्वोक्त चारों दिशाओं के स्थापित कुम्भ से शुभाशुभ कथन	१६७
रोहिणी के दक्षिणस्थ चन्द्र समागम फल कथन	१६७
रोहिणी के उत्तरस्थ चन्द्र समागम फल कथन	१६७
रोहिणी शकटमध्यस्थ चन्द्र का फल कथन	१६७
रोहिण के पश्चिम दिक् स्थिति में चन्द्र फल कथन	१६८
रोहिणी से पूर्व दिक्स्थित चन्द्र फल कथन	१६८
रोहिणी के आग्नेयादि कोणस्थ चन्द्र फल कथन	१६८
योगतारा को भेदित व आच्छादित कारक चन्द्र का फल कथन	१६८
पालतु जन्तुओं से शुभाशुभ कथन	१६९
अदृश्य रोहिणी चन्द्र समागम का फल कथन	१६९

स्वातीयोग विचारः—२५ १७०-१७१
रोहिणी योगवत स्वाती योग विचारपूर्वक उसमें विशेष कथन १७०
दिन व रात के पृथक् त्रिभागीय वृष्टि कथन १७०
अपांवत्स के निकट स्थित चन्द्र का फल कथन १७०
स्वाती चन्द्र समागम का फल कथन १७०
और भी स्वाती चन्द्र समागम फल कथन १७१
आषाढ़ीयोग विचारः—२६ १७२-१७५
आषाढ़ी योग में धान्यों की स्थिति कथन १७२
तुला अभिमन्त्रित करने के आर्ष मन्त्र कथन १७२
तुला का लक्षण कथन १७३
द्रव्यों के प्रमाणवश वृष्टि कथन १७३
श्रेष्ठ आदि तुला दण्ड प्रकार कथन १७३
तुले हुए पदार्थों का शुभाशुभ कथन १७३
स्वात्यादि नक्षत्र व चन्द्र समागम का पापग्रह सम्बन्ध से शुभाशुभ कथन १७४
रोहिणी, स्वाती व आषाढ़ी में उत्तम योग कथन १७४
आठ दिशाओं के वश वात (वायु) फल कथन १७४
आषाढ़ मास कृष्ण पक्ष चतुर्थी का फल कथन १७४
आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन ऐशानी वायु का फल १७५
वातचक्र विचारः—२७ १७६-१७९
आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन ऐशानी वायु का फल कथन १७६
पूर्व दिशा की वायु का फल कथन १७६
आग्नेय कोण की वायु का फल कथन १७६
दक्षिण दिशा की वायु का फल कथन १७७
नैर्ऋत्य दिशा की वायु का फल कथन १७७
पश्चिम दिशा की वायु का फल कथन १७७
वायव्य दिशा की वायु का फल कथन १७८
उत्तर दिशा की वायु का फल कथन १७८
ईशान कोण की वायु का फल कथन १७८
भद्रपद योग कथन १७९
अन्यत्र भद्रपद योग कथन १७९

सद्योवर्षण विचारः—२८ १८०-१८५
वर्षा प्रश्न में चन्द्रस्थितिवश वृष्टि कथन १८०
पृच्छक चेष्टावश वृष्टि कथन १८०
सूर्य किरणवश वृष्टि कथन १८०
अन्य वृष्टि योग कथन १८१
और अन्य वृष्टि योग कथन १८१
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८१
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८१
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८२
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८२
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८२
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८२
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८२
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८३
सन्ध्याकाल के मेघ की आभा से वर्षा कथन १८३
मेघ की आभा व आकृतिवश वृष्टि योग कथन १८३
इन्द्र धनुष आदि से वृष्टि योग कथन १८४
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८४
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८४
ग्रहों की स्थिति से वृष्टि योग कथन १८४
और भी अन्य वृष्टि योग कथन १८४
द्विग्रह योग वश वृष्टि योग कथन १८५
मन्द व शीघ्र गतिक ग्रहवश वृष्टि योग कथन १८५
खद्योत व सियार से वृष्टि योग कथन १८५
कुसुमलता विचारः—२९ १८६-१८८
अध्याय का प्रयोजन कथन १८६
किस वस्तु से किस वस्तु की वृद्धि ज्ञान कथन १८६
यव आदि धान्य वृद्धि कथन १८६
तिलादि धान्यों की वृद्धि कथन १८६
कपास आदि की वृद्धि कथन १८६
अलसी (तीसी) आदि की वृद्धि कथन १८७

हाथी आदि की वृद्धि कथन १८७
स्वर्ण आदि की वृद्धि कथन १८७
केशर आदि की वृद्धि कथन १८७
व्यापार आदि की वृद्धि कथन १८७
मनुष्य आदि की कल्याण कथन १८८
सुभिक्ष आदि परिज्ञान कथन १८८
ईख आदि की वृद्धि कथन १८८
पत्रों से वृष्टि ज्ञान कथन १८८
सन्ध्यालक्षण निरूपणम्—३० १८९-१९५
सन्ध्या का लक्षण कथन १८९
सन्ध्याकालिक लक्षणों के विषय वस्तु कथन १८९
मृग की चेष्टावश फल कथन १८९
और मृग चेष्टवश फल कथन १८९
सन्ध्यालक्षण सफल कथन १९०
सन्ध्याकालिक वायु लक्षण सफल कथन १९०
और भी सन्ध्यालक्षण सफल कथन १९०
और भी सन्ध्या लक्षण सफल कथन १९०
सन्ध्याकाल में सूर्य किरण लक्षण सफल कथन १९०
सूर्य किरणों के सविशेष लक्षण व फल कथन १९१
अमोघ संज्ञक सूर्यकिरणों के लक्षण सफल कथन १९१
अन्य सूर्य किरणों का सफल कथन १९१
ताम्रवर्ण आदि सूर्य किरणों का सफल कथन १९१
सन्ध्याकालिक धूलि लक्षण सफल कथन १९२
दण्ड लक्षण सफल कथन १९२
दण्ड सम्बन्धि विशेष फल कथन १९२
वृक्षाकृति मेघ लक्षण सफल कथन १९२
वृक्षाकृति के मेघ के साथ राजा के गमन का फल कथन १९३
पुनः सन्ध्याकाल का लक्षण सफल कथन १९३
पुनः सन्ध्याकाल का लक्षण सफल कथन १९३
षड् ऋतुओं के वश सन्ध्या समय का लक्षण सफल कथन १९३
मेघ की आकृतिवश सन्ध्या का फल कथन १९३

मेघ की स्थिति वश फल कथन	१९३
परिघवश शुभाशुभ फल कथन	१९४
परिधि वश शुभाशुभ फल कथन	१९४
पुनः परिधिवश शुभाशुभ फल कथन	१९४
सन्ध्या समय का विशेष लक्षण सफल कथन	१९४
उपरोक्त फलों का काल कथन	१९५
उपरोक्त में तत्तद् प्रदेशगत फल कथन	१९५
उपरोक्त में तत्तद् प्रदेश गतगत फल कथन	१९५
दिग्दाहलक्षण विचारः—३१	**१९६-१९७**
वर्णभेद से दिग्दाह का फल कथन	१९६
दिग्दाह लक्षण सफल कथन	१९६
दिशावश दिग्दाह फल कथन	१९६
दिग्दाह का शुभ फल कथन	१९७
भूकम्पलक्षणविचारः—३२	**१९८-२०३**
भूकम्पनिमित्तक मुनिजनों का मतभेद कथन	१९८
पुनः भूकम्प निमित्तक मुनिजनों का मतभेद कथन	१९८
पराशर आदि ऋषियों के मत कथन	१९८
वायव्य मण्डल के लक्षण कथन	१९९
आग्नेय मण्डल के लक्षण कथन	१९९
इन्द्र मण्डल के लक्षण कथन	२००
वरुण मण्डल के लक्षण कथन	२०१
भूकम्प आदि के फल प्राप्ति फल कथन	२०१
उल्का आदि उत्पात फल के नियम कथन	२०१
कम्पों का निष्फलत्व कथन	२०२
कम्पोक्त फलों में विशेष कथन	२०२
पुनः कम्पोक्त फलों में विशेष फल	२०२
अकथित फल काल का निर्णय कथन	२०३
मण्डलानुसार भूकम्प प्रदेश कथन	२०३
भूकम्प पश्चात् थोड़े दिन बाद भूकम्प फल कथन	२०३

उल्कालक्षण विचारः—३३	२०४-२१०
उल्का स्वरूप कथन	२०४
फलकाल निर्णय कथन	२०४
फल प्रदान के नियम कथन	२०४
अशनि का लक्षण कथन	२०४
विद्युत् लक्षण कथन	२०४
धिष्ण्या लक्षण कथन	२०५
तारा लक्षण कथन	२०५
उल्का लक्षण कथन	२०५
उल्का का अन्य प्रकार कथन	२०५
पुनः उल्का का अन्य प्रकार कथन	२०५
उल्का का अन्य लक्षण कथन	२०६
उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन	२०६
उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन	२०६
उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन	२०६
उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन	२०७
उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन	२०७
उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन	२०७
उल्का से आहत नक्षत्रों को फल कथन	२०७
देवता आदि के मूर्त्ति पर उल्कापात का फल कथन	२०८
उल्का पात में विशेष कथन	२०८
पुनः उल्का पात में विशेष कथन	२०९
और भी उल्का पात में विशेष कथन	२०९
उल्कापात में और भी विशेष कथन	२०९
उल्कापात में और भी विशेष कथन	२१०
परिवेशलक्षण विचारः—३४	२११-२१५
परिवेष स्वरूप कथन	२११
परिवेष के वर्ण और स्वामी कथन	२११
कुबेर कृत परिवेष कथन	२११
परिवेश का शुभाशुभ कथन	२११

परिवेश का अशुभ फल कथन २१२
परिवेष वर्णवश शुभाशुभ फल कथन २१२
परिवेष की स्थितिवश वृष्टि कथन २१२
भयप्रद परिवेश लक्षण कथन २१२
सेनापति आदि को भयप्रद परिवेश कथन २१३
वृष्टियोग प्रद परिवेष कथन २१३
परिवेषगत ग्रहों का फल कथन २१३
परिवेष स्थित द्विग्रह और योग फल कथन २१४
ग्रह व नक्षत्र का भिन्न परिवेषस्थ फल कथन २१४
तिथिवश परिवेश फल कथन २१४
परिवेषगत रेखा आदि वश शुभाशुभ फल कथन २१५

इन्द्रायुधलक्षण विचारः—३५ **२१६-२१७**

इन्द्रधनुष की उत्पत्ति कथन २१६
अन्य मत के साथ शुभाशुभ फल कथन २१६
शुभफलद इन्द्रधनुष कथन २१६
विदिक् स्थित इन्द्रधनुष का फल कथन २१६
जल आदि में दीखने वाले इन्द्रधनुष का फल कथन २१७
दिशावश इन्द्रधनुष का फल कथन २१७
पुनः दिशावश इन्द्रधनुष का फल कथन २१७
ब्राह्मणादि का इन्द्रधनुष से अशुभफल कथन २१७

गन्धर्वनगरलक्षण विचारः—३६ **२१८-२१९**

दिशावश गन्धर्वनगर का फल कथन २१८
उत्तर दिशा व विदिक्वश गन्धर्वनगर का फल कथन २१८
सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर का फल कथन २१८
गन्धर्वनगर के विशेष फल कथन २१९
पताका आदि सदृश गन्धर्वनगर का फल कथन २१९

प्रतिसूर्यलक्षण विचारः—३७ **२२०**

प्रतिसूर्य के वर्ण व लक्षण के साथ शुभाशुभ फल कथन २२०
प्रतिसूर्य के वर्ण और शुभाशुभ फल कथन २२०
पुनः प्रतिसूर्य के वर्ण और शुभाशुभ फल कथन २२०

रजोलक्षण विचारः—३८ २२१-२२२

धूलि लक्षण से पार्थिव वध कथन २२१

रजोत्पत्र व नाश से फल कथन २२१

घनाकार धूलिवर्ण का फल कथन २२१

धूलि से व्याप्त आकाश का फल कथन २२१

रात्रि पर्यन्त रज से आच्छादित आकाश का फल २२१

रजवश परचक्रागम योग कथन २२२

तीन, चार या पाच रात्रि रज:पात का फल कथन २२२

केतु के उदय बाद रज:पात का फल कथन २२२

निर्घातलक्षण विचारः—३९ २२३-२२४

निर्घातोत्पत्ति व फल कथन २२३

वेलावश निर्घात फल कथन २२३

सस्य जातक निरूपणम्—४० २२५-२२८

आगम प्रदर्शनार्थ कथन २२५

ग्रैष्मिक धान्य सम्वर्द्धन योग कथन २२५

पुनः ग्रैष्मिक धान्य सम्वर्द्धन योग कथन २२५

पुनः धान्य सम्वर्द्धन योग कथन २२५

और भी धान्यं सम्वर्द्धन योग कथन २२६

और भी धान्य सम्वर्द्धन योग कथन २२६

और भी धान्य सम्वर्द्धन योग कथन २२६

धान्य नाश योग कथन २२६

पुनः धान्य नाश योग कथन २२६

पुन: धान्य नाश योग कथन २२७

महँगे धान्यों की निष्पत्ति योग कथन २२७

शारदधान्य निष्पत्ति कथन २२७

ग्रैष्मिक धान्यों की समर्धता-महर्घता कथन २२७

शारदधान्य की समर्घता-महर्घता कथन २२८

द्रव्यनिश्चय विचारः—४१ २२९-२३१

आगम प्रदर्शनार्थ कथन २२९

मेष राशि सम्बन्धि पदार्थ कथन २२९

वृष व मिथुन राशि के पदार्थ कथन २२९
कर्क व सिंह राशि के पदार्थ कथन २२९
कन्या व तुला राशि के पदार्थ कथन २२९
वृश्चिक व धनु राशि के पदार्थ कथन २३०
मकर व कुम्भ राशि के पदार्थ कथन २३०
मीन राशि के पदार्थ कथन २३०
उपरोक्त पदार्थों का शुभाशुभ कथन २३०
यहाँ पर विशेष कथन २३१
और भी यहाँ पर विशेष कथन २३१
और भी यहाँ पर विशेष कथन २३१

अर्घकाण्ड निरूपणम्—४२ **२३२-२३४**

यहाँ प्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन २३२
उत्पात् वाले अमावास्या व पूर्णिमा के दिन मेष या
वृष राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३२
मिथुन राशिस्थ सूर्य में.कर्त्तव्य कथन २३२
कर्क राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३२
सिंह राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३३
कन्या राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३३
तुला राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३३
वृश्चिक राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३३
धनु राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३३
मकर राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३४
मीन राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन २३४
यहाँ पर विशेष कथन २३४
यहाँ पर विशेष कथन २३४

इन्द्रध्वजसम्पद् विचारः—४३ **२३५-२४७**

इन्द्रध्वज-उत्पत्ति प्रदर्शनार्थ कथन २३५
देवताओं के लिए ब्रह्माजी का उपदेशात्मक कथन २३५
केशव का देवताओं द्वारा की गई स्तुति कथन २३५
ध्वज स्वरूप की प्रशंसा कथन २३६
ध्वज पाकर इन्द्र से कृत्कार्य का कथन २३६

इन्द्र द्वारा उस ध्वज को चेदिराज वसु को देने का कथन	२३६
इन्द्र की प्रसन्नता और ध्वज माहात्म्य कथन	२३६
ध्वज का विधान कथन	२३६
पुन: ध्वज विधान कथन	२३७
वन में करने योग्य कर्त्तव्य कथन	२३७
इन्द्र ध्वजोपयोगि शुभवृक्ष कथन	२३७
इन्द्रध्वजोपयोगी वृक्ष और उसका अधिग्रहण विधि कथन	२३७
मन्त्र प्रदर्शक कथन	२३८
वृक्षच्छेदनकालिक परशु ध्वनि का शुभाशुभ फल कथन	२३८
कट कर गिरे वृक्ष का शुभाशुभ कथन	२३८
तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन	२३८
यष्टि भाग पेड़ को लाने का शुभाशुभ कथन	२३९
उस पेड़ की यष्टि भाग को कब नगर के अन्दर लाना कथन	२३९
तात्कालिक नगर सौन्दर्य प्रदर्शनार्थ कथन	२३९
पताका के वर्ण फल कथन	२३९
यष्टि के नगर प्रवेशकालिक घटना का शुभाशुभ फल कथन	२४०
तत्पश्चात् के कर्त्तव्य का कथन	२४०
अग्नि निमित्तक शुभाशुभ फल कथन	२४०
अग्नि निमित्तक शुभफल कथन	२४०
और भी अग्नि निमित्तक शुभफल कथन	२४१
अग्नि से नि:सरित शब्द का फल कथन	२४१
अग्नि के और भी अन्य लक्षण सफल कथन	२४१
अग्नि के और भी अन्य लक्षण सफल कथन	२४१
हवनकालिक अग्नि लक्षण का जन्मादिकाल में भी विचार का कथन	२४२
तत्पश्चात् ध्वजोत्थापन विधि कथन	२४२
अब शक्रकुमारी लक्षण सफल कथन	२४२
इन्द्रध्वज को लब्ध आभूषण कथन	२४२
४९ आभूषण देने वाले विश्वकर्मादि देव कथन	२४२
पिटक (आभूषण) के परिमाण कथन	२४४
इन्द्रध्वज को पिटकों से सजाने का समय कथन	२४४
मनुरुक्त मन्त्र प्रदर्शनार्थ कथन	२४४

मन्त्रोच्चारण करने के समय का कथन २४५
उठाने योग्य ध्वज का स्वरूप कथन २४५
ध्वजोत्थापन विधि कथन २४५
ध्वजोत्थापन योग्य राजा का लक्षण कथन २४५
इन्द्रध्वज शुभ उत्थापन कथन २४६
ध्वजोत्थापन से शुभाशुभ फल कथन २४६
विसर्जन करने की विधि कथन २४७
इन्द्रध्वज विधान कर्त्ता का प्रभाव कथन २४७

नीराजन निरूपणम्—४४ २४८-२५२

यहाँ पहले काल नियम प्रदर्शनार्थ कथन २४८
नीराजन काल कथन २४८
तोरण निर्माण विधि कथन २४८
शान्ति-गृह लक्षण कथन २४८
अश्व दीक्षा का विधान कथन २४८
शान्ति का विधान कथन २४९
तत्पश्चात् घोड़े के साथ व्यवहार कथन २४९
सप्ताह पश्चात् के कर्त्तव्य कथन २४९
सम्भारों का लक्षण कथन २४९
सम्भारों का और भी लक्षण कथन २४९
तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन २५०
दैवज्ञ के कर्त्तव्य कथनयात्रायां २५०
तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन २५०
घोड़ा और हाथी की चेष्टा कथन २५०
तत्पश्चात् के कर्त्तब्य कथन २५१
नीराजन के प्रकार कथन २५१
तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन २५१
उसके बाद के कर्त्तव्य कथन २५१
राजा के गमन का प्रकार कथन २५१
राजा के गमन का और प्रकार कथन २५२
सैन्य चेष्टा कथन २५२

खञ्जनकलक्षण विचार:—४५ २५३-२५६
यहाँ पहले आगम प्रदर्शनार्थ कथन २५३
खञ्जन के चार प्रकार व फल कथन २५३
स्थान के अनुसार खञ्जन दर्शन फल कथन २५३
स्थान के अनुसार और भी खञ्जन दर्शन फल कथन २५४
स्थानवश खञ्जन दर्शन का अशुभ फल कथन २५४
खञ्जन दर्शन का शुभाशुभ फल कथन २५४
खञ्जन दर्शन से राजा को शुभ फल कथन २५४
शास्त्र प्रति विश्वास उत्पन्न कराने योग्य कथन २५५
खञ्जनवश अन्य शुभाशुभ फल कथन २५५
शुभफलद खञ्जन दर्शन के बाद का विधान कथन २५५
अशुभ फलद खञ्जन दर्शन के पश्चात् का विधान कथन २५५
फल प्राप्ति का काल कथन २५६
उत्पात विचार:—४६ २५७-२७५
आगम वस्तु प्रदर्शनार्थ कथन २५७
उत्पात होने में कारणों का कथन २५७
उत्पात होने में और कारणों का कथन २५७
दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम उत्पातों का लक्षण कथन २५७
स्वमत प्रदर्शनार्थ कथन २५८
दैव उत्पात के फल का स्थान कथन २५८
उत्पात प्रदर्शनार्थ कथन २५८
उत्पात प्रदर्शनार्थ और कथन २५८
विकारयुक्त वस्तु से अशुभ फल कथन २५९
उपरोक्त उत्पातों के शान्ति प्रकार कथन २५९
काल प्रमाण और शान्ति प्रभाव कथन २६०
अन्यान्य उत्पात सफल कथन २६०
और भी अन्यान्य उत्पात सफल कथन २६०
और भी अन्य उत्पात सफल कथन २६०
और भी अन्य उत्पात सफल कथन २६०
और भी अन्य अन्यान्य उत्पातों का सफल कथन २६१
और भी अन्य अन्यान्य उत्पातों का सफल कथन २६१

उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन	२६१
वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन	२६१
वृक्षगत उत्पातों का और भी सफल कथन	२६२
और भी वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन	२६२
और भी वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन	२६२
वृक्षगत उत्पातों का और सफल कथन	२६२
और भी वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन	२६२
वृक्षगत उत्पातों की शान्ति के प्रकार कथन	२६३
धान्यगत उत्पातों का सफल कथन	२६३
धान्यगत उत्पातों का और सफल कथन	२६३
धान्यगत अन्य उत्पात का सफल कथन	२६३
ऊपरोक्त उत्पातों के शान्ति प्रकार कथन	२६३
वृष्टिगत उत्पात का सफल कथन	२६४
ऋतुवश उत्पात का सफल कथन	२६४
और वृष्टिगत उत्पातों का सफल कथन	२६४
पुनः वृष्टिगत उत्पातों का सफल कथन	२६५
वृष्टिगत उत्पातों का और भी सफल कथन	२६५
अन्य उत्पातों का सफल कथन	२६५
और अन्य उत्पातों का सफल कथन	२६५
उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन	२६५
नदीगत उत्पातों का सफल कथन	२६५
कुपगत उत्पातों का सफल कथन	२६६
अन्य प्रकार से जलगत उत्पातों का सफल कथन	२६६
ऊपरोक्त प्रकार के उत्पातों का शान्ति प्रकार कथन	२६६
स्त्री प्रसवगत उत्पातों का सफल कथन	२६६
पशुगत उत्पातों का सफल कथन	२६७
प्रसव शान्त्यर्थ गर्गोक्त दो श्लोक कथन	२६७
चतुष्पदगत उत्पातों का सफल कथन	२६७
उपरोक्त उत्पात की गर्गोक्त शान्ति प्रकार कथन	२६७
वाहनगत उत्पातों का सफल कथन	२६८
अन्य उत्पातों का सफल कथन	२६८

और भी अन्य उत्पातों का सफल कथन	२६८
और भी अन्य उत्पातों का सफल कथन	२६८
उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन	२६९
पशु-पक्षियों सम्बन्धि उत्पातों का सफल कथन	२६९
और भी पशु सम्बन्धी उत्पातों का सफल कथन	२६९
और भी पशु सम्बन्धी उत्पातों का सफल कथन	२६९
और भी पशु सम्बन्धी उत्पातों का सफल कथन	२७०
पशु-पक्षी के उत्पातों का शान्ति प्रकार कथन	२७०
अन्यान्य उत्पातों का फल कथन	२७०
और अन्यान्य उत्पातों का सफल कथन	२७०
राजकीय व्यवहार से देश नाश कथन	२७१
बालचेष्ट जनित उत्पातों का सफल कथन	२७१
चित्र जनित उत्पातों का सफल कथन	२७१
विकृत गृह जन्य उत्पातों का सफल कथन	२७१
राक्षस दीखने का फल कथन	२७१
उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन	२७२
फलाभाव वाले उत्पातों का काल कथन	२७२
ऋतु प्रकृतिवश उत्पन्न उत्पात कथन	२७२
वसन्त ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन	२७२
ग्रीष्म ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन	२७२
वर्षा ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन	२७३
शरद् ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन	२७३
हेमन्त ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन	२७३
शिशिरऋतु के प्रकृतिक उत्पात कथन	२७४
स्वऋतु उत्पात में विशेष कथन	२७४
सत्यवक्ता जीव कथन	२७४
सत्यवक्ता मनुष्य कथन	२७४
उत्पात शास्त्र मर्मज्ञ का प्रभाव कथन	२७५
मयूरचित्रक निरूपणम्–४७	२७६-२८२
पुनः मयूर चित्रक कहने का कारण कथन	२७६
ग्रहचारोक्त फल कथन	२७६

गुरु व शुक्र चार फल कथन २७६
पुनः चन्द्र आदि ग्रहचार फल कथन २७७
पनु: चन्द्र आदि ग्रहचार फल कथन २७७
और भी चन्द्र आदि ग्रह चार फल कथन २७७
और भी चन्द्र आदि ग्रहचार फल कथन २७७
समग्र नक्षत्र बिम्बवश फल कथन २७८
चन्द्र और सूर्य दर्शन फल कथन २७८
केतु संचरण से फल कथन २७८
शनि के संचरण का फल कथन २७८
रोहिणी शकट भेदन का फल कथन २७९
केतु के उदय का फल कथन २७९
अब चन्द्रचार का फल कथन २७९
और भी चन्द्र चार का फल कथन २७९
और भी चन्द्र चार का फल कथन २८०
परिघ, परिधि, दण्ड आदि का लक्षण कथन २८०
सन्ध्या का लक्षण व सूर्य बिम्ब फल कथन २८०
वृष्टि ज्ञान कथन २८०
सूर्य बिम्ब के अनुसार फल कथन २८१
पक्षी के अनुसार राज शकुन कथन २८१
सूर्य बिम्ब से अन्य फल कथन २८१
सन्ध्या के लक्षणवश शुभाशुभ फल कथन २८१
आत्म प्रशंसा कथन २८२

पुष्यस्नान निरूपणम्—४८ **२८३-२९६**

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन २८३
यहाँ आगम प्रदर्शनार्थ कथन २८३
पुष्य स्नान की विधि कथन २८३
राजा के पुष्य स्नान करने का स्थान कथन २८३
पुष्य स्नान योग्य अन्य स्नान कथन २८४
और भी पुष्य स्नान योग्य अन्य स्थान कथन २८४
पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्थान कथन २८४
पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्थान कथन २८४

पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्थान कथन	२८५
पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्नान कथन	२८५
पुष्य स्नान करने योग्य और भी स्थान कथन	२८५
पुष्य स्नान करने योग्य और भी स्थान कथन	२८५
पुष्य स्नान करने योग्य और भी स्थान कथन	२८५
भूमि का लक्षण कथन	२८६
पूर्वोक्त भूमि निवास विधि कथन	२८६
मुनि कथित आवह्न मन्त्र कथन	२८६
तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन	२८७
तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन	२८७
मुनि-प्रोक्त श्लोक कथन	२८७
उपरोक्त देवगणों की पूर्जार्चन-प्रक्रिया कथन	२८८
तदनन्तर के कर्त्तव्य कथन	२८८
तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२८९
पुष्य स्नान द्रव्य कथन	२८९
तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९०
तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९०
एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९०
राजा का लक्षण कथन	२९१
तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९१
कलश का प्रमाण कथन	२९१
मुनि कथित मन्त्र कथन	२९१
तदनन्तर कर्त्तव्य कथन	२९१
अभिषेक (स्नानार्थ) मन्त्र कथन	२९२
इन मन्त्रों के साथ एक और मन्त्र कथन	२९३
एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९३
एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९४
एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९४
एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन	२९४
तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन	२९४
तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन	२९४

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन २९५
तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन २९५
तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन २९५
पुष्य स्नान का माहात्म्य २९५
पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य २९५
पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य २९६
पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य २९६
पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य २९६
पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य २९६

पट्टलक्षण विचारः—४९ **२९७-२९८**

सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन २९७
मुकुट प्रमाण और उसका फल कथन २९७
पुनः मुकुट प्रमाण और उसका फल कथन २९७
पुनः मुकुट प्रमाण और उसका फल कथन २९७
मुकुट से शुभाशुभ कथन २९८
मुकुट से और भी शुभाशुभ कथन २९८
मुकुट के अशुभ लक्षण का परिहार कथन २९८

खड्गलक्षण विचारः—५० **२९९-३०४**

सर्वप्रथम खड्ग प्रमाण और विषमाङ्गुल फल २९९
व्रणों या चिह्नों का शुभफल कथन २९९
व्रणों या चिह्नों का अशुभ फल कथन २९९
खड्ग लक्षण और उसका फल कथन २९९
खड्ग की चेष्टा और फल कथन ३००
खड्ग के प्रसङ्ग से उपयोगी उपदेश कथन ३००
खड्ग का अन्य लक्षण कथन ३००
खड्ग का अन्य लक्षण कथन ३००
खड्ग की मूठ से व्रण कथन ३००
प्रश्न से खड्गस्थ व्रण ज्ञान के उपाय कथन ३०१
खड्ग में व्रण ज्ञान का प्रकार कथन ३०१
और भी व्रण ज्ञान का प्रकार कथन ३०१

और भी खड्ग में व्रण ज्ञान प्रकार कथन ३०१
और भी खड्ग में व्रणज्ञान का प्रकार कथन ३०२
और खड्ग में व्रणज्ञान का प्रकार कथन ३०२
उपरोक्त खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन ३०२
और खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन ३०२
और भी खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन ३०३
और भी खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन ३०३
त्रिशद् अंगुलों के पश्चात् व्रणों का फल कथन ३०३
खड्ग में गन्ध का सलक्षण फल कथन ३०३
शस्त्रपान प्रकार कथन ३०४
शस्त्रपान देने का और प्रकार कथन ३०४
शस्त्र पान देने का और प्रकार कथन ३०४

अङ्गविद्या विचारः—५१ ३०५-३१५

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ३०५
प्रश्नार्थ शुभ स्थान निर्देशार्थ कथन ३०५
प्रश्नार्थ अशुभ स्थान निर्देशार्थ कथन ३०५
और भी प्रश्नार्थ अशुभ स्थान निर्देशार्थ कथन ३०६
और भी प्रश्नार्थ अशुभ स्थान निर्देशार्थ कथन ३०६
प्रश्नार्थ दिशा व काल का लक्षण कथन ३०६
प्रश्न काल में अन्य शुभाशुभ लक्षण कथन ३०६
पुरुषसंज्ञक अङ्ग कथन ३०७
स्त्री संज्ञक अङ्ग कथन ३०७
नपुंसक संज्ञक अङ्ग कथन ३०७
पृथक्-पृथक् अङ्ग स्पर्श फल कथन ३०७
छाती आदि अंगों के स्पर्श का फल कथन ३०८
पैर के अंगुष्ठादि से फल कथन ३०८
प्रश्न समय ताल या भोजपत्र दर्शन का फल कथन ३०८
प्रश्न समय पीपल आदि दर्शन का फल कथन ३०८
प्रश्न समय हस्तस्थ न्यगोधादि वश फल कथन ३०९
प्रश्न समय के धान्य पूर्णपात्र आदि का फल कथन ३०९
प्रश्न समय पशु आदि के दर्शन का फल कथन ३०९

प्रश्न समय में वृद्धश्रावक आदि दर्शन फल कथन ३०९
प्रश्न समय में शावय आदि दर्शन फल कथन ३१०
प्रश्न समय में तापस आदि दर्शन फल कथन ३१०
पृच्छक के शब्दों से वस्तु चिन्ता कथन ३१०
प्रश्न समय के शब्दों से अन्य चिन्ता कथन ३१०
अङ्गों के स्पर्श से चौर विज्ञान कथन ३१०
उदर आदि स्पर्श से चोर विज्ञान कथन ३११
चोरी गई वस्तु का लाभालाभ कथन ३११
रोगी मरण व भोजन ज्ञान कथन ३११
ललाट आदि स्पर्श से भोजन ज्ञान कथन ३१२
कुक्षि अङ्ग आदि स्पर्श से भोजन कथन ३१२
सृक्क आदि स्पर्श से भोजन ज्ञान कथन ३१२
श्लेष्मक त्याग आदि से भोजन ज्ञान कथन ३१२
मूर्धा आदि के स्पर्श करने से भोजन ज्ञान कथन ३१३
अपशकुन से भोजन ज्ञान कथन ३१३
लड़की या लड़का पैदा होगा? कथन ३१३
गर्भ चिन्ता ज्ञान कथन ३१३
गर्भ तथा गर्भपात कथन ३१४
गर्भस्थिति ज्ञान कथन ३१४
सन्तान संख्या ज्ञान कथन ३१४
और भी सन्तान संख्या ज्ञान कथन ३१४
प्रसव कालिक नक्षत्र ज्ञान कथन ३१५
अध्यायोपसंहार कथन ३१५
पिटकलक्षण निरूपणम्—५२ ३१६-३१८
ब्राह्मण आदि जातियों का पिटक (फुन्सी) लक्षण कथन ३१६
पिटक विशेषता से फल कथन ३१६
और भी पिटक की विशेषता से फल कथन ३१६
और भी पिटक की विशेषता से फल कथन ३१७
और भी पिटक की विशेषता से फल कथन ३१७
और भी पिटक की विशेषता से फल कथन ३१७
और भी पिटक की विशेषता से फल कथन ३१७

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन	३१८
कुछ अन्य विशेष फल कथन	३१८
अन्य चिह्नों के फल निर्देश प्रकार कथन	३१८
वास्तुविद्याविचारः—५३	३१९-३५४
सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन	३१९
वास्तुविद्या की उत्पत्ति प्रदर्शनार्थ कथन	३१९
राजगृह के प्रमाण कथन	३१९
सेनापतिगृह प्रमाण कथन	३२०
सचिव गृह प्रमाण कथन	३२०
युवराज आदि के गृह प्रमाण कथन	३२१
सामन्त, वरिष्ठ राजपुरुष, कञ्चुकि आदि का गृह कथन	३२१
अध्यक्ष, कर्माध्यक्ष, अधिकारी पुरुषों के गृह प्रमाण कथन	३२१
दैवज्ञ, चिकित्सक, पुरोहित गृह प्रमाण कथन	३२२
गृह की ऊँचाई और एक शाल गृह का दैर्ध्य प्रमाण कथन	३२२
ब्राह्मण आदि वर्णों का वास्तु विस्तार और दैर्ध्य कथन	३२२
कोश-रति और राजपुरुष वास्तु प्रमाण कथन	३२२
पारशव आदि के वास्तु प्रमाण कथन	३२३
पशु, आश्रमी आदि के वास्तु प्रमाण कथन	३२३
सेनापति और राजा के गृह का शाला और अलिन्द प्रमाण कथन	३२३
ब्राह्मण आदि का शाला व अलिन्द प्रमाण कथन	३२३
वीथिका प्रमाण तथा उससे उपलक्षित वास्तु स्थलनाम कथन	३२४
वास्तु की ऊँचाई का प्रमाण	३२४
भित्तिप्रमाण ज्ञान में विशेष कथन	३२४
ब्राह्मणादि को छोड़कर अन्य के गृह द्वार प्रमाण कथन	३२४
ब्राह्मण आदि द्वार प्रमाण कथन	३२५
शाखा उदुम्बर का गोलाई व स्तम्भाग्रमूल प्रमाण कथन	३२५
स्तम्भों का नाम कथन	३२५
स्तम्भ के ऊपर-नीचे की रचना कथन	३२५
भारतुल्य, तुला व उपतुला प्रमाण कथन	३२६
सर्वतोभद्र वास्तु लक्षण कथन	३२६
नन्द्यावर्त्त वास्तु लक्षण कथन	३२६

वर्द्धमान वास्तु लक्षण कथन	३२६
स्वस्तिक वास्तु लक्षण कथन	३२६
रूचकवास्तुलक्षण कथन	३२६
सर्वतोभद्र आदि पाँच चतु:शालाओं का फल कथन	३२६
हिरण्य आदि त्रिशालाओं का सफल कथन	३२९
सिद्धार्थादि द्विशाल वास्तु का सफल कथन	३३०
एकाशी कोष्ठ क्षेत्र प्रदर्शनार्थ कथन	३३०
बाहरी कोष्ठकों के द्वात्रिंश देवताओं के नाम कथन	३३१
अन्त:स्थ कोष्ठकों के त्रयोदश देवता कथन	३३१
उपरोक्त क्षेत्रस्थित देवताओं का पदसंख्या प्रदर्शनार्थ कथन	३३१
वास्तुपुरुष के अङ्ग प्रविभागस्थ देवताओं के नाम कथन	३३२
चौंसठ कोष्ठकात्मक वास्तु पुरुष के देवताओं के प्रविभाग कथन	३३३
अब वास्तु के मर्म विभाग प्रदर्शनार्थ कथन	३३९
पीडित मर्म स्थान फल कथन	३३९
शल्य ज्ञान प्रकार कथन	३३९
शल्य प्रकारवश शुभाशुभ फल कथन	३३९
वंशसूत्र और महामर्मस्थान कथन	३४०
वंश व शिरा का परिमाण कथन	३४०
वास्तु में ब्रह्मपदों का महत्त्व कथन	३४०
विकल वास्तु का दोष प्रदर्शनार्थ कथन	३४१
गृह की तरह ग्रामों व नगरों में भी वास्तु पुरुष प्रविभाग कथन	३४१
चातुर्वर्णों के वास करने का क्रम कथन३४	१
चारों दिशाओं में बत्तीस द्वारों के फल प्रदर्शनार्थ कथन	३४२
पूर्व द्वार फल कथन	३४२
दक्षिण द्वार फल कथन	३४२
पश्चिम द्वार फल कथन	३४२
उत्तर द्वार फल कथन	३४३
द्वारवेध फल कथन	३४३
मार्ग आदि वेध में विशेषफल कथन	३४३
द्वार फल में अन्य विशेष फल कथन	३४४
द्वारफल में विशेष कथन	३४४

गृहादि के बाह्य कोणों में निवास फल कथन	३४४
दिशाओं के अनुसार शुभाशुभ वृक्षों का कथन	३४५
गृह के आसन्न वृक्षों का शुभाशुभ फल कथन	३४५
प्रशस्त भूमि लक्षण और फल कथन	३४५
अन्य गृह के निकटस्थ गृह का फल कथन	३४६
चातुवर्ण्य भूमि लक्षण कथन	३४६
भूमि विधानवश शुभाशुभ कथन	३४६
प्रकारान्तर से भूति विधान वश शुभाशुभ कथन	३४७
कच्चे मृत्पात्र के दीपकवश भूमि का शुभाशुभफल कथन	३४७
पुष्पवश भूमि का शुभाशुभ कथन	३४७
ब्राह्मणादि वर्णों के अन्य भूमि लक्षण कथन	३४७
गृहारम्भ पूर्व का विधान कथन	३४८
अङ्गुष्ठ आदि कृत रेखा फल कथन	३४८
शल्यज्ञान विवेचन पूर्वक उसका विधान कथन	३४९
शकुनकाल में हाथी आदि के स्वरवश हड्डी ज्ञान कथन	३४९
गधा आदि से शल्य ज्ञानार्थ कथन	३५०
शकुन के समय धन ज्ञानार्थ कथन	३५०
अन्यान्य शुभाशुभ ज्ञानार्थ कथन	३५०
शिलान्यास प्रदर्शनार्थ कथन	३५१
स्तम्भ आदि पर पक्षी आदि स्थिति फल कथन	३५१
वास्तु भूमि विषयक विशेष कथन	३५१
वास्तु भूमि विस्तारित करने का फल कथन	३५२
चतु:शाल गृह में देव आदि गृह का निर्णय कथन	३५२
वास्तु (गृह) स्थान से पूर्व आदि में जल फल कथन	३५२
गृह निर्माणार्थ काटने योग्य वृक्ष कथन	३५२
वृक्ष काटने की विधि और उसके गिरने का शुभाशुभ फल कथन	३५३
शुभाशुभ और वृक्षशल्य ज्ञानार्थ कथन	३५३
गृहस्वामी के लिए उपदेशार्थ कथन	३५३
गृहप्रवेश काल के गृह लक्षण कथन	३५३
दकार्गलनिरूपणम्–५४	३५५-३८२
जल का स्वरूपादि कथन	३५५

पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी कथन ३५५
भूगर्भस्थ शिराओं का ज्ञान कथन ३५५
शुभाशुभशिराओं का कथन ३५५
वेदमजनूँ के पेड़ से शिरा परिज्ञान कथन ३५६
शिराओं की स्थिति का लक्षण कथन ३५६
जामुन पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन ३५६
जामुन पेड़ से पूर्व बॉबी होने से जलशिरा परिज्ञान कथन ३५७
गूलर के पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन ३५७
अर्जुन पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३५७
निर्गुण्ड (सिन्दुवार) पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३५८
बेर के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३५८
ढाक व वेर के पेड़ों के संयोग से जलशिरा का ज्ञान कथन ३५८
बेल और गूलर के संयोग से जलशिरा परिज्ञान कथन ३५९
फल्गु के वृक्ष से जलशिरा परिज्ञान कथन ३५९
कपिल के पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन ३५९
शोणाक पेड़ के कुमुदा नाम की जलशिरा का ज्ञान कथन ३६०
बहेड़ा पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६०
पुनः बहेड़े के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६०
कोविदार (सप्तवर्ण) के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६०
बॉवी युक्त सप्तपर्ण पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन ३६१
वृक्ष के नीचे मेढ़क की स्थितिवश जलशिरा ज्ञान कथन ३६१
करञ्जक पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६१
महुआ के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६२
तालमखाना के पेड़ से जलशिरा क़ा ज्ञान कथन ३६२
कदम्ब के पेड़ से पश्चिम दिशा में स्थित सर्पवास से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६२
ताल या नारियल पेड़ से शिराज्ञान कथन ३६३
कपित्थ के पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन ३६३
अश्मंतक के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६३
हरिद्र पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन ३६४
जलहीन प्रदेश में जलीय चिह्न से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६४
भंगरैया आदि से जल का ज्ञान कथन ३६४

जलहीन देश में बाँबी युक्त तिलकादि पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६५
पुन: जलहीन देश में बाँबी युक्त तिलकादि ३६५
पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन ३६५
तृण सहित-रहित भूमि से जल या धन का ज्ञान कथन ३६५
कंटक व अकंटक पेड़ से जल या धन का ज्ञान कथन ३६५
चरण ताड़ित भूमि से जल का ज्ञान कथन ३६६
पेड़ की डालियों से जल का ज्ञान कथन ३६६
फल-पुष्पों से जल प्रवाह का ज्ञान कथन ३६६
काँटों वाले पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६६
खजूर पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६६
कर्णिकार व ढाक पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६७
वाष्प व धूम्र से जल का ज्ञान कथन ३६७
धान्य-फसल से जल का ज्ञान कथन ३६७
मरूभूमि में जल प्रवाह का ज्ञान कथन ३६७
पीलु पेड़ से जल प्रवाह का ज्ञान कथन ३६७
पुन: पीलु पेड़ से जल ज्ञान प्रकार कथन ३६८
करील पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६८
रोहितक पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६८
अर्जुन पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६९
धतूरा पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३६९
बेर व लाल करञ्ज की युति से जल का ज्ञान कथन ३६९
करील व बेर के युति से जल का ज्ञान कथन ३७०
पीलु व बेर पेड़ के युति से जल का ज्ञान कथन ३७०
अर्जुन व करील या अर्जुन व बेल से जल का ज्ञान कथन ३७०
बाँबी के ऊपर उगे दूब आदि से जल का ज्ञान कथन ३७०
कदम्ब व दुर्वा युत बाँबी से जल का ज्ञान कथन ३७०
बाँबी आवृत रोहितक पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३७१
शमी पेड़ से जल ज्ञान प्रकार कथन ३७१
पञ्च बाँबी से जल ज्ञान प्रकार कथन ३७१
पलाश व शमी पेड़ युति जल ज्ञान प्रकार कथन ३७१
बल्मीक युत रोहितक पेड़ से जल का ज्ञान कथन ३७२

श्वेत काँटों वाले शमी पेड़ से जल का ज्ञान कथन	३७२
जल का सामान्य ज्ञान कथन	३७२
जंगल में जल विषयक सामान्य चिह्न कथन	३७२
विकृत भूमि से जल का ज्ञान कथन	३७३
भूलक्षण से जल का ज्ञान कथन	३७३
स्निग्धादि वृक्षों से जल का ज्ञान कथन	३७३
भूदर्शन से जल का ज्ञान कथन	३७४
गर्म व शीतल भूमि से जल का ज्ञान कथन	३७४
बाँबी पंक्ति से जल ज्ञान प्रकार कथन	३७४
बड़-पीपल-गूलर आदि वृक्षत्रय से जल का ज्ञान कथन	३७४
शुभाशुभ कूप स्थान कथन	३७५
ग्रन्थकर्त्ता का विशेष कथन	३७५
जल ज्ञानदायक वृक्ष के लक्षण कथन	३७५
मूँज आदि से युत भूमि में सुस्वादु जल का ज्ञान कथन	३७६
भूमि के वर्ण से जल का ज्ञान कथन	३७६
शाक आदि के चिह्न से जल ज्ञान प्रकार कथन	३७६
भूवर्ण से जल ज्ञान प्रकार कथन	३७७
पाषाण वर्ण से जल ज्ञान प्रकार कथन	३७७
पुनः पाषाण वर्ण से जल का ज्ञान कथन	३७७
शिलास्वरूप वर्ण से जल का ज्ञान कथन	३७७
चन्द्रकिरण आदि सदृश पाषाण से जल ज्ञान कथन	३७८
शिला तोड़ने का उपाय कथन	३७८
पुनः शिला तोड़ने की विधि कथन	३७८
पुनः शिला तोड़ने के उपाय कथन	३७९
पुनः शिला तोड़ने के उपाय कथन	३७९
शस्त्रास्त्रों की धार बनाने की विधि कथन	३८०
पुनः धार बनाने की विधि कथन	३८०
वापी निर्माण विधि कथन	३८१
वापी के तट को बनाने वाले योग्य पेड़	३८१
जलगमनागमनमार्ग निर्माण कथन	३८१
जल शुद्ध करने के उपाय और उसका लाभ कथन	३८१

कूप, वापी खोदवाने का मुहूर्त्त कथन ३८२
अध्यायोपसंहार कथन ३८२
वृक्षायुर्वेदविचारः—५५ ३८३-३८८
प्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ३८३
वृक्ष योग्य भूमि का लक्षण कथन ३८३
गृह समीप या वाटिका भूमि में प्रथम लगाने योग्य वृक्ष कथन ३८३
वृक्षों के कलम लगाने का प्रकार कथन ३८३
वृक्ष आरोपण काल कथन ३८४
वृक्षारोपण के नियम कथन ३८४
वृक्षारोपण प्रकार कथन ३८४
आरोपित वृक्ष का सिंचन प्रकार कथन ३८४
अनूप प्रदेश में उत्पन्न वृक्ष कथन ३८४
वृक्षारोपण प्रमाण क्रम कथन ३८५
वृक्षों के बीच की दूरी का महत्त्व कथन ३८५
वृक्षों में रोग और उनके लक्षण कथन ३८५
वृक्षों की चिकित्सा कथन ३८५
फल हानि चिकित्सा कथन ३८६
वृक्ष की संवृद्धि के उपाय कथन ३८६
बीजवपन प्रकार कथन ३८६
इमली के बीज़ को बोने का प्रकार ३८६
कपित्थ बीजारोपण का प्रकार ३८७
अन्य वृक्षों के आरोपण प्रकार ३८८
श्लेष्मातक का आरोपण प्रकार कथन ३८८
वृक्षारोपण के नक्षत्र कथन ३८८
प्रासादलक्षणविचारः—५६ ३८९-३९५
सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ३८९
देवालय बनवाने का महत्त्व प्रदर्शनार्थ कथन ३८९
देवता निवास स्थान का कथन ३८९
पुनः देवता निवास स्थान कथन ३८९
और भी देवता निवास कथन ३९०
और भी देवता निवास स्थान कथन ३९०

देवतालय के योग्य भूमि कथन	३९०
देवतालय में वास्तुपुरुष लक्षण और द्वार विभाग कथन	३९०
देवतालय का विधान कथन	३९१
प्रासादों का नाम कथन	३९२
मेरु संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन	३९२
मन्दर और कैलाश संज्ञके प्रासाद लक्षण कथन	३९२
विमानच्छंद व नन्दन संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन	३९२
समुद्र और पद्म संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन	३९३
गरुड़ और नन्दिवर्धन संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन	३९३
कुञ्जर व गुहराज संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन	३९३
वृष, हंस और घट संज्ञक प्रासादों का लक्षण कथन	३९३
सर्वतोभद्र संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन	३९४
सिंह आदि प्रासादों के लक्षण कथन	३९४
मय और विश्वकर्मा के अनुसार भूमिका प्रमाण कथन	३९४
उपरोक्त मतों की एक वाक्यता कथन	३९४
अध्यायोपसंहारार्थ कथन	३९५
वज्रलेपलक्षणविचार:—५७	**३९६-३९७**
सर्वप्रथम वज्रलेप तैयार करने का प्रथम प्रकार	३९६
वज्रलेप की विशेषता	३९६
वज्रलेप तैयार करने का एक अन्य प्रकार कथन	३९६
वज्रलेप तैयार करने का प्रकार कथन	३९७
वज्रसंघात तैयार करने का प्रकार कथन	३९७
प्रतिमालक्षणविचार:—५८	**३९८-४०९**
सर्वप्रथम परमाणु-प्रमाण कथन	३९८
परमाणु प्रमाण में और भी कथन	३९८
सभी प्रतिमाओं का प्रमाण कथन	३९८
प्रतिमा के अवयव प्रमाण का कथन	३९८
पुन: प्रतिमा अवयव प्रमाण कथन	३९८
पुनरपि प्रतिमा अवयव प्रमाण कथन	३९९
और भी प्रतिमा अवयव प्रमाण कथन	३९९
वशिष्ठोक्त प्रतिमा रचना प्रकार कथन	३९९

और भी अन्य कथन	३९९
और भी अन्य कथन	३९९
और भी अन्यान्य कथन	४००
और भी अन्यान्य कथन	४००
और भी अन्यान्य कथन	४००
और भी अन्यान्य कथन	४००
नग्नजित् के अनुसार प्रतिमा निर्माण प्रकार कथन	४००
और भी अन्यान्य कथन	४०१
और भी अन्यान्य कथन	४०१
और भी अन्यान्य कथन	४०१
और भी अन्यान्य कथन	४०१
और भी अन्यान्य कथन	४०१
और भी अन्यान्य कथन	४०२
और भी अन्यान्य कथन	४०२
और भी अन्यान्य कथन	४०२
और भी अन्यान्य कथन	४०२
और भी अन्यान्य कथन	४०२
और भी अन्यान्य कथन	४०३
और भी अन्यान्य कथन	४०३
और भी अन्यान्य कथन	४०३
प्रतिमा स्वरूप प्रदर्शनार्थ कथन	४०३
प्रतिमा का विशेष लक्षण कथन	४०३
भगवान् विष्णु प्रतिमा स्वरूप कथन	४०४
हलधर की प्रतिमा का स्वरूप कथन	४०४
एकनंशा देवी प्रतिमा लक्षण कथन	४०५
शाम्ब व प्रद्युम्न प्रतिमा का लक्षण कथन	४०५
ब्रह्मा और कुमार कार्त्तिकेय प्रतिमा का लक्षण कथन	४०५
इन्द्र प्रतिमा लक्षण कथन	४०६
महेश्वर प्रतिमा लक्षण कथन	४०६
बुद्ध प्रतिमा लक्षण कथन	४०६
अर्हन् देव (जिन) प्रतिमा लक्षण कथन	४०६

भगवान् भास्कर प्रतिमा लक्षण कथन	४०७
सूर्य लक्षित सभी प्रतिमाओं का शुभाशुभ कथन	४०७
शिवलिङ्ग का लक्षण व स्थापन प्रकार कथन	४०८
शिवलिङ्ग का विशेष लक्षण और फल कथन	४०८
मातृगण प्रतिमाओं का लक्षण कथन	४०८
यम, वरुण और कुबेर प्रतिमा का लक्षण कथन	४०९
गणपति प्रतिमा लक्षण कथन	४०९
वनसम्प्रवेशविचारः—५९	**४१०-४१२**
सर्वप्रथम कर्त्तव्य निश्चयार्थ कथन	४१०
वर्जनीय वृक्षों का कथन	४१०
ब्राह्मण आदि के वर्ण से शुभवृक्ष कथन	४१०
यहाँ अन्य विशेष कथन	४११
वृक्ष को काटने का विधान कथन	४११
उपरोक्त प्रयोजनार्थ मन्त्र कथन	४११
पुनः वृक्ष काटने का विधान कथन	४१२
गिरे वृक्ष से शुभाशुभ कथन	४१२
ग्रन्थकार का विशेष कथन	४१२
प्रतिमाप्रतिष्ठापनविचारः—६०	**४१३-४१७**
सर्वप्रथम अधिवासन में मण्डप कथन	४१३
काष्ठ आदि निर्मित प्रतिमाओं का फल कथन	४१३
प्रतिमाओं के फलों में विशेष कथन	४१३
अधिवासन के लक्षणों का कथन	४१४
प्रतिमा पूजन-प्रकार कथन	४१४
तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन	४१४
उसके बाद के कर्त्तव्य का कथन	४१५
इसके बाद का कर्त्तव्य कथन	४१५
इसके बाद का कर्त्तव्य कथन	४१५
प्रतिमा प्रतिष्ठापन विधान कथन	४१५
प्रतिमा प्रतिष्ठापन करने के अधिकारियों का कथन	४१६
प्रतिमा प्रतिष्ठा का काल निर्णयार्थ कथन	४१६
ग्रन्थकार का अध्यायोपसंहार कथन	४१७

गोलक्षणविचारः—६१	४१८-४२१
सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन	४१८
गौओं के अशुभ लक्षण कथन	४१८
वृषभ के अशुभ लक्षण कथन	४१८
बैल के और भी अशुभ लक्षण कथन	४१९
बैल के और भी अशुभ लक्षण कथन	४१९
बैल के शुभ लक्षण कथन	४१९
बैलों का और भी शुभ लक्षण कथन	४२०
बैलों का और भी शुभ लक्षण कथन	४२०
बैलों का और भी शुभ लक्षण कथन	४२०
हंस संज्ञक बैल का लक्षण कथन	४२०
और भी वृद्धिकर बैल लक्षण कथन	४२१
बैलों के सामान्य शुभ लक्षण कथन	४२१
श्वलक्षणविचारः—६२	४२२
सर्वप्रथम कुत्तों का लक्षण कथन	४२२
कुक्कुरी (कुतिया) लक्षण कथन	४२२
कुक्कुटलक्षणविचारः—६३	४२३
सर्वप्रथम कुक्कुट (मुर्गी) का शुभ लक्षण कथन	४२३
कुक्कुट का शुभाशुभ लक्षण कथन	४२३
कुक्कुट का शुभ लक्षण कथन	४२३
कूर्मलक्षणविचारः—६४	४२४
सर्वप्रथम कछुओं का शुभ लक्षण कथन	४२४
कछुओं का और भी शुभ लक्षण कथन	४२४
कछुओं का और भी शुभ लक्षण कथन	४२४
छागलक्षण विचारः—६५	४२५-४२७
सर्वप्रथम छाग (बकरा) का शुभाशुभ लक्षण कथन	४२५
छाग के शुभ लक्षण का कथन	४२५
छाग का और भी शुभफल कथन	४२५
छाग का और भी शुभफल कथन	४२५
अब कुट्टक संज्ञक छाग का लक्षण कथन	४२६

कुटिल छाग लक्षण कथन	४२६
जटिल छाग लक्षण कथन	४२६
वामन छाग लक्षण कथन	४२६
गर्ग के अनुसार कुट्टकादि छागों का फल कथन	४२६
छाग का अशुभ लक्षण कथन	४२७
छाग के शुभलक्षण कथन	४२७
अश्वलक्षणविचारः—६६	**४२८-४३०**
सर्वप्रथम अश्व का शुभ लक्षण कथन	४२८
अशुभ रोमावर्त्तों का लक्षण कथन	४२८
शुभ रोमावर्त्तों का लक्षण कथन	४२८
अश्वों के दस ध्रुवावर्तों का कथन	४२९
अश्व की अवस्था के परिज्ञानार्थ कथन	४२९
हस्तिलक्षणविचारः—६७	**४३१-४३३**
हस्ति (हाथी) की भद्र, मन्द, मृग और मिश्र; ये चारजातियाँ होती हैं। वहाँ सर्वप्रथम भद्र जाति हस्ति लक्षण का कथन	४३१
मन्द जाति हस्ति लक्षण कथन	४३१
मृग और मिश्र जातियों के हस्ति लक्षण कथन	४३१
उपरोक्त जातिगत हाथियों की लम्बाई, मोटाई और ऊँचाई कथन	४३१
हस्तिमद का वर्ण लक्षण कथन	४३२
हस्तियों के शुभ लक्षण कथन	४३२
हस्तियों के और भी शुभ लक्षण कथन	४३२
हस्तियों के अशुभ लक्षण कथन	४३३
पुरुषलक्षणविचारः—६८	**४३४-४५८**
चिन्तनयोग्य कायगत लक्षण कथन	४३४
पादलक्षणानुसार फल कथन	४३४
पुरुष जङ्घ का फल कथन	४३५
पुरुष रोम लक्षण का फल कथन	४३५
पुरुष जानु लक्षण का फल कथन	४३५
लिङ्ग लक्षणानुसार फल कथन	४३५
पुनः लिङ्ग और वृषण के लक्षणानुसार फल कथन	४३६

मूत्रधारा, मणि, बस्ति और शुक्रगन्ध के लक्षण का फल कथन	४३६
स्फिक्‌लक्षण का फल कथन	४३७
कटि-उदर लक्षण का फल कथन	४३८
पार्श्व-कुक्ष-उदरलक्षणानुसार फल कथन	४३८
नाभिलक्षणानुसार फल कथन	४३८
बलिलक्षण का फल कथन	४३९
पार्श्वलक्षण का फल कथन	४३९
चूचकलक्षणानुसार फल कथन	४४०
हृदयलक्षणानुसार फल कथन	४४०
ग्रीवा-पृष्ठ लक्षणानुसार फल कथन	४४०
कक्षालक्षणानुसार फल कथन	४४१
स्कन्धलक्षणानुसार फल कथन	४४१
बाहुलक्षणानुसार फल कथन	४४१
हस्ताङ्गुलिलक्षणानुसार फल कथन	४४१
मणिबन्धलक्षण का फल कथन	४४२
करतललक्षणानुसार फल कथन	४४२
नखलक्षणानुसार फल कथन	४४२
अङ्गुष्ठाङ्गुलिलक्षणानुसार फल कथन	४४३
मणिबन्धगतरेखात्रय और मीन रेखाओं का फल कथन	४४३
करतलस्थ वज्र-मीनपुच्छ-शङ्ख आदि चिह्न के फल कथन	४४३
कलश-मृणाल-पताका होने का फल कथन	४४३
चक्र-तलवार आदि अनय चिह्न युक्त करतल का फल कथन	४४३
करतलस्थ मकर-ध्वज आदि अन्य चिह्नों का फल कथन	४४३
बावली-मन्दिर-त्रिकोण आदि चिह्न युक्त करतल का फल कथन	४४३
ऊर्ध्वरेखालक्षण का फल कथन	४४४
चिबुक-अधरलक्षण फल कथन	४४५
ओष्ठ-दशन-दन्ष्ट्रालक्षण लक्षणफल कथन	४४५
जिह्वा-तालुलक्षण फल कथन	४४५
मुखलक्षणानुसार फल कथन	४४५
श्मश्रुलक्षणानुसार फल कथन	४४६
कर्णलक्षणानुसार फल कथन	४४६

गण्डनासिकालक्षणानुसार फल कथन	४४६
क्षुतलक्षण फल कथन	४४७
लोचनलक्षण फल कथन	४४७
भ्रुकुटिलक्षण फल कथन	४४८
ललाटलक्षण फल कथन	४४८
रुदितलक्षणानुसार फल कथन	४४९
ललाटरेखालक्षण फल कथन	४४९
शिरोलक्षण फल कथन	४५०
गात्ररुक्षतालक्षण फल कथन	४५१
महापुरुष लक्षण कथन	४५१
नाभि आदि के लक्षणगत फल कथन	४५१
छाया की प्रशंसा व उसका फलज्ञान कथन	४५२
पृथ्वीछायालक्षण गत फल कथन	४५२
जलच्छायालक्षणगत फल कथन	४५२
अग्निच्छायालक्षणगत फल कथन	४५३
वाय्वाकाशच्छायालक्षणगत फल कथन	४५३
छायादेवतालक्षणगत फल कथन	४५३
स्वरलक्षणगत फल कथन	४५४
सप्तसारलक्षणगत फल कथन	४५४
रक्तसारलक्षणगत फल कथन	४५४
मज्जामेदस्सारलक्षणगत फल कथन	४५४
अस्थिशुक्रसारलक्षणगत फल कथन	४५४
सङ्घातलक्षणगत फल कथन	४५५
स्निग्धलक्षणगत फल कथन	४५५
वर्ण लक्षणगत फल कथन	४५५
मुखस्वभावलक्षणगत फल कथन	४५५
शरीरांगुलप्रमाण के फल कथन	४५६
कायभार प्रमाण के फल कथन	४५६
मानवर्षप्रमाण कथन	४५६
प्रकृति लक्षण कथन	४५६
महीजलस्वभावलक्षणगत फल कथन	४५६

अग्निवायुस्वभावलक्षणगत फल कथन ४५७
आकाशस्वभावलक्षणगत फल कथन ४५७
मनुजसत्त्वलक्षणगत फल कथन ४५७
रक्षः पिशाचलक्षणगतफल कथन ४५७
पशुसत्त्वलक्षणगत फल कथन ४५८
गतिलक्षण कथन ४५८
पञ्चमहापुरुषलक्षणविचारः—६९ ४५९-४६८
सर्वप्रथम उसका आरम्भ प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ४५९
पञ्चमहापुरुषों का योग विभाग कथन ४५९
उपरोक्त योगों में सूर्य और चन्द्र के बलवश विशेषता कथन ४५९
ग्रह से प्राप्तव्य गुण कथन ४६०
संकीर्ण ग्रहों की विशेषता कथन ४६०
हंसादि योगोत्पन्न जातक का प्रमाण कथन ४६०
सत्वादि गुण युक्त जातक का लक्षण कथन ४६०
मालव्य योगज जातक का लक्षण कथन ४६१
मालव्य योगज जातक का स्वभाव कथन ४६१
मालव्य योगज जातक की आयु आदि कथन ४६१
भद्र योगज जातक का लक्षण कथन ४६२
भद्र योगज जातक का और भी लक्षण कथन ४६२
भद्र योगज जातक का विशेष लक्षण कथन ४६२
भद्रयोगज जातक का हलादि रेखा चिह्न लक्षण कथन ४६२
भद्रयोगज जातक का मान लक्षण कथन ४६३
भद्रयोगज जातक की अवस्था लक्षण कथन ४६३
शश योगज जातक का लक्षण कथन ४६३
शशयोगज जातक का मान लक्षण कथन ४६३
शश योगज जातक का रेखा लक्षण कथन ४६४
शश योगज जातक की अवस्था लक्षण कथन ४६४
हंस योगज जातक का लक्षण कथन ४६४
हंस योगज जातक का मान लक्षण कथन ४६४
हंस योगज जातक की अवस्था लक्षण कथन ४६५
रूचक योगज जातक का लक्षण कथन ४६५

रूचक योगज जातक का मान लक्षण कथन ४६५
रूचक योगज जातक का खट्वाङ्ग आदि चिह्न लक्षण कथन ४६५
रूचक योगज जातक की अवस्था आदि कथन ४६५
पञ्च महापुरुष के अतिरिक्त पञ्चनृपानुचर लक्षण कथन ४६६
वामनक पुरुष लक्षण कथन ४६६
जघन्य संज्ञक पुरुष लक्षण कथन ४६६
कुब्ज संज्ञक पुरुष लक्षण कथन ४६७
मण्डलक संज्ञक पुरुष लक्षण कथन ४६७
साचि संज्ञक पुरुष लक्षण कथन ४६८
पुरुष लक्षण का प्रभाव कथन ४६८
स्त्रीलक्षणविचारः—७० ४६९-४७५
सर्वप्रथम स्त्रियों के नखपादादिलक्षणानुसार फल कथन ४६९
मत्स्यादि चिह्नयुतपादजङ्घादिलक्षणानुसार फल कथन ४६९
नितम्बनाभिलक्षणगत फल कथन ४६९
कट्यादिलक्षणगत फल कथन ४७०
अधरलक्षणगत फल कथन ४७०
चित्तादिलक्षणगत फल कथन ४७०
भ्रूललाटलक्षणगत फल कथन ४७०
कर्णकेशलक्षणगत फल कथन ४७१
रमणियों के लक्षण कथन ४७१
मणिबन्धादिलक्षणानुसार फल कथन ४७१
ऊर्ध्व रेखा लक्षणानुसार फल कथन ४७१
परमायु लक्षण कथन ४७२
सन्तति रेखा परिज्ञानार्थ कथन ४७२
एतदनन्तर स्त्रियों के शुभ लक्षण परिज्ञानार्थ कथन ४७२
पादाङ्गुलिलक्षणानुसार फल कथन ४७२
पिण्डिकोदरलक्षणगत फल कथन ४७३
ग्रीवालक्षणगत फल कथन ४७३
नेत्रगण्डकूपलक्षणगत फल कथन ४७३
ललाटलक्षणगत फल कथन ४७३
स्तनकर्णदन्तलक्षणगत फल कथन ४७३

करतल में क्रव्यादिरेखा का फल कथन ४७४
ओष्ठकेशलक्षणगत फल ४७४
आयुप्रमाण ज्ञानार्थ शरीर के अङ्गों का विभाग कथन ४७४

वस्त्रच्छेदलक्षणविचारः—७१ ४७६-४७८

सर्वप्रथम अश्विनी आदि नक्षत्रों में नववस्त्र धारण फल कथन ४७६
नवीन वस्त्र धारण में विशेष कथन ४७७
वस्त्रों के नौ भागों में देवादि स्थिति से शुभाशुभ फल कथन ४७७
वस्त्र के नौ भाग करने का प्रयोजन कथन ४७७
वस्त्र के उक्त नौ भागों की विकृति का फल कथन ४७७
वस्त्रोक्त भागों की विकृति के फलों में विशेषता कथन ४७८
और भी वस्त्रोक्त भागों की विकृति फलों में विशेषता कथन ४७८
और भी विशेष कथन ४७८

चामरलक्षणविचारः—७२ ४७९-४८०

सर्वप्रथम चामर प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ४७९
उपरोक्त बालों की विशेषता कथन ४७९
चामर दण्ड के लक्षणों का कथन ४७९
ब्राह्मणादि वर्ण क्रम से दण्ड का वर्ण कथन ४७९
दण्ड आदि में सम पर्व का फल कथन ४८०
दण्ड आदि में विषम पर्व का फल कथन ४८०

छत्रलक्षणविचारः—७३ ४८१-४८२

सर्वप्रथम छत्र प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ४८१
युवराज आदि के छत्र के दण्ड का प्रमाण कथन ४८१
अन्य राजपुत्रों के छत्रों का लक्षण कथन ४८१
राजपुरुषों के अतिरिक्त जनों का छत्र लक्षण कथन ४८२

स्त्रीप्रशंसाकथनम्—७४ ४८३-४८७

सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन ४८३
स्त्री प्रशंसा के लिए कथन ४८३
स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन ४८३
स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन ४८३
स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन ४८४

स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन ४८४
मनु द्वारा किया गया स्त्री प्रशंसा कथन ४८४
स्त्रियों की पवित्रता प्रदर्शनार्थ कथन ४८४
स्त्रियों की पवित्रता सार्वकालिक कथन ४८५
अनादृत स्त्री का प्रभाव कथन ४८५
स्त्रियों के विविध स्वरूप के महत्त्व का कथन ४८५
पुरुषों से स्त्रियों की श्रेष्ठता का कथन ४८५
परस्त्री गमन दोष निवृत्ति के प्रायश्चित कथन ४८५
धैर्ययुक्ता स्त्री का प्रशंसा कथन ४८६
स्त्रियों की निन्दा करने वालों की निन्दा कथन ४८६
स्त्रियों की समर्पण भावना की प्रशंसा कथन ४८६
राज्य सुख का सारा रूप स्त्री का कथन ४८६
स्त्री सुख का महत्त्व स्थापनार्थ कथन ४८६
स्त्री सुख का और भी महत्त्व स्थापनार्थ कथन ४८७
स्त्री की महिमा कथन ४८७

सौभाग्यकरणनिरूपणम्—७५ **४८८-४९०**

सुभग पुरुष के प्रसङ्ग में विशेषता कथन ४८८
स्त्रियों में पुरुष की आत्मा की स्थिति और उत्पत्ति कथन ४८८
दूर में स्थित की काम सम्भावना का कथन ४८८
दूर स्थित की काम सम्भावना में विशेषता कथन ४८९
सुभग और दुर्भग पुरुष लक्षण कथन ४८९
सुभग पुरुष की प्रशंसा कथन ४८९
सुभग पुरुष की और भी प्रशंसा कथन ४८९
सबके प्रिय बनने के उपाय कथन ४९०
उपकारी पुरुष की प्रशंसा कथन ४९०
दुर्जन पुरुष के हित में उपदेशात्मक कथन ४९०

कान्दर्पिकविचारः—७६ **४९१-४९४**

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ४९१
कामबन्धन के लिए रस्सियों का कथन ४९१
शुक्रवर्द्धन योग का कथन ४९१

शुक्र वर्द्धन योग का और भी कथन	४९१
बहुस्त्री संग शुक्रवर्द्धक योग कथन	४९२
बहुस्त्री-संग योग्य शुक्र वर्द्धक और योग कथन	४९२
बहुस्त्री संग योग्य शुक्रवर्द्धक और भी योग कथन	४९२
कामदेव संग शयन सुख प्राप्ति कथन	४९३
अति शुक्रकारक योग कथन	४९३
शक्तिक्षीणता दूर करने के उपाय कथन	४९३
जठराग्नि का उद्दीप्त करने के उपाय कथन	४९३
शुक्रक्षय योग का कथन	४९३
गन्धयुक्तिविचारः—७७	४९५-५०३
सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन	४९५
बाल काला करने का प्रयोग कथन	४९५
तत्पश्चात् स्नान आदि कर्त्तव्य कथन	४९५
शिरः स्नान की विधि का कथन	४९६
सुगन्धित तैल निर्माण की विधि का कथन	४९६
गन्धचतुष्टय निर्माण करने की विधि का कथन	४९६
गन्ध द्रव्य बनाने की अन्य विधि का कथन	४९६
धूप निर्माण करने की विधि का कथन	४९७
धून निर्माण करने की और भी विधि कथन	४९७
कोपच्छ धूप निर्माण विधि कथन	४९७
पुटवास (वस्त्र-सुगन्ध) धूप बनाने की विधि कथन	४९८
गन्धार्णव निर्माण की विधि का कथन	४९८
गन्धार्णव में विशेष कथन	४९८
उपरोक्त धूपों का बोधन रीति कथन	४९८
उपरोक्त गन्ध द्रव्यों की संख्या कथन	४९९
प्रत्येक द्रव्य से छः गन्ध द्रव्य कथन	४९९
समस्त गन्ध द्रव्यों की संख्या कथन	४९९
चार विकल्प से विविध मानों का संख्या कथन	४९९
समस्त गन्धों की संख्या प्रमाण कथन	४९९
गन्ध प्रकार संख्या ज्ञानार्थ लोष्टक प्रस्तार कथन	५००
अन्यान्य गन्ध योगों का कथन	५००

अन्यान्य गन्ध योग स्पष्टार्थ चक्र ५००
उपरोक्त गन्ध द्रव्यों के योग का चक्र न्यास प्रयोजनार्थ कथन ५०१
मुखवास पारिजात निर्माण का विधि कथन ५०१
स्नानार्थ चूर्ण निर्माण रीति कथन ५०१
केसर गन्ध के ८४ प्रकार निर्माण विधि कथन ५०१
दन्तकाष्ठ निर्माण विधान कथन ५०२
उपरोक्त दातुन के सेवन की विशेषता कथन ५०२
ताम्बूल की विशेषताओं का कथन ५०२
ताम्बूल में चूना, सुपारी आदि की मात्रा कथन ५०३
दिन रात्रि भेद से ताम्बुल भक्षण में विशेषता कथन ५०३
स्त्रीपुँससमायोगविचारः—७८ **५०४-५०९**
सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ५०४
अनुरक्ता स्त्रियों के लक्षणों का कथन ५०४
अनुरक्ता स्त्रियों की और अन्य चेष्टाओं का कथन ५०४
विरक्ता स्त्रियों के लक्षणों का कथन ५०५
स्त्रियों के परपुरुषगमिनी बनने में सहायक दूतियों का कथन ५०५
स्त्रियों के विनष्ट होने के संकेत हेतु कथन ५०६
स्त्रीगुण और काम लक्षणों का कथन ५०६
स्त्री पुरुष के लिए रत्न अथवा व्याधि का कथन ५०६
वर्ज्य लक्षणों वाली स्त्री कथन ५०६
स्त्रियों की विशेषताओं का कथन ५०७
त्याज्य स्त्रियों का लक्षण कथन ५०७
रजस्वला स्त्री के शोणित लक्षण का कथन ५०८
रजस्वला धर्म का कथन ५०८
स्त्री और पुरुष संयोग में तीन विभाग कथन ५०८
पुरुष, स्त्री और नपुंसक विभाग कथन ५०८
गर्भाधान मुहूर्त्त का कथन ५०९
ऋतुकाल के नियम प्रसङ्ग में विशेष कथन ५०९
शय्यासनलक्षणविचारः—७९ **५१०-५१७**
सर्वप्रथम इसका आरम्भ का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ५१०

राजाजनों के शय्या और आसन के शुभ वृक्ष कथन ५१०
शय्या व आसन के लिए अशुभकारी वृक्ष कथन ५१०
शय्या व आसन के लिए और भी अशुभकारी वृक्ष कथन ५१०
अशुभ वृक्ष से निर्मित शय्या व आसन का फलकथन ५११
शय्या व आसन बनाने के विचार से पूर्व कटे वृक्ष का फल कथन ५११
शय्यासन निर्माण काल का शुभ शकुन कथन ५११
राजाजनों के शय्या का प्रमाण कथन ५११
राजपुत्र आदि की शय्या का प्रमाण कथन ५११
शय्या की चौड़ाई और पापोच्छ्राय का प्रमाण कथन ५१२
अन्य वृक्षों के विशेष फल कथन ५१२
मिश्रवृक्ष से निर्मित शय्या का शुभाशुभ फल कथन ५१२
सभी वृक्षों के काष्ठ के साथ गजदन्त के योग का कथन ५१३
गजदन्त (हाथी दाँत) का लक्षण कथन ५१३
गजदन्त के लक्षणों का शुभाशुभ फल कथन ५१३
आसन सदृश शय्या का फल कथन ५१४
वृक्षों के विनियोग की विधि का कथन ५१४
पायों (पादों) का लक्षण कथन ५१५
पाये के ग्रन्थि युक्त होने का लक्षण कथन ५१५
छिद्रों के नाम कथन ५१५
छिद्रों का लक्षण कथन ५१६
निष्कुट आदि छिद्रों का फल कथन ५१६
मिश्र काष्ठ रचित शय्या का फल कथन ५१६

रत्नपरीक्षानिरूपणम्–८० ५१८-५२१

सर्वप्रथम रत्न परीक्षा का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ५१८
रत्न परीक्षा के क्रम में पाषाण रत्न का अधिकार कथन ५१८
रत्नोत्पत्ति प्रदर्शनार्थ आचार्यों के मत भेदों का कथन ५१८
रत्नों के नामों का कथन ५१८
वज्रमणि (हीरा रत्न) के सात आकर स्थान कथन ५१९
'हीरा' रत्न का देवता कथन ५१९
ब्राह्मण आदि चातुर्वर्णों के लिए उपयुक्त हीरा कथन ५१९
वज्र (हीरा) का मूल्य परिज्ञानार्थ कथन ५२०

शुभ हीरों का लक्षण कथन ५२०
अशुभ हीरों का लक्षण कथन ५२०
हीरों के अशुभ लक्षण कथन ५२०
हीरा धारण करने में विशेषता कथन ५२१
शुभाशुभ हीरा धारण फल कथन ५२१

मुक्तालक्षणनिरूपणम्—८१ ५२२-५२८

सर्वप्रथम मोतियों के उत्पत्ति स्थान कथन ५२२
मोतियों के आठ उत्पत्ति (आकर) स्थानों का कथन ५२२
विविध आकरों से प्राप्त मोतियों के लक्षण कथन ५२२
मोतियों की विशेषताओं का कथन ५२३
मोतियों के मूल्य परिज्ञानार्थ कथन ५२३
अन्य प्रकार से मोतियों का मूल्यांकनार्थ कथन ५२३
एक धरणगत १३ आदि मोतियों की पिक्का आदि संज्ञा कथन ५२४
मोतियों के उपरोक्त मूल्यांकन की समीक्षार्थ कथन ५२४
गजमुक्ता फल के लक्षणों का कथन ५२५
वराह और मत्स्य से उत्पन्न मोती लक्षण कथन ५२५
मेघोत्पन्न मुक्ताफल का लक्षण कथन ५२५
नागज मुक्ताफल (मोती) का लक्षण और पहचान विधि कथन ५२६
नागज मुक्ताफल का विशेषताओं का कथन ५२६
वेणु (बाँस) और शङ्ख से उत्पन्न मुक्ताफल का लक्षण कथन ५२६
मुक्ताफलों की अमूल्यता प्रदर्शनार्थ कथन ५२६
मुक्ताफल धारण के लाभ परिज्ञानार्थ कथन ५२७
मुक्ता निर्मित आभूषणों की संज्ञा परिज्ञानार्थ कथन ५२७

पद्मरागलक्षणनिरूपणम्—८२ ५२९-५३०

सर्वप्रथम पद्मरागों की उत्पत्ति लक्षण कथन ५२९
पद्मराग के गुणों के परिज्ञानार्थ कथन ५२९
पद्मराग के दोषों के परिज्ञानार्थ कथन ५२९
सर्प (नाग) मणि लक्षण परिज्ञानार्थ कथन ५२९
मणियों के प्रभाव परिज्ञानार्थ कथन ५२९
पद्मराग मणि का मूल्य निर्धारणार्थ कथन ५३०

मरकतलक्षणनिरूपणम्—८३ ५३१
मरकत का प्रयोजन और लक्षण परिज्ञानार्थ कथन ५३१
दीपलक्षणविचारः—८४ ५३२
सर्वप्रथम दीपक के अशुभ लक्षण और उसका फल कथन ५३२
अब दीपक के शुभ लक्षण और उसका फल कथन ५३२
दन्तकाष्ठलक्षणविचारः—८५ ५३३-५३५
सर्वप्रथम दन्तकाष्ठ का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ५३३
त्याज्य दन्तवन परिज्ञानार्थ कथन ५३३
विविध वृक्षों के दन्तवन का फल कथन ५३३
शिरीष आदि वृक्षों के दन्तवन का फल कथन ५३३
बदरी (बेद) आदि वृक्ष के दातुन प्रयोग का फल कथन ५३४
नीम आदि वृक्ष के दातुन प्रयोग का फल कथन ५३४
शाल आदि वृक्षों के दातुन का फल कथन ५३४
दातुन प्रयोग करने के विधान कथन ५३४
प्रयुक्त दातुन से शुभाशुभ फल कथन ५३५
शाकुने-मिश्रफलविचारः—८६ ५३६-५५५
सर्वप्रथम शाकुन का आगम प्रदर्शनार्थ कथन ५३६
शाकुन का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ५३६
शाकुनों के भेद प्रदर्शनार्थ कथन ५३६
शाकुन कारकों का साधारण लक्षण कथन ५३७
प्राणियों के पुरुषादि संज्ञार्थ लक्षण कथन ५३७
शेष अन्य के लक्षणों को लोकव्यवहारतः संज्ञानार्थ कथन ५३७
शाकुनफल घटित स्थलों का कथन ५३७
दिशाओं के लक्षणों के नियमों का कथन ५३८
दिशाओं में फलदान नियम कथन ५३८
और भी फल नियमार्थ कथन ५३८
दश प्रकार के दीप्त शकुन का लक्षण कथन ५३९
दशदीप्त शकुन के स्पष्टार्थ विशेष कथन ५३९
शुभस्थानस्थ शकुन का शुभ फल कथन ५३९
शकुनों का उत्तरोत्तर बल कथन ५३९

सबल और निर्बल शकुन कथन	५४०
जाति विभागवश पूर्वदिशा में बलवान् शकुन कथन	५४०
जातिविभागवश दक्षिण दिशा में बलवान् शकुन कथन	५४०
जाति विभागवश पश्चिम दिशा में बलवान् शकुन	५४०
जातिविभागवश उत्तर दिशा में बलवान् शकुन	५४१
शकुनों का प्रतिवभिागों का कथन	५४१
पुन: भी अग्राह्य शकुनों का कथन	५४१
शकुनों का ऋतुकालवश निष्फलत्व कथन	५४१
ऋतुवश अग्राह्य शकुनों के परिज्ञानार्थ कथन	५४१
हेमन्त काल में अग्राह्य शकुन कथन	५४२
द्वित्रिंशद् विभागात्मक दिग्भागों में पूर्वादि दिग्भागों का कथन	५४२
अग्निकोणादि दिशाओं के मध्यस्थ त्रिभागों का कथन	५४२
नैर्ऋत्यकोणादि दिशाओं के मध्यस्थ त्रिभागों का कथन	५४२
वायव्यादि दिशाओं के मध्य स्थित त्रिभागों का कथन	५४२
ईशान आदि दिशाओं में मध्य स्थित त्रिभागों का कथन	५४३
आठ दिशाओं के स्वामी कथन	५४३
यात्रा आदि कालिक शकुनों का फल कथन	५४३
स्वरों से शुभाशुभ परिज्ञानार्थ कथन	५४४
यात्री के वामदिशा में स्थित शुभ शकुन का कथन	५४४
यात्री के दक्षिण भाग में स्थित शुभ शकुन कथन	५४४
बायीं व दायीं भाग में स्थित शुभाशुभ शकुन का फल कथन	५४५
ग्राम स्वरों का शुभाशुभ ज्ञानार्थ कथन	५४५
अन्यान्य शुभाशुभ शकुनों का कथन	५४५
यात्रा समय के शुभाशुभ शकुन कथन	५४५
यात्रा समय के शुभाशुभ शकुन कथन	५४६
यात्रा के समय शुभाशुभ और भी शकुन कथन	५४६
दिशावश शकुनों का शुभफल कथन	५४६
दिशावश शकुनों का अशुभफल कथन	५४६
कर्म साधन आदि में शकुनों में विशेषता कथन	५४६
और भी शकुनों की विशेषता कथन	५४७
और भी शकुनों की विशेषता कथन	५४७

परिघ नामक आदि शकुन का फल कथन ५४८

द्वार नामक शकुन के अन्य मत से लक्षण कथन ५४८

विरोध नामक के शकुन का लक्षण कथन ५४८

विरोधी नामक शकुन का फल कथन ५४८

मृत्यु, कलह, रोगप्रद शकुनों का कथन ५४८

भय करने वाले शकुनों का कथन ५४९

चेष्टा दीप्त का लक्षण और उसका फल कथन ५४९

मेघ शब्द आदि से दीप्त शकुन के फलों का कथन ५४९

चिता आदि स्थित शकुनों का फल कथन ५४९

विष्ठा आदि करण शकुन का फल कथन ५४९

स्वर आदि दीप्त शकुन के फलों का कथन ५५०

सप्तदिनादि पर्यन्त शब्दकारी शकुन के फलों का कथन ५५०

दुर्भिक्षकारक शकुनों का कथन ५५०

विषम जाति मैथुन के फलों का कथन ५५०

पाद, ऊरू आदि का शकुन द्वारा अतिक्रमण करने का फल कथन ५५१

शकुन द्वारा आगन्तुक लक्षण परिज्ञानार्थ कथन ५५१

द्रव्य युक्त आगन्तुक शकुनों का कथन ५५१

विदिक्स्थित शकुन का फल कथन ५५१

शान्त और दीप्त दिशा के शकुनवश फल कथन ५५२

मध्यस्थित शकुन से फलों का कथन ५५२

वृक्ष के अग्र-मध्य-मूल आदिस्थ शकुनों का फल कथन ५५२

उन्नत (पर्वत) आदि प्रदेशस्थ शकुन फल कथन ५५२

दिशा स्वामी और पुरुष-स्त्री संज्ञा कथन ५५३

लेख परिज्ञानार्थ कथन ५५३

पूर्वादिस्थ शकुन फल प्राप्ति तथा उसका वर्ण परिज्ञानार्थ कथन ५५३

अन्य शुभ शकुन में स्थान संकेतार्थ कथन ५५४

दिशागत शकुन से स्त्री स्वरूपादि निर्देशनार्थ कथन ५५४

प्रश्न के समय शकुन विचार के परिज्ञानार्थ कथन ५५५

शाकुने-अन्तरचक्रविचारः—८७ ५५६-५६५

सर्वप्रथम पूर्वोक्त बत्तीस भागात्मक दिक्चक्र में शान्त
दिशा गत प्रथम भागस्थ शकुन फल कथन ५५६

दूसरे और तीसरे भागस्थ शकुनों का फल कथन ५५६
चतुर्थभाग और अग्निकोणस्थ शकुन का फल कथन ५५६
दक्षिण दिशा के प्रथम और द्वितीय भागस्थ शकुन फल कथन ५५६
अग्निकोण से चौथे भागस्थ शकुन का फल कथन ५५७
दक्षिण भाग और उससे दूसरे भागस्थ शकुन फल कथन ५५७
तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन ५५७
नैर्ऋत्यकोण और उससे दूसरे भागस्थ शकुन फल कथन ५५७
नैर्ऋत्य कोण से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन ५५७
पश्चिम दिशा और उससे दूसरे भागस्थ शकुन फल कथन ५५८
पश्चिम दिशा से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन ५५८
वायव्य कोण और उससे द्वितीय भावस्थ शकुन का फल कथन ५५८
वायव्य कोण से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन का फल कथन ५५८
उत्तर दिशा और उससे दूसरे भागस्थ शकुन का फल कथन ५५८
उत्तर दिशा से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन ५५९
ईशान कोण और उससे द्वितीय भागस्थ शकुन फल कथन ५५९
ईशान कोण से तृतीय और चतुर्थ भागस्थ शकुन का फल कथन ५५९
बत्तीस विभागात्मक दिशा चक्र के प्रसङ्ग में विशेष कथन ५५९
नाभि और पूर्वभागस्थ अरस्थ शकुन का फल कथन ५६०
अग्निकोणस्थ अर में शकुन का फल कथन ५६०
दक्षिण दिशा के शकुन का फल कथन ५६०
नैर्ऋत्य कोणस्थ शकुन का फल कथन ५६०
पश्चिम दिशा के शकुन का फल कथन ५६०
वायव्य कोण के शकुन का फल कथन ५६१
उत्तर दिशा के शकुन का फल कथन ५६१
ईशान कोण के शकुन का फल कथन ५६१
उपरोक्त पूर्वादि दिशा में स्थित शकुन में विशेष कथन ५६१
पूर्वदीप्त दिशा के शकुन का फल कथन ५६१
पूर्व दिशा के दूसरा और तीसरा भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन ५६२
पूर्वदिशा के चौथे भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन ५६२
अग्निकोण से तीसरा व चौथा भाग दीप्त शकुन का फल कथन ५६२
अग्निकोण से पाँचवें और छठवें भाग के दीप्त शकुन का फल कथन ५६२

अग्निकोण से सातवें और आठवें भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन ५६२
नैर्ऋत्य कोण और पश्चिम दिशा के पहिले भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन ५६३
पश्चिम दिशा के दूसरे से पाँचवें भाग तक में स्थित दीप्त शकुन का फल कथन ५६३
पश्चिम दिशा के छठे और सातवें तथा वायव्य कोणीय दीप्त शकुन का फल कथन ५६३
वायव्य कोणीय तीसरे व चौथे भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन ५६३
उत्तर दिशा और उससे दूसरे-तीसरे भाग स्थित दीप्त शकुन का फल कथन ५६४
उत्तर दिशा के चौथे और ईशान कोणस्थ दीप्त शकुन फल कथन ५६४
ईशान कोणीय दूसरे व तीसरे भाग स्थित शकुन फल कथन ५६४
दिक् चक्रान्तिम भाग और पूर्वभागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन ५६४
अग्निकोण आदि दिशा के दीप्त शकुन का फल कथन ५६४

शाकुने-विरुतनिरूपणम्–८८ ५६६-५७५

सर्वप्रथम दिनचर प्राणियों के नाम परिज्ञानार्थ कथन ५६६
रात्रिचर प्राणियों के नाम परिज्ञानार्थ कथन ५६६
उभयचर प्राणियों के नाम परिज्ञानार्थ कथन ५६६
उपरोक्तों का व्यवहार के लिए संज्ञा कथन ५६६
प्रसङ्गवश ग्रन्थकार का उपदेशार्थ कथन ५६७
वञ्जुल, बाज, तोता, गिद्ध आदि शब्द लक्षण ज्ञानार्थ कथन ५६७
कपोत (कबूतर) की चेष्टा का फल कथन ५६८
श्यामा पक्षी का शब्द अथवा स्वर ज्ञानार्थ कथन ५६८
हारीत और भारद्वाज पक्षी का स्वर (शब्द) ज्ञानार्थ कथन ५६८
करायिका पक्षी का स्वर (शब्द) ज्ञानार्थ कथन ५६८
दिव्यक पक्षी की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५६९
सर्प चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५६९
खञ्जन पक्षी की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५६९
तित्तिर और खरहा की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५६९
वानर और कुलाल कुक्कुट का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५६९
चाष (नीलकण्ठ) के स्वर और चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५७०
काक और नीलकण्ठ की झगड़ा से फल ज्ञानार्थ कथन ५७०

नीलकण्ठ का और स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७०
अण्डीरक और फेण्ट पक्षी की चेष्टा कथन ५७०
श्रीकर्ण पक्षी का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७१
दुर्बलि पक्षी का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७१
दुर्बलि पक्षी का विशिष्ट स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७१
सारिका (मैना) का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७१
फेण्टक का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७१
गर्दभ (गधा) का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७२
कुरङ्ग, मृग और पृषत के स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७२
मुर्गा का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७२
छिप्पिका और विडाल (मार्जार) के स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७२
उलुक स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७३
सारस का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७३
पिङ्गला का स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७३
पिङ्गला का और भी स्वर ज्ञानार्थ कथन ५७३
अभी सिद्धयर्थ विधि ज्ञानार्थ कथन ५७४
पिङ्गला सिद्धि मन्त्र ज्ञानार्थ कथन ५७४
पिङ्गला की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५७४
गृहगोधिका (छिपकली) का फल कथन ५७५

शाकुने-श्वचक्रनिरूपणम्–८९ **५७६-५८१**

सर्वप्रथम कुत्ता की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन ५७६
कुत्ता की चेष्टा ज्ञानार्थ और भी कथन ५७६
कुत्तों द्वारा मुख से जूते आदि ग्रहण करने के फल ज्ञानार्थ कथन ५७६
कुत्तों द्वारा शब्द करने का फल ज्ञानार्थ कथन ५७७
अग्निकोण आदि में कुत्ता के शब्द का फल कथन ५७८
सूर्यास्त आदि काल में कुत्ते के स्वर का फल कथन ५७८
मध्यरात्रि आदि काल में कुत्तों के शब्द का फल कथन ५७८
वर्षा ऋतु के समय कुत्तों के शब्द का फल कथन ५७८
कुत्ता की चेष्टा से वृष्टि और ज्ञानार्थ कथन ५७८
कुत्ता की चेष्टा से स्त्री वेश्या योग कथन ५७९

कुत्तों द्वारा दीवार खोदने का फल कथन ५७९
अश्रुपूरित आदि कुत्ते के आँखों का फल कथन ५७९
कुत्तों के सूँघने का फल ज्ञानार्थ कथन ५७९
कुत्तों के सूँघने का और भी फल ज्ञानार्थ कथन ५७९
कुत्ते के अन्य चेष्टाओं के फल कथन ५८०
कुत्ते का गाँव से श्मशान एक शब्द करने का फल कथन ५८०
उकार आदि वर्ण से कुत्ते का शब्द करने का फलकथन ५८०
कुत्ते के खंख शब्द करने का फल कथन ५८०
अपनी जिह्वा से अपने मुख को कुत्ता द्वारा चाटने का फल कथन ५८०
कुत्तों के समूह में शब्द करने का फल कथन ५८१
कुत्ते के शब्दों का सामान्य फल ज्ञानार्थ कथन ५८१

शाकुने-शिवारुतनिरूपणम्—९० ५८२-५८५

सर्वप्रथम कुत्ता के समान सियार के फलागम प्रदर्शनार्थ कथन ५८२
लोमाशिका की चेष्टा परिज्ञानार्थ कथन ५८२
शृगाली की चेष्टा में और भी कथन ५८२
दिशा स्वामी या अधिपति परिज्ञानार्थ कथन ५८२
शिवा के दीप्त स्वर का अशुभ फल परिज्ञानार्थ कथन ५८३
शिवा के 'याहि' व 'टा टा' स्वरों के फल ज्ञानार्थ कथन ५८३
शिवा के शब्द विशेष के फल में मतान्तर कथन ५८३
शिवा द्वारा प्रतिशब्द करने का फल कथन ५८३
शिवा के स्वरवश फल ज्ञानार्थ कथन ५८३
अशुभकारिणी शिवा लक्षण कथन ५८४
शुभकारिणी शिवा लक्षण कथन ५८४
शिव के स्वर प्रकार से प्रकार कथन ५८४
शिवा का शुभ स्वर परिज्ञानार्थ कथन ५८५
कल्याणिनी शिवा कथन ५८५

शाकुने-मृगचेष्टानिरूपणम्—९१ ५८६

सर्वप्रथम मृगों की चेष्टा का प्रदर्शनार्थ कथन ५८६
वनचर मृग के दीप्त स्वर में अन्य पशुओं के स्वर मेल से फल कथन ५८६
वनचर प्राणियों से सम्बन्धित और फल कथन ५८६

शाकुने-गवेङ्गितनिरूपणम्—९२ ५८७
सर्वप्रथम गायों की चेष्टा प्रदर्शनार्थ कथन ५८७
गायों के शब्दों आदि से शुभाशुभ फल ज्ञानार्थ कथन ५८७
गाय और महिष के शुभ चेष्टा का फल कथन ५८७
शाकुने-अश्वेङ्गितनिरूपणम्—९३ ५८८-५९१
सर्वप्रथम अश्व की चेष्ट परिज्ञानार्थ कथन ५८८
अश्व के लिङ्ग आदि अङ्गों के प्रदीपन का फल कथन ५८८
अश्वों के स्कन्ध आदि प्रदीपन का फल कथन ५८८
अश्वों के नासापुट आदि प्रदीप्त होने का फल कथन ५८८
अश्व की अशुभ चेष्टाओं के प्रदर्शनार्थ कथन ५८९
अशुभकारी अश्व दशा परिज्ञानार्थ कथन ५८९
अश्व शब्द का फल परिज्ञानार्थ कथन ५८९
हिनहिनाते हुए अश्व के पास शुभ द्रव्य का फल कथन ५८९
अश्व की अन्यान्य चेष्टाओं का प्रदर्शनार्थ कथन ५९०
अश्व की अशुभ चेष्टाओं के परिज्ञानार्थ कथन ५९०
अश्व की अन्यान्य अशुभ चेष्टाओं का कथन ५९०
अश्व की शुभ चेष्टा कथन ५९०
श्रीवृद्धिप्रद अश्व लक्षण कथन ५९१
अश्व की अशुभ चेष्टाओं का कथन ५९१
अध्यायोपसंहार ५९१
शाकुने-हस्तीङ्गितनिरूपणम्—९४ ५९२-५९५
गजदन्त लक्षण कथन ५९२
परिकल्पित गजदन्त के श्रीवत्स आदि लक्षण और फल कथन ५९२
गजदन्त के शास्त्रादि चिह्न का फल कथन ५९२
गजदन्त की स्त्री आदि चिह्न का फल कथन ५९२
छिपकली आदि जैसी आकृति का फल कथन ५९३
गजदन्तस्थ पाश आदि चिह्न फल कथन ५९३
छेदादि लक्षण युक्त गजदन्त का फल कथन ५९३
गजदन्त के अन्य शुभाशुभ फल कथन ५९३
गजदन्त के भङ्ग होने पर शुभाशुभ फल कथन ५९४

दोनों गजदन्त के टूटने का शुभाशुभ फल कथन ५९४
गजदन्त भङ्ग में विशेषता से फल कथन ५९४
हाथियों की अशुभ चेष्टाओं का फल कथन ५९४
हाथियों की शुभ चेष्टाओं का फल कथन ५९५
हाथियों को अन्यान्य और भी चेष्टाओं का कथन ५९५
शाकुने-वायसविरुतनिरूपणम्—९५ ५९६-६१०
सर्वप्रथम प्रविभाग प्रदर्शनार्थ कथन ५९६
कौआ की चेष्टाओं का फल कथन ५९६
घोसलों के द्वारा वृष्टि आदि फल ज्ञानार्थ कथन ५९६
चोर, रोग, अनावृष्टि कारक काग चेष्टाओं कथन ५९७
कौए के दो, तीन आदि अण्डे देने का फल परिज्ञानार्थ कथन ५९७
कौए के बच्चों से फल की विशेषता कथन ५९७
कौए की चेष्टा से दुर्भिक्ष आदि ज्ञानार्थ कथन ५९७
शत्रुवृद्धि और जनहानिकारक कागचेष्टा कथन ५९७
कौए की अन्य चेष्टाओं का फल कथन ५९८
कौए की और भी अन्य चेष्टाओं का फल कथन ५९८
कौए की चेष्टाओं में शय्या से विशेषता कथन ५९८
धन और भयदायक कौए की चेष्टाओं का कथन ५९८
कौए की कुछ अन्य चेष्टाओं का फल कथन ५९८
वस्तु निर्दिष्ट चेष्टाओं का फल कथन ५९९
वृष्टि और दुर्भिक्षकारी कौए की चेष्टाओं का कथन ५९९
कौए की भयकारक शब्द का फल कथन ५९९
सूर्याभिमुख काग चेष्टा फलों का कथन ५९९
कौए की चेष्टाओं का दीप्त दिशाओं के अनुसार फल कथन ६००
शान्तपूर्व दिशा से काक शब्द फल कथन ६००
शान्त आग्नेय और दक्षिण दिशा से काक शब्द फल कथन ६००
शान्त नैर्ऋत्यकोण और पश्चिम दिशा से का शब्द फल कथन ६००
शान्त वायव्य कोण और उत्तर दिशा से काक शब्द फल कथन ६०१
शान्त ईशान कोण से काक शब्द फल कथन ६०१
कर्ण समकक्ष काग के उड़ने का फल कथन ६०१
दायें व बायें भागस्थ काक शब्द फल कथन ६०१

पुनः दायें व बायें भागस्थ काक शब्द फल कथन ६०२
यात्री को यात्रा का लाभ गृह स्थिति में कराने वाला फल कथन ६०२
दायें व बायें भागवश कौए का फल कथन ६०२
रक्तस्राव कारक काक शब्द फल कथन ६०२
कौए से प्रधान पुरुष वध परिज्ञान कथन ६०२
धान्य के साथ भूमि प्राप्ति और कष्ट परिज्ञानार्थ कथन ६०३
सुकोमल पत्रों आदि पर स्थित काग का फल कथन ६०३
धन प्राप्तिकारक काक शब्द परिज्ञानार्थ कथन ६०३
सर्प दर्शन, ज्वर आदि कारक काक शब्द का कथन ६०३
कार्यविनाशक और वधकारक काक शब्द कथन ६०३
कार्य-सिद्धि और बन्धन योग कारक काक स्थिति कथन ६०४
शीर्ष रहित वृक्ष आदि पर स्थित बाग का फल कथन ६०४
मृतपुरुष आदि के अङ्गस्थ कागफल कथन ६०४
सर्प, रोग आदि का भय उत्पन्न करने वाला काग चेष्टाओं का कथन ६०४
अर्थ सिद्धि और यात्रा बाधाकारक काग शब्द का कथन ६०५
बन्धन आदिकारक काग शब्द कथन ६०५
परमसंतुष्टि और स्त्री लाभकारक काग चेष्टा कथन ६०५
स्त्री लाभ, पुत्रमरण, भोजनलाभ आदि कारक काग चेष्टा कथन ६०५
काग के अन्य चेष्टाओं का निहितार्थ कथन ६०५
सन्धि और युद्धकारक काग चेष्टा कथन ६०६
कागचेष्टा का विविध फल कथन ६०६
काग की अन्यान्य और चेष्टाओं का कथन ६०६
काग चेष्टाओं के फलों में विशेषता कथन ६०६
काग के 'का' 'कव' 'क' आदि शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन ६०७
काग के और शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन ६०७
काग के और भी शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन ६०७
काग के और भी शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन ६०७
काग के और भी शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन ६०८
काग का 'टावु टाकु'; 'गुहु' आदि शब्दों के प्रयोगार्थ कथन ६०८
काग के शब्द आदि द्वारा फल ज्ञान में विशेष कथन ६०८
अन्यान्य जन्तुओं की चेष्टा परिज्ञानार्थ कथन ६०८

चीटियों की चेष्टाओं का परिज्ञानार्थ कथन ६०९

शाकुन दर्शन आदि का फल निश्चयार्थ कथन ६०९

इन शकुनों की प्रशंसा कथन ६०९

अशुभ शकुन काल में कर्त्तव्य ज्ञानार्थ कथन ६०९

शाकुनोत्तरविचारः—९६ ६११-६२६

सर्वप्रथम शाकुनफलवाचनार्थ ग्रन्थकार का उपदेश कथन ६११

उनके भेदों के प्रदर्शनार्थ कथन ६११

स्थिर, चर आदि के ज्ञानार्थ कथन ६११

स्थिर और चर का लक्षण कथन ६१२

अब वृष्टि ज्ञानार्थ कथन ६१२

आग्नेय भय-दोष ज्ञानार्थ कथन ६१२

कलह-परिज्ञानार्थ कथन ६१२

स्त्री संग्रहण योग परिज्ञानार्थ कथन ६१२

पुरुष का नपुंसक से संगम परिज्ञानार्थ कथन ६१३

प्रधान पुरुष का आगमन परिज्ञानार्थ कथन ६१३

प्रकारान्तर से कर्म विधान परिज्ञानार्थ कथन ६१३

आगत की आकृति परिज्ञानार्थ कथन ६१३

बाल पाठकों के हितार्थ बोधियात्रा नामक ग्रन्थ से यवनेश्वरकृत अक्षर-कोश का व्याख्यान पूर्व उसमें सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ६१४

अक्षरों और ग्रहों का क्रम ज्ञानार्थ कथन ६१४

ग्रहों का वर्ग कथन ६१४

राशि और द्रेष्काण के अनुसार नामाक्षर संख्या कथन ६१५

नवमांश के अनुसार नामाक्षरसंख्या कथन ६१५

इस प्रसङ्ग में विशेषार्थ कथन ६१५

संयुक्ताक्षर परिज्ञानार्थ कथन ६१६

इस प्रसङ्ग में विशेषार्थ कथन ६१६

नामाक्षर संग्रह और उसकी हानि कथन ६१७

अक्षर संख्या ज्ञानार्थ कथन ६१७

अक्षर और मात्रा संयोग कथन ६१७

अक्षरों का क्रम ज्ञानार्थ कथन ६१७

नवमांश क्रमवश राशिगत अक्षर कथन ६१७

उदाहरण द्वारा राश्यादि क्रम से अक्षर ज्ञानार्थ कथन ६१८
मेष लग्न से तीसरे और चौथे नवमांश में वर्ण-विन्यास क्रम कथन ६१८
मेष लग्न से पञ्चम और षष्ठ नवमांश वर्ण विन्यास क्रम कथन ६१९
मेष लग्न से सातवाँ और आठवाँ नवमांश वर्ण विन्यास क्रम कथन ६१९
मेष लग्न से नौवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६१९
वृष लग्नस्थ पहला नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२०
वृष लग्न के दूसरा और तीसरा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२०
वृष लग्न के चौथा और पाँचवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२०
वृष लग्न के छठा और सातवाँ नवमांश वर्ण विन्यास क्रम कथन ६२१
वृष लग्न के आठवाँ और नौवा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२१
मिथुन लग्न के पहिला नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२२
मिथुन लग्नस्थ दूसरा और तीसरा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२२
मिथुन लग्नस्थ चौथा और पाँचवा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२२
मिथुन लग्न के छठा और सातवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२३
मिथुन लग्न के आठवाँ और नौवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन ६२३
तदनन्तर विभाग प्रदर्शनार्थ कथन ६२३
नाम आनयन करने हेतु अन्य प्रकार कथन ६२४
अब विषय व्याप्ति प्रदर्शनार्थ कथन ६२४
गत अक्षर कोश में आये हुए नाम का साधनार्थ कथन ६२५
नामवर्ण आनयन परिज्ञानार्थ कथन ६२५
उपरोक्त नाम के व्यक्ति का अवस्था परिज्ञानार्थ कथन ६२६

पाकविचारः—९७ **६२७-६३०**

सर्वप्रथम ग्रहों के चार सम्बन्धी फलों का पाक काल ज्ञानार्थ कथन ६२७
विरोधाभासी शीतता और उष्णता आदि का फल परिज्ञानार्थ कथन ६२७
अक्रियमाण कर्म का सम्पादन आदि का फल ज्ञानार्थ कथन ६२७
स्तम्भ (खम्भा) आदि का सम्वाद आदि का फल ज्ञानार्थ कथन ६२८
कीड़ा-चूहा आदि से सम्बन्धित फल काल ज्ञानार्थ कथन ६२८
वन में कुत्तों का प्रसव आदि के फलों का काल कथन ६२८
शृगाल, गिद्ध आदि के फलों के काल ज्ञानार्थ कथन ६२८
अग्नि अभाव में ज्वाला आदि का फल काल ज्ञानार्थ कथन ६२८
छत्र आदि की विकृति का फल काल ज्ञानार्थ कथन ६२९

परस्पर शत्रु जीवों में प्रेम आदि का फल ज्ञानार्थ कथन ६२९
गन्धर्व नगर आदि का फल काल ज्ञानार्थ कथन ६२९
अश्विनी आदि नक्षत्रों का फल काल ज्ञानार्थ कथन ६२९
मघा आदि नक्षत्रों का फलकाल ज्ञानार्थ कथन ६२९
श्रवण आदि नक्षत्रों के उपद्रव का फल काल ज्ञानार्थ कथन ६३०
अध्यायोपसंहार ६३०

नक्षत्रकर्मगुणविचारः—९८ ६३१-६३५

सर्वप्रथम अश्विन्यादि नक्षत्रों का तारा और उसकी संख्या कथन ६३१
अश्विनी आदि नक्षत्रों के स्वामी परिज्ञानार्थ कथन ६३१
ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र और उसके विहितकर्म कथन ६३३
तीक्ष्णसंज्ञक नक्षत्र और उसके विहित कर्म कथन ६३३
उग्रसंज्ञक नक्षत्र और उसमें विहित कर्म कथन ६३३
लघुसंज्ञक नक्षत्र और उसके विहित कर्म कथन ६३३
मृदुसंज्ञक नक्षत्र और उसमें विहित कर्म कथन ६३३
मृदुतीक्ष्ण और चरसंज्ञा वाले नक्षत्र और उनका कर्म कथन ६३४
क्षौर कर्म करने योग्य नक्षत्रों का कथन ६३४
क्षौरकर्म वर्जित काल का कथन ६३४
क्षौरकर्म में विशेषता कथन ६३४
पुरुष संज्ञक नक्षत्र और उसमें विहित पुरुष संज्ञक कार्य सम्पादन कथन ६३५
संस्कार विहित नक्षत्रों का परिज्ञानार्थ कथन ६३५
समस्त कर्मों की लग्न शुद्धि कथन ६३५

तिथिकर्मगुणविचारः—९९ ६३६-६३७

तिथि, तिथिस्वामी, तिथियों के प्रकार आदि परिज्ञानार्थ कथन ६३६

करणकर्मगुणविचारः—१०० ६३८-६४१

सर्वप्रथम सात चर करणों के नाम और स्वामी परिज्ञानार्थ कथन ६३८
चार स्थिर करणों के नाम और स्वामी परिज्ञानार्थ कथन ६३८
चर करणों के विहित कर्म और उसके फलों का कथन ६३८
स्थिर करणों का विहित कर्म और फल परिज्ञानार्थ कथन ६३९
कर्णवेध मुहूर्त्त परिज्ञानार्थ कथन ६४०
सारांश में विवाह पटल परिज्ञानार्थ कथन ६४०

नक्षत्रजातकविचारः—१०१ ६४२-६४५

सर्वप्रथम अश्विनी और भरणी नक्षत्रोत्पन्न का फल कथन ६४२
कृत्तिका और रोहिणी नक्षत्रजात फल ज्ञानार्थ कथन ६४२
मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न का फल कथन ६४२
पुनर्वसु नक्षत्रजात का फल ज्ञानार्थ कथन ६४२
पुष्य और श्लेषा नक्षत्र जात फल ज्ञानार्थ कथन ६४३
मघा और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रजात का फल कथन ६४३
उत्तराफाल्गुनी और हस्त नक्षत्र जात का फल कथन ६४३
चित्रा और स्वाती नक्षत्रजात का फल कथन ६४३
विशाखा और अनुराधा जात का फल कथन ६४४
ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र जात फल कथन ६४४
पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र जात का फल कथन ६४४
श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र जात का फल कथन ६४४
शतभिषा और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र जात का फल कथन ६४५
उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र जात फल कथन ६४५

राशिविभागविचारः—१०२ ६४६-६४७

सर्वप्रथम मेष और वृष राशि गत नक्षत्र पाद परिज्ञानार्थ कथन ६४६
मिथुन और कर्क राशियों में नक्षत्र पाद कथन ६४६
सिंह और कन्या राशियों में नक्षत्रपाद कथन ६४६
तुला और वृश्चिक राशिगत नक्षत्रपाद कथन ६४६
धनु और मकर राशिगत नक्षत्रपाद कथन ६४७
कुम्भ और मीन राशिगत नक्षत्र पाद कथन ६४७
सारांश में राशियों में नक्षत्र पाद प्रदंर्शनार्थ कथन ६४७

विवाहपटलविचारः—१०३ ६४८-६५१

ग्रहयोग से द्वादशभावगत फल प्रदर्शन क्रम में सर्वप्रथम क्रम से लग्नस्थ ग्रहों का फल कथन ६४८
द्वितीय भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६४८
तृतीय भावगत ग्रहों का फल कथन ६४८
चतुर्थ भावगत ग्रहों का फल कथन ६४८
पञ्चम भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६४९

षष्ठ भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६४९
सप्तम भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६४९
अष्टम भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६५०
नवम भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६५०
दशम भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६५०
एकादश भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६५०
द्वादश भावस्थ ग्रहों का फल कथन ६५१
गोधूलिकाल की प्रशंसार्थ कथन ६५१

ग्रहगोचरविचारः—१०४ ६५२-६७०

सर्वप्रथम प्रसङ्गवश वर्णच्छन्द में गणस्वरूप कथन ६५२
छन्द का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन ६५२
मुख चपला छन्द से गोचर के कारणों का कथन ६५२
जघनचपला छन्द से अपनी नम्रमा प्रदर्शनार्थ कथन ६५२
शार्दूलविक्रीड़ित छन्द से ग्रहों का गोचन फल कथन ६५३
स्रग्धरा छन्द से जन्म राशि आदि में स्थित सूर्य फल कथन ६५३
सुवदना छन्द से पाँचवीं आदि राशियों में स्थित सूर्य का फल कथन ६५३
सृवृत्त नामक छन्द से नौवीं आदि राशिगत सूर्यफल कथन ६५३
शिखरिंणी छन्द से जन्म आदि राशिगत चन्द्र का फल कथन ६५४
मन्दाक्रान्ता छन्द से पाँचवीं आदि राशिगत चन्द्र का फल कथन ६५४
वृषभचरित छन्द से नौवीं आदि राशिगत चन्द्र का फल कथन ६५४
उपेन्द्रवज्रा छन्द से जन्मराशि और दूसरी राशिगत मङ्गल का फल ६५५
उपजाति छन्द से तृतीय राशिस्थ मङ्गल का फल कथन ६५५
प्रसभ छन्द से चौथी राशिगत मङ्गल का फल कथन ६५५
मालती छन्द से पाँचवीं राशि में स्थित मंगल का फल कथन ६५५
अपरवक्त्रां छन्द से छठी राशिगत मङ्गल का फल कथन ६५६
विलम्बितगति छन्द से सातवीं आदि राशिगत मङ्गल का फल कथन ६५६
पुष्पताग्र छन्द से दशम और एकादश राशिगत मङ्गल का, फल कथन ६५६
इन्द्रवंशा छन्द से द्वादश राशिगत मङ्गल का फल कथन ६५६
स्वागता छन्द से जन्म राशिगत बुध फल कथन ६५७
द्रुतपद छन्द से द्वितीय और तृतीय राशिगत बुध का फल कथन ६५७
रुचिरा छन्द से चतुर्थ और पञ्चम राशिगत बुध का फल कथन ६५७

प्रहर्षिणी छन्द से छठी आदि राशिगत बुध का फल कथन ६५७
दोधक छन्द से नौवीं और दशवीं राशिगत बुध का फल कथन ६५८
मालिनी छन्द से ग्यारहवीं और बारहवीं राशिगत बुध फल कथन ६५८
भ्रमर विलासिता से जन्मराशि और दूसरी राशिगत गुरु फल कथन ६५८
मत्तमयूर छन्द से तीसरी और चौथी राशिगत गुरु फल कथन ६५८
मणिगुणनिकर छन्द से पाँचवीं राशिगत गुरु का फल कथन ६५९
हरिणप्लुत छन्द से षष्ठ राशिस्थ गुरु फल कथन ६५९
ललित पद छन्द से सातवीं राशिगत गुरु फल कथन ६५९
शालिनी छन्द से आठवीं और नौवीं राशिगत गुरु फल कथन ६५९
रथोद्धता छन्द से दशवीं आदि राशिगत गुरु फल कथन ६६०
विलासिनी छन्द से जन्म राशिगत शुक्र फल कथन ६६०
वसन्ततिलका छन्द से दूसरी राशि गत शुक्र फल कथन ६६०
इन्द्रवज्रा छन्द से तीसरी और चौथी राशिगत शुक्र फल कथन ६६०
अनवसिता छन्द से पाँचवीं राशिगत शुक्र फल कथन ६६१
लक्ष्मी छन्द से छंठी आदि राशिगत शुक्र फल कथन ६६१
प्रतिमाक्षरा छन्छ से नौवीं और दशवीं राशिगत शुक्र फल कथन ६६१
स्थिर छन्द से ग्यारहवीं और बारहवीं राशिगत शुक्र फल कथन ६६१
तोटक छन्द से जन्म राशिगत शनि फल कथन ६६१
वंशपत्रपतित छन्द से दूसरी राशिगत शनि फल कथन ६६२
ललिता छन्द से तीसरी राशिगत शनि फल कथन ६६२
भुजङ्गप्रयात छन्द से चौथी राशिगत शनि फल कथन ६६२
पुटा छन्द से पाँचवीं और छठी राशिगत शनि फल कथन ६६२
वैश्वदेवी छन्द से सातवीं आदि राशिगत शनि फल कथन ६६३
ऊर्मिमाला छन्द से दशवीं आदि राशिगत शनि फल कथन ६६३
वितान छन्द से सभी जीवों के गोचर फलों में भेद के कारण का कथन ६६३
भुजङ्गविजृम्भित छन्द से अशुभकारक ग्रहशान्ति कथन ६६३
उद्गता छन्द से ग्रहों के पूजन की प्रशंसा ६६४
सूर्य, मङ्गल, चन्द्र और शनि का फल प्रदान समय का कथन ६६४
उपगीति आर्या छन्द से बुध फल प्राप्ति का समय कथन ६६४
आर्या लक्षण ज्ञानार्थ गुरु गोचर फल का कथन ६६५
शुभाशुभ ग्रहों की पारस्परिक दृष्टि से गोचर फल का निष्फलता का कथन ६६५

दुर्बल ग्रहों की निष्फलता का विलास छन्द मे कथन ६६५
आर्यागीति छन्द से ग्रहों के शुभाशुभ फल कथन ६६५
अस्त शनि का अत्यन्त अशुभ फलों का पथ्या छन्द मे कथन ६६६
ग्रहों के साथ चन्द्र के विशेष फल का वक्त्र छन्द में कथन ६६६
दुष्टस्थानस्थ ग्रह से मनुष्यों की हीनता का श्लोक छन्द में कथन ६६६
सुस्थित ग्रहों से मनुष्यों की सुस्थितता का अनुष्टुप छन्द में कथन ६६६
कुस्थित ग्रहों के समय आरम्भ हुआ कर्म अपने कर्ता के घातक का वैतालीय छन्द से कथन ६६७
सुस्थित ग्रहों के समय स्वल्प प्रयत्न से कार्य सिद्धि का औपच्छन्दसिक छन्द से कथन ६६७
रविवार विहित कर्म का दण्डक छन्द के प्रथम पाद मे कथन ६६७
चन्द्रवारविहित कर्म का दण्डक छन्द के द्वितीय पाद से कथन ६६८
मङ्गलवार विहित कर्म का दण्डक छन्द के तीसरे पाद से कथन ६६८
बुधवार विहित कर्म का दण्डक छन्द के चौथे पाद से कथन ६६८
बृहस्पतिवार विहित कर्म का वर्णक दण्डक छन्द से कथन ६६९
शुक्रवार विहित कर्म का समुद्रदण्डक छन्द के पूर्वार्ध से कथन ६६९
शनिवार विहित कर्म का समुद्रदण्डक छन्द के उत्तरार्ध से कथन ६७०
अध्याय-प्रशंसार्थ विपुला आर्या छन्द से कथन ६७०

रूपसत्रनिरूपणम्–१०५ ६७१-६७३

सर्वप्रथम कालपुरुष के विभिन्नाङ्गों में नक्षत्रों की स्थिति का कथन ६७१
रूपसत्र संज्ञक व्रत को आरम्भ करने का काल कथन ६७१
व्रत समापन पश्चात् के कर्त्तव्य ६७२
तदनन्तर के कर्त्तव्य ६७२
इस व्रत को करने वाला मनुष्य अपने अन्य जन्म में कैसा होगा का कथन ६७२
उपरोक्त व्रती स्त्री की दशा कथन ६७२
रूपसत्र व्रती की प्रशंसा ६७३
मार्गशीर्ष आदि द्वादश मासों के नाम कथन ६७३
द्वादशी की प्रशंसा ६७३

उपसंहारकथनम्–१०६ ६७४-६७५

सर्वप्रथमा शास्त्र तथा बुद्धि का महत्त्व कथन ६७४

साधु और असाधु की चेष्टा भेद कथन ६७४
नवनीतकाव्य असज्ज्नों को भी दिखाने का परामर्श कथन ६७४
विद्वानों की प्रार्थना का कथन ६७४
पूर्वाचार्यों के निमित्त अभिवादन योग्य कथन ६७५
शास्त्रानुक्रणीविचारः—१०७ ६७६-६७८
सर्वप्रथम अध्यायों का संकलन प्रदर्शनार्थ कथन ६७६
अध्यायों और उनमें सन्निविष्ट श्लोकों की संख्या का कथन ६७७
उक्त्योपसंहार कथन ६७८

□□□

।।श्रीः।।

श्रीमद्वराहमिहिराचार्यप्रणीता

बृहत्संहिता

'माया' नाम्नि हिन्दी व्याख्यया समलङ्कृता

अथ प्रथमोऽध्यायः-१

शास्त्रोपनयननिरूपणम्

मंगलाचरण कथन

जयति जगतः प्रसूतिर्विश्वात्मा सहजभूषणं नभसः।
द्रुतकनकसदृशदशशतमयूखमालार्चितः सविता ।।१।।

माया—अखिल ब्रह्माण्ड के उत्पादक, विश्वात्मा और आकाश के नैसर्गिक अलङ्करण तथा पिघला हुआ स्वर्ण के सदृश हजारों किरणों की माला से सुशोभित भगवान् सूर्यनारायण सर्वोत्कर्ष से विद्यमान हैं।।१।।

ग्रन्थ का प्रयोजन

प्रथममुनिकथितमवितथमवलोक्य ग्रन्थविस्तरस्यार्थम्।
नातिलघुविपुलरचनाभिरुद्यतः स्पष्टमभिधातुम् ।।२।।

माया—आद्य (प्रथम) मुनि (ब्रह्माजी) के द्वारा विस्तार से कहे हुए ग्रन्थ के यथार्थ अभिप्राय को जानकर उसी (ब्रह्मोक्त ग्रन्थ) को अत्यन्त संक्षिप्त तथा विस्तार रहित स्वरूप में स्पष्टता से प्रकट करने हेतु मैं (ग्रन्थकार) समुद्यत हुआ हूँ।।२।।

अपौरुष और पौरुष ग्रन्थ की साम्यता कथन

मुनिविरचितमिदमिति यच्चिरन्तनं साधु न मनुजग्रथितम्।
तुल्येऽर्थेऽक्षरभेदादमन्त्रके का विशेषोक्तिः ।।३।।

माया—यह कहना कि मुनि विरचित शास्त्र ही सत्य है और मनुष्य द्वारा ग्रथित नहीं; ऐसा कथन उचित नहीं है। क्योंकि मुनि (ब्रह्मादि) के मन्त्रात्मक कथनों से भिन्न ग्रन्थों में भी उनसे अर्थ (भाव) की तुल्यता पायी जाती है। वहाँ केवल अक्षर (वर्ण) की भिन्नता रहती है, ऐसे में उसकी क्या विशेषता? अर्थात् कुछ भी नहीं।।३।।

पुनः दोनों में साम्यता प्रदर्शन के उदाहरण

क्षितितनयदिवसवारो न शुभकृदिति पितामहप्रोक्ते।
कुजदिनमनिष्टमिति वा कोऽत्र विशेषो नृदिव्यकृतेः ।।४।।

माया—जैसे प्रथममुनि (ब्रह्मा) कृत शास्त्रों में कहा गया है—क्षितितनयदिवसवारो न शुभकृत् अर्थात् मंगलवार शुभकारक नहीं है तथा मनुष्य कृत ग्रन्थों में लिखा है—कुजदिनमनिष्टम् अर्थात् मंगलवार अनिष्टकारक है। उक्त दोनों कथनों में शब्दभेद के अतिरिक्त और क्या विशेषता है अर्थात् कुछ भी नहीं।।४।।

स्वग्रन्थ की विशेषता कथन

आब्रह्मादिविनिःसृतमालोक्य ग्रन्थविस्तरं क्रमशः ।
क्रियमाणकमेवैतत् समासतोऽतो ममोत्साहः ।।५।।

माया—ब्रह्मा आदि द्वारा विरचित शास्त्रों के अतिविस्तृत स्वरूप का अवलोकन कर उसे क्रम से और उसके साररूप को ग्रहण कर उस शास्त्र को प्रकाशित करने का मेरा (ग्रन्थकार का) उत्साह है।।५।।

जगद् उत्पत्ति कथन

आसीत्तमः किलेदं तत्रापां तैजसेऽभवद्धैमे ।
स्वर्भूशकले ब्रह्मा विश्वकृदण्डेऽर्कशशिनयनः ।।६।।

माया—प्रथम सृष्टिरहित सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अन्धकारमय था। उस अन्धकार के विषय रूप जल में तेजसम्पन्न स्वर्णाभ अण्ड उत्पन्न हुआ तथा उस अण्ड के दो भाग-एक स्वर्ग और दूसरा पृथ्वी रूप प्रकट हुएं एवं उस अण्ड के टुकड़ा होने पर उसमें से सूर्य व चन्द्र रूप नेत्र सम्पन्न ब्रह्मदेव प्रकट हुए।।६।।

जगद्-उत्पत्तिवाद कथन

कपिलः प्रधानमाह द्रव्यादीन् कणभुगस्य विश्वस्य ।
कालं कारणमेके स्वभावमपरे परे जगुः कर्म ।।७।।

माया—जगदुत्पत्ति विषयक अनेक सिद्धान्त प्रचलित हैं, जिनमें कपिल के अनुसार प्रधान या मूलप्रकृति मात्र जगदुत्पत्ति के कारण है; कणाद के अनुसार द्रव्य आदि पदार्थ; किसी ने काल तो किसी ने स्वभाव तथा मीमांसकों ने कार्य-व्यवहार को जगदुत्पत्ति का कारण माना है।।७।।

उत्पत्तिवाद कथन पूर्वक ग्रन्थ रचना उद्देश्य दर्शन

तदलमतिविस्तरेण प्रसङ्गवादार्थनिर्णयोऽतिमहान् ।
ज्योतिःशास्त्राङ्गानां वक्तव्यो निर्णयोऽत्र मया ।।८।।

माया—यहाँ जगदुत्पत्ति के प्रसङ्ग को अधिक विस्तार से कहना उचित नहीं; क्योंकि उसे कहने हेतु भी अति विस्तार से अनेक पदार्थों का विवेचन करना आवश्यक होगा। इस कारण इस प्रसङ्ग का त्याग कर मैंने (ग्रन्थकार) ज्यौतिषशास्त्र के अंगों का यहाँ निर्णायक कथन किया है।।८।।

ज्यौतिषशास्त्रस्वरूप दर्शनपूर्वक उसके भेद कथन

ज्योतिःशास्त्रमनेकभेदविषयं स्कन्धत्रयाधिष्ठितं
तत्कात्स्न्योपनयस्य नाम मुनिभिः सङ्कीर्त्यते संहिता।
स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधानस्त्वसौ
होराऽन्योऽङ्गविनिश्चयश्च कथितः स्कन्धस्तृतीयोऽपरः ।।९।।

माया—अनेक भेदों से सम्पन्न ज्यौतिषशास्त्र के प्रमुख तीन स्कन्ध हैं—संहिता, तंत्र और होरा। सम्पूर्ण ज्यौतिष शास्त्र के विषयों की चर्चा जिसमें उपलब्ध होती है, वह संहिता स्कन्ध कहलाता है। गणित से ग्रहगति का वर्णन जिसमें उपलब्ध होता है, वह तंत्र स्कन्ध कहलाता है। इसके अलावे जातकों के अंगों (जातक फल, मुहूर्त्त आदि) का निर्णय जिसमें उपलब्ध होता है, वह होरा स्कन्ध कहलाता है।।९।।

स्वकृत ग्रन्थ परिचय कथन

वक्रानुवक्रास्तमयोदयाद्यास्ताराग्रहाणां करणे मयोक्ताः।
होरागतं विस्तरशश्च जन्म यात्राविवाहैः सह पूर्वमुक्तम् ।।१०।।

माया—मैं (ग्रन्थकार) ने स्वकृत् 'पञ्चसिद्धान्तिका' ग्रन्थ में पञ्चतारा (कुजादि पञ्च) ग्रहों के वक्र, मार्ग, अस्त, उदय आदि का वर्णन किया है एवं बृहज्जातक, बृहद्यात्रा, बृहद्विवाहपटल आदि होराशास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थों में जन्म, यात्रा, विवाह आदि विषयों की चर्चा भी विस्तार से पहले ही की है।।१०।।

प्रस्तुत ग्रन्थ प्रशंसा कथन

प्रश्नप्रतिप्रश्नकथाप्रसङ्गान् स्वल्पोपयोगान् ग्रहसम्भवांश्च।
सन्त्यज्य फल्गूनि च सारभूतं भूतार्थमर्थैः सकलैः प्रवक्ष्ये ।।११।।

माया—अपने शिष्यगण द्वारा पूछे गए प्रश्नों और मुनियों द्वारा दिए गए उनके उत्तर, अनेक प्रकार के कथा-प्रसङ्ग तथा सूर्य आदि ग्रहों की उत्पत्ति आदि जैसे अल्प उपयोगी विषयों का त्याग कर सामान्यजनों के हितार्थ अनेक प्रकार के प्रयोजनों से सम्पन्न विषयों के सारांश को प्रस्तुत ग्रन्थ में संग्रहित करता हूँ।।११।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शास्त्रोपनयनाध्यायः प्रथमः ।।१।।

□□□

अथ द्वितीयोऽध्यायः-२

साम्वत्सरसूत्रविचारः

ज्योतिष (दैवज्ञ) लक्षण

तत्र सांवत्सरोऽभिजातः प्रियदर्शनो विनीतवेषः सत्यवागनसूयकः समः सुसंहितोपचितगात्रसन्धिरविकलश्चारुकरचरणनखनयनचिबुकदशनश्रवणललाटभ्रूत्तमाङ्गो वपुष्मान् गम्भीरोदात्तघोषः। प्रायः शरीराकारानुवर्त्तिनो हि गुणा दोषाश्च भवन्ति ।।१।।

माया—तदनन्तर प्रस्तुत अध्याय में साम्वत्सरसूत्र अर्थात् दैवज्ञों के लक्षणों का वर्णन करते हैं—

कुलीन, देखने में प्रिय, नम्रता की मूर्त्ति, सत्यवादी, परावगुणोपेक्षी, समान भावयुक्त, दृढ़ व पुष्ट शरीर-सन्धि सम्पन्न, सर्वाङ्ग पूर्ण तथा उसके हाथ, पैर, नाखून, आखें, ठोड़ी, दाँत, कान, मस्तक, शिर आदि श्रेष्ठ लक्षणों से सम्पन्न, सुन्दर देह यष्टि वाला, गम्भीर व उदात्त वाक्शक्ति वाला आदि गुणों से युक्त व्यक्ति दैवज्ञ होना चाहिए; क्योंकि व्यक्ति के शारीरिक आकार व व्यवहार के अनुसार उसके गुण व दोष होते हैं।।१।।

ज्योतिष गुण कथन

तत्र गुणाः– शुचिर्दक्षः प्रगल्भो वाग्मी प्रतिभानवान् देशकालवित् सात्त्विको न पर्षद्भीरुः सहाध्यायिभिरनभिभवनीयः कुशलोऽव्यसनी शान्तिकपौष्टिकाभिचारस्नानविद्याभिज्ञो विबुधार्चनव्रतोपवासनिरतः स्वतन्त्राश्चर्योत्पादितप्रभावः पृष्टाभि-धाय्यन्यत्र दैवात्ययाद् ग्रहगणितसंहिताहोराग्रन्थार्थवेत्तेति ।।२।।

दैवज्ञों की विशेषता को कहते हैं—पवित्र, चतुर, प्रगल्भ अर्थात् सभा में अधिक बोलने वाला, वार्तालाप करने में चतुर, प्रत्युत्पन्न बुद्धि वाला, देश व काल को जानने वाला, सात्त्विक, सभा आदि में भी निर्भिक व्यवहार वाला, अपने सहपाठियों से भी अपराजित, चेष्टाओं व प्राकृतिक संकेतों को भी जानने वाला, सभी व्यसनों से रहित, शान्तिक (उत्पातों के प्रतीकारार्थ वेदोक्त मन्त्र पाठ विनियोग सम्बन्धी अनुष्ठान करने वाला), पौष्टिक (आयु, धन आदि को बढ़ाने वाली विद्या को जानने वाला), अभिचारज्ञ (मारन, मोहन, उच्चाटन, विद्वेषण, वशीकरण, स्तम्भन, चालन आदि सम्बन्धी विद्या को जानने वाला), स्नानविद्या का ज्ञाता (नित्य नैमित्तिक काम्य क्रिया के अंगों को जानने वाला), देवपूजक, व्रत, उपवास आदि को करने वाला, शास्त्रोक्त चमत्कृत ज्ञान के स्वतन्त्र उद्घाटन से स्वप्रभाववृद्धि करने वाला, किसी भी प्रश्न का उत्तर देने वाला, दैवात्यय

(प्राकृतिक अशुभ उत्पात) के प्रतीकार को विना पूछे बताने वाला तथा ग्रह-गणित, संहिता, होरा सम्बन्धी ग्रन्थों के अर्थ को जानने वाला दैवज्ञ को होना चाहिए।।२।।

ज्योतिषों के अन्य लक्षण

तत्र ग्रहगणिते पौलिशरोमकवासिष्ठसौरपैतामहेषु पञ्चस्वेतेषु सिद्धान्तेषु युगवर्षायनर्तुमासपक्षाहोरात्रयाममुहूर्तनाडीप्राणत्रुटित्रुट्याद्यवयवादिकस्य कालस्य क्षेत्रस्य च वेत्ता ।।३।।

माया—ग्रहगणित के क्षेत्र सम्बन्धि पौलिश, रोमक, वाशिष्ट, सौर तथा पैतामह; इन पाँच सिद्धान्तगत युग, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र, प्रहर, मुहूर्त्त, घड़ी, पल, प्राण, त्रुटि तथा त्रुटि के अवयव आदि कालखण्ड को जानने वाला और भगण, राशि, अंश, कला, विकला आदि क्षेत्रों का भी ज्ञाता दैवज्ञों को होना आवश्यक है।।३।।

और भी दैवज्ञ लक्षण कथन

चतुर्णां च मानानां सौरसावननाक्षत्रचान्द्राणामधिमासकावमसम्भवस्य च कारणाभिज्ञः ।।४।।

माया—सौर, सावन, नाक्षत्र, चान्द्र आदि सम्बन्धि मास, अधिमास, क्षयमास आदि होने के कारणों को जानने वाला दैवज्ञों को होना चाहिए।।४।।

और भी दैवज्ञ लक्षण कथन

षष्ट्यब्दयुगवर्षमासदिनहोराधिपतीनां प्रतिपत्तिच्छेदवित् ।।५।।

माया—बृहस्पतिचारवश होने वाले प्रभव, विभव आदि षष्टि सम्वत्सर तथा उसके युग, वर्ष, मास, दिन, होरा इन सबके स्वामियों का प्रवर्तन (प्रतिपत्ति) और निवृत्ति (छेद) का ज्ञान भी दैवज्ञों को रखना चाहिए।।५।।

दैवज्ञों के अन्य लक्षण

सौरादीनां च मानानामसदृशसदृशयोग्यायोग्यत्वप्रतिपादनपटुः ।।६।।

माया—प्राय: प्रत्येक शास्त्रों में उल्लिखित सौर, चान्द्र आदि (काल मानों के सत्य और असत्य स्वरूप का विचार करने में दैवज्ञ को निपुण होना चाहिए। तात्पर्य यह कि सौर, चान्द्र, नाक्षत्र, सावन आदि कालमानों में कौन-सा क़िस व्यवहार में उपयुक्त है, इसका निर्णय करने की योग्यतायुक्त दैवज्ञ को होना चाहिए।।६।।

दैवज्ञ लक्षण में और कथन

सिद्धान्तभेदेऽप्ययननिवृत्तौ प्रत्यक्षं सममण्डललेखासम्प्रयोगाभ्युदितांशकानां छायाजलयन्त्रदृग्गणितसाम्येन प्रतिपादनकुशलः ।।७।।

भाषा—उपरोक्त सौरादि कालमानों में सिद्धान्त ग्रन्थों के कारण अन्तर दृष्ट हो, तो अयन (सौम्य-याम्यायन) परिवर्तन के समय प्रत्यक्ष सममण्डल (पूर्वापरवृत्त) पर उपलब्ध उदित अंशों की छाया, जलयन्त्र आदि में वेध और गणित की समता लाने में निपुण दैवज्ञ होना चाहिए।।७।।

और भी दैवज्ञ लक्षण कथन

सूर्यादीनां च ग्रहाणां शीघ्रमन्दयाम्योत्तरनीचोच्चगतिकारणाभिज्ञः ।।८।।

भाषा—सूर्यादि ग्रहों की शीघ्रगति, मन्दगति, दक्षिणगति, उत्तरगति, नीच और उच्च गति के कारणों को भी जानने में दैवज्ञ निपुण होना चाहिए।।८।।

दैवज्ञ के अन्य लक्षण

सूर्याचन्द्रमसोश्च ग्रहणे ग्रहणादिमोक्षकालदिक्प्रमाणस्थितिविमर्दवर्णदेशा-नामनागतग्रहसमागमयुद्धानामादेष्टा ।।९।।

भाषा—सूर्य और चन्द्र के ग्रहण प्रसङ्ग में स्पर्श काल, मोक्षकाल तथा इनसे सम्बन्धित दिशा, स्थिति, विमर्द, वर्ण, देश, आने वाला ग्रहसमागम ग्रहों के युद्ध आदि को बताने में निपुण दैवज्ञ होना चाहिए।।९।।

और भी दैवज्ञ लक्षण कथन

प्रत्येकग्रहभ्रमणयोजनकक्ष्याप्रमाणप्रतिविषययोजनपरिच्छेदकुशलः ।।१०।।

भाषा—प्रत्येक ग्रह का योजनात्मक कक्षाप्रमाण तथा प्रत्येक स्थान का योजनात्मक देशान्तर को जानने में निपुण दैवज्ञ को होना चाहिए।।१०।।

और भी दैवज्ञ लक्षण कथन

भूभगणभ्रमणसंस्थानाद्यक्षावलम्बकाहर्व्यासचरदलकालराश्युदयच्छायानाडीकरण-प्रभृतिषु क्षेत्रकालकरणेष्वभिज्ञः ।।११।।

भाषा—भू, नक्षत्रचक्र का भ्रमण व संस्थान, अक्षांश, लम्बांश, द्युज्या, चरखण्ड, राश्युदयमान, छाया, नाड़ी, करण आदि से सम्बन्धित क्षेत्र, काल तथा करण का ज्ञान रखने वाला दैवज्ञ को होना चाहिए।।११।।

नानाचोद्यप्रश्नभेदोपलब्धिजनितवाक्सारो निकषसन्तापाभिनिवेशैः कनक-स्येवाधिकतरममलीकृतस्य शास्त्रस्य वक्ता तन्त्रज्ञो भवति ।।१२।।

भाषा—कसौटी से घर्षित, आग से तपाया हुआ और शाण से परिशुद्ध स्वर्ण की तरह अत्यन्त स्वच्छ शास्त्र का वक्ता तथा विभिन्न प्रकार के तर्कसङ्गत प्रश्न-प्रकारों के उत्तर देने योग्य ज्ञान सम्पन्न दैवज्ञ को होना चाहिए।।१२।।

गर्गोक्त दैवज्ञ लक्षण कथन

न प्रतिबद्धं गमयति वक्ति न च प्रश्नमेकमपि पृष्टः ।
निगदति न च शिष्येभ्यः स कथं शास्त्रार्थविज्ञेयः ॥१३॥

माया—जो शास्त्रानुकूल अर्थ न कहता हो, प्रश्न पूछे जाने पर उसका उत्तर न दे सकता हो तथा शिष्य को भी न पढ़ाता हो, वह कैसे शास्त्रज्ञ कहा जा सकता है। तात्पर्य यह कि ये सब कार्यों को करने की योग्यता वाला ही निपुण दैवज्ञ हो सकता है॥१३॥

अयोग्य दैवज्ञ लक्षण कथन

ग्रन्थोऽन्यथाऽन्यथार्थं करणं यश्चान्यथा करोत्यबुधः ।
स पितामहमुपगम्य स्तौति नरो वैशिकेनार्याम् ॥१४॥

माया—जो ग्रन्थोक्त पदार्थ को न जानकर उसके विरुद्ध अर्थ निरूपण करता है, जिस तरह कोई मूर्ख ब्रह्माजी के पास जाकर भी किसी वेश्या की स्तुति करता है॥१४॥

ज्योतिष वाक् प्रशंसा

तन्त्रे सुपरिज्ञाते लग्ने छायाम्बुयन्त्रसंविदिते ।
होरार्थे च सुरूढे नादेष्टुर्भारती वन्ध्या ॥१५॥

माया—जो तंत्र (सिद्धान्त ज्योतिष) शास्त्र को जानता हो, छाया, जलयन्त्र आदि उपकरणों से लग्न ज्ञान कर सकता हो तथा होरा (फलित ज्योतिष) शास्त्र में भी भलीभाँति निपुण हो, तो ऐसे मनुष्य की वाणी कभी-भी मिथ्या नहीं होती॥१५॥

विष्णुगुप्तोक्त ज्योतिषशास्त्र की प्रशंसा

अप्यर्णवस्य पुरुषः प्रतरन् कदाचि-
दासादयेदनिलवेगवशेन पारम्।
न त्वस्य कालपुरुषाख्यमहार्णवस्य
गच्छेत्कदाचिदनृषिर्मनसापि पारम्॥१६॥

माया—हो सकता है कि कोई मनुष्य इच्छानुसार तैरकर समुद्र पार जाना चाहे, तो वह वायु वेग से तैरकर पार जा सकता है, लेकिन कालपुरुष संज्ञक, ज्योतिषयास्त्र रूपी महासागर को ऋषि-मुनियों को छोड़कर कोई मन से भी पार करने में समर्थ नहीं हो सकता है॥१६॥

होराशास्त्र पदार्थ निरूपण

होराशास्त्रेऽपि च राशिहोराद्रेष्काणनवांशकद्वादशभागत्रिंशद्भागबलाबलपरिग्रहो ग्रहाणां दिक्स्थानकालचेष्टाभिरनेकप्रकारबलनिर्धारणं प्रकृतिधातुद्रव्यजातिचेष्टादिपरिग्रहो निषेकजन्मकालविस्मापनप्रत्ययादेशसद्योमरणायुर्दायदशान्तर्दशाष्टकवर्गराज-

योगचन्द्रयोगद्विग्रहादियोगानां नाभसादीनां च योगानां फलान्याश्रयभावावलोकननिर्याण-गत्यनूकानि तत्कालप्रश्नशुभाशुभनिमित्तानि विवाहादीनां च कर्मणां करणम्।।१७।।

भाषा—होराशास्त्र में भी मेषादि द्वादश राशियों व उनके स्वरूप, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश, राशियों के बलाबल, परिग्रह के साथ दिग्बल, स्थानबल, कालबल, चेष्टाबल आदि सूर्यादि ग्रहों के बल का विचार; प्रकृति, धातु, द्रव्य, जाति, चेष्टा आदि का परिग्रह; गर्भाधान, जन्मकाल, विस्मयकारक-विश्वासजन्य आदेश जैसे नालवेष्टित, कोशवेष्टित, यमल आदि जन्म के बारे में बताकर विश्वास उत्पन्न करना; शीघ्रमरण, आयुर्दाय, दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग, राजयोग, चन्द्रयोग, द्विग्रहादि योग, नाभसयोग आदि का फल; आश्रय, भाव, दृष्टि, निर्याण, गति, अनूक (पूर्वादि जन्म) आदि का विचार; तात्कालिक प्रश्नों के शुभाशुभ निमित्त का विचार; विवाह (उपनयन, चूडाकरण, गृहप्रवेश) आदि कर्मों का विचार; इन विषयों का विचार होता है। प्राय: इन विषयों का विचार ग्रन्थकार (वराहमिहिर) ने स्वविरचित ग्रन्थ बृहज्जातक, विवाहपटल आदि ग्रन्थों में विस्तार से किया है।।१७।।

यात्रा प्रकार वर्णन

यात्रायां तु तिथिदिवसकरणनक्षत्रमुहूर्त्तविलग्नयोगदेहस्पन्दनस्वप्नविजयस्नान-ग्रहयज्ञगणयागाग्निलिङ्गहस्त्यश्वेङ्गितसेनाप्रवादचेष्टादिग्रहषाड्गुण्योपायमङ्ग-लामङ्गलशकुनसैन्यनिवेशभूमयोऽग्निवर्णा मन्त्रिचरदूताटविकानां यथाकालं प्रयोगाः परदुर्गोपलम्भोपायश्चेत्युक्तं चाचार्यैः।।१८।।

भाषा—यात्रा के समय में उपलब्ध तिथि (नन्द, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा) की शुभता-अशुभता, दिवस (रवि, सोम आदि वार), करण (बवादि) नक्षत्र (अश्विन्यादि) मुहूर्त, लग्न, योग, शरीराङ्गों का फड़कना, स्वप्न, विजय, तन्निमित्तक स्नान, ग्रहयज्ञ, गणयाग, अग्निलिङ्ग, हाथी-घोड़ा आदि की चेष्टा, सेनापतियों के आवाज से पशुओं की चेष्टा, वायु, मेघ, वृष्टि आदि निमित्त, ग्रहों के बलानुसार छः प्रकार की सन्धियाँ, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव, संश्रय आदि का विचार, उपाय (साम, दाम, भय, भेद) की सिद्ध-असिद्धि विचार, मंगल, अमङ्गल, शकुन, सेनाधिवास भूमि, अग्नि वर्ण, मन्त्री, चर, दूत, वनवासियों का समय के अनुसार उपयोग, शत्रुकृत् किले की प्राप्ति आदि सभी विषयों का यात्राओं के कारणों के स्वरूप सम्बन्धी प्रसङ्गों में होराशास्त्र का वर्णन हुआ है।।१८।।

आचार्य कथन में दैवज्ञ प्रशंसा

जगति प्रसारितमिवालिखितमिव मतौ निषिक्तमिव हृदये।
शास्त्रं यस्य सभगणं नादेशा निष्फलास्तस्य ।।१९।।

भाषा—जिस मनुष्य में भगण के साथ होराशास्त्र संसार में विस्तार हुआ-सा

बुद्धि में लिखा हुआ-सा तथा हृदय में ढला हुआ-सा स्थित है, उसका आदेश किसी भी तरह निष्फल नहीं होता है॥१९॥

संहिताशास्त्र की प्रशंसा

संहितापारगश्च दैवचिन्तको भवति ॥२०॥

भाषा—संहिता शास्त्र के नि:शेष तत्त्व के अर्थ को स्मरण करने वाला दैवचिन्तक अर्थात् प्राकृतकर्म विपाक के शुभाशुभ को जानने वाला होता है॥२०॥

संहिता पदार्थ निरूपण

यत्रैते संहिता पदार्थाः दिनकरादीनां ग्रहाणां चारास्तेषु च तेषां प्रकृतिविकृति-प्रमाणवर्णकिरणद्युतिसंस्थानास्तमनोदयमार्गमार्गान्तरवक्रानुवक्रर्क्षग्रहसमागमचारा-दिभिः फलानि नक्षत्रकूर्मविभागेन देशेष्वगस्त्यचारः। सप्तर्षिचारः। ग्रहभक्तयो नक्षत्रव्यूहग्रहशृङ्गाटकग्रहयुद्धग्रहसमागमग्रहवर्षफलगर्भलक्षणरोहिणीस्वात्याषाढी-योगाः सद्योवर्षकुसुमलतापरिधिपरिवेषपरिघपवनोल्कादिग्दाहक्षितिचलनसन्ध्या-रागगन्धर्वनगररजोनिर्घातार्घकाण्डसस्यजन्मेन्द्रध्वजेन्द्रचापवास्तुविद्याङ्गविद्यावायसविद्यान्तर-चक्रमृगचक्रश्वचक्रवातचक्रप्रासादलक्षणप्रतिमालक्षणप्रतिष्ठापनवृक्षायुर्वेदोदगार्ग-लनीराजनखञ्जनकोत्पातशान्तिमयूरचित्रकघृतकम्बलखड्गपट्टकृकवाकुकूर्मगोऽजाश्वेभ-पुरुषस्त्रीलक्षणान्यन्तःपुरचिन्तापिटकलक्षणोपानच्छेदवस्त्रच्छेदचामरदण्डशयनाऽऽसन-लक्षणरत्नपरीक्षा दीपलक्षणं दन्तकाष्ठाद्याश्रितानि शुभाऽशुभानि निमित्तानि सामान्यानि च जगतः प्रतिपुरुषं पार्थिवे च प्रतिक्षणमनन्यकर्माभियुक्तेन दैवज्ञेन चिन्तयितव्यानि। न चैकाकिना शक्यन्तेऽहर्निशमवधारयितुं निमित्तानि। तस्मात् सुभृतेनैव दैवज्ञेनान्येऽपि तद्विदश्चत्वारः कर्तव्याः। तत्रैकेनैन्द्री चाग्नेयी च दिगवलोकयितव्या। याम्या नैर्ऋती चान्येनैवं वारुणी वायव्या चोत्तरा चैशानी चेति। यस्मादुल्कापातादीनि शीघ्रमपगच्छन्तीति। तस्याश्चाकारवर्णस्नेह-प्रमाणादिग्रहर्क्षोपघातादिभिः फलानि भवन्ति॥२१॥

भाषा—जहाँ पर अग्रलिखित विषयों का विवेचन उपलब्ध होता है, उसे संहिता कहा जाता है, जैसे—

रवि आदि ग्रहों की गति और उनके स्वभाव, विकार, बिम्ब प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, संस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, मार्गान्तर, वक्र, अनुवक्र, नक्षत्र के साथ ग्रह समागमकाल, नक्षत्र चलन और इनके फल, नक्षत्रचक्र से निर्मित कूर्म चक्र से देश-देशान्तर का शुभाशुभ फल, अगस्त्यचार, वशिष्ठादि सप्तर्षियों का चार, ग्रहभक्ति देश,द्रव्य, जीवों पर आधिपत्य), नक्षत्रों के व्यूह (द्रव्य, जीवाधिपत्य), ग्रह-शृङ्गाटक (एकर्क्षस्थ पञ्चतारा ग्रहों के शृङ्गाटक के स्थिति अनुसार शुभाशुभफल ज्ञान), ग्रहयुद्ध, ग्रह-

समागम, ग्रहण, वर्षा का फल, गर्भलक्षण, रोहिणी योग, स्वाती योग, आषाढ़ी योग, सद्योवर्षण, कुसुमलता का लक्षण,परिधि, परिवेष, परिघ, वायु, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, सन्ध्याकालीन लालिमा, गन्धर्वनगर; धूल, निर्घात, अर्घकाण्ड, अन्नोत्पादन, इन्द्रध्वज व इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अङ्गविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, वातचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिमालक्षण-प्रतिष्ठा, वृक्षायुर्वेद, वृक्षदोहद, उदगार्गल, नीरांजन, खञ्जनोत्पात-शान्ति, मयूरचित्रक, घृतलक्षण, कम्बललक्षण, खड्गलक्षण, पट्टलक्षण, कृकवाकु (कुक्कुट) लक्षण, कुर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, श्व (कुकुर) लक्षण, अश्वलक्षण, हस्ति लक्षण, पुरुषलक्षण, स्त्रीलक्षण, अन्तःपुर चिन्तन, पिटक, मोती, वस्त्रच्छेद, चामर, दण्ड, शयन, आसन आदि लक्षण, रत्न परीक्षा, दीपलक्षण, दन्तकाष्ठादि आश्रित सभी शुभाशुभ निमित्त का फल आदि सम्पूर्ण संसार के पुरुषों और राजाओं में उपरोक्त प्रकार के लक्षणों (निमित्तों) का चिन्तन एकनिष्ठ भाव से दैवज्ञों को करना चाहिए। लेकिन इन बातों के शुभाशुभ का निर्णय करना अकेला दैवज्ञ के सामर्थ्य में नहीं, अतः राजा को चाहिए कि पर्याप्त धनादि से सन्तुष्ट अन्य चार दैवज्ञों को भी इस कार्य में सहयोग के लिए लगावें। उनमें से एक को पूर्व और अग्नि कोण के परीक्षण हेतु तथा दूसरे को दक्षिण और नैऋत्य कोण के, तीसरे को पश्चिम और वायव्य कोण के तथा चौथे को उत्तर और ईशान कोण के परीक्षण हेतु नियुक्त करें; क्योंकि उल्कापात आदि निमित्त दीखने के तुरन्त बाद लुप्त भी हो जाते हैं। उनका आकार, वर्ण, स्नेहप्रमाण, ग्रह नक्षत्रों के अभिघात आदि के द्वारा शुभाशुभ फल भी होते हैं॥२१॥

महर्षि गर्गोक्त दैवज्ञ महात्म्य

कृत्स्नाङ्गोपाङ्गकुशलं होरागणितनैष्ठिकम् ।
यो न पूजयते राजा स नाशमुपगच्छति ॥२२॥

भाषा—ज्यौतिष शास्त्र के सभी अंगों और उपाङ्गों में निपुण होराशास्त्र तथा गणितशास्त्र में पूर्ण निष्ठावान् दैवज्ञ की पूजा जो राजा नहीं करता, वह निश्चय ही नाश को प्राप्त होता है॥२२॥

दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक कथन

वनं समाश्रिता येऽपि निर्ममा निष्परिग्रहाः ।
अपि ते परिपृच्छन्ति ज्योतिषां गतिकोविदम् ॥२३॥

भाषा—वन में निवास करने वाले, ममता रहित और निष्परिग्रह अर्थात् किसी से भी कुछ लेने की अभिलाषा नहीं रखने वाले मनुष्य भी ग्रह-नक्षत्र आदि की गति को जानने वाले दैवज्ञों से पूछते हैं॥२३॥

और भी दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शन

अप्रदीपा यथा रात्रिरनादित्यं यथा नभः ।
तथाऽसांवत्सरो राजा भ्रमत्यन्ध इवाध्वनि ।।२४।।

भाषा—दीप विहीन रात्रि और सूर्यरहित आकाश की तरह दैवज्ञ से रहित राजा भी शोभित नहीं होता और वह अन्धे की तरह भटकता रहता है।।२४।।

पुनः दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक कथन

मुहूर्त्ततिथिनक्षत्रमृतवश्चायने तथा ।
सर्वाण्येवाकुलानि स्युर्न स्यात् सांवत्सरो यदि ।।२५।।

भाषा—दैवज्ञ के विना अर्थात् दैवज्ञ के अभाव में मुहूर्त्त, तिथि, नक्षत्र, ऋतु, अयन आदि सभी उलट-पुलट हो जाय।।२५।।

पुनः भी दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक कथन

तस्माद्राज्ञाधिगन्तव्यो विद्वान् सांवत्सरोऽग्रणीः ।
जयं यशः श्रियं भोगान् श्रेयश्च समभीप्सता ।।२६।।

भाषा—अतः जय, यश, श्री, भोग और मंगल की कामना रखने वाले राजा को दैवज्ञ के समीप जाकर अपने भविष्य के बारे में जानना चाहिए।।२६।।

दैवज्ञों की और भी महत्त्वप्रदर्शक कथन

नासांवत्सरिके देशे वस्तव्यं भूतिमिच्छता ।
चक्षुर्भूतो हि यत्रैष पापं तत्र न विद्यते ।।२७।।

भाषा—अपने कल्याण की कामना करने वाले मनुष्य को उस देश में निवास नहीं करना चाहिए, जहाँ दैवज्ञ नहीं रहता हो, क्योंकि नेत्र स्वरूप दैवज्ञ जहाँ निवास करते हैं, वहाँ पाप नहीं रहता है।।२७।।

दैवज्ञ महत्त्व प्रदर्शक और कथन

न सांवत्सरपाठी च नरकेषूपपद्यते ।
ब्रह्मलोकप्रतिष्ठां च लभते दैवचिन्तकः ।।२८।।

भाषा—जो मनुष्य ज्योतिष शास्त्र को पढ़ता या पढ़ाता है, वह नरक में नहीं जाता वरन् ज्यौतिषशास्त्र का अध्येता मनुष्य ब्रह्मलोक में भी प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है।।२८।।

पूजित और पंक्तिपावन दैवज्ञ कथन

ग्रन्थतश्चार्थतश्चैतत्कृत्स्नं जानाति यो द्विजः ।
अग्रभुक् स भवेच्छ्राद्धे पूजितः पङ्क्तिपावनः ।।२९।।

माया—जो ज्योतिषशास्त्र के सम्पूर्ण पदार्थ को ग्रन्थ और अर्थ के आधार पर जानता हो, वह द्विज श्राद्ध में प्रथम भोजन करने योग्य और जिन लोगों के साथ भोजन कर रहा हो, उनको भी पवित्र करने वाला सम्मानित पुरुष होता है॥२९॥

ज्योतिषशास्त्र व ज्योतिष की प्रशंसा

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम् ।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद्द्विजः ॥३०॥

माया—म्लेच्छों अथवा यवनों को भी जब इस शास्त्र का ज्ञान हो, तो वे भी ऋषि-मुनियों की तरह सम्मान को पाते हैं। तब द्विज यदि दैवज्ञ हो, तो उनकी क्या बात? अर्थात् उनकी पूजा अवश्य होती है॥३०॥

अप्रष्टव्यजन कथन

कुहकावेशपिहितैः कर्णोपश्रुतिहेतुभिः ।
कृतादेशो न सर्वत्र प्रष्टव्यो न स दैववित् ॥३१॥

माया—ऐसे जन से हर जगह कुछ भी नहीं पूछना चाहिए, जो अपने शरीर को छिपाकर गोपनीय तरीके से पृच्छक का अभिप्राय जान लेता हो या कर्णपिशाची की सिद्धि से प्रश्न और उसके उत्तर को बताता हो, क्योंकि वह ज्योतिषशास्त्र को जानने वाला नहीं होता है॥३१॥

नक्षत्रसूचक जन कथन

अविदित्वैव यच्छास्त्रं दैवज्ञत्वं प्रपद्यते ।
स पंक्तिदूषकः पापो ज्ञेयो नक्षत्रसूचकः ॥३२॥

माया—जो ज्योतिषशास्त्र को विना जाने अपने आप को ज्योतिष कहता हो और शास्त्रीय विषयों को बताता हो, उस पंक्तिदूषक पापी जन को नक्षत्रसूचक कहा जाता है॥३२॥

नक्षत्रसूचक की आलोचना

नक्षत्रसूचकोद्दिष्टमुपावासं करोति यः ।
स व्रजन्त्यन्धतामिस्त्रं सार्धमृक्षविडम्बिना ॥३३॥

माया—जो नक्षत्रसूचकों के द्वारा बताये हुए व्रत, उपवास, पर्व आदि को करता है, वह जन उस ऋक्ष विडम्बि के साथ अन्धतामिस्त्र नामक नरक में जाता है॥३३॥

पुनः नक्षत्रसूचक की आलोचना

नगरद्वारलोष्टस्य यद्वत्स्यादुपयाचितम् ।
आदेशस्तद्वदज्ञानां यः सत्यः स विभाव्यते ॥३४॥

माया—जैसे नगर द्वार के समीप स्थिति मृत्तिका के बने गोले से प्रार्थना पूर्वक की हुई याचना कभी-कभी पूर्ण हो जाती है, वैसे-ही अज्ञानी (मूर्ख) पुरुष द्वारा किया गया आदेश भी कभी-कभी सत्य हो जाता है।।३४।।

अज्ञानी ज्यौतिष का त्याग कथन

सम्पत्त्या योजितादेशस्तद्विच्छिन्नकथाप्रियः।
मत्तः शास्त्रैकदेशेन त्याज्यस्तादृङ्महीक्षिता ।।३५।।

माया—जो धन प्राप्ति के लिए आदेश करने में प्रयत्नशील रहता हो और उस ज्योतिषशास्त्र को छोड़कर अन्य विषय की चर्चा करता हो अर्थात् ज्यौतिषशास्त्र ज्ञान के कमी के कारण पृच्छक को आकृष्ट करने हेतु दूसरे-दूसरे विषयों का उल्लेख करता हो, इस प्रकार के शास्त्रीय एकदेशीय ज्ञान से युक्त उन्मत्त ज्योतिष को राजा द्वारा त्यागा जाना चाहिए।।३५।।

राजा योग्य ज्योतिष के लक्षण कथन

यस्तु सम्यग्विजानाति होरागणितसंहिताः।
अभ्यर्च्यः स नरेन्द्रेण स्वीकर्तव्यो जयैषिणा ।।३६।।

माया—ज्योतिषशास्त्र के होरा, गणित और संहिता के उत्कृष्ट ज्ञान से सम्पन्न दैवज्ञ का जय (जीतने) की इच्छा करने वाले राजा पूजन या सम्मान करें तथा उस (दैवज्ञ) के आदेश का पालन करें।।३६।।

दैवज्ञ प्रशंसा कथन

न तत्सहस्रं करिणां वाजिनां च चतुर्गुणम्।
करोति देशकालज्ञो यथैको दैवचिन्तकः ।।३७।।

माया—एक देश-काल को जानने वाला दैवज्ञ जितना काम करने की क्षमता रखता है, उतनी क्षमता से उस कार्य को हजार हाथी और उससे चार गुणी संख्यक घोड़े भी नहीं कर सकते।।३७।।

तिथि, नक्षत्र आदि के सम्वाद श्रवण फल

दुःस्वप्नदुर्विचिन्तितदुष्प्रेक्षितदुष्कृतानि कर्माणि।
क्षिप्रं प्रयान्ति नाशं शशिनः श्रुत्वा भसंवादम् ।।३८।।

माया—दैवज्ञ के द्वारा चन्द्रमा का नक्षत्र सम्वाद सूनने से दुष्ट स्वप्न, दुष्ट चिन्तन, दुष्ट दर्शन, दुष्टकर्म आदि का दुष्प्रभाव शीघ्र ही नाश हो जाता है।।३८।।

यशस्वी दैवज्ञ की प्रशंसा

न तथेच्छति भूपतेः पिता जननी वा स्वजनोऽथवा सुहृत् ।
स्वयशोऽभिविवृद्धये यथा हितमाप्तः सबलस्य दैववित् ।।३९।।

माया—यश-कीर्ति की अभिवृद्धि की आकांक्षा वाले दैवज्ञ राजा का जैसा हित साधन करते हैं, वैसा उस राजा के माता-पिता, स्वजन सुहृत् भी नहीं कर पाते।।३९।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां सम्वत्सरसूत्राध्यायः द्वितीयः ।।२।।

□□□

अथ तृतीयोऽध्यायः-३

आदित्यचारविचारः

प्रथम अन्य मत से अयन लक्षण कथन

आश्लेषार्द्धाद्दक्षिणमुत्तरमयनं रवेर्धनिष्ठाद्यम् ।
नूनं कदाचिदासीद्येनोक्तं पूर्वशास्त्रेषु ।।१।।

निश्चय पूर्वक यह जानना चाहिए कि किसी समय आश्लेषा नक्षत्र के अर्द्धभाग से सूर्य का दक्षिणायन और धनिष्ठा के आदि भाग से उत्तरायण का प्रारंभ होता था। यदि ऐसा नहीं था, तो पूर्वशास्त्रों में इस प्रकार का वर्णन नहीं होता।।१।।

ग्रन्थकार का स्वमत स्थापन कथन

साम्प्रतमयनं सवितुः कर्कटकाद्यं मृगादितश्चान्यत् ।
उक्ताभावो विकृतिः प्रत्यक्षपरीक्षणैर्व्यक्तिः ।।२।।

माया—लेकिन इस समय सूर्य का दक्षिणायन कर्कादि से और उत्तरायण मकरादि से प्रवृत्त होता है। इस प्रकार उक्त अर्थ अभाव का नाम विकृत है। इन सभी बातों का प्रत्यक्षीकरण साक्षात् परीक्षण से ही सम्भव है।।२।।

अयन परीक्षण विधि कथन

दूरस्थचिह्नवेधादुदयेऽस्तमयेऽपि वा सहस्रांशोः ।
छायाप्रवेशनिर्गमचिह्नैर्वा मण्डले महति ।।३।।

माया—सूर्य के उदय या अस्त के समय भी दूर में स्थित चिह्न (संकेत) के वेध से अयन-चलन का परीक्षण करना चाहिए तात्पर्य यह कि किसी निश्चित स्थान पर स्थित चिह्न के समक्ष सूर्य के उदयास्त का निरीक्षण कर चिह्नित करना चाहिए। पुनः निरन्तर अन्यदिन भी उदयास्त का पूर्ववत् निरीक्षण कर जाँच करना चाहिए कि सूर्य उदयास्त के बाद उपरोक्त चिह्न से दक्षिण या उत्तर की ओर जाता है। इस प्रकार सूर्य जिस ओर जाता हुआ प्रतीत हो, उस दिशागत अयन में सूर्य को जानना चाहिए। अथवा महामण्डल में छाया के प्रवेश या निर्गम चिह्न से अयन चलन का परिज्ञान करना चाहिए।।३।।

विकृत सूर्य के अयनगत फलकथन

अप्राप्य मकरमर्को विनिवृत्तो हन्ति सापरां याम्याम् ।
कर्कटकमसम्प्राप्तो विनिवृत्तश्चोत्तरां सैन्द्रीम् ।।४।।

माया—सूर्य, यदि मकर राशि में विना प्रवेश किये दक्षिण दिशा की ओर लौट जाता है, तो पश्चिम और दक्षिण दिशा में स्थित देशों का नाश होता है। यदि कर्क राशि में विना प्रवेश किये उत्तर दिशा की ओर लौट जाता है,तो पूर्व और उत्तर दिशा में स्थित देशों का नाश होता है।।४।।

अतिक्रमित अयनगत सूर्य फल कथन

उत्तरमयनमतीत्य व्यावृत्तः क्षेमसस्यवृद्धिकरः ।
प्रकृतिस्थश्चाप्येवं विकृतगतिर्भयकृदुष्णांशुः ।।५।।

माया—सूर्य यदि उत्तर अयन (मकर राशि) को पारकर उत्तर दिशा की ओर वापस हो, तो जनकल्याण का मार्ग प्रशस्त कर धन-धान्य की अभिवृद्धि करता है। इसी तरह सूर्य, यदि दक्षिण अयन (कर्कराशि) को पार कर दक्षिण दिशा की ओर वापस हो तो भी उपरोक्त फल जानना चाहिए। ऐसा प्रकृतिस्थ सूर्य के अयन चलन होने पर ही सम्भव है। विकृत सूर्य के अयन चलन होने की स्थिति में जन भय उत्पन्न होता है।।५।।

त्वष्टा नामक ग्रह से आच्छादित सूर्य का अशुभ फल

सतमस्कं पर्व विना त्वष्टा नामार्कमण्डलं कुरुते ।
स निहन्ति सप्त भूपान् जनांश्च शस्त्राग्निदुर्भिक्षैः ।।६।।

माया—पर्व काल को छोड़कर अन्यकाल में सूर्य, यदि त्वष्टा नामक ग्रह से आच्छादित अर्थात् अन्धकारमय होता हो, तो वह पञ्चदशाध्यायोक्त कूर्म विभाग के नौ देशों के नौ राजाओं में से सात राजाओं का नाश करता है तथा शस्त्र, अग्नि, दुर्भिक्ष आदि से जनों का भी नाश होता है।।६।।

तामस-कीलक आदि नाम के केतु से आच्छादित सूर्य का फल

तामसकीलकसंज्ञा राहुसुताः केतवस्त्रयस्त्रिंशत् ।
वर्णस्थानाकारैस्तान् दृष्ट्वाऽर्के फलं ब्रूयात् ।।७।।

माया—राहु पुत्र केतु तामस, कीलक आदि नाम के तैंतीस प्रकार के हैं। इन सबों को सूर्यमण्डल में देखकर वर्ण, स्थान, आकार आदि से फल परिज्ञान कर कहना चाहिए।।७।।

तामस-कीलकादि के शुभाशुभ फल

ते चार्कमण्डलगताः पापफलाश्चन्द्रमण्डले सौम्याः ।
ध्वाङ्क्षकबन्धप्रहरणरूपाः पापाः शशाङ्केऽपि ।।८।।

माया—वे राहु पुत्र तामस, कीलक नाम वाले जब सूर्य मण्डल में प्रवेश करें, तो अशुभ और चन्द्र मण्डल में प्रवेश करें, तो शुभ फल होता है। परन्तु ध्वांक्षकबन्ध या

प्रहरण (शस्त्र) के सदृश उनका स्वरूप दृष्ट हो, तो उनके चन्द्रमण्डल में प्रवेश करने पर भी अशुभफल ही होते हैं॥८॥

तामस-कीलक आदि के उदय होने का निमित्त

तेषामुदये रूपाण्यम्भः कलुषं रजोवृतं व्योम ।
नगतरुशिखरामर्दी सशर्करो मारुतश्चण्डः ॥९॥
ऋतुविपरीतास्तरवो दीप्ता मृगपक्षिणो दिशां दाहाः ।
निर्घातमहीकम्पादयो भवन्त्यत्र चोत्पाताः ॥१०॥

माया—इन तामस, कीलक आदि संज्ञक राहुपुत्र केतुओं के उदय होने पर पृथ्वी पर हर जगह उथल-पुथल-कोलाहल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जल मलयुक्त हो जाता है। धूल आकाश में आच्छादित हो जाता है। पर्वत और वृक्षों के शिखर के मान का मर्दन करने वाला प्रचण्ड वायु बहने लगती है। वृक्षों में ऋतु से विपरीत समय में फल-फूल लग जाते हैं। सूर्य की गर्मी से पशु-पक्षी आदि में व्याकुलता व्याप्त होती है। दिशाओं में जलन, निर्घात, भूकम्प आदि भयानक उत्पात होते हैं॥९-१०॥

उपरोक्त उत्पातों का निष्फलत्व कथन

न पृथक् फलानि तेषां शिखिकीलकराहुदर्शनानि यदि ।
तदुदयकारणमेषां केत्वादीनां फलं ब्रूयात् ॥११॥

माया—पूर्वोक्त अम्भ, कलुष आदि उत्पातों का पृथक् फल तब नहीं होता है, जब इन उत्पातों के होने के सात दिन के भीतर केतु (तामस) कीलक, राहु आदि का दर्शन हो जाता है; क्योंकि वे उत्पात् तामस, कीलक, राहु आदि के उदित होने के कारण ही होते है, तात्पर्य यह कि अम्भ, कलुष उत्पातों का दर्शन हो जाने पर तामस, कीलक, राहु आदि का दर्शन होने पर भी तामस, कीलक, राहु आदि का दर्शन न हो, तो उन्हीं उत्पातों के अनुसार शुभाशुभ फल का निर्णय करना चाहिए॥११॥

केतु आदि दर्शन के शुभाशुभ फल

यस्मिन् यस्मिन् देशे दर्शनमायान्ति सूर्यबिम्बस्थाः ।
तस्मिंस्तस्मिन् व्यसनं महीपतीनां परिज्ञेयम् ॥१२॥
क्षुत्प्रम्लानशरीरा मुनयोऽप्युत्सृष्टधर्मसच्चरिताः ।
निर्मांसबालहस्ताः कृच्छ्रेणायान्ति परदेशम् ॥१३॥
तस्करविलुप्तवित्ताः प्रदीर्घनिःश्वासमुकुलिताक्षिपुटाः ।
सन्तः सन्नशरीराः शोकोद्भववाष्परुद्धदृशः ॥१४॥
क्षामा जुगुप्समानाः स्वनृपतिपरचक्रपीडिता मनुजाः ।
स्वनृपतिचरितं कर्म न पुरा कृतं प्रब्रुवन्त्यन्ये ॥१५॥

गर्भेष्वपि निष्पन्ना वारिमुचो न प्रभूतवारिमुचः ।
सरितो यान्ति तनुत्वं क्वचित्क्वचिज्जायते सस्यम् ।।१६।।

भाषा—सूर्यबिम्ब में स्थित तामस, कीलक आदि केतु जिन-जिन देशों में दिखाई पड़ते हैं, उन-उन देशों के राजाजनों के व्यसन के कारण दुःख होता है।

भूख से म्लान या कृश शरीर युक्त मुनिजन अपने धर्म और श्रेष्ठ चरित्र से हीन होकर माँस रहित शरीर वाले बालकों को हाथ में लेकर देशान्तर चले जाते हैं।

सज्जन पुरुषों के धन चोर द्वारा अपहृत कर लिया जाता है। इसलिए वे सज्जन पुरुष लम्बे श्वास लेने से संकुचित आँखों और कृश शरीर वाले तथा शोक के कारण अश्रुपूरित बन्द आखों वाले भी दीखते हैं।

उस समय अपने राजा और अन्य देश के राजा से उत्पीड़ित कृश शरीर और निन्दारत मनुष्य अपने राजा के पूर्व कृत्यों को अन्यजनों से कहते हैं।

गर्भयुक्त होकर भी मेघ अधिक जल नहीं वर्षाते, नदियाँ भी अल्प जल युक्ता हो जाती है तथा धन-धान्य भी कुछ-कुछ उत्पन्न होती हैं।।१२-१६।।

केतुओं की आकृतिवश फल कथन

दण्डे नरेन्द्रमृत्युर्व्याधिभयं स्यात् कबन्धसंस्थाने ।
ध्वाङ्क्षे च तस्करभयं दुर्भिक्षं कीलकेऽर्कस्थे ।।१७।।

भाषा—यदि सूर्यमण्डल में दण्डाकृति का दर्शन हो, तो राजा की मृत्यु होती है। शिरहीन शरीर दीखने से व्याधि-भय उत्पन्न होता है। ध्वांक्षाकृति या कौए के समान आकृति दीखने से चोर भय तथा कीलक (स्तम्भ) का आकार दीखने पर अकाल पड़ता है।।१७।।

केतुओं के और फल कथन

राजोपकरणरूपैश्छत्रध्वजचामरादिभिर्विद्धः ।
राजान्यत्वकृदर्कः स्फुलिङ्गधूमादिभिर्जनहा ।।१८।।

भाषा—सूर्य बिम्ब यदि राजा के उपकरण स्वरूप छत्र, ध्वजा, चामर आदि से विद्ध हो, तो राज परिवर्तन सम्भव होता है। यदि वह अग्नि, धुआँ आदि से आच्छादित प्रतीत हो, तो सामान्यजन का नाश होता है।।१८।।

पुनः केतुओं के फल कथन

एको दुर्भिक्षकरोद्व्याद्याः स्युर्नरपतेर्विनाशाय ।
सितरक्तपीतकृष्णैस्तैर्विद्धोऽर्कोऽनुवर्णघ्नः ।।१९।।

भाषा—सूर्य बिम्ब यदि पूर्वोक्त छत्रादि में से किसी एक चिह्न से विद्ध हो, तो अकाल पड़ता है। यदि उनमें से किसी दो चिह्न से विद्ध हो, तो राजा का नाश होता है।।

यदि सूर्य बिम्ब क्रम से सफेद, लाल, पीला और काला इन वर्णों में से जिस-किसी वर्ण के उपरोक्त चिह्न से वेधित हो, तो क्रम से ब्रह्मण आदि वर्ण के मनुष्यों का नाश होता है। अर्थात् सूर्यबिम्ब में दीखने वाले पूर्वोक्त छत्रादि चिह्न यदि सफेद वर्ण का हो, तो ब्राह्मणें का; लाल वर्ण का हो, तो क्षत्रियों का; पीला हो, तो वैश्यों का तथा काला हो, तो शूद्रों का नाश करने वाला होता है॥१९॥

केतुओं के विशेष फल कथन

दृश्यन्ते च यतस्ते रविबिम्बस्योत्थिता महोत्पाताः ।
आगच्छति लोकानां तेनैव भयं प्रदेशेन ॥२०॥

माया—सूर्य मण्डल में दीखने वाले वे ध्वाङ्क्षादि महा उत्पात जिस दिशा में स्थित हो, उस दिशा में स्थित देशों के जनों को भय की प्राप्ति होती है अर्थात् यदि वे उत्पात सूर्यबिम्ब की पूर्व दिशा में हो, तो पूर्व दिशा में स्थित देश; दक्षिण दिशा में हो, तो दक्षिण दिशा के देश, पश्चिम दिशा में स्थित होने पर पश्चिमी और उत्तर दिशा में होने पर उत्तरी देश के लोगों को भय होता है॥२०॥

सूर्य की रश्मि अनुसार शुभाशुभ फल कथन

ऊर्ध्वकरो दिवसकरस्ताम्रः सेनापतिं विनाशयति ।
पीतो नरेन्द्रपुत्रं श्वेतस्तु पुरोहितं हन्ति ॥२१॥
चित्रोऽथवापि धूम्रो रविरश्मिर्व्याकुलं करोत्यूर्द्धम् ।
तस्करशस्त्रनिपातैर्यदि सलिलं नाशु पातयति ॥२२॥

माया—सूर्य बिम्ब के ऊर्ध्व भाग से निकल रही किरणें यदि ताम्र या लाल वर्ण की हों तो सेनापति का, पीवतर्ण की हों तो राजपुत्र का और श्वेत वर्ण की हों तो राजपुरोहित का तथा वे चित्र (कई वर्णयुक्त) अथवा धूम्र वर्ण की हों तो चोरों से अथवा शस्त्र प्रहारों से साधारणजन व्याकुल होते हैं। उपरोक्त प्रकार के उत्पात तभी सम्भव हो पाता है, जब शीघ्र वर्षा नहीं होती। परन्तु यदि शीघ्र वर्षा होती है , तो उपरोक्त प्रकार का फल घटित न होकर कल्याण ही होता है॥२१-२२॥

सूर्य का ऋतुवर्णवश शुभ फल कथन

ताम्रः कपिलो वार्कः शिशिरे हरिकुङ्कुमच्छविश्च मधौ ।
आपाण्डुकनकवर्णो ग्रीष्मे वर्षासु शुक्लश्च ॥२३॥
शरदि कमलोदराभो हेमन्ते रुधिरसन्निभः शस्तः ।
प्रावृट्काले स्निग्धः सर्वर्त्तुनिभोऽपि शुभदायी ॥२४॥

माया—सूर्य बिम्ब शिशिर ऋतु में यदि ताम्र या कपिल (पीला) वर्ण; वसन्त ऋतु में हरा या कुङ्कुम वर्ण; ग्रीष्म ऋतु में पाण्डु (श्वेत-पीत) व स्वर्ण सदृश वर्ण, वर्षा

ऋतु में श्वेत वर्ण, शरद ऋतु में कमलगर्भ की आभा के समान वर्ण और हेमन्त ऋतु में रक्त वर्ण हो, तो शुभकारक होता है। यदि वर्षा ऋतु में स्वच्छ या विमल और सभी ऋतुओं की आभा से युक्त हो, तो भी शुभप्रद होता है॥२३-२४॥

पुनः सूर्य का ऋतुवर्णवश फल कथन

रूक्षः श्वेतो विप्रान् रक्ताभः क्षत्रियान् विनाशयति ।
पीतो वैश्यान् कृष्णस्ततोऽपरान् शुभकरः स्निग्धः ॥२५॥

भाषा—यदि सूर्य बिम्ब रूखा या सफेद वर्ण का हो, तो ब्राह्मणों का, रक्ताभ हो, तो क्षत्रियों का, पीतवर्ण का होने से वैश्यों का और काला वर्ण हो, तो शूद्रों का नाश करने वाला होता है। इस प्रकार सूर्यबिम्ब का उपरोक्त वर्ण यदि स्निग्ध अर्थात् गहरा चमकयुक्त हो तो ब्राह्मणादि वर्णों के लिए भी शुभकारक होता है॥२५॥

सूर्य का ऋतुवश अशुभ वर्ण कथन

ग्रीष्मे रक्तो भयकृद्वर्षास्वसितः करोत्यनावृष्टिम् ।
हेमन्ते पीतोऽर्कः करोति न चिरेण रोगभयम् ॥२६॥

भाषा—सूर्य बिम्ब ग्रीष्म ऋतु में रक्तवर्ण का होने पर भयप्रद होता है। वर्षा ऋतु में कृष्णवर्ण का सूर्य बिम्ब अनावृष्टि करने वाला होता है। हेमन्त ऋतु में सूर्यबिम्ब पीतवर्ण का होने पर शीघ्र रोग व भय देता है॥२६॥

सूर्य का ऋतुवश और फल कथन

सुरचापपाटिततनुर्नृपतिविरोधप्रदः सहस्रांशुः ।
प्रावृट्काले सद्यः करोति विमलद्युतिर्वृष्टिम् ॥२७॥
वर्षाकाले वृष्टिं करोति सद्यः शिरीषपुष्पाभः ।
शिखिपत्रनिभः सलिलं न करोति द्वादशाब्दानि ॥२८॥

भाषा—सूर्य बिम्ब यदि सुरचाप (इन्द्रधनुष सदृश) से खण्डित हुआ-सा प्रतीत हो, तो राजाओं में परस्पर विरोध उत्पन्न होता है। वर्षा ऋतु में सूर्यबिम्ब के विमल व कान्ति युक्त दीखने पर तत्काल वृष्टि होती है।

वर्षा ऋतु में सूर्यबिम्ब यदि शिरीष पुष्प की आभा सदृश दीखता हो, तो तत्काल वृष्टि होती है। सूर्य बिम्ब यदि मोर पूँछ के सदृश आभायुक्त हो, तो १२ वर्ष तक वर्षा का अभाव रहता है॥२७-२८॥

सूर्य सम्बन्धी अन्य फल कथन

श्यामेऽर्के कीटभयं भस्मनिभे भयमुशन्ति परचक्रात् ।
यस्यर्क्षे सच्छिद्रस्तस्य विनाशः क्षितीशस्य ॥२९॥

माया—रविमण्डल यदि श्यामवर्ण का प्रतीत हो, तो कीट-पतङ्ग का भय जानना चाहिए। वह यदि भस्म की आभा सदृश प्रतीत हो, तो अन्य राजा या परराष्ट्र से भय होता है। जिस-किसी राजा के जन्म नक्षत्र में स्थित सूर्यबिम्ब छिद्र सहित प्रतीत हो, तो उस राजा का नाश कहना चाहिए॥२९॥

सूर्य सम्बन्धी अन्य और फल कथन

शशरुधिरनिभे भानौ नभस्तलस्थे भवन्ति सङ्ग्रामाः ।
शशिसदृशे नृपतिबधः क्षिप्रं चान्यो नृपो भवति ॥३०॥

माया—आकाश में यदि सूर्य बिम्ब शशक (खरहा) के खून सदृश रक्तवर्ण का प्रतीत हो, तो सङ्ग्राम (युद्ध) होना, जानना चाहिए। यदि सूर्य बिम्ब चन्द्रमा के सदृश वर्ण का प्रतीत हो, तो सत्तासीन राजा का वध और अन्य राजा होता है॥३०॥

सूर्य सम्बन्धी अन्य और भी फल कथन

क्षुन्मारकृद्घटनिभः खण्डो जनहा विदीधितिर्भयदः ।
तोरणरूपः पुरहा छत्रनिभो देशनाशाय ॥३१॥

माया—जहाँ सूर्य बिम्ब यदि घड़े के आकार सदृश प्रतीत हो, तो वहाँ जनगण भूख की ज्वाला से प्राण त्याग करते हैं। सूर्य बिम्ब यदि खण्डाकृति का प्रतीत हो, तो भी जनगण का नाश होता है। वह यदि रश्मिहीन प्रतीत हो, तो भयप्रद होता है। वह यदि तोरणाकार प्रतीत हो, तो नगरों का नाश होता है। तथा वह यदि छत्र के सदृश दीखता हो, तो देश का ही नाश हो जाता है॥३१॥

सूर्य सम्बन्धी और अन्य फल कथन

ध्वजचापनिभे युद्धानि भास्करे वेपने च रूक्षे च ।
कृष्णा रेखा सवितरि यदि हन्ति ततो नृपं सचिवः ॥३२॥

माया—सूर्य बिम्ब यदि ध्वजा (पताका) या चाप (धनुष) के सदृश कम्पनयुक्त और रूखा प्रीत हो, तो सङ्ग्राम या युद्ध होता है। सूर्य मण्डल यदि कृष्ण वर्ण रेखा से विद्ध प्रतीत हो, तो मन्त्री द्वारा राजा का वध होता है॥३२॥

सूर्य सम्बन्धी और अन्य फल कथन

दिनकरमुदयास्तसंस्थितमुल्काशनिविद्युतो यदा हन्युः ।
नरपतिमरणं विन्द्यात्तदाऽन्यराजप्रतिष्ठा च ॥३३॥

माया—यदि उदय के समय सूर्य बिम्ब से उल्का, वज्र, बिजली आदि टकराता हो, तो सत्तासीन राजा का मरण और उस से अन्य राजा की प्रतिष्ठा स्थापित होती है॥३३॥

सूर्य सम्बन्धी और फल कथन

प्रतिदिवसमहिमकिरणः परिवेषी सन्ध्ययोर्द्वयोरथवा ।
रक्तोऽस्तमेति रक्तोदितश्च भूपं करोत्यन्यम् ।।३४।।

माया—जिस देश में उदय और अस्त के समय प्रत्येक दिन सूर्य बिम्ब परिवेष युक्त अथवा रक्त वर्ण का होकर उदय और अस्त के समय दीखता हो, तो निश्चय ही सत्ता परिवर्तन होने से दूसरा राजा होता है।।३४।।

सूर्य का सन्ध्या के समय शुभाशुभ फल कथन

प्रहरणसदृशैर्जलदैः स्थगितः सन्ध्याद्वयेऽपि रणकारी ।
मृगमहिषविहगखरकरभसदृशरूपैश्च भयदायी ।।३५।।

माया—दोनों सन्ध्या (प्रातः-सायं) काल में प्रहरण (आयुध) सदृश स्वरूप वाले बादल यदि सूर्यबिम्ब को आच्छादित करता हो, तो वह युद्ध कारक होता है तथा यदि सूर्यबिम्ब हिरण, महिष, पक्षी, गदहा, हाथी आदि स्वरूप सदृश बादल से आच्छादित हो, तो भय उत्पन्न होता है।।३५।।

अर्क से आक्रान्त नक्षत्र का सन्ताप शोधन कथन

दिनकरकराभितापादृक्षमवाप्नोति सुमहतीं पीडाम् ।
भवति तु पश्चाच्छुद्धं कनकमिव हुताशपरितापात् ।।३६।।

माया—जिस प्रकार स्वर्ण अग्नि-सन्ताप को सहन कर परिशुद्ध होता है, उसी प्रकार सूर्य रश्मि के दत्त सन्ताप से नक्षत्र भी शुद्ध होता है।।३६।।

प्रतिसूर्य का फल कथन

दिवसकृतः प्रतिसूर्य्यो जलकृदुदग्दक्षिणे स्थितोऽनिलकृत् ।
उभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा ।।३७।।

माया—यदि प्रतिसूर्य सूर्य बिम्ब से उत्तर दिशा की ओर स्थित हो, तो वृष्टि होती है। यदि उससे दक्षिण दिशा की ओर स्थित हो, तो वायु चलती है। यदि सूर्य बिम्ब के दोनों ओर प्रतिसूर्य स्थित हो, तो राजा का तथा सूर्यबिम्ब के ऊपर स्थित होने पर जनगण का नाश करता है।।३७।।

सूर्य सम्बन्धी अन्य और फल कथन

रुधिरनिभो वियत्यवनिपान्तकरो न चिरात् ।
परुषरजोऽरुणीकृततनुर्यदि वा दिनकृत् ।।३८।।
असितविचित्रनीलपरुषो जनघातकरः ।
खगमृगभैरवस्वररुतैश्च निशाद्युमुखे ।।३९।।

माया—सूर्य बिम्ब आकाश में रक्तवर्ण अथवा धूल समूह के कारण लालवर्ण दीखते हों, तो शीघ्र-ही राजा की मृत्यु होती है।

यदि काले, विचित्र वर्ण अथवा नीलवर्ण का सूर्यबिम्ब भयङ्कर आकार वाले दीखते हों या यदि सन्ध्या के समय पक्षी व मृगों का शब्द गधे के स्वर के समान भयङ्कर सूनाई दें, तो जनगण का नाश होता है।।३८-३९।।

सूर्य सम्बन्धी शुभफल कथन

अमलवपुरवक्रमण्डलः स्फुटविपुलामलदीर्घदीधितिः ।
अविकृततनुवर्णचिह्नभृज्जगति करोति शिवं दिवाकरः ।।४०।।

माया—यदि सूर्यबिम्ब, निर्मल, सम्पूर्ण मण्डल वाला, स्पष्ट, अत्यधिक स्वच्छ, दीर्घ किरणों वाला, निर्विकार वर्ण और चिह्न वाला हो, तो वह जगत् का मंगल करने वाला होता है।।४०।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामादित्यचाराध्यायस्तृतीयः।।३।।

❑❑❑

अथ पञ्चमोऽध्यायः-५

राहुचारविचारः

राहु का ग्रहत्व प्रतिपादन में मतान्तर प्रदर्शन

अमृतास्वादविशेषाच्छिन्नमपि शिरः किलासुरस्येदम् ।
प्राणैरपरित्यक्तं ग्रहतां यातं वदन्त्येके ।।१।।

माया—कोई कहते हैं कि राहु नामक असुर का यह सिर अमृत के स्वाद विशेष को चख लेने के कारण कट जाने पर भी प्राण का त्याग नहीं किया और ग्रह रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की।।१।।

फिर भी राहु आकाश में अन्य ग्रह के सदृश क्यों दिखता नहीं? का कथन

इन्द्वर्कमण्डलाकृतिरसितत्वात् किल न दृश्यते गगने ।
अन्यत्र पर्वकालाद्वरप्रदानात् कमलयोनेः ।।२।।

माया—परन्तु सूर्य व चन्द्र बिम्बों के सदृश स्वरूप वाला राहु कृष्ण वर्ण होने के कारण ब्रह्माजी से वर प्राप्त करके ग्रहण (पर्वकाल) काल के शिवाय किसी अल्प समय आकाश में नहीं दिखलाई देता है।।२।।

राहु सम्बन्धी अन्य मत कथन

मुखपुच्छविभक्ताङ्गं भुजङ्गमाकारमुपदिशन्त्यन्ये ।
कथयन्त्यमूर्त्तमपरे तमोमयं सैंहिकेयाख्यम् ।।३।।

माया—कोई कहते हैं कि राहु मुख व पुच्छ दो भाग में विभक्त अङ्गवाला और सर्प का आकार वाला है, फिर कोई कहते हैं कि राहु की कोई आकृति नहीं है, वह मात्र अन्धकारमय है।।३।।

राहु सम्बन्धी अन्य मतों में दोष कथन

यदि मूर्त्तो भविचारी शिरोऽथवा भवति मण्डली राहुः ।
भगणार्द्धेनान्तरितौ गृह्णाति कथं नियतचारः ।।४।।

माया—यदि राहु मूर्तिमान् नक्षत्रों या राशियों में विचरण करने वाला, शिर अथवा मण्डल वाला रहता, तो नियतगति से संचरित षड्राश्यन्तर (१८००) पर स्थित सूर्य व चन्द्र को किस प्रकार ग्रस लेता।।४।।

राहु सम्बन्धी उपरोक्त मतों में अन्य दोष कथन

अनियतचारः खलु चेदुपलब्धिः संख्यया कथं तस्य।
पुच्छाननाभिधानोऽन्तरेण कस्मान्न गृह्णाति ॥५॥

माया—यदि राहु की गति में नियतता नहीं होती, तो गणित से कैसे उसका ज्ञान सम्भव होता तथा यदि वह मुख-पुच्छ विभक्ताङ्ग वाला है, तो षड्राश्यन्तर अर्थात् अमावाश्या या पूर्णिमा के अलावा अपने से दूसरी, तीसरी, चौथी या पाँचवीं राशि पर स्थित सूर्य व चन्द्र को क्यों नहीं ग्रसित करता है अर्थात् अमावास्या या पूर्णिमा को छोड़कर अन्य समय ग्रहण क्यों नहीं होता है॥५॥

उपरोक्त मतान्तरों में और दोष कथन

अथ तु भुजगेन्द्ररूपः पुच्छेन मुखेन वा स गृह्णाति।
मुखपुच्छान्तरसंस्थं स्थगयति कस्मान्न भगणार्द्धम् ॥६॥

माया—अनन्तर यदि राहु सर्प स्वरूप होता, तो उसके मुख या पुच्छ से षड्राश्यन्तर (१८००) पर स्थित सूर्य व चन्द्र सम्बन्धी ग्रहण के समय मुख और पुच्छ के मध्य स्थित राशिषट्क को भी आच्छादित करता॥६॥

राहु को दो मानने वालों के मत में दोष कथन

राहुद्वयं यदि स्याद् ग्रस्तेऽस्तमितेऽथवोदिते चन्द्रे।
तत्समगतिनान्येन ग्रस्तः सूर्योऽपि दृश्येत ॥७॥

माया—यदि दो राहु होता, तो एक राहु से चन्द्र का ग्रस्तास्त या ग्रस्तोदय होता तथा चन्द्र से षड्राश्यन्तर पर स्थित सूर्य भी प्रथम राहु के सदृश गति युक्त द्वितीय राहु से ग्रसित होता देखा जाता। कहने का तात्पर्य यह कि यदि दो राहु होते, तो एक नियत गति और दूसरा अनियत गति वाला माना जाता, जो उचित नहीं है। इसका कारण यह है कि अनियत गति वाले राहु से चन्द्र का ग्रस्तोदय या ग्रस्तास्त होने पर तत्क्षण उसके विपरीत दिशा में षड्राश्यन्तर पर नियत गतिक राहु से सूर्य ग्रहण भी हो जाता, परन्तु ऐसा अब तक सम्भव हुआ नहीं॥७॥

स्वसिद्धान्त प्रतिपादनपूर्वक स्पर्श नियम कथन

भूच्छायां स्वग्रहणे भास्करमर्कग्रहे प्रविशतीन्दुः।
प्रग्रहणमतः पश्चान्नेन्दोर्भानोश्च पूर्वार्द्धात् ॥८॥

माया—चन्द्रमा स्वग्रहणकाल में भूच्छाया में तथा सूर्यग्रहण काल में सूर्यमण्डल में प्रवेश करता है। अतः चन्द्र ग्रहण का स्पर्श पश्चिम दिशा तथा सूर्यग्रहण का स्पर्श पूर्व दिशा से आरम्भ नहीं होता॥८॥

रात्रि में भूच्छाया कहाँ होती है, का प्रतिपादनार्थ कथन

वृक्षस्य स्वच्छाया यथैकपार्श्वे भवति दीर्घचया ।
निशि निशि तद्वद्भूमेरावरणवशाद्दिनेशस्य ।।९।।

माया—जैसे किसी वृक्ष की छाया सूर्य के आवरणवश एक निश्चित दिशा में फैल जाती है, वैसे-ही भूच्छाया सूर्य के आवरणवश रात्रि में प्रतिदिन लम्बी होती है।।९।।

प्रत्येक मास के पूर्णिमा को चन्द्रग्रहण असम्भव कथन

सूर्यात् सप्तमराशौ यदि चोदग्दक्षिणेन नातिगतः ।
चन्द्रः पूर्वाभिमुखश्छायामौर्वीं तदा विशति ।।१०।।

माया—यदि पूर्वाभिमुखी गति वाला चन्द्र, सूर्य से सातवीं राशि में स्थित होकर, क्रान्तिवृत (सूर्य कक्ष) से अल्प दूर उत्तर या दक्षिण शर पर होता है, तो चन्द्र पूर्वाभिमुख गति करता हुआ भूच्छाया में प्रविष्ट होता है।।१०।।

ग्रहण में समानता व असमानता कथन

चन्द्रोऽधःस्थः स्थगयति रविमम्बुदवत् समागतः पश्चात् ।
प्रतिदेशमतश्चित्रं दृष्टिवशाद् भास्करग्रहणम् ।।११।।

माया—सूर्य ग्रहण के प्रसङ्ग में सूर्य के अधःस्थ चन्द्रमा पश्चिम दिशा से आकर बादल के सदृश सूर्यबिम्ब को ढक लेता है। अतः सूर्यग्रहण विविध दृष्टिवश प्रत्येक देश में अनेक रूप का दीखता है। वहीं चन्द्रग्रहण प्रत्येक देश में समान रूप का देखा जाता है।।११।।

अर्द्धग्रस्त चन्द्र की कुण्ठविषाणता और सूर्य की तीक्ष्ण विषाणता में कारण

आवरणं महदिन्दोः कुण्ठविषाणस्ततोऽर्द्धसञ्छन्नः ।
स्वल्पं रवेर्यतोऽतस्तीक्ष्णविषाणो रविर्भवति ।।१२।।

माया—एवं चन्द्र का आवरण (छादक-भूच्छाया) अत्यधिक होने से अर्द्धग्रस्त चन्द्रमण्डल में कुण्ठ विषाण अर्थात् अतिस्थूल शृङ्ग होता है तथा सूर्य का आवरण (छादक चन्द्रबिम्ब) अल्प या छोटा होने से अर्द्धग्रस्त सूर्य मण्डल में तीक्ष्ण विषाण अर्थात् सूक्ष्म शृङ्ग होता है।।१२।।

सूर्य व चन्द्र ग्रहणों में राहु कारण नहीं का ज्ञानार्थ कथन

एवमुपरागकारणमुक्तं दिव्यदृग्भिराचार्यैः ।
राहुरकारणमस्मिन्नित्युक्तः शास्त्रसद्भावः ।।१३।।

माया—इस प्रकार दिव्य दृष्टि वाले आचार्यों ने उपराग (ग्रहण) का कारण बतलाया है। लेकिन ग्रहण में राहु कारण नहीं, इस कथन को मात्र शास्त्र का सद्भाव समझना चाहिए।।१३।।

लोक श्रुति स्मृतिसंहिता आदि के मत का समाधान

योऽसावसुरो राहुस्तस्य वरो ब्रह्मणाऽयमाज्ञप्तः ।
आप्यायनमुपरागे दत्तहुतांशेन ते भविता ॥१४॥
तस्मिन् काले सान्निध्यमस्य तेनोपचर्यते राहुः ।
याम्योत्तरा शशिगतिर्गणितेऽप्युपचर्यते तेन ॥१५॥

माया—आदि काल में ब्रह्माजी ने राहु नाम के असुर को एक वरदान दिया था कि लोगों द्वारा ग्रहणकाल में किये गए हवन की आहुतियों के ही अंश से तुम तृप्त होते रहोगे।

इस प्रकार ग्रहण के समय में सूर्य या चन्द्र से राहु का सान्निध्य होता है और उस राहु के कारण ही चन्द्र की दक्षिणोत्तरा गति गणित द्वारा सिद्ध होती है॥१४-१५॥

गर्गादि कथित उत्पात से ग्रहण ज्ञान स्पष्टीकरण

न कथञ्चिदपि निमित्तैर्ग्रहणं विज्ञायते निमित्तानि ।
अन्यस्मिन्नपि काले भवन्त्यथोत्पातरूपाणि ॥१६॥

माया—आचार्य गर्ग आदि ने उत्पातों से ग्रहण निमित्त जो बताये हैं, उनसे ग्रहण का विनिश्चय करना सम्भव नहीं होता, अत: उसको स्पष्ट किया जाता है।

चूँकि पर्वकाल से भिन्न किसी समय में ग्रहण नहीं हो सकता, यदि और किसी समय में ग्रहण जैसा लक्षण प्रतीत हो, तो उसे मात्र उत्पात् ही समझना चाहिए॥१६॥

अन्यत्र कथित ग्रहण प्रसङ्ग के दोष कथन

पञ्चग्रहसंयोगान्न किल ग्रहणस्य सम्भवो भवति ।
तैलं च जलेऽष्टम्यां न विचिन्त्यमिदं विपश्चिद्भिः ॥१७॥

माया—शास्त्रान्तरों में आया है कि जिस-किसी आमावास्या या पूर्णिमा में पञ्चग्रहों की युति हो, उस दिन ग्रहण सम्भव नहीं है और ग्रहण सम्भव होने पर उसके पूर्व अष्टमी तिथि को जल में तेल डालकर ग्रहण के स्पर्श, मोक्ष आदि की दिशा जानना चाहिए। तात्पर्य यह कि अष्टमी के दिन जल में तेल डालने पर वह तेल जिस दिशा में नहीं फैले, उसी दिशा में ग्रहण का मोक्ष तथा उसकी विपरीत दिशा में स्पर्श होना समझना चाहिए; परन्तु विद्वानों को इस तरह के मतों को महत्त्व नहीं देना चाहिए॥१७॥

ग्रहण में ग्रास प्रमाण, दिशा और वेला ज्ञान कथन

अवनत्याऽर्के ग्रासो दिग्ज्ञेया वलनयाऽवनत्या च ।
तिथ्यवसानाद्वेला करणे कथितानि तानि मया ॥१८॥

माया—अवनति (स्फुट शर) से सूर्य का ग्रास, वलन तथा अवनति से ही दिशा

और तिथ्यन्त से ग्रहणकाल का विनिश्चय जिस तरह करना चाहिए, उसे मैं (ग्रन्थकार) ने अपने 'पञ्चसिद्धान्तिका) करण ग्रन्थ में बताया है॥१८॥

कल्पादि से सप्तपर्व देवता कथन

षण्मासोत्तरवृद्ध्या पर्वेशाः सप्त देवताः क्रमशः ।
ब्रह्मशशीन्द्रकुबेरा वरुणाग्नियमाश्च विज्ञेयाः ॥१९॥

भाषा—कल्पादि से छः-छः मास वृद्धि करते हुए सात पर्वों के ब्रह्मा, चन्द्र, इन्द्र, कुबेर, वरुण, अग्नि और यम सात देवता होते हैं॥१९॥

सप्त पर्व देवता फल कथन

ब्राह्मे द्विजपशुवृद्धिः क्षेमारोग्याणि सस्यसम्पच्च ।
तद्वत्सौम्ये तस्मिन् पीडा विदुषामवृष्टिश्च ॥२०॥
ऐन्द्रे भूपविरोधः शारदसस्यक्षयो न च क्षेमम् ।
कौबेरेऽर्थपतीनामर्थविनाशः सुभिक्षं च ॥२१॥
वारुणमवनीशाशुभमन्येषां क्षेमसस्यवृद्धिकरम् ।
आग्नेयं मित्राख्यं सस्यारोग्याभयाम्बुकरम् ॥२२॥
याम्यं करोत्यवृष्टिं दुर्भिक्षं संक्षयं च सस्यानाम् ।
यदतः परं तदशुभं क्षुन्मारावृष्टिदं पर्व ॥२३॥

भाषा—जब पर्व का देवता ब्रह्मा हो, तो उसमें ग्रहण होने पर द्विजों और पशुओं की अभिवृद्धि होती है, सबका कल्याण होता है, आरोग्यता आती है तथा धन-धान्यों की भी अभिवृद्धि होती है।

जब पर्व का देवता चन्द्रमा हो, तो उसमें ग्रहण होने पर पूर्ववत् द्विजों और पशुओं की अभिवृद्धि, क्षेम, धान्यवृद्धि के साथ विद्वानों को पीड़ा तथा अनावृष्टि का कारण उत्पन्न होता है।

जब पर्व का देवता इन्द्र हो, तो उसमें ग्रहण होने पर राजाओं में विरोध उत्पन्न होता है। शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाले धान्यों का नाश होता है। जनगणों का अमंगल होता है।

जब पर्व का देवता कुबेर हो, तो उसमें धनपतियों के धन का नाश तथा सुभिक्ष होता है।

जब पर्व का देवता वरुण हो, तो उसमें ग्रहण होने पर राजाओं का अमंगल, अन्य जनों का कल्याण तथा धान्यों की वृद्धि होती है।

जब पर्व का देवता अग्नि हो, तो उसमें ग्रहण होने पर धान्य वृद्धि, आरोग्य, अभय और वृष्टि होती है। अग्निपर्व का अपर नाम मित्र भी है।

जब पर्व का देवता यम हो, तो उसमें ग्रहण होने पर वृष्टि का प्राय: अभाव रहता है, दुर्भिक्ष होती है, धान्यों का नाश भी होता है।

इन सात पर्वों के अतिरिक्त अन्य पर्वों में ग्रहण होने पर क्षुधा पीड़ा, महामारी, अनावृष्टि आदि अशुभ फल होता है।।२०-२३।।

वेलाहीन व अतिवेल पर्व फल कथन

वेलाहीने पर्वणि गर्भविपत्तिश्च शस्त्रकोपश्च ।
अतिवेले कुसुमफलक्षयो भयं सस्यनाशश्च ।।२४।।

माया—वेलाहीन अर्थात् गणित सिद्ध काल के पहले ही ग्रहण होने पर गर्भ का नाश और शस्त्रकोप होता है। एवं अतिवेल अर्थात् गणित सिद्ध काल के बाद ग्रहण होने पर फलपुष्पों का नाश, भय और धन-धान्यों का नुकसान होता है।।२४।।

यहाँ तक मैंने पूर्वशास्त्रानुसार कहा है–

हीनातिरिक्तकाले फलमुक्तं पूर्वशास्त्रदृष्टत्वात् ।
स्फुटगणितविद: काल: कथञ्चिदपि नान्यथा भवति ।।२५।।

माया—वेलाहीन या अतिवेला अर्थात् गणित सिद्ध काल से भिन्न कालिक पर्व में होने वाले ग्रहण का फल मैंने (ग्रन्थकार) पूर्वशास्त्रों में कथितानुसार कहा है; परन्तु स्फुट गणित को जानने वाले दैवज्ञ सिद्ध ग्रहण काल कभी असत्य नहीं हो सकता।।२५।।

एक मास में होने वाले चन्द्र व सूर्य ग्रहण का फल

यद्येकस्मिन् मासे ग्रहणं रविसोमयोस्तदा क्षितिपा: ।
स्वबलक्षोभै: संक्षयमायान्त्यतिशस्त्रकोपश्च ।।२६।।

माया—यदि एक मास में सूर्य व चन्द्र दोनों का ग्रहण हो, तो अपनी सेनाओं में खलबली मच जाने से ही राजाजन क्षय को प्राप्त होते हैं तथा शस्त्रकोप अर्थात् युद्ध होता है।।२६।।

ग्रस्तोदयास्त चन्द्र व सूर्य फल कथन

ग्रस्तावुदितास्तमितौ शारदधान्यावनीश्वरक्षयदौ ।
सर्वग्रस्तौ दुर्भिक्षमरकदौ पापसन्दृष्टौ ।।२७।।

माया—यदि सूर्य और चन्द्रमा पापग्रह से दृष्ट तथा ग्रस्तावस्था में उदित अथवा अस्त हों, तो शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाले धान्य और राजा का नाश होता है।

यदि सूर्य व चन्द्रमा पापग्रह से दृष्ट और सर्वग्रसित हों, तो महामारी और दुर्भिक्ष होता है।।२७।।

उदय से अस्त पर्यन्त ग्रस्त चन्द्र और सूर्य के सात प्रकार के फल

अर्द्धोदितोपरक्तो नैकृतिकान् हन्ति सर्वयज्ञांश्च ।
अग्न्युपजीविगुणाधिकविप्राश्रमिणो युगेऽभ्युदितः ॥२८॥
कर्षकपाखण्डिवणिक्क्षत्रियबलनायकान् द्वितीयांशे ।
कारुकशूद्रम्लेच्छान् खतृतीयांशे समन्त्रिजनान् ॥२९॥
मध्याह्ने नरपतिमध्यदेशहा शोभनश्च धान्यार्घः ।
तृणभुगमात्यान्तःपुरवैश्यघ्नः पञ्चमे खांशे ॥३०॥
स्त्रीशूद्रान् षष्ठेऽशे दस्युप्रत्यन्तहाऽस्तमयकाले ।
यस्मिन् खांशे मोक्षस्तत्प्रोक्तानां शिवं भवति ॥३१॥

भाषा—यदि सूर्य अथवा चन्द्रमा अर्द्धोदित होकर राहु से ग्रस्त होता हो, तो निषाद जाति के जनों का या अतिकष्ट से जीविका करने वाले जनों का तथा सभी प्रकार के यज्ञों का नाश करता है। ग्रहण दिन के दिनमान या रात्रिमान को ७ से भाजित कर आकाश का सातवाँ भाग होता है।

इस प्रकार आकाश के प्रथम आदि सात भागों में से प्रत्येक भाग में सूर्य या चन्द्र का स्पर्श या मोक्ष घटित होने का पृथक्-पृथक् फल अधोलिखित प्रकार से कहा गया है—

यदि आकाश के प्रथम भाग में उदित चन्द्र अथवा सूर्यग्रस्त होता है, तो अग्निकार्य से जीविकोपार्जन करने वाले, अधिक गुणवान्, विप्र (ब्राह्मण) और आश्रमवासियों का नाश होता है।

यदि आकाश के द्वितीय भाग में उदित चन्द्र अथवा सूर्य ग्रस्त हो, तो कृषक, पाखण्डी, व्यापारी, क्षत्रिय तथा सेनानायक का नाश होता है।

यदि तृतीय भाग में वे दोनों ग्रस्त हों, तो चित्रकार,शूद्र, म्लेच्छ जाति के लोग और मन्त्रियों का भी नाश होता है।

यदि चतुर्थ भाग में हो, तो राजा और मध्यदेशीय जनों का नाश होता है, लेकिन धन-धान्यों के विषय में समर्थता होती है।

यदि पञ्चम भाग में हो, तो पशुओं, मन्त्रियों, अन्तःपुर वासियों और वैश्यजनों का नाश होता है।

यदि षष्ठ भाग में हो, तो स्त्रियों और शूद्रों का नाश होता है।

यदि सप्तम भाग में हो, तो चोर और गुफावासियों का नाश होता है। इस प्रकार जिस भाग में मोक्ष होता है, उस भाग में उन-उन व्यक्तियों के लिए उपरोक्त अशुभफल नहीं होता, केवल उन्हें शुभफल प्राप्त होता है॥२८-३१॥

अयन और दिशा से ग्रहण फल कथन

द्विजनृपतीनुदगयने विट्शूद्रान् दक्षिणायने हन्ति।
राहुरुदगादिदृष्टः प्रदक्षिणं हन्ति विप्रादीन् ।।३२।।
म्लेच्छान् विदिक्स्थितो यायिनश्च हन्याद्धुताशसक्तांश्च।
सलिलचरदन्तिघाती याम्येनोदग्गवामशुभः ।।३३।।
पूर्वेण सलिलपूर्णां करोति वसुधां समागतो दैत्यः।
पश्चात् कर्षकसेवकबीजविनाशाय निर्दिष्टः ।।३४।।

भाषा—चन्द्र अथवा सूर्य का ग्रहण उत्तरायण में होने से ब्राह्मणों और क्षत्रियों का तथा दक्षिणायन में वैश्यों और शूद्रों का नाश करने वाला होता है।

उत्तरादि अर्थात् उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम; इन चारों दिशाओं में से जिस-किसी दिशा में राहु दिखता हो, तो वह प्रदक्षिण क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र जातियों का नाश करने वाला होता है।

विदिशा अर्थात् चारों कोणीय (ईशान कोण, अग्नि कोण, नैऋत्य कोण और वायव्य कोण) दिशाओं में स्थित राहु म्लेच्छ, यायी (पथिक) और अग्नि कार्य जीवन निर्वाह करने वालों (अग्नि होत्रिओं) का नाश करने वाला होता है।

पुनः दक्षिण, उत्तर, पूर्व और पश्चिम दिशाओं में राहु के दीखने का फल कहा जा रहा है—दक्षिण में राहु के दीखने पर जलचरों और हाथियों का और उत्तर में गाय व बैलों का नाश करने वाला होता है। एवं पूर्व में राहु के दीखने पर सम्पूर्ण पृथ्वी को जल परिपूर्ण करता है तथा पश्चिम दिशा में कृषकों, सेवकों और बीजों को नाश करने वाला होता है।।३२-३४।।

मेषादि राशियों में ग्रस्त सूर्य चन्द्र का फलः उनमें मेषराशिगत फल कथन

पाञ्चालकलिङ्गशूरसेनाः काम्बोजोड्रकिरातशस्त्रवार्त्ताः।
जीवन्ति च ये हुताशवृत्त्या ते पीडामुपयान्ति मेषसंस्थे ।।३५।।

भाषा—यदि मेष राशिगत सूर्य या चन्द्र का ग्रहण हो, तो पंजाब, कलिङ्ग, शूरसेन, कम्बोज, औड्रदेश, किराज, शस्त्र से जीवन निर्वाह करने वालों, अग्निकार्य से भी जीविकोपार्जन करने वालों आदि को पीड़ित करने वाला होता है।।३५।।

वृषराशिगत सूर्य चन्द्र ग्रहण फल कथन

गोपाः पशवोऽथ गोमिनो मनुजा ये च महत्त्वमागताः।
पीडामुपयान्ति भास्करे ग्रस्ते शीतकरेऽथवा वृषे ।।३६।।

भाषा—वृष राशिगत सूर्य अथवा चन्द्र का ग्रहण होने पर गोपालकों, पशुओं तथा महत्त्वपूर्ण मनुष्यों को पीड़ित होना पड़ता है।।३६।।

मिथुन राशिगत सूर्य-चन्द्र ग्रहण फल कथन

मिथुने प्रवराङ्गना नृपा नृपमात्रा बलिनः कलाविदः ।
यमुनातटजाः सबाह्लिका मत्स्याः सुह्यजनैः समन्विताः ।।३७।।

भाषा—मिथुन राशि में सूर्य का या चन्द्र का राहु से ग्रस्त होने पर श्रेष्ठ स्त्रियों, राजाजनों, राजाओं के सहायकों, बलवान् पुरुषों, किसी भी प्रकार के कलाओं को जानने वालों, यमुना नदी के किनारे जन्म लेने वालों, बाह्लीक-मत्स्य-सुह्य देश के प्रजाओं आदि सभी को पीड़ित होना पड़ता है।।३७।।

कर्क राशिगत चन्द्र सूर्य ग्रहण फल कथन

आभीराञ्छबरान् सपह्लवान् मल्लान् मत्स्यकुरूञ्छकानपि ।
पाञ्चालान् विकलांश्च पीडयत्यन्नं चापि निहन्ति कर्कटे ।।३८।।

भाषा—कर्क राशि में चन्द्र व सूर्य का ग्रहण होने पर आभीर (अहीर), शबर (म्लेच्छ जाति भेद), पहलवान, मल्ल, मत्स्य, कुरु, शक, पाञ्चाल आदि देशों में निवास करने वाले जनों और विकलाङ्ग मनुष्यों को पीड़ा देती है।।३८।।

सिंह कन्या राशिगत सूर्य चन्द्र ग्रहण फल कथन

सिंहे पुलिन्दगणमेकलसत्त्वयुक्तान् राजोपमान्नरपतीन् वनगोचरांश्च ।
षष्ठेतुसस्यकविलेखकगेयसक्तान्हन्त्यश्मकत्रिपुरशालियुतांश्च देशान् ।।३९।।

भाषा—सिंह राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर पुलिन्द (म्लेच्छ जाति भेद) जनगणों, मेकल पहाड़ निवासियों, बलयुक्त मनुष्यों, राजा, राजा के समान जनों तथा वनवासियों को पीड़ा होती है।

कन्या राशिगत चन्द्र या सूर्य का ग्रहण होने पर धन-धान्यों, कविजनों, लेखन कार्य करने वाले जन, गीत गाने वाले जन, पत्थर उपजीवी मनुष्य, त्रिपुर प्रदेश, शालि (धान का प्रकार) को उपजाने या उससे युक्त प्रदेश आदि को पीड़ित करने वाला होता है।।३९।।

तुला-वृश्चिक राशिगत सूर्य चन्द्र ग्रहण फल कथन

तुलाधरेऽवन्त्यपरान्त्यसाधून् वणिग्दशार्णान् मरुकच्छपांश्च ।
अलिन्यथोदुम्बरमद्रचोलान् द्रुमान् सयौधेयविषायुधीयान् ।।४०।।

भाषा—तुला राशिगत सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर अवन्ती देश, पश्चिमी समुद्र समीपवर्ती प्रदेश, दशार्ण प्रदेश, मरूप्रदेश, कच्छ प्रदेश के मनुष्यों और सज्जनों तथा व्यापारियों का नाश कहना चाहिए।

वृश्चिक राशिगत सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर उदुम्बर, भद्र, चोल आदि

प्रदेशों के निवासियों, वृक्षों, योद्धाओं, विषदान करने वाले मनुष्यों आदि का विनाश करने वाला होता है।।४०।।

धनु-मकर राशिगत सूर्य-चन्द्र ग्रहण फल कथन

धन्विन्यमात्यवरवाजिविदेहमल्लान्
पाञ्चालवैद्यवणिजो विषमायुधज्ञान्।
हन्यान्मृगे तु झषमन्त्रिकुलानि नीचान्
मन्त्रौषधीषु कुशलान् स्थविरायुधीयान्।।४१।।

माया—धनु राशिगत सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर मन्त्रियों, श्रेष्ठ घोड़ों, विदेह (मिथिला) प्रदेशवासियों, मल्लों (पहलवानों), पाञ्चाल (पंजाब) प्रदेश वासियों, वैद्यों, व्यापारियों तथा कठिन शास्त्रास्त्रों को धारणं करने वाले योद्धाओं को विनष्ट करने वाला होता है।

मकर राशिगत सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर मत्स्य (मछली), मन्त्रियों के कुल के जन, नीच कर्म करने वालों, मन्त्र व औषधि का ज्ञान रखने वालों, वृद्धों और आयुध धारण करने वाले पुरुषों को नष्ट करता है।।४१।।

कुम्भ-मीन राशिगत सूर्य-चन्द्र ग्रहण फल कथन

कुम्भेऽन्तर्गिरिजान् सपश्चिमजनान् भारोद्वहांस्तस्करा–
नाभीरान् दरदाऽऽर्यसिंहपुरकान् हन्यात्तथा बर्बरान्।
मीने सागरकूलसागरजलद्रव्याणि वन्यान् जनान्
प्राज्ञान् वार्युपजीविनश्च भफलं कूर्मोपदेशाद्वदेत्।।४२।।

माया—कुम्भ राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर पर्वतों पर निवास करने वाले, पश्चिमी प्रदेश में निवास करने वाले जन, भार ढोने वाले, चोर, अहीर, दरद प्रदेश वासी, महत्त्वपूर्ण पुरुष, सिंह, नगरवासी और बर्बर प्रदेशवासियों को हानि पहुँचाने वाला होता है।

मीन राशि में स्थित सूर्य या चन्द्र का ग्रहण होने पर समुद्रतट और समुद्र में उत्पन्न वस्तुओं, जङ्गल में निवास करने वाले जन, बुद्धिमान्, जल से उपजीविका चलाने वाले आदि को नाश करने वाला होता है।।४२।।

ग्रहण के दश ग्रास प्रकार कथन

सव्यापसव्यलेहग्रसननिरोधावमर्दनारोहाः ।
आघ्रातं मध्यतमस्तमोऽन्त्य इति ते दश ग्रासाः ।।४३।।

माया—सव्य, अपसव्य, लेह, ग्रसन,, निरोध, अवमर्दन, आरोह, आघ्रात,

मध्यतम, तमोन्त्य आदि नामक सूर्य व चन्द्र के दस ग्रास के प्रकार हैं। इनके लक्षण और फल आगे बताये जा रहे हैं।।४३।।

सूर्य व चन्द्र के सव्यापसव्य ग्रास का सफल कथन

सव्यगते तमसि जगज्जलप्लुतं भवति मुदितमभयं च।
अपसव्ये नरपतितस्करावमर्दैः प्रजानाशः ।।४४।।

भाषा—सूर्य या चन्द्र के ग्रहण काल में सव्य (दाहिने) भाग से राहु का संचार होने पर जगत् जल से आप्लावित, प्रसन्न और भयमुक्त होता है।

जब सूर्य या चन्द्र का अपसव्य नामक ग्रहण अर्थात् ग्रहण काल में अपसव्य (वाम) भाग से राहु संचरण करता हो, तो राजा, चोर आदि को पीड़ित करता हुआ जनगण की भी हानि करता है।।४४।।

सूर्य चन्द्र के लेहसंज्ञक ग्रास के सफल कथन

जिह्वोपलेढि परितस्तिमिरनुदो मण्डलं यदि स लेहः।
प्रमुदितसमस्तभूता प्रभूततोया च तत्र मही।।४५।।

भाषा—यदि राहु जीह्वा की तरह, सूर्य या चन्द्र मण्डल को ग्रहण काल में चाटता हो, तो उसे लेह नामक ग्रास कहा जाता है। इस प्रकार के ग्रहण के होने से पृथ्वी पर सभी प्राणि प्रमुदित और पृथ्वी जल से सम्पन्न होती है।।४५।।

सूर्य चन्द्र के ग्रसन संज्ञक ग्रास का सफल कथन

ग्रसनमिति यदा त्र्यंशः पादो वा गृह्यतेऽथवाऽप्यर्द्धम्।
स्फीतनृपवित्तहानिः पीडा च स्फीतदेशानाम् ।।४६।।

भाषा—जब सूर्य या चन्द्र मण्डल का त्रिपाद, चतुष्पाद या आधा राहु ग्रसित करता हो, तो उसे ग्रसन नामक ग्रास कहा जाता है। इस प्रकार के ग्रहण होने से गौरवान्वित देशों जनगणों की और गौरवपूर्ण राजाओं के धन की हानि होती है।।४६।।

सूर्य चन्द्र के निरोध संज्ञक ग्रास का सफल कथन

पर्यन्तेषु गृहीत्वा मध्ये पिण्डीकृतं तमस्तिष्ठेत्।
स निरोधो विज्ञेयः प्रमोदकृत् सर्वभूतानाम् ।।४७।।

भाषा—राहु के सूर्य या चन्द्र मण्डल को चारों ओर से ग्रसित कर उसके मध्य भाग में पिण्डाकृति में स्थित होने पर निरोध संज्ञक ग्रास होता है। वह पृथ्वी पर स्थित सभी प्राणियों को प्रमुदित करने वाला होता है।।४७।।

सूर्य चन्द्र के अवमर्द संज्ञक ग्रास का सफल कथन

अवमर्दनमिति निःशेषमेव सञ्छाद्य यदि चिरं तिष्ठेत्।
हन्यात् प्रधानभूपान् प्रधानदेशांश्च तिमिरमयः ।।४८।।

माया—सूर्य या चन्द्र बिम्ब को सम्पूर्णता से आच्छादित कर राहु के अधिक काल तक स्थित रहने पर अवमर्द ग्रास होता है। इससे प्रधान राजाओं और देशों को हानि उठानी पड़ती है॥४८॥

सूर्य चन्द्र के आरोह ग्रास का सफल कथन

वृत्ते ग्रहे यदि तमस्तत्क्षणमावृत्य दृश्यते भूयः।
आरोहणमित्यन्योऽन्यमर्दनैर्भयकरं राज्ञाम् ॥४९॥

माया—सूर्य अथवा चन्द्र के ग्रहण की समाप्ति के पश्चात् तत्क्षण राहु के दीखने पर आरोहण संज्ञक ग्रास होता है। इससे राजाजन पारस्परिक युद्ध होने की आशंका से भयभीत रहते हैं। इस प्रकार की घटनाओं के शास्त्रकारों ने उत्पात् नाम दिया है। यह गणित से नहीं जाना जा सकता। यहाँ आचार्य ने पूर्वशास्त्रों के अनुसार ही कहा है॥४९॥

सूर्य चन्द्र के आघ्रात संज्ञक ग्रास का सफल कथन

दर्पण इवैकदेशे सबाष्पनिःश्वासमारुतोपहतः।
दृश्येताऽऽघ्रातं तत् सुवृष्टिवृद्ध्यावहं जगतः ॥५०॥

माया—सूर्य या चन्द्र मण्डल का एक प्रदेश ग्रहण काल में उच्छ्वास वश मलिन दर्पण के समान प्रतीत हो, तो उसे आघ्रात संज्ञक ग्रास कहा जाता है। इस से जगत के प्राणियों और वृष्टि की वृद्धि होती है॥५०॥

सूर्य के मध्यतम संज्ञक ग्रास का सफल कथन

मध्ये तमःप्रविष्टं वितमस्कं मण्डलं च यदि परितः।
तन्मध्यदेशनाशं करोति कुक्ष्यामयभयं च ॥५१॥

माया—सूर्य या चन्द्र में से छाद्य बिम्ब का मध्य भाग आच्छादित हो और बिम्ब के चारों ओर का भाग स्वच्छ प्रतीत हो, तो उसे मध्यतम संज्ञक ग्रास कहा जाता है। इससे मध्यदेश का नाश और उदर रोग की वृद्धि होती है। इस प्रकार का ग्रस मात्र सूर्य ग्रहण में ही हो सकता है। क्योंकि छादक भूबिम्ब से छाद्य चन्द्र बिम्ब छोटा होता है। इसलिए चन्द्र ग्रहण में उक्त ग्रास सम्भव नहीं है॥५१॥

सूर्य चन्द्र के तमोऽन्त्य ग्रास का सफल कथन

पर्य्यन्तेष्वतिबहुलं स्वल्पं मध्ये तमस्तमोऽन्त्याख्ये।
सस्यानामीतिभयं भयमस्मिंस्तस्कराणां च ॥५२॥

माया—सूर्य या चन्द्र बिम्ब के किनारे (प्रान्त) भाग में बहुत और मध्यम भाग में अल्प राहु रूप अन्धकार के दीखने पर तमोऽन्त्य संज्ञक ग्रास होता है। इससे फसलों को ईति का तथा जनगणों को चोर का भय उत्पन्न होता है॥५२॥

ग्रहण सामयिक राहु के वर्ण फल कथन

श्वेते क्षेमसुभिक्षं ब्राह्मणपीडां च निर्दिशेद्राहौ ।
अग्निभयमनलवर्णे पीडा च हुताशवृत्तीनाम् ।।५३।।
हरिते रोगोल्बणता सस्यानामीतिभिश्च विध्वंसः ।
कपिले शीघ्रगसत्त्वम्लेच्छध्वंसोऽथ दुर्भिक्षम् ।।५४।।
अरुणकिरणानुरूपे दुर्भिक्षावृष्टयो विहगपीडा ।
आधूम्रे क्षेमसुभिक्षमादिशेन्मन्दवृष्टिं च ।।५५।।
कापोतारुणकपिलश्यावाभे क्षुद्भयं विनिर्देश्यम् ।
कापोतः शूद्राणां व्याधिकरः कृष्णवर्णश्च ।।५६।।
विमलकमणि वैश्यध्वंसी भवेत् सुभिक्षाय ।
सार्चिष्मत्यग्निभयं गैरिकरूपे तु युद्धानि ।।५७।।
दूर्वाकाण्डश्यामे हारिद्रे वापि निर्दिशेन्मरकम् ।
अशनिभयसम्प्रदायी पाटलकुसुमोपमो राहुः ।।५८।।
पांशुविलोहितरूपः क्षत्रध्वंसाय भवति वृष्टेश्च ।
बालरविकमलसुरचापरूपभृच्छस्त्रकोपाय ।।५९।।

भाषा—सूर्य अथवा चन्द्र के बिम्ब ग्रास के समय राहु का वर्ण—

श्वेत होने पर कल्याण और सुभित तो होता है, परन्तु ब्राह्मणों को पीड़ा होती है।

अग्नि सदृश वर्ण होने पर सभी को अग्नि भय होती है ओर अग्नि कार्य से जीवन निर्वाह करने वालों को पीड़ा भी होती है।

हरित वर्ण होने पर रोगों की वृद्धि और फसलें ईंति के कारण सर्वथा नष्ट होती हैं। पीतवर्ण होने पर शीघ्रगामी पशुओं, बलवानों, म्लेच्छ, जाति के लोगों का नाश होता है तथा दुर्भिक्ष होता है।

रक्तवर्ण की तरह होने पर दुर्भिक्ष, अनावृष्टि और पक्षियों को पीड़ा होती है। धूम्रवर्ण होने पर कल्याण, सुभिक्ष और अल्प वृष्टि भी होती है। कबूतर के समान रक्त, पीत और श्याम वर्ण होने पर क्षुधापीडा और दुर्भिक्ष होता है।

कबूतर सदृश अथवा काला वर्ण होने पर शूद्रों को व्याधि देने वाला होता है।

स्वच्छ मणि के सदृश पीतवर्ण होने पर वैश्यों का नाश और सुभिक्ष होता है।

अग्नि ज्वाला सदृश दीखने पर अग्नि का भय उत्पन्न होता है। गेरू के सदृश दीखने पर युद्ध होता है।

दुर्वादल के समान श्यामवर्ण या हल्दी की तरह पीतवर्ण के दीखने पर महामारी फैलती है। पाटल पुष्प के सदृश (श्वेत + रक्त) वर्ण दीखने पर वज्र गिरने का भय होता है।

धूल सदृश या रक्तवर्ण का दीखने पर वर्षा होती है और क्षत्रियों का नाश होता है। प्रात:कालीन सूर्य सदृश या कमल या इन्द्र धनुष सदृश दीखने पर शस्त्र कोप होता है॥५३-५९॥

ग्रहण के समय सूर्य चन्द्र पर ग्रह दृष्टि फल कथन

पश्यन् ग्रस्तं सौम्यो घृतमधुतैलक्षयाय राज्ञां च।
भौमः समरविमर्दं शिखिकोपं तस्करभयं च॥६०॥
शुक्रः सस्यविमर्दं नानाक्लेशांश्च जनयति धरित्र्याम्।
रविजः करोत्यवृष्टिं दुर्भिक्षं तस्करभयं च॥६१॥

भाषा—ग्रस्त सूर्य अथवा चन्द्र पर बुध की दृष्टि होने पर घृत, मधु, तेल आदि का अभाव और राजाजनों का नाश होता है। उस पर मंगल की दृष्टि होने पर युद्ध, अग्निभय, के साथ चोर का भय भी होता है। शुक्र की दृष्टि रहने पर पृथ्वी पर धान्यों का नाश होता है और तरह-तरह के क्लेश भी उत्पन्न होते हैं। शनि की दृष्टि रहने पर अनावृष्टि, दुर्भिक्ष और चोर भय होता है॥६०-६१॥

शुभ दृष्ट ग्रस्त सूर्य-चन्द्र की प्रशंसा

यदशुभमवलोकनाभिरुक्तं ग्रहजनितं ग्रहणे प्रमोक्षणे वा।
सुरपतिगुरुणावलोकिते तच्छममुपयाति जलैरिवाग्निरिद्धः॥६२॥

भाषा—ग्रहण के स्पर्श या मोक्ष समय में जिन अशुभ फलों को कहा गया है, गुरु की भी उस पर दृष्टि रहने पर उन अशुभ फलों का उसी प्रकार नाश हो जाता है, जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि का जल से नाश होता है॥६२॥

ग्रहणकालिक दृष्ट उत्पातों से अन्य ग्रहण ज्ञान

ग्रस्ते क्रमान्निमित्तैः पुनर्ग्रहो मासषट्कपरिवृद्ध्या।
पवनोल्कापातरजः क्षितिकम्पतमोऽशनिनिपातैः॥६३॥

भाषा—सूर्य अथवा चन्द्र के ग्रस्त रहते वायु, उल्कापात्, धूल वर्षण, भूकम्प, अन्धकार और वज्रपात जैसे उत्पात् के होने पर क्रमशः छः-छः मास की वृद्धि क्रम से पुनः ग्रहण सम्भव होता है अर्थात् सूर्य या चन्द्र के ग्रहण के समय यदि तेज हवा चले, तो इस ग्रहण से छः मास पश्चात् उल्कापात हो, तो बारह मास पश्चात्, धूलवर्षण हो, तो अठारह मास पश्चात्, भूकम्प हो तो चौबीस मास पश्चात्, अन्धकार होने पर तीस मास पश्चात् तथा वज्रपात होने पर छत्तीस मास पश्चात् पुनः ग्रहण होना जानना चाहिए॥६३॥

ग्रस्त पञ्चतारा ग्रहफल में प्रथम ग्रस्त कुज फल कथन

आवन्तिका जनपदाः कावेरीनर्मदातटाश्रयिणः।
दृप्ताश्च मनुजपतयः पीड्यन्ते क्षितिसुते ग्रस्ते॥६४॥

भाषा—जो ग्रह सूर्य या चन्द्र के साथ एक राशि में अल्पांश पर स्थित हो, जिससे उसका शराभाव होता है और वह ग्रस्त माना जाता है। इस प्रकार मंगल के ग्रस्त होने पर अवन्ती प्रदेशवासी जनों, कावेरी और नर्मदा नदी के किनारे वास करने वाले जनों और गर्वसम्पन्न राजाजनों को पीड़ित करने वाला होता है।।६४।।

ग्रस्त बुध फल कथन

अन्तर्वेदीं सरयूं नेपालं पूर्वसागरं शोणम्।
स्त्रीनृपयोधकुमारान् सह विद्वद्भिर्बुधो हन्ति ।।६५।।

भाषा—इस तरह यदि सूर्य या चन्द्र के ग्रहण के समय बुध भी ग्रस्त हो, तो अन्तर्वेदी अर्थात् गंगा और यमुना नदी के मध्य स्थान, सरयू, नेपाल प्रदेश, पूर्वसार, शोण नदी, स्त्री, राजा, योद्धा, बालक, विद्वान् आदि को नष्ट करने वाला होता है।।६५।।

ग्रस्त बृहस्पति फल कथन

ग्रहणोपगते जीवे विद्वन्नृपमन्त्रिगजहयध्वंसः।
सिन्धुतटवासिनामप्युदग्दिशं संश्रितानां च ।।६६।।

भाषा—पूर्वोक्तानुसार गुरु के ग्रस्त होने पर विद्वान्, राजा, मन्त्री, हाथी, घोड़ा, सिन्धु नदी के तट पर और उत्तर दिशा में निवास करने वाले आदि जनगणों का नाश करने वाला होता है।।६६।।

ग्रस्त शुक्र फल कथन

भृगुतनये राहुगते दाशेरककैकयाः सयौधेयाः।
आर्यावर्त्ताः शिबयः स्त्रीसचिवगणाश्च पीड्यन्ते ।।६७।।

भाषा—उक्तानुसार शुक्र के ग्रस्त रहने पर दाशेरक, कैकय (कश्मीर), यौधेय, शिवि प्रदेशगत जन, स्त्रीजन, मन्त्री आदि पीड़ित होते हैं।।६७।।

ग्रस्त शनैश्चर फल कथन

सौरे मरुभवपुष्करसौराष्ट्रिकधातवोऽर्बुदान्त्यजनाः।
गोमन्तपारियात्राश्रिताश्च नाशं व्रजन्त्याशु ।।६८।।

भाषा—एवं शनि के ग्रस्त रहने पर मरूभूमि, पुष्कर, सौराष्ट्र आदि प्रदेश के जनगण, धातुओं (द्रव्यों), अर्बुद पर्वत के निवासी जन, अन्त्यज क्षुद्रजनों, गोपालकों तथा पारियात्र नामक पर्वत के आश्रित जनों, ये सभी शीघ्र नाश को प्राप्त होते हैं।।६८।।

मासफल कथन के उद्देश्य से कार्तिक मास का फल कथन

कार्त्तिक्यामनलोपजीविमगधान् प्राच्याधिपान् कोशलान्
कल्माषानथ शूरसेनसहितान् काशींश्च सन्तापयेत्।

हन्यादाशु कलिङ्गदेशनृपतिं सामात्यभृत्यं तमो
दृष्टं क्षत्रियतापदं जनयति क्षेमं सुभिक्षान्वितम्।।६९।।

माया—यदि कार्त्तिक की अमावास्या और उसकी पूर्णिमा में क्रम से सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण हो, तो अग्निकर्म से जीवन निर्वाह करने वाले जनों, मगध प्रदेश के वासीजनों, पूर्व दिशा के प्रदशों के राजाजनों, कौशल, कल्माष, शूरसेन तथा काशी वासी जनों को पीड़ित करने वाला होता है। एवं कलिङ्ग प्रदेश के राजा को मन्त्री, सेवकों के साथ शीघ्र नाश करने वाला राहु क्षत्रिय वर्ग को सन्तापित करता हुआ भी जगत् का कल्याण कर सुभिक्षप्रद होता है।।६९।।

मार्गशीर्ष मास का फल कथन

काश्मीरकान् कौशलकान् सपुण्ड्रान् मृगांश्च हन्यादपरान्तकांश्च।
ये सोमपास्तांश्च निहन्ति सौम्ये सुवृष्टिकृत् क्षेमसुभिक्षकृच्च।।७०।।

माया—इसी प्रकार मार्गशीर्ष मास की अमावास्या या पूर्णिमा को क्रम से सूर्य या चन्द्र ग्रहण होने पर कश्मीर प्रदेश, कौशल प्रदेश, पुण्ड्रप्रदेश के निवासी जनों, जङ्गली पशुओं, पश्चिमी प्रदेश वासीजनों, सोमरस को पीने वालों, इन सभी जनों का नाश करते हुए जगत् के लिए कल्याण प्रद, सुवृष्टि करने वाला तथा सुभिक्षकर होता है।।७०।।

पौषमास का फल कथन

पौषे द्विजक्षत्रजनोपरोधः ससैन्धवाख्याः कुकुरा विदेहाः।
ध्वंसं व्रजन्त्यत्र च मन्दवृष्टिं भयं च विन्द्यादसुभिक्षयुक्तम्।।७१।।

माया—तथा पौषमास के अमावस्या या पूर्णिमा को सूर्य या चन्द्र ग्रहण होने पर द्विजों विशेषकर क्षत्रियजनों में उपद्रव, सैन्धव, कुकुट, विदेह (मिथिला) प्रदेश वासियों का नाश करता हुआ पृथ्वी पर अल्पवृष्टि, भय और दुर्भिक्ष कर होता है।।७१।।

माघ मास फल कथन

माघे तु मातृपितृभक्तवसिष्ठगोत्रान् स्वाध्यायधर्मनिरतान् करिणस्तुरङ्गान्।
वङ्गाङ्गकाशिमनुजांश्च दुनोति राहुर्वृष्टिं च कर्षकजनाभिमतां करोति।।७२।।

माया—माघमास की अमा और पूर्णिमा, जिस-किसी में क्रम से सूर्य या चन्द्र ग्रहण होने पर मातृपितृ भक्तों, वशिष्ठ गोत्रज ब्राह्मणों, स्वाध्याय करने वालों, धर्मपालकों, हस्तियों, अश्वों के साथ बङ्ग प्रदेश, अङ्ग प्रदेश तथा काशी प्रदेश के निवासी जनों आदि को पीड़ित करता हुआ राहु जगत् में कृषकों की अपेक्षानुकूल वृष्टि करने वाला होता है।।७२।।

फाल्गुन मास फल कथन

पीडाकरं फाल्गुनमासि पर्व वङ्गाश्मकावन्तिकमेकलानाम् ।
नृत्यज्ञसस्यप्रवराङ्गनानां धनुष्करक्षत्रतपस्विनां च ।।७३।।

भाषा—उपरोक्तानुसार फाल्गुन मास की अमा या पूर्णिमा में क्रम से सूर्य या चन्द्र ग्रहण होने पर बङ्ग प्रदेश, अश्मक प्रदेश,अवन्ती प्रदेश, मेकल प्रदेश के नागरिकजनों, नृत्य संगीत के प्रेमीजनों, धान्यों, श्रेष्ठ स्त्रियों, धनुष निर्माताओं, क्षत्रियों, तपस्वियों आदि जनगणों के लिए पीड़ाकारक होता है।।७३।।

चैत्र मास फल कथन

चैत्र्यां तु चित्रकरलेखकगेयसक्तान् रूपोपजीविनिगमज्ञहिरण्यपण्यान् ।
पौण्ड्रौड्रकैकयजनानथ चाश्मकांश्च तापः स्पृशत्यमरपोऽत्र विचित्रवर्षी ।।७४।।

भाषा—उसी तरह चैत्र मास की अमावस्या या पूर्णिमा में क्रम से सूर्य या चन्द्र ग्रहण घटित होने पर चित्रकारों, लेखकों, गीत संगीत के गायकों, रूप से अपनी उपजीविका चलाने वालों अर्थात् वेश्या वृत्ति को प्रोत्साहित करने वालों, वेदादि शास्त्रों के मर्मज्ञों, स्वर्णकारों, पौण्ड्र प्रदेश, औड्रप्रदेश, कैकेय प्रदेश तथा अश्मक प्रदेश के निवासी जनों को पीड़ित करता हुआ राहु से प्रेरित इन्द्र कहीं अधिक और कहीं कम वृष्टि करने वाला होता है।।७४।।

वैशाख मास फल कथन

वैशाखमासे ग्रहणे विनाशमायान्ति कर्पासतिलाः समुद्गाः ।
इक्ष्वाकुयौधेयशकाः कलिङ्गाः सोपप्लवाः किन्तु सुभिक्षमस्मिन् ।।७५।।

भाषा—पुनः उसी तरह वैशाख मास की अमावास्या या पूर्णिमा में क्रम से सूर्य या चन्द्र ग्रहण घटित होने पर रूई, तिल, मूँग, आदि की हानि होती है। इक्ष्वाकु,यौधेय, शक, कलिङ्ग प्रदेशों में उपद्रव तो होते हैं; परन्तु इसमें पृथ्वी पर सुभिक्ष होता है।।७५।।

ज्येष्ठ फल कथन

ज्येष्ठे नरेन्द्रद्विजराजपत्न्यः सस्यानि वृष्टिश्च महागणाश्च ।
प्रध्वंसमायान्ति नराश्च सौम्याः साल्वैः समेताश्च निषादसङ्घाः ।।७६।।

भाषा—ज्येष्ठ मास में भी अमावास्या या पूर्णिमा में क्रम से सूर्य या चन्द्र ग्रहण घटित होने पर राजाओं, ब्राह्मणों, राजा की रानियों, धान्यों, वृष्टि, महागणों (मनुष्यों का बहुत विशाल समूह), उत्तर दिशा वासियों, साल्व प्रदेश वासियों तथा निषाद गणों को विनष्ट करने वाला होता है।।७६।।

आषाढ मास का फल

आषाढपर्वण्युदपानवप्रनदीप्रवाहान् फलमूलवार्त्तान्।
गान्धारकाश्मीरपुलिन्दचीनान् हतान् वदेन्मण्डलवर्षमस्मिन्॥७७॥

माया—उसी प्रकार आषाढ़ मास की अमावस्या या पूर्णिमा को क्रम से सूर्य का चन्द्र ग्रहण घटित होने पर वापी, कूप, तडाग आदि प्रकार के उदपान के तट पर निवास करने वाले जनों, नदी प्रवाहों, फलों व मूलों से जीविका चलाने वाले जनों, गान्धार, कश्मीर, पुलिन्द, चीन आदि प्रदेशों के वासीजनों आदि का नाश करता हुआ राहु इसमें पृथ्वी पर मण्डल वृष्टि अर्थात् यत्र-कुत्र वृष्टि करने वाला होता है॥७७॥

श्रावण मास का फल

काश्मीरान् सपुलिन्दचीनयवनान् हन्यात् कुरुक्षेत्रजान्
गान्धारानपि मध्यदेशसहितान् दृष्टो ग्रहः श्रावणे।
काम्बोजैकशफांश्च शारदमपि त्यक्त्वा यथोक्तानिमा-
नन्यत्र प्रचुरान्नहृष्टमनुजैर्धात्रीं करोत्यावृताम्॥७८॥

माया—उसी तरह श्रावण मास में अमावास्या को सूर्य ग्रहण या पूर्णिमा को चन्द्र ग्रहण घटित होने पर कश्मीर, पुलिन्द, चीन, यवन, कुरुक्षेत्र, गान्धार, मध्यदेश, कम्बोज आदि प्रदेशों के निवासी जनों, घोड़ा व गधा आदिकों, शारदीय धान्यों आदि को विनष्ट करने में प्रवृत्त राहु से अन्यान्य प्रदेशों के निवासीजनों भरपूर अन्न प्राप्ति कर सुखी तथा सम्पूर्ण भूमण्डल में व्याप्त हो जाते हैं॥७८॥

भाद्रपद् मास का फल कथन

कलिङ्गवङ्गान् मगधान् सुराष्ट्रान् म्लेच्छान् सुवीरान् दरदाश्मकांश्च।
स्त्रीणां च गर्भानसुरो निहन्ति सुभिक्षकृद् भाद्रपदेऽभ्युपेतः॥७९॥

माया—अन्य मासों की तरह भाद्रपद मास में भी अमावस्या को सूर्य ग्रहण या पूर्णिमा को चन्द्रग्रहण घटित होने पर कलिङ्ग, बङ्ग, मगध, सौराष्ट्र, म्लेच्छ, सुवीर, दरद, अश्मक आदि प्रदेशों और स्त्रीजनों के गर्भों को राहु विनष्ट करने वाला और पृथ्वी पर सुभिक्षकर होता है॥७९॥

आश्विन मास का फल कथन

काम्बोजचीनयवनान् सह शल्यहृद्भि-
र्बाह्लीकसिन्धुतटवासिजनांश्च हन्यात्।
आनर्त्तपौण्ड्रभिषजश्च तथा किरातान्
दृष्टोऽसुरोऽश्वयुजि भूरिसुभिक्षकृच्च॥८०॥

माया—अन्यत्र की तरह अश्विन मास में भी अमावास्या को सूर्य ग्रहण या पूर्णिमा को चन्द्र ग्रहण घटित होने पर कम्बोज, चीन, यवन आदि प्रदेश वासीजनों, व्रण-चिकित्सकों, वाह्लीक प्रदेश व सिन्धु नदी के तट पर निवास करने वाले जनों, आनर्त व पौण्ड्र प्रदेश वासीजनों, वैद्यों, किरातों आदि की हानि करने में प्रवृत्त राहु पृथ्वी के लिए बहुत अधिक सुभिक्ष करने वाला होता है॥८०॥

सूर्यचन्द्र के दश प्रकार के मोक्ष का नाम

हनुकुक्षिपायुभेदा द्विर्द्विः सञ्छर्दनं च जरणं च।
मध्यान्तयोश्च विदरणमिति दश शशिसूर्ययोर्मोक्षाः ॥८१॥

माया—सूर्य और चन्द्र के ग्रहणकालिक मोक्ष के भी क्रम से हनु दो (दक्षिण व वाम), कुक्षि दो (दक्षिण व वाम), पायु दो (दक्षिण व वाम), सञ्छर्दन, जरण, मध्य विदरण, अन्त्य विदरण आदि दस प्रकार कहे गए हैं॥८१॥

मोक्ष के दक्षिण हनु प्रकार का सफल कथन

आग्नेय्यामपगमनं दक्षिणहनुभेदसंज्ञितं शशिनः।
सस्यविमर्दो मुखरुग् नृपपीडा स्यात् सुवृष्टिश्च ॥८२॥

माया—चन्द्र के ग्रहण के समय यदि उसका निवर्त्तन (मोक्ष) अग्निकोण में हो, तो दक्षिण हनु नाम का मोक्ष होता है। उस समय राहु धान्य की हानि, मुँह का रोग, राजाओं को पीड़ा के साथ-साथ सुवृष्टि करने वाला होता है॥८२॥

मोक्ष के वामहनु प्रकार का सफल कथन

पूर्वोत्तरेण वामो हनुभेदो नृपकुमारभयदायी।
मुखरोगं शस्त्रभयं तस्मिन् विन्द्यात् सुभिक्षं च ॥८३॥

माया—यदि पूर्वोत्तर अर्थात् ईशान कोण में बिम्ब का निवर्त्तन (मोक्ष) हो, तो वाम हनु प्रकार का मोक्ष होता है। उस समय राहु राजकुमारों को भय देने वाला, मुख रोग देने वाला, शस्त्रभय उत्पन्न करने वाला तथा सुभिक्षप्रद होता है॥८३॥

मोक्ष के दक्षिण कुक्षि प्रकार का सफल कथन

दक्षिणकुक्षिविभेदो दक्षिणपार्श्वेन यदि भवेन्मोक्षः।
पीडा नृपपुत्राणामभियोज्या दक्षिणा रिपवः ॥८४॥

माया—यदि ग्रहण के समय बिम्ब का निवर्त्तन (मोक्ष) दायीं कुक्षि (पार्श्व) में हो, तो दक्षिण कुक्षि प्रकार का मोक्ष होता है। उस समय राजकुमारजन पीड़ित होता है तथा दक्षिण दिशा में स्थित शत्रुओं से युद्ध होता है।

यहाँ ध्यानार्ह है कि गणित गोल वासना द्वारा दक्षिण व उत्तर दिशाओं से ग्रास

और मोक्ष सिद्ध नहीं होते हैं। प्रतीत होता है आचार्य पूर्वशास्त्र का अनुसरण कर यहाँ ऐसा उल्लिखित किया है॥८४॥

मोक्ष के बायीं कुक्षि प्रकार का सफल कथन

वामस्तु कुक्षिभेदो यद्युत्तरमार्गसंस्थितो राहुः।
स्त्रीणां गर्भविपत्तिः सस्यानि च तत्र मध्यानि ॥८५॥

भाषा—यदि ग्रहण के समय बिम्ब का निवर्त्तन (मोक्ष) वायीं पार्श्व (कुक्षि) में हो, तो वाम कुक्षि प्रकार का मोक्ष होता है। उस समय स्त्रीजनों के गर्भ विपतियों से घिरी रहती है और धान्य मध्य परिमाण में उपजता है॥८५॥

मोक्ष के दायीं पायु प्रकार का सफल कथन

नैर्ऋतवायव्यस्थौ दक्षिणवामौ तु पायुभेदौ द्वौ।
गुह्यरुगल्पा वृष्टिर्द्वयोस्तु राज्ञीक्षयो वामे ॥८६॥

भाषा—यदि राहु का दर्शन ग्रहण के समय नैर्ऋत्य और वायव्य कोण में हो, तो क्रमशः दक्षिण पायु (अपानस्थान) और वाम पायु प्रकार का मोक्ष होता है। दक्षिण पायु प्रकार के मोक्ष होने की स्थिति में गुदा व लिङ्ग में रोग तथा अल्प वृष्टि होती है। वाम पायु प्रकार के मोक्ष की स्थित में राजरानी का नाश होता है॥८६॥

मोक्ष के सञ्छर्दन प्रकार का सफल कथन

पूर्वेण प्रग्रहणं कृत्वा प्रागेव चापसर्पेत।
सञ्छर्दनमिति तत्क्षेमसस्यहार्दिप्रदं जगतः ॥८७॥

भाषा—पूर्व दिशा से बिम्ब को ग्रसित कर पूर्व दिशा से ही निवर्त्तित होने पर सञ्छर्दन प्रकार का मोक्ष होता है। इससे संसार का कल्याण होता है और यह उसे संतोष तथा धान्य प्रदान करने वाला होता है॥८७॥

मोक्ष के जरण प्रकार का सफल कथन

प्राक्प्रग्रहणं यस्मिन् पश्चादपसर्पणं तु तज्जरणम्।
क्षुच्छस्त्रभयोद्विग्ना न शरणमुपयान्ति तत्र जनाः ॥८८॥

भाषा—जिस ग्रहण में बिम्ब के पूर्वभाग से ग्रास और पश्चिम भाग से मोक्ष होता हो, उसे जरण प्रकार का मोक्ष कहा जाता है। इस समय मनुष्य भूख और युद्ध दोनों के भय से उद्विग्न मन निःशरण होकर भटकता है॥८८॥

मोक्ष के मध्य विदरण प्रकार का सफल कथन

मध्ये यदि प्रकाशः प्रथमं तन्मध्यविदरणं नाम।
अन्तःकोपकरं स्यात् सुभिक्षदं नातिवृष्टिकरम् ॥८९॥

भाषा—जिस ग्रहण में बिम्ब के मध्य में प्रकाश परिलक्षित हो, तो यह मध्य विदरण प्रकार का मोक्ष कहलाता है। इससे राजाओं को अपनी सेनाओं में उत्पन्न विक्षोभ का शिकार होना पड़ता है। सुभिक्ष होता है और अल्प वृष्टि भी होती है।।८९।।

अन्त्य विदरण प्रकार के मोक्ष का सफल कथन

पर्यन्तेषु विमलता बहुलं मध्ये तमोऽन्त्यदरणाख्यः ।
मध्याख्यदेशनाशः शारदसस्यक्षयश्चास्मिन् ।।९०।।

भाषा—जिस ग्रहण में बिम्ब का प्रान्त भाग स्वच्छ और मध्यभाग अति कृष्णता युक्त हो, तो उसको अन्त्य विदरण प्रकार का मोक्ष कहा जाता है। इस समय मध्य प्रदेश की हानि होती है तथा शारदीय धान्यों का भी नाश होता है।।९०।।

सूर्य ग्रहण में उपरोक्त दश मोक्षों के प्रकार का विचार

एते सर्वे मोक्षा वक्तव्या भास्करेऽपि किन्त्वत्र ।
पूर्वा दिक् शशिनि यथा तथा रवौ पश्चिमा कल्प्या ।।९१।।

भाषा—उपरोक्त दश प्रकार के मोक्ष का जिस तरह से चन्द्र में ग्रहण विचार किया है, थोड़ी अन्तर से उनका सूर्य ग्रहण में भी विचार करना चाहिए। सूर्य ग्रहण में जो पश्चिम दिशा उसे पूर्व दिशा तथा जो पूर्व दिशा उसे पश्चिम दिशा जानना चाहिए। इसी तरह दक्षिण दिशा को उत्तर और उत्तर दिशा को दक्षिण समझें। विदिशा में भी विपरीत क्रम में दिशा ग्रहण करनी चाहिए। इस प्रकार दिक् विलोम रीति से उपरोक्त दश मोक्षों का विचार सूर्य ग्रहण में भी करना चाहिए।।९१।।

ग्रहण मुक्ति पश्चात् सप्ताहान्तर का उत्पात फल कथन

मुक्ते सप्ताहान्तः पांशुनिपातोऽन्नसंक्षयं कुरुते ।
नीहारो रोगभयं भूकम्पः प्रवरनृपमृत्युम् ।।९२।।
उल्का मन्त्रिविनाशं नानावर्णा घनाश्च भयमतुलम् ।
स्तनितं गर्भविनाशं विद्युन्नृपदंष्ट्रिपरिपीडाम् ।।९३।।
परिवेषो रुक्पीडां दिग्दाहो नृपभयं च साग्निभयम् ।
रूक्षो वायुः प्रबलश्चौरसमुत्थं भयं धत्ते ।।९४।।
निर्घातः सुरचापं दण्डश्च क्षुद्भयं सपरचक्रम् ।
ग्रहयुद्धे नृपयुद्धं केतुश्च तदेव सन्दृष्टः ।।९५।।
अविकृतसलिलनिपातैः सप्ताहान्तः सुभिक्षमादेश्यम् ।
यच्चाशुभं ग्रहणजं तत्सर्वं नाशमुपयाति ।।९६।।

भाषा—ग्रहण के समय मोक्ष होने के पश्चात् यदि सात दिन के अन्दर धूलि

वर्षण हो, तो अन्न का नाश होता है। नीहार (हिम वर्षण) होने पर रोग का भय होता है। भूकम्प होने पर श्रेष्ठ राजा की मृत्यु होती है। उल्कापात होने पर सचिवों का नाश होता है। अनेक वर्ण का मेघ सन्ध्याकाल के अतिरिक्त समय में भी दीखता हो, तो महाभय होता है। यदि मेघ गर्जन हो, तो गर्भ (अध्याय-२१ देखें) का नाश होता है। विद्युत्पात होने पर राजा, सर्प, सूकर आदि को पीड़ित करता है। परिवेष होने से रोग पीड़ा होती है। दिग्दाह होने पर राजा का भय और अग्नि का भय दोनों होता है। अति प्रचण्ड और रूक्ष वायु के चलने पर चोर भय होता है। निर्घात (वायु से वायु का टकराना) होने से या इन्द्र धनुष के दीखने पर या पवन संघात (किरण, मेघ और वायु का संघात) होने पर दुर्भिक्ष तथा अन्य राज्य की सेना का भय उत्पन्न होता है। ग्रहयुद्ध या केतु दर्शन होने पर राजाओं में परस्पर युद्ध होता है। यदि सप्ताहान्तर में विकार रहित स्वच्छ जल की वर्षा हो, तो सुभिक्ष होता है, जिससे ग्रहण के कारण उत्पन्न समस्त अशुभ फलों का भी नाश हो जाता है।।९२-९६।।

चन्द्रग्रहण पश्चात् सूर्यग्रहण फल कथन

सोमग्रहे निवृत्ते पक्षान्ते यदि भवेद् ग्रहोऽर्कस्य।
तत्रानयः प्रजानां दम्पत्योर्वैरमन्योन्यम् ।।९७।।

माया—चन्द्र ग्रहण के अनन्तर पन्द्रह दिन के अन्दर सूर्य ग्रहण के होने पर जनगणों में दुर्नय (दुर्नीति) और दम्पति के बीच परस्पर वैर उत्पन्न होता है।।९७।।

सूर्यग्रहण के अनन्तर चन्द्रग्रहण फंल कथन

अर्कग्रहात्तु शशिनो ग्रहणं यदि दृश्यते ततो विप्राः।
नैकक्रतुफलभाजो भवन्ति मुदिताः प्रजाश्चैव ।।९८।।

माया—सूर्यग्रहण के अनन्तर पन्द्रहवाँ दिन यदि चन्द्रग्रहण सम्भव हो, तो ब्राह्मणजन अनेक यज्ञों के फल का भोक्ता होता है तथा जनगण प्रमुदित होते हैं।।९८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां राहुचाराध्यायः पञ्चमः।।५।।

□□□

अथ षष्ठमोऽध्यायः-६

भौमचारविचारः

कुज के पञ्चमुख में से उष्णमुख कुज का सफल कथन

यद्युदयर्क्षाद्वक्रं करोति नवमाष्टसप्तमर्क्षेषु ।
तद्वक्त्रमुष्णमुदये पीडाकरमग्निवार्त्तानाम् ।।१।।

भाषा—मंगल के पाँच मुखों के नाम हैं—उष्णमुख, अश्रुमुख, कालमुख, रुधिरानन, असि मुसल आदि। इनमें से सर्वप्रथम उष्णमुख के लक्षण सहित फल को कहते हैं। मंगल यदि अपने उदय नक्षत्र अर्थात् जिस नक्षत्र में मंगल का उदय हुआ हो, उससे सातवाँ आठवाँ और नौवाँ नक्षत्र में वह यदि वक्री होता हो, तो वह वक्री मंगल उष्णमुख मंगल के नाम से जाना जाता है। ऐसे उष्णमुख मंगल के उदय के समय अग्नि कर्म करके जीवन निर्वाह करने वाले जनों को पीड़ा होती है।।१।।

अश्रुमुख कुज का सफल कथन

द्वादशदशमैकादशनक्षत्राद्वक्रिते कुजेऽश्रुमुखम् ।
दूषयति रसानुदये करोति रोगानवृष्टिं च ।।२।।

भाषा—अपने उदयकालिक नक्षत्र से दशवाँ, ग्यारहवाँ अथवा बारहवाँ नक्षत्र में मंगल के वक्री होने पर उसे अश्रुमुख मंगल कहा जाता है, जो अपने उदय के समय समस्त रसों में दूषण उत्पन्न करता है, रोग की वृद्धि तथा अनावृष्टि भी करता है।।२।।

व्यालमुख कुज का सफल कथन

व्यालं त्रयोदशर्क्षाच्चतुर्दशाद्वा विपच्यतेऽस्तमये ।
दंष्ट्रिव्यालमृगेभ्यः करोति पीडां सुभिक्षं च ।।३।।

भाषा—अपने अस्तकालिक नक्षत्र से तेरहवाँ या चौदहवाँ नक्षत्र में यदि मंगल वक्री हो, तो उसे व्यालमुख मंगल कहा जाता है, जो दाँतुल पशुओं जैसे सूअर, कुत्ता आदि, सर्प तथा जंगली पशुओं द्वारा पीड़ा देने वाला, लेकिन पृथ्वी पर सुभिक्ष करने वाला होता है।।३।।

रुधिरानन कुज का सफल कथन

रुधिराननमिति वक्त्रं पञ्चदशात् षोडशाच्च विनिवृत्ते ।
तत्कालं मुखरोगं सभयं च सुभिक्षमावहति ।।४।।

भाषा—जिस-किसी नक्षत्र में मंगल अस्त हो, तो उससे पन्द्रहवें अथवा

सोलहवें नक्षत्र मे वक्री होकर वह रुधिरानन कहलाता है, इस प्रकार जब तक मंगल वक्री रहता हो, तब तक लोगों को मुखरोग, भय तथा सुभिक्ष भी होता है॥४॥

असि मुसल कुज का सफल कथन

असिमुशलं सप्तदशादष्टादशतोऽपि वा तदनुवक्रे ।
दस्युगणेभ्यः पीडां करोत्यवृष्टिं सशस्त्रभयाम् ॥५॥

माया—अपने अस्तमन नक्षत्र से सत्रहवें अथवा अठारहवें नक्षत्र में मंगल यदि वक्री होता है, तो वह असिमुसल कुज होता है। इससे चोरों को पीड़ा, अनावृष्टि और शस्त्र का भय हुआ करता है॥५॥

नक्षत्र संचारवश विशेष फल कथन

भाग्यार्यमोदितो यदि निवर्तते वैश्वदैवते भौमः ।
प्राजापत्येऽस्तमितस्त्रीनपि लोकान्निपीडयति ॥६॥

माया—यदि मंगल पूर्वाफाल्गुनी अथवा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उदित होकर उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में निवृत्त अर्थात् वक्र होता हो और रोहिणी नक्षत्र में अस्त हो जाता हो, तो तीनों लोकों (भूः, भुवः, स्वाख्य) को पीड़ित करता है॥६॥

कुज संचारवश और विशेष फल कथन

श्रवणोदितस्य वक्रं पुष्ये मूर्द्धाभिषिक्तपीडाकृत् ।
यस्मिन्नृक्षेऽभ्युदितस्तद्दिग्व्यूहान् जनान् हन्ति ॥७॥

माया—यदि मंगल श्रवण नक्षत्र में उदित और पुष्य नक्षत्र में वक्री हो, तो मूर्धाभिषिक्त क्षत्रियों (राजाजनों) को पीड़ा होती है। मंगल जिस नक्षत्र में उदय लेता हो, उस नक्षत्र की जो भी दिशा हो, उस दिशा में स्थित देश जनों का नाश करने वाला होता है॥७॥

कुज संचारवश और भी फल कथन

मध्ये न यदि मघानां गतागतं लोहितः करोति ततः ।
पाण्ड्यो नृपो विनश्यति शस्त्रोद्योगाद्भयमवृष्टिः ॥८॥

माया—संचरित मंगल मघा नक्षत्र में जाने पर वक्री होता हो, तो पाण्डयदेश के राजा का नाश करने वाला, शस्त्र का भय उत्पन्न करने वाला तथा अनावृष्टि का कारण होता है॥८॥

कुज संचारवश और भी फल कथन

भित्त्वा मघां विशाखां भिन्दन् भौमः करोति दुर्भिक्षम् ।
मरकं करोति घोरं यदि भित्त्वा रोहिणीं याति ॥९॥

माया—यदि मंगल मघा नक्षत्र को भेदित करता हुआ विशाखा नक्षत्र का भी

भेदन करे तो वह दुर्भिक्ष करने वाला होता है, लेकिन रोहिणी नक्षत्र का मंगल यदि भेदन करे, तो जनगणों में महामारी फैल जाती है॥९॥

संचरित मंगल का और भी फल कथन

दक्षिणतो रोहिण्याश्चरन्महीजोऽर्घवृष्टिनिग्रहकृत् ।
धूमायन् सशिखो वा विनिहन्यात् पारियात्रस्थान् ॥१०॥

माया—यदि मंगल रोहिणी नक्षत्र के दक्षिण भाग से संचरण करे तो महर्घता (महँगाई) और अनावृष्टि होती है। धूम्र या शिखा से युक्त मंगल का दर्शन हो, तो परियात्र पर्वत पर निवास करने वाले जनों का नाश करता है॥१०॥

संचरणशील कुज का और फल कथन

प्राजापत्ये श्रवणे मूले त्रिषु चोत्तरेषु शाक्रे च ।
विचरन् घननिवहानामुपघातकरः क्ष्मातनयः ॥११॥

माया—रोहिणी, श्रवण, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा अथवा ज्येष्ठा नक्षत्र में मंगल यदि संचरण करे, तो मेघों का नाश होता है॥११॥

कुज संचारवश और भी फल कथन

चारोदयाः प्रशस्ताः श्रवणमघादित्यहस्तमूलेषु ।
एकपदाश्विविशाखाप्राजापत्येषु च कुजस्य ॥१२॥

माया—श्रवण, मघा, पुनर्वसु, मूल, हस्त, पूर्वाभाद्रपदा, अश्विनी, विशाखा और रोहिणी नक्षत्रों में मंगल का संचरण और उदय संसार के लिए अत्यधिक शुभफल प्रदान करने वाला होता है॥१२॥

कुजवर्ण फल कथन

विपुलविमलमूर्त्तिः किंशुकाशोकवर्णः
स्फुटरुचिरमयूखस्तप्तताम्रप्रभाभः ।
विचरति यदि मार्गं चोत्तरं मेदिनीजः
शुभकृदवनिपानां हार्दिदश्च प्रजानाम्॥१३॥

माया—मंगल अत्यधिक स्वच्छ मूर्त्ति वाला, किंशुक और अशोक पुष्प के सदृश रक्त वर्ण वाला, स्पष्ट और दीप्तिमान किरणों वाला तथा गलाये गए ताम्र के सदृश कान्ति वाला उत्तरा क्रान्ति में विचरण करता हो, तो जनगणों और राजाओंका शुभ करने वाला तथा हृदय को संतुष्ट करने वाला होता है॥१३॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-
बोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी
व्याख्यायां भौमचाराध्यायः षष्ठः ॥६॥

अथ सप्तमोऽध्यायः-७

बुधचार विचारः

बुध के उदय का फल कथन

नोत्पातपरित्यक्तः कदाचिदपि चन्द्रजो व्रजत्युदयम्।
जलदहनपवनभयकृद् धान्यार्घक्षयविवृद्धौ वा ।।१।।

माया—बुध कभी-भी उत्पातहीन उदित नहीं होता है अर्थात् बुध जब भी उदित होता है, तो उसके उदय काल में किसी न किसी प्रकार का उत्पात अवश्य घटित होता है। यह उत्पात जल, अग्नि और वायु द्वारा भय उत्पन्न करने और धान्यों की सस्ती और महँगी के रूप में प्रकट होता है।।१।।

नक्षत्र संचरणवश बुध फल कथन

विचरन् श्रवणधनिष्ठाप्राजापत्येन्दुवैश्वदेवानि।
मृद्नन् हिमकरतनयः करोत्यवृष्टिं सरोगभयाम् ।।२।।

माया—बुध श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिर अथवा उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का भेदन करता हुआ संचरण करे, तो अनावृष्टि और रोग का भय उत्पन्न करने वाला होता है।।२।।

नक्षत्र संचरणवश बुध का और फल कथन

रौद्रादीनि मघान्तान्युपाश्रिते चन्द्रजे प्रजापीडा।
शस्त्रनिपातक्षुद्भयरोगानावृष्टिसन्तापैः ।।३।।

माया—बुध यदि आर्द्रा से मघा (आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा, मघा) तक के पाँच नक्षत्रों में भ्रमण करे, तो युद्ध, भूख, रोग, अनावृष्टि और अन्य सन्तापों या दुःखों से जनगणों को पीड़ित करने वाला होता है।।३।।

नक्षत्र संचरणवश बुध का और भी फल कथन

हस्तादीनि चरन् षड्क्षाण्युपपीडयन् गवामशुभः।
स्नेहरसार्घविवृद्धिं करोति चोर्वीं प्रभूतान्नाम् ।।४।।

माया—हस्तादि छः (हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा) नक्षत्रों में यदि बुध भ्रमण करें, तो गाय, बैलों के लिए अशुभकर होता है। स्नेह (तैल, घी आदि),

रस (मधुर, तीता आदि) के मूल्य वृद्धि करने वाला, फिर भी पृथ्वी को अनेक प्रकार के अन्नों से सम्पन्न करने वाला भी होता है।।४।।

नक्षत्र संचरणवश बुध का और भी फल कथन

आर्यम्णं हौतभुजं भद्रपदामुत्तरां यमेशं च ।
चन्द्रस्य सुतो निघ्नन् प्राणभृतां धातुसंक्षयकृत् ।।५।।

भाषा—उत्तराफाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपदा या भरणी नक्षत्र का यदि बुध के द्वारा उपमर्दन किया जाय, तो इससे प्राणिगत धातुओं (वसा, रक्त, माँस, मेधा, अस्थि, मज्जा और वीर्य) का क्षय होता है।।५।।

नक्षत्र संचरण वश बुध का और भी फल कथन

आश्विनवारुणमूलान्युपमृद्नन् रेवतीं च चन्द्रसुतः ।
पण्यभिषग्नौजीविकसलिलजतुरगोपघातकरः ।।६।।

भाषा—अश्विनी, शतभिषा, मूल या रेवती नक्षत्रों को यदि बुध द्वारा भेदन किया जाये, तो इससे व्यापारीजनों, वैद्यों, मल्लाहों, जलोत्पन्न वस्तुओं और अश्वों की हानि होती है।।६।।

नक्षत्र संचरणवश बुध का और भी फल कथन

पूर्वाद्यृक्षत्रितयादेकमपीन्दोः सुतोऽभिमृद्नीयात् ।
क्षुच्छस्त्रतस्करामयभयप्रदायी चरन् जगतः ।।७।।

भाषा—बुध यदि तीनों पूर्वा अर्थात् पूर्वाफालगुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपदा में से किसी भी नक्षत्र का भेदन करे, तो इससे भूख, शस्त्र, चोर, रोग आदि सम्बन्धी भय उत्पन्न होता है।।७।।

पराशरोक्त बुध की सात गतियों का कथन

प्राकृतविमिश्रसंक्षिप्ततीक्ष्णयोगान्तघोरपापाख्याः ।
सप्त पराशरतन्त्रे नक्षत्रैः कीर्तिता गतयः ।।८।।

भाषा—पराशर तन्त्र में नक्षत्रवश बुध की सात प्रकार की गतियों का उललेख हुआ है—प्राकृत, विमिश्र, संक्षिप्त, तीक्ष्ण, योगान्तिक, घोर और पाप।।८।।

बुध की गतियों के नक्षत्रों में स्थिति कथन

प्राकृतसंज्ञा वायव्ययाम्यपैतामहानि बहुलाश्च ।
मिश्रा गतिः प्रदिष्टा शशिशिवपितृभुजगदेवानि ।।९।।

संक्षिप्तायां पुष्यः पुनर्वसुः फल्गुनीद्वयं चेति ।
तीक्ष्णायां भद्रपदाद्वयं सशाक्राश्वयुक् पौष्णम् ।।१०।।
योगान्तिकेति मूलं द्वे चाषाढे गतिः सुतस्येन्दोः ।
घोरा श्रवणस्त्वाष्ट्रं वसुदैवं वारुणं चैव ।।११।।
पापाख्या सावित्रं मैत्रं शक्राग्निदैवतं चेति ।

माया—स्वाती, भरणी, रोहिणी तथा कृत्तिका नक्षत्रों में बुध की प्राकृत गति होती है। मृगशिरा, आर्द्रा, मघा और श्लेषा नक्षत्रों में विमिश्र गति कहा गया है। पुष्य, पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी में संक्षिप्ता एवं पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, ज्येष्ठा, अश्विनी और रेवती नक्षत्रों में बुध की गति को तीक्ष्णा कहा गया है। मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा में बुध की योगान्तिका गति होती है। श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा और शतिभिषा नक्षत्रों में घोरा नाम की गति तथा जब बुध हस्त, अनुराधा या ज्येष्ठा नक्षत्र में विद्यमान रहता है, तब उसकी पापा नाम की गति होती है।।९-११।।

पराशर मत से बुध गति का उदयास्त लक्षण कथन

उदयप्रवासदिवसैः स एव गतिलक्षणं प्राह ।।१२।।
चत्वारिंशत्४० त्रिंशद्३० द्विसमेता विंशतिर२र्द्विनवकं च १८ ।
नव९ मासार्द्धं१५ दश चैकसंयुताः११ प्राकृताद्यानाम् ।।१३।।

माया—इस तरह पराशर महर्षि ने बुध के उदय व अस्त के द्वारा उसकी गतियों के लक्षणों को प्रदर्शित किया है। प्राकृत गति में रहने पर बुध का उदय होता है, तो उसमें बुध ४० दिन तक उदित रहता है तथा उसके अस्त रहने पर ४० दिन तक अस्त रहता है। इसी तरह विमिश्रा गति में रहने पर बुध का उदयास्त ३० दिन, संक्षिप्ता गति में २२ दिन, तीक्ष्णा गति में १८ दिन, योगान्तिका गति में ९ दिन तथा घोरा गति में १५ दिन तथा पापा गति में रहने पर बुध का उदय ९ दिन तक और अस्त की स्थिति में ९ दिन तक अस्त रहता है।।१२-१३।।

गतिवश बुध का फल कथन

प्राकृतगत्यामारोग्यवृष्टिसस्यप्रवृद्धयः क्षेमम् ।
संक्षिप्तमिश्रयोर्मिश्रमेतदन्यासु विपरीतम् ।।१४।।

माया—बुध के प्राकृत गति में रहने पर आरोग्य, वृष्टि, धान्य वृद्धि और क्षेम सम्भव होता है। संक्षिप्ता और विमिश्रा गति में बुध मिश्र फल अर्थात् मध्यम फल के रूप में कुछ आरोग्य, कुछ वृष्टि, कुछ धान्य वृद्धि तथा कुछ क्षेम) करने वाला होता है। एवं

शेष गतियों तीक्ष्णा, योगान्तिका, घोरा, पापा में विपरीत फल अर्थात रोग पीड़ा, अनावृष्टि, धान्य हानि, अकल्याणकारक होता है॥१४॥

देवलमत से बुध गति कथन

ऋज्व्यतिवक्रावक्रा विकला च मतेन देवलस्यैता: ।
पञ्चचतुर्द्व्येकाहा ऋज्व्यादीनां षडभ्यस्ता: ॥१५॥

माया—देवल के अनुसार बुध की चार प्रकार की गतियां ऋज्वी, अतिवक्रा, वक्रा, विकला आदि होती है। बुध की इन गतियों का विद्यमान काल उदय या अस्त दिन से ऋज्वी गति ३० दिन तक, अतिवक्रा २४ दिन तक, वक्रा १२ दिन तक तथा विकला गति ६ दिन तक रहती है॥१५॥

ऋज्वी आदि गति का फल कथन

ऋज्वी हिता प्रजानामतिवक्राऽर्घं गतिर्विनाशयति ।
शस्त्रभयदा च वक्रा विकला भयरोगसञ्जननी ॥१६॥

माया—ऋज्वी गति में प्रजाओं का हित साधन होता है। अतिवक्रा से दुर्भिक्ष, वक्रा से शस्त्र का भय तथा विकला से भय और रोग होता है॥१६॥

उदयास्तवश शुभाशुभ फल कथन

पौषाषाढश्रावणवैशाखेष्विन्दुजः समाघेषु ।
दृष्टो भयाय जगतः शुभफलकृत्प्रोषितस्तेषु ॥१७॥

माया—पौष, आषाढ़, श्रावण या माघ मास में बुध के दिखाई देने से संसार को भय उत्पन्न होता है। परन्तु इन मासों में बुध के अस्त रहने पर संसार को शुभफल की प्राप्ति होती है॥१७॥

उदयास्तवश और भी शुभाशुभ फल कथन

कार्तिकेऽश्वयुजि वा यदि मासे दृश्यते तनुभवः शिशिरांशोः ।
शस्त्रचौरहुतभुग्गदतोयक्षुद्भयानि च तदा विदधाति ॥१८॥

माया—कार्तिक या अश्विन मास में बुध के दीखने पर जनगण को शस्त्र, चोर, अग्नि, रोग, भूख आदि के कारण भय उत्पन्न होता है॥१८॥

उदयास्तवश बुध का और भी शुभाशुभ फल कथन

रुद्धानि सौम्येऽस्तगते पुराणि यान्युद्गते तान्युपयान्ति मोक्षम् ।
अन्ये तु पश्चादुदिते वदन्ति लाभः पुराणां भवतीति तज्ज्ञाः ॥१९॥

भाषा—बुधचार को जानने वालों का कहना है कि बुधास्त काल में जो नगर शत्रुओं से घिर जाय, वह नगर बुधोदय के होने पर मुक्त भी होता है। किसी के अनुसार बुध का पश्चिमोदय होने पर पश्चिमी देशों के जनों का भारी लाभ होता है॥१८॥

बुध के वर्णादि का फल कथन

हेमकान्तिरथवा शुकवर्णः सस्यकेन मणिना सदृशो वा।
स्निग्धमूर्त्तिरलघुश्च हिताय व्यत्यये न शुभकृच्छशिपुत्रः ॥२०॥

भाषा—स्वर्ण के सदृश कान्ति वाला अथवा तोते के सदृश वर्ण वाला, धान्य अथवा नीलमणि के सदृश तथा स्वच्छ, विस्तीर्ण-सा दीखने वाला बुध का बिम्ब संसार का हित साधन करने वाला होता है। इसके विपरीत वर्ण दीखने पर संसार का अशुभ ही होता है॥२०॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां भाषा नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां बुधचाराध्यायः सप्तमः॥७॥

□□□

अथाष्टमोऽध्यायः-८

बृहस्पतिचारविचारः

महाकार्त्तिक आदि वर्ष संज्ञा कथन

नक्षत्रेण सहोदयमुपगच्छति येन देवपतिमन्त्री ।
तत्सञ्ज्ञं वक्तव्यं वर्षं मासक्रमेणैव ।।१।।

माया—जिस मास के जिस नक्षत्र में स्थित होकर बृहस्पति का उदय होता है, उस नक्षत्र के अनुसार ही उस मास नाम के क्रम से ही बारह वर्ष होते हैं।।१।।

नक्षत्रवश द्वादश वर्ष नाम और काल कथन

वर्षाणि कार्तिकादीन्याग्नेयाद् भद्वयानुयोगीनि ।
क्रमशस्त्रिभं तु पञ्चममुपान्त्यमन्त्यं च यद्वर्षम् ।।२।।

माया—द्वादश मास के क्रम से ही कुल द्वादश वर्ष होते हैं, उनमें कृत्तिका नक्षत्र से आरम्भ कर दो-दो नक्षत्रों में कार्तिकादि वर्ष हो जाते हैं, लेकिन इन द्वादश वर्षों के मध्य पञ्चम, एकादश और द्वादश वर्ष तीन-तीन नक्षत्रों के होते हैं। जैसे—कृत्तिका या रोहिणी नक्षत्र में गुरु के उदय होने पर कार्त्तिक नामक वर्ष होता है, इसी तरह आगे भी कल्पना कर लेनी चाहिए।।२।।

कार्त्तिक संज्ञक वर्षफल कथन

शकटानलोपजीवकगोपीडा व्याधिशस्त्रकोपश्च ।
वृद्धिस्तु रक्तपीतककुसुमानां कार्तिके वर्षे ।।३।।

माया—कार्त्तिक नाम के वर्ष के होने पर गाड़ी व अग्निकर्म से जीविकोपार्जन करने वालों और गायों को पीड़ा होती है। जनगण भी व्याधि और युद्ध से पीड़ित होते हैं। रक्त और पीत वर्णों के पुष्पों की अभिवृद्धि होती है।।३।।

मार्गशीर्ष संज्ञक वर्ष फल कथन

सौम्येऽब्देऽनावृष्टिर्मृगाखुशलभाण्डजैश्च सस्यवधः ।
व्याधिभयं मित्रैरपि भूपानां जायते वैरम् ।।४।।

माया—मार्गशीर्ष नामक वर्ष के होने पर अनावृष्टि, वनैले पशुओं, चूहों, शावकों (टिड्डी) और चिड़ियों के कारण धान्य की हानि होती है। जनगण व्याधि भय से त्रस्त रहते हैं। राजाजन अपने मित्रों से भी द्वेष करते हैं।।४।।

पौषसंज्ञक वर्ष का फल कथन

शुभकृज्जगतः पौषो निवृत्तवैराः परस्परं क्षितिपाः ।
द्वित्रिगुणो धान्यार्घः पौष्टिककर्मप्रसिद्धिश्च ।।५।।

माया—पौष नामक वर्ष के होने पर जगत् का कल्याण होता है। राजाजनों द्वारा आपसी द्वेष भूला दिया जाता है। धान्य का मूल्य द्वि-त्रिगुणित बढ़ जाता है तथा पौष्टिक कर्म की सिद्धि करने में भी सहजता रहती है।।५।।

माघ संज्ञक वर्ष का फल कथन

पितृपूजापरिवृद्धिर्माघे हार्दिश्च सर्वभूतानाम् ।
आरोग्यवृष्टिधान्यार्घसम्पदो मित्रलाभश्च ।।६।।

माया—माघ संज्ञक वर्ष होने पर पितृ पूजा करने में जन अधिक प्रवृत्त रहते हैं। जनगणों को हार्दिक संतुष्टि मिलती है। सभी आरोग्य सुख प्राप्त करते हैं। सुन्दर वृष्टि होती है। धान्य का मूल्य स्थिर रहता है। सम्पत्ति व मित्रों का लाभ भी होता है।।६।।

फाल्गुन संज्ञक वर्ष का फल कथन

फाल्गुनवर्षे विन्द्यात् क्वचित्क्वचित्क्षेमवृष्टिसस्यानि ।
दौर्भाग्यं प्रमदानां प्रबलाश्चौरा नृपाश्चोग्राः ।।७।।

माया—फाल्गुन नाम के वर्ष में कहीं-कहीं जनगणों का क्षेम, धान्य वृद्धि तथा वृष्टि भी होती है। स्त्रियों को दुभाग्य की प्राप्ति, चारों का भय और राजाओं में भी उदारता आ जाती है।।७।।

चैत्र संज्ञक वर्ष का फल कथन

चैत्रे मन्दा वृष्टिः प्रियमन्नं क्षेममवनिपा मृदवः ।
वृद्धिश्च कोशधान्यस्य भवति पीडा च रूपवताम् ।।८।।

माया—चैत्र वर्ष में अल्पवृष्टि, प्रिय अन्न, क्षेम और राजाओं में मृदुता होती है। संग्रहित धान्यों की वृद्धि तथा सुन्दर स्वरूप जनों को पीड़ा होती है।।८।।

वैशाख नाम के वर्ष का फल कथन

वैशाखे धर्मरता विगतभयाः प्रमुदिताः प्रजाः सनृपाः ।
यज्ञक्रियाप्रवृत्तिर्निष्पत्तिः सर्वसस्यानाम् ।।९।।

माया—वैखाख नाम के वर्ष में राजाओं के साथ जनगणों में धर्म की वृद्धि, निडरता, प्रसन्नता आदि होती है। सभी यज्ञकृत्यों को करने में प्रवृत्त रहता है, सभी धान्यों में अभिवृद्धि होती है।।९।।

ज्येष्ठ नामक वर्ष का फल कथन

ज्यैष्ठे जातिकुलधनश्रेणीश्रेष्ठा नृपाः सधर्मज्ञाः ।
पीड्यन्ते धान्यानि च हित्वा कङ्गुं शमीजातिम् ।।१०।।

भाषा—ज्येष्ठ नामक के वर्ष में जाति से, कुल से, धन से, श्रेणी (स्तर) से आदि से श्रेष्ठ पुरुष, राजाजन, धार्मिक जन के साथ कंगनी व शमी नामक धान्य को छोड़कर अन्य सभी धान्य अति पीड़ित रहते हैं।।१०।।

आषाढ़ नाम के वर्ष का फल कथन

आषाढे जायन्ते सस्यानि क्वचिदवृष्टिरन्यत्र ।
योगक्षेमं मध्यं व्यग्राश्च भवन्ति भूपालाः ।।११।।

भाषा—आषाढ़ संज्ञक वर्ष में समस्त धान्य होते हैं परन्तु कहीं-कहीं वृष्टि का अभाव भी रहता है। योगक्षेम (अलब्ध का लाभ और लब्ध का रक्षण) मध्यम होता है तथा राजाजनों में व्यग्रता होती है।।११।।

श्रावण संज्ञक वर्ष का फल कथन

श्रावणवर्षे क्षेमं सम्यक् सस्यानि पाकमुपयान्ति ।
क्षुद्रा ये पाखण्डाः पीड्यन्ते ये च तद्भक्ताः ।।१२।।

भाषा—श्रावण संज्ञक वर्ष में सबका कल्याण होता है, सभी धान्य भी समय पर पक जाते हैं। क्षुद्र, पाखण्डी और उनके भक्त जनों को पीड़ित होना पड़ता है।।१२।।

भाद्रपद संज्ञक वर्ष का फल कथन

भाद्रपदे वल्लीजं निष्पत्तिं याति पूर्वसस्यं च ।
न भवत्यपरं सस्यं क्वचित्सुभिक्षं क्वचिच्च भयम् ।।१३।।

भाषा—भाद्रपद संज्ञक वर्ष में लता जाति के (दलहन) पूर्व धान्य समय पर तैयार हो जाते हैं, परन्तु अन्य धान्यों की कमी रहती है। कहीं सुभिक्ष तो कहीं भय आदि व्याप्त रहता है।।१३।।

आश्विन संज्ञक वर्ष का फल कथन

आश्वयुजेऽब्देऽजस्रं पतति जलं प्रमुदिताः प्रजाः क्षेमम् ।
प्राणचयः प्राणभृतां सर्वेषामन्नबाहुल्यम् ।।१४।।

भाषा—आश्विन वर्ष में अजस्र (अत्यधिक) जल गिरता है। जनगणों में आनन्दपूर्ण वातावरण तो रहता ही है, उनका कल्याण भी होता है। सभी लोगों में बल की अधिकता होती है और सभी प्रकार के धान्यों की भी उपलब्धि प्रचुरता से रहती है।।१४।।

संचरणशील गुरु का नक्षत्र जन्य फल कथन

उदगारोग्यसुभिक्षक्षेमकरो वाक्पतिश्चरन् भानाम्।
याम्ये तद्विपरीतो मध्येन तु मध्यफलदायी ।।१५।।

माया—जब बृहस्पति नक्षत्रों के उत्तर भाग में संचरण करता है, तो सभी लोगों के लिए आरोग्यकर, सुवृष्टिकर और कल्याणकारी होता है। जब नक्षत्र के दक्षिण भाग में संचरण करता है, तो उपरोक्त का विपरीत फल अर्थात् सबको रोग, अनावृष्टि के साथ सभी का अकल्याण होता है। जब गुरु नक्षत्र के मध्य भाग से भ्रमण करता है, तो मध्यम फल कारक होता है।।१५।।

गुरु का नक्षत्र जन्य विशेष फल कथन

विचरन् भद्वयमिष्टस्तत्सार्द्धं वत्सरेण मध्यफलः।
सस्यानां विध्वंसी विचरेदधिकं यदि कदाचित् ।।१६।।

माया—एक वत्सर या वर्ष में दो नक्षत्रों में संचरित होने वाला गुरु शुभ फलदायक होता है। ढ़ाई नक्षत्रों में संचरण करने पर गुरु मध्यम फलप्रद होता है। परन्तु वह ढ़ाई नक्षत्रों से अधिक में संचरण करते हुए धान्यों को विनष्ट करने वाला होता है।।१६।।

बृहस्पति वर्णजन्य फल कथन

अनलभयमनलवर्णे व्याधिः पीते रणागमः श्यामे।
हरिते च तस्करेभ्यः पीडा रक्ते तु शस्त्रभयम् ।।१७।।
धूमाभेऽनावृष्टिस्त्रिदशगुरौ नृपवधो दिवा दृष्टे।
विपुलेऽमले सुतारे रात्रौ दृष्टे प्रजाः स्वस्थाः ।।१८।।

माया—अग्नि वर्ण का बृहस्पति जनगणों को अग्नि का भय देने वाला होता है। पीतवर्ण का होकर व्याधि, श्याम वर्ण का होने पर युद्ध, हरा वर्ण का होने पर चोरों से पीड़ा, लाल वर्ण का होने पर शस्त्रभय तथा धूम्रवर्ण का होकर गुरु अनावृष्टि का कारण होता है। बृहस्पति दिन भाग में दृष्ट होने पर राजाजनों का नाश करने वाला होता है। तथा आकाशस्थ ताराओं से भी सुन्दर बृहस्पति का विशाल व स्वच्छ बिम्ब रात्रि के समय दीखता हो, तो जनगणों को स्वस्थ करने वाला होता है।।१७-१८।।

सम्वत्सर पुरुष के अङ्ग, नक्षत्र व फल कथन

रोहिण्योऽनलभं च वत्सरतनुर्नाभिस्त्वषाढाद्वयं
सार्पं हृत्पितृदैवतं च कुसुमं शुद्धैः शुभं तैः फलम्।
देहे क्रूरनिपीडितेऽग्न्यनिलजं नाभ्यां भयं क्षुत्कृतं
पुष्पे मूलफलक्षयोऽथ हृदये सस्यस्य नाशो ध्रुवम् ।।१९।।

माया—कृत्तिका व रोहिणी नक्षत्र सम्वत्सर पुरुष के शरीर, पूर्वाषाढ़ा व उत्तराषाढ़ा उसके नाभि, श्लेषा उसके हृदय और मघा नक्षत्र उसके पुष्प हैं। सम्वत्सर पुरुष के शारीरिक अंग शुद्ध अर्थात् पापग्रह से युक्त न हों, तो वे शुभफलदायक होते हैं। रोहिणी या कृत्तिका सम्वत्सर पुरुष के शरीर भाग में पापग्रह स्थित हो, तो वह अग्नि और वायु जनित पीड़ा देता है। नाभि रूप पूर्वाषाढ़ा व उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में पापग्रह स्थित रहने पर दुर्भिक्ष जन्य फल देता है। पुष्प रूप मघा नक्षत्र में पापग्रह की युति से मूल और फल की हानि होती है। इसी तरह हृदय रूप श्लेषा नक्षत्र में पाप ग्रह के रहने पर धान्यों की भी निश्चित हानि होती है॥१९॥

षष्ट्यब्दानयनरीति

गतानि वर्षाणि शकेन्द्रकालाद्धतानि रुद्रैर्गुणयेच्चतुर्भिः ।
नवाष्टपञ्चाष्ट८५८९युतानि कृत्वाविभाजयेच्छून्यशरागरामैः३७५० ॥२०॥
लब्धेन युक्तं शकभूपकालं संशोध्य षष्ट्या विषयैर्विभज्य ।
युगानि नारायणपूर्वकाणि लब्धानि शेषाः क्रमशः समाः स्युः ॥२१॥

माया—शालिवाहन राजा के काल से जितने वर्ष व्यतीत हुए हों, उन शक वर्षों को ग्याहरह से गुणाकर उस गुणनफल को पुनः चार से भी गुणा करना चाहिए। अब उस गुणनफल में ८५८९ पठित अंक जोड़ें। इस योगफल में ३७५० से भाग की क्रिया से जो कुछ लब्धि प्राप्त हो, उस लब्धि में शक वर्ष जोड़ना चाहिए, इस योगफल में ६० से भाग देने पर जो शेष बचे, उसमें पाँच का भाग करने से लब्धि गत युग और शेष वर्तमान युग के वर्षादि होते हैं अर्थात् लब्धि नारायण आदि युग तथा शेष वर्तमान युग के वर्ष, मास दिन आदि प्राप्त होते हैं॥२०-२१॥

बृहस्पति नक्षत्र ज्ञान उससे वर्ष कथन

एकैकमब्देषु नवाहतेषु दत्त्वा पृथग् द्वादशकं क्रमेण ।
हृत्वा चतुर्भिर्वसुदेवताद्यान्युडूनि शेषांशकपूर्वमब्दम् ॥२२॥

माया—पूर्वोक्त शेष वर्षादि की संख्या को १२ से भागकर लब्धि को नवगुणित वर्षादि के गुणनफल में जोड़कर ४ से भाग देना चाहिए, जितनी लब्धि हो, उस लब्धि तुल्य संख्या के नक्षत्रों में बृहस्पति को स्थित जाननी चाहिए। यहाँ नक्षत्र गणना २४वें नक्षत्र से करनी चाहिए अर्थात् १ लब्धि होने पर २५वाँ पूर्वाभाद्रपदा तथा २ लब्धि होने पर २६वाँ उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र जानना चाहिए॥२२॥

६० सम्वत्सर स्थित द्वादश युगों के नाम कथन

विष्णुः सुरेज्यो बलभिद्धुताशस्त्वष्टोत्तरप्रोष्ठपदाधिपश्च ।
क्रमाद्युगेशाः पितृविश्वसोमशक्रानलाख्याश्विभगाः प्रदिष्टाः ॥२३॥

भाषा—विष्णु, सुरेज्य, बलभिद्, हुताश, त्वष्टा, उत्तरप्रोष्ठपदाधिप (अहिर्बुध्न्य), पिता, विश्वेदेव, सोम, शक्रानल, अश्विनी कुमार, भग (सूर्य) आदि द्वादश पूर्वोक्त षष्टि सम्वत्सरात्मक युगों के स्वामी हैं॥२३॥

पञ्च वर्षात्मक युग के प्रति वर्ष नाम व देवता कथन

संवत्सरोऽग्निः परिवत्सरोऽर्क इदादिकः शीतमयूखमाली ।
प्रजापतिश्चाप्यनुवत्सरः स्यादिद्वत्सरः शैलसुतापतिश्च ।।२४।।

भाषा—सम्वत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर, इद्वत्सर आदि युग के पाँच वर्षों के नाम कहे गए हैं। इन पञ्च वर्षों के स्वामी क्रम से इस प्रकार होते हैं—अग्नि, सूर्य, चन्द्र, प्रजापति, शिव आदि। कहने का तात्पर्य यह है कि सम्वत्सर का स्वामी अग्नि, परिवत्सर का स्वामी सूर्य, इदावत्सर का स्वामी चन्द्र, अनुवत्सर का स्वामी प्रजापति तथा इद्वत्सर का स्वामी शिव को जानना चाहिए॥२४॥

उपरोक्त पञ्च सम्वत्सरों का फल कथन

वृष्टिः समाद्ये प्रमुखे द्वितीये प्रभूततोया कथिता तृतीये ।
पश्चाज्जलं मुञ्चति यच्चतुर्थं स्वल्पोदकं पञ्चममब्दमुक्तम् ।।२५।।

भाषा—इस प्रकार ऊपर जिन पञ्च सम्वत्सरों का उल्लेख हुआ है, उनमें से प्रथम सम्वत्सर संज्ञक वर्ष में मध्यम वृष्टि होती है अर्थात् श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक चारों मासों में समान वृष्टि होती है। दूसरे परिवत्सर संज्ञक वर्ष के प्रथम भाग अर्थात् केवल श्रावण व भाद्रपद मासों में वृष्टि होती है। तृतीय इदावत्सर नाम के वर्ष के सम्पूर्ण अर्थात् श्रावण, भाद्रपद, आश्विन व कार्तिक चारों मासों में अत्यधिक जल की बारिश होती है। चतुर्थ अनुवत्सर संज्ञक वर्ष के अन्त्य भाग अर्थात् आश्विन और कार्तिक दो मासों में वृष्टि होती है एवं इद्वत्वसर संज्ञक वर्ष के चारों मासों (श्रावण, भाद्रपद, अश्विनी व कार्तिक) में अल्प वृष्टि ही सम्भव होती है॥२५॥

उत्तम-मध्यम-अधम युग कथन

चत्वारि मुख्यानि युगान्यथैषां विष्ण्विन्द्रजीवानलदैवतानि ।
चत्वारि मध्यानि च मध्यमानि चत्वारि चान्त्यान्यधमानि विन्द्यात् ।।२६।।

भाषा—उपरोक्त पञ्चवर्षात्मक द्वादश युगों में क्रम से आदि के चार विष्णु, इन्द्र, बृहस्पति और अग्नि जिनके स्वामी हैं, उनको श्रेष्ठ युग और उनके बाद के या मध्य में स्थित चार प्रजापति, अहिर्बुध्न्य, पिता और विश्वेदेव, जिनका स्वामी है, उनको मध्यम युग तथा अन्त में स्थित चार सोम, शक्रानल, अश्विनीकुमार और भग; जिनके स्वामी है उनको अधम युग माना गया है॥२६॥

प्रभव सम्वत्सर के प्रवृत्तिकाल कथन

आद्यं धनिष्ठांशमभिप्रपन्नो माघे यदा यात्युदयं सुरेज्यः ।
षष्ट्यब्दपूर्वः प्रभवः स नाम्ना प्रपद्यते भूतहितस्तदाब्दः ।।२७।।

भाषा—धनिष्ठा नक्षत्र के आदि अंशस्थ बृहस्पति यदिमाघ मास में उदित होता है, तो उस काल में ६० सम्वत्सरों में और द्वादश युगों में अग्रगण्य प्रभव संज्ञक सम्वत्सर का आरम्भ होता है, जो जनगणों के लिए हितसाधक माना गया है।।२७।।

प्रथम युग के प्रभव संज्ञक सम्वत्सर फल कथन

क्वचित्त्ववृष्टिः पवनाग्निकोपः सन्तीतयः श्लेष्मकृताश्च रोगाः ।
संवत्सरेऽस्मिन् प्रभवे प्रवृत्ते न दुःखमाप्नोति जनस्तथापि ।।२८।।

भाषा—इस प्रभव संज्ञक सम्वत्सर में चूँकि कहीं वृष्टि नहीं होती, कहीं पर वायु का प्रकोप, कहीं पर अग्नि का कोप होता है, तो कहीं पर धान्यों में ईतियों का भय और कहीं पर श्लेष्मिक (कफात्मक) रोग से पीड़ा होती है, फिर भी जगत् के जनगणों को अधिकतर कष्ट या दुःख का एहसास नहीं होता है।।२८।।

प्रथम युग के अन्य चार सम्वत्सरों का नाम व फल कथन

तस्माद् द्वितीयो विभवः प्रदिष्टः शुक्लस्तृतीयः परतः प्रमोदः ।
प्रजापतिश्चेति यथोत्तराणि शस्तानि वर्षाणि फलान्यथैषाम् ।।२९।।
निष्पन्नशालीक्षुयवादिसस्यां भयैर्विमुक्तामुपशान्तवैराम् ।
संहृष्टलोकां कलिदोषमुक्तां क्षत्रं तदा शास्ति च भूतधात्रीम् ।।३०।।

भाषा—द्वादश युगों के प्रथम युग (विष्णु) के अन्तवर्त्ति द्वितीय सम्वत्सर का नाम विभव, तृतीय का शुक्ल, चतुर्थ का प्रमोद और पञ्चम सम्वत्सर का नाम प्रजापति कहा गया है। ये प्रथम युगान्तवर्त्ति प्रत्येक सम्वत्सर उत्तरोत्तर अधिक शुभफल प्रदान करने वाले होते हैं। इन सम्वत्सरों में राजाजनों के विलक्षण शासन पद्धति के प्रभाव से पृथ्वी धन-धान्य, ईख, यव आदि अनाज से सुसम्पन्न तथा भय व शत्रुता रहित और प्रसन्नचित्त, जनगणों से युक्त होकर कलियुग के दोषों जैसे अधर्म, व्याधि, दरिद्रता, शोक, कलह मृत्यु आदि से विर्मुक्त रहती है।।२९-३०।।

द्वितीय युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

आद्योऽङ्गिराः श्रीमुखभावसाह्वौ युवा सुधातेति युगे द्वितीये ।
वर्षाणि पञ्चैव यथाक्रमेण त्रीण्यत्र शस्तानि समे परे द्वे ।।३१।।
त्रिष्वाद्यवर्षेषु निकामवर्षी देवो निरातङ्कभयश्च लोकः ।
अब्दद्वयेऽन्त्येऽपि समा सुवृष्टिः किन्त्वत्र रोगाः समरागमश्च ।।३२।।

माया—द्वादश युगों के द्वितीय युग (बृहस्पति) के अन्तर्गत अङ्गिरा, श्रीमुख, भाव, युवा और धाता, इन नामों के पाँच सम्वत्सर होते हैं। इनमें से आरम्भ से तीन (अङ्गिरा, श्रीमुख, भाव) शुभप्रद और बाद के दो (युवा व धाता) मध्यम फल देने वाले होते हैं।

अत: प्रारम्भ के तीन सम्वत्सरों में देवेन्द्र भरपूर वर्षा करते हैं और सभी जन आतंक या उपद्रव के भय से मुक्त रहते हैं। अन्त के दो सम्वत्सरों में मध्यम वृष्टि तो होती है, लेकिन रोग और युद्ध से लोग परेशान होते हैं॥३१-३२॥

तृतीय युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

शाक्रे युगे पूर्वमथेश्वराख्यं वर्षं द्वितीयं बहुधान्यमाहु: ।
प्रमाथिनं विक्रममप्यथान्यद् वृषं च विन्द्याद् गुरुचारयोगात् ॥३३॥
आद्यं द्वितीयं च शुभे तु वर्षे कृतानुकारं कुरुतः प्रजानाम् ।
पापः प्रमाथी वृषविक्रमौ तु सुभिक्षदौ रोगभयप्रदौ च ॥३४॥

माया—द्वादश युगों के तृतीय ऐन्द्र संज्ञक युग के अन्तर्वर्त्ति ईश्वर, बहुधान्य, प्रमाथी, विक्रम, वृष आदि नाम के पाँच सम्वत्सर गुरु के नक्षत्र संचरण से उपपन्न होते हैं। इनमें आरम्भ से दो ईश्वर व बहुधान्य शुभ सम्वत्सर हैं। इन सम्वत्सरों में जनगण सत्ययुग के समान धार्मिक, सुखी, दीर्घायु आदि होते हैं। प्रभाथी संज्ञक सम्वत्सर अशुभद होता है तथा विक्रम और वृष संज्ञक सम्वत्सरों में सुभिक्ष तो होता है लेकिन रोग व भय भी होते हैं॥३३-३४॥

चतुर्थ युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

श्रेष्ठं चतुर्थस्य युगस्य पूर्वं यच्चित्रभानुं कथयन्ति वर्षम् ।
मध्यं द्वितीयं तु सुभानुसञ्ज्ञं रोगप्रदं मृत्युकरं नतं च ॥३५॥
तारणं तदनु भूरिवारिदं सस्यवृद्धिमुदितातिपार्थिवम् ।
पञ्चमं व्ययमुशन्ति शोभनं मन्मथप्रबलमुत्सवाकुलम् ॥३६॥

माया—द्वादश युगीय आग्नेय युग के अनुवर्त्ति प्रथम चित्रभानु संज्ञक सम्वत्सर अति शुभफलदायक होते हैं। द्वितीय सुभानु संज्ञक सम्वत्सर मध्यम फलदायक होता है। तृतीय नत नामक सम्वत्सर रोग और मृत्यु को देने वाला होता है। चतुर्थ तारण संज्ञक सम्वत्सर अत्यधिक वृष्टि करने वाला धान्य वृद्धि करने तथा राजाजनों के आनन्द को बढ़ाने वाला होता है।पंचम व्यय नामक सम्वत्सर शुभप्रद होता है। इस समय काम वृत्ति भी उद्दीप्त होता है, जनगणों में माङ्गलिक कार्यों को सम्पादित करने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है॥३५-३६॥

पञ्चम युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

त्वाष्ट्रे युगे सर्वजिदाद्य उक्तः संवत्सरोऽन्यः खलु सर्वधारी।
तस्माद्विरोधी विकृतः खरश्च शस्तो द्वितीयोऽत्र भयाय शेषाः ।।३७।।

माया—द्वादश युगों में से प्राजापत्य युग के अन्तर्गत सर्वजित , सर्वधारी, विरोधी, विकृत और खर संज्ञक पाँच सम्वत्सर होते हैं; इन पाँच सम्वत्सरों में से दूसरा सर्वधारी नाम का सम्वत्सर शुभ या मंगल करने वाला होता है तथा अन्य सभी चार सर्वजित्, विरोधी, विकृत तथा खर सम्वत्सर भयप्रद होते हैं।।३७।।

षष्ठयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

नन्दनोऽथ विजयो जयस्तथा मन्मथोऽस्य परतश्च दुर्मुखः ।
कान्तमत्र युग आदितस्त्रयं मन्मथः समफलोऽधमोऽपरः ।।३८।।

माया—द्वादश युगीय प्रोष्ठपद संज्ञक षष्ठयुग के अन्दर नन्दन, विजय, जल, मन्मथ तथा दुर्मुख नामके सम्वत्सर आते हैं। इन पाँच सम्वत्सरों में से प्रारम्भ से तीन नन्दन, विजय और जय सम्वत्सर शुभफल प्रदान करने वाले होते हैं। उनमें से चौथा मन्मथ सम्वत्सर मध्यफल अर्थात् न शुभ और न अशुभ फल प्रदान करने वाला होता है। पाँचवाँ दुर्मुख सम्वत्सर अत्यधिक अशुभ प्रद होता है।।३८।।

सप्तमयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

हेमलम्ब इति सप्तमे युगे स्याद्विलम्बि परतो विकारि च ।
शर्वरीति तदनु प्लवः स्मृतो वत्सरो गुरुवशेन पञ्चमः ।।३९।।

ईतिप्राया प्रचुरपवना वृष्टिरब्दे तु पूर्वे
मन्दं सस्यं न बहुसलिलं वत्सरेऽतो द्वितीये।
अत्युद्वेगः प्रचुरसलिलः स्यात्तृतीयश्चतुर्थो
दुर्भिक्षाय प्लव इति ततः शोभनो भूरितोयः।।४०।।

माया—द्वादश युगीय पैतृक युग के अन्दर हेमलम्ब, बिलम्बि, विकारि, शर्वरी और प्लव नाम के पाँच सम्वत्सरों में प्रायः ईति नाम के रोग से धान्य हानि की सम्भावना रहती है तथा अत्यधिक वृष्टि अतितेज वायु के साथ होती है। द्वितीय बिलम्बि नाम के सम्वत्सर में अल्प धान्य तथा अतिवृष्टि भी होती है। तृतीय विकारी नाम के सम्वत्सर में अत्यधिक उद्वेग (दोष) युक्त तथा अत्यधिक वृष्टि करने वाला होता है। चतुर्थ शर्वरी नाम के सम्वत्सर में दुर्भिक्ष होता है। एवं पञ्चम प्लव नाम के सम्वत्सर शुभफलदायक और अति वृष्टि करने वाला होता है।।३९-४०।।

अष्टम युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

वैश्वे युगे शोक हृदित्यथाद्यः संवत्सरोऽतः शुभकृद् द्वितीयः ।
क्रोधी तृतीयः परतः क्रमेण विश्वावसुश्चेति पराभवश्च ।।४१।।
पूर्वापरौ प्रीतिकरौ प्रजानामेषां तृतीयो बहुदोषदोऽब्दः ।
अन्त्यौ समौ किन्तु पराभवेऽग्निः शस्त्रामयार्तिर्द्विजगोभयं च ।।४२।।

माया—द्वादशयुगीय वैश्व युग के अन्तर्गत शोकहृत्, शुभकृत्, क्रोधी, विश्वावसु और पराभव नाम के पाँच सम्वत्सर आते हैं इन पाँच सम्वत्सरों में से प्रथम शोकहृत् और द्वितीय शुभकृत सम्वत्सरों में जनगणों को परस्पर प्रीती या प्यार पूर्ण व्यवहार करने का अवसर सुलभ होता है। तृतीय क्रोधी नामक सम्वत्सर जनों के लिए बहुत दोषप्रद होता है। अन्त्यस्थ विश्वावसु और पराभव नाम के चतुर्थ व पञ्चम सम्वत्सरों में मध्यम फल की प्राप्ति होती है, लेकिन विशेषता से पञ्चम पराभव नाम के सम्वत्सर में अग्नि, शस्त्र, रोग आदि से पीड़ा तथा द्विजों और गायों के लिए भय उत्पन्न होता है।।४१-४२।।

नवमयुगान्तर्गत सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

आद्यः प्लवङ्गो नवमे युगेऽब्दः स्यात् कीलकोऽन्यः परतश्च सौम्यः ।
साधारणो रोधकृदित्यथैवं शुभप्रदौ कीलकसौम्यसंज्ञौ ।।४३।।
कष्टः प्लवङ्गो बहुशः प्रजानां साधारणेऽल्पं जलमीतयश्च ।
यः पञ्चमो रोधकृदित्यथाब्दश्चित्रं जलं तत्र च सस्यसम्पत् ।।४४।।

माया—द्वादशयुगीय सौम्य युगानुवर्त्ति प्लवङ्ग, कीलक, सौम्य, साधारण और रोधकृत नाम के ये पाँच सम्वत्सर हैं। इन पाँच सम्वत्सरों में से द्वितीय कीलक और तृतीय सौम्य नाम के सम्वत्सर शुभफल प्रदान करने वाले हैं। प्लवङ्ग नाम के प्रथम सम्वत्सर में जनगणों को बहुत अधिक कष्ट की प्राप्ति होती है। साधारण नाम के चतुर्थ सम्वत्सर में अल्प वृष्टि और ईति रोग से धान्यादि की हानि होती है। एवं रोधकृत् नाम के पञ्चम सम्वत्सर में चित्र जल की प्राप्ति अर्थात् कहीं अधिक, कहीं कम, कहीं सामान्य आदि वृष्टि और धन-धान्य की उत्पत्ति होती है।।४३-४४।।

दशमयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

इन्द्राग्निदैवं दशमं युगं यत्तत्राद्यवर्षं परिधाविसंज्ञम् ।
प्रमादिनं विक्रममप्यतोऽन्यत् स्याद्राक्षसं चानलसंज्ञितं च ।।४५।।
परिधाविनि मध्यदेशनाशो नृपहानिर्जलमल्पमग्निकोपः ।
अलसस्तु जनः प्रमादिसंज्ञे डमरं रक्तकपुष्पबीजनाशः ।।४६।।
विक्रमः सकललोकनन्दनो राक्षसः क्षयकरोऽनलस्तथा ।
ग्रीष्मधान्यजननोऽत्र राक्षसो वह्निकोपमरकप्रदोऽनलः ।।४७।।

भाषा—द्वादश युगीय ऐन्द्राग्नेय युग के अन्तर्गत परिधावी, प्रभावी, विक्रम, राक्षस और अनल नामक पाँच सम्वत्सर परिगणित होता है। प्रथम परिधावी नाम के सम्वत्सर में मध्यदेश के निवासियों का नाश, राजाजनों की हानि, अल्प वृष्टि और अग्नि का प्रकोप होता है। द्वितीय प्रभादी नाम के सम्वत्सर जनगणों को आलसी बनाता है, डमर अर्थात् शस्त्र युक्त कलह करवाता है तथा लालवर्ण के पुष्प, बीज आदि का नाश भी उस समय होता है। तृतीय विक्रम नाम के सम्वत्सर जनगणों को आनन्दित करने वाला होता है। चतुर्थ राक्षस और पंचम अनल नाम के सम्वत्सरों में जनगणों की हानि होती है। विशेष रूप से राक्षस नाम के सम्वत्सर में ग्रीष्मकालीन धान्यों का उपज होता है तथा अनल सम्वत्सर में अग्नि का प्रकोप, महामारी आदि सम्भव होता है।।४५-४७।।

एकादशम युगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

एकादशे पिङ्गलकालयुक्तसिद्धार्थरौद्राः खलु दुर्मतिश्च ।
आद्ये तु वृष्टिर्महती सचौरा श्वासो हनूकम्पयुतश्च कासः ।।४८।।
यत्कालयुक्तं तदनेकदोषं सिद्धार्थसंज्ञे बहवो गुणाश्च ।
रौद्रोऽतिरौद्रः क्षयकृत् प्रदिष्टो यो दुर्मतिर्मध्यमवृष्टिकृत् सः ।।४९।।

भाषा—द्वादश युगीय आश्विन युग के अन्तर्गत पिङ्गल, कालयुक्त, सिद्धार्थ, रौद्र और दुर्मति नाम के पाँच सम्वत्सर आते हैं; इनमें से प्रथम पिङ्गल नाम के सम्वत्सर के समय महावृष्टि होती है तथा चोरों के साथ-साथ श्वास से कम्पित हनु (ठोढ़ी) वाली खाँसी का भय भी होता है। द्वितीय कालयुक्त सम्वत्सर के समय अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न होते हैं। तृतीय सिद्धार्थ संज्ञक सम्वत्सर के समय अनेक गुण अर्थात् सम्पदा आदि की उपलब्धि होती है। चतुर्थ रौद्र संज्ञक सम्वत्सर में बहुत-सी अशुभता उत्पन्न होती है तथा जनगणों का नाश होता है। पंचम दुर्मति नाम के सम्वत्सर में मध्यम वृष्टि होती है।।४८-४९।।

द्वादशमयुगानुवर्त्ति सम्वत्सरों के नाम व फल कथन

भाग्ये युगे दुन्दुभिसंज्ञमाद्यं सस्यस्य वृद्धिं महतीं करोति ।
अङ्गारसंज्ञं तदनु क्षयाय नरेश्वराणां विषमा च वृष्टिः ।।५०।।
रक्ताक्षमब्दं कथितं तृतीयं तस्मिन् भयं दंष्ट्रिकृतं गदाश्च ।
क्रोधं बहुक्रोधकरं चतुर्थं राष्ट्राणि शून्यीकुरुते विरोधैः ।।५१।।

भाषा—द्वादश युगीय भाग्य युग के अनुवर्त्ति प्रथम दुन्दुभि नाम के सम्वत्सर के समय धान्यों की अत्यधिक अभिवृद्धि होती है। द्वितीय अङ्गार संज्ञक सम्वत्सर के समय राजाजनों की हानि तथा प्रचुरतर वृष्टि होती है। तृतीय रक्ताक्ष संज्ञक सम्वत्सर में दाँतुल जानवरों (सूअर, कुत्ता आदि) का भय तथा रोग सम्भव होता है। चतुर्थ क्रोध संज्ञक सम्वत्सर के समय जनगणों के क्रोध में वृद्धि होती है।।५०-५१।।

क्षय सम्वत्सर और उसका फल कथन पूर्वक ६० सम्वत्सरों का कथन

क्षयमिति युगस्यान्त्यस्यान्त्यं बहुक्षयकारकं
जनयति भयं तद्विप्राणां कृषीबलवृद्धिदम् ।
उपचयकरं विट्शूद्राणां परस्वहृतां तथा
कथितमखिलं षष्ट्यब्दे यत्तदत्र समासतः ।।५२।।

माया—द्वादश युगीय भाग्य युगानुवर्त्ति क्षय संज्ञक सम्वत्सर अनेक प्रकार से जनगणों का नाश करने वाला, ब्राह्मणों के लिए भयप्रद तथा कृषक जनों, वैश्यों, शूद्रों, परद्रव्यहर्त्ताओं आदि को सम्वृद्धि प्रदान करने वाला होता है। ६० सम्वत्सरों के प्रसङ्ग में अन्यान्य शास्त्रों में जो कुछ कहा गया है, उसे मैं (ग्रन्थकार) ने यहाँ (बृहस्पतिचाराध्याय) संक्षेप में प्रस्तुत किया है।।५२।।

बृहस्पतिबिम्ब का सफल कथन

अकलुषांशुजटिलः पृथुमूर्तिः कुमुदकुन्दकुसुमस्फटिकाभः ।
ग्रहहतो न यदि सत्पथवर्ती हितकरोऽमरगुरुर्मनुजानाम् ।।५३।।

माया—बृहस्पति यदि निर्मल रश्मि वाला, सघन रश्मियों वाला, विस्तृत बिम्ब वाला, कुमुद या कुन्द के पुष्पों या स्फटिक मणि के समान आभा या कान्ति वाला अर्थात् श्वेत वर्ण वाला और ग्रहयुद्ध में अविजित रह कर ग्रह-नक्षत्रों के उत्तर मार्ग में गमन करते हुए जनगणों का हित रक्षा करने वाला होता है।।५३।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां बृहस्पतिचाराध्यायोऽष्टमः ।।८।।

□□□

अथ नवमोऽध्यायः-९

शुक्रचारविचारः

प्रथम वीथियों के लक्षण कथन

नागगजैरावतवृषभगोजरद्गवमृगाजदहनाख्याः ।
अश्विन्याद्याः कैश्चित्त्रिभाः क्रमाद्वीथयः कथिताः ।।१।।

माया—शुक्र के नौ वीथियों, उत्तर-मध्य-दक्षिण तीन प्रकार के मार्ग, वात-व्याड-वैश्वानर तीन मार्ग प्रकार तथा छः प्रकार के मण्डल होते हैं। उनमें से सर्वप्रथम वीथियों के लक्षण को अन्य के मत से कहते हैं—

नौ वीथियों के नाम इस प्रकार हैं—नाग, गज, ऐरावत, वृष, गो, जरद् गव, मृग, अज और दहना। इन नौ वीथियों को अश्विनी आदि तीन-तीन नक्षत्रों के क्रम से किसी आचार्य देवल आदि ने कहा है। अतः उक्तानुसार अश्विनी, भरणी और कृत्तिका नक्षत्र नाग वीथि में; रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र गज वीथि में पुनर्वसु, पुष्य और श्लेषा नक्षत्र ऐरावत वीथि में, मघा, पूर्वाफल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र वृषवीथि में; हस्त, चित्र और स्वाती नक्षत्र गोसंज्ञक वीथि में; विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा नक्षत्र जरद्गव वीथि में; मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मृगसंज्ञक वीथि में; श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र अज संज्ञक वीथि में तथा पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा और रेवती नक्षत्र दहन वीथि में जानना चाहिए। ये वीथियाँ परम्परा के अनुसार ही कहा गया है।।१।।

ग्रन्थकार मत से वीथियों के नक्षत्र कथन

नागा तु पवनयाम्यानलानि पैतामहात्त्रिभास्तिस्त्रः ।
गोवीथ्यामश्विन्यः पौष्णं द्वे चापि भद्रपदे ।।२।।
जारद्गव्यां श्रवणात्त्रिभं मृगाख्या त्रिभं तु मैत्राद्यम् ।
हस्तविशाखात्वाष्ट्राण्यजेत्यषाढाद्वयं दहना ।।३।।

माया—ग्रन्थकार (वराहमिहिर) के मत से वीथियों के नक्षत्र इस प्रकार हैं—भरणी, कृत्तिका और स्वाती नक्षत्र नाग वीथि में, रोहिणी, मृगशिर और आर्द्रा नक्षत्र गजसंज्ञक वीथि में; पनुर्वसु, पुष्य और श्लेषा नक्षत्र ऐरावत वीथि में; मघा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफल्गुनी नक्षत्र वृष वीथि में; अश्विनी, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा और रेवती चार नक्षत्र गो वीथि में; श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा जरद्गव वीथि में ; अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल मृगवीथि में; हस्त, चित्रा और विशाखा नक्षत्र अज वीथि में तथा पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र दहन वीथि में होते हैं।

वीथियों के नक्षत्र और उसमें मतान्तर स्पष्टार्थ चक्र

वीथियाँ	नाग	गत	ऐरावत	वृष	गो	जरद्गव	मृग	अज	दहन
अन्यमत से नक्षत्र	अ.	रो	पुन	मघा	ह	वि	भू	श्र	पू.भा.
	भ.	मृ.	पु.	पू.फा.	चि	अनु	पू.षा.	ध.	उ.भा.
	कृ.	आ	श्ले.	उ.फा.	स्वा.	ज्ये.	उ.षा.	श.	रेवती
स्वमत से नक्षत्र	भ.	रो	पुन	म	अ	श्र	अनु.	ह	पू.षा.
	कृ.	मृ	पु	पू.फा.	पू.भा.	ध.	ज्ये.	चि.	उ.षा.
	स्वा.	आ	श्ले	उ.फा.	उ.भा.	शत.	मू.	वि.	--
	×	×	×	×	रेवती	×	×	×	×

वीथियों के मार्ग विभाग कथन

तिस्रस्तिस्रस्तासां क्रमादुदङ्मध्ययाम्यमार्गस्थाः ।
तासामप्युत्तरमध्यदक्षिणेन स्थितैकैका ।।४।।

माया—पूर्वोक्त नाग आदि नौ वीथियों में से परम्परावश तीन-तीन वीथियाँ सूर्य मार्ग से उत्तर, मध्य और दक्षिण मार्ग में स्थित हैं। अत: उक्तानुसार नाग, गज और ऐरावत वीथियाँ उत्तर में; वृष, गो और जरद्गव वीथियाँ मध्य मार्ग में तथा मृग, अज और दहन वीथियाँ दक्षिण मार्ग में विद्यमान हैं। इन तीनों मार्गों में स्थित तीन-तीन वीथियों में भी प्रत्येक क्रम से उत्तर, मध्य और दक्षिण मार्ग में विद्यमान होता है। इसके अनुसार नाग उत्तर मार्ग में, जरद्गव दक्षिण मार्ग में. मृग उत्तर मार्ग में, अज मध्यमार्ग में और दहन दक्षिणमार्ग में विद्यमान हैं। इस प्रकार नाग वीथि सूर्य मार्ग से उत्तरोत्तर मार्ग में, गज उत्तर-मध्य मार्ग में, ऐरावत उत्तर-दक्षिण मार्ग में, वृष मध्य-उत्तर मार्ग में, गो मध्य-मध्य मार्ग में, जरद्गव मध्य-दक्षिण मार्ग में, मृग दक्षिण-उत्तर मार्ग में, अज दक्षिण-मध्य मार्ग में और दहन दक्षिण-दक्षिण मार्ग में विद्यमान हैं।।४।।

वीथिमार्ग स्पष्टार्थ चक्रम्

वीथियाँ	नाग	गज	ऐरावत	वृष	गो	मरद्गव	मृग	अज	दहन
सूर्य मार्ग से उनकी दिशायें	उत्तर			मध्य			दक्षिण		
	उत्तर	मध्य	दक्षिण	उत्तर	मध्य	दक्षिण	उत्तर	मध्य	दक्षिण
	उत्तरोत्तर	उत्तर-मध्य	उत्तर-दक्षिण	मध्योत्तर	मध्य-मध्य	मध्य-दक्षिण	दक्षिणोत्तर	दक्षिण-मध्य	दक्षिण-दक्षिण

मतान्तर से मार्ग कथन

वीथीमार्गानपरे कथयन्ति यथास्थितान् भमार्गस्य ।
नक्षत्राणां तारा याम्योत्तरमध्यमास्तद्वत् ।।५।।

माया—किसी आचार्य के अनुसार नक्षत्रपथ (भचक्र) में जिस प्रकार वीथियों के पथ (मार्ग) अवस्थित हैं, उसी प्रकार दक्षिण, उत्तर और मध्य पथ का निर्णय उनके लिए करना चाहिए। क्योंकि उसी के समान नक्षत्रपथ के दक्षिण, उत्तर या मध्य में स्थित योगतारागण दक्षिण, उत्तर या मध्यमार्ग में स्थित होता है। अथवा नक्षत्रमार्ग से दक्षिण भागस्थ ग्रह दक्षिण मार्ग स्थित, उत्तर भागस्थ ग्रह उत्तर मार्ग स्थित और मध्यभागस्थ ग्रह मध्य मार्ग स्थित होता है।।५।।

पुनः मतान्तर से मार्ग कथन

उत्तरमार्गो याम्यादि निगदितो मध्यमस्तु भाग्याद्यः ।
दक्षिणमार्गोऽषाढादि कैश्चिदेवं कृता मार्गाः ।।६।।

माया—किसी के मत में नक्षत्र मार्ग का निर्धारण इस प्रकार से करना चाहिए— उत्तर मार्ग में भरणी आदि भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा और मघा ये नौ नक्षत्र; मध्यमार्ग में पूर्वाफाल्गुनी आदि जैसे पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल; ये नौ नक्षत्र तथा दक्षिण मार्ग में पूर्वाषाढ़ा आदि जैसे पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती और अश्विनी, ये नौ नक्षत्र स्थित हैं।।६।।

मतान्तर को व्यक्त करने का प्रयोजन कथन

ज्यौतिषमागमशास्त्रं विप्रतिपत्तौ न योग्यमस्माकम् ।
स्वयमेव विकल्पयितुं किन्तु बहूनां मतं वक्ष्ये ।।७।।

माया—ज्यौतिषशास्त्र ग्रह नक्षत्र पर आधारित आगम शास्त्र है, इसे आगम के विना नहीं जाना जा सकता। इसलिए ही इसमें सन्देह करना कि यह ठीक है, यह ठीक नहीं है, उचित नहीं समझता; क्योंकि सभी ऋषि-मुनि जन त्रिकालदर्शी थे। पता नहीं कि किसका क्या और कैसा आगम है। हम सबके लिए वे पूजनीय हैं। अत: अनेक मतों का संग्रह करके यहाँ प्रस्तुत करते हैं।।७।।

उत्तरादि वीथि गत शुक्र फल कथन

उत्तरवीथिषु शुक्रः सुभिक्षशिवकृद् गतोऽस्तमुदयं वा ।
मध्यासु मध्यफलदः कष्टफलो दक्षिणस्थासु ।।८।।

माया—अपने उदय या अस्त के समय शुक्र यदि उत्तर वीथि में स्थित हो, तो

सुभिक्ष और सबका कल्याण करने वाला होता है। वह यदि मध्य वीथि में स्थित हो, तो मध्यम फल करने वाला होता है तथा दक्षिण वीथि में स्थित होकर कष्टप्रद होता है॥८॥

वीथिगत शुक्र का विशेष फल कथन

अत्युत्तमोत्तमोनं सममध्यन्यूनमधमकष्टफलम्।
कष्टतरं सौम्याद्यासु वीथिषु यथाक्रमं ब्रूयात्॥९॥

माया—यदि शुक्र नाग आदि नौ वीथियों में स्थित हो, तो क्रम से अत्युत्तम, उत्तम, ऊन (उत्तम से कुछ कम), सम, मध्यम, न्यून (अल्प शुभ), अधम, कष्ट तथा कष्टतम फल प्रदान करता है। तात्पर्य यह है कि शुक्र यदि नाग वीथि में हो, तो अत्युत्तम, गज वीथि में उत्तम, ऐरावत वीथि में ऊन, वृष वीथि में सम, गो वीथि में मध्यम, जरद्गव वीथि में न्यून, मृगवीथि में अधम, अज वीथि में कष्ट तथा दहन वीथि में कष्टतम फल प्रदान करता है॥९॥

षड् मण्डलों में से प्रथम मण्डल का लक्षण तथा तद्गत शुक्र का फल कथन

भरणीपूर्वं मण्डलमृक्षचतुष्कं सुभिक्षकरमाद्यम्।
वङ्गाङ्गमहिषबाह्लिककलिङ्गदेशेषु भयजननम्॥१०॥
अत्रोदितमारोहेद् ग्रहोऽपरो यदि सितं ततो हन्यात्।
भद्राश्वशूरसेनकयौधेयककोटिवर्षनृपान्॥११॥

माया—भरणी आदि जैसे भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा पर्यन्त चार नक्षत्रों का प्रथम मण्डल और उसमें शुक्र के उदय या अस्त होने से सुभिक्ष करने वाला तो होता है, परन्तु बङ्ग, अङ्ग, महिष, वाह्लीक, कलिङ्ग आदि देशों में भय भी उत्पन्न करता है।

इसी मण्डल में शुक्र का उदय हो और यदि कोई ग्रह उसके ऊपर अर्थात् आगे स्थित हो, तो भद्राश्व, शूरसेनक, यौधेयक और कोटिवर्ष देशों के राजाजनों का नाश करने वाला होता है॥१०-११॥

द्वितीय मण्डल का लक्षण तथा तद्गत शुक्रफल कथन

भचतुष्टयमार्द्राद्यं द्वितीयममिताम्बुसस्यसम्पत्त्यै।
विप्राणामशुभकरं विशेषतः क्रूरचेष्टानाम्॥१२॥
अन्येनात्राक्रान्ते म्लेच्छाटविकश्वजीविगोमन्तान्।
गोनर्दनीचशूद्रान् वैदेहांश्चानयः स्पृशति॥१३॥

माया—आर्द्रा आदि जैसे आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और श्लेषा पर्यन्त चार नक्षत्रों का द्वितीय मण्डल और उसमें शुक्र के उदय या अस्त होने से बहुत अधिक ज़ल बरसता

है, धान्यों और सम्पत्तियों की अभिवृद्धि होती है तथा ब्राह्मणों के लिए अशुभकर होता है, विशेषकर दुष्टों की भारी हानि होती है।

इसी मण्डल में उदित शुक्र यदि अन्य किसी ग्रह से पीड़ित हो, तो म्लेच्छ जाति के लोगों, वनवासीजनों, कुत्ता के सहयोग से जीवन निर्वाह का उपाय करने वालों, गोपालकों, गोनर्द भूमि में वास करने वाले, अधमजनों, शूद्रों, मैथिलों आदि को अनय (अनीति) स्पर्श करती है अर्थात् ये सभी जन उपद्रवों से ग्रस्त होते है॥१२-१३॥

तृतीय मण्डल का लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन

विचरन् मघादिपञ्चकमुदितः सस्यप्रणाशकृच्छुक्रः ।
क्षुत्तस्करभयजननो नीचोन्नतिसङ्करकरश्च ॥१४॥
पित्र्याद्येऽवष्टब्धो हन्त्यन्येनाविकान् शबरशूद्रान् ।
पुण्ड्रापरान्त्यशूलिकवनवासिद्रविडसामुद्रान् ॥१५॥

भाषा—मघा आदि जैसे मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्रा पर्यन्त पाँच नक्षत्रों का तृतीय मण्डल और उसमें शुक्र के उदय लेकर विचरन करने से धान्य नाश, भूख पीड़ा, चोरों का भय उत्पन्न होता है, परन्तु नीचजनों की उन्नति तथा वर्ण संकरों को उत्पन्न करता है।

इसी मण्डल में उदय लेकर शुक्र यदि अन्य मिसी ग्रह से रुद्ध या पीड़ित हो, तो पेड़-पौधों के साथ शबर, शूद्र, पुण्ड्र आदि जातियों, पश्चिम देश, शूलिक देश आदि के वासीजनों, वनवासियों, द्रविड़ों तथा समुद्र तट पर निवास करने वाले जनों आदि की हानि करता है॥१४-१५॥

चतुर्थ मण्डल गत लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन

स्वात्याद्यं भत्रितयं मण्डलमेतच्चतुर्थमभयकरम् ।
ब्रह्मक्षत्रसुभिक्षाभिवृद्धये मित्रभेदाय ॥१६॥
अत्राक्रान्ते मृत्युः किरातभर्तुः पिनष्टि चेक्ष्वाकून् ।
प्रत्यन्तावन्तिपुलिन्दतङ्गणान् शूरसेनांश्च ॥१७॥

भाषा—स्वाती आदि जैसे स्वाती, विशाखा और अनुराधा पर्यन्त तीन नक्षत्रों का चतुर्थ मण्डल और उसमें शुक्र के उदय होकर विचरण करने से जनों में निडरता आती है। ब्राह्मणों व क्षत्रियों को सुभिक्ष जैसी अनुभूति और विकास करने का अवसर सुलभ होता है लेकिन उस समय मित्रता भङ्ग हो जाती है।

यदि यहाँ स्थित शुक्र किसी अन्य ग्रह से पीड़ित हो, तो किरात जाति के लोगों के स्वामी की मृत्यु होती है। साथ ही इक्ष्वाकू वंश के लोगों, प्रत्यन्त, अवन्ती, पुलिन्द,

तङ्गण और शूरशेन देश में निवास करने वाले लोगों को भी नाश करने वाला होता है॥१६-१७॥

पञ्चममण्डलगत लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन

ज्येष्ठाद्यं पञ्चर्क्षं क्षुत्तस्कररोगदं प्रबाधयते।
काश्मीराश्मकमत्स्यान् सचारुदेवीनवन्तींश्च ॥१८॥
अत्रारोहेद् द्रविडाभीराम्बष्ठत्रिगर्तसौराष्ट्रान्।
नाशयति सिन्धुसौवीरकांश्च काशीश्वरस्य वधः ॥१९॥

माया—ज्येष्ठा आदि जैसे ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और श्रवण पर्यन्त पाँच नक्षत्रों का पञ्चम मण्डल, जिसमें शुक्र के उदय या अस्त होने पर जनगणों में भूख-पीड़ा, चोर व रोग भय होता है। एवं काश्मीर, अश्मक, मत्स्य, चास देवी नामक नदी के किनारे और अवन्ती देश में निवास करने वाले जनगणों को भी पीड़ित करता है।

इसी मण्डल में स्थित शुक्र, यदि किसी अन्य ग्रह से आक्रान्त हो, तो द्रविड़, आभीर, अम्बष्ठ, त्रिगर्त, सौराष्ट्र, सिन्धु, सौवीर आदि देशों में निवास करने वाले जनों और काशी नरेश की मृत्यु होती है॥१८-१९॥

षष्ठम मण्डलगत लक्षण तथा तद्गत शुक्र फल कथन

षष्ठं षण्नक्षत्रं शुभमेतन्मण्डलं धनिष्ठाद्यम्।
भूरिधनगोकुलाकुलमनल्पधान्यं क्वचित् सभयम् ॥२०॥
अत्रारोहेच्छूलिकगान्धारावन्तयः प्रपीड्यन्ते।
वैदेहवधः प्रत्यन्तयवनशकदासपरिवृद्धिः ॥२१॥

माया—धनिष्ठा आदि जैसे धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती और अश्विनी छः नक्षत्रों का षष्ठम मण्डल और जिसमें शुक्र का उदय या अस्त होने से शुभकारक होता है। लोगों के पास अत्यधिक धन संगृहित हो जाता है। गायें भी दूध आदि देने वाली होती हैं। धान्यों से पृथ्वी भरा-पड़ा रहता है लेकिन कहीं-कहीं भय का वातावरण भी उत्पन्न होता है।

इसी मण्डल में स्थित शुक्र किसी अन्य ग्रह से आक्रान्त हो, तो शूलिक, गान्धार, अवन्ती आदि देशों के जनगण पीड़ित होते हैं। इसमें मैथिलों का नाश होने के साथ गह्वरों में निवास करने वालों, यवन, शक और दासों की अभिवृद्धि होती है॥२०-२१॥

मण्डलों के विशिष्ट फल कथन

अपरस्यां स्वात्याद्यं ज्येष्ठाद्यं चापि मण्डलं शुभदम्।
पित्र्याद्यं पूर्वस्यां शेषाणि यथोक्तफलदानि ॥२२॥

भाषा—उपरोक्त षन्मण्डलों में से स्वाती आदि और ज्येष्ठा आदि नक्षत्रों वाले क्रम से चतुर्थ व पञ्चम मण्डलस्थ शुक्र पश्चिम देशीय जनों के लिए शुभदायक होता है। मघा आदि नक्षत्रों वाले तृतीय मण्डल पूर्वदिशा के जनगणों के लिए शुभदायक होता है। अवशिष्ट प्रथम, द्वितीय व षष्ठ मण्डलों का उपरोक्त के समान ही फल जानना चाहिए।।२२।।

दिवा दृष्ट शुक्र का विशिष्ट फल

दृष्टोऽनस्तमितेऽर्के भयकृत् क्षुद्रोगकृत्समस्तमहः ।
अर्द्धदिवसे च सेन्दुर्नृपबलपुरभेदकृच्छुक्रः ।।२३।।

भाषा—सूर्यास्त के पूर्व शुक्र का दिखलाई देना भय उत्पन्न करने वाला होता है। सम्पूर्ण दिन (सूर्योदय से सूर्यास्त पर्यन्त) शुक्र के दीखने पर वह क्षुधा और रोग से पीड़ाकारक होता है। शुक्र मध्याह्न काल में चन्द्र के साथ दीखने पर राजा, सेना और नगर में विभेद उत्पन्न करता है।।२३।।

शुक्र का कृत्तिका नक्षत्र भेदन फल कथन

भिन्दन् गतोऽनलर्क्षं कूलातिक्रान्तवारिवाहाभिः ।
अव्यक्ततुङ्गनिम्ना समा सरिद्भिर्भवति धात्री ।।२४।।

भाषा—गमन करता हुआ शुक्र यदि कृत्तिका नक्षत्र का भेदन करें, तो अपने तटों के ध्वस्त करने में सक्षम जलपूर्ण नदियों से पृथ्वी के ऊँचे-नीचे वाले स्थल भी समतल हो जाता है, कहने का तात्पर्य यह है कि उस समय नदियों में बाढ़ के आ जाने से पृथ्वी समतल दीखने लगती है।।२४।।

शुक्र का रोहिणी शकट भेदन फल कथन

प्राजापत्ये शकटे भिन्ने कृत्वेव पातकं वसुधा ।
केशास्थिशकलशबला कापालमिव व्रतं धत्ते ।।२५।।

भाषा—गमनशील शुक्र द्वारा रोहिणी शकट का भेदन करने पर पृथ्वी ब्रह्महत्या करने वालों की तरह केशों और अस्थिखण्डों से शुक्ल व कृष्ण दोनों मिश्रित दीखती हुई कापालिक के समान व्रत धारण कर लेती है। जिस प्रकार ब्रह्महत्या जन्य पातक से मुक्ति हेतु मनुष्य धर्मशास्त्रादेश से बालों और अस्थि खण्डों को धारण कर कापालिकों का रूप ग्रहण करता है, उसी प्रकार बालों व अस्थि खण्डों से पटी हुई पृथ्वी कापालिक के समान दीखने लगती है, तात्पर्य यह कि उस समय पृथ्वी पर महामारी फैल जाती है।।२५।।

मृगशिर व आर्द्रा नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन

सौम्योपगतो रससस्यसंक्षयायोशनाः समुद्दिष्टः ।
आर्द्रागतस्तु कोशलकलिङ्गहा सलिलनिकरकरः ।।२६।।

माया—गमनशील शुक्र द्वारा मृगशिरा नक्षत्र का भेदन करने से पृथ्वी पर उपलब्ध मधुरादि रसों और धान्यों की हानि होती है।

आर्द्रा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से कोसल और कलिङ्ग प्रदेश के निवासियों का नाश तथा अतिवृष्टि भी होती है॥२६॥

पुनर्वसु व पुष्य नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन

अश्मकवैदर्भाणां पुनर्वसुस्थे सिते महाननयः।
पुष्ये पुष्टा वृष्टिर्विद्याधररणविमर्दश्च ॥२७॥

माया—पुनर्वसु नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से अश्मक और विदर्भ प्रदेशों में उपद्रव होता है।

पुष्य नक्षत्रस्थ होकर शुक्र के गमन करने पर अतिवृष्टि तथा विद्याधरों के युद्ध में विमर्द होता है॥२७॥

श्लेषा व मघा नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन

आश्लेषासु भुजङ्गमदारुणपीडावहश्चरन् शुक्रः।
भिन्दन् मघां महामात्रदोषकृद् भूरिवृष्टिकरः ॥२८॥

माया—शुक्र के श्लेषा नक्षत्र में गमन करने पर जनगणों को सर्पों से अत्यधिक पीड़ा मिलती है।

शुक्र के मघा नक्षत्र को भेदन कर गमन करने से हस्ति साधक पतियों को पीड़ा पहुँचती है और प्रचुर वृष्टि भी होती है॥२८॥

पूर्वोत्तराफाल्गुनी नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन

भाग्ये शबरपुलिन्दप्रध्वंसकरोऽम्बुनिवहमोक्षाय।
आर्यम्णे कुरुजाङ्गलपाञ्चालघ्नः सलिलदायी ॥२९॥

माया—पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र को भेदते हुए गमनशील शुक्र शबर, पुलिन्द आदि जनगणों का नाश करने वाला और अति वृष्टिकारक होता है।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र को भेदते हुए गमन करता शुक्र कुरु प्रदेश, जाङ्गल प्रदेश और पाञ्चाल प्रदेश के जनगणों का नाशक और वृष्टिकारक होता है॥२९॥

हस्त व चित्र नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन

कौरवचित्रकराणां हस्ते पीडा जलस्य च निरोधः।
कूपकृदण्डजपीडा चित्रास्थे शोभना वृष्टिः ॥३०॥

माया—शुक्र हस्त नक्षत्र में गमन करता हुआ कौरवों और चित्रकारों को पीड़ा पहुँचाता है और अनावृष्टि के कारण को उत्पन्न करता है।

शुक्र चित्रा नक्षत्र में गमन करता हुआ कूप खनन करने वालों और अण्डजों अर्थात् पक्षियों को पीड़ित करता है, परन्तु सुवृष्टि करने वाला होता है॥३०॥

स्वाती व विशाखा नक्षत्र भेदन शुक्रफल कथन

स्वातौ प्रभूतवृष्टिर्दूतवणिग्नाविकान् स्पृशत्यनयः ।
ऐन्द्राग्नेऽपि सुवृष्टिर्वणिजां च भयं विजानीयात् ।।३१।।

माया—स्वाती नक्षत्र में गमनशील शुक्र अतिवृष्टिकारक तथा दूतों, व्यापारियों, नाविकों (मल्लाहों) आदि के मध्य उपद्रव होता है।

विशाखा नक्षत्र में गमनशील शुक्र सुवृष्टि करने वाला तथा व्यापारियों में भय उत्पन्न करने वाला भी होता है॥३१॥

अनुराधा, ज्येष्ठा व मूल नक्षत्र भेदन शुक्र फल कथन

मैत्रे क्षत्रविरोधो ज्येष्ठायां क्षत्रमुख्यसन्तापः ।
मौलिकभिषजां मूले त्रिष्वपि चैतेष्वनावृष्टिः ।।३२।।

माया—शुक्र अनुराधा नक्षत्र में गमन करता हुआ क्षत्रियों में आपसी द्वेष उत्पन्न करता है, ज्येष्ठा में क्षत्रिय समाज के प्रधान जनों को सन्ताप देता है तथा मूल में वैद्यों या चिकित्सकों को हानि भी पहुँचाता है। एवं शुक्र अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रों में जितने काल तक गमन करता है, उतने कालतक अनावृष्टि के कारण को उत्पन्न करता है॥३२॥

पूर्वोत्तराषाढ़, श्रवण व धनिष्ठा नक्षत्रगत शुक्र फल कथन

आप्ये सलिलजपीडा विश्वेशे व्याधयः प्रकुप्यन्ति ।
श्रवणे श्रवणव्याधिः पाखण्डिभयं धनिष्ठासु ।।३३।।

माया—पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रस्थ शुक्र जलोत्पन्न वस्तुओं व जीवों को पीड़ित करने वाला, उत्तराषाढ़ा नक्षत्रस्थ शुक्र व्याधि की पीड़ा में वृद्धि करने वाला, श्रवण नक्षत्र में कान का रोग उत्पन्न करने वाला तथा धनिष्ठा में पाखण्डियों को भय उत्पन्न करने वाला होता है॥३३॥

शतभिषा व पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्रगत शुक्र फल कथन

शतभिषजि शौण्डिकानामजैकभे द्यूतजीविनां पीडाम् ।
कुरुपाञ्चालानामपि करोति चास्मिन् सितः सलिलम् ।।३४।।

माया—शतभिषा नक्षत्रस्थ शुक्र मद्य बेचने व पीने वालों को पीड़ा देने वाला तथा पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में शुक्र द्यूतक्रीड़ा करने वालों अर्थात् जुआरियों को, कुरु प्रदेश, पंजाब प्रदेश आदि के जनगणों को भी पीड़ित करने वाला और वृष्टिकर होता है॥३४॥

उत्तरभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी तथा भरणी नक्षत्रगत शुक्रफल कथन

आहिर्बुघ्न्ये फलमूलतापकृद्यायिनां च रेवत्याम्।
अश्विन्यां हयपानां याम्ये तु किरातयवनानाम् ।।३५।।

माया—उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र में रहने पर शुक्र फल-फूल और मूलों को; रेवती में यात्रियों को; अश्विनी में घोड़ा पालन करने वालों को तथा भरणी नक्षत्र में किरात, यवन आदि को पीड़ा पहुँचाने वाला होता है।।३५।।

तिथिवश शुक्र का उदयास्त फल कथन

चतुर्दशीं पञ्चदशीं तथाष्टमीं तमिस्रपक्षस्य तिथिं भृगोः सुतः।
यदा व्रजेद् दर्शनमस्तमेति वा तदा मही वारिमयीव लक्ष्यते ।।३६।।

माया—अमावास्या व कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तथा अष्टमी तिथियों में शुक्र के उदय या अस्त होने पर पृथ्वी जल से उत्प्लावित परिलक्षित होती है।।३६।।

गुरु व शुक्र के सम सप्तक का फल कथन

गुरुर्भृगुश्चापरपूर्वकाष्ठयोः परस्परं सप्तमराशिगौ यदा।
तदा प्रजा रुग्भयशोकपीडिता न वारि पश्यन्ति पुरन्दरोज्झितम् ।।३७।।

माया—जब गुरु और शुक्र परस्पर एक-दूसरे से सातवीं राशि में स्थित हो, तब जनगण रोग और भय के कारण अनेक तरह से पीड़ित होते हैं तथा उन्हें अनावृष्टि का भी सामना करना पड़ता है।।३७।।

शुक्र के अग्रस्थित सर्वग्रह फल कथन

यदा स्थिता जीवबुधारसूर्यजाः सितस्य सर्वेऽग्रपथानुवर्तिनः।
नृनागविद्याधरसङ्गरास्तदा भवन्ति वाताश्च समुच्छ्रितान्तकाः ।।३८।।
न मित्रभावे सुहृदो व्यवस्थिताः क्रियासु सम्यग् न रता द्विजातयः।
न चाल्पमप्यम्बु ददाति वासवो भिनत्ति वज्रेण शिरांसि भूभृताम् ।।३९।।

माया—यदि शुक्र के अग्रभाग में गुरु, मंगल, बुध और शनि स्थित होकर मार्ग का अनुसरण करता हो, तो मानव, नाग व विद्याधरों के मध्य युद्ध, तीव्र वायु वेग से पर्वतों पर स्थित वृक्ष आदि की हानि, मित्रों में सुहृदभावों का अभाव अर्थात् द्वेष, द्विजजनों में सदाचरण का अभाव, अल्पवृष्टि का भी अभाव तथा वज्र से पर्वतों-पहाड़ों का नाश करने वाला होता है।।३८-३९।।

शुक्र के अग्रस्थ शनि फल कथन

शनैश्चरे म्लेच्छविडालकुञ्जराः खरा महिष्योऽसितधान्यशूकराः।
पुलिन्दशूद्राश्च सदक्षिणापथाः क्षयं व्रजन्त्यक्षिमरुद्गदोद्भवैः ।।४०।।

माया—शुक्र के अग्रभाग में स्थित होकर शनि के गमन करने पर म्लेच्छ जातियों के लोगों, बिलाव, हाथी, गधा, भैंस, काले वर्ण के धान्य, सूकर, पुलिन्द (निषाद जाति) जनों, शूद्रों तथा दक्षिण दिशा में निवास करने वाले जनों को नेत्ररोग और वायु विकार से गम्भीर हानि उठानी पड़ती है।।४०।।

शुक्र के अग्रस्थित मङ्गल फल कथन

निहन्ति शुक्रः क्षितिजेऽग्रतः प्रजां हुताशशस्त्रक्षुदवृष्टितस्करैः ।
चराचरं व्यक्तमथोत्तरापथं दिशोऽग्निविद्युद्रजसा च पीडयेत् ।।४१।।

माया—शुक्र के अग्रभाग में स्थित होकर मंगल के विचरण करने पर अग्नि, शस्त्र, दुर्भिक्ष, अनावृष्टि, चोर आदि से जनगण और उत्तरदिशा में स्थित जङ्गम व स्थावर जीव तथा अग्नि, विद्युत व धूलि से दिशायें पीड़ित होती हैं।।४१।।

शुक्र के अग्रस्थित गुरु फल कथन

बृहस्पतौ हन्ति पुरःस्थिते सितःसितं समस्तं द्विजगोसुरालयान् ।
दिशं च पूर्वां करकासृजोऽम्बुदा गले गदा भूरि भवेच्च शारदम् ।।४२।।

माया—शुक्र के आगे गुरु के विचरण करने पर श्वेत वस्तु, द्विज, गाय, देवालय तथा पूर्व दिशा में निवास करने वाले जन आदि का नाश करने वाला होता है, बादल से ओलों की वृष्टि होती है, जनगणों के गलाओं में रोग होता है तथा शारदीय धान्य की उत्पत्ति अधिक होती है।।४२।।

शुक्र अग्रस्थित बुध फल कथन

सौम्योऽस्तोदययोः पुरो भृगुसुतस्यावस्थितस्तोयकृद्
रोगान् पित्तजकामलांश्च कुरुते पुष्णाति च ग्रैष्मिकान् ।
हन्यात् प्रव्रजिताग्निहोत्रिकभिषग्रङ्गोपजीव्यान् हयान्
वैश्यान् गाः सह वाहनैर्नरपतीन् पीतानि पश्चाद्दिशम् ।।४३।।

माया—शुक्र के अग्रभाग में स्थित होकर बुध के विचरण करने पर वर्षा होती है, जनगणों को पित्तज व कामला (पीलिया) रोग ग्रसित कर लेता है, परन्तु ग्रीष्मकालीन धान्य की उत्पत्ति होती है। वन में निवास करने वाले जन, अग्निहोत्र कर्म सम्पादन करने वाले जन, चिकित्सक, योद्धा, घोड़ा, वैश्य, गौ, वाहन, राजा, पीले वर्ण के सभी चीजें तथा पश्चिम दिशा में निवास करने वाले जन आदि को विनष्ट करने वाला होता है।।४३।।

शुक्र बिम्ब का सफल कथन

शिखिभयमनलाभे शस्त्रकोपश्च रक्ते
कनकनिकषगौरे व्याधयो दैत्यपूज्ये ।

हरितकपिलरूपे श्वासकासप्रकोपः
पतति न सलिलं खाद् भस्मरूक्षासिताभे ।।४४।।

माया—शुक्र का वर्ण अग्नि के सदृश होने पर अग्निभय होता है। लालवर्ण का होने पर शस्त्रकोप (युद्ध), कसौटी से घिसा हुआ स्वर्ण वर्ण सदृश होने से जनगणों में रोग व्याप्त, शुक्र वर्ण या पीतवर्ण का होने पर श्वास-कास रोग का प्रकोप, भस्म वर्ण या रूक्षवर्ण या काला वर्ण होने पर अवर्षण होता है।।४४।।

पुनः शुक्र के वर्ण का सफल कथन

दधिकुमुदशशाङ्ककान्तिभृत् स्फुटविकसत्किरणौ बृहत्तनुः ।
सुगतिरविकृतो जयान्वितः कृतयुगरूपकरः सिताह्वयः ।।४५।।

माया—शुक्र बिम्ब दही, कुमुद पुष्प या चन्द्र सदृश आभा वाला या स्पष्ट विकसित किरणों वाला, विशाल मूर्त्ति, सुमार्गी गति, विकार रहित, ग्रहों से विजयी आदि दीखता हो, तो जनगणों को सत्ययुग के समान रोग, दरिद्रता, कोप व शोक; इन सभी दुःखों से मुक्त करता है।।४५।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शुक्रचाराध्यायोः नवमः ।।९।।

□□□

अथ दशमोऽध्यायः-१०

शनैश्चरचार विचारः

नक्षत्र स्थित शनिचार फल कथन

श्रवणानिलहस्तार्द्राभरणीभाग्योपगः सुतोऽर्कस्य ।
प्रचुरसलिलोपगूढां करोति धात्रीं यदि स्निग्धः ।।१।।
अहिवरुणपुरन्दरदैवतेषु सुक्षेमकृन्न चाति जलम् ।
क्षुच्छस्त्रावृष्टिकरो मूले प्रत्येकमपि वक्ष्ये ।।२।।

माया—श्रवण, स्वाती, हस्त, आर्द्रा, भरणी या पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में रहकर शनि के विमल मूर्त्ति होने पर भूमि वृष्टि के जल से आप्लावित होती है। श्लेषा, शतभिषा अथवा ज्येष्ठा नक्षत्र में रहकर शनि सुन्दर और कल्याण करने वाला होता है तथा अल्प वृष्टिकारक भी होता है। एवं मूल नक्षत्र में स्थित शनि दुर्भिक्ष, शस्त्रभयप्रद और अवृष्टि करने वाला होता है। इस प्रकार से सारांश रूप में नक्षत्रस्थ शनि फल कहने के बाद अब प्रत्येक नक्षत्र में स्थित शनि का फल कहते हैं।।१-२।।

अश्विनी-भरणी नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

तुरगतुरगोपचारककविवैद्यामात्यहार्कजोऽश्विगतः ।
याम्ये नर्तकवादकगेयज्ञक्षुद्रनैकृतिकान् ।।३।।

माया—अश्विनी नक्षत्र में स्थित होकर शनि अश्व, अश्व का उपचारकजनों, कवियों वैद्यों, मन्त्रियों आदि को मारने वाला होता है।

भरणी नक्षत्र में स्थित होकर नर्तकों, वादकों, गायकों, क्षुद्रजनों और निषाद जाति के लोगों को भी मारने वाला होता है।।३।।

कृत्तिका-रोहिणी नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

बहुलास्थे पीड्यन्ते सौरेऽग्न्युपजीविनश्चमूपाश्च ।
रोहिण्यां कोशलमद्रकाशिपाञ्चालशाकटिकाः ।।४।।

माया—कृत्तिका नक्षत्र में स्थित शनि अग्नि कर्म से उपजीविका चलाने वालों और सेनापतियों को पीड़ित करने वाला होता है।

रोहिणी नक्षत्र में स्थित शनि कोशल, भद्र, काशी, पाञ्चाल आदि प्रदेशों में निवास करने वाले तथा बैलगाड़ी से जीवन निर्वाह करने वाले जनों को पीड़ित करता है।।४।।

मृगशिरा-आर्द्रा नक्षत्रस्थ शनिफल कथन

मृगशिरसि वत्सयाजकयजमानार्यजनमध्यदेशाश्च ।
रौद्रस्थे पारतरमठास्तैलिकरजकचौराश्च ।।५।।

माया—मृगशिर नक्षत्र में स्थित शनि वत्स नामक प्रदेश के निवासी जनों, याजकों, यजमानों, भद्र पुरुषों तथा मध्यदेश के निवासी जनों को पीड़ित करता है।

पुनर्वसु-पुष्य नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

आदित्ये पाञ्चनदप्रत्यन्तसुराष्ट्रसिन्धुसौवीराः ।
पुष्ये घाण्टिकघौषिकयवनवणिक्कितवकुसुमानि ।।६।।

माया—पुनर्वसु नक्षत्र में स्थित शनि पाञ्चनद (पंजाब) प्रदेश के निवासी, गहवरों (गुफाओं) में रहने वाले, सुराष्ट्रवासी, सिन्धु नदी के तट पर निवास करने वाले तथा सौवीर प्रदेश में स्थित जनों को पीड़ित करता है।

पुष्य नक्षत्र में स्थित शनि घाण्टिक अर्थात् घण्टा बनाने या बेचने या बजाने वाले जनों, घौषिक अर्थात् उद्घोषक या गह्वर में रहने वाले, यवनों, व्यापारियों, किरातों, ठगों और पुष्पों को हानि पहुँचाता है।।६।।

श्लेषा-मघा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

सार्पे जलरुहसर्पाः पित्र्ये बाह्लीकचीनगान्धाराः ।
शूलिकपारतवैश्याः कोष्ठागाराणि वणिजश्च ।।७।।

माया—श्लेषा नक्षत्र में स्थित शनि जल में उत्पन्न प्राणियों या द्रव्यों तथा सर्पों को हानि पहुँचाने वाला होता है।

मघा नक्षत्र में स्थित शनि वाह्लीक, चीन, गान्धार, शूलिक तथा पारत देशों में निवास करने वाले जनों, वैश्यों, कोष्ठागारों और वणिकों को सम्पीड़ित करता है।।७।।

पूर्वोत्तरफाल्गुनी नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

भाग्ये रसविक्रयिणः पण्यस्त्रीकन्यकामहाराष्ट्राः ।
आर्यम्णे नृपगुडलवणभिक्षुकाम्बूनि तक्षशिला ।।८।।

माया—पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में स्थित शनि मधुरादि षड्रसों के विक्रय करने वाले, वेश्याओं, कुमारी लड़कियों तथा महाराष्ट्र प्रदेश वासी जनों को पीड़ित करता है।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में विचरणशील शनि राजाजनों, गुड़, नमक, भिक्षुकों, जल तथा तक्षशिला नाम के स्थान की हानि करता है।।८।।

हस्त नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

हस्ते नापितचाक्रिकचौरभिषक्सूचिका द्विपग्राहाः ।
बन्धक्यः कौशलका मालाकाराश्च पीड्यन्ते ।।९।।

माया—हस्त नक्षत्र में विद्यमान शनि, नाई, कुम्हार या तेली, चोर, वैद्य, शिल्पी, हाथियों को फाँसने वाले जनों, वेश्या स्त्रियों, कोशल प्रदेशवासी तथा माला बनाने वाले जनों को भी पीड़ा देता है।।९।।

चित्रा-स्वाती नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

चित्रास्थे प्रमदाजनलेखकचित्रज्ञचित्रभाण्डानि ।
स्वातौ मागधचरदूतसूतपोतप्लवनटाद्याः ।।१०।।

माया—चित्रा नक्षत्र में अवस्थित शनि स्त्रीजनगणों, लेखकों, (लिपिज्ञों), चित्रज्ञों (चित्र कर्म के जानकारों), बहुवर्ण भाण्डों आदि को पीड़ित करने वाला होता है।

स्वाती नक्षत्र गत शनि द्वारा यश-कीर्त्ति का बखान करने वाले या मगध प्रदेश में निवास करने वाले जनों, गुप्तचर (रहस्य खोलने वाले जनों), दूत, सूत अर्थात् सारथी, पोत चालक, नट अर्थात् नाचने वालों आदि को पीड़ा पहुँचाया जाता है।।१०।।

विशाखास्थ शनैश्चर फल कथन

ऐन्द्राग्नाख्ये त्रैगर्तचीनकौलूतकुङ्कुमं लाक्षा ।
सस्यान्यथ माञ्जिष्ठं कौसुम्भं च क्षयं याति ।।११।।

माया—विशाखा नक्षत्र गत शनि त्रिगर्त, चीन, कुलूत आदि देश के जनगणों, कुङ्कुम, लाख, धान्य, मंजीठ और कौसुम्भ पुष्पों का क्षय करता है।।११।।

अनुराधा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

मैत्रे कुलूततङ्गणखसकाश्मीराः समन्त्रिचक्रचराः ।
उपतापं यान्ति च घाण्टिका विभेदश्च मित्राणाम् ।।१२।।

माया—अनुराधा नक्षत्र में विद्यमान शनि कुलूत, तङ्गण, खस (नेपाल), काश्मीर आदि प्रान्तों में स्थित जनों, मन्त्रियों के साथ कुम्भकार तेली, घण्टा बनाने या बजाने वाले आदि को उपतापित करता है और मित्रों के मध्य द्वेष उत्पन्न करता है।।१२।।

ज्येष्ठा-मूल नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

ज्येष्ठासु नृपपुरोहितनृपसत्कृतशूरगणकुलश्रेण्यः ।
मूले तु काशिकोशलपाञ्चालफलौषधीयोधाः ।।१३।।

माया—ज्येष्ठा नक्षत्रगत शनि, राजाजनों, पुरोहितों, राजाओं से सम्मानित जनों, शूरों, गणजनों (वैरागियों), मुख्य कुलों के जनों, समान जाति के जनगणों आदि को पीड़ित करता है।

मूल नक्षत्र में स्थित शनि काशी, कोशल, पंजाब आदि प्रान्तों के निवासी जनों, फलों, औषधियों और योद्धाओं; इन सब को पीड़ित करने वाला होता है।।१३।।

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

आप्येऽङ्गवङ्गकौशलगिरिव्रजा मगधपुण्ड्रमिथिलाश्च ।
उपतापं यान्ति जना वसन्ति ये ताम्रलिप्त्यां च ।।१४।।

माया—पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में बैठा हुआ शनि अङ्ग, बङ्ग, कौशल, गिरिव्रज, मगध, पुण्ड्र, मिथिला, ताम्रलिपी आदि प्रान्त में निवास करने वाले जनगणों को उपतापित करता है।।१४।।

उत्तराषाढ़ा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

विश्वेश्वरेऽर्कपुत्रश्चरन् दशार्णान्निहन्ति यवनांश्च ।
उज्जयिनीं शबरान् पारियात्रिकान् कुन्तिभोजांश्च ।।१५।।

माया—उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में विद्यमान शनि दशार्ण प्रदेश में निवास करने वाले जनों, यवन लोगों, उज्जयिनी प्रान्तस्थ जनों, शबर जाति जनों, पारियात्र अर्थात् पर्वतों पर निवास करने वाले जनों तथा कुन्तिभोज नामक प्रान्त के जनों को उत्पीड़ित करता है।।१५।।

श्रवण व धनिष्ठा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

श्रवणे राजाधिकृतान् विप्राग्र्यभिषक्पुरोहितकलिङ्गान् ।
वसुभे मगधेशजयो वृद्धिश्च धनेष्वधिकृतानाम् ।।१६।।

श्रवण नक्षत्र में बैठकर शनि राज्याधिकारी जनों, मुख्य ब्राह्मण जनों, चिकित्सकों, पुरोहितों और कलिङ्ग प्रदेश के निवासी जनों को सम्पीड़ित करता है।

धनिष्ठा नक्षत्र में स्थित रहकर शनि मगधराज की विजय तथा कोषाधिकारी जनों की वृद्धि करने वाला होता है।।१६।।

शतभिषा-पूर्वोत्तराभाद्रपदा नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

साजे शतभिषजि भिषक्कविशौण्डिकपण्यनीतिवृत्तीनाम् ।
आहिर्बुध्न्ये नद्यो यानकरा: स्त्रीहिरण्यं च ।।१७।।

माया—शतभिषा नक्षत्र या पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में विद्यमान शनि वैद्यों, कवियों, शौण्डिकों (मद्य व्यापार करने वाले), वणियों, नीतिशास्त्र के विशेषज्ञों को पीड़ित करता है।

उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र में स्थित शनि नदी तट निवासियों, वाहन के अधिकारियों, स्त्रीजनों और स्वर्ण की भी हानि करने वाला होता है।।१७।।

रेवती नक्षत्रस्थ शनि फल कथन

रेवत्यां राजभृताः क्रौञ्चद्वीपाश्रिताः शरत्सस्यम् ।
शबराश्च निपीड्यन्ते यवनाश्च शनैश्चरे चरति ।।१८।।

माया—रेवती नक्षत्रगत शनि राज्याश्रितजनों, क्रौञ्च द्वीपाश्रित जनों, शारदीय धान्य, शबर जातिजनों और यवन लोगों को दु:ख देता है।।१८।।

विशाखास्थ गुरु व कृत्तिकास्थ शनि तथा दोनों का एकर्क्षगत फल कथन

यदा विशाखासु महेन्द्रमन्त्री सुतश्च भानोर्दहनर्क्षयातः ।
तदा प्रजानामनयोऽतिघोरः पुरप्रभेदो गतयोर्भमेकम्।।१९।।

माया—विशाखा नक्षत्रस्थ गुरु तथा कृत्तिका नक्षत्रस्थ शनि जनगणों में अति भयावह अनीति उत्पन्न करता है तथा वे दोनों ग्रह अर्थात् गुरु व शनि एक ही किसी नक्षत्र में विद्यमान हों, तो दो नगरों या राज्यों में द्वेष या भेद उत्पन्न करते हैं।।१९।।

शनि के विम्ब वर्णवश फल कथन

अण्डजहा रविजो यदि चित्रः क्षुद्भयकृद्यदि पीतमयूखः ।
शस्त्रभयाय च रक्तसवर्णो भस्मनिभो बहुवैरकरश्च ।।२०।।

माया—शनि बिम्ब के अनेक वर्ण के होने पर अण्डजों (पक्षियों) की हानि, उसके पीत वर्ण के होने पर दुर्भिक्ष, लाल वर्ण होने पर शस्त्रभय तथा भस्म के समान वर्ण होने पर जनगणों में परस्पर द्वेष उत्पन्न करने वाला होता है।।२०।।

पुनः विम्बवर्ण वश फल कथन

वैदूर्यकान्तिविमलः शुभकृत् प्रजानां
बाणातसीकुसुमवर्णनिभश्च शस्तः ।
यं चापि वर्णमुपगच्छति तत्सवर्णान्
सूर्यात्मजः क्षपयतीति मुनिप्रवादः ।।२१।।

माया—शनि बिम्ब के वर्ण वैदूर्य कान्ति (आभा) सदृश विमल होने पर जनगणों को शुभता प्रदान करने वाला और बाण या अतसी पुष्प सदृश नीलवर्ण आभा वाला होने पर भी शुभद होता है। एवं श्वेत वर्ण का बिम्ब होने पर ब्राह्मणों की, रक्त या लाल वर्ण का बिम्ब दीखने पर क्षत्रिय जनों की, पीतवर्ण का दीखने पर वैश्य जाति के लोगों की तथा कृष्ण वर्ण का शनि बिम्ब के दीखने पर शूद्र जाति के लोगों की हानि होती है, ऐसा पूर्व ऋषि-मुनियों ने कहा है।।२१।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शनैश्चरचाराऽध्यायोः दशमः।।१०।।

□□□

अथैकादशमोऽध्यायः-११

केतुचार विचारः

गर्गादि प्रोक्त केतुचार विषयक कथन

गार्गीयं शिखिचारं पाराशरमसितदेवलकृतं च ।
अन्यांश्च बहून् दृष्ट्वा क्रियतेऽयमनाकुलश्चारः ।।१।।

माया—गर्ग मुनि द्वारा कथित व पराशर महर्षि, असित, देवल आदि वर्णित तथा अन्यान्य आचार्यों द्वारा विवेचित केतुचार का अवलोकन कर यह अनाकुल अर्थात् सन्देह रहित केतुचार को प्रस्तुत करते हैं।।१।।

केतु के प्रकार व लक्षण कथन

दर्शनमस्तमयो वा न गणितविधिनास्य शक्यते ज्ञातुम् ।
दिव्यान्तरिक्षभौमास्त्रिविधाः स्युः केतवो यस्मात् ।।२।।

माया—केतुओं का उदय या अस्त गणितीय विधि से नहीं जाना जा सकता; क्योंकि दिव्य अर्थात् आकाश से उत्पन्न, अन्तरिक्ष अर्थात् ग्रह व नक्षत्र को छोड़कर अन्य स्थान पर आकाश में जो दीखते हैं तथा भौम अर्थात् भूमि (पृथ्वी) से उत्पन्न; इन तीन पृथक् स्थान के केतु होने से इसके तीन प्रकार होते हैं। इस प्रकार से उत्पात रूप होने से इनके उदय और अस्त का ज़ान नहीं होता है।।२।।

दिव्य से भिन्न केतुओं का स्वरूप कथन

अहुताशेऽनलरूपं यस्मिंस्तत्केतुरूपमेवोक्तम् ।
खद्योतपिशाचालयमणिरत्नादीन् परित्यज्य ।।३।।

माया—यदि अग्नि को छोड़कर जिस-किसी स्थान में अग्नि सदृश रूप देखा जाता हो, तो वही केतुओं का रूप कहा गया है। किन्तु खद्योत, पिशाचालय, मणि, रत्न आदि का भी त्याग करना चाहिए; क्योंकि इनके स्वरूप में भी अग्नि स्वरूप देखा जाता है। अत: इनका परित्याग कर अन्यत्र जो अग्नि के सदृश रूप अग्नि से भिन्न दीखता है, उसको केतु कहते हैं।।३।।

दिव्य-आन्तरिक्ष-भौमात्मक केतु लक्षण कथन

ध्वजशस्त्रभवनतरुतुरगकुञ्जराद्येष्वथान्तरिक्षास्ते ।
दिव्या नक्षत्रस्था भौमाः स्युरतोऽन्यथा शिखिनः ।।४।।

माया—ध्वज, शस्त्र, भवन, तरु, तुरग, कुञ्जर आदि में अग्नि के समान जो

रूप दीख पड़ते हैं, वे आन्तरक्षि केतु होते हैं। इसी तरह नक्षत्रों में जो रूप दीख पड़ते हैं, वे दिव्य केतु तथा जो अन्य स्थानों पर दीख पड़ते हैं, वे भौम केतु होते हैं।।४।।

मतान्तर से केतुओं की संख्या कथन

शतमेकाधिकमेके सहस्रमपरे वदन्ति केतूनाम् ।
बहुरूपमेकमेव प्राह मुनिर्नारदः केतुम् ।।५।।

माया—किसी ने एक सौ एक, दूसरे ने एक हजार तथा मुनि नारद ने बहुरूप वाला मात्र एक केतु कहा है।।५।।

मतान्तर कथन पश्चात् स्वमत प्रतिपादक कथन

यद्येको यदि बहवः किमनेन फलं तु सर्वथा वाच्यम् ।
उदयास्तमयैः स्थानैः स्पर्शैराधूमनैर्वर्णैः ।।६।।

माया—यदि एक या अनेक केतु हों, इससे मुझे कोई लेना देना नहीं, परन्तु केतु के उदय व अस्त की दिशा, स्थान, ग्रह व नक्षत्र से स्पर्श तथा अभिधूमित वर्ण जैसे शुक्ल, रक्त, पीत, कृष्ण आदि से उसका फल कथन मात्र मुझे करना है।।६।।

केतु के उदयास्त से फल विनिश्चयीकरणार्थ कथन

यावन्त्यहानि दृश्यो मासास्तावन्त एव फलपाकः ।
मासैरब्दांश्च वदेत् प्रथमात् पक्षत्रयात् परतः ।।७।।

माया—जितने दिन पर्यन्त केतु का दर्शन हो, उसके अस्त होने के तीन पक्ष पश्चात् उतने मास पर्यन्त तथा जितने मास पर्यन्त उसका दर्शन हो, उसके अस्त होने के तीन पक्ष पश्चात् उतने वर्ष पर्यन्त उसका फल होता है।।७।।

शुभ केतु लक्षण कथन

ह्रस्वस्तनुः प्रसन्नः स्निग्धस्त्वृजुरचिरसंस्थितः शुक्लः ।
उदितोऽथवाभिवृष्टः सुभिक्षसौख्यावहः केतुः ।।८।।

माया—इस प्रकार ह्रस्व, सूक्ष्म, प्रसन्न, स्निग्ध, सीधा, अल्पकाल में अस्त होने वाला, शुक्ल, जिसके उदय मात्र से वृष्टि हो, तो ऐसा केतु सुभिक्ष करने वाला और सुखकारक होता है।।८।।

अशुभ केतु के लक्षण और फल कथन

उक्तविपरीतरूपो न शुभकरो धूमकेतुरुत्पन्नः ।
इन्द्रायुधानुकारी विशेषतो द्वित्रिचूलो वा ।।९।।

माया—उपरोक्त के विपरीत रूप वाले केतु को धूमकेतु समझना चाहिए और

वह अशुभकारक भी होता है। इन्द्रधनुष के समान दीखने वाले केतु भी शुभप्रद नहीं होते, विशेष रूप से दो या तीन शिखा वाले केतु शुभफल नहीं ही प्रदान करने वाला होता है॥९॥

सूर्यपुत्र २५ केतुओं के लक्षण व फल कथन

हारमणिहेमरूपाः किरणाख्याः पञ्चविंशतिः सशिखाः ।
प्रागपरदिशोर्दृश्या नृपतिविरोधावहा रविजाः ॥१०॥

माया—एवं मुक्ताहार, मणि और स्वर्ण सदृश वर्ण वाला शिखा युक्त २५ प्रकार के केतु हैं। ये सूर्य पुत्र किरण नामक केतु पूर्व और पश्चिम दिशा में दृष्ट होते हैं। उक्त २५ केतुओं में से किसी एक का भी दर्शन हो, तो राजाजनों का आपस में द्वेष भाव उत्पन्न होता है॥१०॥

अग्निपुत्र २५ केतुओं के लक्षण व फल कथन

शुकदहनबन्धुजीवकलाक्षाक्षतजोपमा हुताशसुताः ।
आग्नेय्यां दृश्यन्ते तावन्तस्तेऽपि शिखिभयदाः ॥११॥

माया—तथा तोता, अग्नि, बन्धुजीवक (लोहित वर्ण), लाख या लाल वर्ण की कान्ति सदृश जो केतु दीखते हैं, वे अग्नि पुत्र हैं तथा संख्या में २५ हैं और अग्निकोण में दिखलाई पड़ते हैं। इन केतुओं के उदय होने से अग्निभय उत्पन्न होता है॥११॥

यमपुत्र २५ केतुओं के सलक्षण फल कथन

वक्रशिखा मृत्युसुता रूक्षाः कृष्णाश्च तेऽपि तावन्तः ।
दृश्यन्ते याम्यायां जनमरकावेदिनस्ते च ॥१२॥

माया—कुटिल (टेढ़ी) शिखा युक्त, रूखे, कृष्णवर्ण के समान दक्षिण दिशा में दीखने वाले यम के पुत्र २५ प्रकार के केतु हैं। इन केतुओं के उदय होने पर भूमण्डल पर महामारी होने से मरी पड़ती है॥१२॥

भूपुत्र बाईस प्रकार से केतु का सलक्षण फल कथन

दर्पणवृत्ताकारा विशिखाः किरणान्विता धरातनयाः ।
क्षुद्भयदा द्वाविंशतिरैशान्यामम्बुतैलनिभाः ॥१३॥

माया—गोलाकार, दर्पण सदृश, शिखा विहीन, किरणों के सहित सजल तेल के समान आभा वाले भूमि के पुत्र २२ प्रकार के केतु, जो पूर्वोत्तर दिशा में उदय लेकर दुर्भिक्ष का भय उत्पन्न करते हैं॥१३॥

चन्द्रपुत्र ३ प्रकार के केतु का सफल कथन

शशिकिरणरजतहिमकुमुदकुन्दकुसुमोपमाः सुताः शशिनः ।
उत्तरतो दृश्यन्ते त्रयः सुभिक्षावहाः शिखिनः ॥१४॥

माया—चन्द्ररश्मि, चाँदी, तुषार (बर्फ), कुमुद या कुन्द पुष्प विशेष सदृश अति शुक्लवर्ण के दीखने वाले चन्द्र पुत्र केतु के ३ प्रकार हैं, जो उत्तर दिशा में उदय लेते हैं और अपना दर्शन देकर सुभिक्ष करने वाले होते हैं॥१४॥

ब्रह्मदण्ड नामक केतु के सफल कथन

ब्रह्मसुत एक एव त्रिशिखो वर्णैस्त्रिभिर्युगान्तकरः।
अनियतदिक्सम्प्रभवो विज्ञेयो ब्रह्मदण्डाख्यः॥१५॥

माया—ब्रह्मपुत्र, तीन शिखाओं और तीन वर्णों से युक्त एक ही केतु है, जो सभी दिशाओं में उदित होने वाला और जिनके दर्शन से सबकी हानि होती है, ब्रह्मदण्ड नाम से वह जाना जाता है॥१५॥

१०१ केतुओं को कहने के वाद ८९९ केतु कथन

शतमभिहितमेकसमेतमेतदेकेन विरहितान्यस्मात्।
कथयिष्ये केतूनां शतानि नव लक्षणैः स्पष्टैः॥१६॥

माया—इस प्रकार अब तक एक सौ एक केतुओं के सफल वर्णन किया है, अब आठ सौ निन्यानवे प्रकार के केतुओं के स्पष्ट रूप से सलक्षण फल कथन करते हैं॥१६॥

शुक्र पुत्र केतु के ८४ प्रकार का सफल कथन

सौम्यैशान्योरुदयं शुक्रसुता यान्ति चतुरशीत्याख्याः।
विपुलसिततारकास्ते स्निग्धाश्च भवन्ति तीव्रफलाः॥१७॥

माया—शुक्रपुत्र केतु के चौरासी प्रकार होते हैं, वे उत्तर और ईशान कोण में उदय लेते हैं तथा वे विशाल, शुक्ल और विमल मूर्ति वाले केतु अपने दर्शन से तीव्रफल करने वाले होते हैं॥१७॥

शनिपुत्र केतु के ६० प्रकार का सफल कथन

स्निग्धाः प्रभासमेता द्विशिखाः षष्टिः शनैश्चराङ्गरुहाः।
अतिकष्टफला दृश्याः सर्वत्रैते कनकसंज्ञाः॥१८॥

माया—विमल, प्रभा (कान्ति) युक्त, दो शिखाओं के शनि पुत्र ६० प्रकार के कनक नाम वाले केतु, सभी दिशाओं में उदय लेने वाले और जिनके दर्शन का बहुत से अशुभ फल होते हैं॥१८॥

गुरुपुत्र केतु के ६५ प्रकार का सफल कथन

विकचा नाम गुरुसुताः सितैकताराः शिखापरित्यक्ताः।
षष्टिः पञ्चभिरधिका स्निग्धा याम्याश्रिताः पापाः॥१९॥

माया—विकच संज्ञक ६५ प्रकार के गुरु पुत्र केतु श्वेत, एक तारा वाला, शिखा हीन, विमल मूर्त्ति वाला और दक्षिण दिशा में उदय लेने वाला तथा जिसका दर्शन अशुभफल कारक होता है॥१९॥

बुध पुत्र केतु के ५१ प्रकार का सफल कथन

नातिव्यक्ताः सूक्ष्मा दीर्घाः शुक्ला यथेष्टदिक्प्रभवाः ।
बुधजास्तस्करसंज्ञाः पापफलास्त्वेकपञ्चाशत् ॥२०॥

माया—तस्कर नाम के एकावन प्रकार के बुध पुत्र केतु अल्प स्पष्ट, अल्प मूर्त्ति, लम्बा, शुक्ल और सभी दिशाओं में उदय लेने वाला, जिसका दर्शन भी अशुभ फलकारक होता है॥२०॥

कुज पुत्र केतु के ६० प्रकार का सफल कथन

क्षतजानलानुरूपास्त्रिचूलतारा: कुजात्मजाः षष्टिः ।
नाम्ना च कौङ्कुमास्ते सौम्याशासंस्थिताः पापाः ॥२१॥

माया—कौङ्कुम नामक ६० प्रकार के मंगल पुत्र केतु लाल व अग्नि के समान आभायुक्त रूप वाला, तीन शिखाओं और तीन तारों से युक्त तथा उत्तर दिशा में उदय लेने वाला है, जिसके दर्शन से भी अशुभ फल मिलता है॥२१॥

राहुपुत्र केतु के ३३ प्रकार का सफल कथन

त्रिंशत्यधिका राहोस्ते तामसकीलका इति ख्याताः ।
रविशशिगा दृश्यन्ते तेषां फलमर्कचारोक्तम् ॥२२॥

माया—तामस-कीलक नाम से प्रसिद्ध तैंतीस प्रकार के राहु पुत्र केतु सूर्य व चन्द्र मण्डल में दीखने वाला है, जिसका फल सूर्यचार के प्रसङ्ग में कहा गया है॥२२॥

अग्निपुत्र केतु के १२० प्रकार का सफल कथन

विंशत्याधिकमन्यच्छतमग्नेर्विश्वरूपसंज्ञानाम् ।
तीव्रानलभयदानां ज्वालामालाकुलतनूनाम् ॥२३॥

माया—विश्वरूप नामक एक सौ बीस प्रकार के अग्नि पुत्र केतु ज्वालाओं के माला से व्याप्त मूर्त्ति और तीव्र अग्नि भयप्रदायक हैं॥२३॥

वायु पुत्र केतु के ७७ प्रकार का सफल कथन

श्यामारुणा विताराश्चामररूपा विकीर्णदीधितयः ।
अरुणाख्या वायोः सप्तसप्ततिः पापदाः परुषाः ॥२४॥

माया—अरुण संज्ञक सतहत्तर वाायु पुत्र श्याम व अरुण (लेहित) वर्ण वाला, ताराओं से रहित, चामर के सदृश रूप वाला और विस्तारित किरणों से युक्त तथा रूखा केतु पाप फल प्रदायक होता है॥२४॥

प्रजापतिपुत्र ८ और ब्रह्म पुत्र २०४ प्रकार के केतु का सफल कथन

तारापुञ्जनिकाशा गणका नाम प्रजापतेरष्टौ ।
द्वे च शते चतुरधिके चतुरस्त्रा ब्रह्मसन्तानाः ।।२५।।

माया—गणक संज्ञक आठ प्रकार के प्रजापति पुत्र केतु नक्षत्र समूह सदृश दीखने वाला और अशुभ फल करने वाला होता है।

एवं चतुष्कोणात्मक आकार वाला दो सौ चार ब्रह्मा के पुत्र केतु भी अशुभ फल करने वाला होता है। इस तरह उपरोक्त दोनों केतु सभी दिशाओं में उदय लेने वाले हैं॥२५॥

वरुण पुत्र ३२ प्रकार के केतु का सफल कथन

कङ्का नाम वरुणजा द्वात्रिंशद्वंशगुल्मसंस्थानाः ।
शशिवत्प्रभासमेतास्तीव्रफलाः केतवः प्रोक्ताः ।।२६।।

माया—कङ्क संज्ञक बत्तीस प्रकार के वरूण पुत्र वंश व गुल्म के सदृश आकार वाले और चन्द्र कान्ति के समान आभा वाले केतु सभी दिशाओं में उदय लेने वाले तथा अशुभ फलदायक होता है॥२६॥

कालपुत्र ९६ प्रकार के केतु का सफल कथन

षण्णवतिः कालसुताः कबन्धसंज्ञाः कबन्धसंस्थानाः ।
पुण्ड्राभयप्रदाः स्युर्विरूपताराश्च ते शिखिनः ।।२७।।

माया—कबन्ध संज्ञक छियानवे प्रकार के काल के पुत्र, छिन्न शिरवाले पुरुष के सदृश आकृति वाला, अस्पष्टतारा वाला केतु सभी दिशाओं में उदय लेने वाले और अपने दर्शन से पुण्ड्र नाम के प्रदेश में शुभकारक तथा अन्यत्र अशुभकारक होता है॥२७॥

विदिशा पुत्र नौ प्रकार के केतु का सफल कथन

शुक्लविपुलैकतारा नव विदिशां केतवः समुत्पन्नाः ।
एवं केतुसहस्रं विशेषमेषामतो वक्ष्ये ।।२८।।

माया—शुक्ल वर्ण,विशाल, एक तारा वाला और विदिशा के पुत्र नौ प्रकार के केतु विदिशाओं में उत्पन्न होता है तथा अपने दर्शन से अशुभदायक होता है। इस प्रकार के एक हजार केतुओं के प्रसङ्ग में आगे विशेषता से कहते हैं॥२८॥

वसा केतु के लक्षण और फल कथन

उदगायतो महान् स्निग्धमूर्तिरपरोदयी वसाकेतुः ।
सद्यः करोति मरकं सुभिक्षमप्युत्तमं कुरुते ।।२९।।

माया—पश्चिम दिशा में उदित होने वाला, उत्तरदिशा की ओर विस्तृत, स्थूल,

विमलमूर्त्ति तथा वसा केतु के नाम से जाना जाने वाला और जिनके उदय लेते ही भूमि पर महामारी फैल जाती है, परन्तु सर्वत्र उत्तम सुभिक्ष होता है।।२९।।

अस्थि व शस्त्र केतु के लक्षण व फल

तल्लक्षणोऽस्थिकेतुः स तु रूक्षः क्षुद्भयावहः प्रोक्तः ।
स्निग्धस्तादृक् प्राच्यां शस्त्राख्यो डमरमरकाय ।।३०।।

माया—पूर्वोक्त वसा केतु के समान लक्षणों से युक्त और रूखा अस्थि केतु दुर्भिक्ष करने वाला होता है। इसी तरह वसा केतु के लक्षणों वाला, विमल मूर्त्ति, पूर्वदिशा में उदय लेने वाला शस्त्र संज्ञक केतु है। यह शस्त्र प्रयोग कराने वाला और महामारी फैलाने वाला होता है।।३०।।

कपाल केतु के लक्षण व फल कथन

दृश्योऽमावास्यायां कपालकेतुः सधूम्ररश्मिशिखः ।
प्राङ्नभसोऽर्द्धविचारी क्षुन्मरकावृष्टिरोगकरः ।।३१।।

माया—कपाल केतु संज्ञक, अमावास्या तिथि को पूर्व दिशा में उदय लेने वाला, धूम्र वर्ण के किरणों की आभा वाला और आकाश के आधे भाग में ही विचरण करने वाला केतु दुर्भिक्ष और महाभारी फैलांने वाला, अनावृष्टि के कारणों वाला तथा रोग उत्पन्न करने वाला होता है।।३१।।

रौद्र नामक केतु के लक्षण व फल कथन

प्राग्वैश्वानरमार्गे शूलाग्रः श्यावरूक्षताम्रार्चिः ।
नभसस्त्रिभागगामी रौद्र इति कपालतुल्यफलः ।।३२।।

माया—रौद्र संज्ञक, पूर्व दिशा और आग्नेय कोण में दीखने वाला, शूल के समान तीन शिखाओं वाला, कपिश, रुक्ष (रूखा), ताम्रवर्ण के किरणों वाला, आकाश के तीन भाग में विचरणशील केतु उपरोक्त कपाल केतु के समान फल प्रदान करने वाला होता है।।३२।।

३६. चल केतु के लक्षण व फल कथन

अपरस्यां चलकेतुः शिखया याम्याग्रयाङ्गुलोच्छ्रितया ।
गच्छेद्यथा यथोदक् तथा तथा दैर्घ्यमायाति ।।३३।।
सप्तमुनीन् संस्पृश्य ध्रुवमभिजितमेव च प्रतिनिवृत्तः ।
नभसोऽर्द्धमात्रमित्वा याम्येनास्तं समुपयाति ।।३४।।
हन्यात् प्रयागकूलाद्यावदवन्तीं च पुष्करारण्यम् ।
उदगपि च देविकामपि भूयिष्ठं मध्यदेशाख्यम् ।।३५।।

अन्यानपि च स देशान् क्वचित् क्वचिद्धन्ति रोगदुर्भिक्षैः ।
दश मासान् फलपाकोऽस्य कैश्चिदष्टादश प्रोक्तः ।।३६।।

माया—चल केतु नामक केतु पश्चिम दिशा में दीखने वाला, दक्षिण दिशा की ओर एक अङ्गुल विस्तृत शिखा वाला, जिस-जिस प्रकार से उत्तर दिशा की ओर विचरण करे, उस-उस प्रकार से लम्बित होने वाला, सप्तर्षि मण्डल, ध्रुवतारा, अभिजिन् नक्षत्र का स्पर्श कर वापस होने वाला और आकाश के आधे भाग में चलकर दक्षिण दिशा की ओर अस्त होने वाला केतु अपने दर्शन से प्रयाग से लेकर उज्जयिनी पर्यन्त के स्थानों, पुष्करारण्य नामक स्थान तथा उत्तर दिशा में स्थित देविका नदी तक के जनगणों की हानि करता हुआ मध्य देश नाम के स्थान को विशेषकर विनष्ट करता है। इस प्रकार वह अन्यान्य देशों में भी रोग और दुर्भिक्ष से हानि करता है। यह केतु अपने उदय काल में दश माह तक फल देता है, कोई उसके उदय से १८ मास तक उसके दर्शन का फल होना, कहते हैं।।३३-३६।।

श्वेत केतु का लक्षण व फल कथन

प्रागर्द्धरात्रदृश्यो याम्याग्रः श्वेतकेतुरन्यश्च ।
क इति युगाकृतिरपरे युगपत्तौ सप्तदिनदृश्यौ ।।३७।।
स्निग्धौ सुभिक्षशिवदावथाधिकं दृश्यते कनामा यः ।
दश वर्षाण्युपतापं जनयति शस्त्रप्रकोपकृतम् ।।३८।।

माया—श्वेत केतु संज्ञक, पूर्व दिशा में अर्द्धरात्रि में दीखने वाला, दक्षिण दिशा में स्थित शिखा वाला, अन्य क संज्ञक केतु पश्चिम दिशा में बैलगाड़ी के जुआ की आकृति के समान अस्त होने वाला, ये दोनों केतुओं के विमल रूप में सात दिन तक दीखने पर सुभिक्ष और मंगलकारी होता है। क संज्ञक केतु यदि सात दिन से अधिक दीखता हो, तो मनुष्यों को दशवर्ष तक शस्त्रकोप से पीड़ा देने वाला होता है।।३७-३८।।

श्वेत नामक केतु लक्षण कथन

श्वेत इति जटाकारो रूक्षः श्यावो वियत्त्रिभागगतः ।
विनिवर्ततेऽपसव्यं त्रिभागशेषाः प्रजाः कुरुते ।।३९।।

माया—श्वेत संज्ञक केतु जटा के आकार सदृश, रूक्ष, कृष्णवर्ण, आकाश के तीन भाग तक विचरण कर पुनः विपरीत दिशा में विचरण करने वाला होता है, इसका दर्शन होने पर जनगणों के तीन भाग में से केवल एक भाग अवशिष्ट रहता है। अर्थात् जनगणों के दो भाग विनष्ट होते हैं।।३९।।

रश्मि केतु का लक्षण व फल कथन

आधूम्रया तु शिखया दर्शनमायाति कृत्तिकासंस्थः ।
ज्ञेयः स रश्मिकेतुः श्वेतसमानं फलं धत्ते ।।४०।।

माया—धूम्रवर्ण की शिखा वाला और कृत्तिक नक्षत्र में आने पर दीखने वाला रश्मि केतु के दर्शन होने पर उपरोक्त श्वेत नाम के केतु की तरह फल प्रदान करता है।।४०।।

ध्रुव केतु का लक्षण व फल कथन

ध्रुवकेतुरनियतगतिप्रमाणवर्णाकृतिर्भवति विष्वक् ।
दिव्यान्तरिक्षभौमो भवत्ययं स्निग्ध इष्टफलः ।।४१।।
सेनाङ्गेषु नृपाणां गृहतरुशैलेषु चापि देशानाम् ।
गृहिणामुपस्करेषु च विनाशिनां दर्शनं याति ।।४२।।

माया—ध्रुव केतु संज्ञक केतु अनियमित गति, प्रमाण, वर्ण तथा आकृति वाला, सभी दिशाओं में दीखने वाला एवं भौम, दिव्य व आन्तरिक्ष तीनों प्रकार से स्थिति सिद्ध करने वाला, विमल और शुभफलदायक होता है। यह ध्रुव केतु विनाशशील राजा के सैन्याङ्गों में, विनाशशील राष्ट्र के भवन, वृक्ष, पर्वत आदि में तथा विनाशशील गृहपति के उपकरण पदार्थ में दीखता है।।४१-४२।।

कुमुद संज्ञक केतु का लक्षण व फल कथन

कुमुद इति कुमुदकान्तिर्वारुण्यां प्राक्शिखो निशामेकाम् ।
दृष्टः सुभिक्षमतुलं दश किल वर्षाणि स करोति ।।४३।।

माया—कुमुद संज्ञक केतु कुमुद पुष्प के समान श्वेत आभा वाला, पश्चिम दिशा में दीखने वाला, पूर्वाभिमुख शिखा तथा एकमात्र रात्रि में दीखने वाला होता है, इसके दर्शन से दश वर्ष पर्यन्त सुभिक्ष रहता है।।४३।।

मणि केतु के लक्षण व फल कथन

सकृदेकयामदृश्यः सुसूक्ष्मतारोऽपरेण मणिकेतुः ।
ऋज्वी शिखास्य शुक्ला स्तनोद्गता क्षीरधारेव ।।४४।।
उदयन्नेव सुभिक्षं चतुरो मासान् करोत्यसौ सार्द्धान् ।
प्रादुर्भावं प्रायः करोति च क्षुद्रजन्तूनाम् ।।४५।।

माया—मणि केतु संज्ञक केतु पश्चिम दिशा में रात्रि के शेष भाग में एक बार मात्र दीखने वाला और दुग्धधारा की तरह शुक्ल शिखा वाला होता है। यह अपने उदय काल से चार मास पन्द्रह दिन पर्यन्त सुभिक्ष करने वाला तथा प्रायः क्षुद्र जन्तुओं को उत्पन्न करने वाला होता है।।४४-४५।।

जलकेतु का लक्षण व फल कथन

जलकेतुरपि च पश्चात् स्निग्धः शिखयापरेण चोन्नतया ।
नव मासान् स सुभिक्षं करोति शान्तिं च लोकस्य ।।४६।।

भाषा—जल केतु संज्ञक केतु भी पश्चिम दिशा में देखा जाता है। यह निर्मल मूर्त्ति, पश्चिमोन्नत शिखा वाला दीखने पर नौ मास तक सुभिक्ष और मंगल करने वाला होता है।।४६।।

भव केतु का लक्षण व फल कथन

भवकेतुरेकरात्रं दृश्यः प्राक् सूक्ष्मतारकः स्निग्धः ।
हरिलाङ्गूलोपमया प्रदक्षिणावर्तया शिखया ।।४७।।
यावत एव मुहूर्तान् दर्शनमायाति निर्दिशेन्मासान् ।
तावदतुलं सुभिक्षं रूक्षे प्राणान्तिकान् रोगान् ।।४८।।

भाषा—भवकेतु संज्ञक केतु पूर्व दिशा में मात्र एक रात्रि में दीखने वाला सूक्ष्म तारा तथा शेर के पूँछ के समान दक्षिणावर्त शिखा से युक्त होकर विमल मूर्त्ति होता है और जितने मुहूर्त्त पर्यन्त वह दिखलाई देता हो, उतने मास पर्यन्त सुभिक्ष तथा रूक्ष या रूखा होकर जितने मुहूर्त्त दिखलाई देता हो, उतने मास पर्यन्त प्राणान्तिक रोग को उत्पन्न करने वाला होता है।।४७-४८।।

पद्मकेतु का लक्षण व फल कथन

अपरेण पद्मकेतुर्मृणालगौरो भवेन्निशामेकाम् ।
सप्त करोति सुभिक्षं वर्षाण्यतिहर्षयुक्तानि ।।४९।।

भाषा—पद्म केतु पश्चिम दिशा में मात्र एक रात्रि दीखने वाला और मृणाल के समान गौर या श्वेत वर्ण मूर्त्ति होता है, उसके उदय होने पर सात वर्ष पर्यन्त हर्ष या आनन्द युक्त सुभिक्ष होता है।।४९।।

आवर्त केतु का लक्षण व फल कथन

आवर्त इति निशार्धे सव्यशिखोऽरुणनिभोऽपरे स्निग्धः ।
यावत्क्षणान् स दृश्यस्तावन्मासान् सुभिक्षकरः ।।५०।।

भाषा—आवर्त नामक जो केतु, वह आधी रात्रि में पश्चिम दिशा में उदय लेने वाला, दक्षिणाभिमुख शिखा वाला, रक्तवर्ण की कान्ति वाला, विमल मूर्त्ति होता है। वह जितने मुहूर्त्त दिखलाई देता है, उतने मास सुभिक्ष करने वाला होता है।।५०।।

संवर्त केतु का लक्षण व फल कथन

पश्चात् सन्ध्याकाले संवर्तो नाम धूम्रताम्रशिखः ।
आक्रम्य वियत्त्र्यंशं शूलाग्रावस्थितो रौद्रः ।।५१।।

यावत एव मुहूर्तान् दृश्यो वर्षाणि हन्ति तावन्ति ।
भूपान् शस्त्रनिपातैरुदयर्क्षं चापि पीडयति ।।५२।।

भाषा—पश्चिम दिशा में सन्ध्या के समय धूम्र व ताम्र वर्ण के त्रिशिखा वाला, और आकाश के तीसरे भाग में दीखने वाला संवर्त्त केतु नामक केतु जितने मुहूर्त पर्यन्त दीखता है, उतने वर्ष पर्यन्त राजाजनों को युद्ध में मारने वाला होता है और वह जिस नक्षत्र में उदित होता है, उस नक्षत्र को भी पीड़ित करता है।।५१-५२।।

अशुभ केतु का नक्षत्र सह स्पर्शन व धूपन से फल कथन

ये शस्तास्तान् हित्वा केतुभिराधूपितेऽथवा स्पृष्टे ।
नक्षत्रे भवति वधो येषां राज्ञां प्रवक्ष्ये तान् ।।५३।।

भाषा—वे केतु जो शुभदायक हैं, उनका त्याग कर अन्य अशुभकारी केतुओं से नक्षत्रों का स्पर्शन या धूपन होने पर जिन राजाओं की मृत्यु होती है, उन राजाओं के प्रसङ्गों को कहते हैं।।५३।।

अश्विन्यादि चार नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

अश्विन्यामश्मकपं भरणीषु किरातपार्थिवं हन्यात् ।
बहुलासु कलिङ्गेशं रोहिण्यां शूरसेनपतिम् ।।५४।।

भाषा—केतु से स्पर्शित या धूपित अश्विनी नक्षत्र के होने पर अश्मकदेश के राजा, भरणी नक्षत्र के होने पर किरातों के राजा, कृत्तिका नक्षत्र के होने पर कलिङ्ग देश के राजा, रोहिणी के होने पर शूरसेन देश के राजा की हानि होती है।।५४।।

मृगशिरादि चार नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

औशीनरमपि सौम्ये जलजाजीवाधिपं तथार्द्रासु ।
आदित्येऽश्मकनाथान् पुष्ये मगधाधिपं हन्ति ।।५५।।

भाषा—इसी प्रकार केतु से स्पर्शित या धूपित मृगशिरा नक्षत्र के होने पर उशीनर देश के राजा, आर्द्रा नक्षत्र के होने पर मत्स्यादि देश के राजा, पुनर्वसु के होने पर अश्मक देश के राजा और पुष्य नक्षत्र के होने पर मगधराज की हानि होती है।।५५।।

श्लेषादि पाँच नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

असिकेशं भौजङ्गे पित्र्येऽङ्गं पाण्ड्यनाथमपि भाग्ये ।
औज्जयिनिकमार्यम्णे सावित्रे दण्डकाधिपतिम् ।।५६।।

भाषा—और भी केतु से श्लेषा नक्षत्र के स्पर्शित या धूपित होने पर असिकेश; मघा के होने पर अङ्ग देश के राजा, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र के होने पर पाण्ड्य देश के राजा,

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के होने पर उज्जयिनी के राजा तथा हस्त नक्षत्र के होने पर दण्डक वनाधिप की हानि होती है॥५६॥

चित्रा व स्वाती नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

चित्रासु कुरुक्षेत्राधिपस्य मरणं समादिशेत्तज्ज्ञः ।
काश्मीरककाम्वोजौ नृपती प्राभञ्जने न स्तः ॥५७॥

माया—केतु से स्पर्शित या धूपित चित्रा नक्षत्र के होने पर कुरूक्षेत्र के राजा की मृत्यु होती है, ऐसा संहिताशास्त्र के विद्वान् को कहना चाहिए। स्वाती नक्षत्र के होने पर काश्मीर व कम्बोज के राजाजनों की मृत्यु कहनी चाहिए॥५७॥

विशाखा से तीन नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

इक्ष्वाकुरलकनाथश्च हन्यते यदि भवेद्विशाखासु ।
मैत्रे पुण्ड्राधिपतिर्ज्येष्ठासु च सार्वभौमवधः ॥५८॥

माया—केतु से स्पर्शित या धूपित विशाखा नक्षत्र के होने से अलका देश के राजा, अनुराधा नक्षत्र के होने पर पुण्ड्र देश के राजा और ज्येष्ठा नक्षत्र के होने से सार्वभौम राजा का मरण होता है॥५८॥

मूलादि तीन नक्षत्र के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

मूलेऽन्ध्रमद्रकपती जलदेवे काशिपो मरणमेति ।
यौधेयकार्जुनायनशिविचैद्यान् वैश्वदेवे च ॥५९॥

माया—केतु से स्पर्शित या धूपित मूल नक्षत्र के होने पर आन्ध्र व मद्रक प्रान्त के राजा, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के होने पर काशी के राजा और उत्तरषाढ़ा नक्षत्र के होने से यौधेयक, अर्जुनायन, शिवि तथा यौध के राजा का मरण होता है॥५९॥

श्रवणादि ६ नक्षत्रों के केतु से स्पर्शित व धूपित होने का फल कथन

हन्यात् कैकयनाथं पाञ्चनदं सिंहलाधिपं वाङ्गम् ।
नैमिषनृपं किरातं श्रवणादिषु षट्स्विमान् क्रमशः ॥६०॥

माया—केतु से स्पर्शित या धूपित श्रवण नक्षत्र के होने पर कैकेय देश के राजा, धनिष्ठा नक्षत्र के होने पर पाञ्चनद (पंजाब) के राजा, शतभिषा नक्षत्र के होने से सिंहल देश के राजा, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र के होने पर बङ्ग देश के राजा, उत्तराभाद्रपद होने पर नैमिषारण्य के राजा तथा रेवती नक्षत्र के होने पर किरातों के राजा का मरण होता है॥६०॥

केतु का विशेष फल कथन

उल्काभिताडितशिखः शिखी शिवः शिवतरोऽतिदृष्टो यः ।
अशुभः स एव चोलावगाणसितहूणचीनानाम् ॥६१॥

माया—जो केतु उल्काओं से ताडित हुआ हो, वह शुभ या मंगल करने वाला होता है। जो केतु अतिवृष्ट करने वाला होता है, वह भी अत्यधिक मंगलकारक होता हैं परन्तु वही केतु चोल, अवगाण, सितहूण और चीन देशों के जनगणों का अशुभ करने वाला होता है॥६१॥

केतु का और भी विशेष कथन

नम्रा यतः शिखिशिखाभिसृता यतो वा
ऋक्षं च यत् स्पृशति तत्कथितांश्च देशान्।
दिव्यप्रभावनिहतान् स यथा गरुत्मान्
भुङ्क्ते गतो नरपतिः परभोगिभोगान् ॥६२॥

माया—जिस-किसी दिशा में केतु की शिखा झुकी हो, जिस-किसी दिशा में विस्तृत हो या फिर जिस-किसी नक्षत्र को स्पर्शित करता हो, उससे सम्बन्धित स्थानों पर अन्य भोगवान् मनुष्यों से भोगा हुआ अति श्रमयुक्त पराक्रम से जीते हुए ग्रामों को उसी प्रकार राजाजन भोग करते हैं, जिस प्रकार गरुड़ अपने दिव्य शक्ति से नष्ट किये उत्तम सर्पों के अङ्गों का भक्षण करता है॥६२॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां केतुचाराध्यायः एकादशः ॥११॥

❐❐❐

अथ द्वादशोऽध्यायः-१२

अगस्त्यचार विचारः

मुनि अगस्त्य की प्रशंसा वचन

भानोर्वर्त्मविघातवृद्धशिखरो विन्ध्याचलः स्तम्भितो
वातापिर्मुनिकुक्षिभित् सुररिपुर्जीर्णश्च येनासुरः ।
पीतश्चाम्बुनिधिस्तपोम्बुनिधिना याम्या च दिग्भूषिता
तस्यागस्त्यमुनेः पयोद्युतिकृतश्चारः समासादयम् ।।१।।

भाषा—भगवान् सूर्य के पथ को अवरुद्ध करने हेतु वृद्धिशील विन्ध्याचल पर्वत को स्तम्भित करने वाले, मुनिजनों के उदर को भेदन और देवताओं के शत्रु वातापि नाम के राक्षस को मारने वाले, अपने तपोबल से समुद्र को पीकर दक्षिण दिशा को विभूषित करने वाले तथा जलसमूह को स्वच्छ करने वाले उस अगस्त्य मुनि का यहाँ सारांश रूप से विवेचन करना अभीष्ट है।।१।।

अगस्त्य मुनि के प्रसङ्ग में प्रधान समुद्र की शोभा कथन

समुद्रोऽन्तः शैलैर्मकरनखरोत्खातशिखरैः
कृतस्तोयोच्छित्त्या सपदि सुतरां येन रुचिरः ।
पतन्मुक्तामिश्रैः प्रवरमणिरत्नाम्बुनिवहैः
सुरान् प्रत्यादेष्टुं मितमुकुटरत्नानिव पुरा ।।२।।

भाषा—पूर्व में तत्काल ही जलापहरण से, मकर के नखों से खुरदरा शिखर वाले अन्तर्निहित पर्वतों से और परिमित रत्न आदि से युक्त मुकुट वाले देवों को तिरस्कृत करने हेतु इधर-उधर अनेक पतित मुक्तादि मिश्रित प्रशंस्त मणि व रत्नों से सम्पन्न जल के प्रवाहों से समुद्र को अत्यन्त स्वच्छ बनाया।।२।।

और भी समुद्र शोभा कथन

येन चाम्बुहरणेऽपि विद्रुमैर्भूधरैः समणिरत्नविद्रुमैः ।
निर्गतैस्तदुरगैश्च राजितः सागरोऽधिकतरं विराजितः ।।३।।

भाषा—अगस्त्य मुनि द्वारा जल का अपहरण कर लेने पर भी मणियों, रत्नों और प्रवालों से सम्पन्न वृक्ष और अपने स्थान से दूर स्थित सर्पों से हीन पर्वतों से समुद्र अत्यन्त शोभयमान हुआ।।३।।

पुनः समुद्र शोभा कथन

प्रस्फुरत्तिमिजलेभजिह्मग: क्षिप्तरत्ननिकरो महोदधि: ।
आपदां पदगतोऽपि यापितो येन पीतसलिलोऽमरश्रियम् ।।४।।

माया—प्रस्फुरणशील समुद्र अर्थात् जल में चञ्चल मत्स्य, जल हस्ति, सर्प, शंख आदि के कूदने और लहराने या टेढ़ा-सीधा चलने आदि से सम्पन्न समुद्र अपने जल का अगस्त्य मुनि द्वारा पान कर लेने से विपदाग्रस्त होने पर भी इधर-उधर बिखरे रत्नों और मणियों से शोभायमान होकर स्वर्गीय शोभा में अभिवृद्धि करने वाला ही सिद्ध हुआ।।४।।

पुनः समुद्र शोभा कथन

प्रचलत्तिमिशुक्तिजशङ्खचित: सलिलेऽपहृतेऽपि पति: सरिताम् ।
सतरङ्गसितोत्पलहंसभृत: सरस: शरदीव बिभर्ति रुचिम् ।।५।।

माया—अगस्त्य मुनि द्वारा जल का अपहरण करने से जलाभाव होने पर भी चञ्चल मत्स्य, शुक्ति और शङ्ख से सम्पन्न समुद्र उसी प्रकार शोभा को प्राप्त हुआ, जिस प्रकार शरद् ऋतु में तरङ्ग, श्वेत कुवलय और हंस से सम्पन्न होकर कोई सरोवर शोभायमान होता है।।५।।

समुद्र प्रशंसा पूर्वक अगस्त्य महात्म्य कथन

तिमिसिताम्बुघरं मणितारकं स्फटिकचन्द्रमनम्बुशरद्द्युति: ।
फणिफणोपलरश्मिशिखिग्रहं कुटिलगेशवियच्च चकार य: ।।६।।

माया—जिस आकाश में मत्स्य रूप श्वेत वर्ण मेघ, मणिरूप तारा, स्फटिक मणि रूप चन्द्र तथा सर्पों के फण पर स्थित मणियों के किरण रूप केतु (धूम केतु) विराजमान थी, उस निर्जल शरत् काल के शोभायमान समुद्र रूप आकाश को जिसने उत्पान किया, उस अगस्त्य मुनि के प्रसङ्गों में आगे कहते हैं।।६।।

विन्ध्याचल स्थिति कथन

दिनकररथमार्गविच्छित्तयेऽभ्युद्यतं यच्चलच्छृङ्गमुद्भ्रान्तविद्याधरां सावसक्त-प्रियाव्यग्रदत्ताङ्कदेहावलम्बाम्बरात्युच्छ्रितोद्धूयमानध्वजै: शोभितम् ।

करिकटमदमिश्ररक्तावलेहानुवासानुसारिद्विरेफावलीनोत्तमाङ्गै: कृतान् बाणपुष्पैरिवोत्तंसकान् धारयद्भिर्मृगेन्द्रै: सनाथीकृतान्तर्दरीनिर्झरम् ।

गगनतलमिवोल्लिखन्तं प्रवृद्धैर्गजाकृष्टफुल्लद्रुमत्रासविभ्रान्तमत्तद्विरेफा-वलीहृष्टमन्द्रस्वनै: शैलकूटैस्तरक्षर्क्षशार्दूलशाखामृगाध्यासितै: ।

रहसि मदनसक्तया रेवया कान्तयेवोपगूढं सुराध्यासितोद्यानमम्भोऽश-नानन्नमूलानिलाहारविप्रान्वितं विन्ध्यमस्तम्भयद्यश्च तस्योदय: श्रूयताम् ।।७।।

माया—सूर्यरथ का मार्ग अवरुद्ध करने हेतु ऊपर की ओर बढ़ते विन्ध्याचल पर्वत की कम्पित शिखर होने से भयाकूल विद्याधर के कन्धों से सक्त और व्यग्र विद्याधारियों के द्वारा दत्त अपने-अपने प्रिय के शरीर में लगे हुए कम्पित और ऊपर उठे हुए ध्वजा के समान वस्त्र से शोभायमान; हाथियों के मदयुक्त रक्त से निष्पन्न सुवास को खोज करने में तल्लीन भ्रमरों के समूह युक्त शिर वाले जैसे बाण-पुष्पों से निर्मित गले में पुष्पमाला धारण किये सिंहों से युक्त गुफा स्थित निर्झर वाला; चलते या बढ़ते हुए हाथियों से आकृष्ट होकर प्रफुल्लित पेड़ों के समीप चलायमान तथा आनन्द मुग्ध मधुर ध्वनि करते हुए भ्रमर समूह वाले एवं वन के अश्व, ऋक्ष, व्याघ्र तथा वानरों से सम्पन्न शिखर जैसे आकाश को उल्लसित करता हुआ; जनहीन स्थलों में काम वृक्ष से सम्पन्न होकर जैसे कामातुर प्रिया रेवा नदी से युक्त, देवजनों से पूजित उद्यान वाला और जल, अन्य, मूल, वात आदि का आहार करने वाले ब्राह्मणों से पूजित उस विन्ध्याचल पर्वत को जिसने स्तम्भित किया, उस अगस्त्य मुनि के उदय के प्रसङ्ग में आगे कहते हैं।।७।।

अगस्त्य के उदय का महत्त्व प्रदर्शन

उदये च मुनेरगस्त्यनाम्नः कुसमायोगमलप्रदूषितानि ।
हृदयानि सतामिव स्वभावात् पुनरम्बूनि भवन्ति निर्मलानि ।।८।।

मांया—क्षुद्र जनों के सहवास रूप दूषण से दूषित हृदय वाला पुरुष भी जैसे सज्जनों का दर्शन पाकर विमल मन (हृदय) वाला हो जाता है, वर्षा ऋतु के समय कीचड़ मिश्रित जल भी वैसे ही अगस्त्य मुनि के उदय होते ही स्वच्छ हो जाता है।।८।।

शरद् ऋतु की शोभा कथन

पार्श्वद्वयाधिष्ठितचक्रवाकामापुष्णती सस्वनहंसपङ्क्तिम् ।
ताम्बूलरक्तोत्कषिताग्रदन्ती विभाति योषेव शरत् सहासा ।।९।।

माया—जैसे सुकोल हँसती हुई स्त्री के ताम्बुल राग रञ्जित अर्थात् लाल वर्ण के ओठों के मध्य प्रदेश में श्वेत दन्त पक्ति सुशोभित होती है, वैसे-ही अगस्त्य मुनि के उदय ले लेने पर दोनों पार्श्वों में स्थित दो लालवर्ण के चक्रवाकों के मध्य में स्थित ध्वनिमान हंस पक्ति से नदयाँ सुशोभित होकर शरद् ऋतु को मूर्त्तिमान् करती हैं।।९।।

पुनः शरद् ऋतु की शोभा कथन

इन्दीवरासन्नसितोत्पलान्विता शरद् भ्रमत्षट्पदपङ्क्तिभूषिता ।
सभ्रूलताक्षेपकटाक्षवीक्षणा विदग्धयोषेव विभाति सस्मरा ।।१०।।

माया—जिस प्रकार भ्रू-लता कटाक्ष से कामभावों को प्रकट करती कामातुर स्त्री शोभायमान होती है, उसी प्रकार अगस्त्य मुनि के उदय होने पर भ्रमणशील भ्रमर पंक्तियों

से विभूषित और नील कमल के निकटवर्त्ती श्वेत कमल से सम्पन्न नदियाँ सुशोभित होकर शरद् ऋतु को मूर्त्तिमान करती हैं॥१०॥

और शरद् ऋतु शोभा कथन

इन्दोः पयोदविगमोपहितां विभूतिं द्रष्टुं तरङ्गवलया कुमुदं निशासु।
उन्मूलयत्यलिनिलीनदलं सुपक्ष्म वापी विलोचनमिवासिततारकान्तम् ॥११॥

माया—कङ्गन रूप तरङ्ग से युक्त तड़ाग रूपी कामिनी रात्रि के समय बादलों के छँट जाने पर संवृद्ध हुई चाँदनी से चन्द्र की शोभा का दर्शन पाने हेतु मानो भ्रमरयुक्त कुमुद रूप कृष्ण तारा से सम्पन्न नेत्रों को खोलती हैं॥११॥

पृथ्वी शोभा कथन

नानाविचित्राम्बुजहंसकोककारण्डवापूर्णतडागहस्ता।
रत्नैः प्रभूतैः कुसुमैः फलैश्च भूर्यच्छतीवार्घमगस्त्यनाम्ने॥१२॥

माया—अनेक प्रकार के मनोहर विचित्र अम्बुज (कमल), हंस, चक्रवाक, कारण्डव आदि से सुसज्जित तडाग रूपी हस्त से पृथ्वी मानों विविध रत्न, पुष्प फल आदि द्वारा अगस्त्य मुनि को अर्घ प्रदान करती है॥१२॥

अगस्त्य दर्शन का महत्त्व कथन

सलिलममरपाज्ञयोज्झितं यद् घनपरिवेष्टितमूर्तिभिर्भुजङ्गैः।
फणिजनितविषाग्निसम्प्रदुष्टं भवति शिवं तदगस्त्यदर्शनेन ॥१३॥

माया—इन्द्र की आज्ञा से वर्षा हुआ जल, जो मेघ से परिवेष्टित मूर्त्ति जैसे सर्पों के फणों से निःस्सरित विष रूप अग्नि से सम्प्रदुष्ट जल भी अगस्त्य मुनि के दर्शन मात्र से परिशुद्ध हो जाता है॥१३॥

अगस्त्य माहात्म्य कथन

स्मरणादपि पापमपाकुरुते किमुत स्तुतिभिर्वरुणाङ्गरुहः।
मुनिभिः कथितोऽस्य यथार्घविधिः कथयामि तथैव नरेन्द्रहितम् ॥१४॥

माया—जिनके स्मरण मात्र से ही पाप नष्ट हो जाते हैं, उन वरुण सुत अगस्त्य मुनि की स्तुति करने का फल कहाँ तक कहें, पराशर, गर्ग आदि मुनियों द्वारा जैसी अर्घ विधि बतायी गई है, वैसे-ही राजाओं के हितसाधन को कहता हूँ॥१४॥

अगस्त्योदय लक्षण कथन

संख्याविधानात् प्रतिदेशमस्य विज्ञाय सन्दर्शनमादिशेज्ज्ञः।
तच्चोज्जयिन्यामगतस्य कन्यां भागैः स्वराख्यैः स्फुटभास्करस्य ॥१५॥

माया—पण्डितों को चाहिए कि गणित द्वारा प्रत्येक देश के लिए अगस्त्य जी

का दर्शन काल जानकर प्रसारित करें। इसके दर्शन का समय कन्या राशि से सात अंश कम अर्थात् सिंह राशि के तेईश अंश पर जब संचारवश स्पष्ट सूर्य पहुँचता है तब माना जाता है॥१५॥

अर्घदान काल कथन

ईषत्प्रभिन्नेऽरुणरश्मिजालैर्नैशेऽन्धकारे दिशि दक्षिणस्याम् ।
सांवत्सरावेदितदिग्विभागे भूपोऽर्घमुर्व्यां प्रयतः प्रयच्छेत् ।।१६।।

भाषा—सूर्य की किरणों से रात्रि का अन्धकार जब कुछ छँट जाय अर्थात् सूर्योदय से पूर्व या भिनसरवा प्रथम वेला में पण्डितों द्वारा बतायी गई विधि से दक्षिण दिशा में प्रयत्नपूर्वक राजाजनों को पृथ्वी पर अर्घ देना चाहिए॥१६॥

अर्घ वस्तुओं के नाम कथन

कालोद्भवैः सुरभिभिः कुसुमैः फलैश्च रत्नैश्च सागरभवैः कनकाम्बरैश्च ।
धेन्वा वृषेण परमान्नयुतैश्च भक्ष्यैर्दध्यक्षतैः सुरभिधूपविलेपनैश्च ।।१७।।

भाषा—शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाले सुगन्धित पुष्प, फल और समुद्र से प्राप्त रत्न, स्वर्ण, वस्त्र, गाय, बैल, पायस युक्त भोजन, दही अक्षत के साथ सुगन्ध युक्त धूप, चन्दन आदि से अर्घ देना चाहिए॥१७॥

अर्घदान फल प्राप्ति कथन

नरपतिरिममर्घं श्रद्दधानो दधानः
प्रविगतगददोषो निर्जितारातिपक्षः ।
भवति यदि च दद्यात्ससप्तवर्षाणि सम्यग्
जलनिधिरशनायाः स्वामितां याति भूमेः ।।१८।।

भाषा—यदि राजाजन् श्रद्धावनत् होकर इस तरह अर्घ अर्पण करें, तो वे स्वस्थ रहते हुए समस्त शत्रुओं को जीत जाता है। यदि इसी तरह सात वर्ष तक जो भक्ति भावना से अर्घ समर्पण करता रहे, तो सम्पूर्ण पृथ्वी का वह एकछत्र राज्य करने वाला होता है॥१८॥

ब्राह्मण आदि द्वारा अर्घ दान फल कथन

द्विजो यथालाभमुपाहृतार्घः प्राप्नोति वेदान् प्रमदाश्च पुत्रान् ।
वैश्यश्च गां भूरि धनं च शूद्रो रोगक्षयं धर्मफलं च सर्वे ।।१९।।

भाषा—यदि ब्राह्मण अपनी शक्ति के अनुसार अथवा जितनी वस्तु समय पर उपलब्ध हो, उससे अगस्त्य मुनि को अर्घ दान करें, तो वे चारों वेदों के अधिकारी होते हैं। समय पर उपलब्ध वस्तु से यदि स्त्री अर्घदान करे, तो उसे पुत्र और वैश्य भी यथोपलब्ध

वस्तु से अगस्त्य जी को अर्घदान करें, तो गाय व प्रचुर धन प्राप्त करते हैं तथा शूद्र यदि यथोपलब्ध वस्तु से अर्घदान करें, तो वह स्वस्थ रहता है एवं ब्राह्मण आदि सभी जनों का रोगक्षय के साथ धर्म की वृद्धि भी होती है॥१९॥

अगस्त्य वर्ण सफल कथन

रोगान् करोति परुषः कपिलस्त्ववृष्टिं
धूम्रो गवामशुभकृत् स्फुरणो भयाय।
माञ्जिष्ठरागसदृशः क्षुधमाहवांश्च
कुर्यादणुश्च पुररोधमगस्त्यनामा ॥२०॥

माया—अगस्त्य नाम के तारा का परुष या रूक्ष दीखने पर रोग, कपिल होने पर अनावृष्टि, धूम्रवर्ण होने पर गायों को अशुभ, स्फुरणशील दीखने पर भय, मञ्जीठ सदृश अर्थात् लोहित वर्ण दीखने पर दुर्भिक्ष व युद्ध तथा सूक्ष्म दीखने पर नगर में बाधायें उत्पन्न होता है॥२०॥

पुनः अगस्त्य वर्ण सफल कथन

शातकुम्भसदृशः स्फटिकाभस्तर्पयन्निव महीं किरणाग्रैः।
दृश्यते यदि तदा प्रचुरान्ना भूर्भवत्यभयरोगजनाढ्या ॥२१॥

माया—यदि अगस्त्य तारा के स्वर्ण, चाँदी या स्फटिक मणि के सदृश वर्ण की किरणें पृथ्वी को व्याप्त करती हो, तो पृथ्वी प्रचुर धन-धान्य सम्पन्न होकर भय तथा रोग से हीन जनगणों से परिपूर्ण होती है॥२१॥

अगस्त्य के शुभाशुभ व उदयास्त कथन

उल्कया विनिहतः शिखिना वा क्षुद्भयं मरकमेव विधत्ते।
दृश्यते स किल हस्तगतेऽर्के रोहिणीमुपगतेऽस्तमुपैति ॥२२॥

माया—जब अगस्त्य तारा उल्का अथवा केतु से आहत होती है, तो पृथ्वी पर दुर्भिक्ष और महामरी का प्रकोप होता है। जब सूर्य हस्त नक्षत्र में संचारवश आता है, तो अगस्त्य तारा सभी प्रदेशों के जनों को दीखता है तथा रोहिणी में आता है, तो वह सभी प्रदेशों में अस्त होता है॥२२॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामअगस्त्यचाराध्यायोः द्वादशः ॥१२॥

□□□

अथ त्रयोदशोऽध्यायः-१३

सप्तर्षिचाराः

सप्तर्षि दिक्संस्थान लक्षण कथन

सैकावलीव राजति ससितोत्पलमालिनी सहासेव ।
नाथवतीव च दिग् यैः कौवेरी सप्तभिर्मुनिभिः ।।१।।

भाषा—श्वेत कमल की माला के साथ एकावली (आभूषण विशेष) से विभूषित तथा स्वामी के साथ हास्य करने की मुद्रा में और सात ऋषि जनों से युक्त उत्तर दिशा शोभायमान हो रही है। उत्तर दिशा में उपरोक्त सभी विशेषण सप्तर्षियों के कुटिलता के कारण ही लक्षित हो रही है।।१।।

ध्रुववश उत्तर दिक्गति कथन

ध्रुवनायकोपदेशान्नरिनर्तीवोत्तरा भ्रमद्भिश्च ।
यैश्चारमहं तेषां कथयिष्ये वृद्धगर्गमतात् ।।२।।

भाषा—ध्रुव नक्षत्र रूपी नायक के उपदेश से भ्रमणशील सप्तर्षियों के साथ उत्तर दिशा मानों बारम्बार नर्तन अर्थात् नृत्य करती है। यहाँ वृद्ध गर्ग के शास्त्रानुसार सप्तर्षियों के संचार (गति) को कहता हूँ।।२।।

सप्तर्षिचार नक्षत्र कथन

आसन् मघासु मुनयः शासति पृथ्वीं युधिष्ठिरे नृपतौ ।
षड्द्विकपञ्चद्वियुतः शककालस्तस्य राज्ञश्च ।।३।।

भाषा—जिस समय राजा युधिष्ठिर पृथ्वी पर राज्य कर रहे थे, उस समय मघा नक्षत्र में सप्तर्षि स्थित थे। वर्तमान शक वर्ष में २५२६ मिलाने से युधिष्ठिर का गताब्द काल होता है।

जैसे वर्तमान शक = १९२९ + २५२६ = ४४५५

अत: युधिष्ठिर के समय से वर्तमान शक पर्यन्त ४४५५ गत वर्ष हुआ। जबकि सप्तर्षि एक नक्षत्र को सौ वर्ष तक भोग करते हैं। अत: इस प्रकार अनुपात करने से कि—

चूँकि सप्तर्षि १०० वर्ष १ नक्षत्र में रहते हैं
इसलिए सप्तर्षि १ वर्ष = १/१०० नक्षत्र में
इसलिए सप्तर्षि ४४५५ वर्ष = १ × ४४५५/१००
= ४४ लब्धि और शेष ५५

अतएव मघा आदि नक्षत्र गणना से सप्तर्षि उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र को भोगकर वर्तमान रेवती नक्षत्र के ५५ वर्ष का भी भोग कर चुके हैं तथा ४५ वर्ष और भोग करेंगे॥३॥

सप्तर्षि नक्षत्र भोगकाल तथा नक्षत्र स्थिति कथन

एकैकस्मिन्नृक्षे शतं शतं ते चरन्ति वर्षाणाम्।
प्रागुदयतोऽप्यविवरादृजून्नयति तत्र संयुक्ताः ॥४॥

भाषा—सप्तर्षि प्रत्येक नक्षत्र में सौ-सौ वर्ष तक भ्रमण करते हैं। किसी नक्षत्र का पूर्व दिशा में उदय होने पर जब सप्तर्षि मण्डल भी स्पष्ट दीखता हो, तो उसी नक्षत्र में उनकी स्थिति जाननी चाहिए। यहाँ पर 'प्रागुत्तरतश्चैते सदोदयन्ते ससाध्वीकाः' पाठ स्वीकार ने से 'ईशान कोण में हमेशा साध्वी अरुन्धती और सप्तर्षि मण्डल दोनों साथ-साथ उदय लेते हैं, इस प्रकार का अर्थ प्रकट होता है॥४॥

सप्तर्षि संस्थान लक्षण कथन

पूर्वे भागे भगवान् मरीचिरपरे स्थितो वसिष्ठोऽस्मात्।
तस्याङ्गिरास्ततोऽत्रिस्तस्यासन्नः पुलस्त्यश्च ॥५॥
पुलहः क्रतुरिति भगवानासन्ना अनुक्रमेण पूर्वाद्यात्।
तत्र वसिष्ठं मुनिवरमुपाश्रितारुन्धती साध्वी ॥६॥

भाषा—पूर्वदिशा में भगवान् मरीचि, मरीचि से पश्चिम दिशा में वशिष्ठ, वशिष्ठ से पश्चिम में अङ्गिरा तत्पश्चात् अत्रि, अत्रि के नजदीक में पुलस्त्य, तत्पश्चात् पुल और पुलह के पश्चात् क्रतु क्रम से पूर्व दिशा से इन सप्तर्षियों की अवस्थिति होती है। इन सप्तर्षियों के मध्य में वशिष्ठ मुनि के आश्रित अरुन्धती की स्थिति है॥५-६॥

इनका शुभाशुभ फल कथन

उल्काशनिधूमाद्यैर्हता विवर्णा विरश्मयो ह्रस्वाः।
हन्युः स्वं स्वं वर्गं विपुलाः स्निग्धाश्च तद्वृद्ध्यै ॥७॥

भाषा—उल्का, वज्र या धूम आदि हत, विवर्ण, ज्योतिरहित या ह्रस्व बिम्ब के सप्तर्षि मण्डल के होने पर वे अपने-अपने वर्ग की हानि तथा विपुल और स्निग्ध बिम्ब के होने पर अपने-अपने वर्ग की वृद्धि करने वाले होते हैं॥७॥

सप्तर्षियों का अपना वर्ग कथन

गन्धर्वदेवदानवमन्त्रौषधिसिद्धयक्षनागानाम्।
पीडाकरो मरीचिर्ज्ञेयो विद्याधराणां च ॥८॥
शकयवनदरदपारतकाम्बोजांस्तापसान् वनोपेतान्।
हन्ति वसिष्ठोऽभिहतो विवृद्धिदो रश्मिसम्पन्नः ॥९॥

अङ्गिरसो ज्ञानयुता धीमन्तो ब्राह्मणाश्च निर्दिष्टाः ।
अत्रेः कान्तारभवा जलजान्यम्भोनिधिः सरितः ।।१०।।
रक्षःपिशाचदानवदैत्यभुजङ्गाः स्मृताः पुलस्त्यस्य ।
पुलहस्य तु मूलफलं क्रतोस्तु यज्ञाः सयज्ञभृतः ।।११।।

माया—भगवान् मरीचि के किसी कारण से पीड़ाकारक होने पर गन्धर्व, देव, दानव, मन्त्र, औषधि, सिद्ध, यक्ष, नाग तथा विद्याधरों की हानि और विमल व विपुल मूर्त्ति होने पर इनकी वृद्धि करने वाले होते हैं।

भगवान् वशिष्ठ के किसी कारणवश पीड़ाकारक होने पर शक, यवन, दरद, पारत, कम्बोज, वनवासियों और तपस्वीजनों की हानि और रश्मियों से सम्पन्न बिम्ब के होने पर उनकी वृद्धि करने वाले होते हैं।

भगवान् अङ्गिरा के पीड़ाकारक होने पर ज्ञानी, बुद्धिमान् तथा ब्राह्मणों की हानि और स्वच्छ व विपुल बिम्ब वाले होने पर उनकी वृद्धि करने वाले होते हैं।

भगवान् अत्रि के पीड़ाकर होने पर वन और जल में उत्पन्न वस्तु, समुद्र, नदियों आदि की हानि तथा स्वच्छ व विपुल रहने पर उनकी वृद्धि करते हैं।

भगवान् पुलह पीड़ाकर हो, तो फल व फूल की हानि तथा विपुल व स्निग्ध बिम्ब वाले होने पर उनकी वृद्ध करने वाले होते हैं।

भगवान् क्रतु के पीड़ाकर होने से यज्ञ व यज्ञकर्त्ता दोनों की हानि होती है। लेकिन उनका बिम्ब स्निग्ध व विपुल होने पर उन दोनों की वृद्धि होती है।।८-११।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-
दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी
व्याख्यायां सप्तर्षिचाराध्यायः त्रयोदशः ।।१३।।

❑❑❑

अथ चतुर्दशोऽध्यायः-१४

नक्षत्रकूर्म निरूपणम्

नक्षत्रों के नौ वर्ग कथन

नक्षत्रत्रयवर्गैराग्नेयाद्यैर्व्यवस्थितैर्नवधा ।
भारतवर्षे मध्यप्रागादिविभाजिता देशाः ।।१।।

माया—सत्ताईश नक्षत्रों को नौ वर्गों में विभाजित करने से प्रत्येक वर्ग में कृत्तिका आदि नक्षत्र क्रम से तीन-तीन नक्षत्र होते हैं। इन नौ वर्गों में मेरु से दक्षिण भाग में स्थित भारत वर्ष को मध्य स्थान में मानकर अन्य देशों को पूर्व आदि क्रम से व्यवस्थित माना गया है।।१।।

कृत्तिका आदि तीन नक्षत्रों के प्रथम वर्गस्थ मध्य देशों के नाम

भद्रारिमेदमाण्डव्यसाल्वनीपोज्जिहानसंख्याताः ।
मरुवत्सघोषयामुनसारस्वतमत्स्यमाध्यमिकाः ।।२।।
माथुरकोपज्योतिषधर्मारण्यानि शूरसेनाश्च ।
गौरग्रीवोद्देहिकपाण्डुगुडाश्वत्थपाञ्चालाः ।।३।।
साकेतकङ्ककुरुकालकोटिकुकुराश्च पारियात्रनगः।
औदुम्बरकापिष्ठलगजाह्वयाश्चेति मध्यमिदम्।।४।।

माया—प्रथम कृत्तिकादि तीन नक्षत्रों के वर्ग में भद्र, अरिमेद, माण्डव्य, साल्व, नीप, उज्जिहान, संख्यात, मरु, वत्स, घोष, यामुन, सारस्वत, मत्स्य, माध्यमिक, माथुर, उपज्योतिष, धर्मारण्य, शूरसेन, शौरग्रीव, उद्देहिक, पाण्डु, गुड, अश्वत्थ, पाञ्चाल, साकेत, कङ्क, कुरु, कालकोटि, कुकुर, पारियात्रनग, औदुम्बर, कापिष्ठल तथा हस्तिनापुर; ये सभी मध्य देश भारतवर्ष के प्रधान विभाग हैं।।२-४।।

आर्द्रा आदि तीन नक्षत्रों के द्वितीय वर्गस्थ पूर्वीय देशों के नाम

अथ पूर्वस्यामञ्जनवृषभध्वजपद्ममाल्यवद्गिरयः ।
व्याघ्रमुखसुह्मकर्वटचान्द्रपुराः शूर्पकर्णाश्च ।।५।।
खसमगधशिबिरगिरिमिथिलसमतटोड्राश्ववदनदन्तुरकाः ।
प्राग्ज्योतिषलौहित्यक्षीरोदसमुद्रपुरुषादाः ।।६।।
उदयगिरिभद्रगौडकपौण्ड्रोत्कलकाशिमेकलाम्बष्ठाः ।
एकपदताम्रलिप्तककोशलका वर्धमानाश्च ।।७।।

भाषा—द्वितीय आर्द्रा आदि तीन नक्षत्रों के वर्ग में अञ्जन, वृषभध्वज, पद्म, माल्यवानगिरि, व्याघ्रमुख, सुह्म, कर्वट, चान्द्रपुर, शूर्पकर्ण, खस, मगध, शिबिरगिरि, मिथिला, समतट, ओड्र, अश्ववदन, दन्तुरक, प्राग्ज्यौतिष, लौहित्यनद, क्षीरोदसमुद्र, पुरुषाद, उदयगिरि, भद्र, गौडक, पौण्ड्र, उत्कल, काशी, मेकल, अम्बष्ठ, एकपद, ताम्रलिप्तक, कोशलक, वर्धमान आदि सभी पूर्व दिशा के प्रधान देश है॥५-७॥

श्लेषादि तीन नक्षत्रों के तृतीय वर्गस्थ आग्नेय देशों के नाम

आग्नेय्यां दिशि कोशलकलिङ्गवङ्गोपवङ्गजठराङ्गाः ।
शौलिकविदर्भवत्सान्ध्रचेदिकाश्चोर्ध्वकण्ठाश्च ॥८॥
वृषनालिकेरचर्मद्वीपा विन्ध्यान्तवासिनस्त्रिपुरी ।
श्मश्रुधरहेमकुड्यव्यालग्रीवा महाग्रीवाः ॥९॥
किष्किन्धकण्टकस्थलनिषादराष्ट्राणि पुरिकदाशार्णाः ।
सह नग्नपर्णशबरैराश्लेषाद्ये त्रिके देशाः ॥१०॥

भाषा—तृतीय श्लेषा आदि तीन श्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रों के वर्ग में कोशल, कलिङ्ग, बङ्ग, उपवङ्ग, जठराङ्ग, शौलिक, विदर्भ, वत्स, आन्ध्र, चेदिक, ऊर्ध्वकण्ठ, वृष, नालिकेर, चर्मद्वीप, विन्ध्याचल के समीपस्थ क्षेत्र, त्रिपुरी, श्मश्रुधर, हेमकूट, व्यालग्रीव, महाग्रीव, किष्किन्धा, कण्टकस्थल, निषादराष्ट्र, पुरिक, दशार्ण, नग्नशबर, पर्णशबर आदि सभी आग्नेय कोण में स्थित प्रधान देश कहे गये हैं॥८-१०॥

उत्तराफाल्गुनी आदि तीन नक्षत्रों के चतुर्थ वर्गस्थ दक्षिणी देशों के नाम

अथ दक्षिणेन लङ्काकालाजिनसौरिकीर्णतालिकटाः ।
गिरिनगरमलयदर्दुरमहेन्द्रमालिन्द्यभरुकच्छाः ॥११॥
कङ्कटकङ्कणवनवासिशिबिकफणिकारकोङ्कणाभीराः ।
आकरवेणावर्तकदशपुरगोनर्दकेरलकाः ॥१२॥
कर्णाटमहाटविचित्रकूटनासिक्यकोल्लगिरिचोलाः ।
क्रौञ्चद्वीपजटाधरकावेर्यो रिष्यमूकश्च ॥१३॥
वैदूर्यशङ्खमुक्तात्रिवारिचरधर्मपट्टनद्वीपाः ।
गणराज्यकृष्णवेल्लूरपिशिकशूर्पाद्रिकुसुमनगाः ॥१४॥
तुम्बवनकार्मणयकयाम्योदधितापसाश्रमा ऋषिकाः ।
काञ्चीमरुचीपट्टनचेर्यार्यकसिंहला ऋषभाः ॥१५॥
बलदेवपट्टनं दण्डकावनतिमिङ्गिलाशना भद्राः ।
कच्छोऽथ कुञ्जरदरी सताम्रपर्णीति विज्ञेयाः ॥१६॥

भाषा—चतुर्थ उत्तराफाल्गुनी आदि तीन उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्रा नक्षत्रों

के वर्ग में लङ्का, कालाजिन, सौरिकर्ण, तालिकाट, गिरिनगर, मलयपर्वत, दर्दुर, महेन्द्र, मालिन्द्य, भरूकच्छ, कङ्कट, कङ्कण, वनवासी, शिबिक, फणिकार, कोङ्कण, अभीर, आकर, वेण, आवर्त्तक, दशपुर, गोनर्द, केरल, कर्णाट, महाटवी, चित्रकूट पर्वत, नासिक्यदेश, कोल्लगिरि, चोल, क्रौञ्चद्वीप, जटाधर, कावेरी नदी, ऋष्यमूक पर्वत, वैदूर्य, शङ्खमुक्ताकर देश, अत्र्याश्रम, वारिचर, धर्मपुरद्वीप, गणराज्य, कृष्णवेल्लूर, पिशिक, शूर्पाद्रि, कुसुमनग, तुम्बवन, कार्मणेयक, दक्षिण समुद्र, तापसाश्रम, ऋषिक, काञ्ची, मरुचीपट्टन, चैर्य, आर्यक, सिंहल, ऋषभ, बालदेव, पट्टन, दण्डकावन, तिमिलिङ्गाशन, भद्र, कच्छ, कुञ्जरदरी, ताम्रपर्णी आदि सभी दक्षिण दिशा में स्थित प्रधान देश परिगणित हैं॥११-१६॥

स्वाती आदि तीन नक्षत्र के पञ्चमवर्गस्थ नैर्ऋत्यदिक्स्थित देशों के नाम

नैर्ऋत्यां दिशि देशाः पह्लवकाम्बोजसिन्धुसौवीराः ।
वडवामुखारवाम्बष्ठकपिलनारीमुखानर्ताः ॥१७॥
फेणगिरियवनमार्गरकर्णप्रावेयपारशवशूद्राः ।
बर्बरकिरातखण्डक्रव्यादाभीरचञ्चूकाः ॥१८॥
हेमगिरिसिन्धुकालकरैवतकसुराष्ट्रबादरद्रविडाः ।
स्वात्याद्ये भत्रितये ज्ञेयश्च महार्णवोऽत्रैव ॥१९॥

माया—पञ्चम स्वाती आदि तीन स्वाती, विशाखा और अनुराधानक्षत्र के वर्ग में पह्लव, काम्बोज, सिन्धु, सौवीर, वडवामुख, अरब, अम्बष्ठ, कपिल, नारीमुख, आनर्त, फेणगिरि, यवन, मार्गर, कर्ण प्रावेय, पारशव, शूद्र, बर्बर, किरात, खण्ड, क्रव्याद, आभीर, चञ्चूक, हेमगिरि, सिन्धुनद, कालक, रैवतक, सुराष्ट्र, बादर, द्रविड आदि सभी नैर्ऋत्य कोणीय प्रमुख देश परिगणित हैं॥१७-१९॥

ज्येष्ठादि तीन नक्षत्रों के षड्वर्गस्थ पश्चिमीय देशों के नाम

अपरस्यां मणिमान् मेघवान् वनौघः क्षुरार्पणोऽस्तगिरिः ।
अपरान्तकशान्तिकहैहयप्रशस्ताद्रिवोक्काणाः ॥२०॥
पञ्चनदरमठपारततारक्षितिजृङ्गवैश्यकनकशकाः ।
निर्मर्यादा म्लेच्छा ये पश्चिमदिक्स्थितास्ते च ॥२१॥

माया—षष्ठम ज्येष्ठा आदि तीन ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रों के वर्ग में मणिमान्, मेघवान्, वनौघ, क्षुरार्पण, अस्तगिरि, अपरान्तक, शान्तिक, हैहय, प्रशस्ताद्रि, वोक्काण, पञ्चनद, रमठ, पारत, तारक्षिति, जृङ्ग, वैश्य, कनक, शक, अन्य मर्यादा रहित पश्चिम दिशा के जनगण म्लेच्छ जाति आदि सभी पश्चिम दिशा में स्थित प्रधान देशों की परिगणना होती है॥२०-२१॥

उत्तराषाढ़ा आदि तीन नक्षत्रों के सप्तवर्गस्थ वायव्य दिक्स्थित देशों के नाम

दिशि पश्चिमोत्तरस्यां माण्डव्यतुषारताललहलमद्राः ।
अश्मककुलूतहलडाः स्त्रीराज्यनृसिंहवनखस्थाः ।।२२।।
वेणुमती फल्गुलुका गुलुहा मरुकुच्चचर्मरङ्गाख्याः ।
एकविलोचनशूलिकदीर्घग्रीवास्यकेशाश्च ।।२३।।

भाषा—सप्तम उत्तराषाढ़ा आदि तीन उत्तराषाढ़ा, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्रों के वर्ग में माण्डव्य, तुषार, ताल, हल, मद्र, अश्मक, कुलूत, हलड, स्त्रीराज्य, नृसिंहवन, खस्थ, वेणुमती नदी, फल्गुलुका, गुलुहा, मरूकुच्छ, चर्मरङ्ग, एकविलोचन, शूलिक, दीर्घ ग्रीव, आस्यकेश आदि सभी वायव्य कोणीय प्रधान देश कहे गए हैं।।२२-२३।।

शतभिषा आदि तीन नक्षत्रों के अष्टमवर्गस्थ उत्तरीय देशों के नाम

उत्तरतः कैलासो हिमवान् वसुमान् गिरिर्धनुष्मांश्च ।
क्रौञ्चो मेरुः कुरवस्तथोत्तराः क्षुद्रमीनाश्च ।।२४।।
कैकयवसातियामुनभोगप्रस्थार्जुनायनाग्नीध्राः ।
आदर्शान्तर्द्वीपित्रिगर्ततुरगाननाः श्वमुखाः ।।२५।।
केशधरचिपिटनासिकदासेरकवाटधानशरधानाः ।
तक्षशिलपुष्कलावतकैलावतकण्ठधानाश्च ।।२६।।
अम्बरमद्रकमालवपौरवकच्छारदण्डपिङ्गलकाः ।
माणहलहूणकोहलशीतकमाण्डव्यभूतपुराः ।।२७।।
गान्धारयशोवतिहेमतालराजन्यखचरगव्याश्च ।
यौधेयदासमेयाः श्यामाकाः क्षेमधूर्ताश्च ।।२८।।

भाषा—अष्टम शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा और उत्तराभाद्रपदा तीन नक्षत्रों के वर्ग में कैलाश, हिमवान्, वसुमान्, धनुष्मान्, क्रौञ्च, मेरूगिरि, उत्तरकुरु, क्षुद्रमीन, कैकय, वसाति, यामुन, भोगप्रस्थ, अर्जुनायन, आग्नीध्र, आदर्श, आन्तर्द्वीपी, त्रिगर्त, तुरगानन, श्वमुख, केशधर, चिपिटनासिक, दासेरक, वाटधान, शरधान, तक्षशील, पुष्कलावत, कैलावत, कण्ठधान, अम्बर, मद्रक, मालव, पौरव, कच्छार, दण्डपिङ्गलक, माणहल, हूण, कोहल, शीतक, माण्डव्य, भूतपुर, गान्धार, यशोवती नगरी, हेमताल, राजन्य, खचर, गव्य, यौधेय, दासमेय, श्यामक, क्षेमधूर्त आदि सभी उत्तर दिशा में स्थित प्रधान देश परिगणित हैं।।२४-२८।।

रेवती आदि तीन नक्षत्रों के नवम वर्गस्थ ईशान कोणीय देशों के नाम

ऐशान्यां मेरुकनष्टराज्यपशुपालकीरकाश्मीराः ।
अभिसारदरदतङ्गणकुलूतसैरिन्ध्रवनराष्ट्राः ।।२९।।

ब्रह्मपुरदार्वडामरवनराज्यकिरातचीनकौणिन्दाः ।
भल्लाः पटोलजटासुरकुनटखसघोषकुचिकाख्याः ।।३०।।
एकचरणानुविद्धाः सुवर्णभूर्वसुधनं दिविष्ठाश्च ।
पौरवचीरनिवासित्रिनेत्रमुञ्जाद्रिगान्धर्वाः ।।३१।।

माया—नवम रेवती, अश्विनी और भरणी तीन नक्षत्रों के वर्ग में मेरुक, नष्टराज्य, पशुपाल, कीर, काश्मीर, अभिसार, दरद, तङ्गण, कुलूत, सैरिन्ध्र, वनराष्ट्र, ब्रह्मपुर, दार्वडामर, वनराज्य, किरात, चीन, कौणिन्द, भल्ल, पटोल, जटासुर, कुनट, खस, घोष, कुचिक, एकचरण, अनुविद्ध, सुवर्णभू, वसुधन, दिविष्ट, पौरव, चीरनिवासी, त्रिनेत्र, मुञ्जाद्रि, गन्धर्व आदि सभी ईशान कोण के प्रधान देशों के नाम परिगण्य हैं।।२९-३१।।

कृत्तिकादि नक्षत्रों के वर्ग फल कथन

वर्गैराग्नेयाद्यैः क्रूरग्रहपीडितैः क्रमेण नृपाः ।
पाञ्चालो मागधिकः कालिङ्गश्च क्षयं यान्ति ।।३२।।
आवन्तोऽथानर्तो मृत्युं चायाति सिन्धुसौवीरः ।
राजा च हारहौरो मद्रेशोऽन्यश्च कौणिन्दः ।।३३।।

माया—उपरोक्त नौ वर्गों के कृत्तिका आदि नक्षत्र पापग्रह से पीड़ित होने पर क्रमशः पाञ्चाल, मगध, कलिङ्ग, अवन्ती, आनर्त्त, सिन्धु, सौवीर, हारहौर, मद तथा कौलिन्द देश के राजाजनों की हानि होती है।।३२-३३।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां नक्षत्रकूर्माध्यायश्चतुर्दशः ।।१४।।

□□□

अथ पञ्चदशोऽध्यायः-१५

नक्षत्रव्यूह विचारः

किस नक्षत्र के आश्रित कौंन-कौंन से पदार्थ हैं इसका विचार करने के क्रम में
कृत्तिका नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

आग्नेये सितकुसुमाहिताग्निमन्त्रज्ञसूत्रभाष्यज्ञाः ।
आकरिकनापितद्विजघटकारपुरोहिताब्दज्ञाः ।।१।।

माया—श्वेत वर्ण, कुसुम (पुष्प), अग्निहोत्र करने वाले, मन्त्रों के ज्ञाता, सूत्रों का भाष्य करने वाले अथवा यज्ञशास्त्र के ज्ञाता, वैयाकरण , अथोत्पत्ति करने वाले, नाई, द्विज, कुम्भकार, पुरोहित, वर्ष-मास आदि को निरूपित करने वाले आदि पदार्थ कृत्तिका नक्षत्र से विचार योग्य हैं।।१।।

रोहिणी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

रोहिण्यां सुव्रतपण्यभूपधनियोगयुक्तशाकटिकाः ।
गोवृषजलचरकर्षकशिलोच्चयैश्वर्यसम्पन्नाः ।।२।।

माया—सुव्रत, व्यापार, राजा, धनवान्, योगशास्त्र के ज्ञाता, बैलगाड़ी चलाकर आजीविका करने वाले, गाय, बैल, जल में रहने व विचरण करने वाले प्राणि, कृषक, पर्वत, ऐश्वर्य सम्पन्न आदि पदार्थ का विचार रोहिणी नक्षत्र से करना चाहिए।।२।।

मृगशिर नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

मृगशिरसि सुरभिवस्त्राब्जकुसुमफलरत्नवनचरविहङ्गाः ।
मृगसोमपीथिगान्धर्वकामुका लेखहाराश्च ।।३।।

माया—सुगन्धप्रद वस्तु, वस्त्र, जल में उत्पन्न, पुष्प, आम आदि फल, रत्न, वन में निवास करने वाले, पक्षी,वन व पहाड़ों में रहने वाले जन्तु, सोमरस ग्रहणकर्त्ता, गायक, कामासक्त,पत्रवितरण करने वाला आदि का विचार मृगशिर नक्षत्र से करते हैं।।३।।

आर्द्रा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

रौद्रे वधबन्धानृतपरदारस्तेयशाठ्यभेदरताः ।
तुषधान्यतीक्ष्णमन्त्राभिचारवेतालकर्मज्ञाः ।।४।।

माया—वधिक, बाँधने वाले, असत्य बोलने वाले, परायी स्त्री में अनुरक्त जन, चौर कर्म करने वाले, मिथ्या प्रलाप करने वाले (ठग), अलग-अलग करने वाले, धान-गूहूँ जैसे धान्य, क्रूर, मन्त्रों के ज्ञाता, अभिचारी अर्थात् वशीकरणादि कर्म को करने या

जानने वाले, वैतालोत्थापन कर्मों को करने वाले आदि विषयों का विचार आर्द्रा नक्षत्र से करते हैं॥४॥

पुनर्वसु नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

आदित्ये सत्यौदार्यशौचकुलरूपधीयशोऽर्थयुताः ।
उत्तमधान्यं वणिजः सेवाभिरताः सशिल्पिजनाः ॥५॥

भाषा—सत्यवक्ता, उदार व पवित्र आचरण वाले, कुलीन,सुन्दर, बुद्धिमान्, यशस्वी, धनवान्, उत्तम अन्नादि, व्यापारी, सेवक, शिल्पी आदि विषयों का विचार पुनर्वसु नक्षत्र से करना चाहिए॥५॥

पुष्य नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

पुष्ये यवगोधूमाः शालीक्षुवनानि मन्त्रिणो भूपाः ।
सलिलोपजीविनः साधवश्च यज्ञेष्टिसक्ताश्च ॥६॥

भाषा—यव, गेहूँ, धान्य ईख, वन, सचिव, राजा, जल से जीविकोपार्जन करने वाले, सज्जन, यज्ञ व काम्य कार्मे को कराने वाले आदि सभी वतुओं का पुष्य नक्षत्र से विचार करना चाहिए॥६॥

श्लेषा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

अहिदेवे कृत्रिमकन्दमूलफलकीटपन्नगविषाणि ।
परधनहरणाभिरतास्तुषधान्यं सर्वभिषजश्च ॥७॥

भाषा—कृत्रिम वस्तु, कन्द, मूल, फल, कीट, सर्प, विष, परायाधन हरणकर्ता, धान-गेहूँ जैसे अन्न, कायचिकित्सक (सर्जरी आदि करने वाले) आदि पदार्थ का विचार श्लेषा नक्षत्र से करना श्रेष्ठ है॥७॥

मघा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

पित्र्ये धनधान्याढ्याः कोष्ठागाराणि पर्वताश्रयिणः ।
पितृभक्तवणिक्शूराः क्रव्यांदाः स्त्रीद्विषो मनुजाः ॥८॥

भाषा—धन-धान्य से सम्पन्न, अन्नादि संग्रह कर रखने वाले स्थान या साधन, पर्वतों पर निवास करने वाले, माता-पित का सेवा करने वाले, व्यापार करने वाले, वीर-पुरूषार्थी, मांस का आहार लेने वाले, स्त्रियों से द्वेष करने वाले आदि विषयों को मघा नक्षत्र से विचार करना चाहिए॥८॥

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

प्राक्फल्गुनीषु नटयुवतिसुभगगान्धर्वशिल्पिपण्यानि ।
कर्पासलवणमक्षिकतैलानि कुमारकाश्चापि ॥९॥

भाषा—नृत्य करने वाले, स्त्री, सर्वप्रिय, संगीतशास्त्र को जानने वाले, शिल्पकार, व्यापार, कार्पास, लवण, मधु, तेल, बालकों आदि पदार्थ पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र से विचार करने योग्य है॥९॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

आर्यम्णे मार्दवशौचविनयपाखण्डिदानशास्त्ररताः ।
शोभनधान्यमहाधनकर्मानुरताः समनुजेन्द्राः ॥१०॥

भाषा—मृदुभाव युक्त, पवित्र व शुद्ध जीवन जीने वाले, नीतिज्ञ, पाखण्डी, दाता, शास्त्रों में अनुरक्त, सुन्दर, धान्य, अत्यधिक धनवान्, कर्मनिष्ठ, राजा आदि का उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र से विचार करना चाहिए॥१०॥

हस्त नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

हस्ते तस्करकुञ्जररथिकमहामात्रशिल्पिपण्यानि ।
तुषधान्यं श्रुतयुक्ता वणिजस्तेजोयुताश्चात्र ॥११॥

भाषा—हस्त नक्षत्र से चोर, कुञ्जर, रथ का सवारी करने वाला, महामन्त्री, शिल्पकार, व्यापार, धान, गेहूँ जैसे धान्य, सूनने वाला, व्यापारी, तेजयुक्त आदि पदार्थ का विचार किया जाता है॥११॥

चित्रा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

त्वाष्ट्रे भूषणमणिरागलेख्यगान्धर्वगन्धयुक्तिज्ञाः ।
गणितपटुतन्तुवायाः शालाक्या राजधान्यानि ॥१२॥

भाषा—चित्रा नक्षत्र से आभूषण बनाने वाले, मणियों को जानने वाले, वस्त्रों को रंगने वाले, लेखक, संगीत के ज्ञाता, सुगन्धित वस्तु को जानने वाले, गणितशास्त्र में निपुण, कपड़ा बुनने वाले,नेत्र रोग विशेषज्ञ, राजा के उपयोग योग्य धान्य आदि का विचार करना चाहिए॥१२॥

स्वाती नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

स्वातौ खगमृगतुरगा वणिजो धान्यानि वातबहुलानि ।
अस्थिरसौहृदलघुसत्त्वतापसाः पण्यकुशलाश्च ॥१३॥

भाषा—स्वाती नक्षत्र से पक्षी,जंगल व पहाड़ों पर रहने वाले पशु, व्यापारी, धान्य, वायु प्रधान स्थान, तात्कालिक मित्र, बलहीन, तपस्वी, व्यापार निपुण व्यक्ति आदि का विचार करना योग्य है॥१३॥

विशाखा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

इन्द्राग्निदैवते रक्तपुष्पफलशाखिनः सतिलमुद्गाः ।
कर्पासमाषचणकाः पुरन्दरहुताशभक्ताश्च ॥१४॥

माया—विशाखा नक्षत्र से लाल फूल और फल वाले शाखायें, तिल, मूँग, कर्पास, उड़द, चना, इन्द्र व अग्नि के भक्त जन आदि विचार करने योग्य हैं॥१४॥

अनुराधा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

मैत्रे शौर्यसमेता गणनायकसाधुगोष्ठियानरताः ।
ये साधवश्च लोके सर्वं च शरत्समुत्पन्नम् ॥१५॥

माया—अनुराधा नक्षत्र से बलवान्, गणों के प्रमुखजनों में विश्वास करने वाले, साधुओं में निष्ठा रखने वाले, सभाओं में जाने वाले, वाहनों का उपयोग करने वाले, देश व ग्राम के उपकारीजन, शरद् ऋतु में उत्पन्न होने वाले सभी धान्य आदि का विचार करना चाहिए॥१५॥

ज्येष्ठा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

पौरन्दरेऽतिशूराः कुलवित्तयशोऽन्विताः परस्वहृतः ।
विजिगीषवो नरेन्द्राः सेनानां चापि नेतारः ॥१६॥

माया—ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्तर्गत अत्यन्त बलवान्, कुलीन, धनवान्, यशस्वी, परायाधन हरण करने वाले, अन्य सभी को जीतने की इच्छा वाले राजाजन, सेना के प्रधान आदि आते हैं॥१६॥

मूल नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

मूले भेषजभिषजो गणमुख्याः कुसुममूलफलवार्ताः ।
बीजान्यतिधनयुक्ताः फलमूलैर्ये च वर्तन्ते ॥१७॥

माया—मूल नक्षत्र गत पदार्थों में औषधि, चिकित्सक, गणप्रधान, फूल-मूल व फल से जीवन निर्वाह करने वाले, सभी तरह के बीज, अत्यन्त धनवान्, फल व मूल का मात्र आहार करने वाले आदि आते हैं॥१७॥

पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

आप्ये मृदवो जलमार्गगामिनः सत्यशौचधनयुक्ताः ।
सेतुकरवारिजीवकफलकुसुमान्यम्बुजातानि ॥१८॥

माया—मृदुहृदय वाले, जलमार्ग से यात्रा करने वाले, सत्यवक्ता, शुद्ध व पवित्र जीवन जीने वाले, धनवान्, पुल आदि बनाने वाले, जल से जीविका चलाने वाले, जल से उत्पन्न फल और फूल आदि का पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र से विचार करना चाहिए॥१८॥

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

विश्वेश्वरे महामात्रमल्लकरितुरगदेवतासक्ताः ।
स्थावरयोधा भोगान्विताश्च ये तेजसा युक्ताः ॥१९॥

भाषा—उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के अन्तर्गत महामन्त्री, मल्ल युद्ध करने वाले, हाथी व घोड़ा की सवारी करने वाले, देवताओं का भक्त, वृक्षादि, युद्ध करने वाले, भोगी, तेजस्वी आदि का विचार करना चाहिए॥१९॥

श्रवण नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

श्रवणे मायापटवो नित्योद्युक्ताश्च कर्मसु समर्थाः ।
उत्साहिनः सधर्मा भागवताः सत्यवचनाश्च ॥२०॥

भाषा—श्रवण नक्षत्र के अन्तर्गत प्रपञ्चकुशल, नित्य उद्योग करने वाले, कार्य करने में समर्थ, उत्साहसम्पन्न, धार्मिक, भगवद् भक्त, सत्यवचन बोलने वाले आदि का विचार करना श्रेष्ठ है॥२०॥

धनिष्ठा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

वसुभे मानोन्मुक्ताः क्लीबाचलसौहृदाः स्त्रियां द्वेष्याः ।
दानाभिरता बहुवित्तसंयुताः शमपराश्च नराः ॥२१॥

भाषा—धनिष्ठा नक्षत्र के अन्तर्गत मानापमान से रहित हृदय वाले, नपुंसक, तात्कालिक, मित्रता करने वाले, स्त्रियों से द्वेषभाव रखने वाले, दान करने के प्रति उत्साहित, अतिधनवान्, जितेन्द्रिय आदि का विचार करना श्रेयस्कर है॥२१॥

शतभिषा नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

वरुणेशे पाशिकमत्स्यबन्धजलजानि जलचराजीवाः ।
सौकरिकरजकशौण्डिकशाकुनिकाश्चापि वर्गेऽस्मिन् ॥२२॥

भाषा—शतभिषा नक्षत्र के अन्तर्गत रस्सी से बाँधने वाले, मछली फँसाने वाले, जल में उत्पन्न द्रव्य, जलचर जन्तुओं से जीविका चलाने वाले, सूअरों को पालने वाले, धोबी, मद्य (नशा करने वाले अन्य द्रव्य भी) बेचने वाले, पक्षियों का शिकार करने वाले आदि का विचार करना उचित है॥२२॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

आजे तस्करपशुपालहिंस्रकीनाशनीचशठचेष्टाः ।
धर्मव्रतैर्विरहिता नियुद्धकुशलाश्च ये मनुजाः ॥२३॥

भाषा—पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के अन्तर्गत चोर, पशुओं का पालन करने वाले, क्रूर, क्षुद्रजन, नीचजन, परोपकार करने से परहेज करने वाले, अधार्मिक, संकल्पहीन, बाहु युद्ध करने में निपुण आदि पदार्थ का विचार किया जाता है॥२३॥

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

आहिर्बुध्न्ये विप्राः क्रतुदानतपोयुता महाविभवाः ।
आश्रमिणः पाखण्डा नरेश्वराः सारधान्यं च ॥२४॥

माया—उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र के अन्तर्गत ब्राह्मण, यज्ञकर्त्ता, दाता, तपस्वी, अत्यन्त ऐश्वर्यवान्, आश्रम के अनुसार जीवन जीने वाला, वेदादि निन्दक, राजाजन, सारधान्य आदि पदार्थ का विचार करना श्रेयस्कर है॥२४॥

रेवती नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

पौष्णे सलिलजफलकुसुमलवणमणिशङ्खमौक्तिकाब्जानि ।
सुरभिकुसुमानि गन्धा वणिजो नौकर्णधाराश्च ॥२५॥

माया—रेवती नक्षत्र के अन्तर्गत जल से उत्पन्न द्रव्य, फल, पुष्प, नमक, मणि, शङ्ख, मोती, कमल आदि तथा सुगन्धित पुष्प व द्रव्य, व्यापारी, नाविक आदि पदार्थ का चिन्तन करना श्रेष्ठ है॥२५॥

अश्विनी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

अश्विन्यामश्वहराः सेनापतिवैद्यसेवकास्तुरगाः ।
तुरगारोहा वणिजो रूपोपेतास्तुरगरक्षाः ॥२६॥

माया—अश्विनी नक्षत्र के अन्तर्गत घोड़ाचोर, सेनापति, चिकित्सक, सेवक, घोड़ा, अश्वारोह, व्यापार करने वाले, सुन्दर रूप वाले, अश्व रक्षक आदि का विचार होता है॥२६॥

भरणी नक्षत्र से विचारित वस्तु कथन

याम्येऽसृक्पिशितभुजः क्रूरा वधबन्धताडनासक्ताः ।
तुषधान्यं नीचकुलोद्भवा विहीनाश्च सत्त्वेन ॥२७॥

माया—भरणी नक्षत्र के अन्तर्गत रक्त मिला हुआ मांस भक्षण करने वाला, क्रूर, वधिक, बाँधने वाले, ताडन करने वाले, भूसी वाले धान्य, नीच कुल में उत्पन्न, अनुदार आदि का विचार करना श्रेष्ठ है॥२७॥

ब्राह्मणादि वर्णगत नक्षत्र कथन

पूर्वात्रयं सानलमग्रजानां राज्ञां तु पुष्येण सहोत्तराणि ।
सपौष्णमैत्रं पितृदैवतं च प्रजापतेर्भं च कृषीवलानाम् ॥२८॥
आदित्यहस्ताभिजिदाश्विनानि वणिग्जनानां प्रवदन्ति तानि ।
मूलत्रिनेत्रानिलवारुणानि भान्युग्रजातेः प्रभविष्णुतायाः ॥२९॥
सौम्यैन्द्रचित्रावसुदैवतानि सेवाजनस्वाम्यमुपागतानि ।
सार्पं विशाखा श्रवणो भरण्यश्चण्डालजातेरभिनिर्दिशन्ति ॥३०॥

माया—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा तथा कृत्तिका; ये चार नक्षत्र ब्राह्मवर्ण वाचक हैं। उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा और पुष्य; ये चार नक्षत्र क्षत्रिय वर्ण वाचक हैं। रेवती, अनुराधा, मघा और रोहिणी; ये चार नक्षत्र वैश्य वर्ग

वाचक हैं। पुनर्वसु, हस्त, अभिजित् और अश्विनी; ये चार नक्षत्र व्यापार करने वालों के वाचक हैं। मूल, आर्द्रा, स्वाती और शतभिषा; ये चार नक्षत्र क्रूर कर्मा व्यक्ति के वाचक हैं। मृगशिर, ज्येष्ठा, चित्रा और धनिष्ठा; ये चार नक्षत्र सेवकजनों के वाचक तथा श्लेषा, विशाखा, श्रवण और भरणी; ये चार नक्षत्र चाण्डाल जनों के वाचक कहे गये हैं॥२८-३०॥

क्रूर ग्रहों का प्रयोजन कथन

रविरविसुतभोगमागतं क्षितिसुतभेदनवक्रदूषितम् ।
ग्रहणगतमथोल्कया हतं नियतमुषाकरपीडितं च यत् ।।३१।।
तदुपहतमिति प्रचक्षते प्रकृतिविपर्यययातमेव वा ।
निगदितपरिवर्गदूषणं कथितविपर्ययगं समृद्धये ।।३२।।

माया—सूर्य व शनि से युक्त मंगल के भेदन और वक्र गति से पीड़ित ग्रहणकालिक, उल्का से हत, सदा चन्द्र किरण से निष्पीड़ित, स्वाभाविक, श्रेष्ठ गुणों से हीन नक्षत्रों को ऋषिजनों ने दूषित कहा है। इस प्रकार दूषित नक्षत्र उपरोक्त अपने वर्ग के देशों या जनों की हानि तथा इससे भिन्न लक्षणों से लक्षित हो, तो अपने वर्ग के देशादि की अभिवृद्धि करने वाला होता है॥३१-३२॥

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां नक्षत्रव्यूहाध्यायः पञ्चदशः ।।१५।।

□□□

अथ षोडशोऽध्यायः-१६

ग्रहभक्तियोगविचारः

किस देश के किन पुरुषों, वस्तुओं आदि का कौन-से ग्रह अधिपति (स्वामी) हैं, इसे व्यक्त करने के क्रम में सूर्य से सम्बन्धित देश और व्यक्ति का कथन

प्राङ् नर्मदार्द्धशोणोड्रवङ्गसुह्माः कलिङ्गबाह्लीकाः ।
शकयवनमगधशबरप्राग्ज्योतिषचीनकाम्बोजाः ॥१॥
मेकलकिरातविटका बहिरन्तःशैलजाः पुलिन्दाश्च ।
द्रविडानां प्रागर्द्धं दक्षिणकूलं च यमुनायाः ॥२॥
चम्पोदुम्बरकौशाम्बिचेदिविन्ध्याटवीकलिङ्गाश्च ।
पुण्ड्रा गोलाङ्गूलश्रीपर्वतवर्द्धमानानि ॥३॥
इक्षुमतीत्यथ तस्करपारतकान्तारगोपबीजानाम् ।
तुषधान्यकटुकतरुकनकदहनविषसमरशूराणाम् ॥४॥
भेषजभिषक्चतुष्पदकृषिकरनृपहिंस्रयायिचौराणाम् ।
व्यालारण्ययशोयुततीक्ष्णानां भास्करः स्वामी ॥५॥

भाषा—नर्मदा नदी के पूर्वभाग, शोणनद, उड्र, बङ्ग, सुह्य, कलिङ्ग, बाह्लीक, शक, यवन, मगध, शबर, प्राग्ज्यौतिष, चीन, काम्बोज, मेकल, किरात, विटक, पर्वत के बाहर और मध्य भाग के निवासीजन पुलिन्द, द्रविड का पूर्वभाग, यमुना से दक्षिणी किनारा, विन्ध्याचल के मध्यभाग, कलिङ्ग देश के जनगण, पुण्ड्र, गोलङ्गूल, श्रीपर्वत, वर्द्धमान, इक्षुवती नदी, चोर, पारतदेश के जनगण, वन, गौपालक जन, बीज, भूसी युक्त धान्य, कटुक द्रव्य, वृक्ष, सुवर्ण, अग्नि, विष, युद्ध में शूर, औषधि, चिकित्सक, चौपाया पशु, कृषक, राजाजन, क्रूर, युद्ध जीतने की इच्छा से करने वाले, चोर, सर्प, निर्जन स्थल, यशस्वी, तीक्ष्णजन आदि का अधिपति सूर्य को कहा गया है॥१-५॥

चन्द्र सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

गिरिसलिलदुर्गकोशलभरुकच्छसमुद्ररोमकतुषाराः ।
वनवासितङ्गणहलस्त्रीराज्यमहार्णवद्वीपाः ॥६॥
मधुररसकुसुमफलसलिललवणमणिशङ्खमौक्तिकाब्जानाम् ।
शालियवौषधिगोधूमसोमपाक्रन्दविप्राणाम् ॥७॥
सितसुभगतुरगरतिकरयुवतिचमूनाथभोज्यवस्त्राणाम् ।
शृङ्गिनिशाचरकार्षकयज्ञविदां चाधिपश्चन्द्रः ॥८॥

भाषा—पर्वत, जल, दुर्ग, कौशलदेश के जनगण, भरूकच्छ, समुद्र, रोमक,

तुषार, वनवासी, तङ्गण, हल, स्त्रीराज, महासागर के अन्त:वर्ति द्वीप, मीठारस, सभी प्रकार के पुष्प व फल, जल, नमक, मणि, शङ्ख, मोती, जलोत्पन्न वस्तु, धान्य, यव, औषधि, गेहूँ, सोम रस का पान करने वाले, आक्रन्द देश के जन, ब्राह्मण, श्वेतवर्ण के वस्तुऐं, सर्वप्रिय जन, अश्व, कामातुर, स्त्री, सेनापति, खाद्यसामग्री, वस्त्र, सिंह युक्त पशु, निशाचर, कृषक, यज्ञकर्त्ता आदि का अधिपति चन्द्र होता है॥६-८॥

मंगल सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

शोणस्य नर्मदाया भीमरथायाश्च पश्चिमार्द्धस्थाः ।
निर्विन्ध्या वेत्रवती सिप्रा गोदावरी वेणा ॥९॥
मन्दाकिनी पयोष्णी महानदी सिन्धुमालतीपाराः ।
उत्तरपाण्ड्यमहेन्द्राद्रिविन्ध्यमलयोपगाश्चोलाः ॥१०॥
द्रविडविदेहान्ध्राश्मकभासापरकौङ्कणाः समन्त्रिषिकाः ।
कुन्तलकेरलदण्डककान्तिपुरम्लेच्छसङ्करिणः ॥११॥
नासिक्यभोगवर्द्धनविराटविन्ध्याद्रिपार्श्वगा देशाः ।
ये च पिबन्ति सुतोयां तापीं ये चापि गोमतीसलिलम् ॥१२॥
नागरकृषिकरपारतहुताशनाजीविशस्त्रवार्तानाम् ।
आटविकदुर्गकर्वटवधिकनृशंसावलिप्तानाम् ॥१३॥
नरपतिकुमारकुञ्जरदाम्भिकडिम्भाभिघातपशुपानाम् ।
रक्तफलकुसुमविद्रुमचमूपगुडमद्यतीक्ष्णानाम् ॥१४॥
कोशभवनाग्निहोत्रिकधात्वाकरशाक्यभिक्षुचौराणाम् ।
शठदीर्घवैरबह्वाशिनां च वसुधासुतोऽधिपतिः ॥१५॥

माया—शोणनद, नर्मदा और भीमस्था नदी की पश्चिम दिशा के आधे भाग के राजाजन, निर्विन्ध्या, वेत्रवती, गोदावरी, शिप्रा, वेणा, मन्दाकिनी, पयोष्णी, महानदी, सिन्धु, मालती तथा पारानदी, उत्तरपाण्ड्य, महेन्द्र पर्वत, विन्ध्याचल तथा मलयगिरि के नजदीक स्थित देश, चोल, द्रविड, विदेह, अन्ध्र, अध्यम, भासापर, कौङ्कण, समन्त्रिषिक, कुन्तल, केरल, दण्डकारण्य, कान्तिपुर, म्लेच्छ, सङ्कर जाति, नासिक्य, भोगवर्द्धन, तर्कराट, विन्ध्याचल के नजदीक स्थित देश, तापी और गोमती नदी के सुन्दर, मधुर व स्वच्द जल पीने वाले जगगण, नागरजन, कृषक, पारत, अग्निहोत्री, सोनार, शस्त्र से जीविका चलाने वाले, वनवासीजन,दुर्ग, कर्वट देश के निवासीजन, वधिक, पापी, कार्यों को नहीं करने वाला अकर्मण्यजन, राजाजन, हाथी, बालक, दम्भी, बालमृत्युकर, पशुपालक, लाल फल व पुष्प, प्रवाल, सेनापति, गुड़, मदिरा, तीक्ष्ण, कोषागार, अग्निहोत्र करने वाले, धातु खान, शाक्य, भिक्षु, चोर, शठ (परकार्य हन्ता), दृढ़द्वेष, अति भोजन करने वाले आदि का अधिपति मंगल को कहा गया है॥९-१५॥

बुध सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

लोहित्यः सिन्धुनदः सरयूर्गाम्भीरिका रथाख्या च ।
गङ्गाकौशिक्याद्याः सरितो वैदेहकाम्बोजाः ॥१६॥
मथुरायाः पूर्वार्द्धं हिमवद्गोमन्तचित्रकूटस्थाः ।
सौराष्ट्रसेतुजलमार्गपण्यबिलपर्वताश्रयिणः ॥१७॥
उदपानयन्त्रगान्धर्वलेख्यमणिरागगन्धयुक्तिविदः ।
आलेख्यशब्दगणितप्रसाधकायुष्यशिल्पज्ञाः ॥१८॥
चरपुरुषकुहकजीवकशिशुकविशठसूचकाभिचाररताः ।
दूतनपुंसकहास्यज्ञभूततन्त्रेन्द्रजालज्ञाः ॥१९॥
आरक्षकनटनर्तकघृततैलस्नेहबीजतिक्तानि ।
व्रतचारिरसायनकुशलवेसराश्चन्द्रपुत्रस्य ॥२०॥

माया—लोहित्य,सिन्धुनदी, सरयू, गाम्भीरिका, रथाख्या, गंगा, कौशिकी, विपाशा, सरस्वती, चन्द्रभागा आदि नदी और मिथिला, काम्बोज, मथुरा आदि के पूर्वार्द्ध भाग, हिमालय पर्वत, गोमन्त पर्वत और चित्रकूट पर्वत के प्रान्तभाग के निवासी जन, सौराष्ट्र देश के जनगण, सेतु के आश्रय और जलमार्ग के आश्रय में रहने वाले जन, व्यापार करने वाले, बिल में रहने वाले, पर्वत पर वास करने वाले, वापी, कुआँ, तालाब आदि, यन्त्रज्ञ, संगीतज्ञ, लेखक, मणि को पहचान करने वाले, वस्त्रादि रंगने वाले, सुगन्धिद्रव्य का निर्माता, चित्रकार, वैयाकरण, ज्यौतिष, आयुष्य या आयु, शक्ति वर्द्धक रसायन को बनाने या जानने वालों, शिल्पकार, गुप्तचर, कुहक, बालक, कवि, शठ, चुगली करने वाले, वशीकरणोच्चाटन-विद्वेष,मारण चतुष्टय को जानने वाले, दूत, नपूंसक, हास्यकर्त्ता, भूततन्त्र को जानने वाले, इन्द्रजाल के ज्ञाता, रक्षक, नर्तक, घृत, तेल, स्नेह, बीज, तीक्त, व्रती, रसायनज्ञ, वेसर आदि का अधिपति बुध को आचर्यों ने कहा है॥१६-२०॥

बृहस्पति सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

सिन्धुनदपूर्वभागो मथुरापश्चार्द्धभरतसौवीराः ।
स्रुघ्नौदीच्यविपाशासरिच्छतद्रू रमठशाल्वाः ॥२१॥
त्रैगर्तपौरवाम्बष्ठपारता वाटधानयौधेयाः ।
सारस्वतार्जुनायनमत्स्यार्द्धग्रामराष्ट्राणि ॥२२॥
हस्त्यश्वपुरोहितभूपमन्त्रिमाङ्गल्यपौष्टिकासक्ताः ।
कारुण्यसत्यशौचव्रतविद्यादानधर्मयुताः ॥२३॥
पौरमहाधनशब्दार्थवेदविदुषोऽभिचारनीतिज्ञाः ।
मनुजेश्वरोपकरणं छत्रध्वजचामराद्यं च ॥२४॥
शैलेयकुष्ठमांसीतगररससैन्धवानि वल्लीजम् ।
मधुररसमधूच्छिष्टानि चोरकश्चेति जीवस्य ॥२५॥

माया—सिन्धु नदी की पूर्व दिशा के देश, मथुरा की पश्चिम दिशा का आधाभाग, भरत, सौवीर, स्नुघ्न, उत्तर दिशा के निवासीजन, विपाशा नदी, शतद्रू नदी, रमठ, शाल्व, त्रैगर्त, पौरव, अम्बष्ठ, पारत, वाटधान, यौधेय, सारस्वत, अर्जुनायन, तथा मत्स्य देशों के ग्राम व देश का आधा भाग, हाथी, घोड़ा, पुरोहित, राजा, मन्त्री, माङ्गलिक कार्य में आसक्तजन, पौष्टिक कार्यरतजन, दयालु, सत्यवक्ता, शुद्ध व पवित्र जीवन यापन करने वाले, तपस्वी, विद्वान् , दाता, धार्मिक, ग्रामीण, वैयाकरण, अर्थोत्पत्ति करने वाले, वेदज्ञ, अभिचार क्रिया निपुण, नीतिज्ञ, राजकीय उपकरण आयुध, सन्नाह, छत्र, ध्वजा, चामर आदि, सुगन्ध द्रव्य, कुष्ठरोगी, मांसीतगर, रस, नमक, मूँग आदि, मधुररस, मधूच्छिष्ठ, चोरक, सुगन्धित द्रव्य आदि का अधिपति गुरु को कहा गया है॥२१-२५॥

शुक्र सम्बन्धित देश व्यक्ति व वस्तु कथन

तक्षशिलमर्तिकावतबहुगिरिगान्धारपुष्कलावतकाः ।
प्रस्थलमालवकैकयदाशार्णोशीनराः शिबयः ॥२६॥
ये च पिबन्ति वितस्तामिरावतीं चन्द्रभागसरितं च ।
रथरजताकरकुञ्जरतुरगमहामात्रधनयुक्ताः ॥२७॥
सुरभिकुसुमानुलेपनमणिवज्रविभूषणाम्बुरुहशय्याः ।
वरतरुणयुवतिकामोपकरणमृष्टान्नमधुरभुजः ॥२८॥
उद्यानसलिलकामुकयशः सुखौदार्यरूपसम्पन्नाः ।
विद्वदमात्यवणिग्जनघटकृच्चित्राण्डजास्त्रिफलाः ॥२९॥
कौशेयपट्टकम्बलपत्रौर्णिकरोध्रपत्रचोचानि ।
जातीफलागुरुवचापिप्पल्य श्चन्दनं च भृगोः ॥३०॥

माया—तक्षशिला नगर, मार्तिकावत देश, बहुगिरि, गान्धार, पुष्कलावतक, प्रस्थल, मालव, कैकय, दशार्ण, उशीनगर, शिवि, वितस्ता, ऐरावती और चन्द्रभागा नदी के जल का पान करने वाले जनगण,रथ, रजत, आकर, हाथी, घोड़ा, महामन्त्री, धनवान्, सुगन्ध, द्रव्य, पुष्प, चन्दन, मणि, वज्र, भूषण, अम्वुरुह, शय्या, प्रधान, युवा, स्त्री, काम के उपकरण जैसे पुष्प, धूप, माला, चन्दन आदि, मृष्ट अन्न का आहार करने वाले जन, मीठा आहार लेने वाले जन, उद्यान, जल, कामी, यशस्वी, सुखवान्, दानी, सुन्दर, विद्वान्, जनों, मन्त्री, व्यापार से जीवन यापन करने वाले, कुम्भकार, चित्राण्डज, फलत्रय जैसे एला, लवङ्ग कंकोल आदि, कौशेयपट, कम्बल, पत्रौर्णिक, रोध्र,पत्र, चोच (नारियल), जायफल, अगरु, वचा, पिप्पली, चन्दन आदि का अधिपति शुक्र को कहा गया है॥२६-३०॥

शनि सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

आनर्तार्बुदपुष्करसौराष्ट्राभीरशूद्ररैवतकाः ।
नष्टा यस्मिन् देशे सरस्वती पश्चिमो देशः ॥३१॥

कुरुभूमिजाः प्रभासं विदिशा वेदस्मृती महीतटजाः ।
खलमलिननीचतैलिकविहीनसत्त्वोपहतपुंस्त्वाः ॥३२॥
बान्धनशाकुनिकाशुचिकैवर्तविरूपवृद्धसौकरिकाः ।
गणपूज्यस्खलितव्रतशबरपुलिन्दार्थपरिहीनाः ॥३३॥
कटुतिक्तरसायनविधवयोषितो भुजगतस्करमहिष्यः ।
खरकरभचणकवातलनिष्पावाश्चार्कपुत्रस्य ॥३४॥

माया—आनर्त्त, अर्बुद, पुष्कर, सौराष्ट्र, आभीर, शूद्र, रैवतक, सरस्वती नदी जहाँ नष्ट हुई, उससे पश्चिम देश, कुरूक्षेत्र में उत्पन्न जन, प्रभासक्षेत्र, विदिशा नगर, वेदस्मृती नदी, महानदी के तट पर उत्पन्न जन, खल, मलिन, नीच, तेली, निर्बल, नपुंसक, बन्धनस्थल, पक्षियों का शिकार करने वाले, अपवित्रजन, धीवर, कुरूप, वृद्ध, सूअर पालक, गण प्रधान, अनाचरण युक्त जन, शबर, पुलिन्द, दरिद्र, कटु द्रव्य, तिक्त, रसायन, विधवास्त्री, सर्प, चोर, महिषी, गधा, ऊँट, चना, वातल, शाल्य (धान्य विशेष) आदि का स्वामी शनि को कहा गया है॥३१-३४॥

राहु से सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

गिरिशिखरकन्दरदरीविनिविष्टा म्लेच्छजातयः शूद्राः ।
गोमायुभक्षशूलिकवोक्काणाश्वमुखविकलाङ्गा ॥३५॥
कुलपांसनहिंस्रकृतघ्नचौरनिःसत्यशौचदानाश्च ।
खरचरनियुद्धवित्तीव्ररोषगर्त्ताश्रया नीचाः ॥३६॥
उपहतदाम्भिकराक्षसनिद्राबहुलाश्च जन्तवः सर्वे ।
धर्मेण च सन्त्यक्ता माषतिलाश्चर्कशशिशत्रोः ॥३७॥

माया—पर्वत शिखर, कन्दरा, दरी (गुहा) आदि में निवास करने वाले, म्लेच्छजाति, शूद्र, शृङ्गाल, मांस भक्षण करने वाले, शूलिक, वोक्काण, अश्वमुख, विकलाङ्ग जन, कुलकलङ्क जन, क्रूर, कृतघ्न, चोर, मिथ्याचरण वाला, पवित्रता रहितजन, कृपण, गधा, गुप्तचर, बाहु युद्ध करने में निपुण, अतिक्रोधी, गर्तवासी, नीच, उपहतजन, दाम्भिक, राक्षस, देर तक सोने वाला सभी जन्तु, धर्म रहित जन, उड़द, तिल आदि का अधिपति राहु को कहा गया है॥३५-३७॥

केतु सम्बन्धित देश, व्यक्ति व वस्तु कथन

गिरिदुर्गपह्लवश्वेतहूणचोलावगाणमरुचीनाः ।
प्रत्यन्तधनिमहेच्छव्यवसायपराक्रमोपेताः ॥३८॥
परदारविवादरताः पररन्ध्रकुतूहला मदोत्सिक्ताः ।
मूर्खाधार्मिकविजिगीषवश्च केतोः समाख्याताः ॥३९॥

माया—पर्वत दुर्ग, पह्लवजन, श्वेत, हूण, चोल, आवगाण, मरूभूमि, चीन,

गह्वरों में वास करने वाले, धनी, महेच्छ, व्यवसाय निपुण, पराक्रमी, परस्त्रीगमन कर्त्ता, विवादी, छिद्रान्वेषण करने वाला, मत्त, मूर्ख, अधार्मिक, जीतने की ईच्छा वाला आदि का अधिपति केतु को जानना चाहिए।।३८-३९।।

ग्रहों देश, व्यक्ति व वस्तु के प्रयोजन कथन

उदयसमये यः स्निग्धांशुर्महान् प्रकृतिस्थितो
यदि च न हतो निर्घातोल्कारजोग्रहमर्दनैः ।
स्वभवनगतः स्वोच्चप्राप्तः शुभग्रहवीक्षितः
स भवति शिवस्तेषां येषां प्रभुः परिकीर्तितः ।।४०।।

माया—उदयकाल में विमल, विपुल, प्रकृति (स्वभाव) स्थित तथा निर्घात, उल्का, धूलि, ग्रहयुद्ध आदि से अनाहत, स्वराशि में स्थित, उच्च राशि गत, शुभग्रह (चन्द्र, बुध, गुरु व शुक्र) से दृष्ट जिस देश, व्यक्ति या वस्तु का अधिपति ग्रह हो, उनके लिए शुभ दायक होता है।।४०।।

पुनः ग्रहों के देश व्यक्ति व वस्तु के प्रयोजन कथन

अभिहितविपरीतलक्षणे क्षयमुपगच्छति तत्परिग्रहः ।
डमरभयगदातुरा जना नरपतयश्च भवन्ति दुःखिताः ।।४१।।
यदि न रिपुकृतं भयं नृपाणां स्वसुतकृतं नियमादमात्यजं वा ।
भवति जनपदस्य चाप्यवृष्ट्या गमनमपूर्वपुराद्रिनिम्नगासु ।।४२।।

माया—उपरोक्त शुभ लक्षणों के विपरीत लक्षण दीखने पर ग्रह अपने परिग्रह वर्ग का शस्त्रकलह, रोग, भय आदि से विनाश करता है और राजाजनों के लिए भी दुःखदायक होता है। उपरोक्त प्रकार की स्थिति में भी यदि राजा या प्रजा को शत्रु, पुत्र या मन्त्री का भय उत्पन्न नहीं हो, तो सभी को अनावृष्टि से अपूर्व पुर,पर्वत और नदियों में गमन करना पड़ता है। कहने का तात्पर्य है कि उपरोक्त प्रकार का उत्पात के होने पर राजा हो या प्रजा सभी को शत्रु, पुत्र या मन्त्री से भय निश्चय ही प्राप्त होता है। यदि किसी उपाय से उक्त विपत्तियाँ टल जाय, तो अनावृष्टि से धान्य, साग, जल आदि आहार वस्तु के लिए निर्गम पुर, पर्वत और नदियों का आश्रय करना पड़ता है।।४१-४२।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां ग्रहभक्तियोगाध्यायः षोडशः ।।१६।।

□□□

अथ सप्तदशोऽध्यायः-१७

ग्रहयुद्ध निरूपणम्

उपोद्घात कथन

युद्धं यथा यदा वा भविष्यमादिश्यते त्रिकालज्ञैः ।
तद्विज्ञानं करणे मया कृतं सूर्यसिद्धान्ते ।।१।।

माया—जब भी या जैसे भी पञ्चतारा ग्रहों के युद्ध प्रसङ्ग को त्रिकालदर्शी मुनियों ने कहा है, उसे सूर्यसिद्धान्त से लेकर उस विज्ञान को मैंने भी अपने करण 'पञ्चसिद्धान्तिका' में उद्धृत किया है।।१।।

ताराग्रहों के युद्ध का कारण कथन

वियति चरतां ग्रहाणामुपर्युपर्यात्ममार्गसंस्थानाम् ।
अतिदूराद् दृग्विषये समतामिव सम्प्रयातानाम् ।।२।।
आसन्नक्रमयोगाद् भेदोल्लेखांशुमर्दनासव्यैः ।
युद्धं चतुष्प्रकारं पराशराद्यैर्मुनिभिरुक्तम् ।।३।।

माया—आकाश में विचरण करते हुए, ऊर्ध्वाधर अपनी-अपनी कक्षा में स्थित, अत्यन्त दूर से देखने पर तुल्य स्थानीय प्रतिभासित होने वाले ग्रहों के गर्ग, पराशर आदि ऋषि-मुनियों ने समीपता क्रम के योग-प्रकार से भेद, उल्लेख, अंशुमर्दन और अपसव्य; इन चार प्रकार के ग्रह युद्धों का उललेख किये हैं।

युद्ध की स्थिति में नीचे स्थित बिम्ब से ऊपर स्थित बिम्ब आच्छादित हो, तो भेदनामक युद्ध होता है। एक ग्रह की बिम्बपरिधि से अन्य ग्रह की बिम्ब परिधि स्पर्श करने पर उल्लेख नामक युद्ध होता है। समीप स्थित दोनों ग्रहों के किरण संयोग होने पर अंशुमर्दन तथा ठीक दक्षिण व उत्तर में स्थित होने पर अपसव्य नामक युद्ध होता है।।२-३।।

चार प्रकार के युद्ध में से प्रत्येक का पृथक् फल कथन

भेदे वृष्टिविनाशो भेदः सुहृदां महाकुलानां च ।
उल्लेखे शस्त्रभयं मन्त्रिविरोधः प्रियान्नत्वम् ।।४।।
अंशुविरोधे युद्धानि भूभृतां शस्त्ररुक्क्षुदवमर्दाः ।
युद्धे चाप्यपसव्ये भवन्ति युद्धानि भूपानाम् ।।५।।

माया—ग्रहों के बीच भेद युद्ध होने पर वृष्टि की हानि होती है। मित्रों और कुलीन

व्यक्तियों के मध्य पारस्परिक भेद उत्पन्न होता है। उल्लेख नाम के युद्ध होने से शस्त्र से उत्पन्न भय, सचिवों में आपसी द्वेष तथा दुर्भिक्ष भी होता हैं। अंशुमर्दन नाम का युद्ध होने से राजाजनों में परस्पर युद्ध होता है तथा शास्त्र, रोग, क्षुधा आदि से जनगण अत्यन्त पीड़ित होता है। जब कोई ग्रह, किसी ग्रह के दक्षिण भाग से आगे जाकर वाम भाग पर्यन्त स्थित हो, तो इस अपसव्य नामक युद्ध में राजाजनों में आपस में युद्ध होता है।।४-५।।

ग्रहों की यायी, नागर, आक्रन्द आदि संज्ञा कथन

रविराक्रन्दो मध्ये पौरः पूर्वेऽपरे स्थितो यायी।
पौरा बुधगुरुरविजा नित्यं शीतांशुराक्रन्दः ।।६।।
केतुकुजराहुशुक्रा यायिन एते हता घ्नन्ति।
आक्रन्दयायिपौरान् जयिनो जयदाः स्ववर्गस्य ।।७।।

माया—मध्याह्न काल में सूर्य आक्रन्द, पूर्व में रहने पर पौर तथा पश्चिम होने पर यायी संज्ञक होता है। बुध, गुरु और शनि हमेशा पौर, चन्द्र आक्रन्द तथा केतु, मंगल राहु व शुक्र यायी संज्ञक होते हैं इन ग्रहों के पीड़ित रहने पर आक्रन्द, यायी और पौरों की हानि होती है। इस प्रकार आक्रन्द संज्ञक ग्रह के पीड़ित होने पर आक्रन्द ग्रह की, यायी संज्ञक पीड़ित होकर यायी (चलने वालों) की तथा पौर संज्ञक ग्रह पीड़ित होकर पुवासिजनों की हानि करने वाला होता है। ऐसे में ग्रहों के विजयी होने से वे अपने वर्ग के परिग्रह को विजय दिलाते हैं।।६-७।।

उपरोक्त प्रसङ्ग में विशेष कथन

पौरे पौरेण हते पौराः पौरान् नृपान् विनिघ्नन्ति।
एवं याय्याक्रन्दा नागरयायिग्रहाश्चैव ।।८।।

माया—पौर ग्रह का पौर ग्रह से आहत होने पर पुरवासी राजाओं से पुरवासी राजा की हानि होती है। इस प्रकार यायी ग्रह से आक्रन्द ग्रह के आहत होने पर यायी जन से आक्रन्द जन की तथा आक्रन्द से यायी ग्रह के आहत होने पर आक्रन्द जन से यायी जन की हानि होती है। जब नागर ग्रह से यायी आहत हो, तो नागरजन से यायी जन की और यायी ग्रह से नागर ग्रह के पीड़ित होने पर यायीजन से नागरजन की हानि होती है।।८।।

पराजित ग्रहों के लक्षण कथन

दक्षिणदिक्स्थः परुषो वेपथुरप्राप्य सन्निवृत्तोऽणुः।
अधिरूढो विकृतो निष्प्रभो विवर्णश्च यः स जितः ।।९।।

माया—वे ग्रह, जो दक्षिण दिशा में स्थित हो, रूक्ष हो, कम्पन युक्त हो, अन्य ग्रह के समीप न जाकर वापस हो, सूक्ष्म बिम्ब वाला हो, अन्य ग्रह से पीड़ित, विकारयुक्त, किरण रहित और विवर्ण हो, तो इस प्रकार के लक्षण युक्त ग्रह पराजित होते हैं।।९।।

जयी ग्रहों के लक्षण कथन

उक्तविपरीतलक्षणसम्पन्नो जयगतो विनिर्देश्यः ।
विपुलः स्निग्धो द्युतिमान् दक्षिणदिक्स्थोऽपि जययुक्तः ।।१०।।

माया—उपरोक्त लक्षणों के विपरीत लक्षण युक्त हो अर्थात् उत्तर दिशा में स्थित हो, विमल बिम्ब वाला हो, कम्पन रहित हो, दूसरे ग्रह के समीपस्थ हो, ऊपरी भाग में स्थित तथा तेजस्वी हो तथा दक्षिण दिशा में स्थित होकर भी विपुल, विमल, कान्ति सम्पन्न बिम्ब वाला ग्रह हो, तो इन लक्षणों से युक्त ग्रह विजयी होता है।।१०।।

पुनः जयी ग्रहों का लक्षण कथन

द्वावपि मयूखयुक्तौ विपुलौ स्निग्धौ समागमे भवतः ।
तत्रान्योन्यं प्रीतिर्विपरीतावात्मपक्षघ्नौ ।।११।।

माया—दो ग्रह किरणों से युक्त, विपुल बिम्ब वाला अथवा विमल होकर यदि योग करते हैं, तो उस समय दोनों ग्रहों के वर्गों में प्रीति तथा विपरीत होने पर अपने-अपने वर्गों की हानि करने वाले होते हैं।।११।।

जयी ग्रहों के लक्षणों में विशेष कथन

युद्धं समागमो वा यद्यव्यक्तौ स्वलक्षणैर्भवतः ।
भुवि भूभृतामपि तथा फलमव्यक्तं विनिर्देश्यम् ।।१२।।

माया—पञ्चतारा ग्रहों का परस्पर युद्ध अथवा उनकी चन्द्र के साथ संयुति हो और यदि वे अपने-अपने लक्षणों से अप्रकट रहते हैं अर्थात् युद्ध की स्थिति में उन दोनों में कौन विजयी है, या पराजित है, इसका ज्ञान नहीं हो और संयुति की स्थिति में ग्रह से चन्द्र उत्तर या दक्षिण न होकर मध्यगत होकर संचरित होता हो, तो पृथ्वी पर राजाजनों के लिए भी अव्यक्त (अनिर्णित) फल कथन करना चाहिए।।१२।।

सभी ग्रहों से पराजित भौम का फल कथन

गुरुणा जितेऽवनिसुते बाह्लीका यायिनोऽग्निवार्ताश्च ।
शशिजेन शूरसेनाः कलिङ्गशाल्वाश्च पीड्यन्ते ।।१३।।
सौरेणारे विजिते जयन्ति पौराः प्रजाश्च सीदन्ति ।
कोष्ठागारम्लेच्छक्षत्रियतापश्च शुक्रजिते ।।१४।।

माया—गुरु से पराजित मंगल के होने से वाह्लीक देश के जनगण, विजय की चाहत करने वाले, अग्नि कर्म से जीविका चलाने वाले आदि सभी पीड़ित होते हैं।

बुध से पराजित मंगल के होने से शूरसेन, कलिङ्ग, शाल्व आदि देश में निवास करने वाले जनगणों को पीड़ा मिलती हैं

शनि से पराजित मंगल के होने से नगरों में निवास करने वाले जनगण विजय को प्राप्त करते हैं और अन्य जनगणों को दुःख की प्राप्ति होती है।

शुक्र से पराजित मंगल के होने पर धान्य रखने के स्थान, म्लेच्छ जाति के जन, क्षत्रिय, तपस्वी आदि पीड़ित होते हैं।।१३-१४।।

सभी ग्रहों से पराजित बुध का फल कथन

भौमेन हते शशिजे वृक्षसरित्तापसाश्मकनरेन्द्राः ।
उत्तरदिक्स्थाः क्रतुदीक्षिताश्च सन्तापमायान्ति ।।१५।।
गुरुणा जिते बुधे म्लेच्छशूद्रचौरार्थयुक्तपौरजनाः ।
त्रैगर्तपार्वतीयाः पीड्यन्ते कम्पते च मही ।।१६।।
रविजेन बुधे ध्वस्ते नाविकयोधाब्जसधनगर्भिण्यः ।
भृगुणा जितेऽग्निकोपः सस्याम्बुदयायिविध्वंसः ।।१७।।

माया—मंगल से पराजित बुध के होने से वृक्ष आदि, नदी, तपस्वी, अश्मक देश के जनगण, राजाजन, उत्तर दिशा के देशों के जनगण, यज्ञदीक्षितजन आदि सन्ताप को प्राप्त करने वाले होते हैं।

गुरु से पराजित बुध के होने पर म्लेच्छ जाति जन, शूद्र जाति जन, चोर, धनवान्, नगरों में निवास करने वाले जन, त्रिगर्त देश के जनगण, पर्वत पर रहने वाले जन आदि पीड़ित होते हैं तथा भूकम्प भी होता है।

शनि से पराजित बुध के होने से नाविक या मल्लाहजन, युद्ध करने वाले, जल से उत्पन्न द्रव्य, धनवान्, गर्भ सम्पन्ना स्त्रीजन आदि का नाश होता है।

शुक्र से पराजित बुध के होने पर अग्नि का प्रकोप, धान्य, बादल, यात्रा करने वाले राजाजन आदि की भी हानि होती है।।१५-१७।।

सभी ग्रहों से पराजित गुरु का फल कथन

जीवे शुक्राभिहते कुलूतगान्धारकैकया मद्राः ।
शाल्वा वत्सा वङ्गा गावः सस्यानि पीड्यन्ते ।।१८।।
भौमेन हते जीवे मध्यो देशो नरेश्वरा गावः ।
सौरेण चार्जुनायनवसातियौधेयशिबिविप्राः ।।१९।।
शशितनयेनापि जिते बृहस्पतौ म्लेच्छसत्यशस्त्रभृतः ।
उपयान्ति मध्यदेशश्च संक्षयं यच्च भक्तिफलम् ।।२०।।

माया—शुक्र से पराजित गुरु के होने से कुलूत, गान्धार, कैकय, मद्र, शाल्व, वत्स, बङ्ग आदि देश के जनगण, गायों और धान्यों की हानि होती हैं।

मंगल से पराजित गुरु के होने पर मध्य देशीय जन, राजाजन, गायें आदि तथा शनि से पराजित गुरु के होने पर अर्जुनायन, वसाति, यौधेय, शिबि आदि देशों के जनगण और ब्राह्मण जाति जन के लिए पीड़ादायक होता है।

बुध से पराजित गुरु के होने पर म्लेच्छ जनों, सत्यवक्ताजन, शस्त्र धारण करने वाले जन, मध्यदेश में निवास करने वाले जन आदि की हानि होती है। साथ-साथ ग्रह भक्ति योग नामक अध्याय में कथित गुरु भक्ति फल की भी हानि होती है॥१८-२०॥

सभी ग्रहों से पराजित शुक्र का फल कथन

शुक्रे बृहस्पतिजिते यायी श्रेष्ठो विनाशमुपयाति ।
ब्रह्मक्षत्रविरोधः सलिलं च न वासवस्त्यजति ॥२१॥
कोशलकलिङ्गवङ्गा वत्सा मत्स्याश्च मध्यदेशयुताः ।
महतीं व्रजन्ति पीडां नपुंसकाः शूरसेनाश्च ॥२२॥
कुजविजिते भृगुतनये बलमुख्यवधो नरेन्द्रसंग्रामाः ।
सौम्येन पार्वतीयाः क्षीरविनाशोऽल्पवृष्टिश्च ॥२३॥
रविजेन सिते विजिते गुणमुख्याः शस्त्रजीविनः क्षत्रम् ।
जलजाश्च निपीड्यन्ते सामान्यं भक्तिफलमन्यत् ॥२४॥

भाषा—बृहस्पति से पराजित शुक्र के होने पर यात्रियों और श्रेष्ठ जनों का विनाश तथा ब्राह्मणों व क्षत्रियों में परस्पर द्वेष, अनावृष्टि के साथ कोशल, कलिङ्ग वङ्ग, वत्स, मत्स्य, मध्यदेश आदि देशों के जनगण, नपुंसक, शूरसेन देश के जनों को भारी पीड़ा सहन करना पड़ता है।

मंगल से पराजित शुक्र के होने पर सेना प्रमुख की मृत्यु तथा राजाजनों में परस्पर युद्ध कराने वाला होता है।

बुध से पराजित शुक्र होने पर पर्वत पर निवास करने वाले जनों, दूध आदि की हानि होती है और अवर्षण की स्थिति उत्पन्न होती है।

शनि से पराजित शुक्र होने पर अपने समूह के प्रधान, शस्त्र से जीवनयापन करने वाले, क्षत्रिय वर्णके जन, जल से उत्पन्न वस्तु आदि पीड़ित होते हैं तथा साधारण भक्ति फल और अपने भक्तिफल की भी हानि करते हैं॥२१-२४॥

सभी ग्रहों से पराजित शनि का फल कथन

असिते सितेन निहतेऽर्घवृद्धिरहिविहगमानिनां पीडा ।
क्षितिजेन तङ्गणान्ध्रोड्रकाशिबाह्लीकदेशानाम् ॥२५॥

सौम्येन पराभूते मन्देऽङ्गवणिग्विहङ्गपशुनागाः ।
सन्ताप्यन्ते गुरुणा स्त्रीबहुला महिषकशकाश्च ।।२६।।

माया—शुक्र से पराजित शनि के होने पर सभी पदार्थों के मूल्य में वृद्धि होती है तथा सर्प, पक्षी, सम्मानित जनों को पीड़ित करता है।

मंगल से पराजित शनि के होने पर तङ्गण, आन्ध्र, उड्र, काशी, वाह्लीक आदि देशों में निवास करने वाले जनगणों की हानि होती है।

बुध से पराजित शनि के होने पर अङ्ग देशीय जनों, व्यापारियों, पक्षी, पशु, हाथी आदि को सन्ताप देने वाला होता है।

गुरु से पराजित शनि के होने पर स्त्री बाहुल्य वाला देश, महिषक देश में निवास करने वाले जन, शक देशीय जन आदि को सन्तापित करने वाला होता है॥२५-२६॥

ग्रहों के विशेष फल कथन

अयं विशेषोऽभिहितो हतानां कुजज्ञवागीशसितासितानाम् ।
फलं तु वाच्यं ग्रहभक्तितोऽन्यद्यथा तथा घ्नन्ति हताः स्वभक्तीः ।।२७।।

माया—इस प्रकार ये विशेष प्रकार के फल मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि ग्रहों के कहे जा चुके हैं। शेष अन्य फल ग्रहभक्ति से कहे जाने चाहिए। जैसे व्यक्त अथवा अव्यक्त प्रकार से ग्रहों के सन्तापित होना कहा गया है, वैसे-ही व्यक्त अथवा अव्यक्त प्रकार से ग्रह स्वभक्ति फलों की हानि भी होती है॥२७॥

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां ग्रहयुद्धाध्यायः सप्तदशः ।।१७।।

□□□

अथाष्टादशोऽध्यायः-१८

शशि-ग्रह समागम विचारः

चन्द्रमा की गति लक्षण कथन

भानां यथासम्भवमुत्तरेण यातो ग्रहाणां यदि वा शशाङ्कः ।
प्रदक्षिणं तच्छुभदं नृपाणां याम्येन यातो न शिवः शशाङ्कः ।।१।।

माया—यदि चन्द्रमा नक्षत्रों या ग्रहों के समीपतर होकर प्रदक्षिण क्रम से उत्तर दिशा की ओर से गमन करता है, तो राजाजनों के लिए शुभदायक तथा दक्षिण दिशा की ओर से गमन करता है, तो अशुभदायक होता है।

इस प्रकार का समागम चन्द्रमा के शर से नक्षत्रों के शर का अल्प या समान होने पर उन नक्षत्रों से होता है; क्योंकि कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, शतभिषा और रेवती नक्षत्रों का शर चन्द्रमा के शर से अल्प होने से चन्द्र के साथ उनका समागम सम्भव होता है। इस स्थिति में ध्यानार्ह है कि नक्षत्रों का उत्तर शर चन्द्रमा से अधिक होने पर चन्द्रमा सदा नक्षत्र की दक्षिण दिशा की ओर से गमन करने वाला होता है। नक्षत्रों का दक्षिण शर चन्द्रमा के शर से अधिक होने पर नक्षत्रों की उत्तर दिशा की ओर से चन्द्रमा सदा गमन करता है।।१।।

मंगल से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन

चन्द्रमा यदि कुजस्य यात्युदक् पार्वतीयबलशालिनां जयः ।
क्षत्रियाः प्रमुदिताः सयायिनो भूरिधान्यमुदिता वसुन्धरा ।।२।।

माया—मंगल से उत्तर भाग की ओर से यदि चन्द्रमा विचरण करता हो, तो पर्वत पर रहने वाले तथा बलवान् जनों की विजय होती है और यायीजनों के साथ क्षत्रिय जन भी प्रसन्न होते हैं तथा पृथ्वी प्रचुर धान्य से सम्पन्न होती है।।२।।

बुध से उत्तरदिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन

उत्तरतः स्वसुतस्य शशाङ्कः पौरजयाय सुभिक्षकरश्च ।
सस्यचयं कुरुते जनहार्दिं कोशचयं च नराधिपतीनाम् ।।३।।

माया—बुध के उत्तर भाग की ओर से यदि चन्द्रमा विचरण करता हो, तो

राजाजनों की विजय होती है। सुभिक्षकारक होता है। तथा धान्यों की अभिवृद्धि, राजागणों को आत्म संतुष्टि तथा राजजनों के कोष की भी संवृद्धि होती है।।३।।

गुरु से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन

बृहस्पतेरुत्तरगे शशाङ्के पौरद्विजक्षत्रियपण्डितानाम् ।
धर्मस्य देशस्य च मध्यमस्य वृद्धिः सुभिक्षं मुदिताः प्रजाश्च ।।४।।

माया—बृहस्पति के उत्तर भाग की ओर से यदि चन्द्रमा विचरण करता हो, तो जनगणों, ब्राह्मणों, क्षत्रियों, पण्डितों, धर्म, मध्यदेशीय जनों आदि की अभिवृद्धि होती है, सुभिक्ष होता है तथा प्रजागण प्रसन्न होते हैं।।४।।

शुक्र से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन

भार्गवस्य यदि यात्युदक् शशी कोशयुक्तगजवाजिवृद्धिदः ।
यायिनां च विजयो धनुष्मतां सस्यसम्पदपि चोत्तमा तदा ।।५।।

माया—शुक्र के उत्तरभाग की ओर से यदि चन्द्रमा विचरण करता हो,तो सभी के कोष, हाथी, घोड़ा आदि की अभिवृद्धि, धनुष धारण करने वाले और जीतने की इच्छा वाले की विजय तथा धान्य की अच्छी पैदावार होती है।।५।।

शनि से उत्तर दिशा में स्थित चन्द्र का फल कथन

रविजस्य शशी प्रदक्षिणं कुर्याच्चेत्पुरभूभृतां जयः ।
शकबाह्लिकसिन्धुपह्लवा मुदभाजो यवनैः समन्विताः ।।६।।

माया—शनि के उत्तर भाग की ओर यदि चन्द्रमा विचरण करता हो, तो नगर में निवास करने वाले जनगणों और राजाजनों की विजय तथा शक, वाह्लीक, सैन्धव, वह्लव आदि देश के निवासी और यवन; से सभी प्रमुदित होते हैं।।६।।

चन्द्र फल में विशेष कथन

येषामुदग्गच्छति भग्रहाणां प्रालेयरश्मिर्निरुपद्रवश्च ।
तद्द्रव्यपौरेतरभक्तिदेशान् पुष्णाति याम्येन निहन्ति तानि ।।७।।

माया—उत्पात हीन चन्द्रमा, जिन नक्षत्रों या ग्रहों के उत्तर भाग की ओर से विचरण कर रहा हो, तो उनसे सम्बन्धित पदार्थों की वृद्धि और दक्षिण भाग की ओर से विचरण कर रहा हो, तो उनकी हानि करने वाला होता है।।७।।

पुनः चन्द्रफल में विशेष फल कथन

शशिनि फलमुदक्स्थे यद् ग्रहस्योपदिष्टं
भवति तदपसव्ये सर्वमेव प्रतीपम् ।

इति शशिसमवायाः कीर्तिता भग्रहाणां
न खलु भवति युद्धं साकमिन्दोर्ग्रहर्क्षैः ।।८।।

माया—ग्रहों के उत्तर दिक् स्थित चन्द्र फल के विपरीत फल उनके दक्षिण दिक् स्थित चन्द्र के होते हैं। इस प्रकार चन्द्र के साथ ग्रह या नक्षत्र का योग समागम, सूर्य के साथ अस्त तथा मंगल आदि तारा ग्रहों के पारस्परिक संयोग युद्ध कहलाता है।।८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शशिग्रहसमागमाध्यायः अष्टादशः।।१८।।

❑❑❑

अथैकोनविंशोऽध्यायः-१९

ग्रहवर्षफल विचारः

सूर्य का फल कथन

सर्वत्र भूर्विरलसस्ययुता वनानि
दैवाद् बिभक्षयिषुदंष्ट्रिसमावृतानि ।
नद्यश्च नैव हि पयः प्रचुरं स्रवन्ति
रुग्भेषजानि न तथातिबलान्वितानि ।।१।।
तीक्ष्णं तपत्यदितिजः शिशिरेऽपि काले
नात्यम्बुदा जलमुचोऽचलसन्निकाशाः ।
नष्टप्रभर्क्षगणशीतकरं नभश्च
सीदन्ति तापसकुलानि सगोकुलानि ।।२।।
हस्त्यश्वपत्तिमदसह्यबलैरुपेता
बाणासनासिमुशलातिशयाश्चरन्ति ।
घ्नन्तो नृपा युधि नृपानुचरैश्च देशान्
संवत्सरे दिनकरस्य दिनेऽथ मासे ।।३।।

माया—सूर्य के वर्ष, मास या दिन के समय सर्वत्र पृथ्वी पर स्वल्प धान्य का पैदावार होता है। काल के वश से भक्ष्य की आकांक्षा करने वाले दंष्ट्री समूह जैसे—साँप, नेवला, सुअर आदि से सम्पन्न वन के नदी आदि में प्रचुर जल नहीं होता है। आरोग्य प्राप्ति योग्य उत्कृष्ट औषधि की भी कमी रहती है। शिशिर ऋतु के समय अर्थात् माघ, फाल्गुन आदि मासों में भी सूर्य अत्यन्त ताप का उत्सर्जन करने वाला होता है पर्वताकार बादल भी अतिवृष्टि करने में असमर्थ होता है। आकाश में चन्द्र व नक्षत्र भी प्रकाशहीन प्रतीत होता है। तपस्वीजनों के साथ गायें भी शोकाकुल या दुःखी होती हैं। युद्ध के समय हाथी, घोड़ा और पैदल सेना से सम्पन्न असहज सैन्य बल धनुष, खड्ग व मुसल आदि शस्त्रों से सम्पन्न मन्त्रीगणों के साथ राजाजन एक के बाद एक देशों को नष्ट करते हुए गमन करते हैं॥१-३॥

चन्द्र का वर्षादि फल कथन

व्याप्तं नभः प्रचलिताचलसन्निकाशै–
र्व्यालाञ्जनालिगवलच्छविभिः पयोदैः ।

गां पूरयद्भिरखिलाममलाभिरद्भि–
रुत्कण्ठितेन गुरुणा ध्वनितेन चाशाः ।।४।।
तोयानि पद्मकुमुदोत्पलवन्त्यतीव
फुल्लद्रुमाण्युपवनान्यलिनादितानि ।
गावः प्रभूतपयसो नयनाभिरामा
रामा रतैरविरतं रमयन्ति रामान् ।।५।।
गोधूमशालियवधान्यवरेक्षुवाटा
भूः पाल्यते नृपतिभिर्नगराकराढ्या ।
चित्यङ्किता क्रतुवरेष्टिविघुष्टनादा
संवत्सरे शिशिरगोरभिसम्प्रवृत्ते ।।६।।

माया—चन्द्र के वर्ष, मास या दिन के समय आकाश मेघों से आच्छादित चञ्चल पर्वत, साँप, अञ्जन (कज्जल), अलि (भ्रमर), महिषशृङ्ग आदि के समान स्वच्छ जल से भी पृथ्वी को सम्पन्न करने वाले और विरहयुक्त मनुष्यों के उत्सुकतापूर्ण उच्च ध्वनि से समस्त दिशाओं को गूञ्जायमान करने वाले, कमल, व कुमुद पुष्पों से सम्पन्न जल, उल्लसित वृक्ष तथा गूञ्जन करते भ्रमरों से युक्त वाटिका, अत्यधिक दूध देने वाली गायें, अपने नेत्रों से सुन्दरी स्त्री लगातार अपने पति को प्रसन्न करने वाली, गेहूँ,शाठी, यव, उत्तम धान्य व ईख से सम्पन्न जन आकरों से युक्त, अग्नि स्थान से व्याप्त तथा उत्कृष्ट यज्ञ व इष्टि से सम्पन्न पृथ्वी का राजा द्वारा पालन किया जाता है।।४-६।।

मंगल का वर्षादि फल कथन

वातोद्धतश्चरति वह्निरतिप्रचण्डो
ग्रामान् वनानि नगराणि च सन्दिधक्षुः ।
हाहेति दस्युगणपातहता रटन्ति
निःस्वीकृता विपशवो भुवि मर्त्यसङ्घाः ।।७।।
अभ्युन्नता वियति संहतमूर्तयोऽपि
मुञ्चन्ति कुत्रचिदपः प्रचुरं पयोदाः ।
सीम्नि प्रजातमपि शोषमुपैति सस्यं
निष्पन्नमप्यविनयादपरे हरन्ति ।।८।।
भूपा न सम्यगभिपालनसक्तचित्ताः
पितोत्थरुक्प्रचुरता भुजगप्रकोपः ।
एवंविधैरुपहता भवति प्रजेयं
संवत्सरेऽवनिसुतस्य विपन्नसस्या ।।९।।

माया—मंगल के वर्ष, मास या दिन के समय वायु से प्रज्वलित; ग्राम, वन व नगरों को जलाने की आकांक्षा युक्त प्रचण्ड अग्नि उत्पन्न होती है। चोरों और डाकुओं के द्वारा धनहीन होकर पीड़ायुक्त जनगण हाहाकार मचाते हैं। आकाशस्थ व्यवस्थित मूर्त्ति बने बादल कहीं भी अति वृष्टि नहीं करता है। नीच स्थान के खेतों में भी उत्पन्न धान्य सूखने लगते हैं और पके चुके धान्य भी वज्र आदि उत्पात के होने से विनष्ट होते हैं। राजाजन ठीक से धर्म का अनुपालन नहीं करते हैं। पित्तज रोगों की अधिकतर उत्पत्ति होती है। सर्पों का भय रहता हैं। इस प्रकार मंगल के वर्षेश, मासेश या दिनेश होने से जनगण को अति पीड़ा मिलती है और धान्य की भी हानि होती है॥७-९॥

बुध का वर्षादि फल कथन

मायेन्द्रजालकुहकाकरनागराणां
गान्धर्वलेख्यगणितास्त्रविदां च वृद्धिः।
पिप्रीषया नृपतयोऽद्भुतदर्शनानि
दित्सन्ति तुष्टिजननानि परस्परेभ्यः॥१०॥
वार्ता जगत्यवितथा विकला त्रयी च
सम्यक् चरत्यपि मनोरिव दण्डनीतिः।
अध्यक्षरस्वभिनिविष्टधियोऽपि केचि-
दान्वीक्षिकीषु च परं पदमीहमानाः॥११॥
हास्यज्ञदूतकविबालनपुंसकानां
युक्तिज्ञसेतुजलपर्वतवासिनां च।
हार्दिं करोति मृगलाञ्छनजः स्वकेऽब्दे
मासेऽथवा प्रचुरता भुवि चौषधीनाम्॥१२॥

माया—बुध के वर्ष, मास या दिन के समय मायावी, इन्द्रजालिक, जादू दिखाने वाले, आकर (अर्थोत्पत्ति स्थान) के ज्ञाता, नगरवासी, संगीतज्ञ, लेखक, गणितज्ञ तथा अस्त्र शस्त्रों के निर्माण और प्रयोग में पारङ्गत जनों की अभ्युन्नति सम्भव होता है। राजाजन आपसी प्रेमपूर्ण व्यवहार के विस्तार की आकांक्षा से चकित करने योग्य व हर्ष में वृद्धि करने वाले वस्तुओं का आपस में आदान-प्रदान करने की आकांक्षा से सम्पन्न होते हैं। वार्त्ता रूप कृषि, पशुपालन व व्यापार विषयक कार्यों में सफलता मिलती है। वेदत्रयी का अनेकशः आवर्त्तन होता है। मनु की दण्डनीति का प्रायशः प्रयोग होता है। लोग अध्यात्म (योग आदि) शास्त्र और आन्वीक्षिकी या तर्क शास्त्र में परिश्रम करने वाले होते हैं। हास्य जानने वाले, दूत, कवि, बालक, नपुंसक, उपाय करने वाले, सेतु, जल व पर्वत के निवासीजन आदि प्रमुदित होते हैं पृथ्वी औषधियों से सम्पन्न होती है॥१०-१२॥

गुरु का वर्षादिफल कथन

ध्वनिरुच्चरितोऽध्वरे द्युगामी विपुलो यज्ञमुषां मनांसि भिन्दन् ।
विचरत्यनिशं द्विजोत्तमानां हृदयानन्दकरोऽध्वरांशभाजाम् ।।१३।।
क्षितिरुत्तमसस्यवत्यनेकद्विपपत्त्यश्वधनोरुगोकुलाढ्या ।
क्षितिपैरभिपालनप्रवृद्धा द्युचरस्पर्द्धिजना तदा विभाति ।।१४।।
विविधैर्वियदुन्नतैः पयोदैर्वृतमुर्वीं पयसाभितर्पयद्भिः ।
सुरराजगुरोः शुभे तु वर्षे बहुसस्या क्षितिरुत्तमर्द्धियुक्ता ।।१५।।

माया—गुरु के शुभ वर्ष, मास या दिन के समय यज्ञ विहित-रात्रि वर्जित काल में उत्कृष्ट ब्राह्मणों के द्वारा उच्चरित, विस्तारित, स्वर्ग पर्यन्त जाने वाली, यज्ञ में बाधा डालने वाले राक्षसों के चित्त का भेदन और इन्द्रादि देवताओं के चित्त को उल्लसित करने वाली वेदध्वनि होती है। राजाजनों से पूर्णरूप से संरक्षित उत्कृष्ट धान्य, अनेक हाथी, पैदल, घोड़ा, धन तथा विशाल गोकुल से भूमि प्रपूर्ण अनुभव होती है। सामान्य जन भी देवता के समान आदरणीय होते हैं। भूमि को हमेशा जल से सम्पन्न करने वाला, उन्नत, अनेक स्वरूपों वाले मेघों से आकाश आच्छादित होता है तथा पृथ्वी अनेक प्रकार के धान्य और समृद्धि से सम्पन्न होती है।।१३-१५।।

शुक्र का वर्षादि फल कथन

शालीक्षुमत्यपि धरा धरणीधराभ-
धाराधरोज्झितपयःपरिपूर्णवप्रा ।
श्रीमत्सरोरुहतताम्बुलडागकीर्णा
योषेव भात्यभिनवाभरणोज्ज्वलाङ्गी ।।१६।।
क्षत्रं क्षितौ क्षपितभूरिबलारिपक्ष-
मुद्घुष्टनैकजयशब्दविराविताशम् ।
संहृष्टशिष्टजनदुष्टविनष्टवर्गां
गां पालयन्त्यवनिपा नगराकराढ्याम् ।।१७।।
पेपीयते मधु मधौ सह कामिनीभि-
र्जेगीयते श्रवणहारि सवेणुवीणम् ।
बोभुज्यतेऽतिथिसुहृत्स्वजनैः सहान्न-
मब्दे सितस्य मदनस्य जयावघोषः ।।१८।।

माया—शुक्र के वर्ष, मास या दिन के समय पृथ्वी शाली (धान्य विशेष) व ईख से सम्पन्न, पर्वत के सदृश बादलों से आच्छादित, जल से भरी हुई तटों वाली, दर्शनीय कमल और जल से भरा हुआ तडाग से युक्त, अनेक रंगों और आभूषणों से सम्पन्ना

स्त्री के समान शोभायमान होती है। भूमि शत्रुओं के अधिसंख्य सैनिकों को मारने वाले विजयी उद्घोषों से सभी दिशाओं को गुञ्जायमान करने वाले राजाजनों से युक्त होती है। पृथ्वी सज्जनों को आनन्द और दुर्जनों का नाश करने वालों और आकरों अर्थात् अर्थोत्पत्ति स्थानों से सम्पन्न होती है। वसन्त ऋतु काल में रमणियाँ प्रमुदित हो-होकर बारम्बार मद्य का पान करती है तथा वे वंशी और वीणा के साथ श्रवणीय गीत भी गाती हैं, अतिथियों, मित्रों व बन्धुओं के साथ मिलकर बारम्बार भोजन भी करती हैं, इस तरह प्रत्येक जगह कामदेव का जय-जयकार होता रहता है॥१६-१८॥

शनि का वर्षादिफल कथन

उद्वृत्तदस्युगणभूरिरणाकुलानि
राष्ट्राण्यनेकपशुवित्तविनाकृतानि ।
रोरूयमाणहतबन्धुजनैर्जनैश्च
रोगोत्तमाकुलकुलानि बुभुक्षया च ॥१९॥
वातोद्धताम्बुधरवर्जितमन्तरिक्ष-
मारुग्णनैकविटपं च धरातलं द्यौः ।
नष्टार्कचन्द्रकिरणातिरजोऽवनद्धा
तोयाशयाश्च विजलाः सरितोऽपि तन्व्यः ॥२०॥
जातानि कुत्रचिदतोयतया विनाश-
मृच्छन्ति पुष्टिमपराणि जलोक्षितानि ।
सस्यानि मन्दमभिवर्षति वृत्रशत्रु-
र्वर्षे दिवाकरसुतस्य सदा प्रवृत्ते ॥२१॥

माया—शनि के वर्ष, मास या दिन के समय देशों वा राष्ट्रों की स्थिति इस तरह की होती है, वे चोरों के कारण होने वाले युद्धों से त्रस्त, पशुओं और धान्यों से हीन, युद्ध में अपने बन्धुओं की मृत्यु होने से बारम्बार रोते हुए स्वकुलजनों से सम्पन्न तथा अनेक असाध्य रोगों और भूख की पीड़ा से भयाकूल होते हैं। आकाश वायु द्वारा उड़ा दिए गए बादलों से हीन होता है। धूलकणों से व्याप्त वापी, कूप व तडाग होते हैं और नदियों में भी अत्यल्प जल उपलब्ध होता है। इन्द्रदेव अल्पवृष्टि करने वाला होने से पृथ्वी पर कहीं-कहीं जल विना धान्य भी विनष्ट प्राय होते हैं तथा कहीं-कहीं जल से तृप्त होने से धान्य भी पुष्ट होते हैं॥१९-२१॥

ग्रहवर्ष फल में विशेष कथन

अणुरपटुमयूखो नीचगोऽन्यैर्जितो वा
न सकलफलदाता पुष्टिदोऽतोऽन्यथा यः ।

यदशुभमशुभेऽब्दे मासजं तस्य वृद्धिः
शुभफलमपि चैवं याप्यमन्योन्यतायाम् ।।२२।।

माया—उपरोक्त वर्षफल वाले ग्रह, आकाश में सूक्ष्म व अस्पष्ट रश्मि वाला अपनी नीच राशिगत अथवा ग्रहयुद्ध में पराजित होने पर अपना सम्पूर्ण फल प्रदान करने में अक्षम होता है। इससे भिन्न या विपरीत लक्षणों वाला होने पर ग्रह अपना सम्पूर्ण फल प्रदान करने वाला होता है। सूर्य, मंगल और शनि के अशुभ वर्ष में अशुभ मास फल की ही अभिवृद्धि होती है। अतएव स्पष्ट है कि अशुभ ग्रह के वर्ष में अशुभ ग्रह के मासेश होने पर उसका पूर्ण अशुभफल होता है तथा वर्षेश व मासेश दोनों शुभ ग्रह के होने पर उनका सम्पूर्ण शुभफल का एवं एक शुभ व दूसरा अशुभ रहने पर अल्प फलदायक ही होता है।।२२।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां ग्रहवर्षफलाध्याय एकोनविंशः।।१९।।

□□□

अथ विंशोऽध्यायः-२०

ग्रहशृङ्गाटक विचारः

पञ्चतारा ग्रहों के उदयास्त दिशाओं का फल कथन

यस्यां दिशि दृश्यन्ते विशन्ति ताराग्रहा रविं सर्वे।
भवति भयं दिशि तस्यामायुधकोपक्षुधातङ्कैः ॥१॥

माया—सभी तारा ग्रह अर्थात् मंगल, बुध, गुरु, शक्र और शनि; जिस दिशा में दृष्ट हों या जिस दिशा में सूर्य में समाकर अस्त हों, तो उस दिशा में जनगणों को शस्त्र का प्रकोप सहन करने के साथ दुर्भिक्ष और आतङ्क का भय भी उत्पन्न करता है॥१॥

ग्रहों के संस्थान (आकृति) कथन

चक्रधनुःशृङ्गाटकदण्डपुरप्रासवज्रसंस्थानाः।
क्षुद्वृष्टिकरा लोके समराय च मानवेन्द्राणाम् ॥२॥

माया—ग्रहों के संस्थान अर्थात् उनकी आकृति, चक्र, धनु, शृङ्गाटक, दण्ड, पुर, प्रास, वज्र आदि के समान दीखने पर संसार में सर्वत्र दुर्भिक्ष, अवर्षण तथा राजाजनों के मध्य युद्ध होता है॥२॥

आकाश विभागवश अशुभ फल कथन

यस्मिन् खांशे दृश्या ग्रहमाला दिनकरे दिनान्तगते।
तत्राऽन्यो भवति नृपः परचक्रोपद्रवश्च महान् ॥३॥

माया—आकाश के जिस भाग में सूर्यास्त काल में ग्रहमाला दीखती हो, तो उस आकाशीय भाग से सम्बन्धित देश में अन्य देश के राजा का आगमन और स्थित राजा उपद्रव का शिकार होता है॥३॥

ग्रहों का नक्षत्रस्थिति वश फल कथन

तस्मिन्नृक्षे कुर्युः समागमं तज्जनान् ग्रहा हन्युः।
अविभेदिनः परस्परममलमयूखाः शिवास्तेषाम् ॥४॥

माया—जिस नक्षत्र में ग्रहों का समागम होता है, उसके कूर्म व व्यूह में कथित देशों व जनों की हानि होती है तथा समागम के समय नक्षत्र व ग्रह दोनों के विमल किरणों वाले होने पर उपरोक्त का कल्याण होता है॥४॥

ग्रहों के छः प्रकार के योगों का नाम कथन

ग्रहसंवर्तसमागमसम्मोहसमाजसन्निपाताख्याः ।
कोशश्चेत्येतेषामभिधास्ये लक्षणं सफलम् ।।५।।

माया—ग्रह संवर्त, ग्रहसमागम, ग्रहसम्मोह, ग्रहसमाज, ग्रहसन्निपात, ग्रहकोश आदि छ: प्रकार के ग्रहयोग कहे गए हैं। आगे इनका फल कहते हैं।।५।।

उपरोक्त षड्योगों का सफल कथन

एकर्क्षे चत्वारः सह पौरैर्यायिनोऽथवा पञ्च ।
संवर्तो नाम भवेच्छिखिराहुयुतः स सम्मोहः ।।६।।
पौरः पौरसमेतो यायी सह यायिना समाजाख्यः ।
यमजीवसङ्गमेऽन्यो यद्यागच्छेत्तदा कोशः ।।७।।
उदितः पश्चादेकः प्राक् चान्यो यदि स सन्निपाताख्यः ।
अविकृततनवः स्निग्धा विपुलाश्च समागमे धन्याः ।।८।।

माया—एक-ही नक्षत्र में पौर और यायी ग्रह मिलाकर चार अथवा पाँच के संख्या में एकत्रित होने पर ग्रह संवर्त; उन चार या पाँच ग्रहों में केतु या राहु के सम्मिलित होने पर ग्रह सम्मोह; पौर ग्रह के साथ पौर अथवा यायी ग्रह के साथ यायी होने पर ग्रह समाज; शनि और गुरु के साथ किसी अन्य ग्रह के होने पर ग्रह कोश; एक ग्रह पश्चिम तथा दूसरा पूर्व दिशा में एक ही नक्षत्र में उदय लेकर स्थित होने पर ग्रह सन्निपात तथा उपरोक्त लक्षणों से पृथक्लक्षण दीखने पर ग्रह समागम योग होता है। इस प्रकार के समागम योग में मंगलादि पञ्च ग्रह विमल, विपुल और अविकृत बिम्ब का होने पर शुभदायक अन्यथा अशुभदाय होते हैं।।६-८।।

उपरोक्त योग का अन्य फल कथन

समौ तु संवर्तसमागमाख्यौ सम्मोहकोशौ भयदौ प्रजानाम् ।
समाजसंज्ञे सुसमा प्रदिष्टा वैरप्रकोपः खलु सन्निपाते ।।९।।

माया—उपरोक्त संवर्त और समागम योगों में मध्यम फल; सम्मोह व कोश योगों में जनगणों में भय; समाज संज्ञक योग में सुसम फल अर्थात् पहले से बाद के अधिक शुभ फल तथा सन्निपात योग में आपस में द्वेष उत्पन्न होता है।।९।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां ग्रहशृङ्गाटकाध्यायो विंशः ।।२०।।

□□□

अथैकविंशोऽध्यायः-२१

गर्भलक्षणविचारः

गर्भलक्षण प्रयोजन कथन

अन्नं जगतः प्राणाः प्रावृट्कालस्य चान्नमायत्तम् ।
यस्मादतः परीक्ष्यः प्रावृट्कालः प्रयत्नेन ।।१।।

माया—अन्न जगत् का प्राण है, वह वर्षा ऋतु के आश्रित है। अतः प्रयत्न पूर्वक वर्षा ऋतु का परीक्षण करना चाहिए।।१।।

गर्भलक्षण कथन

तल्लक्षणानि मुनिभिर्यानि निबद्धानि तानि दृष्ट्वेदम् ।
क्रियते गर्गपराशरकाश्यपवज्रादिरचितानि ।।२।।

माया—उस वर्षा ऋतु के जिन लक्षणों को वशिष्ठ, पराशर, गर्ग, काश्यप वज्र, बादरायण, असित, देवल आदि ऋषि-मुनियों ने जिस प्रकार से कहा है, उनका वहाँ अवलोकन कर यहाँ मैं वर्षा ऋतु के लक्षणों को प्रस्तुत करता हूँ।।२।।

गर्भलक्षण मर्मज्ञ दैवज्ञ प्रशंसा कथन

दैवविदविहितचित्तो द्युनिशं यो गर्भलक्षणे भवति ।
तस्य मुनेरिव वाणी न भवति मिथ्याम्बुनिर्देशे ।।३।।

माया—जो दैवज्ञ अनन्यमन से दिन-रात गर्भलक्षण को जानने में लगा रहता है, उनकी वाणी मुनिजनों के समान वृष्टि ज्ञान के प्रदर्शन के समय असत्य नहीं होती है।।३।।

ज्यौतिषशास्त्र प्रशंसा कथन

किं वातः परमन्यच्छास्त्रज्यायोऽस्ति यद्विदित्वैव ।
प्रध्वंसिन्यपि काले त्रिकालदर्शी कलौ भवति ।।४।।

माया—इस गर्भलक्षणशास्त्र (ज्यौतिषशास्त्र) से अधिक प्रशस्त अन्य कौन-सा शास्त्र है, जिसे जानकर इस विध्वंसक कलिकाल में भी मनुष्य भूत, भविष्य और वर्तमान कालविद् होता है।।४।।

गर्भलक्षण सम्बन्धि अन्य का मत कथन

केचिद्वदन्ति कार्तिकशुक्लान्तमतीत्य गर्भदिवसा स्युः ।
न च तन्मतं बहूनां गर्गादीनां मतं वक्ष्ये ।।५।।

माया—किसी ने कहा है कि कार्त्तिक शुक्ल पूर्णिमा के अनन्तर गर्भदिवस होते हैं। यह मत बहुतों का नहीं है। अतएव गर्ग आदि मुनियों के मतों को कहते हैं॥५॥

गर्ग आदि मुनियों का मत कथन

मार्गशिरःसितपक्षप्रतिपत्प्रभृति क्षपाकरेऽषाढाम् ।
पूर्वां वा समुपगते गर्भाणां लक्षणं ज्ञेयम् ॥६॥

माया—मार्गशीर्ष मास के शुक्लपक्ष के प्रतिपदा आदि तिथियों में चन्द्र के पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में आने पर गर्भों का लक्षण जानना चाहिए॥६॥

धारित गर्भ का प्रसवकाल कथन

यन्नक्षत्रमुपगते गर्भश्चन्द्रे भवेत् स चन्द्रवशात् ।
पञ्चनवते दिनशते तत्रैव प्रसवमायाति ॥७॥

माया—जिस नक्षत्र में चन्द्र के आने पर गर्भ धारण होता है, उससे १९५ दिन व्यतीत होने पर उस नक्षत्र में पुनः चन्द्र के आने पर उस गर्भ का प्रसव होता है। यहाँ चान्द्रमान से १९५ वाँ दिन न लेकर सावन मान से ग्रहण करने पर गर्भधारण कालिक नक्षत्र प्रसवकाल में प्राप्त होता है॥७॥

पुनः धारित गर्भ का प्रसवकाल कथन

सितपक्षभवाः कृष्णे शुक्ले कृष्णा द्युसम्भवा रात्रौ ।
नक्तम्प्रभवाश्चाहनि सन्ध्याजाताश्च सन्ध्यायाम् ॥८॥

माया—शुक्लपक्ष में स्थिर गर्भ का १९५ दिन व्यतीत होने पर कृष्णपक्ष में प्रसव होता है। कृष्ण पक्ष में स्थिर गर्भ का १९५ दिन शुक्ल पक्ष में, दिन का गर्भ रात्रि में, रात्रि का दिन में, पूर्वसन्ध्याकालिक उत्तर सन्ध्या में और उत्तर सन्ध्या का पूर्व सन्ध्या में प्रसव होता है॥८॥

गर्भों का विशेष लक्षण तथा कालनिर्देश कथन

मृगशीर्षाद्या गर्भा मन्दफलाः पौषशुक्लजाताश्च ।
पौषस्य कृष्णपक्षेण निर्दिशेच्छ्रावणस्य सितम् ॥९॥
माघसितोत्था गर्भाः श्रावणकृष्णे प्रसूतिमायान्ति ।
माघस्य कृष्णपक्षेण निर्दिशेद् भाद्रपदशुक्लम् ॥१०॥
फाल्गुनशुक्लसमुत्था भाद्रपदस्यासिते विनिर्देश्याः ।
तस्यैव कृष्णपक्षोद्भवास्तु ये तेऽश्वयुक्शुक्ले ॥११॥
चैत्रसितपक्षजाताः कृष्णेऽश्वयुजस्य वारिदा गर्भाः ।
चैत्रासितसम्भूताः कार्तिकशुक्लेऽभिवर्षन्ति ॥१२॥

भाषा—मार्गशीर्ष और पौषमास के शुक्ल पक्ष में गर्भ धारण होने पर मन्दफल अर्थात् स्वल्प वर्षा करने वाला होता है। इस गर्भलक्षण के प्रसङ्ग में मास-चैत्र शुक्ल आदि ग्रहण करना चाहिए। जिस प्रकार चैत्र शुक्लपक्ष और वैशाख कृष्ण पक्ष मिलकर चैत्रमास होता है। उसी प्रकार अन्य मासों की कल्पना भी करनी चाहिए।

एवं पौष कृष्णपक्ष में स्थित गर्भ का श्रावण शुक्ल पक्ष में प्रसव होता है। माघ शुक्लपक्ष के गर्भ का श्रावण कृष्णपक्ष में प्रसव होता है। माघ कृष्णपक्ष का भाद्र पद शुक्लपक्ष में, फाल्गुन शुक्ल का भाद्रपद कृष्ण पक्ष में, फाल्गुन कृष्ण पक्ष का अश्विन शुक्ल पक्ष में, चैत्र शुक्लपक्ष का अश्विन कृष्ण पक्ष में तथा चैत्र कृष्णपक्ष में स्थित गर्भ का कार्तिक शुक्ल पक्ष में प्रसव होता है॥९-१२॥

मेघ और वायु लक्षण कथन

पूर्वोद्भूताः पश्चादपरोत्थाः प्राग्भवन्ति जीमूताः।
शेषास्वपि दिक्ष्वेवं विपर्ययो भवति वायोश्च ॥१३॥

भाषा—गर्भ के समय पूर्व दिशा का मेघ होने पर प्रसव के समय पश्चिम दिशा में और गर्भ के समय पश्चिम दिशा का मेघ होने पर प्रसव के समय पूर्व दिशा में सम्भव होता है। इसी तरह गर्भ के समय दक्षिण दिशा का मेघ होने पर प्रसव के समय उत्तर दिशा में तथा गर्भकालिक उत्तरदिशा का मेघ होने पर प्रसव कालिक दक्षिण दिशा में, आग्नेय कोण में होने पर वायव्य कोण में, वायव्य कोण में होने पर आग्नेय कोण में, ईशान कोण में होने पर नैर्ऋत्य कोण में, नैर्ऋत्य कोण में होने पर ईशान कोण में प्रसवकाल में सम्भव होता है। दिशा के समान ही वायु के लिए भी वैपरीत्य क्रम ग्रहण करना चाहिए, जिस प्रकार गर्भकाल में पूर्व की ओर से वायु चलने पर प्रसव के समय पश्चिम की ओर से वायु चलना सम्भव होता है। इसी तरह अन्य दिशाओं से चलने वाले वायु के प्रसङ्ग में जानना चाहिए॥१३॥

गर्भ सम्भव लक्षण कथन

ह्लादिमृदूदक्शिवशक्रदिग्भवो मारुतो वियद्विमलम्।
स्निग्धसितबहुलपरिवेषपरिवृतौ हिममयखार्कौ ॥१४॥
पृथुबहुलस्निग्धघनं घनसूचीक्षुरकलोहिताभ्रयुतम्।
काकाण्डमेचकाभं वियद्विशुद्धेन्दुनक्षत्रम् ॥१५॥
सुरचापमन्द्रगर्जितविद्युत्प्रतिसूर्यका शुभा सन्ध्या।
शशिशिवशक्राशास्थाः शान्तरवाः पक्षिमृगसङ्घाः ॥१६॥
विपुलाः प्रदक्षिणचराः स्निग्धमयूखा ग्रहा निरुपसर्गाः।
तरवश्च निरुपसृष्टाङ्कुरा नरचतुष्पदा हृष्टाः ॥१७॥

गर्भाणां पुष्टिकरा: सर्वेषामेव योऽत्र तु विशेष: ।
स्वर्त्तुस्वभावजनितो गर्भविवृद्ध्यै तमभिधास्ये ।।१८।।

माया—गर्भग्रहण काल में आह्लादकारक, सुख स्पर्श देने वाला तथा उत्तर, ईशान या पूर्व दिशा से चलने वाला वायु, विमल आकाश, स्निग्ध व शुक्ल परिवेष से परिवृत चन्द्र और सूर्य; आकाश में स्थूल, विपुल और स्निग्ध मेघ; सूच्याकार, क्षुराकार तथा लालवर्ण के मेघों, कौए के अण्डा सदृश नीलवर्ण, मयूर कण्ट के सदृश कान्ति वाला; विमल चन्द्र व नक्षत्रों से युक्त आकाश; इन्द्रधनुष के सदृश मधुर मेघों के शब्द, विद्युत् व प्रतिसूर्य से युक्त प्रात: व सायंकाल; ये सभी लक्षण गर्भ धारण को पुष्ट करने वाला कहा गया है। साथ-ही सूर्य के सामने से होकर उत्तर, ईशान या पूर्व दिशा में स्थित पक्षी व मृग, नक्षत्रों के उत्तर पथ में से होकर विमल व उत्पात हीन ग्रहों का गमन, विघ्न रहित वृक्षों का अङ्कुर, मनुष्य व पशु में हर्ष आदि सभी लक्षणों से सम्पन्न गर्भ धारण का समय होने पर गर्भ की निश्चय ही अभिवृद्धि होती है और इन लक्षणों के अनुसार मार्गशीर्ष शुक्ल प्रतिपदा से वैशाख के अन्त तक मेघ के गर्भ की पुष्टि का परीक्षण करते रहना चाहिए। इस प्रकार गर्भ की अभिवृद्धि के लिए ऋतु-प्रकृतिवश उत्पन्न अन्य लक्षणों को भी आगे कहता हूँ।।१४-१८।।

ऋतु प्रकृतिवश गर्भलक्षण कथन

पौषे समार्गशीर्षे सन्ध्यारागोऽम्बुदा: सपरिवेषा: ।
नात्यर्थं मृगशीर्षे शीतं पौषेऽतिहिमपात: ।।१९।।
माघे प्रबलो वायुस्तुषारकलुषद्युती रविशशाङ्कौ ।
अतिशीतं सघनस्य च भानोरस्तोदयौ धन्यौ ।।२०।।
फाल्गुनमासे रूक्षश्चण्ड: पवनोऽभ्रसम्प्लवा: स्निग्धा: ।
परिवेषाश्चासकला: कपिलस्ताम्रो रविश्च शुभ: ।।२१।।
पवनघनवृष्टियुक्ताश्चैत्रे गर्भा: शुभा: सपरिवेषा: ।
घनपवनसलिलविद्युत्स्तनितैश्च हिताय वैशाखे ।।२२।।

माया—पौष और मार्गशीर्ष मास में सन्ध्या (प्रात: व सायं) के समय रक्त वर्ण तथा परिवेष युक्त मेघ तथा मार्गशीर्ष मास में न अति शीत और पौषमास में न अति हिमपात गर्भ पुष्टि के लिए शुभकारक होता है।

माघ मास में प्रचण्ड वायु, सूर्य व चन्द्र हिमयुक्त मलिन कान्ति वाले, अति शीत और मेघ युक्त सूर्य का उदय व अस्त भी शुभकारक होता है।

फाल्गुन मास में रूखा और प्रबल वेगवान् वायु, मेघों का आना , सूर्य व चन्द्र का निर्मल व अखण्ड परिवेष और कपित या ताम्र वर्ण का सूर्य शुभकारक होता है।

चैत्रमास में गर्भ वायु, मेघ, वृष्टि और परिवेष सम्पन्न शुभकारक होता है।

वैशाख मास में मेघ, वायु, जल, विद्युत् और मेघ गर्जन गर्भ के लिए हितकारक होता है॥१९-२२॥

गर्भकाल में मेघों के लक्षण कथन

मुक्तारजतनिकाशास्तमालनीलोत्पलाञ्जनाभासः ।
जलचरसत्त्वाकारा गर्भेषु घनाः प्रभूतजलाः ॥२३॥
तीव्रदिवाकरकिरणाभितापिता मन्दमारुता जलदाः ।
रुषिता इव धाराभिर्विसृजन्त्यम्भः प्रसवकाले ॥२४॥

माया—मोती या चाँदी के सदृश अतिशुक्ल अथवा तमाल वृक्ष या नीलकमल या अंजन के सदृश अत्यन्त कृष्ण वर्ण अथवा जलचर प्राणियों के सदृश आभा युक्त गर्भकालीन मेघ बहुत अधिक वृष्टि करने वाले होते हैं।

प्रचण्ड सूर्य किरण से अभितापित और मन्द वायु से सम्पन्न गर्भकालीन मेघ गर्भधारण से १९५वाँ दिन क्रोधी के समान होकर धारा-प्रवाह बहुत अधिक वृष्टि करने वाला होता है॥२३-२४॥

गर्भहानि लक्षण कथन

गर्भोपघातलिङ्गान्युल्काशनिपांशुपातदिग्दाहाः ।
क्षितिकम्पखपुरकीलककेतुग्रहयुद्धनिर्घाताः ॥२५॥
रुधिरादिवृष्टिवैकृतपरिघेन्द्रधनूंषि दर्शनं राहोः ।
इत्युत्पातैरेतैस्त्रिविधैश्चान्यैर्हतो गर्भः ॥२६॥

माया—गर्भधारण काल से १९५ दिन के पहले गर्भकाल में उल्कापात, विद्युत्, धूलिवर्षण, दिग्दाह (दिशाओं में ज्वलनशीलता), भूकम्प, गन्धर्वनगर, कीलक आदि केतुओं का दर्शन, ग्रहयुद्ध, निर्घात, रुधिर आदि (रुधिर, मांस, वसा, घृत, तैल) विकार के साथ वृष्टि, परिघ, इन्द्रधनुष, राहु, चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण होना आदि गर्भहानि के लक्षण हैं॥२५-२६॥

गर्भहानि में विशेष कथन

स्वर्तुस्वभावजनितैः सामान्यैर्यैश्च लक्षणैर्वृद्धिः ।
गर्भाणां विपरीतैस्तैरेव विपर्ययो भवति ॥२७॥

माया—'पौषे समार्गशीर्षे सन्ध्यारागोऽम्बुदाः', इत्यादि ऋतु प्रकृतिवश तथा ह्लादिमृदूदक्शिवशक्रदिग्भवो मारुत, इत्यादि गर्भ सम्भव के सामान्य लक्षण से सम्पन्न गर्भ की सदा अभिवृद्धि, इसके विपरीत लक्षण युक्त गर्भ का नाश होता है॥२७॥

गर्भधारणकालिक नक्षत्रवश अतिवृष्टिकर नक्षत्र कथन

भद्रपदाद्वयविश्वाम्बुदेवपैतामहेष्वथर्क्षेषु ।
सर्वेष्वृतुषु विवृद्धो गर्भो बहुतोयदो भवति ।।२८।।

माया—सभी ऋतुओं में पूर्वाभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, उत्तराषाढ़ा, पूर्वाषाढ़ा, रोहिणी आदि पाँच नक्षत्रों में संवृद्ध गर्भ अपने प्रसव के समय अतिवृष्टि करने वाला होता है।।२८।।

गर्भधारण कालिक नक्षत्रवश बहुदिन गर्भ पुष्टि का नक्षत्र कथन

शतभिषगाश्लेषार्द्रास्वातिमघासंयुत: शुभो गर्भ: ।
पुष्णाति बहून् दिवसान् हन्त्युत्पातैर्हतस्त्रिविधै: ।।२९।।

माया—शतभिषा, श्लेषा, आर्द्रा, स्वाती, मघा; इन पाँच नक्षत्रों में गर्भ धारण होने पर गर्भ शुभदायक होता है और अधिक दिन तक पुष्ट रहता है। पूर्वोक्त पाँच नक्षत्रों में स्थित गर्भ जब तक त्रिविध उत्पातों (दिव्य, आन्तरक्षि, भौम) से आहत होता रहता है, तब तक गर्भ पुष्ट ही होता है अर्थात् तब तक वृष्टि नहीं होती है।।२९।।

उपरोक्त योग में वृष्टि दिन संख्या कथन

मृगमासादिष्वष्टौ षट् षोडश विंशतिश्चतुर्युक्ता ।
विंशतिरथ दिवसत्रयमेकतमर्क्षेण पञ्चभ्य: ।।३०।।

माया—यदि पूर्वोक्त शतभिषा,श्लेषा, आर्द्रा, स्वाती और मघा; इन पाँच नक्षत्रों में से जिस-किसी भी नक्षत्र में मार्गशीर्ष मास में गर्भ स्थित होता है, तो उस गर्भ का प्रसव समय से आठ (८) दिन तक, पौष मास में गर्भ स्थित होने पर उसका प्रसव समय से छ: (६) दिन तक, माघ में १६ दिन तक, फाल्गुन में २० दिन तक, चैत्र में २० दिन तक तथा वैशाख मास में ३ दिन तक वर्षा होती है।।३०।।

निमित्तानुसार वृष्टि क्षेत्र प्रमाण कथन

पञ्चनिमित्तै: शतयोजनं तदर्द्धार्द्धमेकहान्याऽत: ।
वर्षति पञ्चनिमित्ताद्रूपेणैकेन यो गर्भ: ।।३१।।

माया—पाञ्च निमित्तों से सम्पन्न गर्भ अपने प्रसव के समय सौ योजन पर्यन्त वृष्टि करने वाला होता है। चार निमित्तों से सम्पन्न गर्भ पचास योजन, तीन निमित्तों से सम्पन्न गर्भ पच्चीस योजन, दो निमित्तों से सम्पन्न गर्भ साढ़े बारह योजन तथा एक निमित्त से सम्पन्न गर्भ पाँच योजन पर्यन्त अपने प्रसव के समय वृष्टि करता है।।३१।।

निमित्तों से सम्पन्न गर्भवश जलमात्रा कथन

द्रोण: पञ्चनिमित्ते गर्भे त्रीण्याढकानि पवनेन ।
षड् विद्युता नवाभ्रै: स्तनितेन द्वादश प्रसवे ।।३२।।

माया—पाँच निमित्तों वाला गर्भ एक द्रोण, वायु से सम्पन्न गर्भ तीन आढ़क, विद्युत् युक्त गर्भ छः आढ़क, मेघों से सम्पन्न गर्भ नौ आढ़क और मेघ गर्जन से सम्पन्न गर्भ अपने प्रसव के समय से बारह आढ़क जल वर्षाता है।।३२।।

वृष्टि योग में विशेष कथन

क्रूरग्रहसंयुक्ते करकाशनिमत्स्यवर्षदा गर्भाः ।
शशिनि रवौ वा शुभसंयुतेक्षिते भूरिवृष्टिकराः ।।३३।।

माया—गर्भधारण समय के प्राप्त नक्षत्र पापग्रह से युक्त होने पर उपल, वज्र व मछली से सम्पन्न जल वर्षाता है। उस गर्भधारण कालिक नक्षत्र में स्थित चन्द्र अथवा सूर्य शुभ ग्रह बुध, गुरु या शुक्र से युक्त अथया दृष्ट हो, तो अतिवृष्टिकारक गर्भ होता है।।३३।।

गर्भसम्भव होने का विशेषलक्षण कथन

गर्भसमयेऽतिवृष्टिर्गर्भाभावाय निर्निमित्तकृता ।
द्रोणाष्टांशेऽभ्यधिके वृष्टे गर्भः स्रुतो भवति ।।३४।।

माया—गर्भ समय अर्थात् गर्भधारणकाल में निमित्त का अभाव होने पर भी अधिक वृष्टि हो, तो उस गर्भ की हानि होती है। वह वृष्टि पच्चीस पल (द्रोण का अष्टांश) या उससे भी अधिक होने पर गर्भ का स्राव होता है अर्थात् गर्भ जल प्रदान करने योग्य नहीं रह जाता है।।३४।।

यहाँ पर भी विशेष कथन

गर्भः पुष्टः प्रसवे ग्रहोपघातादिभिर्यदि न वृष्टः ।
आत्मीयगर्भसमये करकामिश्रं ददात्यम्भः ।।३५।।

माया—जब पुष्ट गर्भ १९५वाँ दिन अपने प्रसव के समय ग्रहोपघात (दिव्य, आन्तरिक्ष, भौम) आदि उपद्रवों से दुष्प्रभावित होकर जलप्रद योग्य नहीं हो, तो वह अपने आत्मीय गर्भ अर्थात् पुनः गर्भधारण करने के समय उपल आदि मिश्रित वर्षा करता है।।३५।।

यहाँ दृष्टान्त कथन

काठिन्यं याति यथा चिरकालधृतं पयः पयस्विन्याः ।
कालातीतं तद्वत् सलिलं काठिन्यमुपयाति ।।३६।।

माया—जैसे लम्बे समय तक रखा हुआ गाय का दूध कठिन हो जाता है, वैसे ही अधिक समय व्यतीत होने पर जल भी कठिन अर्थात् उपल के रूप में परिणत हो जाता है।।३६।।

गर्भ पुष्टि लक्षण कथन

पवनसलिलविद्युद्गर्जिताऽभ्रान्वितो यः
स भवति बहुतोयः पञ्चरूपाभ्युपेतः ।
विसृजति यदि तोयं गर्भकालेऽतिभूरि
प्रसवसमयमित्वा शीकराम्भः करोति ।।३७।।

माया—वायु, जल, विद्युत्, गर्जन, मेघ आदि से सम्पन्न गर्भ के होने से अपने प्रसव के समय अत्यधिक वृष्टि करने वाला होता है। परन्तु ऐसे गर्भकाल में भी अधिक वर्षा के होने से उसके प्रसव के समय बहुत वर्षा सम्भव नहीं होता है।।३७।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां गर्भलक्षणंनामाध्याय एकविंशः ।।२१।।

□□□

अथ द्वाविंशोऽध्यायः-२२

गर्भधारण निरूपणम्

गर्भधारण के लक्षण कथन

ज्यैष्ठसितेऽष्टम्याद्याश्चत्वारो वायुधारणा दिवसाः ।
मृदुशुभपवनाः शस्ताः स्निग्धघनस्थगितगगनाश्च ।।१।।

माया—ज्येष्ठा मास के शुक्लपक्ष के अष्टमी तिथि आदि चार दिन पर्यन्त वायु के द्वारा गर्भ धारण के दिन होते हैं। उन दिनों में सुख स्पर्श; शुभ अर्थात् उत्तर, ईशान या पूर्व दिशा से उत्पन्न वायु, विमल मेघ युक्त आकाश आदि शुभदायक होते हैं॥१॥

पूर्वोक्त में विशेष कथन

तत्रैव स्वात्याद्ये वृष्टे भचतुष्टये क्रमान्मासाः ।
श्रावणपूर्वा ज्ञेयाः परिस्रुता धारणास्ताः स्युः ।।२।।

माया—उपरोक्त ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष में स्वाती चार स्वाती, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा नक्षत्रों में वृष्टि होने से क्रमशः श्रावण आदि चार श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक मासों में अवर्षण होता है। अर्थात् ज्येष्ठ शुक्ल के स्वाती नक्षत्र में वृष्टि होने पर श्रावण मास में, विशाखा में वृष्टि होने पर भाद्रपद मास में, अनुराधा में वृष्टि होने पर आश्विन मास में तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में वृष्टि होने पर कार्तिक मास में वर्षा का सर्वथा अभाव होता है॥२॥

पुनः पूर्वोक्त में विशेष कथन

यदि ताः स्युरेकरूपाः शुभास्ततः सान्तरास्तु न शिवाय ।
तस्करभयदाश्चोक्ताः श्लोकाश्चाप्यत्र वासिष्ठाः ।।३।।

माया—यदि पूर्वोक्त ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष के चारों गर्भ धारण के दिन एक रूप के अर्थात् एक जैसा ही हो, तो शुभदायक तथा अनेक रूप अर्थात् भिन्न-भिन्न रूप के हो, तो चोरों में भय उत्पन्न करने वाला होता है। इस प्रकार के तात्पर्य को पुष्ट करने वाला वशिष्ठ के कथन को उद्धृत करते हैं॥३॥

वशिष्ठोक्त कथन

सविद्युतः सपृषतः सपांशूत्करमारुताः ।
सार्कचन्द्रपरिच्छन्ना धारणाः शुभधारणाः ।।४।।

यदा तु विद्युतः श्रेष्ठाः शुभाशाः प्रत्युपस्थिताः ।
तदापि सर्वसस्यानां वृद्धिं ब्रूयाद्विचक्षणः ।।५।।
सपांशुवर्षाः सापश्च शुभा बालक्रिया अपि ।
पक्षिणां सुस्वरा वाचः क्रीडा पांशुजलादिषु ।।६।।
रविचन्द्रपरीवेषाः स्निग्धा नात्यन्तदूषिताः ।
वृष्टिस्तदापि विज्ञेया सर्वसस्यार्थसाधिका ।।७।।
मेघाः स्निग्धाः संहताश्च प्रदक्षिणगतिक्रियाः ।
तदा स्यान्महती वृष्टिः सर्वसस्याभिवृद्धये ।।८।।

माया—इस प्रकार विद्युत् , जलकण, धूलिपूर्ण वायु, मेघ से आच्छादित सूर्य व चन्द्र तथा उत्तर, ईशान व पूर्व दिशा में उत्पन्न विद्युत् सम्पन्न गर्भधारण के दिवस होने से सभी प्रकार के धान्यों की अभिवृद्धि बुद्धिमान् पण्डितों को जानना चाहिए।

एवं धूलि युक्त वृष्टि, जल, बालकृत् शुभदायी चेष्टायें, पक्षीगणों के सुन्दर कलरव, पक्षिगणों की धूलि या जल क्रीड़ा तथा विमल और अविकृत परिवेष के साथ सूर्य व चन्द्र; इन लक्षणों से सम्पन्न गर्भ के धारण के दिवस होने पर सभी प्रकार के धान्यों को उत्पन्न करने वाली वृष्टि होती है।

तथा विमल, सघन तथा प्रदक्षिण क्रम से अर्थात् पूर्व से दक्षिण, दक्षिण से पश्चिम, पश्चिम से उत्तर और उत्तर से पूर्व दिशा में संचरणशील मेघ गर्भ के धारण के दिन होने पर सभी प्रकार के धान्यों की अभिवृद्धि करने वाला होता है।।४-८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां गर्भधारणोनामाध्यायो द्वाविंशः ।।२२।।

□□□

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः-२३

प्रवर्षणनिरूपणम्

प्रवर्षण का लक्षण कथन

ज्यैष्ठ्यां समतीतायां पूर्वाषाढादिसम्प्रवृष्टेन ।
शुभमशुभं वा वाच्यं परिमाणं चाम्भसस्तज्ज्ञैः ।।१।।

माया—ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा तिथि के व्यतीत होने पर पूर्वाषाढ़ा आदि सभी नक्षत्रों में वृष्टि का मूल्यांकन कर शुभाशुभ जानना चाहिए अर्थात् वृष्टि होने पर शुभ तथा वृष्टि का अभाव होने पर अशुभ कथन करना चाहिए।।१।।

जल प्रमाणज्ञानार्थ कथन

हस्तविशालं कुण्डकमधिकृत्याम्बुप्रमाणनिर्देशः ।
पञ्चाशत्पलमाढकमनेन मिनुयाज्जलं पतितम् ।।२।।

माया—एक हाथ लम्बा, चौड़ा व गहरा विस्तार वाला वर्तुलाकार कुण्ड से वर्षा के जल का प्रमाण जानना चाहिए। इस जल पूर्ण कुण्ड का प्रमाण पचास पल याने एक आढ़क तुल्य होता है अर्थात् पचास पल एक आढ़क तथा चार आढ़क का एक द्रोण कहा गया है।।२।।

वर्षा प्रमाण कथन

येन धरित्री मुद्रा जनिता वा बिन्दवस्तृणाग्रेषु ।
वृष्टेन तेन वाच्यं परिमाणं वारिणः प्रथमम् ।।३।।

माया—जिस वृष्टि से पृथ्वी की धूलि लुप्त हो जाय अथवा तृणों के अग्रभाग में जलकण दीखने लगे, उससे वर्षा का प्रमाण जानना चाहिए। इसका तात्पर्य है कि पूर्वाषाढ़ा आदि नक्षत्रों में से प्रथम बार जिस नक्षत्र से वृष्टि होती है, उस नक्षत्र से ही जल का प्रमाण कथन करना चाहिए।।३।।

यहाँ पर मतान्तर कथन

केचिद्यथाभिवृष्टं दशयोजनमण्डलं वदन्त्यन्ये ।
गर्गवसिष्ठपराशरमतमेतद् द्वादशात्र परम् ।।४।।

माया—किसी कश्यपादि मुनियों के मत से प्रवर्षण काल अर्थात् ज्येष्ठ पूर्णिमा

के बाद पूर्वाषाढ़ादि आदि नक्षत्र से सम्बन्धित समय में किसी प्रदेश विशेष में भी वर्षा के होने पर वर्षा के समय में फिर भी सुन्दर वृष्टि कहनी चाहिए। अन्य के मत में प्रवर्षण काल में न्यूनतम दशयोजन पर्यन्त वर्षा होने से वर्षाकाल में भी अच्छी वृष्टि होती है। गर्ग, वशिष्ठ और पराशर के अनुसार प्रवर्षण काल में द्वादश योजन पर्यन्त वर्षा हो, तो वर्षाकाल में भी अच्छी वृष्टि की कल्पना करनी चाहिए।।४।।

प्रवर्षण प्रसङ्ग में और विशेष कथन

येषु च भेष्वभिवृष्टं भूयस्तेष्वेव वर्षति प्राय: ।
यदि नाप्यादिषु वृष्टं सर्वेषु तदा त्वनावृष्टि: ।।५।।

माया—इस प्रकार प्रवर्षण के समय में पूर्वाषाढ़ा आदि नक्षत्रों में से जिस भी नक्षत्र में वर्षा होती है, तो प्रसव के समय भी उसी नक्षत्र में पुन: पुन: वर्षा होती है। यदि पूर्वाषाढ़ा आदि नक्षत्रों में से किसी भी नक्षत्र में प्रवर्षण के समय में वर्षा न हो, तो प्रसव के समय भी वर्षा नहीं होती है।।५।।

नक्षत्रों का वृष्टि प्रमाण कथन

हस्ताप्यसौम्यचित्रापौष्णधनिष्ठासु षोडश द्रोणा: ।
शतभिषगैन्द्रस्वातिषु चत्वार: कृत्तिकासु दश ।।६।।
श्रवणे मघानुराधाभरणीमूलेषु दश चतुर्युक्ता: ।
फल्गुन्यां पञ्चकृति: पुनर्वसौ विंशतिर्द्रोणा: ।।७।।
ऐन्द्राग्न्याख्ये वैश्वे च विंशति: सार्पभे दश त्र्यधिका: ।
आहिर्बुध्न्यार्यम्णप्राजापत्येषु पञ्चकृति: ।।८।।
पञ्चदशाजे पुष्ये च कीर्तिता वाजिभे दश द्वौ च।
रौद्रेष्टादश कथिता द्रोणा निरुपद्रवेष्वेते ।।९।।

माया—हस्त, पूर्वाषाढ़ा, मृगशिरा, चित्रा, रेवती, धनिष्ठा आदि नक्षत्रों में से किसी भी नक्षत्र में प्रवर्षण के समय वृष्टि होती है, तो प्रसव के समय षोडश (१६) द्रोण वृष्टि होती है। इसी तरह शतभिषा, ज्येष्ठा और स्वाती नक्षत्रों में चार द्रोण; कृत्तिका नक्षत्र में दश द्रोण; श्रवण, मघा, अनुराधा, भरणी, मूल आदि नक्षत्रों में चौदह द्रोण; पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में पच्चीस द्रोण; पुनर्वसु में बीस द्रोण; विशाखा व उत्तराषाढ़ा में भी बीस द्रोण; श्लेषा में तेरह द्रोण; उत्तराभाद्रपदा, उत्तराफाल्गुनी और रोहिणी नक्षत्रों में पच्चीस द्रोण; पूर्वाभाद्रपदा व पुष्य नक्षत्रों में पंद्रह द्रोण; अश्विनी में १२ द्रोण तथा आर्द्रा में प्रवर्षण समय वर्षा होती है, तो प्रसव के समय अठारह द्रोण वर्षा होती है। यहाँ उपद्रव रहित नक्षत्र में ही उक्त द्रोण के समान वर्षा कहनी चाहिए।।६-९।।

यहाँ पर विशेष कथन

रविरविसुतकेतुपीडिते भे क्षितितनयत्रिविधाद्भुताहते च ।
भवति च न शिवं न चापि वृष्टिः शुभसहिते निरुपद्रवे शिवं च ।।१०।।

माया—सूर्य, शनि, केतु, मंगल आदि के साथ तीन प्रकार के उपद्रवों (दिव्य, आन्तरिक्ष व भौम) से नक्षत्र के पीड़ित रहने पर अकल्याण और वर्षा का सर्वथा अभाव होता है। उपद्रव रहित नक्षत्र बुध, गुरु या शुक्र से युक्त होकर कल्याण और वृष्टि करने वाला होता है।।१०।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां प्रवर्षणं नामाध्यायस्त्रयोविंशः ।।२३।।

□□□

अथ चतुर्विंशोऽध्यायः-२४

रोहिणी योग विचारः

आगम दर्शनार्थ कथन

कनकशिलाचयविवरजतरुकुसुमासङ्गिमधुकरानुरुते ।
बहुविहगकलहसुरयुवतिगीतमन्द्रस्वनोपवने ।।१।।
सुरनिलयशिखरिशिखरे बृहस्पतिर्नारदाय यानाह ।
गर्गपराशरकाश्यपमयाश्च यान् शिष्यसङ्घेभ्यः ।।२।।
तानवलोक्य यथावत् प्राजापत्येन्दुसम्प्रयोगार्थान् ।
अल्पग्रन्थेनाहं तानेवाभ्युद्यतो वक्तुम् ।।३।।

माया—स्वर्ण पाषाण खण्डों के ढ़ेर के विवरों में से उत्पन्न पौधों के पुष्पों पर मँडराते हुए मधुकरों (भौंरों) के गुञ्जायमान गुनगुनाहट पूर्ण ध्वनियों से संयुत, विभिन्न प्रकार के पक्षियों के चहचहाहटपूर्ण आलाप से मिंश्रित विद्याधारियों के गीत से उत्पन्न मधुर ध्वनियों से संयुत तथा सुमेरु पर्वत पर शोभायमान उपवन में नारद के लिए बृहस्पति और अपने शिष्यों के लिए गर्ग, पराशर, कश्यप तथा मयासुर ने रोहिणी व चन्द्र के समागम के प्रसङ्ग में जैसा उपदेश किया था, उन प्रसङ्गों को अल्प शब्दों वाले श्लोकों से मैं कहने हेतु प्रस्तुत हुआ हूँ।।१-३।।

रोहिणी योग काल कथन

प्राजेशमाषाढतमिस्रपक्षेक्षमाकरेणोपगतं समीक्ष्य ।
वक्तव्यमिष्टं जगतोऽशुभं वा शास्त्रोपदेशाद् ग्रहचिन्तकेन ।।४।।
योगो यथानागत एव वाच्यः स धिष्ण्ययोगः करणे मयोक्तः ।
चन्द्रप्रमाणद्युतिवर्णमार्गै रुत्पातवातैश्च फलं निगद्यम् ।।५।।

माया—आषाढ़ मास के कृष्ण पक्ष में रोहिणी और चन्द्र का समागम जानकर ग्रहों का चिन्तन करने वाले ज्योतिष जनों को शास्त्रागम के अनुसार जगत् का शुभाशुभ विचार करना चाहिए। इस रोहिणी योग का विचार मैंने अपने पञ्चसिद्धान्तिका नामक करण ग्रन्थ में नक्षत्रयोग के रूप में किया है। इस प्रकार चन्द्र बिम्ब प्रमाण, उसकी कान्ति, उसका वर्ण, उसका मार्ग, अनेक प्रकार के उत्पात तथा वायु से जगत् का इष्ट व अनिष्ट फल कथन करना चाहिए।।४-५।।

यहाँ पर रोहिणी योग विधान कथन

पुरादुदग्यत्पुरतोऽपि वा स्थलं त्र्यहोषितस्तत्र हुताशतत्परः ।
ग्रहान् सनक्षत्रगणान् समालिखेत् सधूपपुष्पैर्बलिभिश्च पूजयेत् ।।६।।
सरत्नतोयौषधिभिश्चतुर्दिशं तरुप्रवालापिहितैः सुपूजितैः ।
अकालमूलैः कलशैरलंकृतं कुशास्तृतं स्थण्डिलमावसेद् द्विजः ।।७।।

माया—नगर से उत्तर दिशा में स्थान पर ब्राह्मण को स्थित होकर तीन दिन पर्यन्त हवन करते हुए उपवास करना चाहिए। पश्चात् अश्विनी आदि २७ नक्षत्रों के साथ सूर्यादि ग्रहों को लिखकर धूप, पुष्प के साथ उपहारों से उनकी पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार रत्न (मणि), जल और औषधियों अर्थात् सुगन्धित पदार्थ से सम्पन्न, नवपल्लवों से आच्छादित, विविध प्रकार से पूजित, चारों दिशाओं में स्थित तथा अकाल मूल अर्थात् अग्निपाक के समय भी श्यामवर्ण से रहित अधोभाग वाले मृत्भाण्ड कलशों से अलङ्कृत कुशाच्छादित स्थण्डिल पर ब्राह्मण को स्थित होना चाहिए।।६-७।।

कलश स्थापन व हवन विधि कथन

आलभ्य मन्त्रेण महाव्रतेन बीजानि सर्वाणि निधाय कुम्भे ।
प्लाव्यानि चामीकरदर्भतोयैर्होमो मरुद्वारुणसोममन्त्रैः ।।८।।

माया—अनन्तर महाव्रत नाम के प्रसिद्ध मन्त्र से अभिमन्त्रित बीजों को कलश में रखकर स्वर्ण व कुशायुक्त जल से भर देना चाहिए तथा वायु, वरुण और चन्द्र के मन्त्र द्वारा हवन कार्य करना चाहिए। पाठान्तर 'होमश्चरुर्वारुण सौम्य मन्त्रैः' अर्थात् 'चरु (खीर) और वरुण व सौम्य के मन्त्र से हवन करना चाहिए' से इस प्रकार अर्थ ग्रहण करना होगा।।८।।

पताका स्थापन और वायु परीक्षण कथन

श्लक्ष्णां पताकामसितां विदध्याद्दण्डप्रमाणां त्रिगुणोच्छ्रिताञ्च ।
आदौ कृते दिग्ग्रहणे नभस्वान् ग्राह्यस्तया योगगते शशाङ्के ।।९।।

माया—सूक्ष्म तन्तुओं से निर्मित, दण्ड प्रमाण अर्थात् चार हाथ लम्बी और कृष्ण वर्ण पताका को उससे त्रिगुणित अर्थात् बारह (१२) हाथ लम्बे काष्ठ या बाँस पर बाँधना चाहिए। तत्पश्चात् रोहिणी व चन्द्र समागम के समय उससे किस ओर की वायु है? यह ज्ञान करना चाहिए। इस तरह पताका से दिग्ज्ञान पूर्वक वायु की परीक्षा करनी चाहिए।।९।।

वायुवश इष्टनिष्ट फल कथन

तत्रार्द्धमासाः प्रहरैर्विकल्प्या वर्षानिमित्तं दिवसास्तदंशैः ।
सव्येन गच्छन् शुभदः सदैव यस्मिन् प्रतिष्ठा बलवान् स वायुः ।।१०।।

माया—तदनन्तर वर्षा काल के ज्ञान के लिए रोहिणी योग के समय अहोरात्र के अष्टमांश प्रहर से एक पक्ष की और प्रहरार्द्ध से दिन की कल्पना करनी चाहिए। अर्थात् जिस अहोरात्र में रोहिणी के साथ चन्द्र का योग होता है, उस दिन सूर्योदय से प्रथम आदि आठ प्रहरों तक पताका द्वारा वायु का परीक्षण इस प्रकार करना चाहिए—दिन के प्रथम प्रहर में शोभन अर्थात् सुन्दर वायु के बहने से श्रावण कृष्ण में, द्वितीय प्रहर में सुन्दर वायु चलने से श्रावण शुक्ल में, तृतीय प्रहर सुन्दर वायु चलने पर भाद्रकृष्ण में, चतुर्थ प्रहर में सुन्दर वायु बहने से भाद्रपद शुक्ल में, पञ्चम प्रहर में सुन्दर वायु चलने से आश्विन कृष्ण में, षष्ठ प्रहर में सुन्दर वायु बहने से अश्विन शुक्ल में, सप्तम प्रहर में वायु बहने से कार्त्तिक कृष्ण में तथा अष्टम प्रहर में सुन्दर वायु के बहने से कार्त्तिक शुक्ल में अच्छी वर्षा होती है।

इसी तरह उस दिन सूर्योदय से आधे-आधे प्रहरों तक सुन्दर वायु की परीक्षण करते हुए श्रावण आदि मास के कृष्ण आदि पक्ष के आधे-आधे भाग में सुन्दर वृष्टि होने का ज्ञान करना चाहिए। पुनः प्रत्येक पक्ष के चतुर्थांश प्रहर की कल्पना करते हुए सूर्योदय से प्रथम आदि भाग में सुन्दर वायु चलने से श्रावण कृष्ण आदि पक्ष के चतुर्थांश भाग में सुन्दर वृष्टि कहनी चाहिए।

किसी-किसी ने उपरोक्त में पक्ष के स्थान पर मास की कल्पना की है। इस प्रकार आधे प्रहर की जगह पक्ष और चतुर्थांश प्रहर की जगह पक्षार्द्ध ग्रहण करना चाहिए। जब उपरोक्त पताका सव्य क्रम से चलता हो, तो शुभदायक होता है। जिस किसी दिशा की वायु में स्थिरता प्रतीत हो, उससे शुभाशुभ फल कथन करना चाहिए।।१०।।

कुम्भस्थ अंकुरित बीजवश इष्टनिष्ट फल कथन

वृत्ते तु योगेऽङ्कुरितानि यानि सन्तीह बीजानि धृतानि कुम्भे ।
येषां तु योंऽशोऽङ्कुरितस्तदंशस्तेषां विवृद्धिं समुपैति नान्यः ।।११।।

माया—रोहिणी व चन्द्र समागम के समय कुम्भ कलशों में रखे गए बीजों में से जिनके जितने अंश अंकुरित हों, उतने अंश की उसी अनुपात में उस वर्ष अभिवृद्धि होती है।।११।।

रोहिणी चन्द्र समागमकालिक शुभ शकुन कथन

शान्तपक्षिमृगराविता दिशो निर्मलं वियदनिन्दितोऽनिलः ।
शस्यते शशिनि रोहिणीगते मेघमारुतफलानि वच्म्यतः ।।१२।।

माया—रोहिणी व चन्द्र समागम के समय शान्त तथा वनवासी पशुओं के मधुर शब्दों से गुञ्जायमान दिशा, विमल आकाश एवं सुन्दर वायु शुभकारक है। एतदनन्तर मेघ व वायु से सम्बन्धित फलों को कहता हूँ।।१२।।

रोहिणी चन्द्र समागम काल के शुभ योग कथन

क्वचिदसितसितैः सितैः क्वचिच्च क्वचिदसितैर्भुजगैरिवाम्बुवाहैः ।
वलितजठरपृष्ठमात्रदृश्यैः स्फुरिततडिद्रसनैर्वृतं विशालैः ।।१३।।
विकसितकमलोदरावदातैररुणकरद्युतिरञ्जितोपकण्ठैः ।
छुरितमिव वियद्घनैर्विचित्रैर्मधुकरकुङ्कुमकिंशुकावदातैः ।।१४।।

माया—अपने पेट की ओर से वलयाकृति होने से पृष्ठमात्र दीखने वाले सर्पों के समान कहीं कृष्णश्वेत, कहीं मात्र श्वेत, कहीं पर मात्र कृष्ण विपुल व दमकती हुई विद्युत् की तरह जीभ वाले, विकसित कमल के आन्तिरिक स्वच्छ कान्ति तुल्य, प्रान्त भाग में रक्तवर्ण के समान कान्ति वाले तथा भौंरा, कुङ्कुम व पुष्प के समान स्वच्छ कान्ति वाले मेघों से सम्पन्न आकाश रोहिणी चन्द्र समागम के समय दीखने से शुभ होता है।।१३-१४।।

पुनः समागम कालिक शुभ योग कथन

असितघननिरुद्धमेव वा चलिततडित्सुरचापचित्रितम् ।
द्विपमहिषकुलाकुलीकृतं वनमिव दावपरीतमम्बरम् ।।१५।।

माया—अथवा रोहिणी चन्द्र समागम के समय विद्युत्, इन्द्रधनुष तथा कृष्ण वर्ण के मेघों से सम्पन्न अनेक वर्ण का दीखने वाला जैसे दावाग्नि, हाथी तथा भैंसों से आकुलित वन के समान आकाश के होने से शुभदायक होता है।।१५।।

और भी समागम कालिक शुभ योग कथन

अथवाञ्जनशैलशिलानिचयप्रतिरूपधरैः स्थगितं गगनम् ।
हिममौक्तिकशङ्खशशाङ्ककरद्युतिहारिभिरम्बुधरैरथवा ।।१६।।

माया—अथवा रोहिणी-चन्द्र समागम के समय अंजन पर्वत के कृष्ण पाषाणों की तरह मेघों से सम्पन्न अथवा हिम, मुक्ता, शङ्ख और चन्द्रकिरण की कान्ति को भी लज्जा ने वाले अर्थात् श्वेत वर्ण के मेघों से सम्पन्न आकाश दीखने पर शुभदायक होता है।।१६।।

समागम कालिक और भी शुभयोग कथन

तडिद्धैमकक्ष्यैर्बलाकाग्रदन्तैःस्रवद्वारिदानैश्चलत्प्रान्तहस्तैः ।
विचित्रेन्द्रचापध्वजोच्छ्रायशोभैस्तमालालिनीलैर्वृतं चाब्दनागैः ।।१७।।

माया—रोहिणी-चन्द्र समागम के समय विद्युत् रूपी स्वर्ण मध्य बन्धनी (कमरबन्ध), बलाका अर्थात् पक्षी विशेष या हंस समूह रूपी अग्रदन्त (शुक्लवर्ण होने से), गिरते हुए वृष्टि जल यीप मद, चलायमान अग्रभाग रूपी हाथ, अनेक वणां के इन्द्रधनुष की तरह उठी हुई ध्वजा से सम्पन्न, तमाल वृक्ष और भौंरों के समान कृष्णवर्ण

के हाथयों के समान मेघों से आच्छज्ञदित आकाश के दीखने पर शुभकारी होता है॥१७॥

मेघों की विशेषता कथन

सन्ध्यानुरक्ते नभसि स्थितानामिन्दीवरश्यामरुचां घनानाम्।
वृन्दानि पीताम्बरवेष्टितस्य कान्तिं हरेश्चोरयतां यदा वा ॥१८॥

माया—सन्ध्या समय के राग से रञ्जित अर्थात् रक्तवर्ण का, नीलोत्पल अर्थात् नीलकमल के सदृश जैसे पिताम्बर धारण किये भगवान् नारायण की कान्ति की चोरी करने वाले आकाश में मेघ स्थित हैं॥१८॥

मेघों की और भी विशेषता कथन

सशिखिचातकदर्दुरनिःस्वनैर्यदि विमिश्रितमन्द्रपटुस्वनाः।
खमवतत्य दिगन्तविलम्बिनः सलिलदाः सलिलौघमुचः क्षितौ ॥१९॥

माया—मयूर, चातक (सारङ्ग), मेढ़क आदि के शब्दों से सम्पन्न मधुर शब्द वाले, आकाश को आच्छादित करते हुए दिग्-दिगन्त पर्यन्त लटकते हुए और पृथ्वी पर बहुत वर्षा करने वाले मेंघ आकाश में स्थित हैं॥१९॥

पूर्वोक्त मेघों की स्थिति फल कथन

निगदितरूपैर्जलधरजालैस्त्र्यहमवरुद्धं द्व्यहमथवाहः।
यदि वियदेवं भवति सुभिक्षं मुदितजना च प्रचुरजला भूः ॥२०॥

माया—यदि आकाश में स्थित उपरोक्त रूप के मेघों के समूह का तीन दिन या दो दिन पर्यन्त दर्शन हो, तो सुभिक्ष करने वाला, जनगणों को आनन्दित करने वाला तथा पृथिवी को जलसम्पन्न करने वाला होता है॥२०॥

मेघों के अशुभ लक्षण कथन

रूक्षैरल्पैर्मारुताक्षिप्तदेहैरुष्ट्रध्वाङ्क्षप्रेतशाखामृगाभैः।
अन्येषां वा निन्दितानां स्वरूपैर्मूकैश्चाब्दैर्नो शिवं नापि वृष्टिः ॥२१॥

माया—रूखा, अल्प, वायु से उत्प्रेरित तथा ऊँट, कौआ, शव, बन्दर अथवा अन्य निन्दित (गर्हित) जन्तुओं जैसे कुत्ता, बिल्ली, सियार आदि के समान कान्ति युक्त तथा ध्वनि रहित मेघ सदा अशुभकारक व अनावृष्टि करने वाले होते हैं॥२१॥

मेघों के शुभ लक्षण कथन

विगतघने वा वियति विवस्वानमृदुमयूखः सलिलकृदेवम्।
सर इव फुल्लं निशि कुमुदाढ्यं खमुडुविशुद्धं यदि च सुवृष्ट्यै ॥२२॥

भाषा—आकाश में बादलों या मेघों का सर्वथा अभाव हो, सूर्य के किरणें भी तीक्ष्ण हों और रात में आकाश विमल नक्षत्रों से सम्पन्न हों तथा प्रफुल्लित कुमुद पुष्पों से सम्पन्न तडाग के सदृश आकाश के दीखने पर अधिक वृष्टि होती है॥२२॥

दिशा के अनुसार मेघों का फल कथन

पूर्वोद्भूतैः सस्यनिष्पत्तिरब्दैराग्नेयाशासम्भवैरग्निकोपः ।
याम्ये सस्यं क्षीयते नैर्ऋतेऽर्द्धं पश्चाज्जातैः शोभना वृष्टिरब्दैः ॥२३॥
वायव्योत्थैर्वातवृष्टिः क्वचिच्च पुष्टा वृष्टिः सौम्यकाष्ठासमुत्थैः ।
श्रेष्ठं सस्यं स्थाणुदिक्सम्प्रवृद्धैर्वायुश्चैवं दिक्षु धत्ते फलानि ॥२४॥

भाषा—मेघ यदि पूर्व दिशा में दीखता हो, तो धान्यों का पैदावार अच्छी होतीहै। आग्नेय दिशा में अग्नि प्रकोप का भय, दक्षिण दिशा में धान्य हानि, नैर्ऋत्य दिशा में अनुपातत: आधी मात्रा में धान्य की उत्पत्ति, पश्चिम दिशा में सुवृष्टि, वायव्य दिशा में खण्ड वृष्टि अर्थात् कहीं-कहीं पर वायु के साथ कुछ वृष्टि, उत्तर दिशा में पूर्ण वृष्टि तथा ईशान दिशा में मेघों के दीखने पर अच्छी धान्योत्पत्ति होती है। इसी तरह दिशा के अनुसार वायु के बहने का फल भी पण्डितों को जानना चाहिए; कब किस दिशा की वायु चल रही है, इसका ज्ञान हमें उपरोक्त ध्वजा से सम्भव होता है॥२३-२४॥

उत्पातों का सफल कथन

उल्कानिपातास्तडितोऽशनिश्च दिग्दाहनिर्घातमहीप्रकम्पाः ।
नादा मृगाणां सपतत्त्रिणां च ग्राह्या यथैवाम्बुधरास्तथैव ॥२५॥

भाषा—रोहिणी योग के समय दिशाओं के अनुसार मेघों व वायु के फल के समान विभिन्न उत्पातों जैसे उल्कापात् , विद्युत् , दिग्दाह, आकाशीय शब्द, भूकम्पन, पक्षी व जीव-जन्तुओं के शब्द का फल भी जानना चाहिए॥२५॥

पूर्वोक्त चारों दिशाओं के स्थापित कुम्भ से शुभाशुभ कथन

नामाङ्कितैस्तैरुदगादिकुम्भैः प्रदक्षिणं श्रावणमासपूर्वैः ।
पूर्णैः स मासः सलिलस्य दाता स्रुतैरवृष्टिः परिकल्प्यमूनैः ॥२६॥

भाषा—रोहिणी चन्द्र समागम के समय स्थापित चारों दिशाओं के कुम्भ को उत्तर आदि प्रदक्षिण क्रम से श्रावण आदि चार मासों के नाम से अंकित करना चाहिए। उस रोहिणी चन्द्रसमागम के दिन वृष्टि होने पर जिस मास सम्बन्धी कुम्भ जल से पूर्णतया भर जाय, वह मास फलदायक, घड़ा से बिल्कुल जल खाली रहने पर अनावृष्टि, अल्प जल होने पर स्व विवेकानुसार अनुपात से जैसे चौथाई से चौथाई, आधा से आधा, तीन चौथाई से तीन चौथाई आदि वृष्टि कहनी चाहिए॥२६॥

पुनः पूर्वोक्त चारो दिशाओं के स्थापित कुम्भ से शुभाशुभ कथन

अन्यैश्च कुम्भैर्नृपनामचिह्नैर्देशाङ्कितैश्चाप्यपरैस्तथैव ।
भग्नैः स्रुतैर्न्यूनजलैः सुपूर्णैर्भाग्यानि वाच्यानि यथानुरूपम् ।।२७।।

माया—पूर्ववत् रोहिणी चन्द्र समागम के समय स्थापित चारों दिशाओं के कुम्भ को उत्तर आदि प्रदक्षिण क्रम से राजा, देश, दिशा, ब्राह्मणादि वर्ण के अपेक्षानुसार अंकित करना चाहिए। उस रोहिणी चन्द्र समागम के दिन वृष्टि होने पर जिस दिशा का कुम्भ नष्ट या टूट जाय, उस दिशा के राजा, देश, दिशा, वर्णों का नाश; जिस दिशा के कुम्भ से पूर्णतः जल बह जाय, उस दिशा के राजा, देश, वर्ण आदि उपद्रव ग्रस्त; जिस दिशा के कुम्भ में अल्प आदि जल उपलब्ध हो, उस दिशा के राजा, देश, वर्ण आदि को मध्यम फल की प्राप्ति तथा जिस दिशा का घड़ा जल से पूर्णरूप से भरा हो उस दिशा के राजा, देश, वर्ण आदि को अत्यन्त शुभ फल की प्राप्ति होती है।।२७।।

रोहिणी के दक्षिणस्थ चन्द्र समागम फल कथन -

दूरगो निकटगोऽथवा शशी दक्षिणे पथि यथातथा स्थितः ।
रोहिणीं यदि युनक्ति सर्वथा कष्टमेव जगतो विनिर्दिशेत् ।।२८।।

माया—जैसे-तैसे दूरस्थ अथवा समीपस्थ चन्द्रमा यदि रोहिणी के दक्षिण मार्ग में स्थित होकर समागम करता हो, तो संसार के लिए सर्वथा कष्टकारी होता है।।२८।।

रोहिणी के उत्तरस्थ चन्द्र समागम फल कथन

स्पृशन्नुदग्याति यदा शशाङ्कस्तदा सुवृष्टिर्बहुलोपसर्गा ।
असंस्पृशन् योगमुदक्समेतः करोति वृष्टिं विपुलां शिवं च ।।२९।।

माया—चन्द्रमा रोहिणी के दक्षिण दिशा को स्पर्श करता हुआ यदि उत्तर की ओर विचरण करे, तो सुवृष्टि करने वाला, परन्तु जनगणों के मध्य उपद्रव कराने वाला होता है। चन्द्रमा रोहिणी के दक्षिण दिशा को विना स्वर्श किया हुआ यदि उत्तर की ओर विचरण करें, तो सुवृष्टि करने के साथ जनगणों का भी कल्याण करने वाला होता है।।२९।।

रोहिणी शकटमध्यस्थ चन्द्र का फल कथन

रोहिणीशकटमध्यसंस्थिते चन्द्रमस्यशरणीकृता जनाः ।
क्वापि यान्ति शिशुयाचिताशनाः सूर्यतप्तपिठराम्बुपायिनः ।।३०।।

माया—चन्द्र रोहिणी नक्षत्र के शकट (रोहिणी के छः ताराऐं शकट जैसी आकृति बनाती हैं) मध्य में स्थित होकर यदि विचरण करे, तो जनगणों को आश्रयरहित

करती है, अपने-अपने बच्चों के भोजन के लिए भिक्षाटन करवाती हैं तथा सूर्य किरणों से तप्त जल पीते हुए जनगण अनभिज्ञ दिशा में विचरण करते हैं।।३०।।

रोहिण के पश्चिम दिक् स्थिति में चन्द्र फल कथन

उदितं यदि शीतदीधितिं प्रथमं पृष्ठत एति रोहिणी ।
शुभमेव तदा स्मरातुराः प्रमदाः कामवशेन संस्थिताः ।।३१।।

माया—यदि चन्द्र के उदय के बाद उसके पश्चिम दिशा में स्थित रोहिणी नक्षत्र उदय लेकर विचरण करता हो, तो जनगणों का शुभ होता है तथा कामातुर कामिनियाँ पति के अधीन हो जाती हैं।।३१।।

रोहिणी से पूर्व दिक्स्थित चन्द्र फल कथन

अनुगच्छति पृष्ठतः शशी यदि कामी वनितामिव प्रियाम् ।
मकरध्वजबाणखेदिताः प्रमदानां वशगास्तदा नराः ।।३२।।

माया—जिस प्रकार कामातुर पति अपनी प्रियतमा स्त्री के पीछे चलता है, उसी प्रकार रोहिणी के पीछे यदि चन्द्र विचरण करता हो, तो कामदेव के बाण से खेदित व्याकुल होकर पुरुषजन स्त्री के वश में हो जाते हैं।।३२।।

रोहिणी के आग्नेयादि कोणस्थ चन्द्र फल कथन

आग्नेय्यां दिशि चन्द्रमा यदि भवेत्तत्रोपसर्गो महान्
नैर्ऋत्यां समुपद्रुतानि निधनं सस्यानि यान्तीतिभिः ।
प्राजेशानिलदिक्स्थिते हिमकरे सस्यस्य मध्यश्चयो
याते स्थाणुदिशं गुणाः सुबहवः सस्यार्घवृष्ट्यादयः ।।३३।।

माया—रोहिणी नक्षत्र के अग्नि कोण में स्थित चन्द्र, उस वर्ष में बहुत उपद्रव करने वाला, नैर्ऋत्य कोण में स्थित चन्द्र अति वृष्टि कारक और ईतियों से धान्यों की हानि करने वाला, वायव्य कोण में स्थित चन्द्र मध्यम धान्य कारक और ईशानकोण में स्थित चन्द्र धान्यों को अल्प सस्ता करने वाला व सुवृष्टिकारक तथा अन्य गुणों से भी युक्त करता है।।३३।।

योगतारा को भेदित व आच्छादित कारक चन्द्र का फल कथन

ताडयेद्यदि च योगतारकामावृणोति वपुषा यदापि वा ।
ताडने भयमुशन्ति दारुणं छादने नृपबधोऽङ्गनाकृतः ।।३४।।

माया—रोहिणी की योगतारा को यदि चन्द्र ताडित अर्थात् अपने शृङ्ग के एक देश से उसे स्पर्श करे, तो कठिन भय उत्पन्न करने वाला होता है। अथवा उस योग तारा को अपने बिम्ब से आच्छादित करे, तो स्त्रीकृत राजा की मृत्यु करने वाला होता है।।३४।।

पालतु जन्तुओं से शुभाशुभ कथन

गोप्रवेशसमयेऽग्रतो वृषो याति कृष्णपशुरेव वा पुरः ।
भूरि वारि शबले तु मध्यमं नो सितेऽम्बुपरिकल्पनापरैः ।।३५।।

माया—गाँव में गाय के प्रवेश करने के समय वन व खेतों से चरकर लौट रहे पशुओं में आगे-आगे बैल या कोई काला पशु हो, तो उस सम्वत्सर में अति वृष्टि होती है। उस स्थिति में आगे-आगे काला-सफेद शबल पशु हो, तो उस सम्वत्सर में मध्यम फल और उस पशु में कालापन अधिकतर दृष्ट हो, तो वर्षा तथा सफेद अधिक दृष्ट हो, तो थोड़ी वर्षा, लेकिन यदि पूर्णतः सफेद पशु हो, तो अनावृष्टि होती है।।३५।।

अदृश्य रोहिणी चन्द्र समागम का फल कथन

दृश्यते न यदि रोहिणीयुतश्चन्द्रमा नभसि तोयदावृते ।
रुग्भयं महदुपस्थितं तदाभूश्च भूरिजलसस्यसंयुता ।।३६।।

माया—जब रोहिणी से संयुत चन्द्र आकाश में मेघ से आच्छादित हो, चन्द्र बिल्कुल दिखाई न देता हो, तो उस सम्वत्सर में अधिकतर रोग का भय और पृथ्वी भी अधिकतर धान्यों तथा जल से सम्पन्न होती है।।३६।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां रोहिणीयोगाध्यायश्चतुर्विंशः ।।२४।।

□□□

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः-२५

स्वातीयोग विचारः

रोहिणी योगवत स्वाती योग विचारपूर्वक उसमें विशेष कथन

यद्रोहिणीयोगफलं तदेव स्वातावषाढासहिते च चन्द्रे ।
आषाढशुक्ले निखिलं विचिन्त्यं योऽस्मिन् विशेषस्तमहं प्रवक्ष्ये ।।१।।

माया—पूर्वोक्त रोहिणी योग के सम्पूर्ण फलों के समान ही आषाढ़ शुक्ल पक्ष में स्वाती नक्षत्र चन्द्र योग के फलों की कल्पना करनी चाहिए और इस स्वाती योग में जो कुछ विशेष सम्भव फल हैं, उनको कहता हूँ।।१।।

दिन व रात के पृथक् त्रिभागीय वृष्टि कथन

स्वातौ निशांशे प्रथमेऽभिवृष्टे सस्यानि सर्वाण्युपयान्ति वृद्धिम् ।
भागे द्वितीये तिलमुद्गमाषा ग्रैष्मं तृतीयेऽस्ति न शारदानि ।।२।।
वृष्टेऽह्निभागे प्रथमे सुवृष्टिस्तद्वद् द्वितीये तु सकीटसर्पा ।
वृष्टिस्तु मध्यापरभागवृष्टेनिश्छिद्रवृष्टिर्द्युनिशं प्रवृष्टे ।।३।।

माया—स्वाती चन्द्र योग के दिन पृथक्-पृथक् रात्रि व दिन का तीन-तीन भाग कर लेना चाहिए। इस प्रकार रात्रि के प्रथम भाग में वृष्टि होने पर सभी प्रकार के धान्यों की अभिवृद्धि होती है। द्वितीय भाग में तिल, मूँग व उड़द की अभिवृद्धि और उसके तृतीय भाग में वृष्टि होने पर ग्रीष्म धान्यों की अभिवृद्धि तथा शरद धान्यों की हानि होती है। उसी प्रकार दिन के प्रथम भाग में वृष्टि होने पर सुवृष्टि, द्वितीय भाग में कीट व सर्प से युक्त वर्षा और तृतीय भाग में वृष्टि होने पर मध्यम वृष्टि होती है। जब सम्पूर्ण दिन व रात निरन्तर वृष्टि हो, तो वर्षा ऋतु में दोषहीन वृष्टि होती है।।२-३।।

अपांवत्स के निकट स्थित चन्द्र का फल कथन

सममुत्तरेण तारा चित्रायाः कीर्त्यते ह्यपांवत्सः ।
तस्यासन्ने चन्द्रे स्वातेर्योगः शिवो भवति ।।४।।

माया—चित्रा नक्षत्र के उत्तर दिशा में अपांवत्स तारा स्थित है। उस तारा के निकट यदि स्वाती चन्द्र समागम हो, तो सबका कल्याण होता है।।४।।

स्वाती चन्द्र समागम का फल कथन

सप्तम्यां स्वातियोगे यदि पतति हिमं माघमासान्धकारे
वायुर्वा चण्डवेगः सजलजलधरो वापि गर्जत्यजस्रम् ।

विद्युन्मालाकुलं वा यदि भवति नभो नष्टचन्द्रार्कतारं
विज्ञेया प्रावृडेषा मुदितजनपदा सर्वसस्यैरुपेता ।।५।।

माया—माघ कृष्ण सप्तमी के दिन यदि स्वाती नक्षत्र व चन्द्र के समागम काल में हिमपात हो, प्रचण्ड वेगवान वायु बहे, वृष्टि के साथ मेघ गर्जन हो, विद्युन्माला निरन्तर चमकता रहे। सूर्य व चन्द्र और तारा मेघाच्छादित होने से अदृश्यं होने पर वर्षा के समय में सभी जनपद प्रसन्नचित्त और सभी धान्यों से सम्पन्न होता है।।५।।

और भी स्वाती चन्द्र समागम फल कथन

तथैव फाल्गुने चैत्रे वैशाखस्यासितेऽपि वा ।
स्वातियोगं विजानीयादाषाढे च विशेषतः ।।६।।

माया—उसी प्रकार फाल्गुन, चैत्र और वैशाख के कृष्ण पक्ष के समय भी स्वाती-चन्द्र समागम का विचार करना चाहिए, परन्तु आषाढ़ मास में उक्त समागम का विशेष रूप से विचार करना चाहिए।।६।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां स्वातीयोगाध्यायः पञ्चविंशः ।।२५।।

□□□

अथ षड्विंशोऽध्यायः-२६

आषाढ़ीयोग विचारः

आषाढ़ी योग में धान्यों की स्थिति कथन

आषाढ्यां समतुलिताधिवासितानामन्येद्युर्यदधिकतामुपैति बीजम् ।
तद्वृद्धिर्भवति न जायते यदूनं मन्त्रोऽस्मिन् भवति तुलाभिमन्त्रणाय ।।१।।

भाषा—आषाढ़ मास के पूर्णिमा तिथि के दिन उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में स्थित चन्द्र के समय अभिमन्त्रित तुला से विभिन्न धान्यों के बीजों को पृथक्-पृथक् और समान मात्रा में तौलकर सुरक्षित स्थान पर रखना चाहिए। दूसरे दिन उन सभी बीजों को पृथक्-पृथक् पुनः तौलने पर जिस धान्य की मात्रा बढ़ जाय, उस धान्य की उस सम्वतसर में वृद्धि और जिसकी मात्रा कम हो जाय, उस धान्य की हानि होती है। अब तुला को अभिमन्त्रित करने हेतु मन्त्र कहते हैं।।१।।

तुला अभिमन्त्रित करने के आर्ष मन्त्र कथन

स्तोतव्या मन्त्रयोगेन सत्या देवी सरस्वती ।
दर्शयिष्यसि यत्सत्यं सत्ये सत्यव्रता ह्यसि ।।२।।
येन सत्येन चन्द्रार्कौ ग्रहा ज्योतिर्गणास्तथा ।
उत्तिष्ठन्तीह पूर्वेण पश्चादस्तं व्रजन्ति च ।।३।।
यत्सत्यं सर्ववेदेषु यत्सत्यं ब्रह्मवादिषु ।
यत्सत्यं त्रिषु लोकेषु तत्सत्यमिह दृश्यताम् ।।४।।
ब्रह्मणो दुहितासि त्वमादित्येति प्रकीर्तिता ।
काश्यपी गोत्रतश्चैव नामतो विश्रुता तुला ।।५।।

भाषा—वह तुला इस सत्यरूपा सरस्वती देवी के आर्ष मन्त्र से अभिमन्त्रित्त करना चाहिए। हे सत्य स्वरूपे सरस्वती जी ! जो परमार्थ रूप पदार्थ है, उसे तुम ही मात्र दिखला सकती हो, क्योंकि तुम ही सत्यव्रता हो। जिस सत्य के बल से सूर्य, चन्द्र, भौम आदि नव ग्रह और नक्षत्र-मण्डल पूर्वदिशा में उदय लेकर पश्चिम दिशा में अस्तमित होते हैं, जो सत्य चार वेदों में निहित है, जो सत्य ब्रह्मवादियों के मध्य स्थित है और जो सत्य त्रिलोक भी है, उस सत्य को यहाँ प्रदर्शित करो। तुम ब्रह्मपुत्री हो, परन्तु आदित्या नाम से विख्यात हो, तुम काश्यप गोत्रा की हो और तुला नाम से भी प्रसिद्ध हो।।२-५।।

तुला का लक्षण कथन

क्षौमं चतुःसूत्रकसन्निबद्धं षडङ्गुलं शिक्यकवस्त्रमस्याः ।
सूत्रप्रमाणं च दशाङ्गुलानि षडेव कक्ष्योभयशिक्यमध्ये ।।६।।

भाषा—षडङ्गुल प्रमाण के शिक्यक (पलड़ों के) वस्त्र को दश अंगुल प्रमाण के चार-चार सूत्रों से बाँधना चाहिए तथा दोनों शिक्यक (पलड़ों) के मध्य छः अंगुल प्रमाण कक्ष्य (मध्य डण्डी) को बाँधना चाहिए।।६।।

द्रव्यों के प्रमाणवश वृष्टि कथन

याम्ये शिक्ये काञ्चनं संन्निवेश्यं शेषद्रव्याण्युत्तरेऽम्बूनि चैव ।
तोयैः कौप्यैः सैन्धवैः सारसैश्च वृष्टिर्हीना मध्यमा चोत्तमा च ।।७।।
दन्तैर्नागा गोहयाद्याश्च लोम्ना हेम्ना भूपाः शिक्थकेन द्विजाद्याः ।
तद्वद्देशा वर्षमासा दिशश्च शेषद्रव्याण्यात्मरूपस्थितानि ।।८।।

भाषा—उस तुला के दक्षिण शिक्य पर स्वर्ण तथा उत्तर शिक्य पर कूप, नदी, तालाब आदि के जल के साथ अन्य शेष द्रव्यों का स्थापन करना चाहिए। वहाँ प्रथम दिन की तुलना में द्वितीय दिन यदि कूप के जल की मात्रा में वृद्धि हो, तो अनावृष्टि, नदी के जल में वृद्धि हो, तो मध्यम वृष्टि और तालाब के जल में वृद्धि हो, तो सुन्दर वृष्टि होती है। यहाँ पर गजदन्त से हाथी का, गौ, घोड़ा, ऊँट आदि के लोम से क्रम से गवादि का, स्वर्ण से राजा का, मोम से ब्राह्मण आदि वर्णों का, देश, वर्ष-मास तथा दिशाओं का तथा स्वात्म प्रमाण से शेष पदार्थों का शुभाशुभ जानना चाहिए।।७-८।।

श्रेष्ठ आदि तुला दण्ड प्रकार कथन

हैमी प्रधाना रजतेन मध्या तयोरलाभे खदिरेण कार्या ।
विद्धः पुमान् येन शरेण सा वा तुला प्रमाणेन भवेद्वितस्तिः ।।९।।

भाषा—सोने का तुलादण्ड (तराजू की डण्डी) उत्तम, चाँदी का मध्यम तथा इन दोनों धातुओं की डण्डी के अभाव में खैर की लकड़ी का तुलादण्ड लेना चाहिए, अथवा जिस बाण से किसी मनुष्य को वेधा गया हो, उसका तुला दण्ड ग्रहण करना चाहिए। तुलादण्ड किसी धातु या लकड़ी का हो, वह द्वादश अंगुल प्रमाण का ही लेना चाहिए।।९।।

तुले हुए पदार्थों का शुभाशुभ कथन

हीनस्य नाशोऽभ्यधिकस्य वृद्धिस्तुल्येन तुल्यं तुलितं तुलायाम् ।
एतत्तुलाकोशरहस्यमुक्तं प्राजेशयोगेऽपि नरो विदध्यात् ।।१०।।

माया—पूर्वोक्तानुसार द्वितीय दिन तुला हुआ पदार्थ कम हो जाय, तो उस सम्वत्सर में उसकी हानि, उसके अधिक होने पर उसकी वृद्धि तथा उसके समतुल्य होने पर मध्यम फल की प्राप्ति होती है। इस प्रकार मैंने तुला का परम गुप्त रहस्य को प्रकट किया है इसका रोहिणी योग में भी विचार करना श्रेयस्कर है॥१०॥

स्वात्यादि नक्षत्र व चन्द्र समागम का पापग्रह सम्बन्ध से शुभाशुभ कथन

स्वातावषाढास्वथ रोहिणीषु पापग्रहा योगगता न शस्ताः ।
ग्राह्यं तु योगद्वयमप्युपोष्य यदाधिमासो द्विगुणीकरोति ॥११॥

माया—स्वती, उत्तराषाढ़ा या रोहिणी नक्षत्र में स्थित चन्द्र का किसी पापग्रह अर्थात् मंगल, शनि, राहु, केतु आदि से सम्बन्ध हो, तो शुभप्रद नहीं होता है॥११॥

रोहिणी, स्वाती व आषाढ़ी में उत्तम योग कथन

त्रयोऽपि योगाः सदृशाः फलेन यदा तदा वाच्यमसंशयेन ।
विपर्यये यत्त्विह रोहिणीजं फलं तदेवाभ्यधिकं निगद्यम् ॥१२॥

माया—पूर्वोक्त तीनों रोहिणी, स्वाती और आषाढ़ी योगों का फल या इनमें से दो योगों का फल समान होने पर निश्चय ही पूर्वोक्त फल का ही कथन करना चाहिए। जब उक्त तीनों योगों का फल भिन्न-भिन्न हो, तो उस स्थिति में रोहिणी योग का फल ही उस सम्वत्सर में कहना चाहिए॥१२॥

आठ दिशाओं के वश वात (वायु) फल कथन

निष्पत्तिरग्निकोपो वृष्टिर्मन्दाथ मध्यमा श्रेष्ठा ।
बहुजलपवना पुष्टा शुभा च पूर्वादिभिः पवनैः ॥१३॥

माया—उपरोक्त रोहिणी, स्वाती और आषाढ़ी तीनों योगो के काल में पूर्व आदि अष्ट दिशाओं से वायु बहने पर क्रम से धान्यों की अभिवृद्धि, अग्नि प्रकोप, अल्प वृष्टि, मध्यम वृष्टि, उत्तम वृष्टि, अति वृष्टि, सुवृष्टि और उत्कृष्ट वृष्टि होती हैं अर्थात् पूर्व दिशा की वायु बहे, तो धान्य वृद्धि, अग्नि कोण की वायु बहे, तो अग्नि प्रकोप, दक्षिण दिशा की वायु बहे, तो अल्प वृष्टि, नैर्ऋत्य कोण की वायु बहे, तो मध्यम वृष्टि, पश्चिम दिशा की वायु बहे, तो उत्तम वृष्टि, वायव्य कोण की वायु बहे, तो अतिवृष्टि, उत्तर दिशा की वायु बहे, तो सुवृष्टि तथा ईशान कोण की वायु बहने से उत्कृष्ट वर्षा होती है॥१३॥

आषाढ़ मास कृष्ण पक्ष चतुर्थी का फल कथन

वृत्तायामाषाढ्यां कृष्ण चतुर्थ्यामजैकपादर्क्षे ।
यदि वर्षति पर्जण्यः प्रावृट् शस्ता न चेन्न तत् ॥१४॥

माया—आषाढ़ कृष्ण चतुर्थी के दिन पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में यदि मेघ बरसता है, तो उस वर्ष में भी उत्तम वृष्टि होती है। यदि उस दिन वृष्टि का अभाव हो जाय, तो उस वर्ष में अनावृष्टि की शिकायत रहती है॥१४॥

आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन ऐशानी वायु का फल

आषाढ्या पौर्णमास्यां तु यद्यैशानोऽनिलो भवेत्।
अस्तं गच्छति तीक्ष्णांशौ सस्य सम्पत्तिसत्तमा ॥१५॥

माया—आषाढ़ मास के पूर्णिमा के दिन सूर्यास्त के समय ईशान कोण की वायु बहती हो, तो उस वर्ष पृथ्वी पर धान्यों की अच्छी उत्पत्ति होती है॥१५॥

॥इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां आषाढीयोगाध्यायः सप्तविंशः॥२६॥

□□□

अथ सप्तविंशोऽध्यायः-२७

वातचक्र विचारः

आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन ऐशानी वायु का फल कथन

आषाढ्यां पौर्णमास्यां तु यद्यैशानोऽनिलो भवेत् ।
अस्तं गच्छति तीक्ष्णांशौ सस्यसम्पत्तिरुत्तमा ।।१।।

माया—आषाढ़ मास के पूर्णिमा तिथि के दिन सूर्यास्त के समय ईशान कोण की वायु बहती हो, तो उस वर्ष पृथ्वी पर धान्यों की अच्छी उत्पत्ति होती है।।१।।

पूर्व दिशा की वायु का फल कथन

पूर्वः पूर्वसमुद्रवीचिशिखरप्रस्फालनाघूर्णित-
श्चन्द्रार्कांशुसटाकलापकलितो वायुर्यदाकाशतः ।
नैकान्तस्थितनीलमेघपटला शारद्यसंवर्धिता
वासन्तोत्कटसस्यमण्डिततला सर्वा मही शोभते ।।२।।

माया—आषाढ़ मास के पूर्णिमा तिथि के दिन पूर्व समुद्र के तरङ्ग के अग्रभाग से चलकर घूमती हुई और सूर्य व चन्द्र के किरणरूपी जटा से शोभित वायु जब आकाश से होकर गुजरती है, उस वर्ष प्रत्येक स्थान पर नीले रंग के मेघों से सम्पन्न, शारद धान्यों की अभिवृद्धि से युक्त तथा वसन्त ऋतु के अत्यन्त उन्नत धान्यों से सम्पन्न पृथ्वी शोभायमान होती है।।२।।

आग्नेय कोण की वायु का फल कथन

यदा वह्नौ वायुर्वहति गगने खण्डिततनुः
प्लवत्यस्मिन् योगे भगवति पतङ्गे प्रवसति ।
तदा नित्योद्दीप्ता ज्वलनशिखरालिङ्गिततला
स्वगात्रोष्मोच्छ्वासैर्वमति वसुधा भस्मनिकरम् ।।३।।

माया—आषाढ़ मास के पूर्णिमा तिथि के दिन सूर्यास्त काल में अव्याहत गति की आग्नेयी वायु के बहने पर वर्ष पर्यन्त हर जगत् अग्नि ज्वाला से आच्छादित पृष्ठ की समुज्ज्वलित पृथ्वी अपने शरीरगत उष्ण समुच्छ्वास से भस्मों को वमन करती है अर्थात् सम्पूर्ण पृथ्वी अवर्षण संकट से ग्रस्त, गर्मी के दुष्प्रभाव से प्रभावित जनगणों की हानि होती है।।३।।

दक्षिण दिशा की वायु का फल कथन

तालीपत्रलतावितानतरुभिः शाखामृगान्नर्तयन्
योगेऽस्मिन् प्लवति ध्वनिः सपरुषो वायुर्यदा दक्षिणः ।
तद्वद्योगसमुत्थितस्तु गजवत्तालाङ्कुशैर्घट्टिताः
कीनाशा इव मन्दवारिकणिका मुञ्चन्ति मेघास्तदा ।।४।।

माया—इस योग में आषाढ़ मास के पूर्णिमा तिथि के दिन सूर्य के अस्त गमन काल में जब दक्षिण दिशा की ओर से चलने वाली, तमाल पत्रों व लताओं की झड़ियों और वृक्षों के साथ बन्दरों को नचाते हुए कठोर शब्द करने वाली वायु बहती है, तो ताल रूपी अंकुश से अनेक बार ताडित हाथी के सदृश मेघ कृपण या कंजूस मनुष्य के समान अल्प वृष्टि करने वाला होता है।।४।।

नैर्ऋत्य दिशा की वायु का फल कथन

सूक्ष्मैलालवलीलवङ्गनिचयान् व्याघूर्णयन् सागरे
भानोरस्तमये प्लवत्यविरतो वायुर्यदा नैर्ऋतः ।
क्षुत्तृष्णावृतमानुषास्थिशकलप्रस्तारभारच्छदा
मत्ता प्रेतवधूरिवोग्रचपला भूमिस्तदा लक्ष्यते ।।५।।

माया—आषाढ़ मास के पूर्णिमा तिथि के दिन सूर्य के अस्ताँचल की ओर प्रस्थान करने के समय नैर्ऋत्य कोण की ओर से आने वाली वायु के समुद्र तट के सन्निकट स्थित छोटी इलायची, लवङ्ग और लौंग के वृक्षों को घुमाते-झुकाते हुए चलने से भूख व प्यास से मरने वाले मनुष्यों की हड्डियों के फैले हुए खण्डों या टुकड़ों के भार से आच्छादित पृथ्वी उन्मत्त प्रेतवधू के समान दीखने लगती है।।५।।

पश्चिम दिशा की वायु का फल कथन

यदा रेणूत्पातैः प्रविचलसटाटोपचपलः
प्रवातः पश्चाच्चेद्दिनकरकरापातसमये ।
तदा सस्योपेता प्रवरनिकराबद्धसमरा
क्षितिः स्थानस्थानेष्वविरतवसामांसरुधिरा ।।६।।

माया—उसी तरह आषाढ़ी पूर्णिमा के सूर्यास्त काल में जब पश्चिम दिशा से चलने वाली, धूलि को उड़ाते हुए केशर के आक्षेप से चञ्चल व प्रचण्ड वायु बहती हो, तो वह उस सम्वत्सर पर्यन्त पृथ्वी को धान्यों से सम्पन्न, प्रधान मनुष्यों अर्थात् अधिकारियों या राजाओं की समर से प्रभावित, स्थान-स्थान पर लगातार वसा, माँस तथा रक्त से आच्छादित करती है।।६।।

वायव्य दिशा की वायु का फल कथन

आषाढीपर्वकाले यदि किरणपतेरस्तकालोपपत्तौ
वायव्यो वृद्धवेगः पवनघनवपुः पन्नगार्द्धानुकारी ।
जानीयाद्वारिधाराप्रमुदितमुदितामुक्तमण्डूककण्ठां
सस्योद्धासैकचिह्नां सुखबहुलतया भाग्यसेनामिवोर्वीम् ।।७।।

माया—उसी तरह आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा के दिन सूर्य के अस्तमित होने के समय जब वायव्य दिशा से चलने वाली, मेघ का शत्रु, अति वेगवान् , सर्पो के समूहों की तरह नकल करने वाली वायु बहती है, तो वर्ष पर्यन्त पृथ्वी को जलधारों से प्रफ्फुलित, अधिक ध्वनिकारक मेढ़कों से सम्पत्र, धान्य बीज की उत्पत्ति रूप लक्षणों से भी सम्पत्र, सुखदायक और भाग्य सेना के समान जानना चाहिए।।७।।

उत्तर दिशा की वायु का फल कथन

मेरुग्रस्तमरीचिमण्डलतले ग्रीष्मावसाने रवौ
वात्यामोदिकदम्बगन्धसुरभिर्वायुर्यदा चोत्तरः ।
विद्युद्भ्रान्तिसमस्तकान्तिकलना मत्तास्तदा तोयदा
उन्मत्ता इव नष्टचन्द्रकिरणां गां पूरयन्त्यम्बुभिः ।।८।।

माया—ग्रीष्मावसान के अवसर पर अर्थात् आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन मेरू पर्वत से ढ़के सूर्य किरणों के होने पर अर्थात् सूर्य के अस्तगमन के समय अत्यन्त सुगन्धित कदम्ब पुष्पों के गंध से सुवासित उत्तर दिशा की ओर से चलने वाली वायु के बहने पर उस वर्ष में आकाशीय विद्युत् चमक से अत्यन्त कान्तिमान् और उन्मत्त होकर मेघ रूप बादलों के आच्छादित होने से नष्ट चन्द्र किरण वाली पृथ्वी जल से उत्प्लावित होती है।।८।।

ईशान कोण की वायु का फल कथन

ऐशानो यदि शीतलोऽमरगणैः संसेव्यमानो भवेत्
पुन्नागागरुपारिजातसुरभिर्वायुः प्रचण्डध्वनिः ।
आपूर्णोदकयौवना वसुमती सम्पन्न सस्याकुला
धर्मिष्ठाः प्रणतारयो नृपतयो रक्षन्ति वर्णास्तदा ।।९।।

माया—आषाढ़ मास की पूर्णिमा तिथि के दिन सूर्यास्त काल में देवगणों से संसेवित, शीतल, कठोर शब्द करने वाले, पुन्नाग, अगरु, और पारिजात फूलों से सुगन्धित ईशान कोण से वायु के चलने पर उस वर्ण जलरूप यौवन से पूर्ण सम्पन्न तथा परिपक्व धान्यों से भरी पृथ्वी तो होती ही है, धर्मात्मा व शत्रुओं को वश करने वाले राजाजन ब्राह्मणादि चातुर्वर्णों की व्यवस्थित रूप में रक्षा करते हैं।।९।।

भद्रपद योग कथन

वृत्तायामाषाढ्यां कृष्णचतुर्थ्यामजैकपादर्क्षे ।
यदि वर्षति पर्जन्यः प्रावृट् शस्ता न चेन्न तदा ।।१०।।

माया—आषाढ़ मास के कृष्णपक्षीय चतुर्थी के दिन पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में मेघ वृष्टि करें, तो उस वर्ष में सुन्दर वृष्टि होती है। यदि उस समय वृष्टि न हो, तो वर्ष पर्यन्त वृष्टि का अभाव रहता है।।१०।।

अन्यत्र भद्रपद योग कथन

नष्टचन्द्रार्ककिरणं नष्टतारं न चेन्नभः ।
न तां भद्रपदां मन्ये यत्र देवो न वर्षति ।।११।।

माया—सूर्य व चन्द्र के किरणों और तारागणों से हीन आकाश के नहीं होने पर उसको भाद्रपद कहना उचित नहीं, क्योंकि उसमें मेघ वृद्धि नहीं करता है।।११।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां वातचक्राध्यायः सप्तविंशः।।२७।।

□□□

अथाष्टाविंशोऽध्यायः-२८

सद्योवर्षण विचारः

वर्षा प्रश्न में चन्द्रस्थितिवश वृष्टि कथन

वर्षाप्रश्ने सलिलनिलयं राशिमाश्रित्य चन्द्रो
लग्नं यातो भवति यदि वा केन्द्रगः शुक्लपक्षे।
सौम्यैर्दृष्टः प्रचुरमुदकं पापदृष्टोऽल्पमम्भः
प्रावृट्काले सृजति न चिराच्चन्द्रवद्भार्गवोऽपि ।।१।।

माया—कृष्णपक्ष में वर्षा सम्बन्धि प्रश्न के समय में जलचर राशि के लग्न में चन्द्र के स्थित होने से अथवा शुक्ल पक्ष में जलचर राशि के चन्द्र का चतुर्थ, सप्तम, दशम आदि केन्द्र भाव में स्थित होने से तथा उपरोक्त दोनों योगों में चन्द्र का शुभग्रह से दृष्ट होने से अति शीघ्र वर्षा होती, लेकिन पापग्रह से दृष्ट होने पर अल्प वर्षा ही सम्भव हो पाती है।।१।।

पृच्छक चेष्टावश वृष्टि कथन

आर्द्रं द्रव्यं स्पृशति यदि वा वारि तत्संज्ञकं वा
तोयासन्नो भवति यदि वा तोयकार्योन्मुखो वा।
प्रष्टा वाच्यः सलिलमचिरादस्ति निःसंशयेन
पृच्छाकाले सलिलमिति वा श्रूयते यत्र शब्दः ।।२।।

माया—वर्षा प्रश्न के समय पृच्छक यदि जल सम्बन्धि वस्तु (ऐसे वस्तु, जिसमें जल हो, भींगा हुआ हो, उससे उत्पन्न हो), जल, जलवाचक वस्तु अर्थात् क्षीर, अब्ज आदि का स्पर्श करता हो या जल के निकट में स्थित हो, जल से सम्बन्धित किन्हीं कार्यों का सम्पादन कर रहा हो अथवा प्रश्न काल में किसी व्यक्ति द्वारा जल शब्द का उच्चारण किया गया हो, तो निश्चय पूर्वक जल्दी वर्षा होती है।।२।।

सूर्य किरणवश वृष्टि कथन

उदयशिखरिसंस्थो दुर्निरीक्ष्योऽतिदीप्त्या
द्रुतकनकनिकाशः स्निग्धवैदूर्यकान्तिः।
तदहनि कुरुतेऽम्भस्तोयकाले विवस्वान्
प्रतपति यदि चोच्चैः खं गतोऽतीव तीक्ष्णम् ।।३।।

माया—वर्षा ऋतु में उदयपर्वत की मुर्ध्नि पर स्थित, अति तीक्ष्ण किरण होने

से कठिन दर्शन वाला, पिघले स्वर्ण सदृश और विमल वैदूर्यसदृश आभा वाला सूर्य जब भी दीखता है, तभी वर्षा करने वाला होता है अथवा जिस दिन मध्याह्नकालिक अत्यन्त तेज किरण वाला सूर्य प्रतीत हो, उस दिन भी निश्चय वृष्टि होती है॥३॥

अन्य वृष्टि योग कथन

विरसमुदकं गोनेत्राभं वियद्विमला दिशो
लवणविकृतिः काकाण्डाभं यदा च भवेन्नभः।
पवनविगमः पोप्लूयन्ते झषाः स्थलगामिनो
रसनमसकृन्मण्डूकानां जलागमहेतवः॥४॥

माया—स्वादहीन जल, गाय के नेत्र सृदश अथवा कोए के अण्ड सदृश आभायुक्त आकाश, स्वच्द दिशायें, नमक में भी आर्द्रता, सर्वथा वायु का अभाव-सा आभासित होना, अधिक उछल-कूद मचाते हुए जल से जमीन पर मछलियों का आना, मेढ़कों का अधिक टर्रटर्राहट आदि सभी शीघ्र वर्षा होने के लक्षण हैं॥४॥

और अन्य वृष्टि योग कथन

मार्जारा भृशमवनिं नखैलिखन्तो
लोहानां मलनिचयः सविस्रगन्धः।
रथ्यायां शिशुरचिताश्च सेतुबन्धाः
सम्प्राप्तं जलमचिरान्निवेदयन्ति॥५॥

माया—बिल्ली द्वारा बारम्बार नाखूनों से जमीन खोदना, लोहों के ढेर से विस्र (विना पके मांस) सदृश गन्ध वाला मल का होना अथवा बच्चों द्वारा बनाया गया बालू का पुल मार्गों में दीखना आदि भी जल्दी वृष्टि होने के लक्षण को दर्शाते हैं॥५॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

गिरयोऽञ्जनचूर्णसन्निभा यदि वा बाष्पनिरुद्धकन्दराः।
कृकवाकुबिलोचनोपमाः परिवेषाः शशिनश्च वृष्टिदाः॥६॥

माया—अंजन चूर्ण के सदृश पर्वत, वाप्प युक्त गुफा, जल में निवास करने वाले मुर्गे के नेत्र की आभा सदृश चन्द्रकिरण का दीखना आदि भी जल्दी वर्षा होने का ज्ञान कराता है॥६॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

विनोपघातेन पिपीलिकानामण्डोपसंक्रान्तिरहिव्यवायः।
द्रुमावरोहश्च भुजङ्गमानां वृष्टेर्निमित्तानि गवां प्लुतं च॥७॥

माया—विना किसी उपघात या कारण के चीटियाँ अपने अण्डे को स्थान्तरित

होती दीखती हो, सर्पों द्वारा मैथुन हो, सर्प पेड़ों पर चढ़ गया हो, गाय भी विना किसी कारण विशेष के उछल-कूद करती हो, तो समझना चाहिए कि शीघ्र वृष्टि होगी॥७॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

तरुशिखरोपगताः कृकलासा गगनतलस्थितदृष्टिनिपाताः ।
यदि च गवां रविवीक्षणमूर्ध्वं निपतति वारि तदा न चिरेण ।।८।।

माया—यदि वृक्ष की चोटियों पर स्थित कृकलास अथवा गिड़गिट आकाश की ओर देखता हो अथवा गायें भी ऊपर की ओर सूर्य को बारम्बार देखने की चेष्टा कर रही हो, तो समझ लेना चाहिए कि जल्द ही वर्षा होने जा रही है।।८।।

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

नेच्छन्ति विनिर्गमं गृहाद्धुन्वन्ति श्रवणान् खुरानपि ।
पशवः पशुवच्च कुक्कुरा यद्यम्भः पततीति निर्दिशेत् ।।९।।

माया—जब पशु अपने घर से बाहर निकलने की इच्छा नहीं रखती हों और वे अपने कान व खुरों को हिलाती हों, तो शीघ्र वर्षा का होना जानना चाहिए। इसी तरह कुक्कुरों द्वारा चेष्टा प्रदर्शित करने पर शीघ्र वर्षा के होने का लक्षण समझना चाहिए॥९॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

यदा स्थिता गृहपटलेषु कुक्कुरा
रुदन्ति वा यदि विततं वियन्मुखाः ।
दिवा तडिद्यदि च पिनाकिदिग्भवा
तदा क्षमा भवति समैव वारिणा ।।१०।।

माया—जिस समय कुत्ता घर के छज्जों पर स्थित होकर आकाश की ओर देखता हुआ भूँकता हो और ईशान कोण में बिजली भी चकती प्रतीत हो, तो उस समय पृथ्वी सर्वत्र जल से समतल दीखती है अर्थात् अधिक वर्षा होती है।।१०॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

शुककपोतविलोचनसन्निभो मधुनिभश्च यदा हिमदीधितिः ।
प्रतिशशी च यदा दिवि राजते पतति वारि तदा न चिरेण च ।।११।।

माया—जब शुक (सुग्गा), कपोत (कबूतर) आदि के नेत्र सदृश अथवा शहद के समान आभा वाला चन्द्रमा प्रतीत हो अथवा प्रति चन्द्र भी आकाश में शोभायमान हो, तो जल्दी ही वर्षा होती है॥११॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

स्तनितं निशि विद्युतो दिवा रुधिरनिभा यदि दण्डवत्स्थिताः ।
पवनः पुरतश्च शीतलो यदि सलिलस्य तदाऽऽगमो भवेत् ।।१२।।

माया—जब भी रात के समय मेघ गर्जन करता हो, दिन के समय रक्त वर्ण के सदृश दण्डाकार बिजली चमकती हो और पूर्व दिशा की ओर से शीतल वायु प्रचलन हो रहा हो, तो शीघ्र वृष्टि का होना, दर्शित करता है॥१२॥

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

वल्लीनां गगनतलोन्मुखाः प्रवालाः
स्नायन्ते यदि जलपांशुभिर्विहङ्गाः।
सेवन्ते यदि च सरीसृपास्तृणाग्रा-
ण्यासन्नो भवति तदा जलस्य पातः ॥१३॥

माया—जब लताओं के अभिनव पत्ते आकाशोन्मुख प्रतीत हों, जल या धूलि के द्वारा पक्षीगण स्नान करने की चेष्टा प्रदर्शित करते हों अथवा सरीसृप वर्ग के जन्तु तृण आदि के प्रान्त भाग में स्थित होने लगता हो, तो समझना चाहिए कि जल्दी ही बारिश होगी॥१३॥

सन्ध्याकाल के मेघ की आभा से वर्षा कथन

मयूरशुकचाषचातकसमानवर्णा यदा
जपाकुसुमपङ्कजद्युतिमुषश्च सन्ध्याघनाः।
जलोर्मिनगनक्रकच्छपवराहमीनोपमाः
प्रभूतपुटसञ्चया न तु चिरेण यच्छन्त्यपः ॥१४॥

माया—जब मयूर, तोता, चाष पक्षी (नीलकंठ), चातक, जपापुष्प अथवा कमल की तरह आभा वाले और जल-भंवर, पर्वत, नक्र, कछुआ, सूअर अथवा मछली आदि के सदृश आकार वाले मेघ दीखने पर भी शीघ्र वर्षा होती है॥१४॥

मेघ की आभा व आकृतिवश वृष्टि योग कथन

पर्यन्तेषु सुधाशशाङ्कधवलां मध्येऽञ्जनालित्विषः
स्निग्धा नैकपुटाः क्षरज्जलकणाः सोपानविच्छेदिनः।
माहेन्द्रीप्रभवाः प्रयान्त्यपरतः प्राग् वाम्बुपाशोद्भवा
ये ते वारिमुचस्त्यजन्ति न चिरादम्भः प्रभूतं भुवि ॥१५॥

माया—चारों ओर से मक्कोल अथवा चन्द्रमा के सदृश शुक्ल और मध्य में काजल अथवा भौंरों की तरह कान्ति वाले, विमल, ऊर्ध्व-स्थित जल कण को छोड़ते हुए और सीढ़ियों के समान स्थित मेघ पूर्व दिशा से पश्चिम अथवा पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर गमन करता प्रतीत हो, तो जानना चाहिए कि शीघ्र ही पृथ्वी पर प्रचुर वृष्टि होगी॥१५॥

इन्द्र धनुष आदि से वृष्टि योग कथन

शक्रचापपरिघप्रतिसूर्या रोहितोऽथ तडितः परिवेषः ।
उद्गमास्तसमये यदि भानोरादिशेत् प्रचुरमम्बु तदाशु ।।१६।।

माया—जब सूर्य के उदय अथवा अस्त काल में इन्द्रधनुष, परिध, प्रतिसूर्य, रोहित अथवा सूर्य व चन्द्र का परिवेश दीखता प्रतीत हो, तो शीघ्र अति वृष्टि होती है।।१६।।

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

यदि तित्तिरपत्रनिभं गगनं मुदिताः प्रवदन्ति च पक्षिगणाः ।
उदयास्तमये सवितुर्द्युनिशं विसृजन्ति घना न चिरेण जलम् ।।१७।।

माया—जब सूर्य के उदय अथवा अस्त काल में तित्तिर के पंख सृदश आकाश दीखता हो और प्रमुदित होकर पक्षी समूह कोलाहल करता हो, तो दिन व रात्रि में क्रम से जल्दी ही अत्यधिक वर्षा होती है अर्थात् उदयकालिक लक्षण से दिन में और अस्त कालिक लक्षण से रात्रि में अधिक वर्षा का योग होता है।।१७।।

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

यद्यमोघकिरणाः सहस्रगोरस्तभूधरकरा इवोच्छ्रिताः ।
भूसमं च रसते यदाम्बुदस्तन्महद्भवति वृष्टिलक्षणम् ।।१८।।

माया—जब अमोघ किरणों वाला हजारों अस्ताचल पर्वत के हाथों के समान समुन्नत सूर्य दीखता हो और मेघ पृथ्वी के समीप गर्जना करने वाला हो, तो भी अति वृष्टि होने का वेग होता है।।१८।।

ग्रहों की स्थिति से वृष्टि योग कथन

प्रावृषि शीतकरो भृगुपुत्रात् सप्तमराशिगतः शुभदृष्टः ।
सूर्यसुतान्नवपञ्चमगो वा सप्तमगश्च जलाऽऽगमनाय ।।१९।।

माया—वर्षा ऋतु के समय शुक्र से सप्तम भाव में स्थित होकर चन्द्र शुभग्रह से दृष्ट हो अथवा शनि से नवम, पञ्चम या सप्तम भाव में होकर चन्द्र शुभ दृष्ट हो, तो यह योग जल के आगमन को सूचित करता है।।१९।।

और भी अन्य वृष्टि योग कथन

प्रायो ग्रहाणामुदयास्तकाले समागमे मण्डलसंक्रमे च ।
पक्षक्षये तीक्ष्णकरायनान्ते वृष्टिर्गतेऽर्के नियमेन चार्द्राम् ।।२०।।

माया—प्रायः किसी भी ग्रह के उदय अथवा अस्त के समय में, चन्द्र के साथ समागम के समय में, मण्डल में प्रवेश के समय में, पक्ष के अन्त समय में, सूर्य के

अयनान्त (कर्क या मकर दक्षिण या उत्तरायण) के समय में अथवा सूर्य के आर्द्रा नक्षत्र में प्रवेश करने के समय मे निश्चय ही वृष्टि होती है।।२०।।

द्विग्रह योग वश वृष्टि योग कथन

समागमे पतति जलं ज्ञशुक्रयोर्ज्ञजीवयोर्गुरुसितयोश्च सङ्गमे ।
यमारयोः पवनहुताशजं भयं ह्यदृष्टयोरसहितयोश्च सद्ग्रहैः ।।२१।।

माया—जब बुध व शुक्र, बुध व गुरु, गुरु व शुक्र तथा शनि व मंगल; इस प्रकार के द्विग्रह युति हो और उसको शुभग्रह कथमपि नहीं देखता हो और न उससे युति करता हो, तो वायु और अग्नि का भय उत्पन्न होता है अर्थात् उस द्विग्रह योग से शुभग्रह की दृष्टि व युति होने पर वृष्टि होती है, जिससे उक्त प्रकार के भय नहीं होते हैं।।२१।।

मन्द व शीघ्र गतिक ग्रहवश वृष्टि योग कथन

अग्रतः पृष्ठतो वापि ग्रहाः सूर्यावलम्बिनः ।
यदा तदा प्रकुर्वन्ति महीमेकार्णवामिव ।।२२।।

माया—जब सूर्य से मन्दगतिक ग्रह अग्रस्थित और शीघ्र गतिक ग्रह पश्चात् स्थित हों, तो पृथ्वी वृष्टि से समुद्र की तरह हो जाती है।।२२।।

खद्योत व सियार से वृष्टि योग कथन

प्रविशति यदि खद्योतो जलदसमीपेषु रजनीषु ।
केदारपूरमधिकं वर्षति देवस्तदा न चिरात् ।।२३।।
वर्षत्यपि रटति यदा गोमायुश्च प्रदोषवेलायाम् ।
सप्ताहं दुर्दिनमपि तदा पयो नात्र सन्देहः ।।२४।।

मांया—जब रात्रि के समय खद्योत (जुगनू) मेघ के निकटवर्त्ति होने लगते हैं, तो जल्दी ही मेघ धान्य के क्षेत्रों को सम्पूर्णतया भरने वाली वृष्टि करता है।

जब प्रदोष काल में वृष्टि हो अथवा शृङ्गाल भूँकते हो, तो अवश्य ही सात दिन पर्यन्त दुर्दिन लाने वाली वृष्टि होतीहै।।२३-२४।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां सद्योवर्षलक्षणाध्याय अष्टाविंशतिः ।।२८।।

□□□

अथैकोनत्रिंशोऽध्यायः-२९

कुसुमलता विचारः

अध्याय का प्रयोजन कथन

फलकुसुमसम्प्रवृद्धिं वनस्पतीनां विलोक्य विज्ञेयम्।
सुलभत्वं द्रव्याणां निष्पत्तिश्चापि सस्यानाम्॥१॥

भाषा—वनस्पतियों (वृक्षों या पेड़ों) में फल व फूलों की अभिवृद्धि का अवलोकन कर पदार्थों की सुलभता और धान्यों की निष्पत्ति का निरूपण करना, जानना चाहिए॥१॥

किस वस्तु से किस वस्तु की वृद्धि ज्ञान कथन

शालेन कलमशाली रक्ताशोकेन रक्तशालिश्च।
पाण्डूकः क्षीरिकया नीलाशोकेन सूकरकः॥२॥

भाषा—शाल वृक्ष के फल व फूलों की अभिवृद्धि से कलमशाली, रक्त अशोक से रक्त शालि, दूधी से पाण्डूक तथा नीलवर्ण के अशोक के फल व फूलों की अभिवृद्धि से सूकरक धान्य विशेष की अभिवृद्धि समझनी चाहिए॥२॥

यव आदि धान्य वृद्धि कथन

न्यग्रोधेन तु यवकस्तिन्दुकवृद्ध्या च षष्टिको भवति।
अश्वत्थेन ज्ञेया निष्पत्तिः सर्वसस्यानाम्॥३॥

भाषा—यव की अभिवृद्धि वट वृक्ष की वृद्धि से, षष्टिक धान्य विशेष की अभिवृद्धि तेन्दुआ की वृद्धि से तथा सभी धान्यों की अभिवृद्धि पीपल की वृद्धि से जाननी चाहिए॥३॥

तिलादि धान्यों की वृद्धि कथन

जम्बूभिस्तिलमाषाः शिरीषवृद्ध्या च कङ्गुनिष्पत्तिः।
गोधूमाश्च मधूकैर्यववृद्धिः सप्तपर्णेन॥४॥

भाषा—तिल, माष की वृद्धि जामुन से, कङ्गु की निष्पति शिरीष से, गेहूँ की महुआ से तथा पुनः यव की वृद्धि सप्तपर्ण वृक्ष पर फल-फूल की वृद्धि से समझनी चाहिए॥४॥

कपास आदि की वृद्धि कथन

अतिमुक्तककुन्दाभ्यां कर्पासं सर्षपान् वदेदशनैः।
बदरीभिश्च कुलत्थांश्चिरबिल्वेनादिशेन्मुद्गान्॥५॥

माया—अति मुक्तक और कुन्द पुष्पों में फल-फूलों की वृद्धि से कपास की अभिवृद्धि, असना से सरसों, बेर से कुलथी तथा सदावेल से मूँग की अभिवृद्धि जाननी चाहिए॥५॥

अलसी (तीसी) आदि की वृद्धि कथन

अतसी वेतसपुष्पैः पलाशकुसुमैश्च कोद्रवा ज्ञेयाः ।
तिलकेन शङ्खमौक्तिकरजतान्यथ चेङ्गुदेन शणाः ॥६॥

माया—वेतस से अलसी, पलाश से कोदों की वृद्धि, तिलक से शङ्ख, मोती व चाँदी की वृद्धि तथा इङ्गुदी वृक्षों पर फल-फूलों से सन की अभिवृद्धि समझनी चाहिए॥६॥

हाथी आदि की वृद्धि कथन

करिणश्च हस्तिकर्णैरादेश्या वाजिनोऽश्वकर्णेन ।
गावश्च पाटलाभिः कदलीभिरजाविकं भवति ॥७॥

माया—हस्ति कर्ण से हाथियों की, अश्वकर्ण से घोड़ों की, पाटला से गायों की वृद्धि और कदली से बकरी व भेड़ों की अभिवृद्धि होती है॥७॥

स्वर्ण आदि की वृद्धि कथन

चम्पककुसुमैः कनकं विद्रुमसम्पच्च बन्धुजीवेन ।
कुरवकवृद्ध्या वज्रं वैदूर्यं नन्दिकावर्त्तैः ॥८॥

माया—चम्पा पुष्प से स्वर्ण की, बन्धुजीव से मूँगा,कुरबक वृद्धि से वज्र, नन्दिकावर्त्त से वैदूर्य मणि की वृद्धि कहनी चाहिए॥८॥

केशर आदि की वृद्धि कथन

विन्द्याच्च सिन्धुवारेण मौक्तिकं कारुकाः कुसुम्भेन ।
रक्तोत्पलेन राजा मन्त्री नीलोत्पलेनोक्तः ॥९॥

माया—सिन्धुवार से मोती, कुसुम्भ से केशर, रक्त कमल से राजाजनों की तथा नीलकमल से सचिवों की वृद्धि विचार करना चाहिए॥९॥

व्यापार आदि की वृद्धि कथन

श्रेष्ठी सुवर्णपुष्पात् पद्मैर्विप्राः पुरोहिताः कुमुदैः ।
सौगन्धिकेन बलपतिरर्केण हिरण्यपरिवृद्धिः ॥१०॥

माया—स्वर्ण पुष्प से व्यापारी, कमल से ब्राह्मण की, कुमुद से पुरोहित की, सुगन्धित वस्तु से सेनापति की तथा आक से सोने की अभिवृद्धि जाननी चाहिए॥१०॥

मनुष्य आदि की कल्याण कथन

आम्रैः क्षेमं भल्लातकैर्भयं पीलुभिस्तथारोग्यम्।
खदिरशमीभ्यां दुर्भिक्षमर्जुनैः शोभना वृष्टिः ॥११॥

माया—आम से मनुष्य का कल्याण, भल्लातक से भय, पीलु से आरोग्य, खैर तथा शमी से दुर्भिक्ष तथा अर्जुन वृक्ष से सुवृष्टि होती है॥११॥

सुभिक्ष आदि परिज्ञान कथन

पिचुमन्दनागकुसुमैः सुभिक्षमथ मारुतः कपित्थेन।
निचुलेनावृष्टिभयं व्याधिभयं भवति कुटजेन ॥१२॥

माया—नीम और नागकुसुम (नागकेसर) की वृद्धि से सुभिक्ष, कपित्थ से वायु, निचुल से अनावृष्टि का भय और कुटज से व्याधि भय का परिज्ञान होता है॥१२॥

ईख आदि की वृद्धि कथन

दूर्वाकुशकुसुमाभ्यामिक्षुर्वह्निश्च कोविदारेण।
श्यामालताभिवृद्ध्या बन्धक्यो वृद्धिमायान्ति ॥१३॥

माया—दूव व कुश के पुष्पों की वृद्धि से गन्ना की, कचनार से आग की और श्यामलता की वृद्धि से वेश्या, व्यभिचारिणी आदि औरत की अभिवृद्धि जाननी चाहिए॥१३॥

पत्रों से वृष्टि ज्ञान कथन

यस्मिन् काले स्निग्धनिश्छिद्रपत्राः
सन्दृश्यन्ते वृक्षगुल्मा लताश्च।
तस्मिन् वृष्टिः शोभना सम्प्रदिष्टा
रूक्षैश्छिद्रैरल्पमम्भः प्रदिष्टम् ॥१४॥

माया—जिस देश में वृक्ष, गुल्म और लताओं के पत्ते चिकने और छिद्र हीन दीखते हैं, उस देश में अच्छी वृष्टि होती है। लेकिन वे पत्ते यदि रूक्ष और छिद्र युक्त हों, तो अल्प वृष्टि होती है॥१४॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां कुसुमलतानामाध्याय एकोनविंशः॥२९॥

□□□

अथ त्रिंशोऽध्यायः-३०

सन्ध्यालक्षण निरूपणम्

सन्ध्या का लक्षण कथन

अर्द्धास्तमितानुदितात् सूर्यादस्पष्टभं नभो यावत्।
तावत् सन्ध्याकालश्चिह्नैरेतैः फलं चास्मिन् ॥१॥

भाषा—सूर्य बिम्ब का आधा भाग अस्त होने के पश्चात् आकाश में नक्षत्र संमूह जब तक स्पष्ट नहीं दीखते हों, तब तक एक सन्ध्याकाल अर्थात् सायं सन्ध्या का समय होता है। इसी प्रकार सूर्यबिम्ब का आधा भाग उदित होने के पूर्व आकाश में नक्षत्र समूह जब तक स्पष्ट दीखते हों, तब तक दूसरी सन्ध्या काल अर्थात् प्रातः सन्ध्या का समय होता है। इन सन्ध्याओं के लक्षणों के आश्रित इनका फल यहाँ कहते हैं॥१॥

सन्ध्याकालिक लक्षणों के विषय वस्तु कथन

मृगशकुनिपवनपरिवेषपरिधिपरिघाभ्रवृक्षसुरचापैः।
गन्धर्वनगररविकरदण्डरजः स्नेहवर्णैश्च ॥२॥

भाषा—वनचर, पशु, पक्षी, वायु, सूर्य व चन्द्र मण्डल के परिवेष, परिधि (प्रतिसूर्य), परिघ, मेघ, वृक्ष, इन्द्रधनुष, गन्धर्वनगर, सूर्यकिरण, दण्ड अर्थात् सूर्य रश्मि, मेघ व वायु का संघात, धूलि आदि के सन्ध्याकालिक स्नेह व वर्णों से शुभाशुभ फल कथन करना चाहिए॥२॥

मृग की चेष्टावश फल कथन

भैरवमुच्चैर्विरुवन् मृगोऽसकृद् ग्रामघातमाचष्टे।
रविदीप्तो दक्षिणतो महास्वनः सैन्यघातकरः ॥३॥

भाषा—निरन्तर ऊँचा और भयावह ध्वनि करने वाला मृग अर्थात् वनैले पशु गाँवों के विनाश का संकेतक है तथा वह सेना के दक्षिण भाग में सूर्यसम्मुख स्थित होकर भयावह ध्वनि करने से उन सेनाओं का नाश करने वाला होता है॥३॥

और मृग चेष्टवश फल कथन

अपसव्ये संग्रामः सव्ये सेनासमागमः शान्ते।
मृगचक्रे पवने वा सन्ध्यायां मिश्रगे वृष्टिः ॥४॥

भाषा—सन्ध्या के समय मृगसमूह अथवा वायु में से किसी के सेनाओं के वामभाग में सूर्यसम्मुख स्थित होने से युद्ध, दक्षिण भाग में मधुर स्वर व सूर्याभिमुख रहित होकर स्थित होने से सेनाओं का समागम तथा सेना के दोनों तरफ स्थित होने से वृष्टिप्रद होते हैं॥४॥

सन्ध्यालक्षण सफल कथन

दीप्तमृगाण्डजविरुता प्राक् सन्ध्या देशनाशमाख्याति ।
दक्षिणदिक्स्थैर्विरुता ग्रहणाय पुरस्य दीप्तास्यैः ।।५।।

माया—सूर्य के सम्मुख होकर स्थित मृगों और पक्षियों की ध्वनि से सम्पन्न प्रातः सन्ध्या देश को विनष्ट करती है तथा दक्षिण दिशा में सूर्याभिमुख स्थित मृगों व पक्षियों की ध्वनि युक्त सन्ध्या शत्रुओं द्वारा नगर को ग्रसित करती है।।५।।

सन्ध्याकालिक वायु लक्षण सफल कथन

गृहतरुतोरणमथने सपांशुलोष्टोत्करेऽनिले प्रबले ।
भैरवरावे रूक्षे खगपातिनि चाशुभा सन्ध्या ।।६।।

माया—गृह (वेश्म), वृक्ष, तोरण अर्थात् नगरद्वार, धूलि और मिट्टी के छोटे-छोटे ढ़ेलों-टुकड़ों को उड़ाती हुई अत्यन्त वेगवती, भयावह और रूक्ष ध्वनियों से आकाश स्थित पक्षियों को गिराती हुई सन्ध्याकालिक वायु अनिष्ट फलदायक होता है।।६।।

और भी सन्ध्यालक्षण सफल कथन

मन्दपवनावघट्टितचलितपलाशद्रुमा विपवना वा ।
मधुरस्वरशान्तविहङ्गमृगरुता पूजिता सन्ध्या ।।७।।

माया—मन्दवायु के प्रवाह से कम्पित अथवा चलायमान पत्तों से युक्त पलाश के वृक्षों, वायु से रहित अथवा मधुर कलरव करने वाली और शान्त अर्थात् सूर्याभिमुख रहित पक्षियों तथा मृगों से सम्पन्न सन्ध्या का समय शुभदायक होता है।।७।।

और भी सन्ध्या लक्षण सफल कथन

सन्ध्याकाले स्निग्धा दण्डतडिन्मत्स्यपरिधिपरिवेषाः ।
सुरपतिचापैरावतरविकिरणाश्चाशु वृष्टिकराः ।।८।।

माया—दण्ड, विद्युत्, मत्स्याकृति मेघ, परिधि, परिवेष, इन्द्रधनुष, ऐरावत, सूर्य किरणों आदि सन्ध्याकाल में विमल-स्वच्छ दीखने पर वर्षा की सम्भावना उत्पन्न होती है।।८।।

सन्ध्याकाल में सूर्य किरण लक्षण सफल कथन

विच्छिन्नविषमविध्वस्तविकृतकुटिलापसव्यपरिवृत्ताः ।
तनुह्रस्वविकलकलुषाश्च विग्रहावृष्टिदाः किरणाः ।।९।।

माया—अनेक खण्डों वाली, विषम (अतुल्य), वर्णहीन, विकृत, कुटिल (वक्री), प्रदक्षिण क्रम से हीन परिवेष्टित, सूक्ष्म, छोटा, शक्तिहीन तथा मलिन सन्ध्याकालिक सूर्य किरणों के होने पर वे जनगणों में विरोध-ईर्ष्या तथा अवर्षण के कारणों को उत्पन्न करने वाली होती है।।९।।

सूर्य किरणों के सविशेष लक्षण व फल कथन

उद्द्योतिनः प्रसन्ना ऋजवो दीर्घाः प्रदक्षिणावर्ताः ।
किरणाः शिवाय जगतो वितमस्के नभसि भानुमतः ।।१०।।

माया—अन्धकार हीन आकाश में दीप्तमान, विमल, स्पष्ट, दीर्घ, दक्षिणावर्त क्रम से परिवेष्टित आदि सूर्य की किरणें जगत् का कल्याण करने वाली होती हैं।।१०।।

अमोघ संज्ञक सूर्यकिरणों के लक्षण सफल कथन

शुक्ला:करा दिनकृतो दिवादिमध्यान्तगामिनः स्निग्धाः ।
अव्युच्छिन्ना ऋजवो वृष्टिकरास्ते त्वमोघाख्याः ।।११।।

माया—सूर्य की श्वेत वर्ण की किरणें सम्पूर्ण आकाश में व्याप्त, स्वच्छ, अखण्डित और स्पष्ट होकर अमोघ संज्ञक होती है, जो शुभ व वृष्टि करने वाली हैं।।११।।

अन्य सूर्य किरणों का सफल कथन

कल्माषबभ्रुकपिला विचित्रमाञ्जिष्ठहरितशबलाभाः ।
त्रिदिवानुबन्धिनोऽवृष्टयेऽल्पभयदास्तु सप्ताहात् ।।१२।।

माया—पीत, गौर व कृष्ण वर्ण मिश्रिता, थोड़ी कपित (पीत) वर्णा, कपित (पीत) वर्णा, रंग-बिरंग वाली, मञ्जिष्ठ के समान हरा वर्ण, शबला अर्थात् कृष्ण-श्वेत मिश्रित कान्ति वाली और सम्पूर्ण आकाश को व्याप्त करने वाली सूर्य की किरणें अपने दीखने के दिन से सात दिन बाद वृष्टि करने वाली तथा अल्प भय भी उत्पन्न करने वाली होती है।।१२।।

ताम्रवर्ण आदि सूर्य किरणों का सफल कथन

ताम्रा बलपतिमृत्युं पीतारुणसन्निभाश्च तद्व्यसनम् ।
हरिताः पशुसस्यबधं धूमसवर्णा गवां नाशम् ।।१३।।
माञ्जिष्ठाभाः शस्त्राग्निसम्भ्रमं बभ्रवः पवनवृष्टिम् ।
भस्मसदृशास्त्ववृष्टिं तनुभावं शबलकल्माषाः ।।१४।।

माया—ताम्र वर्ण की सूर्य की किरणों के होने सेनापति पति की मृत्यु होती है। पीत व लाल वर्ण की आभायुक्त सूर्य किरणें सेनापति को दुःख देती हैं। हरित वर्ण आभा वाली किरणें पशु व धान्य का नाश करती हैं। धूम की आभा वाली किरणें गायों का नाश करने वाली होती हैं।

मञ्जिष्ठ वर्ण आभा वाली सूर्य किरणें शस्त्र और अग्नि सम्बन्धि भय उत्पन्न करती हैं। पीत वर्ण की किरणें वायु के साथ वृष्टि करने वाली होती हैं।

भस्म सदृश आभा वाली सूर्य किरणें अनावृष्टि करने वाली होती हैं। श्वेत, कृष्ण, नील,पीत आदि मिश्रित वर्ण की आभा वाली किरणें अल्प वर्षा करती हैं।।१३-१४।।

सन्ध्याकालिक धूलि लक्षण सफल कथन

बन्धूकपुष्पाञ्जनचूर्णसन्निभं सान्ध्यं रजोऽभ्येति यदा दिवाकरम् ।
लोकस्तदा रोगशतैर्निपीड्यते शुक्लं रजो लोकविवृद्धिशान्तये ।।१५।।

माया—अति लोहित अथवा अति कृष्ण वर्ण की आभा सदृश धूलकण सूर्य के सम्मुख स्थित होने से जनगण अनेकों रोगों से पीड़ित होते हैं तथा श्वेत वर्ण की आभा सदृश धूलकण सूर्य के सम्ुख होने से जनगण की अभिवृद्धि करती है और उनको शान्ति मिलती है।।१५।।

दण्ड लक्षण सफल कथन

रविकिरणजलदमरुतां सङ्घातो दण्डवत्स्थितो दण्डः ।
स विदिक्स्थितो नृपाणामशुभो दिक्षु द्विजादीनाम् ।।१६।।

माया—सूर्य किरण, मेघ और वायु; इन तीनों से बनी दण्डाकृति की दण्ड संज्ञा कही गई है। वह दण्ड चारों कोणों में से किसी कोण में स्थित होने पर राजाजनों का और चारों दिशाओं में से किसी दिशा में स्थित होने पर चतुर्वर्ण के जनों का नाश करने वाला होता है।।१६।।

दण्ड सम्बन्धि विशेष फल कथन

शस्त्रभयातङ्ककरो दृष्टः प्राङ् मध्यसन्धिषु दिनस्य ।
शुक्लाद्यो विप्रादीन् यदभिमुखस्तां निहन्ति दिशम् ।।१७।।

माया—दिन भाग के सूर्योदय, मध्याह्न अथवा सूर्यास्त काल में दण्डाकृति का दर्शन होने से वह शस्त्र का भय और आतंक उत्पन्न करने वाला होता है। शुक्ल वर्ण का दण्ड होने से ब्राह्मणों की, रक्त वर्ण का होने से क्षत्रियों की, पीत वर्ण का होने से वैश्यों की तथा कृष्ण वर्ण का दण्ड दीखने से शूद्रों की हानि होती है। इस प्रकार जिस-किसी भी दिशा के सम्मुख उस दण्ड के स्थित होने से उस दिशा में स्थित देश या स्थान के निवासी जन का नाश होता है। इस दण्ड का मूल भाग सूर्य के समीप और इसका मुख भाग दूसरी ओर होती है।।१७।।

वृक्षाकृति मेघ लक्षण सफल कथन

दधिसदृशाग्रो नीलो भानुच्छादी खमध्यगोऽभ्रतरुः ।
पीतच्छुरिताश्च घना घनमूला भूरिवृष्टिकराः ।।१८।।

माया—दधि सदृश आगे का भाग वाला, अपने नीलवर्ण की आभा वाले भाग से सूर्य को आच्छादित करने वाला, आकाश मध्य में स्थित रहने वाला; पीतवर्ण सी आभा वाला तथा अपने मूलभाग की ओर सघन इस प्रकार के वृक्षाकृति मेघ के दीखने पर अति वर्षा होती है।।१८।।

वृक्षाकृति के मेघ के साथ राजा के गमन का फल कथन

अनुलोमगेऽभ्रवृक्षे शमं गते यायिनो नृपस्य वधः ।
बालतरुप्रतिरूपिणि युवराजामात्ययोर्मृत्युः ॥१९॥

माया—आक्रमण करने पर विजय की आकांक्षा रखने वाले राजा का अनुसरण करता हुआ, कुछ दूर पर वृक्षाकृति मेघ के लुप्त होने से उस राजा की मृत्यु होती है। वृक्षाकृति मेघ का स्वरूप, उस समय बाल वृक्ष की तरह होने पर उस राजा के युवराज और मन्त्री की मृत्यु होती है॥१९॥

पुनः सन्ध्याकाल का लक्षण सफल कथन

कुवलयवैदूर्याम्बुजकिञ्जल्काभा प्रभञ्जनोन्मुक्ता ।
सन्ध्या करोति वृष्टिं रविकिरणोद्भासिता सद्यः ॥२०॥

माया—नील-उत्पल, वैदूर्यमणि, पद्मकेशर की आभा वाली, वायुहीन तथा सूर्य के किरणों से उद्भासित सन्ध्या समय तत्काल वृष्टि करने वाला होता है॥२०॥

पुनः सन्ध्याकाल का लक्षण सफल कथन

अशुभाकृतिघनगन्धर्वनगरनीहारधूमपांशुयुता ।
प्रावृषि करोत्यवग्रहमन्यर्तौ शस्त्रकोपकरी ॥२१॥

माया—अशुभ आकृति वाले मेघ, गन्धर्व नगर, हिम, धूम तथा धूल कण से सम्पन्न सन्ध्या का समय वर्षा ऋतु में होने पर अवर्षण तथा अन्य ऋतुओं में होने पर शस्त्र प्रकोप करने वाला होता है॥२१॥

षड् ऋतुओं के वश सन्ध्या समय का लक्षण सफल कथन

शिशिरादिषु वर्णाः शोणपीतसितचित्रपद्मरुधिरनिभाः ।
प्रकृतिभवाः सन्ध्यायां स्वर्तौ शस्ता विकृतिरन्या ॥२२॥

माया—प्रथम शिशिर ऋतु में लाल, वसन्त ऋतु में पीत, ग्रीष्म ऋतु में श्वेत, वर्षा ऋतु में विविध वर्ण, शरद् ऋतु में कमल सदृश और हेमन्त ऋतु में रक्त सन्ध्या के समय का वर्ण होने पर शुभदायक तथा अन्य वर्ण होने पर अशुभ फल होता है॥२२॥

मेघ की आकृतिवश सन्ध्या का फल कथन

आयुधभृन्नररूपं छिन्नाभ्रं परभयाय रविगामि ।
सितखपुरेऽर्काक्रान्ते पुरलाभो भेदने नाशः ॥२३॥

माया—शस्त्र धारण किये पुरुष के समान मेघ खण्ड सन्ध्या के समय दीखने पर शत्रुओं का भय होता है। सूर्य से आक्रान्त श्वेत वर्ण का गन्धर्वनगर के दीखने पर नगर का लाभ तथा सूर्य से गन्धर्वनगर विद्ध होने पर नगर की हानि होती है॥२३॥

मेघ की स्थिति वश फल कथन

सितसितान्तघनावरणं रवेर्भवति वृष्टिकरं यदि सव्यतः ।
यदि च वीरणगुल्मनिभैर्घनैर्दिवसभर्तुरदीप्तदिगुद्भवैः ॥२४॥

माया—श्वेत और शुभ्र किरणों से युक्त अथवा वीरण सदृश आभा वाले शान्त दिशा में उत्पन्न मेघ के सूर्य के दक्षिण भाग को आच्छादित करने पर वर्षा होती है।।२४।।

परिघवश शुभाशुभ फल कथन

नृपविपत्तिकरः परिघः सितः क्षतजतुल्यवपुर्बलकोपकृत् ।
कनकरूपधरो बलवृद्धिदः सवितुरुद्गमकालसमुत्थितः ।।२५।।

माया—सूर्योदय के समय उत्पन्न परिघ का शुक्ल वर्ण के होने पर राजाओं के लिए विपत्ति दायक होता हैं, रक्त वर्ण के होने पर सेना की हानि तथा स्वर्ण सदृश आभा वाले होने पर सेनाओं की अभिवृद्धि करने वाला होता है।।२५।।

परिधि वश शुभाशुभ फल कथन

उभयपार्श्वगतौ परिघी रवेः प्रचुरतोयकरौ वपुषान्वितौ ।
अथ स मस्तककुप्पयरिचारिणः परिधयोऽस्ति कणोऽपि न वारिणः ।।२६।।

माया—सूर्य के दोनों ओर परिधि (प्रतिसूर्य या द्वितीय सूर्य) दीखने पर अतिवृष्टि होती है। परिधि के सभी दिशाओं को व्याप्त कर स्थित होने पर वर्षा द्वारा जल का एक बूँद भी नहीं गिरता अर्थात् अवर्षण होता है।।२६।।

पुनः परिधिवश शुभाशुभ फल कथन

ध्वजातपत्रपर्वतद्विपाश्वरूपधारिणः ।
जयाय सन्ध्ययोर्घना रणाय रक्तसन्निभाः ।।२७।।
पलालधूमसञ्चयस्थितोपमा बलाहकाः ।
बलान्यरूक्षमूर्त्तयो विवर्धयन्ति भूभृताम् ।।२८।।
विलम्बिनो द्रुमोपमाः खरारुणप्रकाशिनः ।
घनाः शिवाय सन्ध्ययोः पुरोपमाः शुभावहाः ।।२९।।

माया—सन्ध्या के समय ध्वज, छत्र, पर्वत, हाथी अथवा घोड़ा के समान रक्तवर्ण के मेघ दीखने पर युद्ध होता है। पलाल अथवा भूसा के धूम्र के समान स्वच्छ काय का मेघ होने पर राजाजनों के सेनाओं की अभिवृद्धि होती है। लटकते वृक्ष के समान अत्यन्त लोहित वर्ण प्रकाशमान तथा नगर सदृश मेघ के दीखने पर निश्चय ही शुभ होता है।।२७-२९।।

सन्ध्या समय का विशेष लक्षण सफल कथन

दीप्तविहङ्गशिवामृगघुष्टा दण्डरजःपरिघादियुता च ।
प्रत्यहमर्कविकारयुता वा देशनरेशसुभिक्षबधाय ।।३०।।

माया—सन्ध्या के समय सूर्य सम्मुखस्थ पक्षी, शृङ्गाल, मृग आदि की ध्वनियों

से; दण्ड, धूलकण, परिध (इन्द्रधनुष, गन्धर्व नगर, हिम) आदि से अथवा प्रतिदिन विकृत सूर्य से सम्पन्न सन्ध्या के होने पर देश, राजा के साथ सुभिक्ष की भी हानि होती है।।३०।।

उपरोक्त फलों का काल कथन

प्राची तत्क्षणमेव नक्तमपरा सन्ध्या त्र्यहाद्वा फलं
सप्ताहात् परिवेषरेणुपरिघाः कुर्वन्ति सद्यो न चेत्।
तद्वत्सूर्यकरेन्द्रकार्मुकतडित्प्रत्यर्कमेघानिला–
स्तस्मिन्नेव दिनेऽष्टमेऽथ विहगाः सप्ताहपाका मृगाः ।।३१।।

माया—पूर्व सन्ध्या उसी समय अपना फल देती है। उत्तर सन्ध्या (सायं) रात्रि अथवा तीन दिन में; परिवेश, धूलि, परिध, अमोघ सूर्य किरण, इन्द्र धनुष, प्रतिसूर्य, मेघ व वायु तत्क्षण अथवा सात दिन में; पक्षी तत्क्षण अथवा आठ दिन में तथा वनचर पशु (मृग) सात दिन में अपना शुभाशुभ फल प्रदान करते हैं।।३१।।

उपरोक्त में तत्तद् प्रदेशगत फल कथन

एकं दीप्त्या योजनं भाति सन्ध्या विद्युद्भासा षट् प्रकाशीकरोति।
पञ्चाब्दानां गर्जितं याति शब्दो नास्तीयत्ता केचिदुल्कानिपाते ।।३२।।

माया—सन्ध्या स्व-आभा से प्रकाश करती है तथा उतनी ही दूर तक फल देती है। विद्युत छः योजन तक तथा मेघ गर्जन पाँच योजन पर्यन्त प्रकाश करने वाला होता है तथा उतनी ही दूरी तक फल भी देता है। किसी आचार्य के मत से उल्कापात के फल प्रदान के समय की सीमा नहीं है, परन्तु सभी जगह फल प्रदान करने वाला होता है।।३२।।

उपरोक्त में तत्तद् प्रदेश गतगत फल कथन

प्रत्यर्कसंज्ञः परिधिस्तु तस्य त्रियोजनाभः परिघस्य पञ्च।
षट्पञ्चदृश्यं परिवेषचक्रं दशामरेशस्य धनुर्विभाति ।।३३।।

माया—प्रतिसूर्य संज्ञक परिधि तीन योजन तक, परिघ पाँच योजन तक, परिवेष चक्र का षड् या पञ्च योजन पर्यन्त तथा इन्द्र धनुष का दश योजन तक प्रकाश फैलने से उतनी ही दूर तक ये सभी फल भी देते हैं।।३३।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां सन्ध्यालक्षणाध्यायस्त्रिंशः ।।३०।।

□□□

अथैकत्रिंशोऽध्यायः-३१

दिग्दाहलक्षण विचारः

वर्णभेद से दिग्दाह का फल कथन

दाहो दिशां राजभयाय पीतो देशस्य नाशाय हुताशवर्णः ।
यश्चारुणः स्यादपसव्यवायुः सस्यस्य नाशं स करोति दृष्टः ।।१।।

भाषा—दिग्दाह पीतवर्ण का होनेपर राजा के लिए भयप्रद, अग्नि सदृश वर्ण का होने पर देश का नाश तथा लाल वर्ण की वायु अपसव्य दिशा में दीखने पर धान्यों का नाश होता है।।१।।

दिग्दाह लक्षण सफल कथन

योऽतीव दीप्त्या कुरुते प्रकाशं छायामपि व्यञ्जयतेऽर्कवद्यः ।
राज्ञो महद्वेदयते भयं स शस्त्रप्रकोपं क्षतजानुरूपः ।।२।।

भाषा—जो दिग्दाह अतिशय स्वकान्ति से प्रकाशमान होता है तथा सूर्य के समान दृष्टिगत द्रव्य की छाया को भी नष्ट करता है, तो वह राजा के लिए अत्यधिक भयप्रद तथा दिग्दाह के रक्त वर्ण के होने पर शस्त्र का भय उत्पन्न होता है।।२।।

दिशावश दिग्दाह फल कथन

प्राक् क्षत्रियाणां सनरेश्वराणां प्रागदक्षिणे शिल्पिकुमारपीडा ।
याम्ये सहोग्रैः पुरुषैस्तु वैश्या दूताः पुनर्भूप्रमदाश्च कोणे ।।३।।
पश्चात्तु शूद्राः कृषिजीविनश्च चौरास्तुरङ्गैः सह वायुदिक्स्थे ।
पीडां व्रजन्त्युत्तरतश्च विप्राः पाखण्डिनो वाणिजकाश्च शार्व्याम् ।।४।।

भाषा—पूर्व दिशा गत दिग्दाह राजा के साथ सभी क्षत्रियों का नाश करने वाला होता है। आग्नेय कोण गत दिग्दाह शिल्पियों और कुआरों को पीड़ित करता है। दक्षिण दिशागत दिग्दाह क्रूर जनों, वैश्यों, दूतकर्म करने वाले जनों तथा पूनर्भूस्त्री अर्थात् पति के साथ छूटने पर दूसरी शादी करने वाली स्त्री का नाश करने वाला होता है। पश्चिम दिशा गत दिग्दाह शूद्रों और किसानों का नाश करता है। वायव्य कोण गत दिग्दाह घोड़ा और चोरों को भी हानि पहुँचाता है। उत्तर दिशा गत दिग्दाह ब्राह्मणों की हानि करता है। ईशान कोण गत दिग्दाह पाखण्डियों और व्यापारियों को पीड़ा देता है।।३-४।।

दिग्दाह का शुभ फल कथन

नभः प्रसन्नं विमलानि भानि प्रदक्षिणं वाति सदागतिश्च ।
दिशां च दाहः कनकावदातो हिताय लोकस्य सपार्थिवस्य ।।५।।

माया—प्रसन्न आकाश व विमल नक्षत्र, प्रदक्षिण क्रम से भ्रमण करता वायु तथा स्वर्ण के समान दिग्दाह के दीखने पर राजाजनों के साथ-साथ समस्त जनगणों का भी हित करने वाला होता है।।५।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां दिग्दाहलक्षणाध्याय एकत्रिंशः ।।३१।।

□□□

अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः-३२

भूकम्पलक्षणविचारः

भूकम्पनिमित्तक मुनिजनों का मतभेद कथन

क्षितिकम्पमाहुरेके बृहदन्तर्जलनिवासिसत्त्वकृतम् ।
भूभारखिन्नदिग्गजविश्रामसमुद्भवं चान्ये ।।१।।

भाषा—कोई कहते हैं कि जल में निवास करने वाले महान् प्राणियों के बल प्रयोग से भूकम्प होता है। किसी अन्य का मत है कि भूभार से थककर दिग्गजों के विश्राम करने के कारण भूकम्प होता है।।१।।

पुनः भूकम्प निमित्तक मुनिजनों का मतभेद कथन

अनिलोऽनिलेन निहतः क्षितौ पतन् सस्वनं करोत्यन्ये ।
केचित्त्वदृष्टकारितमिदमन्ये प्राहुराचार्याः ।।२।।

भाषा—अन्य एक मुनि का मत है कि वायु से वायु का टकरा कर पृथ्वी पर गिरते हुए शब्द करने से भूकम्प होता है। दूसरों के मत से प्रजाजनों के अदृष्ट (प्रारब्ध आदि) के द्वारा भूकम्प होता है।।२।।

पराशर आदि ऋषियों के मत कथन

गिरिभिः पुरा सपक्षैर्वसुधा प्रपतद्भिरुत्पतद्भिश्च ।
आकम्पिता पितामहमाहामरसदसि सव्रीडम् ।।३।।
भगवन्नाम ममैतत्त्वया कृतं यदचलेति तत्र तथा ।
क्रियतेऽचलैश्चलद्भिः शक्ताहं नास्य खेदस्य ।।४।।
तस्याः सगद्गदगिरं किञ्चित् स्फुरिताधरं विनतमीषत् ।
साश्रुविलोचनमाननमालोक्य पितामहः प्राह ।।५।।
मन्युं हरेन्द्र धात्र्याः क्षिप कुलिशं शैलपक्षभङ्गाय ।
शक्रः कृतमित्युक्त्वा मा भैरिति वसुमतीमाह ।।६।।
किन्त्वनिलदहनसुरपतिवरुणाः सदसत्फलावबोधार्थम् ।
प्राग् द्वित्रिचतुर्भागेषु दिननिशोः कम्पयिष्यन्ति ।।७।।

भाषा—बहुत पहले आकाश से गिरते हुए तथा पृथ्वी से उड़ते हुए पंख युक्त पर्वतों से कम्पित पृथ्वी देवसभा में ब्रह्मा जी से सलज्ज होकर बोली—हे भगवन् ! आपने मेरा नाम अचला रखा है, परन्तु भ्रमणशील पर्वतों से मेरा वह नाम निरर्थक-सा हो चुका

है। अतः मैं इस दुःख को सहन करने के योग्य नहीं हूँ। पृथ्वी के गदगद कण्ठ वाला, फड़कते अधर वाला, नम्र और अश्रुयुत नेत्र वाला मुख देख, ब्रह्मा जी ने कहा—हे इन्द्र ! पृथ्वी के दुःख का शीघ्र शमन करो तथा पर्वतों के पंखों को नष्ट करने हेतु अपेक्षा हो, तो वज्र का भी प्रयोग करो। आदेश स्वीकार कर इन्द्र ने पृथ्वी से कहा, भय मत करो, किन्तु शुभाशुभ फल ज्ञान हेतु वायु, अग्नि, इन्द्र व वरुण दिन रात के क्रम से प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ भाग में तुझे कम्पित करेंगे अर्थात् दिन के पूर्वभाग में वायु, उत्तर भाग में अग्नि, रात्रि के प्रथम भाग में इन्द्र और उत्तर भाग में वरुण तुझको कम्पित कर सकेंगे॥३-७॥

वायव्य मण्डल के लक्षण कथन

चत्वार्यार्यम्णाद्यान्यादित्यं मृगशिरोऽश्वयुक् चेति ।
मण्डलमेतद्वायव्यमस्य रूपाणि सप्ताहात् ॥८॥
धूमाकुलीकृताशे नभसि नभस्वान् रजः क्षिपन् भौमम् ।
विरुजन् द्रुमांश्च विचरति रविरपटुकरावभासी च ॥९॥
वायव्ये भूकम्पे सस्याम्बुवनौषधीक्षयोऽभिहितः ।
श्वयथुश्वासोन्मादज्वरकासभवो वणिक्पीडा ॥१०॥
रूपायुधभृद्वैद्यास्त्रीकविगान्धर्वपण्यशिल्पिजनाः ।
पीड्यन्ते सौराष्ट्रककुरुमगधदशार्णमत्स्याश्च ॥११॥

माया—उत्तरा फाल्गुनी आदि नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती पुनर्वसु, मृगशिरा, अश्विनी आदि सात नक्षत्र वायव्य मण्डल में परिगणित हैं। इन नक्षत्रों में से किसी नक्षत्र में भूकम्प होने पर इससे सात दिन पहले वक्ष्यमाण लक्षण प्रकट होते हैं।

जब वायव्य कम्प होता है, तो इस प्रकार के लक्षण सात दिन पहले उत्पन्न होते हैं—धूम से व्याप्त दिशाओं वाला आकाश होता है। पृथ्वी से धूल कणों को उड़ाती तथा वृक्षों को तोड़ती हुई वायु चलती है और सूर्य की किरणें भी मन्द हो जाती हैं।

वायव्य भूकम्प होने से धान्य, वृष्टि और वन की औषधियों की हानि होती है। व्यापारियों को शोथ, दमा, उन्माद, ज्वर, खाँसी आदि की पीड़ा होती है। वेश्या, शस्त्र से आजीविका पाने वाले, वैद्य (चिकित्सक), स्त्री, कवि, संगीतज्ञ, व्यापारी, शिल्पकार और सौराष्ट्र, कुरु, मगध, दशार्ण, मत्स्य आदि देश के निवासियों को पीड़ित करता है॥८-११॥

आग्नेय मण्डल के लक्षण कथन

पुष्याग्नेयविशाखाभरणीपित्र्याजभाग्यसंज्ञानि ।
वर्गो हौतभुजोऽयं करोति रूपाण्यथैतानि ॥१२॥

तारोल्कापातावृतमादीप्तमिवाम्बरं सदिग्दाहम् ।
विचरति मरुत्सहायः सप्तार्चिः सप्तदिवसान्तः ।।१३।।
आग्नेयेऽम्बुदनाशः सलिलाशयसंक्षयो नृपतिवैरम् ।
दद्रूविचर्चिकाज्वरविसर्पिकाः पाण्डुरोगश्च ।।१४।।
दीप्तौजसः प्रचण्डाः पीड्यन्ते चाश्मकाङ्गबाह्लीकाः ।
तङ्गणकलिङ्गवङ्गद्रविडाः शबरा अनेकविधाः ।।१५।।

भाषा—पुष्य, कृत्तिका, विशाखा, भरणी, मघा, पूर्वाभाद्रपदा, पूर्वाफाल्गुनी आदि सात नक्षत्र आग्नेय मण्डल में परिगणित हैं। इन नक्षत्रों में से किसी नक्षत्र में भूकम्प होने पर इससे सात दिन पहले से इस प्रकार के लक्षण प्रकट होते हैं।

सात दिन के बीच में दिग्दाह के साथ तारा व उल्कापात होने से ढ़का हुआ तथा प्रज्वलित दिशाओं वाला आकाश होता है। वायु के सहयोग से अग्नि विचरण करती है।

आग्नेय भूकम्प के होने से मेघ व जलाशयों का नाश होता है। राजाजन आपस में द्वेष करने लगते हैं और वे दाह, विचर्चिका, ज्वर, विसर्पिका, पाण्डु आदि रोग से पीड़ित भी होते हैं। तेजस्वी, क्रोधीजन, अश्मक, अङ्ग, वाह्लीक, तङ्गण, कलिङ्ग, बङ्ग, द्रविड़, शबर आदि देश के निवासी जनगणों को कई प्रकार से पीड़ा पहुँचाता है।।१२-१५।।

इन्द्र मण्डल के लक्षण कथन

अभिजिच्छ्रवणधनिष्ठाप्राजापत्यैन्द्रवैश्वमैत्राणि ।
सुरपतिमण्डलमेतद्भवन्ति चाप्यस्य रूपाणि ।।१६।।
चलिताचलवर्ष्माणो गम्भीरविराविणस्तडिद्वन्तः ।
गवलालिकुलाहिनिभा विसृजन्ति पयः पयोवाहाः ।।१७।।
ऐन्द्रं स्तुतकुलजातिख्यातावनिपालगणपविध्वंसि ।
अतिसारगलग्रहवदनरोगकृच्छर्दिकोपाय ।।१८।।
काशियुगन्धरपौरवकिरातकीराभिसारहलमद्राः ।
अर्बुदसुराष्ट्रमालवपीडाकरमिष्टवृष्टिकरम् ।।१९।।

भाषा—अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा, अनुराधा आदि सात नक्षत्र इन्द्रमण्डल में गिने जाते हैं। इन नक्षत्रों में से जिस-किसी नक्षत्र में भूकम्प के होने पर इससे सात दिन पहले से वक्ष्यमाण लक्षण प्रकट होते हैं।

पर्वत के सदृश काय वाले, गर्जन करने वाले, बिजली चमकाने वाले, महिषशृङ्ग, भ्रमर कुल और साँप की तरह आभा वाले मेघ द्वारा वृष्टि होती है।

इन्द्र भूकम्प के होने पर प्रधान कुलों में उत्पन्न जन, यशस्वी, राजा, जनगणों में प्रधानजन का नाश करने वाला होता है। अतिसार, कण्ठरोग, मुखरोग, कफरोग आदि

की शिकायत उत्पन्न होती है। काशी, युगन्धर, पौरव, किरात, कीर, अभिसार, हल, भद्र, अर्बुद, सुराष्ट्र, मालव्य आदि देशवासी जनों को पीड़ा पहुँचती है। अपेक्षा के अनुकूल वृष्टि भी सम्भव हो पाता है।।१६-१९।।

वरुण मण्डल के लक्षण कथन

पौष्णाप्यार्द्राश्लेषामूलाहिर्बुध्न्यवरुणदेवानि ।
मण्डलमेतद्वारुणमस्यापि भवन्ति रूपाणि ।।२०।।
नीलोत्पलालिभिन्नाञ्जनत्विषो मधुरराविणो बहुलाः ।
तडिदुद्भासितदेहा धाराङ्कुरवर्षिणो जलदाः ।।२१।।
वारुणमर्णवसरिदाश्रितघ्नमतिवृष्टिदं विगतवैरम् ।
गोनर्दचेदिकुकुरान् किरातवैदेहकान् हन्ति ।।२२।।

माया—रेवती, पूर्वाषाढ़ा, आर्द्रा, श्लेषा, मूल, उत्तराभाद्रपदा, शतभिषा आदि सात नक्षत्र वरुण मण्डल में स्थित माना गया है। इन नक्षत्रों में से जिस-किसी नक्षत्र में भूकम्प के होने से इससे सात दिन पहले से वक्ष्यमाण लक्षण प्रकट होते हैं। नीलकमल अथवा भ्रमर अथवा अंजन के समान कान्ति मान, बहुत-अधिक मधुर ध्वनि करने वाले, विद्युत् के चमक से दृष्ट शरीर वाले तथा जलधारा रूप अंकुरों के समान वर्षा करने वाले मेघ भारी जल वर्षाता है।

वारूण भूकम्प होने से समुद्र व नदी के किनारों में निवास करने वालों का नाश होता है अतिवृष्टि होती है। जनगण आपस में द्वेषहीन व्यवहार करते हैं और गोनर्द, चेदी, कुकुर, किरात वैदेह आदि देश वासी जनों की हानि भी होती है।।२०-२२।।

भूकम्प आदि के फल प्राप्ति काल कथन

षड्भिर्मासैः कम्पो द्वाभ्यां पाकं च याति निर्घातः ।
अन्यानप्युत्पातान् जगुरन्ये मण्डलैरेतैः ।।२३।।

माया—भूकम्प का फल छः मास तथा निर्घात का फल दो मास में होता है। अन्य आचार्यों के मत में अन्यान्य (निर्घात, उल्कापात आदि) उत्पातों का फल मण्डल के फल के समान ही होता है।।२३।।

उल्का आदि उत्पात फल के नियम कथन

उल्का हरिश्चन्द्रपुरं रजश्च निर्घातभूकम्पककुप्प्रदाहाः ।
वातोऽतिचण्डो ग्रहणं रवीन्द्वोर्नक्षत्रतारागणवैकृतानि ।।२४।।
व्यभ्रे वृष्टिर्वैकृतं वातवृष्टिर्धूमोऽनग्निर्विस्फुलिङ्गार्चिषो वा ।
वन्यं सत्त्वं ग्राममध्ये विशेद्वा रात्रावैन्द्रं कार्मुकं दृश्यते वा ।।२५।।

सन्ध्याविकार: परिवेषखण्डा नद्य: प्रतीपा दिवि तूर्यनाद: ।
अन्यच्च यत्स्यात्प्रकृते: प्रतीपं तन्मण्डलैरेव फलं निगाद्यम् ।।२६।।

माया—उल्का, गन्धर्व नगर, धूलकण, निर्घात, भूकम्प, दिग्दाह, प्रचण्ड वायु, सूर्य व चन्द्र का ग्रहण, विकृत नक्षत्र व तारागण, विना बादल की वर्षा, विकृत वायु के साथ वृष्टि, अग्नि की चिनगारीपूर्ण लपट, वनचर पशुओं का ग्रामोन्मुख होना, रात्रि में इन्द्र धनुष दीखना, सन्ध्या विकार युक्त, परिवेष खण्ड, नदियों की विपरीत धारा, आकाश में तुरही जैसी ध्वनि गूँजना और भी प्रकृति विरुद्ध लक्षण प्रकट होना; इन सभी उपद्रवों का फल उसके अपने मण्डल के अनुसार ही कहना चाहिए।।२४-२६।।

कम्पों का निष्फलत्व कथन

हन्त्यैन्द्रो वायव्यं वायुश्चाप्यैन्द्रमेवमन्योऽन्यम् ।
वारुणहौतभुजावपि वेलानक्षत्रजा: कम्पा: ।।२७।।

माया—इन्द्र मण्डल जात कम्प वायव्य कम्प का, वायव्य मण्डल जात कम्प इन्द्र कम्प का, वारुण मण्डल जात कम्प अग्नि कम्प का, अग्नि मण्डल जात कम्प वरुण कम्प का, वेला जात कम्प नक्षत्र कम्प का तथा नक्षत्र जात कम्प वेला कम्प का नाश करने वाला होता है। वायव्य मण्डलाश्रित वायव्य वेला में कम्प होने से अपने फल की पुष्टि करता है। इसी तरह अन्य मण्डल का अन्यान्य फल समझना चाहिए।।२७।।

कम्पोक्त फलों में विशेष कथन

प्रथितनरेश्वरमरणव्यसनान्याग्नेयवायुमण्डलयो: ।
क्षुद्भयमरकावृष्टिभिरुपताप्यन्ते जनाश्चापि ।।२८।।

माया—आग्नेय मण्डल तथा वायव्य वेला में अथवा वायव्य मण्डल और आग्नेय वेला में भूकम्प होने पर प्रसिद्ध राजाओं की मृत्यु या मृत्सु तुल्य कष्ट होता है और जनगण दुर्भिक्ष, मरण तथा अवर्षण की पीड़ा झेलते हैं।।२८।।

पुन: कापोक्त फलों में विशेष फल

वारुणपौरन्दरयो: सुभिक्षशिववृष्टिहार्दयो लोके ।
गावोऽतिभूरिपयसो निवृत्तवैराश्च भूपाला: ।।२९।।

माया—वारुण मण्डल और ऐन्द्र वेला में अथवा ऐन्द्र मण्डल और वारुण वेला में भूकम्प होने से जनगण को सुभिक्ष का सुख मिलता है, उनका कल्याण होता है; वृष्टि होती है और चित्त में शान्ति आती है। गायें अधिक दूध देने वाली होती हैं तथा राजाजन परस्पर विरोधहीन व्यवहार करते हैं।।२९।।

अकथित फल काल का निर्णय कथन

पक्षैश्चतुर्भिरनिलस्त्रिभिरग्निर्देवराट् च सप्ताहात् ।
सद्यः फलति च वरुणो येषु न कालोऽद्भुतेषूक्तः ।।३०।।

माया—अङ्गस्फरण आदि उपद्रवों में से जिनका फल काल व्यक्त नहीं किया गया है, वे वायव्य मण्डल में होने से दो मास में, आग्नेय मण्डल में होने से तीन पक्ष में,इन्द्र मण्डल में होने से सात दिन में तथा वारुण मण्डल में होने पर तत्क्षण फल प्राप्त होता है।।३०।।

मण्डलानुसार भूकम्प प्रदेश कथन

चलयति पवनः शतद्वयं शतमनलो दशयोजनान्वितम् ।
सलिलपतिरशीतिसंयुतं कुलिशधरोऽभ्यधिकं च षष्टितः ।।३१।।

माया—वायु मण्डल में भूकम्प होने से दो सौ योजन, अग्नि मण्डल में भूकम्प होने से दश योजन, वारुण मण्डल में भूकम्प होने से एक सौ अस्सी योजन और ऐन्द्र मण्डल में भूकम्प होने से साठ से अधिक योजन पर्यन्त पृथ्वी कम्पित होती है।।३१।।

भूकम्प पश्चात् थोड़े दिन बाद भूकम्प फल कथन

त्रिचतुर्थसप्तमदिने मासे पक्षे तथा त्रिपक्षे च ।
यदि भवति भूमिकम्पः प्रधाननृपनाशनो भवति।।३२।।

माया—भूकम्प होने के पश्चात् तीसरे, चौथे, सातवें, बीसवें, पन्द्रहवें अथवा पैंतालिसवें दिन में पुनः भूकम्प के होने से प्रमुख राजाजनों की हानि होती है।।३२।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां भूकम्पलक्षणाध्यायो द्वात्रिंशः।।३२।।

□□□

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः-३३

उल्कालक्षण विचारः

उल्का स्वरूप कथन

दिवि भुक्तशुभफलानां पततां रूपाणि यानि तान्युल्काः ।
धिष्ण्योल्काशनिविद्युत्तारा इति पञ्चधा भिन्नाः ।।१।।

भाषा—स्वर्ग में शुभ फलों का भोग करने के पश्चात् मर्त्यलोक कीओर गिरते (लौटते) हुऐ जीवों का स्वरूप 'उल्का' है—धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत्, तारा आदि पाँच उल्का के प्रकार होते हैं।।१।।

फलकाल निर्णय कथन

उल्का पक्षेण फलं तद्वद्धिष्ण्याशनिस्त्रिभिः पक्षैः ।
विद्युदहोभिः षड्भिः तद्वत्तारा विपाचयति ।।२।।

भाषा—उल्का और धिष्ण्या एक-एक पक्ष (१५-१५ दिन) में, अशनि तीन पक्ष अर्थात् पैंतालिस दिन में, विद्युत् छः दिन में और तारा भी छः दिन में अपना फल प्रदान करती हैं।।२।।

फल प्रदान के नियम कथन

तारा फलपादकरी फलार्द्धदात्री प्रकीर्तिता धिष्ण्या ।
तिस्रः सम्पूर्णफला विद्युदथोल्काशनिश्चेति ।।३।।

भाषा—तारा अपने फल का चतुर्थ भाग, धिष्ण्या अपने फल का आधा तथा विद्युत् , उल्का व अशनि; ये तीनों अपना समस्त फल प्रदान करती है।।३।।

अशनि का लक्षण कथन

अशनिः स्वनेन महता नृगजाश्वमृगाश्मवेश्मतरुपशुषु ।
निपतति विदारयन्ती धरातलं चक्रसंस्थाना ।।४।।

भाषा—अशनि चक्र के सदृश घूमती हुई, अत्यधिक ध्वनि के साथ पृथ्वी का भेदन करती हुई मनुष्य, हाथी, घोड़ा, मृग, पत्थर, घर, वृक्ष अथवा पशुओं के ऊपर गिरती है।।४।।

विद्युत् लक्षण कथन

विद्युत् सत्त्वत्रासं जनयन्ती तटतटस्वना सहसा ।
कुटिलविशाला निपतति जीवेन्धनराशिषु ज्वलिता ।।५।।

माया—विद्युत् प्राणियों को भय देने वाली, तट-तट शब्द करने वाली, कुटिला और विस्तीर्णा स्वरूप वाली तथा जीवों और इन्धन के ढेरों पर गिरकर शीघ्र प्रजवलित होने वाली है॥५॥

धिष्ण्या लक्षण कथन

धिष्ण्या कृशाल्पपुच्छा धनूंषि दश दृश्यतेऽन्तराभ्यधिकम्।
ज्वलिताङ्गारनिकाशा द्वौ हस्तौ सा प्रमाणेन ॥६॥

माया—धिष्ण्या दुर्बला और अल्प-सी पूँछ वाली, द्विहस्त प्रमाण की लम्बाई वाली, प्रज्वलित अग्नि के सदृश तथा दश धनुष प्रमाण की दूरी तक स्पष्ट दीखने वाली होती है॥६॥

तारा लक्षण कथन

तारा हस्तं दीर्घा शुक्ला ताम्राब्जतन्तुरूपा वा।
तिर्यगधश्चोर्ध्वं वा याति वियत्युह्यमानेव ॥७॥

माया—तारा एक हस्त प्रमाण की लम्बाई वाली, शुक्ल, ताम्र या कमल तन्तु के सदृश अति सूक्ष्म स्वरूप वाली तथा आकाश में ही आकृष्यमाण, तिरछी, नीची या ऊप्र की ओर जाने वाली होती है॥७॥

उल्का लक्षण कथन

उल्का शिरसि विशाला निपतन्ती वर्धते प्रतनुपुच्छा।
दीर्घा च भवति पुरुषं भेदा बहवो भवन्त्यस्याः ॥८॥

माया—उल्का विस्तीर्ण मूर्ध्नि वाली, सूक्ष्म पूँछ वाली,पुरुष के प्रमाण (साढ़े तीन हाथ) तुल्य लम्बाई वाली तथा गिरी हुई बढ़ती जाती है। इसके अनेक भेद होते हैं॥८॥

उल्का का अन्य प्रकार कथन

प्रेतप्रहरणखरकरभनक्रकपिदंष्ट्रिलाङ्गलमृगाभाः।
गोधाहिधूमरूपाः पापा या चोभयशिरस्का ॥९॥

माया—प्रेत, शस्त्र, गदहा, ऊँट, नाक, बन्दर, दंष्ट्री, हल, मृग, गोह, साँप, धूम सदृश, दो शिरों वाली आदि प्रकार की उल्का होती हैं। ये अशुभ फल करने वाली कही गई हैं॥९॥

पुनः उल्का का अन्य प्रकार कथन

ध्वजझषगिरिकरिकमलेन्दुतुरगसन्तप्तरजतहंसाभाः।
श्रीवृक्षवज्रशङ्खस्वस्तिकरूपाः शिवसुभिक्षाः ॥१०॥

माया—ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, घोड़ा, तपी हुई धूलि चाँदी, हंस, श्रीवृक्ष, वज्र, शंख, स्वस्तिक आदि स्वरूप वाली उल्का जनों का कल्याण और सुभिक्ष करने वाली आकाश में दीख जाया करती है।।१०।।

उल्का का अन्य लक्षण कथन

अम्बरमध्याद् वह्व्यो निपतन्त्यो राजराष्ट्रनाशाय ।
बम्भ्रमती गगनोपरि विभ्रममाख्याति लोकस्य ।।११।।

माया—आकाश के बीचोबीच अनेक प्रकार की गिरती हुई देखी जाती है, जो राजा और राष्ट्र की हानि करने वाली होती है।कुछ उल्का आकाश में अति वेग से भ्रमण करती है, जो जनों की विपत्ति देने वाली होती है।।११।।

उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन

संस्पृशती चन्द्रार्कौ तद्विसृता वा सभूप्रकम्पा च ।
परचक्रागमनृपभयदुर्भिक्षावृष्टिभयजननी ।।१२।।

माया—जब उल्का सूर्य अथवा चन्द्र को स्पर्श करें अथवा सूर्य अथवा चन्द्र से नि:सरित होकर भूकम्प का कारण उत्पन्न करती हुई गिर जाती है, तो वह अन्यदेश में अन्य देश के राजा का आगमन, राजा का भय, दुर्भिक्ष तथा अवर्षण करने वाली होती है।।१२।।

उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन

पौरेतरघ्नमुल्कापसव्यकरणं दिवाकरहिमांश्वोः ।
उल्का शुभदा पुरतो दिवाकरविनि:सृता यातुः ।।१३।।

माया—सूर्य और चन्द्र के प्रदक्षिण क्रम से उल्का के गमन करने पर क्रमशः नगर के अन्दर और बाहर रहने वालों का नाश करती है अर्थात् सूर्य के प्रदक्षिण क्रम से गमन करें, तो नगर के अन्दर रहने वाले जनों की तथा चन्द्र के प्रदक्षिण क्रम से गमन करे, तो नगर के बाहर रहने वालों की हानि करती है। कुछ उल्का सूर्य की किरणों से निकल गमनशील जनों के आगे गिर जाती है, तो वह शुभफलदायक होती है।।१३।।

उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन

शुक्ला रक्ता पीता कृष्णा चोल्का द्विजादिवर्णघ्नी ।
क्रमशश्चैतान् हन्युर्मूर्धोर:पार्श्वपुच्छस्था: ।।१४।।

माया—श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्णा उल्का क्रमशः ब्राह्मण आदि चारों वर्णों का नाश करने वाली होती है। अर्थात् श्वेत उल्का ब्राह्मण की, रक्त उल्का क्षत्रियों की, पीत उल्का वैश्यों की तथा कृष्णा उल्का शूद्रों की हानि करती है। जो उल्का शिर

से स्थित होती हैं, वह ब्राह्मणों की; जो छाती से स्थित होती है, वह क्षत्रियों की; जो किनारों से स्थित होती हैं, वह वैश्यों की तथा जो पूँछ से ठहरती है, वह शूद्रों की हानि करने वाली होती हैं।।१४।।

उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन

उत्तरदिगादिपतिता विप्रादीनामनिष्टदा रूक्षा।
ऋज्वी स्निग्धाखण्डा नीचोपगता च तद्वृद्ध्यै ।।१५।।

माया—उत्तर आदि दिशाओं में गिरने वाली उल्का क्रम से ब्राह्मण आदि चार वर्णों की हानि करने वाली होती है अर्थात् जो उल्का उत्तर दिशा में गिरती है, तो वह ब्राह्मणों की, पूर्व में गिरने पर क्षत्रियों की, दक्षिण में गिरने पर वैश्यों की तथा पश्चिम दिशा में गिरने पर शूद्रों की हानि करने वाली होती है।

जब कोई उल्का सीधी, चिकनी, अखण्डा तथा आकाश के अधोभाग में जाने वाली हो, तो वह ब्राह्मण आदि चार वर्णों के जनों की अभिवृद्धि करने वाली होती है।।१५।।

उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन

श्यावारुणनीलासृग्दहनासितभस्मसन्निभा रूक्षा।
सन्ध्यादिनजा वक्रा दलिता च परागमभयाय ।।१६।।

माया—श्याम, रक्त, नील, रुधिर की तरह, अग्नि की तरह, कृष्ण, भस्म की तरह, रूक्ष, सन्ध्या के समय पैदा हुआ, दिन के समय उत्पन्न, वक्र या खण्डित आदि प्रकार की उल्का नगर निवासियों को शत्रुओं का भय उत्पन्न करने वाली होती है।।१६।।

उल्का का और भी अन्य लक्षण कथन

नक्षत्रग्रहघातैस्तद्भक्तीनां क्षयाय निर्दिष्टा।
उदये घ्नती रवीन्दू पौरेतरमृत्यवेऽस्ते वा ।।१७।।

माया—नक्षत्र अथवा ग्रह का उपघातक उल्का नक्षत्र चक्र में उक्त उस नक्षत्र या ग्रह के नक्षत्रों की हानि करने वाली होती है। सूर्य अथवा चन्द्र का उदय या अस्त के समय में आहत करे, तो क्रम से नगर वासियों और बाह्य निवासियों की हानि करने वाली होती है अर्थात् सूर्य आहत हो, तो अन्दर जनवासियों की, चन्द्र आहत हो, तो बाहर के निवासियों की हानि होती है।।१७।।

उल्का से आहत नक्षत्रों को फल कथन

भाग्यादित्यधनिष्ठामूलेषूल्काहतेषु युवतीनाम्।
विप्रक्षत्रियपीडा पुष्यानिलविष्णुदेवेषु ।।१८।।
ध्रुवसौम्येषु नृपाणामुग्रेषु सदारुणेषु चौराणाम्।
क्षिप्रेषु कलाविदुषां पीडा साधारणे च हते ।।१९।।

माया—पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, धनिष्ठा अथवा मूल नक्षत्र की योग तारा के उल्का से आहत होने पर युवती स्त्रियाँ पीड़ित होती है।

पुष्य, स्वाती या श्रवण नक्षत्र की योग तारा के उल्का से आहत होने पर ब्राह्मण और क्षत्रियों को पीड़ा मिलती है।

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी, मृगशिर, चित्रा, अनुराधा अथवा रेवती नक्षत्र की योग तारा के उल्का से आहत होने पर राजाजन को पीड़ित करती है।

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, मघा, आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा अथवा मूल नक्षत्र की योग तारा के उल्का से आहत होने पर चोरों को पीड़ा मिलती है।

तथा अश्विनी, हस्त, अभिजित्, कृत्तिका अथवा विशाखा नक्षत्र की योगतारा के उल्का से आहत होने पर कलाविदों को पीड़ा होती है।।१८-१९।।

देवता आदि के मूर्त्ति पर उल्कापात का फल कथन

कुर्वन्त्येताः पतिता देवप्रतिमासु राजराष्ट्रभयम् ।
शक्रोपरि नृपतीनां गृहेषु तत्स्वामिनां पीडाम् ।।२०।।
आशाग्रहोपघाते तद्देश्यानां ख़ले कृषिरतानाम् ।
चैत्यतरौ सम्पतिता सत्कृतपीडां करोत्युल्का ।।२१।।
द्वारि पुरस्य पुरक्षयमथेन्द्रकीले जनक्षयोऽभिहितः ।
ब्रह्मायतने विप्रान् विनिहन्याद् गोमिनो गोष्ठे ।।२२।।

माया—देवताओं की मूर्त्ति पर उल्का के गिरने पर राजा और राष्ट्र को भय उत्पन्न होता है। इन्द्र के ऊपर उल्का गिरने पर राजाजनों को भय होता है तथा घर के ऊपर गिरने पर गृहस्वामी पीड़ित होता है। दिशा स्वामी ग्रह के उल्का से आहत होने पर उस दिशा में स्थित देश के निवासी जनों की हानि करने वाली होती है। उल्का के खलिहान में गिरने पर कृषकों को पीड़ा मिलती है। छोटे मन्दिरों के समीपस्थ वृक्ष पर उल्का के गिरने पर सम्मानित जन पीड़ित होते हैं। नगर द्वार के ऊपर उल्का के गिरने पर नगर की, उस द्वार के फाटक पर गिरने पर नगर निवासियों की, ब्रह्माजी के मन्दिर पर उल्का के गिरने पर ब्राह्मणों की तथा गाय के ठहरने के स्थान अथवा गोष्ठ पर उल्का के गिरने पर गो पालकों की हानि होती है।।२०-२२।।

उल्का पात में विशेष कथन

क्ष्वेडास्फोटितवादितगीतोत्क्रुष्टस्वना भवन्ति यदा ।
उल्कानिपातसमये भयाय राष्ट्रस्य सनृपस्य ।।२३।।

माया—क्ष्वेडा (योद्धाओं की गर्जना), आस्फोटन, वाद्य, गान आदि से सम्बन्धित

शब्द की उदघोषणा उल्का पात के समय होने पर राजा और राष्ट्र दोनों को भय उत्पन्न होता है॥२३॥

पुनः उल्का पात में विशेष कथन

यस्याश्चिरं तिष्ठति खेऽनुषङ्गो दण्डाकृतिः सा नृपतेर्भयाय।
या चोह्यते तन्तुधृतेव खस्था या वा महेन्द्रध्वजतुल्यरूपा॥२४॥

माया—आकाश में उल्का के अधिक समय तक दीखना, दण्डाकार उल्का का दीखना, आकाश में रस्सी बँधी स्थिर उल्का के दीखने तथा इन्द्र धनुष के समान उल्का का दीखना आदि उल्का राजा को भय देने वाली होती हैं॥२४॥

और भी उल्का पात में विशेष कथन

श्रेष्ठिनः प्रतीपगा तिर्यगा नृपाङ्गनानाम्।
हन्त्यधोमुखी नृपान् ब्राह्मणानथोर्ध्वगा॥२५॥
बर्हिपुच्छरूपिणी लोकसंक्षयावहा।
सर्पवत् प्रसर्पती योषितामनिष्टदा॥२६॥
हन्ति मण्डला पुरं छत्रवत् पुरोहितम्।
वंशगुल्मवत् स्थिता राष्ट्रदोषकारिणी॥२७॥
व्यालसूकरोपमा विस्फुलिङ्गमालिनी।
खण्डशोऽथवा गता सस्वना च पापदा॥२८॥

माया—पुनः अपने आदि स्थान में लौट जाने वाला उल्का सेठजनों को, तिर्यक्गंमन करने वाली उल्का राजरानियों को, अधोमुखी उल्का राजाजनों को ऊर्ध्व मुखी उल्का ब्राह्मणों को पीड़ित करती है।

मोर पूँछ के समान स्वरूप की उल्का जनगणों को पीड़ित करती है। सर्प के सदृश गमन करने वाली उल्का स्त्रियों को अशुभफलदायिनी होती है।

मण्डल के आकार वाली उल्का नगर की, छत्राकृति वाली पुरोहित की हानि करती है। वंशगुल्म के स्वरूप वाली उल्का राष्ट्र को दोषकारक करने वाली होती है।

सर्प अथवा सूअर के समान चिनगारियों की माला धारण करने वाली, अनेक खण्ड शब्द के साथ दीखने वाली उल्का पापफलदा होती है॥२५-२८॥

उल्कापात में और भी विशेष कथन

सुरपतिचापप्रतिमा राज्यं नभसि विलीना जलदान् हन्ति।
पवनविलोमा कुटिलं याता न भवति शस्ता विनिवृत्ता वा॥२९॥

माया—इन्द्रधनुष सदृश तथा आकाश में दीखने के पश्चात् शीघ्र लुप्त होने

वाली उल्का क्रम से राज्य और मेघों की हानि करने वाली होती है। वायु के प्रतिकूल दिशा में और वक्री होकर चलने वाली तथा दीखने के बाद नीचे की ओर नहीं गमन करने वाली उल्का शुभदायक नहीं होती है॥२९॥

उल्कापात में और भी विशेष कथन

अभिभवति यतः पुरं बलं वा भवति भयं तत एव पार्थिवस्य।
निपतति च यया दिशा प्रदीप्ता जयति रिपूनचिरात्तया प्रयातः ॥३०॥

माया—जिस-किसी दिशा से चलकर उल्का नगर अथवा सेना पर गिरती है, तो उसी दिशा से राजा को भय उत्पन्न होता है। इस तरह जिस-किसी दिशा को प्रकाशमान करती गिरती है, उस दिशा में गमन करने वाला राजा अपने शत्रुओं को परास्त करता है॥३०॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामुल्कालक्षणाध्यायस्त्रयस्त्रिंशः॥३३॥

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः-३४

परिवेशलक्षण विचारः

परिवेष स्वरूप कथन

सम्मूर्च्छिता रवीन्द्वोः किरणाः पवनेन मण्डलीभूताः ।
नानावर्णाकृतयस्तन्वभ्रे व्योम्नि परिवेषाः ।।१।।

माया—सूर्य और चन्द्र की किरणें वायुवश मण्डलीभूत स्वरूप धारण कर अल्प मेघ वाले आकाश में प्रतिफलित होकर विविध वर्ण वाले दीखते हैं, उसे ही परिवेष कहा जाता है।।१।।

परिवेष के वर्ण और स्वामी कथन

ते रक्तनीलपाण्डुरकापोताभ्राभशबलहरितशुक्लाः ।
इन्द्रयमवरुणनिर्ऋतिश्वसनेशपितामहाम्बुकृताः ।।२।।

माया—रक्त, नील, अल्पश्वेत, कापोत वर्ण, मेघ वर्ण, शबल अर्थात् श्वेत-कृष्ण वर्ण, हरा वर्ण और श्वेत वर्ण के परिवेष क्रम से इन्द्र, यम, वरुण, निर्ऋति, वायु, शिव, ब्रह्मा और अग्नि कृत होने से इन आठ प्रकार के परिवेषों के इन्द्रादि देव क्रमश स्वामी कहलाते हैं। अर्थात् रक्त परिवेष इन्द्रकृत, नीलवर्ण परिवेष यमकृत, अल्पश्वेत परिवेष वरुणकृत, कापोत वर्ण परिवेष निर्ऋति कृत, मेघवर्ण परिवेष वायु कृत, शबल वर्ण परिवेष शिवकृत, हरावर्ण परिवेष ब्रह्मा कृत तथा श्वेत वर्ण परिवेष अग्निकृत कहे गए हैं।।२।।

कुबेर कृत परिवेष कथन

धनदः करोति मेचकमन्योन्यगुणाश्रयेण चाप्यन्ये ।
प्रविलीयते मुहुर्मुहुरल्पफलः सोऽपि वायुकृतः ।।३।।

माया—धनदाता कुबेर मेचक वर्ण अर्थात् मयूर के कण्ठ के समान नीलवर्ण के परिवेष का स्वामी अथवा अधिपति होता है। तथा पूर्वोक्त इन्द्रादि कृत मिश्रित वर्ण के परिवेष होते हैं। इन परिवेषों में से जो बारम्बार उत्पन्न होकर नष्ट होता है, वह वायुकृत अल्पफलद होता है।।३।।

परिवेश का शुभाशुभ कथन

चाषशिखिरजततैलक्षीरजलाभः स्वकालसम्भूतः ।
अविकलवृत्तः स्निग्धः परिवेषः शिवसुभिक्षकरः ।।४।।

माया—चाष अर्थात् नीलकण्ठ पक्षी, मयूर, चाँदी, तैल, दूध तथा जल के सदृश आभा सम्पन्न परिवेश अपने-अपने काल अर्थात् शिशिरादि ऋतुओं में दृष्ट होने पर अर्थात् शिशिर ऋतु में नीलकण्ठ पक्षी के सदृश आभा युक्त होकर शुभ कारक परिवेश होता है। इसी प्रकार वसन्तु ऋतु में मयूर की तरह विचित्र वर्ण की आभा युक्त, ग्रीष्म ऋतु

में चाँदी के समान श्वेत वर्ण की आभा युक्त, वर्षा ऋतु में तैलीय आभा युक्त, शरद् ऋतु में दूध के समान समुज्ज्वल आभा युक्त तथा हेमन्त ऋतु में जल सदृश आभा युक्त अखण्ड व विमल परिवेश के होने पर जनगणों का कल्याण और सुभिक्ष होता है।।४।।

परिवेश का अशुभ फल कथन

सकलगगनानुचारी नैकाभ: क्षतजसन्निभो रूक्ष: ।
असकलशकटशरासनशृङ्गाटकवत् स्थित: पाप: ।।५।।

भाषा—समग्र आकाश में विचरण करने वाला अर्थात् सूर्योदय से अस्त पर्यन्त स्थिर रहने वाला, अनेक वर्णों से युक्त आभा वाला, रक्त वर्ण वाला, रूक्ष, खण्डित और गाड़ी, धनु अथवा त्रिभुज सदृश आकृति वाला परिवेष अशुभ फलदायक होता है।।५।।

परिवेष वर्णवश शुभाशुभ फल कथन

शिखिगलसमेऽतिवर्षं बहुवर्णे नृपवधो भयं धूम्रे ।
हरिचापनिभे युद्धान्यशोककुसुमप्रभे चापि ।।६।।

भाषा—मयूर कण्ठ सदृश आभा वाला परिवेष अत्यधिक वृष्टि करने वाला; अनेक वर्ण की आभा वाला परिवेष राजा का वध करने वाला; धूम्र वर्ण की आभा वाला परिवेष भय उत्पन्न करने वाला; इन्द्र धनुष की आभा सदृश तथा अशोक पुष्प के सदृश अति रक्त आभा वाला परिवेष युद्ध कराने वाला होता है।।६।।

परिवेष की स्थितिवश वृष्टि कथन

वर्णेनैकेन यदा बहुल: स्निग्ध: क्षुराभ्रकाकीर्ण: ।
स्वर्त्तौ सद्यो वर्षं करोति पीतश्च दीप्तार्क: ।।७।।

भाषा—एक वर्ण, अति विमल, क्षुरा कृति के सदृश और मेघों से युक्त परिवेष से अपनी ऋतु में तत्काल वृष्टि होती है तथा पीले वर्ण के परिवेष के समय सूर्य किरणों की तीक्ष्णता से भी सद्यो वृष्टि होती है।।७।।

भयप्रद परिवेश लक्षण कथन

दीप्तमृगविहङ्गरुत: कलुष: सन्ध्यात्रयोत्थितोऽतिमहान् ।
भयकृत् तडिदुल्काद्यैर्हतो नृपं हन्ति शस्त्रेण ।।८।।

भाषा—सूर्याभिमुख मृग व पक्षी गणों के शब्द से सम्पन्न; रूखा; प्रात:, मध्याह्न व सायं तीनों प्रकार के सन्ध्या के समय दृष्ट और अत्यन्त विस्तृत परिवेष भय उत्पन्न करने वाला होता है।।८।।

प्रतिदिनमर्कहिमांश्वोरहर्निशं रक्तयोनरेन्द्रवध: ।
परिविष्टयोरभीक्ष्णं लग्नास्तमयस्थयोस्तद्वत् ।।९।।

भाषा—प्रत्येक दिन, दिन के समय सूर्य का तथा रात्रि के समय चन्द्र का रक्तवर्ण का परिवेश दीखने पर राजा का मरण होता है। एवं उदय अथवा अस्त के समय

सूर्य अथवा चन्द्र के परिवेश को पुनः पुनः दीखने पर भी उपरोक्त सदृश फल होता है अर्थात् राजा का मरण होता है॥९॥

सेनापति आदि को भयप्रद परिवेश कथन

सेनापतेर्भयकरो द्विमण्डलो नातिशस्त्रकोपकरः ।
त्रिप्रभृति शस्त्रकोपं युवराजभयं नगररोधम् ॥१०॥

माया—दो मण्डलों वाला परिवेष सेनापति को भय देने वाला तो होता है, परन्तु अधिक शस्त्र सम्बन्धि भय नहीं होता। तीन आदि अर्थात् तीन, चार, पाँच आदि मण्डलों वाला परिवेष शस्त्र का भय करने वाला, युवराज को भय देने वाला तथा शत्रु सेना से नगर को अवरोध युक्त करने वाला होता है॥१०॥

वृष्टियोग प्रद परिवेष कथन

वृष्टिस्त्र्यहेण मासेन विग्रहो वा ग्रहेन्दुभनिरोधे ।
होराजन्माधिपयोर्जन्मर्क्षे वांऽशुभो राज्ञः ॥११॥

माया—चन्द्र परिवेष के मध्यगत मंगल आदि ग्रह और किसी नक्षत्र के होने पर तीन दिन में वृष्टि और एक मास में युद्ध होता है। एवं जिस किसी राजा का जन्म लग्नेश, जन्मराशीश या जन्म नक्षत्र परिवेष के अन्तर्गत हो, उस राजा को अशुभ फल की प्राप्ति होती है॥११॥

परिवेषगत ग्रहों का फल कथन

परिवेषमण्डलगतो रवितनयः क्षुद्रधान्यनाशकरः ।
जनयति च वातवृष्टिं स्थावरकृषिकृन्निहन्ता च ॥१२॥
भौमे कुमारबलपतिसैन्यानां विद्रवोऽग्निशस्त्रभयम् ।
जीवे परिवेषगते पुरोहितामात्यनृपपीडा ॥१३॥
मन्त्रिस्थावरलेखकपरिवृद्धिश्चन्द्रजे सुवृष्टिश्च ।
शुक्रे यायिक्षत्रियराज्ञीपीडा प्रियं चान्नम् ॥१४॥
क्षुदनलमृत्युनराधिपशस्त्रेभ्यो जायते भयं केतौ ।
परिविष्टे गर्भभयं राहौ व्याधिर्नृपभयं च ॥१५॥

माया—परिवेष मण्डल के अन्तर्गत शनि के होने पर क्षुद्र धान्यों की हानि होती है। वायु के साथ वृष्टि भी होती है। स्थावर अर्थात् वृक्ष आदि वनस्पतियों की हानि तथा कृषकों को पीड़ा होती है।

परिवेष मण्डल में मंगल के होने पर कुमार, सेनापति, सैनिकों आदि को व्याकुलता, अग्निभय तथा शस्त्रभय होता है।

परिवेष मण्डल के अन्तर्गत बृहस्पति के होने पर पुरोहित, मन्त्री व राजाओं को पीड़ा होती है।

बुध के परिवेष मण्डल के अन्तर्गत होने पर मन्त्री, स्थावर अर्थात् वनस्पतियों तथा लेखकों की उन्नति और सुवृष्टि होती है।

परिवेष मण्डल के अन्तर्गत शुक्र के होने पर गमनशील क्षत्रियों, रानियों आदि को पीड़ा और दुर्भिक्ष होता है।

परिवेष मण्डल में केतु के होने पर दुर्भिक्ष, अग्नि, राजा, शस्त्र आदि का लाभ होता है।

एवं परिवेष मण्डल में राहु के होने पर गर्भ का भय, व्याधि, राजा का भय आदि होता है॥१२-१५॥

परिवेष स्थित द्विग्रह और योग फल कथन

युद्धानि विजानीयात् परिवेषाभ्यन्तरे द्वयोर्ग्रहयोः।
दिवसकृतः शशिनो वा क्षुदवृष्टिभयं त्रिषु प्रोक्तम्॥१६॥
याति चतुर्षु नरेन्द्रः सामात्यपुरोहितो वशं मृत्योः।
प्रलयमिव विद्धि जगतः पञ्चादिषु मण्डलस्थेषु॥१७॥

माया—सूर्य अथवा चन्द्र के परिवेष के अन्तर्गत दो भौम आदि ग्रहों के स्थित होने पर युद्ध; तीन भौम आदि ग्रह के स्थित होने पर दुर्भिक्ष व अनावृष्टि का भय; भौमादि चार ग्रहों के स्थित होने पर मन्त्री और पुरोहित सहित राजा का मरण होता है। इसी तरह सूर्य या चन्द्र के परिवेष के अन्तर्गत पाँच ग्रहों के स्थित होने पर जगत् में प्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है॥१६-१७॥

ग्रह व नक्षत्र का भिन्न परिवेषस्थ फल कथन

ताराग्रहस्य कुर्यात् पृथगेव समुत्थितो नरेन्द्रवधम्।
नक्षत्राणामथवा यदि केतोर्नोदयो भवति॥१८॥

माया—केतु अनुदित हो तथा भौमादि ग्रह अथवा नक्षत्र के भिन्न-भिन्न परिवेष में स्थित होने पर राजा को पीड़ा होती है॥१८॥

तिथिवश परिवेश फल कथन

विप्रक्षत्रियविट्शूद्रहा भवेत् प्रतिपदादिषु क्रमशः।
श्रेणीपुरकोशानां पञ्चम्यादिष्वशुभकारी॥१९॥
युवराजस्याष्टम्यां परतस्त्रिषु पार्थिवस्य दोषकरः।
पुररोधो द्वादश्यां सैन्यक्षोभस्त्रयोदश्याम्॥२०॥
नरपतिपत्नीपीडां परिवेषोऽभ्युत्थितश्चतुर्दश्याम्।
कुर्यात् तु पञ्चदश्यां पीडां मनुजाधिपस्यैव॥२१॥

माया—ब्राह्मण आदि चार वर्णों का तब नाश होता है, जब प्रतिपदा आदि चार तिथियों में परिवेष दृष्ट होता है, अर्थात् प्रतिपदा में परिवेष के दीखने पर ब्राह्मणों का, द्वितीया में दीखने पर क्षत्रियों का, तृतीया में दीखने पर वैश्यों का तथा चतुर्थी तिथि में परिवेश के दीखने पर शूद्रों का नाश होता है। इसी तरह पञ्चमी तिथि में परिवेश दीखने पर अपनी-अपनी जातियों का, षष्ठी तिथि में परिवेष दीखने पर नगर का तथा सप्तमी तिथि में परिवेष के दीखने से कोश का भी अशुभ होता है। अष्टमी में परिवेष के दीखने पर युवराज का और नवमी, दशमी और एकादशी तिथि में परिवेष के दीखने पर राजा का अशुभ होता है। द्वादशी तिथि में परिवेष के दीखने पर नगर का अवरोध होता है। त्रयोदशी में परिवेष के दीखने पर सैनिकों में व्याकुलता होती है। चतुर्दशी तिथि में परिवेष दीखने पर रानी को पीड़ा होती है तथा पूर्णिमा तिथि में परिवेष दीखने पर राजा को भी पीड़ा कहनी चाहिए॥१९-२१॥

परिवेषगत रेखा आदि वश शुभाशुभ फल कथन

नागरकाणामभ्यन्तरस्थिता यायिनां च बाह्यस्था।
परिवेषमध्यरेखा विज्ञेयाक्रन्दसाराणाम्॥२२॥
रक्तः श्यामो रूक्षश्च भवति येषां पराजयस्तेषाम्।
स्निग्धः श्वेतो द्युतिमान् येषां भागो जयस्तेषाम्॥२३॥

माया—परिवेष के अन्तर्गत रेखा के दीखने पर नगरवासी जनों का, उसके बाहरी भाग में दीखने पर आक्रामक विजयेच्छु राजा का तथा उसके मध्य में रेखा दीखने पर आक्रन्द अर्थात् सेनाओं का अशुभ करने वाली होती है।

उपरोक्त नागरिक आदि के भाग में लाल, काला अथवा रूक्ष वर्ण के परिवेष होने पर उन नागरिक आदि की पराजय होती है। अर्थात् परिवेष के अन्दर लाल, काला, रूक्ष आदि वर्ण होने पर नागरिकों की, उसके बाहर होने पर आक्रमण पर जाने वाले विजयाकांक्षी राजाओं की तथा परिवेष के मध्य में लाल, काला, रूक्ष आदि वर्ण होने पर सेनाओं की पराजय समझनी चाहिए। इसी तरह नागरिक आदि के परिवेष का भाग विमल, शुक्ल और आभा सम्पन्न होने पर क्रम से उन सबकी विजय होती है॥२२-२३॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां परिवेषलक्षणाध्यायश्चतुस्त्रिंशः॥३४॥

अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः-३५

इन्द्रायुधलक्षण विचारः

इन्द्रधनुष की उत्पत्ति कथन

सूर्यस्य विविधवर्णाः पवनेन विघट्टिताः कराः साभ्रे।
वियति धनुःसंस्थाना ये दृश्यन्ते तदिन्द्रधनुः ॥१॥

भाषा—मेघ सम्पन्न आकाश में वायु से रुद्ध सूर्य किरणें विविध प्रकार के वर्ण वाला धनुष की आकृति-सा दीखने वाला होता है, जिसे 'इन्द्रधनुष' कहा जाता है॥१॥

अन्य मत के साथ शुभाशुभ फल कथन

केचिदनन्तकुलोरगनिःश्वासोद्भूतमाहुराचार्याः।
तद्यायिनां नृपाणामभिमुखमजयावहं भवति ॥२॥

भाषा—कोई-कोई कहते हैं कि अनन्त अर्थात् नागराज कुल में उत्पन्न नागों के निःश्वास भूत उत्पन्न यह इन्द्रधनुष है, जिसके गमन करने के इच्छा वाले राजाजन सम्मुख स्थिति में यात्रा का त्याग करें, अन्यथा उनकी पराजय होती है॥२॥

शुभफलद इन्द्रधनुष कथन

अच्छिन्नमवनिगाढं द्युतिमत् स्निग्धं घनं विविधवर्णम्।
द्विरुदितमनुलोमं च प्रशस्तमम्भः प्रयच्छति च ॥३॥

भाषा—अखण्ड, पृथ्वी से लगा हुआ, समुज्ज्वल, स्निग्ध अर्थात् सुकान्ति सम्पन्न, अविकल, नाना वर्ण युक्त, दो बार उदित होने वाला या पश्चिम दिशा में स्थित इन्द्रधनुष जनों को शुभफल और अति वृष्टि करने वाला होता है॥३॥

विदिक् स्थित इन्द्रधनुष का फल कथन

विदिगुद्भूतं दिक्स्वामिनाशनं व्यभ्रजं मकरकारि।
पाटलपीतकनीलैः शस्त्राग्निक्षुत्कृता दोषाः ॥४॥

भाषा—विदिक् अर्थात् ईशान कोण, आग्नेय कोण, नैर्ऋत्य कोण और वायव्य कोण में इन्द्रधनुष के दीखने पर उस-उस कोणीय दिशा के स्वामियों की हानि होती है। इन दिक् स्वामियों के प्रसङ्ग में इसी ग्रन्थ के ८६वें अध्याय के ३४वें श्लोक को देखना चाहिए। आकाश में बादल के जाने के बाद भी दीखने वाले इन्द्रधनुष महामारी फैलने का संकेत देती है। अल्प लाल, पीला, नीला आदि वर्ण का इन्द्रधनुष के दीखने पर क्रम से शस्त्र प्रकोप, अग्नि प्रकोप, दुर्भिक्ष आदि होता है अर्थात् अल्प लाल दीखने पर शस्त्र प्रकोप, पीला दीखने पर अग्नि प्रकोप तथा नीला दीखने पर दुर्भिक्ष होता है॥४॥

जल आदि मे दीखने वाले इन्द्रधनुष का फल कथन

जलमध्येऽनावृष्टिर्भुवि सस्यवधस्तरौ स्थिते व्याधिः ।
वाल्मीके शस्त्रभयं निशि सचिववधाय धनुरैन्द्रम् ।।५।।

माया—जल मध्य में इन्द्रधनुष के दीखने पर अनावृष्टि, पृथ्वी पर दीखने से धान्यों की हानि, वृक्ष पर दीखने से व्याधि, वल्मीक पर दीखने से शस्त्र भय तथा रात में दीखने से मन्त्री की मृत्यु होती है।।५।।

दिशावश इन्द्रधनुष का फल कथन

वृष्टिं करोत्यवृष्ट्यां वृष्टिं वृष्ट्यां निवारयत्यैन्द्र्याम् ।
पश्चात् सदैव वृष्टिं कुलिशभृतश्चापमाचष्टे ।।६।।

माया—अवर्षण काल में पूर्वदिशा में इन्द्रधनुष दीखने पर वृष्टि तथा वृष्टि होने के काल में दीखने पर अवृष्टि होती है एवं पश्चिम दिशा में स्थित इन्द्रधनुष हमेशा वृष्टि करने वाला होता है।।६।।

पुनः दिशावश इन्द्रधनुष का फल कथन

चापं मघोनः कुरुते निशायामाखण्डलायां दिशि भूपपीडाम् ।
याम्यापरोदक्प्रभवं निहन्यात् सेनापतिं नायकमन्त्रिणौ च ।।७।।

माया—रात्रिकाल में पूर्वदिशा में इन्द्रधनुष दीखने पर राजा को पीड़ा होती है। दक्षिण दिशा में दीखने पर सेनापति, पश्चिम दिशा में प्रधान पुरुषों तथा उत्तर दिशा में इन्द्रधनुष दीखने पर मन्त्री की हानि होती है।।७।।

ब्राह्मणादि का इन्द्रधनुष से अशुभफल कथन

निशि सुरचापं सितवर्णाद्यं जनयति पीडां द्विजपूर्वाणाम् ।
भवति च यस्यां दिशि तद्देश्यं नरपतिमुख्यं नचिराद्धन्यात् ।।८।।

माया—रात के समय में श्वेत आदि अर्थात् श्वेत, रक्त, पीत, कृष्ण आदि वर्ण का इन्द्रधनुष दीखने पर ब्राह्मण आदि अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि वर्णों की हानि करने वाला होता है अर्थात् रात में श्वेत वर्ण का इन्द्रधनुष के दीखने पर ब्राह्मणों की, रक्तवर्ण के दीखने पर क्षत्रियों की, पीतवर्ण का दीखने पर वैश्यों की तथा कृष्णवर्ण का इन्द्रधनुष दीखने पर शूद्रों की हानि होती है। एवं इन्द्रधनुष जिस भी दिशा में दीखता है, उस दिशा के प्रमुख राजा का जल्दी ही हानि होती है।।८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामिन्द्रायुधलक्षणाध्यायः पञ्चत्रिंशः।।३६।।

□□□

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः-३६

गन्धर्वनगरलक्षण विचारः

दिशावश गन्धर्वनगर का फल कथन

उदगादिपुरोहितनृपबलपतियुवराजदोषदं खपुरम् ।
सितरक्तपीतकृष्णं विप्रादीनामभावाय ।।१।।

माया—गन्धर्व नगर उत्तर आदि अर्थात् उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशाओं में दीखने पर क्रम से पुरोहित, राजा, सेनापति और युवराज को पीड़ित करता है। अर्थात् उत्तर दिशा में गन्धर्व नगर के दीखने पर पुरोहित को, पूर्व दिशा में दीखने पर राजा को, दक्षिण दिशा में दीखने पर सेनापति को तथा पश्चिम दिशा में दीखने पर युवराज को पीड़ित करता है। एवं श्वेत आदि श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण का गन्धर्व नगर दीखने पर क्रम से ब्राह्मणादि अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णों की हानि करने वाला होता है अर्थात् श्वेत वर्ण का गन्धर्व नगर दीखने पर ब्राह्मणों की, रक्तवर्ण के दीखने पर क्षत्रियों की, पीत वर्ण का दीखने पर वैश्यों की तथा कृष्ण वर्ण का गन्धर्व नगर दीखने पर शूद्रों की हानि करने वाला होता है।।१।।

उत्तर दिशा व विदिक्वश गन्धर्वनगर का फल कथन

नागरनृपतिजयावहमुदग्विदिक्स्थं विवर्णनाशाय ।
शान्ताशायां दृष्टं सतोरणं नृपतिविजयाय ।।२।।

माया—उत्तर दिशा में स्थित गन्धर्व नगर के होने पर वह राजा को विजय दिलाता है। एवं विदिक् (ईशान, आग्नेय, नैर्ऋत्य और वायव्य कोण) में स्थित गन्धर्व नगर के होने से वर्ण संकरों के लिए हानिप्रद होता है तथा शान्त दिशा में ताराओं के साथ गन्धर्व नगर के दीखने पर वह राजा के विजयी होने के लिए होता है।।२।।

सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर का फल कथन

सर्वदिगुत्थं सततोत्थितं च भयदं नरेन्द्रराष्ट्राणाम् ।
चौराटविकान् हन्याद् धूमानलशक्रचापाभम् ।।३।।

माया—प्रत्येक दिन हर जगह-हर समय में गन्धर्वनगर के दीखने पर राजा, देश आदि को भय प्रदान करने वाला होता है। एवं धूम, अग्नि अथवा इन्द्रधनुष के सदृश आभा दीखने पर चोर और वन में निवास करने वालों को पीड़ित करता है।।३।।

गन्धर्वनगर के विशेष फल कथन

गन्धर्वनगरमुत्थितमापाण्डुरमशनिपातवातकरम् ।
दीप्ते नरेन्द्रमृत्युर्वामेऽरिभयं जयः सव्ये ।।४।।

माया—पाण्डुर अर्थात् शुक्लवर्ण का गन्धर्व नगर वज्रपात के साथ वायु कारक होता है। दीप्त दिशा, जैसा अध्याय-८६ के १२वें श्लोक में कहा गया है, में स्थित होने पर उस दिशा में स्थित देशों के राजाजनों की मृत्यु होती है। वाम भाग में गन्धर्व नगर स्थित होने पर शत्रु का भय उत्पन्न करता है तथा दक्षिण भाग में स्थित होकर जय दिलाता है।।४।।

पताका आदि सदृश गन्धर्वनगर का फल कथन

अनेकवर्णाकृति खे प्रकाशते पुरं पताकाध्वजतोरणान्वितम् ।
यदा तदा नागमनुष्यवाजिनां पिबत्यसृग्भूरि रणे वसुन्धरा ।।५।।

माया—जब आकाश में नाना वर्ण सम्पन्न पताका, ध्वज अथवा नगरद्वार के समान गन्धर्वनगर दीखते हैं, तब युद्ध में हाथी, मनुष्य व घोड़ों का रुधिर अधिकतर पृत्वी पी जाती है।।५।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां गन्धर्वनगरलक्षणध्यायः षट्त्रिंशः।।३६।।

□□□

अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः–३७

प्रतिसूर्यलक्षण विचारः

प्रतिसूर्य के वर्ण व लक्षण के साथ शुभाशुभ फल कथन

प्रतिसूर्यकः प्रशस्तो दिवसकृदृतुवर्णसप्रभः स्निग्धः ।
वैदूर्यनिभः स्वच्छः शुक्लश्च क्षेमसौभिक्षः ।।१।।

माया—प्रतिसूर्य अथवा द्वितीय सूर्य, सूर्य के ऋतुवर्ण (जैसा तृतीयाऽध्याय के २३वें श्लोक में आया है) के समान वर्ण का होता है। प्रतिसूर्य विमल, वैदूर्यमणि के समान साफ व शुक्ल होने से कल्याण और सुभिक्ष करने वाला होता है।।१।।

प्रतिसूर्य के वर्ण और शुभाशुभ फल कथन

पीतो व्याधिं जनयत्यशोकरूपश्च शस्त्रकोपाय ।
प्रतिसूर्याणां माला दस्युभयातङ्कनृपहन्त्री ।।२।।

माया—प्रतिसूर्य पीत वर्ण का होने से व्याधि करने वाला होता है। अशोक पुष्प के सदृश लाल वर्ण के होने पर शस्त्र-प्रकोप करने वाला होता है। प्रतिसूर्यों की माला दीखने पर चोरभय तथा उपद्रव के साथ-साथ राजा को मारने वाला होता है।।२।।

पुनः प्रतिसूर्य के वर्ण और शुभाशुभ फल कथन

दिवसकृतः प्रतिसूर्यो जलकृदुदग्दक्षिणे स्थितोऽनिलकृत् ।
उभयस्थः सलिलभयं नृपमुपरि निहन्त्यधो जनहा ।।३।।

माया—प्रतिसूर्य, सूर्य बिम्ब की उत्तर दिशा में दीखने से वृष्टि होती है, दक्षिण दिशा में दीखने से वायु करने वाला होता है। सूर्य बिम्ब की दोनों ओर दीखने से राजा की हानि होती है तथा नीचे की ओर दीखने पर जनगणों की क्षति होती है।।३।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां प्रतिसूर्यलक्षणाध्यायः सप्तत्रिंशः।।३७।।

□□□

अथाष्टत्रिंशोऽध्यायः-३८

रजोलक्षण विचारः

धूलि लक्षण से पार्थिव वध कथन

कथयन्ति पार्थिववधं रजसा घनतिमिरसञ्चयनिभेन ।
अविभाव्यमानगिरिपुरतरवः सर्वा दिशश्छन्नाः ।।१।।

माया—सघन अन्धकार के समान रज या धूलि से पर्वत, नगर, वृक्ष तथा समस्त दिशायें ढ़का हुआ-सा होकर कोई चीज दृष्ट न होने की स्थिति के समय राजा का क्षय होता है।।१।।

रजोत्पन्न व नाश से फल कथन

यस्यां दिशि धूमचयः प्राक् प्रभवति नाशमेति वा यस्याम् ।
आगच्छति सप्ताहात् तत्रैव भयं न सन्देहः ।।२।।

माया—जिस-किसी दिशा में धूलि की प्रथमोत्पत्ति होकर जिस-किसी दिशा में उसका नाश होता है, तो उन दोनों ही दिशाओं में नि:संदेह सात दिन में भय उत्पन्न होता है।।२।।

घनाकार धूलिवर्ण का फल कथन

श्वेते रजोघनौघे पीड़ा स्यान्मन्त्रिजनपदानां च ।
न चिरात्प्रकोपमुपयाति शस्त्रमतिसङ्कुला सिद्धिः ।।३।।

माया—घनाकार रज (धूलकण) समूह श्वेत वर्ण का दीखने पर मन्त्री व जनपद को पीड़ा होती है। तत्काल शस्त्रकोप का भाजन होना पड़ता है। अति कठिनाई से कार्य की सिद्धि होती है।।३।।

धूलि से व्याप्त आकाश का फल कथन

अर्कोदये विजृम्भति यदि दिनमेकं दिनद्वयं वाऽपि ।
स्थगयन्निव गगनतलं भयमत्युग्रं निवेदयति ।।४।।

माया—सूर्यास्त के समय दीखने वाले रज से एक या दो दिन पर्यन्त आकाश के आच्छादित रहने पर उग्र भय की सम्भावना उत्पन्न होती है।।४।।

रात्रि पर्यन्त रज से आच्छादित आकाश का फल

अनवरतसञ्चयवहं रजनीमेकां प्रधानन्नृपहन्तृ ।
क्षेमाय च शेषाणां विचक्षणानां नरेन्द्राणाम् ।।५।।

माया—एक रात्रि पर्यन्त धूलि के निरन्तर एकत्रित होकर आकाश को आच्छादित करने पर प्रधान राजा का मरण और शेष अन्य विचक्षण (चतुर) राजाओं का कल्याण करने वाला होता है॥५॥

रजवश परचक्रागम योग कथन

रजनीद्वयं विसर्पति यस्मिन् राष्ट्रे रजोघनं बहुलम्।
परचक्रस्यागमनं तस्मिन्नपि सन्निबोद्धव्यम्॥६॥

माया—जिस-भी राष्ट्र में दो रात्रि पर्यन्त रज सघनीभूत होकर व्याप्त रहता है, उस राष्ट्र में अन्य राजा का निश्चय ही आगमन होता है॥६॥

तीन, चार या पाच रात्रि रजःपात का फल कथन

निपतति रजनीत्रितयं चतुष्कमप्यन्नरसविनाशाय।
राज्ञां सैन्यक्षोभो रजसि भवेत् पञ्चरात्रभवे॥७॥

माया—निरन्तर तीन-चार रात्रि पर्यन्त रज:पात होने से अन्न व रस का क्षय होता है। पाँच रात्रि पर्यन्त रज:पात होने पर राजाजनों की सेना के अन्दर क्षोभ उत्पन्न हो जाता है॥७॥

केतु के उदय बाद रजःपात का फल कथन

केत्वाद्युदयविमुक्तं यदा रजो भवति तीव्रभयदायि।
शिशिरादन्यत्रर्तौ फलमविकलमाहुराचार्याः॥८॥

माया—केतु आदि के उदय के पश्चात् रज: पात होने पर भयङ्कर भय उत्पन्न होती है। किसी आचार्य के मत में शिशिर ऋतु को छोड़कर अन्य ऋतु के समय यह फल अवश्य होता है॥८॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाद्यञ्चस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां रजोलक्षणाध्याय अष्टत्रिंशः॥३८॥

❏❏❏

अथैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः-३९

निर्घातलक्षण विचारः

निर्घातोत्पत्ति व फल कथन

पवनः पवनाभिहतो गगनादवनौ यदा समापतति ।
भवति तदा निर्घातः स च पापो दीप्तविहगरुतः ।।१।।

माया—वायु से अभिहत अर्थात् टकरा कर वायु के आकाश से पृथ्वी पर आने से जैसी ध्वनि उत्पन्न होती है, उसी का नाम निर्घात है। वह ध्वनि सूर्य के सम्मुखस्थ पक्षियों के कलरव रूप ध्वनि से संयुक्त होकर पापफलद होता है।।१।।

वेलावश निर्घात फल कथन

अर्कोदयेऽधिकरणिकनृपधनियोधाङ्गनावणिग्वेश्याः ।
आप्रहरांशेऽजाविकमुपहन्याच्छूद्रपौरांश्च ।।२।।
आमध्याह्नाद्राजोपसेविनो ब्राह्मणांश्च पीडयति ।
वैश्यजलदांस्तृतीये चौरान् प्रहरे चतुर्थे तु ।।३।।
अस्तं याते नीचान् प्रथमे यामे निहन्ति सस्यानि ।
रात्रौ द्वितीययामे पिशाचसङ्घान् निपीडयति ।।४।।
तुरगकरिणस्तृतीये विनिहन्याद्यायिनश्चतुर्थे च ।
भैरवजर्जरशब्दो याति यतस्तां दिशं हन्ति ।।५।।

माया—सूर्योदय के समय निर्घात वाचक ध्वनि के होने पर अधिकरणिक, राजाजन, धनवान्, योधा, स्त्री, व्यापारी, वेश्या आदि का क्षय कहना चाहिए।

दिन भाग के पहिले प्रहर में निर्घात वाचक ध्वनि के होने से बकरी, आविक (भेड़पालक), शूद्र, जनपदवासी जन आदि का क्षय जानना चाहिए।

दिन भाग के दूसरे प्रहर में निर्घात होने पर राजसेवक, ब्राह्मण आदि पीड़ित होते हैं।

दिन भाग के तीसरे प्रहर में निर्घात होने पर व्यापारी, मेघ आदि का विनाश होता है।

दिन भाग के चौथे प्रहर में निर्घात होने पर चोरों को पीड़ित होना पड़ता है।

रात्रि के पहिले प्रहर में निघात होने पर धान्यों की हानि होती है।

रात्रि भाग के दूसरे प्रहर में निर्घात होने पर भूत-पिशाच गणों का विनाश होता है।

रात्रि भाग के तीसरे प्रहर में निर्घात होने पर हाथी, घोड़े आदि की हानि होती है।

रात्रि भाग के चौथे प्रहर में निघात होने पर गमन करने वाले जनों का नाश कहना चाहिए। एवं जिस दिशा में भाण्डों के भग्न होने जैसी ध्वनि होती है, तो उस दिशा में स्थित देशज जनों की हानि होती है॥२-५॥

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाद्यलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां निर्घातलक्षणाध्याय एकोनचत्वारिंशः।।३९।।

□□□

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः-४०

सस्य जातक निरूपणम्

आगम प्रदर्शनार्थ कथन

वृश्चिकवृषप्रवेशे भानोर्ये बादरायणेनोक्ताः ।
ग्रीष्मशरत्सस्यानां सदसद्योगाः कृतास्त इमे ।।१।।

माया—सूर्य का वृश्चिक और वृष राशि में प्रवेश करने के समय उत्पन्न होने वाले ग्रैष्मिक और शारद धान्यों के प्रसङ्ग में बादरायण के द्वारा जैसा कहा गया है, उसे यहाँ कहते हैं।।१।।

ग्रैष्मिक धान्य सम्वर्द्धन योग कथन

भानोरलिप्रवेशे केन्द्रैस्तस्माच्छुभग्रहाक्रान्तैः ।
बलवद्‌भिः सौम्यैर्वा निरीक्षिते ग्रैष्मिकविवृद्धिः ।।२।।

माया—सूर्य के वृश्चिक राशि में प्रवेश करने के समय में उससे केन्द्र भाव गत वृश्चिक, कुम्भ, वृष और सिंह राशि में शुभग्रह स्थित होने अथवा केन्द्रभाव गत राशियों से इतर भावस्थ राशि में स्थित बलवान् शुभग्रहों से सूर्य के देखे जाने से ग्रैष्मिक धान्यों की अभिवृद्धि होती है।।२।।

पुनः ग्रैष्मिक धान्य सम्वर्द्धन योग कथन

अष्टमराशिगतेऽर्के गुरुशशिनोः कुम्भसिंहसंस्थितयोः ।
सिंहघटसंस्थयोर्वा निष्पत्तिर्ग्रीष्मसस्यस्य ।।३।।

माया—आठवीं वृश्चिक राशि में सूर्य की स्थिति काल में कुम्भ राशि गत गुरु और सिंह राशिगत चन्द्र अथवा कुम्भ राशि में चन्द्र और सिंह राशि में गुरु की अवस्थिति से ग्रैष्मिक अर्थात् ग्रीष्म ऋतु कालीन धान्यों की अभिवृद्धि होती है।।३।।

पुनः धान्य सम्वर्द्धन योग कथन

अर्कात् सिते द्वितीये बुधेऽथवा युगपदेव वा स्थितयोः ।
व्ययगतयोरपि तद्वन्निष्पत्तिरतीव गुरुदृष्ट्या ।।४।।

माया—सूर्य से द्वितीय अथवा द्वादश में शुक्र अथवा बुध अथवा दोनों के साथ-साथ स्थित होने से ग्रीष्मकालीन धान्यों की निष्पत्ति (अभिवृद्धि) होती है। उपरोक्त इन योगों में गुरु की दृष्टि की प्राप्ति होने पर ग्रैष्मिक धान्यों की अच्छी उपज सम्भव होती है।।४।।

और भी धान्य सम्वर्द्धन योग कथन

शुभमध्येऽलिनि सूर्याद् गुरुशशिनोः सप्तमे परा सम्पत्।
अल्यादिस्थे सवितरि गुरौ द्वितीयेऽर्द्धनिष्पत्तिः ॥५॥

माया—वृश्चिक राशि गत सूर्य की दो शुभ ग्रहों के मध्य में स्थिति और सूर्य से सप्तम भाव में गुरु व चन्द्र की युति होने से धान्यों की अधिकतम निष्पत्ति (वृद्धि) होती है। परन्तु वृश्चिक राशि के आदि में ही सूर्य और उससे द्वितीय भाव में गुरु की स्थिति से धान्य की आधी निष्पत्ति कहनी चाहिए॥५॥

और भी धान्य सम्वर्द्धन योग कथन

लाभहिबुकार्थयुक्तैः सूर्यादलिगात् सितेन्दुशशिपुत्रैः।
सस्यस्य परा सम्पत् कर्मणि जीवे गवां चाग्रया ॥६॥

माया—वृश्चिक राशि स्थित सूर्य से एकादश भाव में शुक्र, चतुर्थभाव में चन्द्र और द्वितीय भाव में बुध की अवस्थिति होने से धान्यों की उत्पत्ति अच्छी होती है। इस योग में दशम भाव गत गुरु के होने पर गायों की भी अग्रता रहती है अर्थात् अधिकतम दूध की प्राप्ति होती है॥६॥

और भी धान्य सम्वर्द्धन योग कथन

कुम्भे गुरुर्गवि शशी सूर्योऽलिमुखे कुजार्कजौ मकरे।
निष्पत्तिरस्ति महती पश्चात् परचक्रभयरोगम् ॥७॥

माया—कुम्भ राशि गत गुरु, वृष राशि गत चन्द्र, वृश्चिक राशि के आदि भाग में सूर्य और मकर राशिगत मंगल व शनि के होने पर अधिकतर धान्यों की उत्पत्ति होती है तदनन्तर परचक्र का भय तथा रोग से पीड़ा भी होती है॥७॥

धान्य नाश योग कथन

मध्ये पापग्रहयोः सूर्यः सस्यं विनाशयत्यलिगः।
पापः सप्तमराशौ जातं जातं विनाशयति ॥८॥

माया—वृश्चिक राशि गत सूर्य की दो पाप ग्रहों के बीच में स्थिति होने से धान्यों की हानि होती है। सूर्य से सप्तम राशि (वृष) गत पाप ग्रह के होने से धान्यों की उत्पत्ति सम्बन्धी प्रयास भी निष्फल होता है॥८॥

पुनः धान्य नाश योग कथन

अर्थस्थाने क्रूरः सौम्यैरनिरीक्षितः प्रथमजातम्।
सस्यं निहन्ति पश्चादुप्तं निष्पादयेद् व्यक्तम् ॥९॥

माया—वृश्चिक राशिगत सूर्य से द्वितीय भाव में स्थित पापग्रह पर शुभ ग्रह की

दृष्टि का अभाव होने से प्रथम बार बीज आरोपित धान्यों की हानि होती है, लेकिन तदनन्तर पुन: बीज के समारोपण से उत्तम धान्य की उत्पत्ति होती है॥९॥

पुनः धान्य नाश योग कथन

जामित्रकेन्द्रसंस्थौ क्रूरौ सूर्यस्य वृश्चिकस्थस्य।
सस्यविपत्तिं कुरुत: सौम्यैर्दृष्टौ न सर्वत्र ॥१०॥

माया—वृश्चिक राशिगत सूर्य से सप्तम भाव वृष राशि और सप्तम भाव को छोड़कर केन्द्र भाव अर्थात् लग्न, चतुर्थ व दशम भाव में एक-एक पाप ग्रह अर्थात् मंगल व शनि के स्थित होने से धान्यों की हानि होती है। उपरोक्त दोनों मंगल व शनि पापग्रहों के शुभ ग्रहों की दृष्टि से युक्त होने से सभी जगह धान्यों की हानि नहीं होती है, फिर भी कहीं-न-कहीं धान्य हानि भी होती है॥१०॥

महँगे धान्यों की निष्पत्ति योग कथन

वृश्चिकसंस्थादर्कात् सप्तमषष्ठोपगौ यदा क्रूरौ।
भवति तदा निष्पत्तिः सस्यानामर्घपरिहानिः ॥११॥

माया—वृश्चिक राशि गत सूर्य से सप्तम भाव और षष्ठ भाव में दो पापग्रहों मंगल और शनि के पृथक्-पृथक् स्थित होने से धान्यों की अच्छी पैदावार तो होती है, परन्तु उनका मूल्यांकन महँगा होता है॥११॥

शारदधान्य निष्पत्ति कथन

विधिनानेनैव रविर्वृषप्रवेशे शरत्समुत्थानाम्।
विज्ञेयः सस्यानां नाशाय शिवाय वा तज्ज्ञैः ॥१२॥

माया—उपरोक्त प्रकार से ही वृषराशिगत सूर्य से शारद धान्यों की निष्पत्ति के प्रसङ्ग में विद्वानों को लाभ व हानि का विचार करना चाहिए॥१२॥

ग्रैष्मिक धान्यों की समर्धता-महर्घता कथन

त्रिषु मेषादिषु सूर्यः सौम्ययुतो वीक्षितोऽपि वा विचरन्।
ग्रैष्मिकधान्यं कुरुते समर्घमभयोपयोग्यं च ॥१३॥

माया—मेषादि तीन मेष, वृष मिथुन राशियों में संचरण करता हुआ सूर्य का शुभग्रह से युति या दृष्टि सम्बन्ध होने से ग्रीष्म कालीन धान्य सस्ते तथा उभय पक्ष अर्थात् लोक और परलोक की दृष्टि से उपयोगी भी होते हैं। किसी-किसी ग्रन्थ में 'समर्घमभयोपयोग्यम्' पाठ भी दृष्ट होने से इस प्रकार अर्थ हो जाता है कि धान्य सस्ते होते हैं और जनगण निडर होकर जीवन निर्वाह करते हैं॥१३॥

शारदधान्य की समर्घता-महर्घता कथन

कार्मुकमृगघटसंस्थः शारदसस्यस्य तद्वदेव रविः ।
संग्रहकाले ज्ञेयो विपर्ययः क्रूरदृग्योगात् ।।१४।।

माया—धनु, मकर और कुम्भ राशि गत सूर्य के शुभ ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होने पर शारद धान्य उपरोक्त की तररह सस्ता और लोक व परलोक की दृष्टि से उपयोगी होता है। उपरोक्त मेषादि और धनु आदि तीन-तीन राशि गत सूर्य के पापग्रह की दृष्टि या युति अथवा दोनों होने से उपरोक्त प्रकार के फल से विपरीत फल अर्थात् धान्य महँगा और लोक व परलोक दोनों के लिए अनुपयुक्त होता है। अतः इस काल में संग्रहित धान्य का विक्रय करना लाभदायक होता है।।१४।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां सस्यजातकाध्यायः चत्वारिंशः।।४०।।

□□□

अथैकचत्वारिंशोऽध्यायः-४१

द्रव्यनिश्चय विचारः

आगम प्रदर्शनार्थ कथन

ये येषां द्रव्याणामधिपतयो राशयः समुद्दिष्टाः ।
मुनिभिः शुभाशुभार्थं तानागमतः प्रवक्ष्यामि ।।१।।

माया—जिन पदार्थों के जो मेषादि राशि रूप अधिपति ऋषि-मुनियों ने शुभाशुभ फल का ज्ञान करने हेतु कहे हैं, उनको आगम से यहाँ भी कहता हूँ।।१।।

मेष राशि सम्बन्धि पदार्थ कथन

वस्त्राविककुतुपानां मसूरगोधूमरालकयवानाम् ।
स्थलसम्भवौषधीनां कनकस्य च कीर्तितो मेषः ।।२।।

माया—मेष राशि वस्त्र, भेड़ व बकरी के रोम से बने कम्बल, मसूर, गेहूँ, राल (पेड़ों के गोंद), जौ, स्थल (सूखी भूमि) में उत्पन्न औषधि, स्वर्ण आदि पदार्थों का स्वामी है।।२।।

वृष व मिथुन राशि के पदार्थ कथन

गवि वस्त्रकुसुमगोधूमशालियवमहिषसुरभितनयाः स्युः ।
मिथुनेऽपि धान्यशारदवल्लीशालूककार्पासाः ।।३।।

माया—वृष राशि वस्त्र, पुष्प, गेहूँ, शालि अर्थात् धान्य विशेष, जौ, भैंस, बैल आदि पदार्थों का तथा मिथुन राशि भी धान्य, शारद लता, शालूक अर्थात् कुमुद कन्द, कपास आदि पदार्थ का अधिपति (स्वामी) है।।३।।

कर्क व सिंह राशि के पदार्थ कथन

कर्किणि कोद्रवकदलीदूर्वाफलकन्दपत्रचोचानि ।
सिंहे तुषधान्यरसाः सिंहादीनां त्वचः सगुडाः ।।४।।

माया—कर्क राशि कोदो, केला, दूब, विविध फल, कन्द, पत्र, चोच अर्थात् नारियल आदिका तथा सिंह राशि भूसी, धान्य, रस, त्वचा, गुड़ आदि पदार्थ का अधिपति है।।४।।

कन्या व तुला राशि के पदार्थ कथन

षष्ठेऽतसीकलायाः कुलत्थगोधूममुद्गनिष्पावाः ।
सप्तमराशौ माषा यवगोधूमाः ससर्षपाश्चैव ।।५।।

माया—कन्या राशि अतसी, उड़द, कुलथी, गेहूँ, मूँग, निष्पाव अर्थात् धान्य

विशेष आदि पदार्थ का तथा तुला राशि मसूर, जौ, गेहूँ, सरसों आदि पदार्थ का अधिपति है॥५॥

वृश्चिक व धनु राशि के पदार्थ कथन

अष्टमराशाविक्षुः सैक्यं लोहान्यजाविकं चापि ।
नवमे तु तुरगलवणाम्बरास्त्रतिलधान्यमूलानि ॥६॥

माया—वृश्चिक राशि ईख, लता फल, लोहा, छाग व भेड़ सम्बन्धी वस्तुऐं आदि पदार्थ का तथा धनुराशि घोड़ा, नमक, वस्त्र, अस्त्र, तिल, धान्य, मूल से प्राप्त धान्य आदि पदार्थ का स्वामी है॥६॥

मकर व कुम्भ राशि के पदार्थ कथन

मकरे तरुगुल्माद्यं सैक्येक्षुसुवर्णकृष्णलोहानि ।
कुम्भे सलिलजफलकुसुमरत्नचित्राणि रूपाणि ॥७॥

माया—मकर राशि वृक्ष, गुल्म आदि, लताफल, गन्ना, सोना, लोहा आदि पदार्थ का तथा,कुम्भ राशि जलोत्पन्न वस्तु, फल, फूल, रत्न, विभिन्न वर्णों के वस्तु आदि पदार्थों का अधिपति है॥७॥

मीन राशि के पदार्थ कथन

मीने कपालसम्भवरत्नान्यम्बूद्भवानि वज्राणि ।
स्नेहाश्च नैकरूपा व्याख्याता मत्स्यजातं च ॥८॥

माया—मीन राशि कपाल सम्भव रत्न अर्थात् हाथी दाँत व नागमणि, जल से उत्पन्न वस्तु, हीरा, अनेक प्रकार तेल, मछली से प्राप्त मोती आदि पदार्थ का स्वामी है॥८॥

उपरोक्त पदार्थों का शुभाशुभ कथन

राशेश्चतुर्दशार्थायसप्तनवपञ्चमस्थितो जीवः ।
द्व्येकादशदशपञ्चाष्टमेषु शशिजश्च वृद्धिकरः ॥९॥
षट्सप्तमगो हानिं वृद्धिं शुक्रः करोति शेषेषु ।
उपचयसंस्थाः क्रूराः शुभदाः शेषेषु हानिकराः ॥१०॥

माया—जिस-किसी राशि से चतुर्थ, दशम, द्वितीय, एकादश, सप्तम, नवम अथवा पञ्चम स्थान में गुरु और द्वितीय, एकादश, दशम, पञ्चम अथवा अष्टम स्थान में बुध के स्थित होने से लग्नस्थ राशि से विचारित पदार्थों की अभिवृद्धि करने वाला होता है।

जिस-किसी राशि से षष्ठ अथवा सप्तम स्थान में शुक्र के अवस्थित होने से उस लग्नस्थ राशि के कथित पदार्थों का नाश होता है तथा शेष अन्य स्थान जैसे प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश अथवा द्वादश स्थान में स्थित शुक्र उस राशि के उक्त पदार्थों की अभिवृद्धि करने वाला होता है।

एवं जिस राशि से उपचय स्थान अर्थात् तृतीय, षष्ठ, दशम अथवा एकादश स्थान में पापग्रह अर्थात् सूर्य, मंगल व शनि के स्थित होने से उस राशि के उक्त पदार्थों की अभिवृद्धि होती है। शेष अन्य प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पञ्चम, सप्तम, अष्टम, नवम, एकादश अथवा द्वादश स्थान में उनके (पापग्रह के) स्थित होने से उस राशि के उक्त पदार्थों का नाश होता है॥९-१०॥

यहाँ पर विशेष कथन

राशेर्यस्य क्रूराः पीडास्थानेषु संस्थिता बलिनः।
तत्प्रोक्तद्रव्याणां महार्घता दुर्लभत्वं च ॥११॥

माया—पापग्रह अर्थात् सूर्य, मंगल या शनि जिस-किसी राशि से पीड़ा या उपचय (३, ६, १० या ११) स्थान में स्थित होकर बलवान् अर्थात् मित्र राशि, स्वराशि, उच्च या स्वनवांश आदि गत या शुभ दृष्ट हो, तो इस स्थिति में उस राशि के उक्त पदार्थ अधिक महँगे और दुर्लभ होते हैं॥११॥

और भी यहाँ पर विशेष कथन

इष्टस्थाने सौम्या बलिनो येषां भवन्ति राशीनाम्।
तद्द्रव्याणां वृद्धिः सामर्घ्यं वल्लभत्वं च ॥१२॥

माया—जिस-किसी राशि से इष्ट स्थान अर्थात् उपरोक्त वृद्धि कर स्थान में बलवान् होकर शुभ ग्रह अर्थात् बुध, गुरु, शुक्र या चन्द्र के स्थित होने से उस राशि के उक्त पदार्थ सस्ता तो होता ही है, वे परम प्रिय भी होते हैं॥१२॥

और भी यहाँ पर विशेष कथन

गोचरपीडायामपि राशिर्बलिभिः शुभग्रहैर्दृष्टः।
पीडां न करोति तथा क्रूरैरेवं विपर्यासः ॥१३॥

माया—गोचर से पीड़ित राशि (अर्थात् गुरु आदि ग्रहों के चतुर्थ आदि शुभ स्थान से पृथक् स्थान में रहने के समय) बलवान् शुभ ग्रह से दृष्ट हो, तो उस स्थिति में राशि पीड़ित नहीं होती अर्थात् उस राशि से विचारित पदार्थ समर्थ या सामान्य मूल्य में उपलब्ध रहते हैं। पापग्रह से वह यदि दृष्ट होती है, तो उस राशि से विचारित पदार्थ महर्घ के साथ अलभ्य भी होते हैं॥१३॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां द्रव्यनिश्चयाध्याय एकचत्वारिंशः॥४१॥

अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः-४२

अर्घकाण्ड निरूपणम्

यहाँ प्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

अतिवृष्ट्युल्कादण्डान् परिवेषग्रहणपरिधिपूर्वांश्च ।
दृष्ट्वाऽमावास्यायामुत्पातान् पौर्णमास्यां च ।।१।।
ब्रूयादर्घविशेषान् प्रतिमासं राशिषु क्रमात् सूर्ये ।
अन्यतिथावुत्पाता ये ते डमरार्तये राज्ञाम् ।।२।।

माया—प्रत्येक मास के मेषादि राशियों में सूर्य की संक्रान्ति होने के पश्चात् क्रम से अमावस्या और पूर्णिमा में अतिवर्षण, उल्का, दण्ड, परिवेष, ग्रहण, परिधि (प्रतिसूर्य) आदि के साथ रजोनिहार, दिग्दाह, गन्धर्व नगर आदि उत्पातों का अवलोकन कर पदार्थों के अर्घ विशेष अर्थात् सस्ता या महँगा होने का विचार परम्परा अनुसार करना चाहिए।।१-२।।

उत्पात् वाले अमावस्या व पूर्णिमा के दिन मेष या वृष राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

मेषोपगते सूर्ये ग्रीष्मजधान्यस्य संग्रहं कृत्वा ।
वनमूलफलस्य वृषे चतुर्थमासे तयोर्लाभः ।।३।।

माया—मेष राशिगत सूर्य के समय ग्रीष्मऋतु जन्य धान्यों का तथा वृष राशिगत सूर्य के समय उत्पन्न होने वाले मूल व फलों का संग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार उन संग्रहित धान्यों; मूलों व फलों का मेष या वृष संक्रान्ति से चौथे मास में विक्रय करने से लाभ होता है।।३।।

मिथुन राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

मिथुनस्थे सर्वरसान् धान्यानि च संग्रहं समुपनीय ।
षष्ठे मासे विपुलं विक्रेता प्राप्नुयाल्लाभम् ।।४।।

माया—मिथुन राशिगत सूर्य के समय मधुर आदि षट् रसों का संग्रह कर उस संक्रान्ति से षष्ठ मास में उनका विक्रय करने से अधिक लाभ होता है।।४।।

कर्क राशिग सूर्य में कर्त्तव्य कथन

कर्किण्यर्के मधुगन्धतैलघृतफाणितानि विनिधाय ।
द्विगुणा द्वितीयमासे लब्धिर्हीनाधिके छेदः ।।५।।

माया—कर्क राशिस्थ सूर्य के समय शहद, सुगन्धित द्रव्य, तेल, घी, गुड़

आदि का संग्रहण कर उससे ठीक दूसरे मास में उन वस्तुओं का विक्रय करने से द्विगुणित लाभ होता है। दो मास से न्यूनाधिक होने पर विक्रय से हानि होती है।।५।।

सिंह राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

सिंहे सुवर्णमणिचर्मवर्मशस्त्राणि मौक्तिकं रजतम्।
पञ्चममासे लब्धिर्विक्रेतुरतोऽन्यथा छेदः ।।६।।

माया—सिंह राशिस्थ सूर्य के समय सोना, मणि, चमड़ा, शस्त्र, मोती, चाँदी आदि का भण्डारण कर उससे ठीक पाँचवें मास में उन पदार्थों का विक्रय करने से लाभ होता है। उससे कम या अधिक समय व्यतीत करने पर विक्रय करने पर हानि होती है।।६।।

कन्या राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

कन्यागते दिनकरे चामरखरकरभवाजिनां क्रेता।
षष्ठे मासे द्विगुणं लाभमवाप्नोति विक्रीणन् ।।७।।

माया—कन्या राशिस्थ सूर्य के समय चामर, गदहा, ऊँट, घोड़ा आदि को एकत्रित कर उससे छठे मास में उन वस्तुओं का विक्रय करना द्विगुण लाभप्रद होता है।।७।।

तुला राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

तौलिनि तान्तवभाण्डं मणिकम्बलकाचपीत्कुसुमानि।
आदद्याद्धान्यानि च वर्षार्द्धाद् द्विगुणिता वृद्धिः ।।८।।

माया—तुला राशिगत सूर्य के समय सूती वस्त्र, बर्तन, मणि, कम्बल, काँच, पीताम्बर, पुष्प धान्य आदि का भण्डारण कर षष्ठम मास में विक्रय करने से द्विगुण लाभ होता है।।८।।

वृश्चिक राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

वृश्चिकसंस्थे सवितरि फलकन्दकमूलविविधरत्नानि।
वर्षद्वयमुषितानि द्विगुणं लाभं प्रयच्छन्ति ।।९।।

माया—वृश्चिक राशिस्थ सूर्य के समय फल, कन्द, मूल और अनेक प्रकार के रत्नों का संग्रह कर दो वर्ष पश्चात् विक्रय करने से द्विगुण लाभ होता है।।९।।

नोट—फल आदि को उपरोक्त काल में खरीद कर दो वर्ष बाद विक्रय करने की बात कहा गया है, इस प्रसङ्ग में विद्वान् उचित सम्भावना पर अवश्य ध्यान दें।

धनु राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

चापगते गृह्णीयात् कुङ्कुमशङ्खप्रवालकाचानि।
मुक्ताफलानि च ततो वर्षार्द्धात् द्विगुणतां यान्ति ।।१०।।

माया—धनु राशिस्थ सूर्य के समय कुङ्कुम, शंख, मूँगा, काँच, मोती आदि का भण्डारण कर षष्ठमास पश्चात् उसको बेचने से द्विगुण लाभ होता है।।१०।।

मकर राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

मृगघटसंस्थे सवितरि गृह्णीयाल्लोहभाण्डधान्यानि ।
स्थित्वा मासं दद्याल्लाभार्थी द्विगुणमाप्नोति ।।११।।

माया—मकर या कुम्भ राशिस्थ सूर्य के समय लोहा, बर्तन, धान्य आदि का भण्डारण कर एक मास पश्चात् विक्रय करने से लाभार्थी को द्विगुण लाभ होता है।।११।।

मीन राशिस्थ सूर्य में कर्त्तव्य कथन

सवितरि झषमुपयाते मूलफलं कन्दभाण्डरत्नानि ।
संस्थाप्य वत्सरार्द्धं लाभकमिष्टं समाप्नोति ।।१२।।

माया—मीन राशिगत सूर्य के समय मूल, फल, कन्द, बर्तन, रत्न आदि का भण्डारण कर षष्ठ मास पश्चात् विक्रय करने से अधिकतर लाभ होता है।।१२।।

यहाँ पर विशेष कथन

राशौ राशौ यस्मिन् शिशिरमयूखः सहस्रकिरणो वा ।
युक्तोऽधिमित्रदृष्टस्तत्रायं लाभको दिष्टः ।।१३।।

माया—जिस-जिस राशि में स्थित चन्द्र अथवा सूर्य अपने अधिमित्र ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो, उसी राशि में उपरोक्त प्रकार लाभ होता है, अन्यथा नहीं।।१३।।

यहाँ पर विशेष कथन

सवितृसहितः सम्पूर्णो वा शुभैर्युतवीक्षितः
शिशिरकिरणः सद्योऽर्घस्य प्रवृद्धिकरः स्मृतः ।
अशुभसहितः सन्दृष्टो वा हिनस्त्यथवा रविः
प्रतिगृहगतान् भावान् बृद्ध्वा वदेत् सदसत्फलम् ।।१४।।

माया—जिस राशि में अमावास्या को सूर्य के सहित चन्द्र अथवा पूर्णिमा को चन्द्रमा शुभग्रह अर्थात् बुध, गुरु, शुक्र से युक्त या दृष्ट हो, उस राशि कथित द्रव्य की मूल्य वृद्धि होती है। एवं जिस राशि में पापग्रह (मंगल, शनि) से युक्त अथवा दृष्ट हो, तो उस राशि कथित द्रव्यों की हानि करता है। इस तरह प्रत्येक राशि गतद्रव्यों की जानकारी कर शुभाशुभ फल कथन करना चाहिए।।१४।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां यामर्घकाण्डाध्यायो द्विचत्वारिंशः।।४२।।

□□□

अथ त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः-४३

इन्द्रध्वजसम्पद् विचारः

इन्द्रध्वज-उत्पत्ति प्रदर्शनार्थ कथन

ब्रह्माणमूचुरमरा भगवन् शक्ताः स्म नासुरान् समरे।
प्रतियोधयितुमतस्त्वां शरण्यशरणं समुपयाताः ॥१॥

माया—सभी देवताओं ने ब्रह्माजी से कहा—हे भगवन्! हम लोग असुरों से युद्ध करने में सक्षम नहीं हैं। अतः हम लोग आपके शरणागत हैं॥१॥

देवताओं के लिए ब्रह्माजी का उपदेशात्मक कथन

देवानुवाच भगवान् क्षीरोदे केशवः स वः केतुम्।
यं दास्यति तं दृष्ट्वा नाजौ स्थास्यन्ति वो दैत्याः ॥२॥

माया—भगवान् ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा कि क्षीर सागर में भगवान केशव शोभायमान हैं, वे आपको जो ध्वज देंगे, उसे देखकर असुरगण युद्ध में स्थिर नहीं हो सकेंगे॥२॥

केशव का देवताओं द्वारा की गई स्तुति कथन

लब्धवराः क्षीरोदं गत्वा ते तुष्टुवुः सुराः सेन्द्राः।
श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभमणिकिरणोद्भासितोरस्कम् ॥३॥
श्रीपतिमचिन्त्यमसमं समं ततः सर्वदेहिनां सूक्ष्मम्।
परमात्मानमनादिं विष्णुमविज्ञातपर्यन्तम् ॥४॥
तैः संस्तुतः स देवस्तुतोष नारायणो ददौ चैषाम्।
ध्वजमसुरसुरवधूमुखकमलवनतुषारतीक्ष्णांशुम् ॥५॥

माया—इस प्रकार ब्रह्माजी से वरदान प्राप्त कर इन्द्रादि देवगण क्षीर सागर में प्रस्तुत हुए और भगवान् केशव की स्तुति इस तरह से की तथा जिससे श्रीवत्स चिह्न से सम्पन्न, कौस्तुभ मणि की किरणों से सुशोभित वक्षःस्थल वाले, श्रीपति, अचिन्त्य, अनौपम्य सभी जीवों में स्थित होने से सम, सभी जीवों द्वारा अत्यन्त कठिनता पूर्वक ज्ञेय होने से सूक्ष्म, परमात्मा, अनादि, विष्णु, अविज्ञात निधन नारायण ने इन्द्रादिदेवगण से सन्तुष्ट हो, असुरों व सुरों की स्त्रियों के मुख रूप कमल वन में सूर्य व चन्द्र के समान अर्थात् असुर स्त्रियों के मुखकमल म्लान करने योग्य चन्द्र तथा देव स्त्रियों के मुख कमल को उल्लसित करने के कारण सूर्य के समान ध्वज इन्द्रादिदेवताओं को प्रदान किया॥३-५॥

ध्वज स्वरूप की प्रशंसा कथन

तं विष्णुतेजोद्भवमष्टचक्रे रथे स्थितं भास्वति रत्नचित्रे ।
देदीप्यमानं शरदीव सूर्यं ध्वजं समासाद्य मुमोद शक्रः ।।६।।

माया—विष्णु के तेज से समुद्‌भूत, अष्ट चक्रों से युक्त, प्रकाशित तथा रत्नों से विभूषित रथ पर स्थित तथा शरत्कालीन सूर्यके समान प्रकाशमान उस ध्वज को प्राप्त कर इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हुआ।।६।।

ध्वज पाकर इन्द्र से कृत्कार्य का कथन

स किङ्किणीजालपरिष्कृतेन स्रक्छत्रघण्टापिटकान्वितेन ।
समुच्छ्रितेनामरराड्ध्वजेन निन्ये विनाशं समरेऽरिसैन्यम् ।।७।।

माया—उसने (इन्द्र ने) किङ्किणियों (सूक्ष्म घण्टाओं) के संजाल से विभूषित, माला, छत्र, घण्टा तथा पिटक से सम्पन्न उन्नत उस ध्वज से संग्राम में असुर सेना का संहार किया।।७।।

इन्द्र द्वारा उस ध्वज को चेदिराज वसु को देने का कथन

उपरिचरस्यामरपो वसोर्ददौ चेदिपस्य वेणुमयीम् ।
यष्टिं तां स नरेन्द्रो विधिवत् सम्पूजयामास ।।८।।

माया—वहाँ से इन्द्र ने ऊर्ध्वगमन करने वाले अर्थात् सदेह स्वर्ग जाने वाले, चेदि नामक देश के राजा वसु को बाँस का एक दण्ड प्रदान किया तथा उसका विधिपूर्वक चेदिराज वसु ने भी पूजन किया।।८।।

इन्द्र की प्रसन्नता और ध्वज माहात्म्य कथन

प्रीतो महेन मघवा प्राहैवं ये नृपाः करिष्यन्ति ।
वसुवद्वसुमन्तस्ते भुवि सिद्धाज्ञा भविष्यन्ति ।।९।।
मुदिताः प्रजाश्च तेषां भयरोगविवर्जिताः प्रभूतान्नाः ।
ध्वज एव चाभिधास्यति जगति निमित्तैः फलं सदसत् ।।१०।।

माया—चेदिराज वसु के पूजन से संतुष्ट इन्द्र ने कहा कि राजा वसु के सदृश जो कोई राजा उत्सव करेगा, उसे अनेक तरह के मणियों से सम्पन्न पृथ्वी पर आदेश करने वाला राजा होने का गौरव प्राप्त होगा। उसका प्रजाजन प्रमुदित, भय व रोग से रहित तथा प्रचुर धान्यों से सम्पन्न होंगे तथा ध्वज ही संसार के निमित्तों से शुभाशुभ फल दर्शाने वाला होगा।।९-१०।।

ध्वज का विधान कथन

पूजा तस्य नरेन्द्रैर्बलवृद्धिजयार्थिभिर्यथा पूर्वम् ।
शक्राज्ञया प्रयुक्ता तामागमतः प्रवक्ष्यामि ।।११।।

भाया—प्राचीन काल में इन्द्र की आज्ञा से बलवृद्धि और जय की आकांक्षा करने वाले राजाजनों ने जिस प्रकार उस ध्वज का पूजन किया, उसे आगम अर्थात् पूर्वशास्त्र से अधिगत कर मैं यहाँ भी कहता हूँ॥११॥

पुनः ध्वज विधान कथन

तस्य विधानं शुभकरणदिवसनक्षत्रमङ्गलमुहूर्तैः ।
प्रास्थानिकैर्वनमियाद् दैवज्ञः सूत्रधारश्च ॥१२॥

भाया—शुभकरण, शुभदिन, शुभ नक्षत्र, शुभ शकुन और शुभ मुहूर्त्त में दैवज्ञ और सूत्रधार अर्थात् बढ़ई को वन की ओर प्रस्थान करना चाहिए॥१२॥

वन में करने योग्य कर्त्तव्य कथन

उद्यानदेवतालयपितृवनवल्मीकमार्गचितिजाताः ।
कुब्जोर्ध्वशुष्ककण्टकिवल्लीवन्दाकयुक्ताश्च ॥१३॥
बहुविहगालयकोटरपवनानलपीडिताश्च ये तरवः ।
ये च स्युः स्त्रीसंज्ञा न ते शुभाः शक्रकेत्वर्थे ॥१४॥

भाया—उद्यान (उपवन), देवतालय (सुरगृह), पितृवन (श्मशान), वल्मीक, मार्ग तथा चिति (यज्ञ भूमि) आदि स्थान जन्य, कुब्जा (कुबड़ा), ऊर्ध्व शुष्क, भूमि में मूल सहित सूखा व खड़ा, कँटीला, लताओं से युक्त, वन्दाक संज्ञक वृक्ष से युक्त, अनेक पक्षियों के घोंसलों से युक्त, वायु छिन्न, अग्नि से जला, स्त्रीवाचक नाम युक्त आदि दुष्ट लक्षणों वाले वृक्षों को छोड़कर शुभलक्षण वाले वृक्ष इन्द्रध्वज के लिए चयन कर काटना चाहिए॥१३-१४॥

इन्द्र ध्वजोपयोगि शुभवृक्ष कथन

श्रेष्ठोऽर्जुनोऽजकर्णः प्रियकधवोदुम्बराश्च पञ्चैते ।
एतेषामेकतमं प्रशस्तमथवापरं वृक्षम् ॥१५॥

भाया—अर्जुन, अजकर्ण, प्रियक, धव और उदुम्बर; इन पाँच वृक्षों का ध्वज के लिए उपयोग शुभकारक है। इन वृक्षों में से एक अथवा अग्रकथित अन्य शुभ लक्षण वाला वृक्ष इन्द्रध्वज के लिए काटना चाहिए॥१५॥

इन्द्रध्वजोपयोगी वृक्ष और उसका अधिग्रहण विधि कथन

गौरासितक्षितिभवं सम्पूज्य यथाविधि द्विजः पूर्वम् ।
विजने समेत्य रात्रौ स्पृष्ट्वा ब्रूयादिमं मन्त्रम् ॥१६॥

भाया—गौर (श्वेत) अथवा असित (कृष्ण) वर्ण की मिट्टी पर उत्पन्न शुभ लक्षणों वाले वृक्ष के समीप आकर ब्राह्मण निर्जन (एकान्त) में प्रथम रात्रि के समय अर्थात्

सायंकाल के ठीक पश्चात् सविधि उसका पूजन करने के उपरान्त उस वृक्ष को स्पर्श किये अग्रकथित मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए।।१६।।

मन्त्र प्रदर्शक कथन

यानीह वृक्षे भूतानि तेभ्यः स्वस्ति नमोऽस्तु वः ।
उपहारं गृहीत्वेमं क्रियतां वासपर्ययः ।।१७।।
पार्थिवस्त्वां वरयते स्वस्ति तेऽस्तु नगोत्तम ।
ध्वजार्थं देवराजस्य पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ।।१८।।

माया—इस वृक्ष के ऊपर जो कोई जन्तु निवास कर रहे हों, उनका कल्याण हो, आप सभी को मैं नमस्कार करता हूँ और मेरे द्वारा प्रस्तुत उपहार (बलि) को स्वीकार कर आप सभी अन्यत्र वास करने की कृपा करें। हे वृक्ष प्रधान ! आपका कल्याण हो, राजा आपको इन्द्रध्वज के लिए वरण करना चाहते हैं, अत: आपको मेरे द्वारा की गई पूजा को स्वीकार कर लेना चाहिए।।१७-१८।।

वृक्षच्छेदनकालिक परशु ध्वनि का शुभाशुभ फल कथन

छिन्द्यात् प्रभातसमये वृक्षमुदक् प्राङ्मुखोऽपि वा भूत्वा ।
परशोर्जर्जरशब्दो नेष्टः स्निग्धो घनश्च हितः ।।१९।।

माया—तदनन्तर, सूर्योदय काल में उत्तराभिमुख अथवा पूर्वाभिमुख होकर वृक्ष को काटना चाहिए। वृक्ष को काटते हुए कुल्हाड़ी से जर्जर शब्द होना अशुभकारक होता है। उस समय कुल्हाड़ी से मृदु व धने शब्द होना शुभदायक है।।१९।।

कट कर गिरे वृक्ष का शुभाशुभ कथन

नृपजयदमविध्वस्तं पतनमनाकुञ्चितं च पूर्वोदक् ।
अविलग्नं चान्यतरौ विपरीतमतस्त्यजेत्पतितम् ।।२०।।

माया—अखण्डित या अवक्र तथा पूर्व अथवा उत्तर दिशा में पेड़ का पतन होना राजा के लिए विजय दिलाने वाला होता है। इन लक्षणों से इतर लक्षण से युक्त अर्थात् खण्डित व वक्री होकर चारों आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य और ईशान कोण में से किसी कोण में पेड़ का पतन होना अशुभकारक है।।२०।।

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

छित्त्वाग्रे चतुरङ्गुलमष्टौ मूले जले क्षिपेद्यष्टिम् ।
उद्धृत्य पुरद्वारं शकटेन नयेन्मनुष्यैर्वा ।।२१।।

माया—उस पेड़ के अग्रत: चार अंगुल और मूलत: आठ अंगुल कुल्हाड़ी से अलग कर मात्र यष्टि (मध्य) भाग को जल में रखना चाहिए। तत्पश्चात् जल से निकाल कर किसी गाड़ी या मनुष्यों के द्वारा उठवाकर नगर द्वारा तक लाना चाहिए।।२१।।

यष्टि भाग पेड़ को लाने का शुभाशुभ कथन

अरभङ्गे बलभेदो नेम्या नाशो बलस्य विज्ञेयः ।
अर्थक्षयोऽक्षभङ्गे तथाणिभङ्गे च वर्द्धकिनः ।।२२।।

माया—पेड़ का यष्टि भाग लाते समय यदि गाड़ी का आरा टूट जाय, तो सेना में भेद उत्पन्न होता है। नेमि (हाल) के टूटने से सेनाओं की हानि होती है। अथवा गाड़ी की धूरा (अक्ष) टूटने पर धन हानि अथवा गाड़ी की अधि (कीलक) के टूटने से बढ़ई की मृत्यु हो जाती है। इसी प्रकार मनुष्यों द्वारा लाने पर शुभाशुभ का ज्ञान करना चाहिए।।२२।।

उस पेड़ की यष्टि भाग को कब नगर के अन्दर लाना कथन

भाद्रपदशुक्लपक्षस्याष्टम्यां नागरैर्वृतो राजा ।
दैवज्ञसचिवकञ्चुकिविप्रप्रमुखैः सुवेषधरैः ।।२३।।
अहताम्बरसंवीतां यष्टिं पौरन्दरीं पुरं पौरैः ।
स्रग्गन्धधूपयुक्तां प्रवेशयेच्छङ्खतूर्यरवैः ।।२४।।

माया—भाद्रपद मास के शुक्ल पंक्ष की अष्टमी तिथि को दिन भाग में नगर निवासियों, दैवज्ञ, मन्त्री, कञ्चुकी तथा सुन्दर वेषभूषा सम्पन्न प्रधान ब्राह्मणों के सहित राजा मनुष्यों द्वारा नववस्त्र से ढँकी हुई, माला, सुगन्ध द्रव्य, व धूपों से सम्पन्न यष्टि को शङ्क, तुरही आदि के ध्वनि के साथ-साथ नगर में प्रवेश कराना चाहिए।।२३-२४।।

तात्कालिक नगर सौन्दर्य प्रदर्शनार्थ कथन

रुचिरपताकातोरणवनमालालङ्कृतं प्रहृष्टजनम् ।
सम्मार्जितार्चितपथं सुवेषगणिकाजनाकीर्णम् ।।२५।।
अभ्यर्चितापणगृहं प्रभूतपुण्याहवेदनिर्घोषम् ।
नटनर्तकगेयज्ञैराकीर्णचतुष्पथं नगरम् ।।२६।।

माया—रोचक पताकाओं, तोरण द्वारों व वनमालाओं से सुशोभित, प्रमुदित या उल्लसित जनगणों से सम्पन्न, स्वच्छ व सजे सजाये मार्गों से सम्पन्न, सुवेष वेश्याओं से संव्याप्त, सजी सजाई दूकानों से सम्पन्न, अत्यधिक पवित्र दिन तथा वेद मन्त्रों के ध्वनि से गुञ्जायमान, नट, नाचने वाले तथा संगीत-गीत मर्मज्ञ जनों से आच्छादित नगर के चतुष्पथ (चौराहों) से सम्पन्न दर्शनीय नगर होना चाहिए।।२५-२६।।

पताका के वर्ण फल कथन

तत्र पताकाः श्वेता भवन्ति विजयाय रोगदाः पीताः ।
जयदाश्च चित्ररूपा रक्ताः शस्त्रप्रकोपाय ।।२७।।

भाषा—ऐसे नगर में यदि श्वेत वर्ण पताका लगाया गया हो, तो विजय, पीतवर्णा हो, तो रोगप्रद, विचित्र (अनेक) वर्ण हो, तो विजय प्रद तथा रक्त वर्ण की पताका से शस्त्र प्रकोप (युद्ध) जानना चाहिए।।२७।।

यष्टि के नगर प्रवेशकालिक घटना का शुभाशुभ फल कथन

यष्टिं प्रवेशयन्तीं निपातयन्तो भयाय नागाद्याः ।
बालानां तलशब्दे संग्रामः सत्त्वयुद्धे वा ।।२८।।

भाषा—जिस काल में यष्टि को नगर में प्रवेश कराया जा रहा हो, उस समय हाथी, घोड़ा आदि किसी पशु के कारण यष्टि के पतन से भय उत्पन्न होता है। अथवा बच्चे तालियाँ पीटते इधर-ऊधर भागे अथवा गायें परस्पर लड़ रही हों, तो युद्ध होने की सम्भावना जाननी चाहिए।।२८।।

तत्पश्चात् के कर्त्तव्य का कथन

सन्तक्ष्य पुनस्तक्षा विधिवद्यष्टिं प्ररोपयेद्यन्त्रे ।
जागरमेकादश्यां नरेश्वरः कारयेच्चास्याम् ।।२९।।
सितवस्त्रोष्णीषधरः पुरोहितः शाक्रवैष्णवैर्मन्त्रैः ।
जुहुयादग्निं सांवत्सरो निमित्तानि गृह्णीयात् ।।३०।।

भाषा—उस यष्टि को सविधि बढ़ई द्वारा छीलकर खराद पर चढ़ावे तथा राजा को भाद्रशुक्ल एकादशी के दिन रात्रि जागरण करना चाहिए तथा श्वेत वस्त्र और पगड़ी बाँधे पुरोहित इन्द्र और विष्णु दैवत मन्त्रों से अग्नि में हवन करायें। उस समय दैवज्ञ को अग्नि के शुभाशुभ निमित्तों का विवेचन भी करना चाहिए।।२९-३०।।

अग्नि निमित्तक शुभाशुभ फल कथन

इष्टद्रव्याकारः सुरभिः स्निग्धो घनोऽनलोऽर्चिष्मान् ।
शुभकृदतोऽन्योऽनिष्टो यात्रायां विस्तरोऽभिहितः ।।३१।।

भाषा—आकांक्षित द्रव्यों के सदृश, सुगन्धित, विमल, सघन तथा ज्वालाओं से युक्त अग्नि शुभकारक होता है। अन्य लक्षणों से सम्पन्न अग्नि अशुभकारक होता है। इस प्रसङ्ग में विस्तार से अपने 'योगयात्रा' नामक ग्रन्थ में विस्तारपूर्वक बताया है।।३१।।

अग्नि निमित्तक शुभफल कथन

स्वाहावसानसमये स्वयमुज्ज्वलार्चिः
स्निग्धः प्रदक्षिणशिखो हुतभुग् नृपस्य ।
गङ्गादिवाकरसुताजलचारुहारां
धात्रीं समुद्ररशनां वशगां करोति ।।३२।।

माया—स्वाहा के अवसान या समाप्ति के समय स्वयं प्रज्वलित लपटों वाली विमल और प्रदक्षिण क्रम से जलती हुई शिखरा वाली अग्नि के होने से गंगा और यमुना के स्वच्छ जलरूप सुन्दर हार वाली, समुद्र रूप मेखला वाली पृथ्वी को राजा अपने वश में करने में सफल हो जाता है अर्थात् समस्त पृथ्वी पर उस राजा का शासन होता है॥३२॥

और भी अग्नि निमित्तक शुभफल कथन

चामीकराशोककुरण्टकाब्जवैदूर्यनीलोत्पलसन्निभेऽग्नौ ।
न ध्वान्तमन्तर्भवनेऽवकाशं करोति रत्नांशुहतं नृपस्य ॥३३॥

माया—इस प्रकार स्वर्ण, अशोक, कुरण्टक, वैदुर्यमणि अथवा नीलकमल की सदृश आभा सम्पन्न अग्नि के दीखने पर हवन करने या कराने वाले राजा के महल में सुस्थिर रत्नों की किरणों से नष्ट हो चुकी अन्धकार को पुनः अवसर का सदा अभाव रहता है॥३३॥

अग्नि से निःसरित शब्द का फल कथन

येषां रथौघार्णवमेघदन्तिनां समस्वनोऽग्निर्यदि वापि दुन्दुभेः ।
तेषां मदान्धेभघटावघट्टिता भवन्ति याने तिमिरोपमा दिशः ॥३४॥

माया—समुद्र, मेघ, हाथी अथवा नगाड़े की तरह यदि प्रज्वलित अग्नि में शब्द होता है, तो हवन कर्त्ता राजा के गमनकाल में मदमत्त हाथियों से आच्छादित दिशायें अन्धकार के समान होती है अर्थात् ऐसे राजा को अधिसंख्य हाथियों की उपलब्धि रहती है॥३४॥

अग्नि के और भी अन्य लक्षण सफल कथन

ध्वजकुम्भहयेभभूभृतामनुरूपे वशमेति भूभृताम् ।
उदयास्तधराधराऽधरा हिमवद्विन्ध्यपयोधरा धरा ॥३५॥

माया—यदि अग्नि ध्वज, घड़ा, घोड़ा अथवा हाथियों की तरह दीखता हो, तो सूर्य के उदय और अस्त के सदृश अधरोष्ठ वाली, हिमालय व विन्ध्याचल सदृश स्तनों वाली पृथ्वी हवन कर्त्ता राजा के वश में होती है॥३५॥

अग्नि के और भी अन्य लक्षण सफल कथन

द्विरदमदमहीसरोजलाजाघृतमधुना च हुताशने सगन्धे ।
प्रणतनृपशिरोमणिप्रभाभिर्भवति पुरश्छुरितेव भूर्नृपस्य ॥३६॥

माया—हस्तियों के मदजल, लाजा, घी अथवा मधु के सदृश सुगन्ध युक्त यदि अग्नि हो, तो हवन कर्त्ता राजा को प्रणाम करने वाले राजाओं के मुकुटों की जड़े हुए रत्नों की आभा से उस राजा के अग्रभाग की भूमि पटी हुई-सी प्रतीत होती है॥३६॥

हवनकालिक अग्नि लक्षण का जन्मादिकाल में भी विचार का कथन

उक्तं यदुत्तिष्ठति शक्रकेतौ शुभाशुभं सप्तमरीचिरूपैः ।
तज्जन्मयज्ञग्रहशान्तियात्राविवाहकालेष्वपि चिन्तनीयम् ।।३७।।

माया—पूर्वोक्त प्रकार से इन्द्रध्वज को उठाने के समय कृत हवनाग्नि के सदृश शुभाशुभ लक्षण और फल का विचार जन्मकाल, यज्ञकाल, ग्रहशान्तिकाल, यात्राकाल, विवाह काल आदि में भी करना चाहिए।।३७।।

तत्पश्चात् ध्वजोत्थापन विधि कथन

गुडपूपपायसाद्यैर्विप्रानभ्यर्च्य दक्षिणाभिश्च ।
श्रवणेन द्वादश्यामुत्थाप्योऽन्यत्र वा श्रवणात् ।।३८।।

माया—गुड़, पूप, पायस, दक्षिणा आदि से ब्राह्मणों की पूर्जार्चन कर श्रवण नक्षत्रयुक्त द्वादशी अथवा श्रवण नक्षत्र युक्त अन्य तिथि में ध्वजा को उठाना चाहिए।।३८।।

अब शक्रकुमारी लक्षण सफल कथन

शक्रकुमार्यः कार्याः प्राह मनुः सप्त पञ्च वा तज्ज्ञैः ।
नन्दोपनन्दसंज्ञे पादोनार्द्धे ध्वजोच्छ्रायात् ।।३९।।
षोडशभागाभ्यधिके जयविजये द्वे वसुन्धरे चान्ये ।
अधिका शक्रजनित्री मध्येऽष्टांशेन चैतासाम् ।।४०।।

माया—इस प्रकार मनु के कथनानुसार इन्द्रध्वज के लक्षणों को जानने वाले विद्वानों को चाहिए कि उस ध्वजा के समीप पाँच या सात शक्र कुमारियाँ बनावें। ध्वजा की ऊँचाई से चतुर्थांश छोटा नन्दा, अर्द्धतुल्य प्रमाण की उपनन्दा, ध्वजा से सोलहवाँ भाग और अधिक जय और विजय, जय और विजय से सोलहवाँ भाग अधिक दो वसुन्धरा और सभी के मध्य में वसुन्धरा से आठवाँ भाग अधिक शक्र जनित्री बनानी चाहिए।।३९-४०।।

इन्द्रध्वज को लब्ध आभूषण कथन

प्रीतैः कृतानि विबुधैर्यानि पुरा भूषणानि सुरकेतोः ।
तानि क्रमेण दद्यात् पिटकानि विचित्ररूपाणि ।।४१।।

माया—प्राचीनकाल में प्रमुदित देवताओं ने अपने-अपने भाग का आभूषण जिन्हें इन्द्रध्वज के लिए दिये थे, क्रम से उन आभूषणों (पिटकों) से उस ध्वज को सुशोभित करना चाहिए।।४१।।

४९ आभूषण देने वाले विश्वकर्मादि देव कथन

रक्ताशोकनिकाशं चतुरस्रं विश्वकर्मणा प्रथमम् ।
रशना स्वयम्भुवा शङ्करेण चानेकवर्णगा दत्ता ।।४२।।

अष्टाश्रि नीलरक्तं तृतीयमिन्द्रेण भूषणं दत्तम्।
असितं यमश्चतुर्थं मसूरकं कान्तिमदयच्छत्॥४३॥
मञ्जिष्ठाभं वरुणः षडश्रि तत्पञ्चमं जलोर्मिनिभम्।
मायूरं केयूरं षष्ठं वायुर्जलदनीलम्॥४४॥
स्कन्दः स्वं केयूरं सप्तममददद् ध्वजाय बहुचित्रम्।
अष्टममनलज्वालासङ्काशं हव्यभुग्वृत्तम्॥४५॥
वैदूर्यसदृशमिन्द्रो नवमं ग्रैवेयकं ददावन्यत्।
रथचक्राभं दशमं सूर्यस्त्वष्टा प्रभायुक्तम्॥४६॥
एकादशमुद्वंशं विश्वेदेवाः सरोजसङ्काशम्।
द्वादशमपि च निवेशमृषयो नीलोत्पलाभासम्॥४७॥
किञ्चिदध ऊर्ध्वनिर्मितमुपरि विशालं त्रयोदशं केतोः।
शिरसि बृहस्पतिशुक्रौ लाक्षारससन्निभं ददतुः॥४८॥
यद्यद्येन विभूषणममरेण विनिर्मितं ध्वजस्यार्थे।
तत्तत्दैवत्यं विज्ञातव्यं विपश्चिद्भिः॥४९॥

माया—विश्वकर्मा ने रक्त अशोक सदृश आभा युक्त चतुष्कोण आभूषण सर्वप्रथम इन्द्रध्वज को प्रदान किया। ब्रह्मा और शंकर ने अनेक वर्णों से युक्त रशना (तगड़ी) प्रदान की। नील और रक्तवर्ण युक्त अष्टकोण युक्त तृतीय आभूषण इन्द्र ने दिया। यम ने काली आभायुक्त मसूरक नाम का चौथा आभूषण दिया। पाँचवाँ आभूषण वरुण ने मंजीठ सदृश आभा युक्त जल के आर्वतन के सदृश तथा षट्कोण सम्पन्न प्रदान किया। वायु देव ने मयूर के पंखों से समाच्छादित व मेघ सदृश नीलवर्ण का केयूर नामक छठा आभूषण समर्पित किया। सातवाँ विविध वर्णों वाला केयूर नामक आभूषण कार्तिकेय ने प्रदान किया।

अग्निदेव ने अग्नि ज्वाला के समान आभा युक्त और गोलाकृति वाला आठवाँ आभूषण सुपूर्द किया। वैदूर्य भणि सदृश आभा युक्त नौवाँ आभूषण इन्द्र ने प्रदान किया। त्वष्टा नाम के सूर्य द्वारा रथ के चक्र सदृश और कान्ति सम्पन्न दसवाँ आभूषण प्रदान किया। विश्वदेव कमल सदृश उद्वंश नामक ग्यारहवाँ आभूषण अर्पित किया। मुनिजनों ने नील कमल सदृश आभा वाला निवेश संज्ञक बारहवाँ आभूषण प्रदान किया। गुरु और शुक्र के द्वारा थोड़ा ऊपर-नीचे निर्मित अग्र भाग में विस्तृत तथा लाक्षारस की तरह रक्त वर्ण का तेरहवाँ आभूषण प्रदान किया। इस प्रकार जिन-जिन देवताआनें ने इन्द्रध्वज के लिए जो-जो आभूषण निर्मित करायी, वही-वही देवता उन-उन आभूषणों के स्वामी हैं, ऐसा विद्वानों को जानना चाहिए॥४२-४९॥

पिटक (आभूषण) के परिमाण कथन

ध्वजपरिमाणत्र्यंशः परिधिः प्रथमस्य भवति पिटकस्य ।
परतः प्रथमात् प्रथमादष्टांशाष्टांशहीनानि ।।५०।।

माया—इन्द्रध्वज का जो परिमाण कहा जा चुका है, उसका तृतीयांश प्रथम पिटक की परिधि तथा द्वितीय, तृतीय.........त्रयोदश पिटकों का परिमाण अपने से पूर्व कथित पिटकों से अष्टमांश हीन जानना चाहिए अर्थात् अष्टमांश कम प्रथम पिटक से द्वितीय, अष्टमांश कम द्वितीय पिटक से तृतीय आदि त्रयोदश पिटकों का निर्माण कराना चाहिए।।५०।।

इन्द्रध्वज को पिटकों से सजाने का समय कथन

कुर्यादहनि चतुर्थे पूरणमिन्द्रध्वजस्य शास्त्रज्ञः ।
मनुना चागमगीतान् मन्त्रानेतान् पठेन्नियतः ।।५१।।

माया—इन्द्रध्वज के लक्षणों को जानने वाले विद्वान् को चौथे दिन अर्थात् भाद्रशुक्ल एकादशी से चौथे पूर्णिमा के दिन पिटकों अर्थात् आभूषणों से इन्द्रध्वज को विभूषित कर मनु कथित आगमानुसार प्रतिपादित अग्रोक्त प्रकार के मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिए।।५१।।

मनुरुक्त मन्त्र प्रदर्शनार्थ कथन

हरार्कवैवस्वतशक्रसोमैर्धनेशवैश्वानरपाशभृद्भिः ।
महर्षिसंघैः सदिगप्सरोभिः शुक्राङ्गिरःस्कन्दमरुद्गणैश्च ।।५२।।
यथा त्वमूर्जस्करणैकरूपैः समर्चितस्त्वाभरणैरुदारैः ।
तथेह तान्याभरणानि यागे शुभानि सम्प्रीतमना गृहाण ।।५३।।
अजोऽव्ययः शाश्वत एकरूपो विष्णुर्वराहः पुरुषः पुराणः ।
त्वमन्तकः सर्वहरः कृशानुः सहस्रशीर्षः शतमन्युरीड्यः ।।५४।।
कविं सप्तजिह्वं त्रातारमिन्द्रं स्ववितारं सुरेशम् ।
ह्वयामि शक्रं वृत्रहणं सुषेणमस्माकं वीरा उत्तरा भवन्तु ।।५५।।

माया—शिव, आदित्य, यम, इन्द्र, चन्द्र, कुबेर, अग्नि, वरुण, महर्षिगण, समस्त दिशायें, अप्सरायें, शुक्र, बृहस्पति, कार्तिकेय और वायु देवों के समूहों से जैसे प्रकाशमान, अनेक स्वरूप युक्त, श्रेष्ठ विटपों से आप पूजित हुए हैं, हे देव् वैसे ही इस यज्ञ में प्रसन्नचित्त उन सभी आभूषणों पिटकों को स्वीकार करें।

अज, अविनाशी, शास्वत, एकरूप, विष्णु, वाराहरूप, मुख्य पुरुष, चिरन्तन, यमरूप, सर्वसंहारक, अग्नि, सहस्रमुख, इन्द्र, स्तुति करने के योग्य, विद्वान् अग्निरूप,

पालक, इन्द्र, अच्छी प्रकार रक्षा करने में सक्षम, देवों के देव, शक्र, वृत्रासुर का नाशक तथा सुषेण रूप आपका मैं आवाहन करता हूँ। हमारी वीर सेनाऐं युद्ध में विजयश्री हासिल करें॥५२-५५॥

मन्त्रोच्चारण करने के समय का कथन

प्रपूरणे चोच्छ्रयणे प्रवेशे स्नाने तथा माल्यविधौ विसर्गे।
पठेदिमान्नृपतिः सोपवासो मन्त्रान् शुभान् पुरुहूतस्य केतोः ॥५६॥

माया—व्रती राजा को, इन्द्र ध्वज को आभूषणों से सजाते समय, उसे उठाते समय, नगर में प्रवेश कराते समय, स्नान कराते समय, पुष्प माला पहनाते समय तथा विसर्जन करते समय उपरोक्त मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए॥५६॥

उठाने योग्य ध्वज का स्वरूप कथन

छत्रध्वजादर्शफलार्द्धचन्द्रैर्विचित्रमालाकदलीक्षुदण्डैः
सव्यालसिंहैः पिटकैर्गवाक्षैरलङ्कृतं दिक्षु च लोकपालैः ॥५७॥
अच्छिन्नरज्जुं दृढकाष्ठमातृकं सुश्लिष्टयन्त्रार्गलपादतोरणम्।
उत्थापयेल्लक्ष्म सहस्रचक्षुषःसारद्रुमाभग्नकुमारिकान्वितम् ॥५८॥

माया—आतपत्र, ध्वज, दर्पण, लाङ्गल, अर्द्धचन्द्र, अनेक तरह की मालायें, केला का पेड़, गन्ना तथा दिक्पालों अर्थात् इन्द्र, अग्नि, यम, नैर्ऋत, वरुण, वायु, कुबेर तथा महादेव से सम्पन्न, अखण्डित, आठ प्रकार के रस्सियों से बँधा हुआ, मजबूत लकड़ी से बना, द्विमातृका युक्त, दृढ़ बँधा हुआ, यन्त्रार्गल युक्त और सार सम्पन्न वृक्षों से बनी कुमारिकायें आदि से संम्पन्न इन्द्र के लक्ष्म (ध्वज) को उठना चाहिए॥५७-५८॥

ध्वजोत्थापन विधि कथन

अविरतजनरावं मङ्गलाशीःप्रमाणैः पटुपटहमृदङ्गैः शङ्खभेर्यादिभिश्च।
श्रुतिविहितवचोभिः पापठद्भिश्च विप्रैरशुभविहतशब्दं केतुमुत्थापयेच्च ॥५९॥

माया—माङ्गलिक, आशीर्वाद, प्रणाम आदि प्रसङ्गों के बीच निरन्तर जन-घोषों से सम्पन्न, ढ़ोल, मृदङ्ग, शङ्ख, भेरी आदि के ध्वनियों से युक्त वैदिक मन्त्रोचारण करते हुए ब्राह्मणों के साथ माङ्गलिक ध्वनियों से युक्त ध्वज को राजा द्वारा उठाया जाना चाहिए॥५९॥

ध्वजोत्थापन योग्य राजा का लक्षण कथन

फलदधिघृतलाजाक्षौद्रपुष्पाग्रहस्तैः प्रणिपतितशिरोभिस्तुष्टवद्भिश्च पौरैः।
वृतमनिमिषभर्तुःकेतुमीशःप्रजानामरिनगरनताग्रंकारयेद् द्विड्बधाय ॥६०॥

माया—फल, दधि, घृत, लाजा, मधु, फूल आदि हाथ में रखकर नतमस्तक

हुए तथा माङ्गलिक उद्घोषणाओं से सम्पन्न नगरवासी जनों के साथ प्रजापालक राजा को अनिमिषों या देवताओं के भर्त्ता इन्द्र के ध्वज को शत्रुओं के वध निमित्त शत्रु-नगर की दिशा में नत करना चाहिए।।६०।।

इन्द्रध्वज शुभ उत्थापन कथन

नातिद्रुतं न च विलम्बितमप्रकम्पमध्वस्तमाल्यपिटकादिविभूषणञ्च ।
उत्थानमिष्टमशुभंयदतोऽन्यथास्यात्तच्छान्तिभिर्नरपतेःशमयेत् पुरोधाः ।।६१।।

भाषा—न त्वरित, अबिलम्ब, अकम्पित, अनष्ट माला, आभूषण आदि से युक्त ध्वज का उत्थापन शुभ है। इन लक्षणों से भिन्न लक्षण सम्पन्न ध्वज का उत्थापन शुभ नहीं होता है।।६१।।

ध्वजोत्थापन से शुभाशुभ फल कथन

क्रव्यादकौशिककपोतककाककङ्कैः केतुस्थितैर्महदुशन्ति भयं नृपस्य ।
चाषेण चापि युवराजभयं वदन्ति श्येनो विलोचनभयं निपतन् करोति ।।६२।।

छत्रभङ्गपतने नृपमृत्युस्तस्करान् मधु करोति निलीनम् ।
हन्ति चाप्यथ पुरोहितमुल्कापार्थिवस्य महिषीमशनिश्च ।।६३।।

राज्ञीविनाशं पतिता पताका करोत्यवृष्टिं पिटकस्य पातः ।
मध्याग्रमूलेषु च केतुभङ्गो निहन्ति मन्त्रिक्षितिपालपौरान् ।।६४।।

धूमावृते शिखिभयं तमसा च
मोहो व्यालैश्च भग्नपतितैर्न भवन्त्यमात्याः ।
ग्लायन्त्युदक्प्रभृति च क्रमशो द्विजाद्यान्
भङ्गे तु बन्धकिबधः कथितः कुमार्याः ।।६५।।

रज्जूत्सङ्गच्छेदने बालपीडा राज्ञो मातुः पीडनं मातृकायाः ।
यद्यत् कुर्युश्चारणा बालका वा तत्तत्तादृग्भावि पापं शुभं वा ।।६६।।

भाषा—इन्द्रध्वज के ऊपर मांसाहारी पक्षी, उल्लू, कबूतर, कौआ या श्वेत वर्णा चिल्ह के बैठ जाने से राजा को अतिभय; नीलकण्ठ के बैठने से युवराज को भय और बाज पक्षी के बैठ जाने पर नेत्र भय होता है।

उस ध्वज का छत्र भग्न होने से राजा का मरण, मधुमक्खियों की छत्ता लगाने से चोर का प्रकोप, उल्का गिरने से पुरोहित की हानि तथा उस ध्वज पर वज्रपात होने से पटरानी का नाश होता है।

उस ध्वज का पताकापतन होने से रानी की हानि; पिटक गिरने से अनावृष्टि; ध्वज के मध्य भाग भग्न होने से मन्त्री जन का नाश; उसका अग्रभाग भग्न होने से राजा की हानि; ध्वज के मूल से ही भग्न हो जाने से नगर वासिजनों की हानि होती है।

धूम्र से ध्वज के आच्छादित होने पर अग्नि भय; अन्धकार से युक्त होने पर विकलता तथा सर्प के दब कर वहाँ मरने से अथवा उसके पतन से मन्त्रिगणों की हानि होती है।

ध्वज के उत्तर दिशा में किसी प्रकार का उपद्रव होने से ब्राह्मण को; पूर्व में होने पर क्षत्रियों को, दक्षिण में होने पर वैश्यों को तथा पश्चिम दिशा में उपद्रव होने पर शूद्रों को पीड़ा पहुँचती है। शक्र कुमारी के भग्न हो जाने से नगर के वेश्याओं का सर्वथा नाश हो जाता है।

ध्वजोत्थापन काल में रस्सी के कहीं से भी भग्न हो जाने से बालकों की तथा मातृका अर्थात् तोरण द्वार का पार्श्व स्थित लकड़ी के भग्न होने पर राजमाता की हानि होती है।

इन्द्रध्वज के नजदीक चारणजन तथा बालकों की चेष्टाओं से आगत शुभ अथवा अशुभ फल का ज्ञान करना चाहिए।।६२-६६।।

विसर्जन करने की विधि कथन

दिनचतुष्टयमुत्थितमर्चितं समभिपूज्य नृपोऽहनि पञ्चमे।
प्रकृतिभिः सह लक्ष्म विसर्जयेद्बलभिदः स्वबलाभिविवृद्धये।।६७।।

माया—अपने बल आदि की अभिवृद्धि के लिए चार दिन पर्यन्त पूजित खड़े किये गए इन्द्रध्वज का मन्त्रियों के सहित राजा को पञ्चम दिन (प्रतिपदा के) अन्तिम पूजनार्चन कर विसर्जन करना चाहिए।।६७।।

इन्द्रध्वज विधान कर्त्ता का प्रभाव कथन

उपरिचरवसुप्रवर्तितं नृपतिभिरप्यनुसन्ततं कृतम्।
विधिमिममनुमन्य पार्थिवो न रिपुकृतं भयमाप्नुयादिति।।६८।।

माया—उपरिचर वसु से प्रवर्तित तथा हमेशा राजाजनों से सम्पादित इसकी विधि को करने वाला राजा शत्रुकृत समस्त प्रकार के भय से मुक्त रहता है।।६८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामिन्द्रध्वजसम्पन्नामाध्यायस्त्रिचत्वारिंशः।।४३।।

□□□

अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः-४४

नीराजन निरूपणम्

यहाँ पहले काल नियम प्रदर्शनार्थ कथन

भगवति जलधरपक्ष्मक्षपाकरार्केक्षणे कमलनाभे ।
उन्मीलयति तुरङ्गमकरिनरनीराजनं कुर्यात् ।।१।।

माया—जिस परम-ऐश्वर्य सम्पन्न भगवान् नारायण के पलक रूप में मेघ और नेत्र रूप में सूर्य व चन्द्र हैं, उसके नेत्र खोलने के पश्चात् घोड़ा, हाथी और मनुष्यों को नीराजन अर्थात् जल स्पर्श करना चाहिए।।१।।

नीराजन काल कथन

द्वादश्यामष्टम्यां कार्तिकशुक्लस्य पञ्चदश्यां वा ।
आश्वयुजे वा कुर्यान्नीराजनसंज्ञितां शान्तिम् ।।२।।

माया—कार्तिक अथवा आश्विन् मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी, अष्टमी, पूर्णिमा अथवा आमावास्या तिथि के दिन नीराजन संज्ञक शान्ति कर्म का सम्पादन करना चाहिए।।२।।

तोरण निर्माण विधि कथन

नगरोत्तरपूर्वदिशि प्रशस्तभूमौ प्रशस्तदारुमयम् ।
षोडशहस्तोच्छ्रायं दशविपुलं तोरणं कार्यम् ।।३।।

माया—नगर के उत्तर-पूर्व दिशा अर्थात् ईशानकोण में उत्तम भूमि पर उत्तम वृक्ष से सोलह हाथ ऊँचा तथा दश हाथ चौड़ा एक तोरण का निर्माण करना चाहिए।।३।।

शान्ति-गृह लक्षण कथन

सर्जोदुम्बरककुभशाखामयशान्तिसद्म कुशबहुलम् ।
वंशविनिर्मितमत्स्यध्वजचक्रालङ्कृतद्वारम् ।।४।।

माया—सर्ज अर्थात् विजयसार, उदुम्बर अर्थात् गूलर अथवा अर्जुन वृक्ष की शाखाओं से युक्त और बाँसों से निर्मित मत्स्य, ध्वज और चक्र से अलङ्कृत शान्तिगृह बनाना चाहिए।।४।।

अश्व दीक्षा का विधान कथन

प्रतिसरया तुरगाणां भल्लातकशालिकुष्ठसिद्धार्थान् ।
कण्ठेषु निबध्नीयात् पुष्ट्यर्थं शान्तिगृहगाणाम् ।।५।।

माया—शान्ति गृह में सबकी पुष्टि के लिए घोड़ों के गले में प्रतिसरा अर्थात् कुङ्कुम रञ्जित या पीत सूत्र से भिलावा, शालीधान्य विशेष, कूठ और श्वेत सरसों को बाँधना श्रेयस्कर है।।५।।

शान्ति का विधान कथन

रविवरुणविश्वदेवप्रजेशपुरुहूतवैष्णवैर्मन्त्रैः ।
सप्ताहं शान्तिगृहे कुर्याच्छान्तिं तुरङ्गाणाम् ।।६।।

माया—शान्तिगृह में सूर्य, वरुण, विश्वेदेव, ब्रह्मा, इन्द्र और विष्णु के मन्त्रों से सात दिन तक घोड़ों की शान्ति कर्म करना चाहिए।।६।।

तत्पश्चात् घोड़े के साथ व्यवहार कथन

अभ्यर्चिता न परुषं वक्तव्या नापि ताडनीयास्ते ।
पुण्याहशङ्खतूर्यध्वनिगीतरवैर्विमुक्तभयाः ।।७।।

माया—उस पुण्याहवाचन, शङ्ख, भेरी की ध्वनि, गीत के स्वरों आदि से भय हीन हुआ और सुपूजित घोड़ा को भयभीत अथवा चाबुक आदि से किसी प्रकार भी उसका ताडन नहीं करना चाहिए।।७।।

सप्ताह पश्चात् के कर्त्तव्य कथन

प्राप्तेऽष्टमेऽह्नि कुर्यादुदङ्मुखं तोरणस्य दक्षिणतः ।
कुशचीरावृतमाश्रममग्निं पुरतोऽस्य वेद्यां च ।।८।।

माया—जिस समय सात दिन व्यतीत होकर आठवाँ दिन प्राप्त हो, तो तोरण के दक्षिण दिशा से उत्तराभिमुख स्थित वेदी में कुशा, चीर या वल्कलादि से ढ़की हुई आश्रम की अग्नि का स्थापन करना चाहिए।।८।।

सम्भारों का लक्षण कथन

चन्दनकुष्ठसमङ्गाहरितालमनःशिलाप्रियङ्गुवचाः ।
दन्त्यमृताञ्जनरजनीसुवर्णपुष्प्यग्निमन्थाश्च ।।९।।
श्वेतां सपूर्णकोशां कटम्भरात्रायमाणसहदेवीः ।
नागकुसुमं स्वगुप्तां शतावरीं सोमराजीं च ।।१०।।
कलशेष्वेताः कृत्वा सम्भारानुपहरेद्बलिं सम्यक् ।
भक्ष्यैर्नानाकारैर्मधुपायसयावकप्रचुरैः ।।११।।

माया—चन्दन, कूठ, मंजीठ, हरिताल, मैनशील, कंगनी, वच, दन्ती, गुरुच, अञ्जन, हल्दी, स्वर्णपुष्पी, अग्निमन्था, श्वेता (अपराजिता), पूर्णकोशा, महाश्वेता, त्रायमाण (चिरायता फल), सहदेवी, नागपुष्प, स्वगुप्ता, शतावरी, सोमवल्ली आदि औषधियों को समान मात्रा में लेकर पूर्ण कलश में देकर शहद, पायस, यावक (कुरथी) आदि से युक्त विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों के साथ बलि अर्थात् नैवेद्य देना चाहिए।।९-११।।

सम्भारों का और भी लक्षण कथन

खदिरपलाशोदुम्बरकाश्मर्यश्वत्थनिर्मिताः समिधः ।
स्रुक् कनकाद्रजताद्वा कर्तव्या भूतिकामेन ।।१२।।

भाषा—खैर, ढ़ाक, गूलर, गम्भारी, पीपल की लकड़ी को समिधा बनाकर धन-धान्य-सम्पत्ति चाहने वाले राजा को सोना अथवा चाँदी की स्रवा निर्मित करनी चाहिए॥१२॥

तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन

पूर्वाभिमुखः श्रीमान् वैयाघ्रे चर्मणि स्थितो राजा ।
तिष्ठेदनलसमीपे तुरगभिषग्दैववित्सहितः ।।१३।।

भाषा—व्याघ्र चर्म पर पूर्वाभिमुख हो, अग्नि के पास में घोड़ा, वैद्य, ज्योतिषी के साथ श्रीमन्त राजा को बैठना चाहिए॥१३॥

दैवज्ञ के कर्त्तव्य कथनयात्रायां

यात्रायां यदभिहितं ग्रहयज्ञविधौ महेन्द्रकेतौ च ।
वेदीपुरोहितानललक्षणमस्मिंस्तदवधार्यम् ।।१४।।

भाषा—ग्रन्थकार के अनुसार उनसे निर्मित ग्रन्थ यात्रा नाम के ग्रहयज्ञ विधि के प्रसङ्ग में और इन्द्रध्वज लक्षणाध्याय में भी जो वेदी, पुरोहित, अग्नि आदि के लक्षण बताये गए हैं, उन्हें इस अध्याय में भी जोड़कर जानना चाहिए॥१४॥

तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन

लक्षणयुक्तं तुरगं द्विरदवरं चैव दीक्षितं स्नातम् ।
अहतसिताम्बरगन्धस्रग्धूमाभ्यर्चितं कृत्वा ।।१५।।
आश्रमतोरणमूलं समुपनयेत् सान्त्वयन् शनैर्वाचा ।
वादित्रशङ्खपुण्याहनिःस्वनापूरितदिगन्तम् ।।१६।।

भाषा—आगे कहे हुए लक्षणों से युक्त शोभन घोड़ा और हाथी को स्नान कराकर अक्षत, श्वेत वस्त्र, माला, धूप आदि से पूजन कर विविध प्रकार के वाद्य तथा पुण्याहवाचनों से संयुक्त अपने आश्रम के पास वाले तोरण के समीप मधुर शब्दों से सान्त्वना देते हुए धीरे-धीरे लाना चाहिए॥१५-१६॥

घोड़ा और हाथी की चेष्टा कथन

यद्यानीतस्तिष्ठेद्दक्षिणचरणं हयः समुत्क्षिप्य ।
स जयति तदा नरेन्द्रः शत्रूंश्चिराद्विना यत्नात् ।।१७।।
त्रस्यन्नेष्टो राज्ञः परिशेषं चेष्टितं द्विपहयानाम् ।
यात्रायां व्याख्यातं तदिह विचिन्त्यं यथायुक्ति ।।१८।।

भाषा—यदि राजा द्वारा लाया हुआ घोड़ा (अथवा हाथी भी उपलक्षण से ग्रहण है) अपना दक्षिण पैर उठाकर खड़ा रहता हो, तो राजा विना श्रम के ही शीघ्र अपने शत्रु

को परस्त करने वाला होता है। घोड़ा के डर जाने से राजा का अनिष्ट ही होता है। हाथी और घोड़े की शेष अन्य चेष्टाओं का फल मैंने (ग्रन्थकार ने) अपने यात्रा नाम के ग्रन्थ में जैसा कहा है, वैसे ही यहाँ भी उसे युक्तिपूर्वक जानना चाहिए॥१७-१८॥

तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन

पिण्डमभिमन्त्र्य दद्यात् पुरोहितो वाजिने स यदि जिघ्रेत्।
अश्नीयाद्वा जयकृद्विपरीतोऽतोऽन्यथाभिहितः ॥१९॥

माया—पुरोहित द्वारा अन्न का पिण्ड बनाकर और उसे अभिमन्त्रित कर घोड़े के समक्ष प्रस्तुत करने पर उस समय घोड़ा के द्वारा उस अन्न पिण्ड को सूँघने अथवा कुछ अंश खाने पर राजा की विजय होगी, अन्यथा पराजय, ऐसा समझना चाहिए॥१९॥

नीराजन के प्रकार कथन

कलशोदकेषु शाखामाप्लाव्यौदुम्बरीं स्पृशेत् तुरगान्।
शान्तिकपौष्टिकमन्त्रैरेवं सेनां सनृपनागाम् ॥२०॥

माया—घोड़ा, राजा, हाथी, सेना आदि को गूलर की एक छोटी डाली से जिसको कलश के जल में भिगोकर शान्ति और पौष्टिक मन्त्रों से स्पर्श या सिक्त करना चाहिए॥२०॥

तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन

शान्तिं राष्ट्रविवृद्ध्यै कृत्वा भूयोऽभिचारकैर्मन्त्रैः।
मृण्मयमरिं विभिन्द्याच्छूलेनोरःस्थले विप्रः ॥२१॥

माया—पुनः ब्राह्मण को राष्ट्र की अभिवृद्धि के निमित्त शान्तिपाठ के साथ अभिचार कर्म में प्रयुक्त आथर्व-मन्त्रों का उच्चारण कर मिट्टी की बनी शत्रु की मूर्त्ति की छाती को तेज शूल से वेधित करनी चाहिए॥२१॥

उसके बाद के कर्त्तव्य कथन

खलिनं हयाय दद्यादभिमन्त्र्य पुरोहितस्ततो राजा।
आरुह्योदक्पूर्वां यायान्नीराजितः सबलः ॥२२॥

माया—तदनन्तर ब्राह्मण खलिन अथवा लगाम को मन्त्रसिक्त कर घोड़ा के मुँह में डाल दें। तत्पश्चात् नीराजन कर राजा को उस पर स्थित हो, सेनाओं के साथ ईशान कोण की ओर प्रस्थान करना चाहिए॥२२॥

राजा के गमन का प्रकार कथन

मृदङ्गशङ्खध्वनिहृष्टकुञ्जरस्रवन्मदामोदसुगन्धमारुतः।
शिरोमणिप्रान्तचलत्प्रभाचयैर्ज्वलन् विवस्वानिव तोयदात्यये ॥२३॥

हंसपङ्क्तिभिरितस्ततोऽद्रिराट् सम्पतद्भिरिव शुक्लचामरैः ।
मृष्टगन्धपवनानुवाहिभिर्धूयमानरुचिरस्त्रगम्बरः ।।२४।।
नैकवर्णमणिवज्रभूषितैर्भूषितो मुकुटकुण्डलाङ्गदैः ।
भूरिरत्नकिरणानुरञ्जितः शक्रकार्मुकरुचिं समुद्वहन् ।।२५।।
उत्पतद्भिरिव खं तुरङ्गमैर्दारयद्भिरिव दन्तिभिर्धराम् ।
निर्जितारिभिरिवामरैर्नरैः शक्रवत् परिवृतो व्रजेन्नृपः ।।२६।।

माया—मृदङ्ग, शङ्ख आदि के मधुर ध्वनियों से प्रमुदित हाथियों के झरने वाले मदजलों की सुगन्ध से युक्त वायु अर्थात् शारदीय गमन शील सुगन्ध युक्त वायु और मुकुटस्थ मणियों के अन्तभाग में चञ्चल किरणों से युक्त शारद सूर्य के समान राजा या सुगन्धयुक्त पवन का सेवन करने वाले श्वेत चामरों से कल्पित सुन्दर माला और वस्त्र सम्पन्न राजा अथवा अनेक वर्ण के रत्न व हीरा से आच्छादित मुकुट, कुण्डल व बाजू से विभूषित होने से इन्द्रधनुष की आभा को धारण किया हुआ राजा अथवा दौड़ रहे घोड़े, पृथ्वी को भेदित करता हुआ हाथी व शत्रु को जीतने वाले मनुष्यों के साथ जैसे देवताओं से घिरे इन्द्र के सदृश राजा को गमन करना चाहिए।।२३-२६।।

राजा के गमन का और प्रकार कथन

सवज्रमुक्ताफलभूषणोऽथवा सितस्रगुष्णीषविलेपनाम्बरः ।
धृतातपत्रो गजपृष्ठमाश्रितो घनोपरीवेन्दुतले भृगोः सुतः ।।२७।।

माया—अथवा हीरा, मोती आदि से युक्त सफेद माला, सफेद पगड़ी, सफेद चन्दन, और सफेद वस्त्र से सम्पन्न, छत्रधारण किये तथा हाथी पर विराजमान राजा को बादल के ऊपर और चन्द्र के नीचे शुक्र के समान गमन करना चाहिए।।२७।।

सैन्य चेष्टा कथन

सम्प्रहृष्टनरवाजिकुञ्जरं निर्मलप्रहरणांशुभासुरम् ।
निर्विकारमरिपक्षभीषणं यस्य सैन्यमचिरात् स गां जयेत् ।।२८।।

माया—जब किसी राजा के पास प्रमुदित प्रजागण, घोड़े और हाथियों से सम्पन्न, विमल खड्ग आदि से सुसज्जित, विकार रहित व शत्रु के लिए भयंकर सेना होते हैं, वह राजा जल्दी ही सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतने में सफल होता है।।२८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां नीराजनविधिर्नामाध्यायस्चतुश्चत्वारिंशः।।४४।।

□□□

अथ पञ्चचत्वाशिंोऽध्यायः-४५

खञ्जनकलक्षण विचारः

यहाँ पहले आगम प्रदर्शनार्थ कथन

खञ्जनको नामायं यो विहगस्तस्य दर्शने प्रथमे।
प्रोक्तानि यानि मुनिभिः फलानि तानि प्रवक्ष्यामि ।।१।।

भाषा—खञ्जन संज्ञक पक्षी के प्रथम दर्शन होने के प्रसङ्ग का जैसा मुनिजनों ने फल बताये हैं, उनको यहाँ पर भी मैं (ग्रन्थकार) कहता हूँ।।१।।

खञ्जन के चार प्रकार व फल कथन

स्थूलोभ्युन्नतकण्ठः कृष्णगलो भद्रकारको भद्रः।
आकण्ठमुखात् कृष्णः सम्पूर्णः पूरयत्याशाम् ।।२।।
कृष्णो गलेऽस्य बिन्दुः सितकरटान्तः स रिक्तकृद्रिक्तः।
पीतो गोपीत इति क्लेशकरः खञ्जनो दृष्टः ।।३।।

भाषा—स्थूल शरीर, अभ्युन्नत और कृष्ण गला युक्त खञ्जन पक्षी की भद्रसंज्ञा है, जिसका प्रथम दर्शन शुभकारक होता है। मुख से कण्ठ पर्यन्त कृष्ण वर्ण वाला खञ्जन पक्षी की सम्पूर्ण संज्ञा है, जिसका प्रथम दर्शन सम्पूर्ण अभिलाषाओं को पूर्ण करने वाला होता है। गला में कृष्णवर्ण के बिन्दु तथा सफेद कपाल वाला खञ्जन पक्षी की रिक्ता संज्ञा है, जिसका प्रथम दर्शन से सञ्चित आदि को रिक्त या खाली करने वाला होता है। पीतवर्ण के खञ्जन की गोपीत संज्ञा है, जिसके दर्शन से क्लेश होता है।।२-३।।

स्थान के अनुसार खञ्जन दर्शन फल कथन

अथ मधुरसुरभिफलकुसुमतरुषु सलिलाशयेषु पुण्येषु।
करितुरगभुजगमूर्ध्नि प्रासादोद्यानहर्म्येषु ।।४।।
गोगोष्ठसत्समागमयज्ञोत्सवपार्थिवद्विजसमीपे।
हस्तितुरङ्गमशालाच्छत्रध्वजचामराद्येषु ।।५।।
हेमसमीपसिताम्बरकमलोत्पलपूजितोपलिप्तेषु।
दधिपात्रधान्यकूटेषु च श्रियं खञ्जनः कुरुते ।।६।।

भाषा—मधुर व सुगन्धित फल व फूलों से सम्पन्न वृक्ष के ऊपर; पवित्र जलाशय में हाथी, घोड़ा अथवा सर्पों के मस्तक के ऊपर; देवालय, फूलवाड़ी अथवा कोठा के ऊपर; गाय, गोठ पर; सज्जनों के समागम स्थल; यज्ञ, विवाह आदि उत्सव

स्थल; राजा अथवा ब्राह्मणों के पास में; हाथी, घोड़ा, छत्र, ध्वजा, चामर आदि पर; स्वर्ण के समीप; कमल, नीलकमल, पूजित अथवा लिये हुए स्थान पर; दही के पात्र या धान्य के ढ़ेर पर खञ्जन पक्षी के दीखने से देखने वाले जन का कल्याण होता है।।४-६।।

स्थान के अनुसार और भी खञ्जन दर्शन फल कथन

पङ्के स्वाद्वन्नाप्तिर्गोरससम्पच्च गोमयोपगते ।
शाद्वलगे वस्त्राप्तिः शकटस्थे देशविभ्रंशः ।।७।।
गृहपटलेऽर्थभ्रंशो बध्रे बन्धोऽशुचौ भवति रोगः ।
पृष्ठे त्वजाविकानां प्रियसङ्गममावहत्याशु ।।८।।

भाषा—कीचड़ में स्थित खञ्जन का दर्शन होने से दर्शनार्थी को स्वादिष्ट भोजन मिलता है। गोबर के ऊपर स्थित होने पर दूध, दही, घृत आदि की उपलब्धि होती है। दूब पर दीखने से वस्त्र लाभ; गाड़ी पर दीखने से देश का नाश; घर की छत पर दीखने से धन का नाश; चमड़े की निर्मित छिद्र वाली वस्तु पर दीखने से बन्धन; अपवित्र स्थान पर दीखने से रोग, छाग अथवा भेड़ के ऊपर दीखने से शीघ्र मित्र समागम होता है।।७-८।।

स्थानवश खञ्जन दर्शन का अशुभ फल कथन

महिषोष्ट्रगर्दभास्थिश्मशानगृहकोणशर्कराट्टस्थः ।
प्राकारभस्मकेशेषु चाशुभो मरणरुग्भयदः ।।९।।

भाषा—महिष, उँट, गदहा, श्मशान, घर का कोण, मृत्तिका का ढ़ेर, मिट्टी की टीला, महल, भस्म, केश आदि पर खञ्जन का दर्शन होने से मरण, रोग, भय आदि प्रकार के अशुभ फल होते हैं।।९।।

खञ्जन दर्शन का शुभाशुभ फल कथन

पक्षौ धुन्वन्नशुभः शुभः पिबन् वारि निम्नगासंस्थः ।
सूर्योदये प्रशस्तो नेष्टफलः खञ्जनोऽस्तमये ।।१०।।

भाषा—खञ्जन अपने दोनों पंखों को हिलाता हुआ दीखे, तो पर भी शुभ फल नहीं होता है। नदी में पानी पीता हुआ दीखने पर शुभ होता है। यहाँ पाठान्तर 'वारिवाहस्थः' को मानने पर पानी बहने के स्थान या प्रदेश में' अर्थ ग्रहण करना चाहिए। सूर्योदय के समय खञ्जन के दीखने से शुभ, परन्तु अस्त समय में दीखने पर अशुभ फल होता है।।१०।।

खञ्जन दर्शन से राजा को शुभ फल कथन

नीराजने निवृत्ते यया दिशा खञ्जनं नृपो यान्तम् ।
पश्येत्तया गतस्य क्षिप्रमरातिर्वशमुपैति ।।११।।

भाषा—नीराजन करने के पश्चात् खञ्जन को जिस-किसी भी दिशा में जाते हुए

राजा के देखने से उस दिशा में जाकर राजा अपने शत्रु को वश में करने में सफल होता है॥११॥

शास्त्र प्रति विश्वास उत्पन्न कराने योग्य कथन

तस्मिन्निधिर्भवति मैथुनमेति यस्मिन्
यस्मिंस्तु छर्दयति तत्र तलेऽस्ति काचम्।
अङ्गारमप्युपदिशन्ति पुरीषणेऽस्य
तत्कौतुकापनयनाय खनेद् धरित्रीम् ॥१२॥

माया—जहाँ खञ्जन मैथुन करता है, उस स्थान के नीचे निधि (धन कोष) होता है। खञ्जन जहाँ पर वमन करता है, उस स्थान के नीचे काँच का खान तथा जहाँ वह बीट करता है, उसके नीचे कोयला खान होता है। इस कौतुकपूर्ण घटना की प्रतीक्षा के लिए जमीन को अवश्य खोदकर देखना चाहिए॥१२॥

खञ्जनवश अन्य शुभाशुभ फल कथन

मृतविकलविभिन्नरोगितः स्वतनुसमानफलप्रदः खगः।
धनकृदभिनिलीयमानको वियति च बन्धुसमागमप्रदः ॥१३॥

माया—मरे हुए खञ्जन के दीखने पर मृत्यु, विकल के दीखने पर विकलता, रुग्ण दीखने पर रोग आदि देखने वालों के लिए होता है। घर में प्रवेश करते समय सम्मुख खञ्जन के दीखने पर धन लाभ; आकाश में उड़ता हुआ दीखने पर बन्धुओं का सम्मान होता है॥१३॥

शुभफलद खञ्जन दर्शन के बाद का विधान कथन

नृपतिरपि शुभं शुभप्रदेशे खगमवलोक्य महीतले विदध्यात्।
सुरभिकुसुमधूपयुक्तमर्घं शुभमभिनन्दितमेवमेति वृद्धिम् ॥१४॥

माया—शुभ स्थान या प्रदेश में शुभ लक्षणों से युक्त खञ्जन को देखकर भी सुगन्धि युक्त पुष्प तथा धूप के साथ राजा को अर्घ्य देना चाहिए। इस प्रकार खञ्जन दर्शन के शुभफल में और वृद्धि होती है व सम्मान बढ़ता है॥१४॥

अशुभ फलद खञ्जन दर्शन के पश्चात् का विधान कथन

अशुभमपि विलोक्य खञ्जनं द्विजकुरुसाधुसुरार्चने रतः।
न नृपतिरशुभं समाप्नुयान्न यदि दिनानि च सप्त मांसभुक् ॥१५॥

माया—अशुभ फलद स्थिति में खञ्जन का दर्शन होने पर राजा को ब्राह्मण, गुरु, सज्जन अथवा देवता के पूजन में व्यस्त हो जाने से उनको अशुभ फल नहीं होता

है। लेकिन सात दिन पर्यन्त मांसाहार नहीं करने पर ------अग्रोक्त श्लोक से सम्बन्ध है॥१५॥

फल प्राप्ति का काल कथन

आवर्षात् प्रथमे दर्शने फलं प्रतिदिनं तु दिनशेषात् ।
दिक्स्थानमूर्तिलग्नर्क्षशान्तदिप्तादिभिश्चोह्यम् ॥१६॥

माया—पूर्व श्लोक से आगे पढ़ें-खञ्जन के प्रथम दर्शन का फल एक वर्ष बाद होता है। उसके बाद के दर्शन का फल उसी दिन होता है। दिशा, स्थान, कायाकृति, लग्न, नक्षत्र, शान्त व दीप्त दिशा आदि के अनुसार भी शुभाशुभ फल का विवेचन अपने विवेक के अनुसार भी करना चाहिए॥१६॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां खञ्जनकलक्षणाध्यायः पञ्चचत्वारिंशः॥४५॥

□□□

अथ षट्चत्वारिंशोऽध्यायः-४६

उत्पात विचारः

आगम वस्तु प्रदर्शनार्थ कथन

यानत्रेरुत्पातान् गर्गः प्रोवाच तानहं वक्ष्ये।
तेषां संक्षेपोऽयं प्रकृतेरन्यत्वमुत्पातः ॥१॥

माया—जिन उत्पातों का उल्लेख अत्रिजी के समक्ष मुनि गर्ग ने किया था, उनका सारांश रूप मैं (ग्रन्थकार) यहाँ प्रस्तुत करता हूँ। स्वभाव से विपरीत घटना होना ही उत्पात है, यही इसका संक्षिप्त अर्थ है॥१॥

उत्पात होने में कारणों का कथन

अपचारेण नराणामुपसर्गः पापसञ्चयाद्भवति।
संसूचयन्ति दिव्यान्तरिक्षभौमास्त उत्पाताः ॥२॥

माया—मनुष्यों के अविनय पूर्ण व्यवहार से जो पाप एकत्रित होता है, उससे ही उपद्रव होता है। दिव्य, आन्तरिक्ष और भौम; इन तीन प्रकार के उत्पात उन उपद्रवों को विधिवत् संसूचित करते हैं॥२॥

उत्पात होने में और कारणों का कथन

मनुजानामपचारादपरक्ता देवताः सृजन्त्येतान्।
तत्प्रतिघाताय नृपः शान्तिं राष्ट्रे प्रयुञ्जीत ॥३॥

माया—मनुष्यों के अविनयपूर्ण व्यवहार से देवतागण अप्रसन्न होकर उन उत्पातों को उत्पन्न करते हैं। अत: उन उत्पातों के दुष्प्रभाव के निवारण हेतु राजाजनों को अपने-अपने राज्यों में शान्ति कार्य कराना चाहिए॥३॥

दिव्य, आन्तरिक्ष और मौन उत्पातों का लक्षण कथन

दिव्यं ग्रहर्क्षवैकृतमुल्कानिर्घातपवनपरिवेषाः।
गन्धर्वपुरपुरन्दरचापादि यदान्तरिक्षं तत् ॥४॥
भौमं चरस्थिरभवं तच्छान्तिभिराहतं शममुपैति।
नाभसमुपैति मृदुतां शाम्यति नो दिव्यमित्येके ॥५॥

सूर्यादि ग्रह और अश्विनी आदि २७ नक्षत्रों का विकार युक्त होने का नाम दिव्य उत्पात है। उल्का, निर्घात, वायु की विकृति, सूर्य व चन्द्र मण्डल गत परिवेष, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष आदि के साथ रोहित, ऐरावत, दण्ड और परिघ उत्पातों का नाम

भी आन्तरिक्ष उत्पात है। गतिशील वस्तु का स्थिर और स्थिर वस्तु का गतिशील होने का नाम भौम उत्पात है। इस भौम उत्पात की शान्ति होने से उसका दुष्प्रभाव नष्ट हो जाता है। आन्तरक्षि उत्पात की शान्ति से उसका दुष्प्रभाव कम हो जाता है। एवं दिव्य उत्पात की शान्ति से उसका दुष्प्रभाव नष्ट नहीं होता है। ऐसा कोई आचार्य ने कहते हैं।।४-५।।

स्वमत प्रदर्शनार्थ कथन

दिव्यमपि शममुपैति प्रभूतकनकान्नगोमहीदानैः ।
रुद्रायतने भूमौ गोदोहात् कोटिहोमाच्च ।।६।।

भाषा—दिव्य उत्पात की शान्ति भी प्रचूर स्वर्ण, अन्न, गाय, पृथ्वी आदि के दान करने से होती है, तो फिर आन्तरक्षि और भौम उत्पात की बात ही क्या? अर्थात् उपरोक्त दान से इन दोनों उत्पातों की शान्ति अवश्य ही हो जाती है। इस प्रकार शिवालय की भूमि पर गोदोहन करने और कोटि संख्या तुल्य हवन कार्य के होने से दिव्य उत्पात की शान्ति हो जाती है।।६।।

दैव उत्पात के फल का स्थान कथन

आत्मसुतकोशवाहनपुरदारपुरोहितेषु लोके च ।
पाकमुपयाति दैवं परिकल्पितमष्टधा नृपतेः ।।७।।

भाषा—राजा स्वशरीर, पुत्र, कोश, वाहन, नगर, स्त्री, पुरोहित, राज्य आदि आठ प्रकार से कहे हुए दैव उत्पात के फल को प्राप्त करता है।।७।।

उत्पात प्रदर्शनार्थ कथन

अनिमित्तभङ्गचलनस्वेदाश्रुनिपातजल्पनाद्यानि ।
लिङ्गार्चायतनानां नाशाय नरेशदेशानाम् ।।८।।

भाषा—शिवलिङ्ग, देव प्रतिमा तथा देवस्थानों का विना किसी कारण के फट जाना, कम्पित होना, उसमें पसीना आना, उनका रोना, गिरना, उनमें शब्द होना, वमन करना या खिसकना आदि उत्पात राजा और उसके देशों का नाश करने के लिए होता है।।८।।

उत्पात प्रदर्शनार्थ और कथन

दैवतयात्राशकटाक्षचक्रयुगकेतुभङ्गपतनानि ।
सम्पर्यासनसादनसङ्गश्च न देशनृपशुभदाः ।।९।।

भाषा—देव स्थानों की यात्रा के समय गाड़ी की धुरी, पहिया, जुआ अथवा इन्द्रध्वज का टूट जाना, गिरना, परिवर्तित होना, चिपक जाना आदि आदि उत्पात राजा और उसके देश के लिए शुभकारक नहीं होता है।।९।।

विकारयुक्त वस्तु से अशुभ फल कथन

ऋषिधर्मपितृब्रह्मप्रोद्भूतं वैकृतं द्विजातीनाम्।
यद्रुद्रलोकपालोद्भवं पशूनामनिष्टं तत् ॥१०॥
गुरुसितशनैश्चरोत्थं पुरोधसां विष्णुजं च लोकानाम्।
स्कन्दविशाखसमुत्थं माण्डलिकानां नरेन्द्राणाम् ॥११॥
वेदव्यासे मन्त्रिणि विनायके वैकृतं चमूनाथे।
धातरि सविश्वकर्मणि लोकाभावाय निर्दिष्टम् ॥१२॥
देवकुमारकुमारीवनिताप्रेष्येषु वैकृतं यत् स्यात्।
तन्नरपतेः कुमारककुमारिकास्त्रीपरिजनानाम् ॥१३॥
रक्षः पिशाचगुह्यकनागानामेवमेव निर्दिष्टम्।
मासैश्चाप्यष्टाभिः सर्वेषामेव फलपाकः ॥१४॥

माया—ऋषि, धर्म, पिता, ब्रह्मा आदि में उत्पन्न विकृति से द्विजों अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जातियों का अनिष्ट होता है। रुद्र और लोकपालों अर्थात् इन्द्र आदि में विकृति उत्पन्न होने से पशुओं का अनिष्ट होता है। बृहस्पति, शुक्र, शनि आदि में उत्पन्न विकृति से पुरोहितों का अनिष्ट होता है। विष्णु में उत्पन्न विकृति से मनुष्य का अनिष्ट होता है। इसी तरह कार्त्तिकेय और विशाखदेव में उत्पन्न विकृति से मण्डलाधिप राजाओं का; वेदव्यास में उत्पन्न विकृति से मन्त्रिजनों का; गणेश जी में उत्पन्न विकृति से सेनापति का; ब्रह्मा और विश्वकर्मा में उत्पन्न विकृति से भी मनुष्यों का; देव कुमारों में उत्पन्न विकृति से राजकुमारों का; देवकुमारियों में उत्पन्न विकृति से राजकुमारियों का; देवाङ्गनाओं में उत्पन्न विकृति से राजपत्नियों का; पिशाचों में उत्पन्न विकृति से राजकुमारियों का; यक्षों में उत्पन्न विकृति से राजपत्नियों का तथा नागों में उत्पन्न विकृति से राजसेवकों का अनिष्ट होता है। इस प्रकार के उत्पातों का फल आठ मास में सम्भव होता है॥१०-१४॥

उपरोक्त उत्पातों के शान्ति प्रकार कथन

बुद्ध्वा देवविकारं शुचिः पुरोधास्त्र्यहोषितः स्नातः।
स्नानकुसुमानुलेपनवस्त्रैरभ्यर्चयेत् प्रतिमाम् ॥१५॥
मधुपर्केण पुरोधा भक्ष्यैर्बलिभिश्च विधिंवदुपतिष्ठेत्।
स्थालीपाकं जुहुयाद्विधिवन्मन्त्रैश्च तल्लिङ्गैः ॥१६॥

माया—देव प्रतिमा में विकृति का ज्ञान होने पर पुरोहित को पवित्र, संयत स्नान किया हुआ, तीन दिन का व्रती होकर विकृत देवता का स्नान, चन्दन, पुष्प, वस्त्र दही मिश्रित भोजन पदार्थ से भरी थालियों से विधि वद् पूजन करना चाहिए और स्थाली पाक के साथ उस देवता का मन्त्रोच्चार करते हुए हवन भी करना चाहिए॥१५-१६॥

काल प्रमाण और शान्ति प्रभाव कथन

इति विबुधविकारे शान्तयः सप्तरात्रं
द्विजविबुधगणार्चा गीतनृत्योत्सवाश्च।
विधिवदवनिपालैर्यैः प्रयुक्ता न तेषां
भवति दुरितपाको दक्षिणाभिश्च रुद्धः ।।१७।।

माया—उपरोक्त प्रकार देव विकृति के होने पर राजा के द्वारा सात रात्रि पर्यन्त ब्राह्मण और देवताओं की पूजा-अर्चन, गीत, नृत्य, रात्रि जागरण आदि प्रकार से उत्सव मनाया जाना चाहिए। इस प्रकार जिन राजाओं द्वारा किया जाता है, उन-उन राजाओं को उपरोक्त शान्ति कार्य और दक्षिणा प्रदान करने से रुद्ध उत्पात का अशुभ फल नहीं होता है।।१७।।

अन्यान्य उत्पात सफल कथन

राष्ट्रे यस्यानग्निः प्रदीप्यते दीप्यते च नेन्धनवान्।
मनुजेश्वरस्य पीडा तस्य च राष्ट्रस्य विज्ञेया ।।१८।।

माया—जिसके राज्य में विना अग्नि की ज्वाला दृष्ट हो और इन्धन युक्त अग्नि के प्रज्वलन में कठिनता अनुभव हो, तो उस राज्य के राजा और देश पीड़ित होते हैं।।१८।।

और भी अन्यान्य उत्पात सफल कथन

जलमांसार्द्रज्वलने नृपतिवधः प्रहरणे रणो रौद्रः।
सैन्यग्रामपुरेषु च नाशो वह्नेर्भयं कुरुते ।।१९।।

माया—जल, मांस और भीगी हुई वस्तु में विना कारण के जलन उत्पन्न होने पर राजा का मरण; खड्ग आदि में जलन उत्पन्न होने पर कठिन संग्राम तथा सेना, नगर, ग्रम आदि में अग्नि का अभाव होने पर अग्नि भय होता है।।१९।।

और भी अन्य उत्पात सफल कथन

प्रासादभवनतोरणकेत्वादिष्वननलेन दग्धेषु।
तडिता वा षण्मासात् परचक्रस्यागमो नियमात् ।।२०।।

माया—प्रासाद (देवतालय), भवन, तोरण या ध्वज की अग्नि के अभाव में भी अथवा बिजली से दग्ध होने पर जिस राजा के राज्य में ऐसा होता है, उस राज्य में दूसरे राज्य के राजा का आगमन छः मास बाद अवश्य होता है।।२०।।

और भी अन्य उत्पात सफल कथन

धूमोऽनग्निसमुत्थो रजस्तमश्चाह्निजं महाभयदम्।
व्यभ्रे निश्युडुनाशो दर्शनमपि चाह्नि दोषकरम् ।।२१।।

माया—अग्नि के अभाव में भी धुआँ का उत्पन्न होने अथवा धूलि अथवा अन्धकार का दिन भाग में दीखने से अत्यन्त भय उत्पन्न होता है। इसी तरह आकाश में मेघ का अभाव रात्रि के समय होने पर भी नक्षत्रों का नहीं दीखने और दिन भाग में दीखने से भी अत्यन्त भय उत्पन्न होता है।।२१।।

और भी अन्य अन्यान्य उत्पातों का सफल कथन

नगरचतुष्पादण्डजमनुजानां भयकरं ज्वलनमाहुः।
धूमाग्निविस्फुलिङ्गैः शय्याम्बरकेशगैर्मृत्युः ।।२२।।

माया—नगर, पशु, पक्षी या मनुष्यों में अग्नि के अभाव में भी जलन उत्पन्न होने से अत्यन्त भय उत्पन्न होता है। शय्या, वस्त्र य बालों में धूम्र, अग्नि ज्वाला या चिनगारियाँ दीखने पर भी उसके स्वामी का मरण जानना चाहिए।।२२।।

और भी अन्य अन्यान्य उत्पातों का सफल कथन

आयुधज्वलनसर्पणस्वनाः कोशनिर्गमनवेपनानि वा।
वैकृतानि यदि वायुधेऽपराण्याशु रौद्ररणसङ्कुलं वदेत् ।।२३।।

माया—आयुध (खड्ग) आदि में ज्वलन उत्पन्न होने, उनका गतिमान होने, उनमें शब्द होने, उनका म्यान से निकल आने अथवा उनमें अन्य प्रकार के विकार उत्पन्न होने आदि से राज्य में शीघ्र भयानक युद्ध होने की सम्भावना का ज्ञान होता है।।२३।।

उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन

मन्त्रैराग्नेयैः क्षीरवृक्षात् समिद्भिर्होतव्योऽग्निः सर्षपैः सर्पिषा च।
अग्न्यादीनां वैकृते शान्तिरेवं देयं चास्मिन् काञ्चनं ब्राह्मणेभ्यः ।।२४।।

माया—ऊपरोक्त उत्पातों में जो अग्नि विकार जनित उत्पात कहे गए हैं, वे अशुभ फल वाले हैं, उनकी शान्ति के लिए आक की लकड़ी, सरसों, घृत आदि से अग्नि में हवन करना चाहिए, जिससे अशुभफल की शान्ति सम्भव होती है। इस प्रकार के उत्पात होने के समय ब्राह्मणों को स्वर्ण दक्षिणा देने से भी उत्पात की अशुभता का नाश होता है।।२४।।

वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन

शाखाभङ्गेऽकस्माद्वृक्षाणां निर्दिशेद्रणोद्योगम्।
हसने देशभ्रंशं रुदिते च व्याधिबाहुल्यम् ।।२५।।

माया—अकस्मात् वृक्ष की शाखा का टूटना, युद्ध की तैयारियों को बताता है। वृक्षों के हँसने जैसी घटना देश का नाशक तथा वृक्षों के रोने जैसी स्थिति से रोगों की बाहुल्यता प्रदर्शित होती है।।२५।।

वृक्षगत उत्पातों का और भी सफल कथन

राष्ट्रविभेदस्त्वनृतौ बालवधोऽतीव कुसुमिते बाले ।
वृक्षात् क्षीरस्रावे सर्वद्रव्यक्षयो भवति ।।२६।।

भाषा—विना ऋतु समय वृक्षों में पुष्प व फल के होने से राष्ट्र में विभेद उत्पन्न होता है। छोटे-छोटे वृक्षों में अति पुष्प के आने से बालकों की हानि और वृक्षों से दूध बहने से द्रव्यों की हानि भी होती है।।२६।।

और भी वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन

मद्ये वाहननाशः संग्रामः शोणिते मधुनि रोगः ।
स्नेहे दुर्भिक्षभयं महद्भयं निःस्रुते सलिले ।।२७।।

भाषा—वृक्ष से मद्य जैसे द्रव्य के बहने से वाहनों की हानि; रक्त के बहने से युद्ध; शहद प्राप्त होने से रोग; तेल बहने से दुर्भिक्ष व भय तथा वृक्ष से जल के टपकने से अत्यन्त भय उत्पन्न होता है।।२७।।

और भी वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन

शुष्कविरोहे वीर्यान्नसंक्षयः शोषणे च विरुजानाम् ।
पतितानामुत्थाने स्वयं भयं दैवजनितं च ।।२८।।

भाषा—शुष्क वृक्ष में भी विरोह अर्थात् अंकुरों का आना, शक्तिक्षीणता और अन्न का नाश होने का सूचक है तथा गिरे हुए वृक्षों के अपने आप उठ जाने से भी दैव जनित भय उत्पन्न होता है।।२८।।

वृक्षगत उत्पातों का और सफल कथन

पूजितवृक्षे ह्यनृतौ कुसुमफलं नृपवधाय निर्दिष्टम् ।
धूमस्तस्मिन् ज्वालाऽथवा भवेन्नृपवधायैव ।।२९।।

भाषा—विना ऋतुकाल के पूजित वृक्ष में पुष्प व फल के उत्पन्न होने से राजा की हानि तथा उस वृक्ष पर धुआँ अथवा अग्नि ज्वला के होने से भी राजा की हानि होना ज्ञात होता है।।२९।।

और भी वृक्षगत उत्पातों का सफल कथन

सर्पत्सु तरुषु जल्पत्सु वापि जनसंक्षयो विनिर्दिष्टः ।
वृक्षाणां वैकृत्ये दशभिर्मासैः फलविपाकः ।।३०।।

भाषा—किसी वृक्ष के गमन करने अथवा उससे किसी तरह के शब्द होने से भी मनुष्यों की हानि होने की सूचना मिलती है। इस प्रकार सभी वृक्षों की विकृति जनित फल दश मास में फलित होते हैं।।३०।।

वृक्षगत उत्पातों की शान्ति के प्रकार कथन

स्रग्गन्धधूपाम्बरपूजितस्य छत्रं विधायोपरि पादपस्य ।
कृत्वा शिवं रुद्रजपोऽत्र कार्यो रुद्रेभ्य इत्यत्र षडेव होमाः ।।३१।।
पायसेन मधुनापि भोजयेद् ब्राह्मणान् घृतयुतेन भूपतिः ।
मेदिनी निगदितात्र दक्षिणा वैकृते तरुकृते हितार्थिभिः ।।३२।।

माया—इन उत्पातों के समय सुगन्धित द्रव्य, धूप, वस्त्र आदि से पूजित विकृति वाले वृक्ष के ऊपर छत्र रखकर एकादशरुद्र के मन्त्र का जप; 'रुद्रेभ्य: स्वाहा' इस मन्त्रसे मात्र छ: बार हवन और घृत युक्त पायस ब्राह्मण भोजन कराने चाहिए। एवं वृक्ष विकृति जन्य उत्पात के समय जीवों के कल्याण की भावना वाले मुनियों ने ब्राह्मा को दक्षिणा में पृथ्वी दान करने को श्रेष्ठ कहा है।।३१-३२।।

धान्यगत उत्पातों का सफल कथन

नालेऽब्जयवादीनामेकस्मिन् द्वित्रिसम्भवो मरणम् ।
कथयति तदधिपतीनां यमलं जातं च कुसुमफलम् ।।३३।।

माया—कमल, यव आदि के एक नाल में दो या तीन बाली उत्पन्न होने से उस खेत के स्वामी की मृत्यु हो जाती है। इसी तरह जुड़वा पुष्प अथवा फल के उत्पन्न होने से भी उसके स्वामी की मृत्यु होती है।।३३।।

धान्यगत उत्पातों का और सफल कथन

अतिवृद्धिः सस्यानां नानाफलकुसुमसम्भवो वृक्षे ।
भवति हि यद्येकस्मिन् परचक्रस्यागमो नियमात् ।।३४।।

माया—धान्यों की अत्यधिक वृद्धि होने और एक ही वृक्ष में विविध प्रकार के फल व पुष्पों के उत्पन्न होने से निश्चय ही परचक्र अर्थात् दूसरे राज्य के राजा का आगम होता है।।३४।।

धान्यगत अन्य उत्पात का सफल कथन

अर्धेन यदा तैलं भवति तिलानामतैलता वा स्यात् ।
अन्नस्य च वैरस्यं तदा तु विन्द्याद् भयं सुमहत् ।।३५।।

माया—तिल की मात्रा से आधे तेल की मात्रा होने अथवा तिल से तेल का पूर्णतया नहीं निकलने तथा धान्य के स्वाद में विरसता आने से अतिभय उत्पन्न होता है।।३५।।

ऊपरोक्त उत्पातों के शान्ति प्रकार कथन

विकृतकुसुमं फलं वा ग्रामादथवा पुराद्बहिः कार्यम् ।
सौम्योऽत्र चरुः कार्यो निर्वाप्यो वा पशुः शान्त्यै ।।३६।।

सस्ये च दृष्ट्वा विकृतिं प्रदेयं तत्क्षेत्रमेव प्रथमं द्विजेभ्यः।
तस्यैव मध्ये चरुमत्र भौमं कृत्वा न दोषं समुपैति तज्जम् ।।३७।।

माया—विकृत पुष्प और फलों को निश्चय ही ग्राम अथवा नगर से बाहर फेंक देना चाहिए और सोम देवता के लिए यहाँ चरु बनानी चाहिए अथवा शान्ति हेतु बकरा (छाग) भी दान करना चाहिए। उपरोक्त प्रकार की विकृति को धान्यों में देखते ही सर्वप्रथम उस खेत को ब्राह्मण के लिए दे देना उचित है, फिर उसी क्षेत्र के मध्य में भौम चरु बनाने से उस भूमि से उत्पन्न दोष उसके स्वामी के लिए नहीं होता है।।३६-३७।।

इति सस्यवैकृतम्

वृष्टिगत उत्पात का सफल कथन

दुर्भिक्षमनावृष्टावतिवृष्टौ क्षुद्भयं परभयं च।
रोगो ह्यनृतुभवायां नृपतिवधोऽनभ्रजातायाम् ।।३८।।

माया—अनावृष्टि होने से दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि होने से भूख पीड़ा और शत्रु भय; वर्षा ऋतु से पृथक्ऋतु में वृष्टि होने से रोग; मेघ के अभाव रहते वृष्टि होने से राजा का मरण होता है।।३८।।

ऋतुवश उत्पात का सफल कथन

शीतोष्णविपर्यासो नो सम्यगृतुषु च सम्प्रवृत्तेषु।
षण्मासाद्राष्ट्रभयं रोगभयं दैवजनितं च ।।३९।।

माया—शीत और उष्ण के बीच विपरीत भाव अर्थात् शीत में उष्णता और उष्णकाल में शीत का अनुभव होने से तथा षड्ऋतुओं के द्वारा अपना-अपना धर्म ठीक से पालन नहीं करने पर छः मास पश्चात् राष्ट्रीय भय तथा दैव जनित रोग व भय उत्पन्न होता है।।३९।।

और वृष्टिगत उत्पातों का सफल कथन

अन्यर्तौ सप्ताहं प्रबन्धवर्षे प्रधाननृपमरणम्।
रक्ते शस्त्रोद्योगो मांसास्थिवसादिभिर्मरकः ।।४०।।
धान्यहिरण्यत्वक्फलकुसुमाद्यैर्वर्षितैर्भयं विन्द्यात्।
अङ्गारपांशुवर्षे विनाशमायाति तन्नगरम् ।।४१।।

माया—वर्षा ऋतु से पृथक् किसी ऋतु में सात दिन पर्यन्त निरन्तर वृष्टि होने से महत्त्वपूर्ण राजा का मरण होता है। रक्त वृष्टि होने से युद्ध और मांस, हड्डी, वसा आदि बरसने से महामारी का प्रकोप होता है। धान्य, स्वर्ण, वृक्ष की छिलका, फल, पुष्प आदि की वृष्टि होने से भय तथा कोयला व धूलि की वृष्टि होने से नगर (ग्राम) की हानि होती है।।४०-४१।।

पुनः वृष्टिगत उत्पातों का सफल कथन

उपला विना जलधरैर्विकृता वा प्राणिनो यदा वृष्टाः ।
छिद्रं वाप्यतिवृष्टौ सस्यानामीतिसञ्जननम् ।।४२।।

माया—विना मेघ के उपल की वृष्टि, विकृत जीवों की वृष्टि अथवा अतिवृष्टि तथा यत्र-कुत्र अनावृष्टि होने से धान्यों को ईति रोग का भय उत्पन्न हो जाता है।।४२।।

वृष्टिगत उत्पातों का और भी सफल कथन

क्षीरघृतक्षौद्राणां दध्नो रुधिरोष्णवारिणां वर्षे ।
देशविनाशे ज्ञेयेऽसृग्वर्षे चापि नृपयुद्धम् ।।४३।।

माया—क्षीर अर्थात् दूध, घृत, मधु, रक्त या उष्ण जल वारिश होने पर देशनाश तथा रक्त की वृष्टि होने पर राजाजनों में संग्राम होता है। यह श्लोक भट्टोत्पल विवृति में नहीं है, परन्तु अन्य प्रतियों में दृष्ट होता है।।४३।।

अन्य उत्पातों का सफल कथन

यद्यमलेऽर्के छाया न दृश्यते प्रतीपा वा ।
देशस्य तदा सुमहद्भयमायातं विनिर्देश्यम् ।।४४।।

माया—यदि विमाल सूर्य बिम्ब के होने पर भी वृक्ष आदि वस्तुओं की छाया ही न दृष्ट हो अथवा उल्टि प्रतीत हो, तो उस देश में बहुत-अधिक भय उत्पन्न होता है।।४४।।

और अन्य उत्पातों का सफल कथन

व्यभ्रे नभसीन्द्रधनुर्दिवा यदा दृश्यतेऽथवा रात्रौ ।
प्राच्यामपरस्यां वा तदा भवेत्क्षुद्भयं सुमहत् ।।४५।।

माया—जब आकाश में मेघ का अभाव होने पर भी दिन अथवा रात्रि में पूर्व अथवा पश्चिम दिशा में इन्द्रधनुष दृष्ट हो, तब भारी दुर्भिक्ष होता है।।४५।।

उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन

सूर्येन्दुपर्जन्यसमीरणानां यागः स्मृतो वृष्टिविकारकाले ।
धान्यान्नगोकाञ्चनदक्षिणाश्च देयास्ततः शान्तिमुपैति पापम् ।।४६।।

माया—सूर्य, चन्द्र, मेघ, वायु आदि के वृष्टिविकार काल में यज्ञ करना उचित है और शालीधान्य विशेष, खाद्यान्न, गाय, स्वर्ण आदि की दक्षिणा देकर पाप की शान्ति करनी चाहिए।।४६।।

नदीगत उत्पातों का सफल कथन

अपसर्पणं नदीनां नगरादचिरेण शून्यतां कुरुते ।
शोषश्चाशोष्याणामन्येषां वा ह्रदादीनाम् ।।४७।।

स्नेहासृङ्मांसवहाः सङ्कुलकलुषाः प्रतीपगाश्चापि ।
परचक्रस्यागमनं नद्यः कथयन्ति षण्मासात् ॥४८॥

माया—ग्राम या नगर मध्य अथवा समीप में बह रही नदी दूर बहने लगे अथवा प्रायः नहीं सूखने वाला ह्रद आदि भी सूखने लगे, तो ऐसी स्थिति में शीघ्र नगर या ग्राम प्राणि विहीन हो जाता हैं, जब नदियों में तेल, रक्त, मांस आदि में से कोई एक भी बहने अथवा नदी के जल के स्वल्प अथवा मलिन होने से छः मास पश्चात् परचक्र का आगमन होता है॥४७-४८॥

कुपगत उत्पातों का सफल कथन

ज्वालाधूमक्वाथारुदितोत्क्रुष्टानि चैव कूपानाम् ।
गीतप्रजल्पितानि च जनमरकायोपदिष्टानि ॥४९॥

माया—कुआँ में प्रज्वलन, धूम, फेन, रोने जैसी ध्वनि, गीत या और किसी प्रकार की ध्वनि आदि जनगणों के मरण को सुनिश्चित करने वाले होते हैं॥४९॥

अन्य प्रकार से जलगत उत्पातों का सफल कथन

सलिलोत्पत्तिरखाते गन्धरसविपर्यये च तोयानाम् ।
सलिलाशयविकृतौ वा महद्भयं तत्र शान्तिमिमाम् ॥५०॥

माया—किसी समतल भूमि में जल के निकलने, जल के गन्ध और रस में विरोधाभास उत्पन्न होना, जलाशयों में विकृति आने आदि अग्नि भय को उत्पन्न करने वाले होते हैं॥५०॥

ऊपरोक्त प्रकार के उत्पातों का शान्ति प्रकार कथन

सलिलविकारे कुर्यात् पूजां वरुणस्य वारुणैर्मन्त्रैः ।
तैरेव च जपहोमं शममेवं पापमुपयाति ॥५१॥

माया—जल में उपरोक्त प्रकार की विकृति उत्पन्न होने पर वरुण मन्त्र से वरुण देवता की पूजा-अर्चना करनी चाहिए। उससे ही जप, हवन करने से अशुभ फल से निवृत्ति होती है॥५१॥

स्त्री प्रसवगत उत्पातों का सफल कथन

प्रसवविकारे स्त्रीणां द्वित्रिचतुष्प्रभृतिसम्प्रसूतौ वा ।
हीनातिरिक्तकाले च देशकुलसंक्षयो भवति ॥५२॥

माया—स्त्रियों के प्रसव विकार होने पर या एक ही समय दो, तीन, चार आदि शिशु उत्पन्न होने पर या प्रसव समय के पूर्व प्रसव होने पर देश और वंश का क्षय होता है॥५२॥

पशुगत उत्पातों का सफल कथन

वडवोष्ट्रमहिषगोहस्तिनीषु यमलोद्भवे रणमरणमेषाम्।
षण्मासात् सूतिफलं शान्तौ श्लोकौ च गर्गोक्तौ ॥५३॥

माया—घोड़ी, ऊँटनी, भैंस, गाय, हथिनी आदि पशुओं को एक समय में दो या तीन बच्चे उत्पन्न होने पर उन पशुओं की हानि होती है। ऐसे प्रसव का फल छः मास पश्चात् होते हैं, इसकी शान्ति हेतु गर्ग प्रतिपादित अग्रलिखित श्लोक यहाँ दिए गए हैं।।५३॥

प्रसव शान्त्यर्थ गर्गोक्त दो श्लोक कथन

नार्यः परस्य विषये त्यक्तव्यास्ता हितार्थिना।
तर्पयेच्च द्विजान् कामैः शान्तिं चैवात्र कारयेत् ॥५४॥
चतुष्पदाः स्वयूथेभ्यस्त्यक्तव्याः परभूमिषु।
नगरं स्वामिनं यूथमन्यथा तु विनाशयेत् ॥५५॥

माया—अपना कल्याण की अपेक्षा करने वाले मनुष्यों को चाहिए कि ऐसे विकार युक्त स्त्रियों को अन्य स्थान पर ले जाकर छोड़ दें। योग्यतानुसार ब्राह्मणों को प्रसन्न करे तथा इस उत्पात की शान्ति का उपाय करें। विकृत पशुओं को भी उनके समूह से पृथक्कर अन्य स्थान पर ले जाकर छोड़ दें। अन्यथा नगर, नगर के प्रधान, जनसमूह आदि की हानि होती है।।५४-५५॥

चतुष्पदगत उत्पातों का सफल कथन

परयोनावभिगमनं भवति तिरश्चामसाधु धेनूनाम्।
उक्षाणो वान्योन्यं पिबति श्वा वा सुरभिपुत्रम् ॥५६॥
मासत्रयेण विन्द्यात्तस्मिन्निःसंशयं परागमनम्।
तत्प्रतिघातायैतौ श्लोकौ गर्गेण निर्दिष्टौ ॥५७॥

माया—एक योनि का पशु अन्य योनि के पशु के साथ मैथुन करे या गाय और बैल परस्पर एक दूसरे का स्तनपान करने की चेष्ट करें, तो ऐसे में तीन माह के पश्चात् दूसरे राज्य के राजा का आगमन होता है। इसकी शान्ति हेतु अग्रिम गर्गोक्त दो श्लोक कहे गये हैं।।५६-५७॥

उपरोक्त उत्पात की गर्गोक्त शान्ति प्रकार कथन

त्यागो विवासनं दानं तत्तस्याशु शुभं भवेत्।
तर्पयेद् ब्राह्मणांश्चात्र जपहोमांश्च कारयेत् ॥५८॥
स्थालीपाकेन धातारं पशुना च पुरोहितः।
प्राजापत्येन मन्त्रेण यजेद्बह्वन्नदक्षिणम् ॥५९॥

माया—विकार युक्त पशुओं का त्याग करने अथवा अन्य स्थान पर ले जाकर छोड़ देने से अन्य चतुष्पदों को उत्पात दोष से मुक्ति मिल जाती है। इस प्रकार के उत्पात में ब्राह्मणों को संतुष्ट, जप, हवन आदि करना चाहिए। एवं चरु पशु, प्राजापत्य मन्त्रों से ब्रह्मयज्ञ करना चाहिए तथा प्रभूत अन्न की दक्षिणा देनी चाहिए।।५८-५९।।

वाहनगत उत्पातों का सफल कथन

यानं वाहवियुक्तं यदि गच्छेन्न व्रजेच्च वाह्युतम् ।
राष्ट्रभयं भवति तदा चक्राणां सादभङ्गे च ।।६०।।

माया—वाहन अर्थात् अश्व आदि, वाह अर्थात् सवारी करने वालों से पृथक् होकर भागता हो, वाह युक्त वाहन नहीं चलता हो तथा रथ या गाड़ी का चक्र (पहिया) भूमि में धस जाय अथवा टूट जाय, तो इस प्रकार से राष्ट्रभय उत्पन्न होता है।।६०।।

अन्य उत्पातों का सफल कथन

गीतरवतूर्यशब्दा नभसि यदा वा चरस्थिरान्यत्वम् ।
मृत्युस्तदा गदा वा विस्वतूर्ये पराभिभवः ।।६१।।

माया—आकाश में गीत अथवा तुरही की ध्वनि सूनाई देने पर अथवा चर वस्तु स्थिर और स्थिर वस्तु चर की तरह दीखने पर मृत्यु और रोग का कारण उत्पन्न होता है। अथवा तुरही का विकृत स्वर सूनाई देने पर शत्रु से पराजय मिलती है।।६१।।

और भी अन्य उत्पातों का सफल कथन

अनभिहततूर्यनादः शब्दो वा ताडितेषु यदि न स्यात् ।
व्युत्पतौ वा तेषां परागमो नृपतिमरणं वा ।।६२।।

माया—विना बजाये स्वर के निकलने और बजाने पर स्वर के नहीं निकलने अथवा विभिन्न प्रकार के स्वर के सुनाई देने आदि से राज्य में शत्रु सेना का आगमन और राजा का मरण होता है।।६२।।

और भी अन्य उत्पातों का सफल कथन

गोलाङ्गलयोः सङ्गे दर्वीशूर्पाद्युपस्करविकारे ।
क्रोष्टुकनादे च तथा शस्त्रभयं मुनिवचश्चेदम् ।।६३।।

माया—अकस्मात् बैल और हल का संयोग होने पर, घरेलु उपकरण दर्वी, शूर्प आदि में विकृति उत्पन्न होने पर तथा क्रोष्टुक (सियार) के स्वर भी विकृत सूनाई देने पर भय उत्पन्न होता है, ऐसा मुनियों ने कहा है।।६३।।

उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन

वायव्येष्वेषु नृपतिर्वायुं शक्तुभिरर्चयेत् ।
आवायोरिति पञ्चर्चो जप्तव्याः प्रयतैर्द्विजैः ।।६४।।
ब्राह्मणान् परमान्नेन दक्षिणाभिश्च तर्पयेत् ।
बह्वन्नदक्षिणा होमाः कर्तव्याश्च प्रयत्नतः ।।६५।।

माया—उपरोक्त प्रकार के विकृति के समय सत्तू से वायु देव की पूजन करना चाहिए। नियम संयम से सम्पन्न ब्राह्मण को आवायोः इत्यादि पाच मन्त्रों का जप करना चाहिए। पायस से ब्राह्मण भोजन कराना और यथा शक्ति अन्न रूप में प्रचुर दक्षिणा के साथ हवन करना चाहिए।।६४-६५।।

पशु-पक्षियों सम्बन्धि उत्पातों का सफल कथन

पुरपक्षिणो वनचरा वन्या वा निर्भया विशन्ति पुरम् ।
नक्तं वा दिवसचराः क्षपाचरा वा चरन्त्यहनि ।।६६।।
सन्ध्याद्वयेऽपि मण्डलमाबध्नन्तो मृगा विहङ्गा वा ।
दीप्तायां दिश्यथवा क्रोशन्तः संहता भयदाः ।।६७।।

माया—नगरवासी पक्षी वन में और वनवासी पक्षी के निर्भिकता पूर्वक नगर में विचरण करने पर अथवा दिन में दीखने वाले रात्रि में और रात्रि में दीखने वाले दिन में दीखने पर एवं सूर्य के उदयास्त कालों में वनवासी पशु व पक्षी सूर्याभिमुख गोला बना कर स्थित होने अथवा एकत्रित होकर अतिशय आवाज करते दीखने पर अतिशय भय उत्पन्न करने वाले होते हैं।।६६-६७।।

और भी पशु सम्बन्धी उत्पातों का सफल कथन

श्येनाः प्ररुदन्त इव द्वारे क्रोशन्ति जम्बुका दीप्ताः ।
प्रविशेन्नरेन्द्रभवने कपोतकः कौशिको यदि वा ।।६८।।

माया—श्येन पक्षी के रोनें जैसा अधिक स्वर करता हुआ दीखने पर, सूर्याभिमुख हो कर सियार के नगर द्वार के पास आवाज करने पर तथा राजभवन में कबूतर या उल्लू के प्रवेश करने पर भय उत्पन्न करने वाला होता है।।६८।।

और भी पशु सम्बन्धी उत्पातों का सफल कथन

कुक्कुटरुतं प्रदोषे हेमन्तादौ च कोकिलालापाः ।
प्रतिलोममण्डलचराः श्येनाद्याश्चाम्बरे भयदाः ।।६९।।
गृहचैत्यतोरणेषु द्वारेषु च पक्षिसङ्घसम्पातः ।
मधुवल्मीकाम्भोरुहसमुद्भवश्चापि नाशाय ।।७०।।

माया—प्रदोषकाल में मुर्गा और हेमन्तकाल के आदि में कोयल के बोलने पर तथा आकाश में बाज आदि मांसाहारी पक्षियों के गोलाकार मार्ग में प्रदक्षिण क्रम से भ्रमण करने पर भय उत्पन्न करने वाले होते हैं। गृह, मुख्यचैत्य (वृक्ष), तोरण अथवा गृहद्वार पर पक्षियों के समूह के गिरने पर तथा इन्हीं गृह आदि में मधुमक्खी का छत्ता, वल्मीक और कमलों का उत्पन्न होने पर हानि के कारण उत्पन्न होते हैं॥६९-७०॥

और भी पशु सम्बन्धी उत्पातों का सफल कथन

श्वभिरस्थिशवावयवप्रवेशनं मन्दिरेषु मरकाय।
पशुशस्त्रव्याहारे नृपमृत्युर्मुनिवचश्चेदम् ॥७१॥

माया—कुत्तों द्वारा हड्डी अथवा शव का कोई अङ्ग घर के अन्दर ले आने पर तथा पशु या कोई भी शस्त्र के मनुष्य की तरह आवाज करने पर राजा का मरण होता है, ऐसा मुनिजनों का वचन है॥७१॥

पशु-पक्षी के उत्पातों का शान्ति प्रकार कथन

मृगपक्षिविकारेषु कुर्याद्धीमान् सदक्षिणान्।
देवाः कपोत इति च जप्तव्याः पञ्चभिर्द्विजैः ॥७२॥
सुदेवा इति चैकेन देया गावः सदक्षिणाः।
जपेच्छाकुनसूक्तं वा मनो वेदशिरांसि च ॥७३॥

माया—पशु व पक्षियों में उपरोक्त विकृति के समय सदक्षिणा हवन कराना चाहिए। पाँच ब्राह्मणों द्वारा 'देवाः कपोत' इत्यादि मन्त्र का तथा एक ब्राह्मण द्वारा 'सुदेवा' इत्यादि मन्त्र का जप भी करवाना चाहिए। सदक्षिणा गोदान भी कराना चाहिए और शाकून सूक्त या 'वेद शिरांसि' इत्यादि मन्त्र का जप करना चाहिए॥७२-७३॥

अन्यान्य उत्पातों का फल कथन

शक्रध्वजेन्द्रकीलस्तम्भद्वारप्रपातभङ्गेषु।
तद्वत्कपाटतोरणकेतूनां नरपतेर्मरणम् ॥७४॥

माया—इन्द्रध्वज, इन्द्रकील और स्तम्भ द्वार के गिरने या टूट जाने पर अथवा कपाट, तोरण, और ध्वज के गिरने या टूटने पर राजा की मृत्यु होतीहै॥७४॥

और अन्यान्य उत्पातों का सफल कथन

सन्ध्याद्वयस्य दीप्तिर्धूमोत्पत्तिश्च काननेऽनग्नौ।
छिद्राभावे भूमेर्दरणं कम्पश्च भयकारी ॥७५॥

माया—दोनों सन्ध्याओं का प्रकाशमान होने, वन या अग्निहीन स्थान पर धूम का उत्पन्न होने से, समतल भूमि, जिसमें एक भी छिद्र न हो, का फटने अथवा कम्पित होने से भय उत्पन्न होता है॥७५॥

राजकीय व्यवहार से देश नाश कथन

पाखण्डानां नास्तिकानां च भक्तः साध्वाचारप्रोज्झितः क्रोधशीलः।
ईर्ष्युः क्रूरो विग्रहासक्तचेता यस्मिन् राजा तस्य देशस्य नाशः॥७६॥

माया—पाखण्डी, नास्तिक जनों का भक्त, साधुओं जैसी आचरण से हीन, क्रोध करने वाला, ईर्ष्या करने वाला, दुष्ट और सदा युद्ध करने की चेष्टा वाला राजा अपने देश का ही हानि करने वाला होता है॥७६॥

बालचेष्ट जनित उत्पातों का सफल कथन

प्रहर हर छिन्धि भिन्धीत्यायुधकाष्ठाश्मपाणयो बालाः।
निगदन्तः प्रहरन्ते तत्रापि भयं भवत्याशु॥७७॥

माया—जिस नगर या ग्राम में शस्त्र, काठ (लाठी आदि), पत्थर आदि हाथ में लिये हुए बच्चे मारो, छीन लो, तोड़ दो, आदि शब्दों का उच्चारण करते हुए एक-दूसरे पर प्रहार भी करता हो, उस नगर या ग्राम में भय उत्पन्न होता है॥७७॥

चित्र जनित उत्पातों का सफल कथन

अङ्गारगैरिकाद्यैर्विकृतप्रेताभिलेखनं यस्मिन्।
नायकचित्रितमथवा क्षये क्षयं याति न चिरेण॥७८॥

माया—जिस गृह में दीवार पर कोयला, गेरु आदि प्रकार के रंगों से विकार वाले मरे हुए मनुष्यों के चित्र बना हुआ अथवा कोयला आदि से बना गृह स्वामी का चित्र दीखने पर समझना चाहिए कि यह गृह शीघ्र नष्ट होने वाला है॥७८॥

विकृत गृह जन्य उत्पातों का सफल कथन

लूतापटाङ्गशबलं न सन्ध्ययोः पूजितं कलहयुक्तम्।
नित्योच्छिष्टस्त्रीकं च यद् गृहं तत्क्षयं याति॥७९॥

माया—जिस घर में मकड़ी का जाला आच्छादित हो, दोनों सन्ध्याओं में कभी-भी देवता का पूजन नहीं होता हो, प्रत्येक दिन कलह होता हो तथा स्वेच्छाचारिणी स्त्रियों से युक्त हो, तो उस गृह का शीघ्र नाश होता है॥७९॥

राक्षस दीखने का फल कथन

दृष्टेषु यातुधानेषु निर्दिशेन्मरकमाशु सम्प्राप्तम्।
प्रतिघातायैतेषां गर्गः शान्तिं चकारेमाम्॥८०॥

माया—प्रत्यक्षतः राक्षस के दीखने पर अति शीघ्र महामारी फैलती है। इस प्रकार उपरोक्त उत्पातों के अनिष्ट फल के शमन के लिए अग्रलिखितानुसार गर्ग मुनि प्रोक्त शान्ति विधि को कहते हैं॥८०॥

उपरोक्त उत्पातों की शान्ति विधि कथन

महाशान्त्योऽथ बलयो भोज्यानि सुमहान्ति च ।
कारयेत महेन्द्रं च माहेन्द्रीं च समर्चयेत् ।।८१।।

माया—उपरोक्त उत्पातों की शान्ति के लिए महाशान्ति करनी चाहिए। बलि और अधिक भोज्य वस्तु की व्यवस्था करनी चाहिए तथा इन्द्र व इन्द्राणी के उत्कृष्ट पूजन कराने की व्यवस्था भी करनी चाहिए।।८१।।

फलाभाव वाले उत्पातों का काल कथन

नरपतिदेशविनाशे केतोरुदयेऽथवा ग्रहेऽर्केन्द्वोः ।
उत्पातानां प्रभवः स्वर्तुभवश्चाप्यदोषाय ।।८२।।

माया—राजा की मृत्यु, आपद् ग्रस्त देश, केतु का उदय, सूर्य व चन्द्र का ग्रहण आदि के समय होने वाले उत्पात और आगे कहे जा रहे के समान अपने ऋतु काल में होने वाले उत्पात फल रहित होते हैं।।८२।।

ऋतु प्रकृतिवश उत्पन्न उत्पात कथन

ये च न दोषान् जनयन्त्युत्पातास्तानृतुस्वभावकृतान् ।
ऋषिपुत्रकृतैः श्लोकैर्विद्यादेतैः समासोक्तैः ।।८३।।

माया—वे उत्पात, जो ऋतु स्वभाव जन्य दोषों को नहीं उत्पन्न करते हैं, अतः ऋषिपुत्र कृत अग्रलिखित श्लोकों के द्वारा संक्षेप में उनको समझना चाहिए।।८३।।

वसन्त ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन

वज्राशनिमहीकम्पसन्ध्यानिर्घातनिःस्वनाः ।
परिवेषरजोधूमरक्तार्कास्तमयोदयाः ।।८४।।
द्रुमेभ्योऽन्नरसस्नेहबहुपुष्पफलोद्गमाः ।
गोपक्षिमदवृद्धिश्च शिवाय मधुमाधवे ।।८५।।

माया—वज्र, अशनि, भूकम्प, दीप्त सन्ध्या, निर्घात, शब्द, सूर्य व चन्द्र का परिवेष, धूली, धूम, रक्तवर्ण के सूर्य का उदयास्त, वृक्षों से अन्न व मधुरादि रस और तेल आदि का उत्पन्न होना, गाय और पक्षिवर्ग में कामेच्छा उत्पन्न होना आदि सभी उत्पात वसन्तु ऋतु अर्थात् चैत्र वैशाख में सबके मंगल के निमित्त होते हैं।।८४-८५।।

ग्रीष्म ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन

तारोल्कापातकलुषं कपिलार्केन्दुमण्डलम् ।
अनग्निज्वलनस्फोटधूमरेण्वनिलाहतम् ।।८६।।
रक्तपद्मारुणा सन्ध्या नभः क्षुब्धार्णवोपमम् ।
सरितां चाम्बुसंशोषं दृष्ट्वा ग्रीष्मे शुभं वदेत् ।।८७।।

भाषा—निरन्तर उल्कापात होने से मलिन आकाश, सूर्य व चन्द्र के पीत मण्डल, अग्नि के अभाव में भी प्रज्वलन का शब्द, धूप, रज व वायु से आच्छादित रक्त कमल के समान लोहित वर्ण की सन्ध्या, सामुद्रिक तरङ्ग युक्त आकाश, नदियों का जल सूखना आदि सभी उत्पात ग्रीष्म ऋतु अर्थात् ज्येष्ठ व आषाढ़ मास में शुभ करने वाले होते हैं॥८६-८७॥

वर्षा ऋतु केप्राकृतिक उत्पात कथन

शक्रायुधपरीवेषविद्युच्छुष्कविरोहणम् ।
कम्पोद्वर्तनवैकृत्यं रसनं दरणं क्षितेः ॥८८॥
सरोनद्युदपानानां वृद्ध्यूर्ध्वतरणप्लवाः ।
सरणं चाद्रिगेहानां वर्षासु न भयावहम् ॥८९॥

भाषा—इन्द्र धनु; सूर्य व चन्द्र का परिवेष, विद्युत्, सूखे वृक्षों में अंकुर आना आदि भूमि का कम्प होना, परिवर्तन, स्वरूपान्त, शब्द करना, फटना आदि, सरोवरों में जलस्तर बढ़ना, नदियों का ऊपर तक आना, वापी, कूप, तालाब आदि के जल में वृद्धि होना, पर्वत और भवनों का गतिमान होना आदि उत्पात वर्षा ऋतु अर्थात् श्रावण व भाद्रपद मासों में शुभकारी होते हैं॥८८-८९॥

शरद् ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन

दिव्यस्त्रीभूतगन्धर्वविमानाद्भुतदर्शनम् ।
ग्रहनक्षत्रताराणां दर्शनं च दिवाऽम्बरे ॥९०॥
गीतवादित्रनिर्घोषा वनपर्वतसानुषु ।
सस्यवृद्धिरपां हानिरपापाः शरदि स्मृताः ॥९१॥

भाषा—दिव्यस्त्री, गन्धर्व, विमान और आश्चर्योत्पादक वस्तुओं का दर्शन, दिन में भी ग्रह, नक्षत्र आदि का दर्शन, वन व पर्वतों में गीत और वाद्ययन्त्रों की ध्वनि का सुनाई देना, धान्यवृद्धि और जलहीन, सभी उत्पात शरद् ऋतु अर्थात् आश्विन व कार्तिक मासों में पाप रहित होते हैं॥९०-९१॥

हेमन्त ऋतु के प्राकृतिक उत्पात कथन

शीतानिलतुषारत्वं नर्दनं मृगपक्षिणाम् ।
रक्षोयक्षादिसत्त्वानां दर्शनं वागमानुषी ॥९२॥
दिशो धूमान्धकाराश्च सनभोवनपर्वताः ।
उच्चैः सूर्योदयास्तौ च हेमन्ते शोभनाः स्मृताः ॥९३॥

भाषा—बर्फ के सदृश वायु में भी शीतलता, मृग व पक्षियों का शब्द, राक्षस,

यक्ष, आदि जीवों का दर्शन, मनुष्य विना वाणी सुनाई देना, अन्धकारपूर्ण आकाश, वन, पर्वत व दिशा तथा उच्च से सूर्य का उदयान्त होना आदि सभी उत्पात हेमन्त ऋतु अर्थात् मार्गशीर्ष व पौष मासों में शुभप्रद होते हैं॥९२-९३॥

शिशिरऋतु के प्रकृतिक उत्पात कथन

हिमपातानिलोत्पाता विरूपाद्भुतदर्शनम् ।
कृष्णाञ्जनाभमाकाशं तारोल्कापातपिञ्जरम् ॥९४॥
चित्रगर्भोद्भवाः स्त्रीषु गोऽजाश्वमृगपक्षिषु ।
पत्राङ्कुरलतानां च विकाराः शिशिरे शुभाः ॥९५॥

माया—हिमपात, वायु सम्बन्धी उत्पात, भीषण जीवों का आश्चर्योत्पादक दर्शन, अञ्जन की तरह काली रात, उल्कापात से पीला आकाश, स्त्री गर्भ से वियोनिजों की उत्पत्ति, गाय, बकरी, घोड़ा, मृग, पक्षी आदि के गर्भ से वियोनिज-विजातीय जीवों की उत्पत्ति, पत्र, लता, अंकुर आदि में विकृति आदि सभी उत्पात शिशिर ऋतु अर्थात् माघ व फाल्गुन मासों में शुभकारी होते हैं॥९४-९५॥

स्वऋतु उत्पात में विशेष कथन

ऋतुस्वभावजा ह्येते दृष्टाः स्वर्त्तौ शुभप्रदाः ।
ऋतोरन्यत्र चोत्पाता दृष्टास्ते चातिदारुणाः ॥९६॥

माया—इस प्रकार उपरोक्त सभी उत्पात ऋतुओं के स्वभाव जन्य होने से शुभफल करने वाले होते हैं। परन्तु ये उत्पात अपने ऋतु से भिन्न ऋतु में दीखने या होने से अत्यन्त कष्टदायक हो जाते हैं॥९६॥

सत्यवक्ता जीव कथन

उन्मत्तानां च या गाथाः शिशूनां यच्च भाषितम् ।
स्त्रियो यच्च प्रभाषन्ते तस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥९७॥

माया—उन्मत्त अर्थात् पागलजन की गाथा, बच्चों का कथन तथा स्त्रियों की वाणी का उल्लङ्घन नहीं होता अर्थात् जो बोलते हैं, सब सत्य होते हैं॥९७॥

सत्यवक्ता मनुष्य कथन

पूर्वं चरति देवेषु पश्चाच्चरति मानुषान् ।
नाचोदिता वाग्वदति सत्या ह्येषा सरस्वती ॥९८॥

माया—प्रेरणा रहित बोलने वाली यह सत्य स्वरूपा, सरस्वती पूर्व काल में देवताओं में ही मात्र विचरण करती थी, लेकिन बाद में वह मनुष्यों को भी उपलब्ध हुई॥९८॥

उत्पात शास्त्र मर्मज्ञ का प्रभाव कथन

उत्पातान् गणितविवर्जितोऽपि बुद्ध्वा
विख्यातो भवति नरेन्द्रबल्लभश्च।
एतत्तन्मुनिवचनं रहस्यमुक्तं
यज्ज्ञात्वा भवति नरस्त्रिकालदर्शी ॥९९॥

माया—विना गणित शास्त्र को जाने, उपरोक्त उत्पातों को जानकर भी मनुष्य यशस्वी और राजा के प्रियपात्र हो जाते हैं। वैसे मुनियों के इन गोपनीय शास्त्र को जानकर मनुष्य त्रिकालदर्शी होता है॥९९॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामुत्पाताध्यायः षट्चत्वारिंशः ॥४६॥

□□□

अथ सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः-४७

मयूरचित्रक निरूपणम्

पुनः मयूर चित्रक कहने का कारण कथन

दिव्यान्तरिक्षाश्रयमुक्तमादौ मया फलं शस्तमशोभनं च।
प्रायेण चारेषु समागमेषु युद्धेषु मार्गादिषु विस्तरेण ॥१॥
भूयो वराहमिहिरस्य न युक्तमेतत् कर्तुं समासकृदसाविति तस्य दोषः।
तज्ज्ञैर्न वाच्यमिदमुक्तफलानुगीति यद्बर्हिचित्रकमिति प्रथितं वराङ्गम् ॥२॥
स्वरूपमेव तस्य तत्प्रकीर्तितानुकीर्तनम्।
ब्रवीम्यहं न चेदिदं तथाऽपि मेऽत्र वाच्यता ॥३॥

माया—हमने बहुधा ग्रहचार, चन्द्रसमागम, युद्ध और वीथि के प्रसङ्ग में प्रारम्भ में ही दिव्य तथा अन्तरिक्ष के आधारवश विस्तार के साथ शुभाशुभ फल का विवेचन किया है। पुनः उनके फल प्रसङ्ग को आधार बनाकर यहाँ भी कथन करना, सारवस्तु को प्रस्तुत करने वाले वराहमिहिर के लिए उचित नहीं है। कारण यह है कि विषय को विस्तार से कहना उनका दोष ही है, परन्तु यहाँ तो पुनरुक्त दोष है, इस प्रकार विद्वानों को तो नहीं ही सोचना चाहिए। वैसे यह बर्हिचित्रक नाम का अध्याय संहिता शास्त्र का एक सुप्रसिद्ध भाग है, जिसका पुनरुक्त फल कथन से इस मयूरचित्रक का उपयुक्त स्वरूप और स्पष्ट होगा। कहने का तात्पर्य है कि पूर्वाध्यायों में शुभाशुभ फल कथन के बावजूद फिर से यहाँ पर मयूरचित्रक का विषय वस्तु लेकर पूर्वोक्त फल का वर्णन करना ही उसका अपना स्वरूप है और उसे फिर से नहीं कहने पर भी तो मेरी आलोचना होगी ही॥१-३॥

ग्रहचारोक्त फल कथन

उत्तरवीथिगता द्युतिमन्तः क्षेमसुभिक्षशिवाय समस्ताः।
दक्षिणमार्गगता द्युतिहीनाः क्षुद्भयतस्करमृत्युकरास्ते ॥४॥

माया—जब प्रकाशमान ग्रह उत्तर वीथियों अर्थात् नाग, गण या ऐरावत नाम के मार्ग में विचरण करते हैं, तो कल्याण, सुभिक्ष और सर्वमंगलकारी होते हैं। मलिन अर्थात् प्रकाशहीन ग्रह दक्षिण वीथियों अर्थात् मृग, अज या दहन नाम के मार्ग में विचरण करते हैं, तो दुर्भिक्ष, चोरों से भय तथा मृत्युदायक होते हैं॥४॥

गुरु व शुक्र चार फल कथन

कोष्ठागारगते भृगुपुत्रे पुष्यस्थे च गिराम्प्रभविष्णौ।
निर्वैराः क्षितिपाः सुखभाजः संहृष्टाश्च जना गतरोगाः ॥५॥

माया—जब शुक्र कोष्ठागार अर्थात् मघा नक्षत्र में तथा गुरु पुष्य नक्षत्र में स्थित होकर विचरण करते हैं, तो राजाजन पारस्परिक शत्रुता से हीन और सुख भोक्ता होते हैं, एवं प्रजाजन भी बलिष्ठ और स्वस्थ होते हैं॥५॥

पुनः चन्द्र आदि ग्रहचार फल कथन

पीडयन्ति यदि कृत्तिकां मघां रोहिणीं श्रवणमैन्द्रमेव वा ।
प्रोज्झ्य सूर्यमपरे ग्रहास्तदा पश्चिमा दिगनयेन पीड्यते ॥६॥

माया—सूर्य को छोड़कर चन्द्रादि ग्रह जब विचरण करते हुए कृत्तिका, मघा, रोहिणी, श्रवणा या ज्येष्ठा नक्षत्र के दक्षिण पथ में संचरण अथवा उसके योगतारा को विद्ध कर पीड़ित करते हैं, तो अन्याय से पश्चिम दिशा पीड़ित होती है॥६॥

पनुः चन्द्र आदि ग्रहचार फल कथन

प्राच्यां चेद् ध्वजवदवस्थिता दिनान्ते
प्राच्यानां भवति हि विग्रहो नृपाणाम् ।
मध्ये चेद् भवति हि मध्यदेशपीडा
रूक्षैस्तैर्न तु रुचिमन्मयूखवद्भिः ॥७॥

माया—यदि सन्ध्या काल में चन्द्र आदि ग्रह पूर्व दिशा में ध्वज के समान दीखते हों, तो पूर्व दिशा में स्थित देश के राजाजनों में आपस में विग्रह होता है। यदि वे आकाश के मध्य भाग में स्थित हों, तो मध्य देश के निवासी जन पीड़ित होते हैं। इस प्रकार का अशुभ फल चन्द्रादि ग्रह के रूक्ष रहने पर ही सम्भव होता है, लेकिन विमल बिम्ब के होने पर शुभफल कहना चाहिए॥७॥

और भी चन्द्र आदि ग्रह चार फल कथन

दक्षिणां ककुभमाश्रितस्तु तैर्दक्षिणापथपयोमुचां क्षयः ।
हीनरूक्षतनुभिश्च विग्रहः स्थूलदेहकिरणान्वितैः शुभम् ॥८॥

माया—चन्द्र आदि ग्रह यदि दक्षिण दिशा में स्थित हों, तो दक्षिण दिशा में उत्पन्न मेघ का नाश करते हैं। जब वे ग्रह रूक्ष व छोटे बिम्ब वाले हों, तो विग्रह और स्थूलकाय किरणों से सम्पन्न बिम्ब वाले होने पर शुभफल करते हैं॥८॥

और भी चन्द्र आदि ग्रहचार फल कथन

उत्तरमार्गे स्पष्टमयूखाः शान्तिकरास्ते तन्नृपतीनाम् ।
ह्रस्वशरीरा भस्मसवर्णा दोषकराः स्युर्देशनृपाणाम् ॥९॥

माया—जब चन्द्र आदि ग्रह स्पष्ट किरणों से सम्पन्न होकर उत्तर मार्ग में विचरण कर रहे हों, तो उत्तर दिशा स्थित देशों के राजाओं के लिए शान्तिप्रद होते हैं। वे ग्रह छोटे

बिम्ब युक्त और भस्म की तरह वर्ण के होने पर उत्तर दिशा के स्थित देशों के राजाओं में द्वेष उत्पन्न करते हैं॥९॥

समग्र नक्षत्र विम्बवश फल कथन

नक्षत्राणां तारकाः सग्रहाणां धूमज्वालाविस्फुलिङ्गान्विताश्चेत् ।
आलोकं वा निर्निमित्तं न यान्ति याति ध्वंसं सर्वलोकः सभूपः ॥१०॥

माया—नक्षत्रों के योगताराओं के साथ ग्रह बिम्बों के धूमज्वाला या अग्निकणों से आच्छादित होने अथवा अकारण प्रकाशहीन दीखने से उससे सम्बन्धित अर्थात् ग्रहभक्ति और कुर्म विभाग के अनुसार उन ग्रह और नक्षत्रों से सम्वन्धित देशों के राजाओं के सहित जनगणों की भी हानि होती है॥१०॥

चन्द्र और सूर्य दर्शन फल कथन

दिवि भाति यदा तुहिनांशुयुगं द्विजवृद्धिरतीव तदाशु शुभा ।
तदनन्तरवर्णरणोऽर्कयुगे जगतः प्रलयस्त्रिचतुष्प्रभृति ॥११॥

माया—आकाश में दो चन्द्र बिम्बों के दीखने पर तत्काल द्विजों की अभिवृद्धि तथा शुभ होता है। इसी तरह दो सूर्य बिम्बों के दीखने पर क्षत्रियों में आपस में युद्ध होता है। लेकिन तीन या चार सूर्यबिम्ब दीखने पर जगत् का नाश होता है॥११॥

केतु संचरण से फल कथन

मुनीनभिजितं ध्रुवं मघवतश्च भं संस्पृशन्
शिखी घनविनाशकृत् कुशलकर्महा शोकदः ।
भुजङ्गमथ संस्पृशेद् भवति वृष्टिनाशो ध्रुव
क्षयं व्रजति विद्रुतो जनपदश्च बालाकुलः ॥१२॥

माया—सप्तर्षि मण्डल, अभिजित् नक्षत्र, ध्रुवतारा अथवा ज्येष्ठा नक्षत्र को स्पर्श करता हुआ केतु मेघों को नष्ट करने वाला, अमङ्गलकारक, कर्म को नाश करने वाला तथा शोक देने वाला भी होता है। श्लेषा नक्षत्र को स्पर्श करता हुआ केतु निश्चय ही वृष्टि की हानि तथा भूख-प्यास से पीड़ित बालकों के साथ जनगण अन्य स्थान पर जाते हुए नष्ट होते हैं॥१२॥

शनि के संचरण का फल कथन

प्राग्द्वारेषु चरन् रविपुत्रो नक्षत्रेषु करोति च वक्रम् ।
दुर्भिक्षं कुरुते महदुग्रं मित्राणां च विरोधमवृष्टिम् ॥१३॥

माया—शनि प्राग्द्वार अर्थात् कृत्तिका से सात नक्षत्र पर्यन्त के नक्षत्रों में संचरण करता हुआ वक्री हो जाने से दुर्भिक्ष, मित्रों में परस्पर अत्यन्त विरोध तथा अनावृष्टि का कारण होता है॥१३॥

रोहिणी शकट भेदन का फल कथन

रोहिणीशकटमर्कनन्दनो यदि भिनत्ति रुधिरोऽथवा शिखी।
किं वदामि यदनिष्टसागरे जगदशेषमुपयाति संक्षयम् ।।१४।।

माया—जब रोहिणी शकट को शनि, मंगल अथवा केतु वेधित करता है, तो उस समय अकल्याण की बात क्या कहा जाय, समस्त विश्व अनिष्ट सागर के भ्रमर में फँसकर नाश को प्राप्त होता है।।१४।।

केतु के उदय का फल कथन

उदयति सततं यदा शिखी चरति भचक्रमशेषमेव वा।
अनुभवति पुराकृतं तदा फलमशुभं सचराचरं जगत् ।।१५।।

माया—जब केतु हमेशा आकाश में दीखता हो अथवा समस्त नक्षत्र चक्र में संचरण करता हो, तो इस स्थिति में चराचर के सहित जगज् जन निरन्तर किये अपने पूर्व कर्मार्जित अनिष्ट फलों का अनुभव करते हैं।।१५।।

अब चन्द्रचार का फल कथन

धनुःस्थायी रूक्षो रुधिरसदृशः क्षुद्भयकरा
बलोद्योगं चन्द्रः कथयति जयं ज्याऽस्य च यतः।
गवां शृङ्गो गोघ्नो निधनमपि सस्यस्य कुरुते
ज्वलन् धूमायन् वा नृपतिमरणायैव भवति ।।१६।।

माया—धनुषाकार, रूक्ष और रक्त सदृश वर्ण का दीखने पर चन्द्र भूख का भय उत्पन्न करने वाला तथा सेनाओं का उद्योग रूप युद्ध आपस में कराने वाला होता है। उस चन्द्र की ज्या या मौर्वी जिस दिशा में हो, उस दिशा के राजाओं की जय होती है। गाय के शृङ्ग के समान उसका शृङ्ग होने पर गौ और धान्यों की हानि करने वाला होता है। यदि वह प्रज्वलित अथवा धूम के समान दीखती है, तो इससे राजाजनों की मृत्यु होती है।।१६।।

और भी चन्द्र चार का फल कथन

स्निग्धः स्थूलः समशृङ्गो विशालस्तुङ्गश्चोदग्विचरन्नागवीथ्याम्।
दृष्टः सौम्यैरशुभैर्विप्रयुक्तो लोकानन्दं कुरुतेऽतीव चन्द्रः ।।१७।।

माया—स्निग्ध, स्थूल, समान शृङ्ग वाला, विपुल और उन्नत चन्द्र उत्तरदिशा की ओर नागवीथि में स्थित होकर शुभ दृष्ट और पापग्रह से रहित होने पर जनगणों को अत्यन्त आनन्द देने वाला होता है।।१७।।

और भी चन्द्र चार का फल कथन

पित्र्यमैत्रपुरुहूतविशाखात्वाष्ट्रमेत्य च युनक्ति शशाङ्कः।
दक्षिणेन न शुभः शुभकृत् स्याद् यद्युदक् चरति मध्यगतो वा ।।१८।।

भाषा—मघा, अनुराधा, ज्येष्ठा, विशाखा या चित्रा नक्षत्र में स्थित चन्द्र दक्षिण पथ से विचरण करने पर अशुभदायक तथा उत्तरपथ अथवा मध्य में से उसके विचरण करने पर वह शुभदायक होता है।।१८।।

परिघ, परिधि, दण्ड आदि का लक्षण कथन

परिघ इति मेघरेखा या तिर्यग्भास्करोदयेऽस्ते वा।
परिधिस्तु प्रतिसूर्यो दण्डस्त्वृजुरिन्द्रचापनिभः ।।१९।।
उदयेऽस्ते वा भानोर्ये दीर्घा रश्मयस्त्वमोघास्ते।
सुरचापखण्डमृजु यद्रोहितमैरावतं दीर्घम् ।।२०।।

भाषा—सूर्य के उदय या अस्त काल में तिरछी मेघरेखा की परिघ संज्ञा, प्रति सूर्य की परिधि संज्ञा, स्पष्ट इन्द्रधनु सदृश रेखा की दण्डसंज्ञा, उदय या अस्त काल में सूर्य के लम्बे किरण की अमोघ संज्ञा, स्पष्ट इन्द्रधनु के भाग की रोहित संज्ञा तथा सीधे व लम्बे इन्द्रधनु की ऐरावत संज्ञा होती है।।१९-२०।।

सन्ध्या का लक्षण व सूर्य बिम्ब फल कथन

अर्धास्तमयात् सन्ध्या व्यक्तीभूता न तारका यावत्।
तेजःपरिहानिमुखाद्भानोरर्धोदयो यावत् ।।२१।।
तस्मिन् सन्ध्याकाले चिह्नैरेतैः शुभाशुभं वाच्यम्।
सर्वैरेतैः स्निग्धैः सद्यो वर्षं भयं रूक्षैः ।।२२।।

भाषा—सूर्य बिम्ब के अर्द्धोदित काल से स्पष्ट रूप में ताराओं के दीखने तक सायं सन्ध्या तथा ताराओं के स्पष्ट रूप में दीखने तक के काल से अर्थात् जब ताराओं की तेज हानि होना शुरु होता है, उस काल से सूर्य बिम्ब के अर्द्धोदित होने तक का काल प्रातः सन्ध्या के नाम से प्रसिद्ध है। इन्हीं सन्ध्याओं के काल में अग्रकथित चिह्नों के होने पर शुभाशुभ विचार करना चाहिए। जिस प्रकार सन्ध्याओं के समय आकाश स्थित समस्त पिण्डों के स्निग्ध दीखने से तत्काल वृष्टि और रूक्ष दीखने से भय उत्पन्न होता है।।२१-२२।।

वृष्टि ज्ञान कथन

अच्छिन्नः परिघो वियच्च विमलं श्यामा मयूखा रवेः
स्निग्धा दीधितयः मितं सुरधनुर्विद्युच्च पूर्वोत्तरा।

स्निग्धो मेघतरुर्दिवाकरकरैरालिङ्गितो वा यदा
वृष्टिः स्याद्यदि वाऽर्कमस्तसमये मेघो महान् छादयेत् ।।२३।।

माया—अखण्ड परिघ, स्वच्छ आकाश, सूर्य की श्याम वर्ण सदृश किरणें, निर्मल दीधिति, श्वेत वर्ण के इन्द्र धनुष, पूर्व-उत्तर दिशा का विद्युत् तथा निर्मल अथवा सूर्य-किरणों से आच्छादित मेघ वृक्ष के होने पर वृष्टि होती है। अथवा जब सायं सन्ध्या के समय अतिशय बड़ा मेघ सूर्य बिम्ब को व्याप्त करता है, तो भी वृष्टि सम्भव होती है।।२३।।

सूर्य बिम्ब के अनुसार फल कथन

खण्डो वक्रः कृष्णो ह्रस्वः काकाद्यैर्वा चिह्नैर्विद्धः ।
यस्मिन् देशे रूक्षश्चार्कस्तत्राभावः प्रायो राज्ञः ।।२४।।

माया—जिस स्थान में खण्ड, कुटिल, कृष्ण, स्वल्प, कौआ आदि पक्षी जैसे चिह्नों से संयुक्त अथवा रूखा सूर्यबिम्ब दृष्ट हो, तो प्राय: उस स्थान में राजा का अभाव होता है।।२४।।

पक्षी के अनुसार राज शकुन कथन

वाहिनीं समुपयाति पृष्ठतो मांसभुक् खगगणो युयुत्सतः ।
यस्य तस्य बलविद्रवो महानग्रगैस्तु विजयो विहङ्गमैः ।।२५।।

माया—जिस युद्ध की आकांक्षा वाले राजा की सेनाओं का अनुसरण किसी मांसाहारी पक्षी समूह द्वारा किया जाता हो, तो उस राजा की सेनाएँ संग्राम भूमि से भाग खड़ी होती हैं तथा उस मांसाहारी पक्षी समूह का अनुसरण करने वाली सेनायें युद्ध भूमि से विजय प्राप्त करके ही वापस आती हैं।।२५।।

सूर्य बिम्ब से अन्य फल कथन

भानोरुदये यदि वास्तमये गन्धर्वपुरप्रतिमा ध्वजिनी ।
बिम्बं निरुणद्धि तदा नृपतेः प्राप्तं समरं सभयं प्रवदेत् ।।२६।।

माया—सूर्य के उदय अथवा अस्त काल में पताका सहित, गन्धर्व नगर की प्रतिमा सूर्य बिम्ब को व्याप्त करती हो, तो राजा को भयानक संग्राम करना पड़ता है, ऐसा कहना चाहिए।।२६।।

सन्ध्या के लक्षणवश शुभाशुभ फल कथन

शस्ता शान्तद्विजमृगघुष्टा सन्ध्या स्निग्धा मृदुपवना च ।
पांशुध्वस्ता जनपदनाशं धत्ते रूक्षा रुधिरनिभा वा ।।२७।।

माया—सन्ध्या के समय सूर्य के विपरीत दिशा में अपना-अपना मुख कर पक्षी

समूह और वनपशु समूह के मीठा शब्द करने पर स्वच्छ धीमी-धीमी वायु के चलने पर शुभकारक होता है। धूलियों से आच्छादित रूखा और रक्तवर्ण की सन्ध्या के दीखने पर देश-प्रदेशों की हानि होती है॥२७॥

आत्म प्रशंसा कथन

यद्विस्तरेण कथितं मुनिभिस्तदस्मिन्
सर्वं मया निगदितं पुनरुक्तवर्जम् ।
श्रुत्वाऽपि कोकिलरुतं बलिभुग्विरौति
यत्तत् स्वभावकृतमस्य पिकं न जेतुम् ॥२८॥

माया—मुनिजनों के द्वारा विस्तार से जिन वस्तुओं को कहा गया है, उसमें पुनरुक्त दोष रहने पर भी उन-उन वस्तुओं को इस मयूर चित्रक नाम के इस अध्याय में मैंने कहा है। इन सबके बावजूद भी दुर्जनजन मेरी आलोचना करें, तो इससे मेरी क्या हानि होगी? जिस प्रकार कोयल के शब्दों को सुनकर भी काक शब्द करता है, कहा जाता है, जबकि वह स्वाभाविक शब्द है न कि कोयल को प्रसन्न करने की इच्छा से कहा गया होता है॥२८॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां मयूरचित्रकंनामाध्यायः सप्तचत्वारिंशः॥४७॥

□□□

अथाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः-४८

पुष्यस्नान निरूपणम्

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

मूलं मनुजाधिपतिः प्रजातरोस्तदुपघातसंस्कारात् ।
अशुभं शुभं च लोके भवति यतोऽतो नृपतिचिन्ता ।।१।।

भाषा—इस जगत् में प्रजारूपी वृक्ष का मूलस्वरूप राजा होता है। जहाँ से उस राजा का उपघात अर्थात् हानि होने से प्रजाजनों का अशुभ और संस्कारित अर्थात् अभिवृद्धि होने से शुभ होता है। अत: वहाँ राजा के क्षय व वृद्धि की चिन्ता करना आवश्यक है।।१।।

यहाँ आगम प्रदर्शनार्थ कथन

या व्याख्याता शान्तिः स्वयम्भुवा सुरगुरोर्महेन्द्रार्थे ।
तां प्राप्य वृद्धगर्गः प्राह यथा भागुरेः शृणुत ।।२।।

भाषा—जिस शान्ति का व्याख्यान ब्रह्माजी ने इन्द्र के हितार्थ बृहस्पति से किया था, उसी को प्राप्त कर वृद्धगर्ग ने भागुरि से जैसा कहा, वैसे-ही उस शान्ति को सुनो।।२।।

पुष्य स्नान की विधि कथन

पुष्यस्नानं नृपतेः कर्तव्यं दैववित्पुरोधाभ्याम् ।
नातः परं पवित्रं सर्वोत्पातान्तकरमस्ति ।।३।।

भाषा—राजा का कर्त्तव्य होना चाहिए कि ज्यौतिष और पुरोहित के संरक्षण में राजा पुष्य स्नान करे; क्योंकि सभी उत्पातों की अशुभता का नाश करने वाला इससे अधिक पवित्र अन्य कोई युक्ति नहीं है।।३।।

राजा के पुष्य स्नान करने का स्थान कथन

श्लेष्मातकाक्षकण्टकिकटुतिक्तविगन्धिपादपविहीने ।
कौशिकगृध्रप्रभृतिभिरनिष्टविहगैः परित्यक्ते ।।४।।
तरुणतरुगुल्मवल्लीलताप्रतानान्विते वनोद्देशे ।
निरुपहतपत्रपल्लवमनोज्ञमधुरद्रुमप्राये ।।५।।

भाषा—श्लेष्मातक अर्थात् लसौड़ा वृक्ष विशेष, अक्ष, कण्टकी, कटु, तिक्त, और दुगन्धि युक्त वृक्षों का जहाँ अभाव हो, उल्लू, गिद्ध आदि अनिष्टकारक पक्षियों से परित्यक्त हो तथा नूतनवृक्ष, गुल्म, लताओं की वल्ली से सम्पन्न, पत्र, पल्लव, सुन्दर,

मधुर स्वाद वाले वृक्षों से संयुक्त वन भूमि में राजा को पुष्य स्नान करने की व्यवस्था करनी चाहिए॥४-५॥

पुष्य स्नान योग्य अन्य स्थान कथन

कृकवाकुजीवजीवकशुकशिखिशतपत्रचाषहारीतैः ।
क्रकरचकोरकपिञ्जलवञ्जुलपारावतश्रीकैः ॥६॥
कुसुमरसपानमत्तद्विरेफपुंस्कोकिलादिभिश्चान्यैः ।
विरुते वनोपकण्ठे क्षेत्रागारे शुचावथवा ॥७॥

माया—मुर्गा, तितर, तोता, मयूर, शतपत्र, चाष, हारीत, क्रकर, चकोर, कपिञ्जल, वञ्जुल, कंबूतर, श्रीकण्ठ आदि पक्षियों के शब्दों से सम्पन्न तथा पुष्पों के मधुररस स्वाद से मत्त भ्रमर, कोकिल आदि के साथ और अन्य शुभशकुनी पक्षियों के चहचहाहट पूर्ण ध्वनियों से सम्पन्न वन के निकट स्वच्छ पुण्य भूमि में पुष्य स्नान की व्यवस्था करनी चाहिए॥६-७॥

और भी पुष्य स्नान योग्य अन्य स्थान कथन

ह्रदिनीविलासिनीनां जलखगनखविक्षतेषु रम्येषु ।
पुलिनजघनेषु कुर्याद् दृङ्मनसोः प्रीतिजननेषु ॥८॥

माया—जलचर पक्षियों के नखों से आहत, नेत्र व मन को संतुष्टि प्रदान करने योग्य नदी रूपी कामिनियों के तीररूपी जंघाओं पर पुष्य स्नान करना चाहिए॥८॥

पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्थान कथन

प्रोत्प्लुतहंसच्छत्रे कारण्डवकुररसारसोद्गीते ।
फुल्लेन्दीवरनयने सरसि सहस्राक्षकान्तिधरे ॥९॥

माया—उड़नशील हंस के सदृश छत्र से सम्पन्न कारण्डव, कुरर, सारस आदि पक्षियों के ध्वनि रूपी संगीत और नील कमल के समान खुले नेत्रों से सम्पन्न तथा इन्द्र सदृश आभा युक्त नदियों के किनारे पुष्य स्नान करना चाहिए॥९॥

पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्थान कथन

प्रोत्फुल्लकमलवदनाः कलहंसकलप्रभाषिण्यः ।
प्रोत्तुङ्गकुड्मलकुचा यस्मिन्नलिनीविलासिन्यः ॥१०॥

माया—पूर्ण विकसित कमल के समान खुली मुख वाली, राजहंसों के मधुर शब्द के समान वचन वाली और कमल मुकुल अर्थात् कली के समान ऊँचे स्तनों वाली पुष्करिणी रूपी युवति के तटरूप जंघाओं पर पुष्य स्नान करना चाहिए॥१०॥

पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्थान कथन

कुर्याद् गोरोमन्थजफेनलवशकृत्खुरक्षतोपचिते ।
अचिरप्रसूतहुङ्कृतवल्गितवत्सोत्सवे गोष्ठे ।।११।।

माया—गायों के चारा खाने के बाद मुँह चलाते रहने से पतित फेन और गोबर युक्त खुरों से आहत भूमि तथा जहाँ उत्पन्न हुए वत्सों या बछड़ों के हूङ्कृति और कूदने-फाँदने से निर्मित उत्सव जैसे वातावरण से सम्पन्न गोष्ठ स्थान में पुष्य स्नान करना चाहिए।।११।।

पुष्य स्नान योग्य और भी अन्य स्नान कथन

अथवा समुद्रतीरे कुशलागतरत्नपोतसम्बाधे ।
घननिचुललीनजलचरसितखगशबलीकृतोपान्ते ।।१२।।

माया—अथवा विना किसी प्रकार के विघ्न-बाधा के आये हुए रत्नों से सम्पन्न पोतों से आच्छादित और घने निचुल वृक्ष विशेष के ऊपर लीन जलचर तथा श्वेत पक्षियों से चित्रित सागर के किनारे पुष्य स्नान करना चाहिए।।१२।।

पुष्य स्नान करने योग्य और भी स्थान कथन

क्षमया क्रोध इव जितः सिंहो मृग्याभिभूयते येषु ।
दत्ताभयखगमृगशावकेषु तेष्वाश्रमेष्वथंवा ।।१३।।

माया—अथवा जिस स्थान में क्षमा रूपी मृगा के द्वारा क्रोध के समान सिंह जीत लिया हो अर्थात् मृग व सिंह परस्पर मित्रभाव से निवास कर रहे हों तथा प्राप्त अभयदान से मृग-शावक और पक्षी भी निर्भिकतापूर्वक भ्रमण कर रहे हो, उस स्थानरूप आश्रम में पुष्य स्नान की व्यवस्था करनी चाहिए।।१३।।

पुष्य स्नान करने योग्य और भी स्थान कथन

काञ्चीकलापनूपुरगुरुजघनोद्वहनविघ्नितपदाभिः ।
श्रीमति मृगेक्षणाभिर्गृहेऽन्यभृतवल्गुवचनाभिः ।।१४।।

माया—अथवा मेखला (करधनी), पायज़ेब और बोझयुक्त जंघाओं के भार से मन्थर गति सम्पन्ना तथा कोयल के समान मधुर बोलने वाली और हिरण सदृश नेत्रों वाली स्त्रियों से शोभा सम्पन्न घर में पुष्यस्नान करना चाहिए।।१४।।

पुष्य स्नान करने योग्य और भी स्थान कथन

पुण्येष्वायतनेषु च तीर्थेषूद्यानरम्यदेशेषु ।
पूर्वोदक्प्लवभूमौ प्रदक्षिणाम्भोवहायां च ।।१५।।

माया—अथवा पवित्र देवस्थान, तीर्थ, उपवन,सुन्दर देश, पूर्व और उत्तर की

ओर झुके हुए स्थान पर तथा प्रदक्षिण क्रम से जहाँ जल बह रहा हो, तो इस प्रकार के स्थान में पुष्य स्नान करना चाहिए॥१५॥

भूमि का लक्षण कथन

भस्माङ्गारास्थ्यूषरतुषकेशश्वभ्रकर्कटावासैः ।
श्वाविधमूषकविवरैर्वल्मीकैर्या च सन्त्यक्ता ॥१६॥
धात्री घना सुगन्धा स्निग्धा मधुरा समा च विजयाय ।
सेनावासेऽप्येवं योजयितव्या यथायोगम् ॥१७॥

माया—भस्म, कोयला, अस्थि, ऊषर, तुष, केश, खात (गड्ढा) वाली, केंकड़ा आदि के निवास करने योग्य, बिल में निवास करने वाले जन्तु जैसे चूहा आदि, दीमक आदि से बने वल्मीक युक्त आदि भूमि को छोड़कर अन्तःसार सम्पन्न, सुगन्ध युक्त, विमल, मधुर और समतल भूमि विजय दिलाने वाली होती है। इस प्रकार उपरोक्त भूमि सेनाओं के निवास करने योग्य उपयुक्त भी होती है॥१६-१७॥

पूर्वोक्त भूमि निवास विधि कथन

निष्क्रम्य पुरान्नक्तं दैवज्ञामात्ययाजकाः प्राच्याम् ।
कौबेर्यां वा कृत्वा बलिं दिशीशाधिपायां वा ॥१८॥
लाजाक्षतदधिकुसुमैः प्रयतः प्रणतः पुरोहितः कुर्यात् ।
आवाहनमथ मन्त्रस्तस्मिन् मुनिभिः समुद्दिष्टः ॥१९॥

माया—उपरोक्त भूमि के पूर्व दिशा, उत्तर दिशा या ईशान कोण में दैवज्ञ, मन्त्री याजकजन रात्रि के समय नगर से आवें तथा फिर विनम्रतापूर्वक पुरोहित पायस, अक्षत, दधि और पुष्पों से उस स्थान पर बलि देकर तत्पश्चात् मुनियों के द्वारा कथित मन्त्रों से देवताओं का आवाहन करे॥१८-१९॥

मुनि कथित आवह्न मन्त्र कथन

आगच्छन्तु सुराः सर्वे येऽत्र पूजाभिलाषिणः ।
दिशो नागा द्विजाश्चैव ये चाप्यन्येंऽशभागिनः ॥२०॥
आवाह्यैवं ततः सर्वानेवं ब्रूयात् पुरोहितः ।
श्वः पूजां प्राप्य यास्यन्ति दत्त्वा शान्तिं महीपतेः ॥२१॥

माया—वे सभी देवता, जो पूजा के आकांक्षी हैं, दिशा, नाग, ब्राह्मण तथा जो कोई अंश भोगी देवगण, यहाँ सादर आगमन करें। इस प्रकार पुरोहित को सभी देवताओं का आवाहन कर आगे कहे अनुसार प्रार्थना करते हुए कहना चाहिए कि आप सभी देवतागण अग्रिम प्रातःकाल में अपना-अपना पूजा प्राप्त कर और राजा को शान्ति प्रदान कर प्रस्थान करेंगे॥२०-२१॥

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

आवाहितेषु कृत्वा पूजां तां शर्वरीं वसेयुस्ते।
सदसत्स्वप्ननिमित्तं यात्रायां स्वप्नविधिरुक्तः ।।२२।।

माया—उपरोक्त प्रकार से आवाहित देवतागण की पूजा करने के पश्चात् सभी लोगों को उसी स्थान पर रात्रि विश्राम करना चाहिए। उस क्रम में जैसा स्वप्न दृष्ट हो, उसके अनुसार शुभाशुभ फल की कल्पना करनी चाहिए। इसे जानने की प्रक्रिया का विचार मैंने अपने यात्रा नाम के ग्रन्थ में विधिवत् किया है।।२२।।

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

अपरेऽहनि प्रभाते सम्भारानुपहरेद्यथोक्तगुणान्।
गत्वाऽवनिप्रदेशे श्लोकाश्चाप्यत्र मुनिगीताः ।।२३।।

माया—अग्रिम दिन प्रातः काल उस भूभाग में जाकर यथोक्त गुणों से सम्पन्न वस्तुओं को एकत्रित करना चाहिए। यहाँ मुनि द्वारा कहे गए अग्रिमोक्त श्लोक रूप कथन इस प्रकार हैं।।२३।।

मुनि-प्रोक्त श्लोक कथन

तस्मिन् मण्डलमालिख्य कल्पयेत्तत्र मेदिनीम्।
नानारत्नाकरवतीं स्थानानि विविधानि च ।।२४।।
पुरोहितो यथास्थानं नागान् यक्षान् सुरान् पितॄन्।
गन्धर्वाप्सरसश्चैव मुनीन् सिद्धांश्च विन्यसेत् ।।२५।।
ग्रहांश्च सर्वनक्षत्रै रुद्रांश्च सह मातृभिः।
स्कन्दं विष्णुं विशाखं च लोकपालान् सुरस्त्रियः ।।२६।।
वर्णकैर्विविधैः कृत्वा हृद्यैर्गन्धगुणान्वितैः।
यथास्वं पूजयेद्विद्वान् गन्धमाल्यानुलेपनैः ।।२७।।
भक्ष्यैरन्नैश्च विविधैः फलमूलामिषैस्तथा।
पानैश्च विविधैर्हृद्यैः सुराक्षीरासवादिभिः ।।२८।।

माया—उस भूभाग में जहाँ पुष्य स्नान करना चाहिए, वहाँ एक मण्डल बनाकर विविध प्रकार के रत्नों से सम्पन्न पृथ्वी तथा बहुशः भू-भागों की परिकल्पना करते हुए पुरोहित को विशेषता क्रम से विचार कर नाग, यक्ष, देव, पितर, गन्धर्व, अप्सरा, मुनि और सिद्धों की यथास्थान स्थापना करनी चाहिए। ब्राह्मी आदि इसके बाद अश्विनी आदि नक्षत्रों के सहित सभी ग्रहों और सभी मातृकाओं के साथ रुद्र, कार्त्तिकेय, विष्णु, विशाखा, लोकपाल और देवताओं की स्त्रियों जैसे इन्द्राणी, गौरी, लक्ष्मी आदि के चित्त को आह्लादित करने वाली सुगन्धियों से सम्पन्न अनेक प्रकार के वर्णों से निमित्त कर विद्वान् सुगन्धितद्रव्य,

माला, चन्दन, नैवेद्य (बलि), अनेक प्रकार के फल, मूल, मांस, अनेक प्रकार के चित्ताकर्षक ताम्बुल, मद्य, दूध, आसव आदि से पूजन करना चाहिए।।२४-२८।।

उपरोक्त देवगणों की पूर्जार्चन-प्रक्रिया कथन

कथयाम्यत: परमहं पूजामस्मिन् यथाभिलिखितानाम् ।
ग्रहयज्ञे य: प्रोक्तो विधिर्ग्रहाणां स कर्तव्य: ।।२९।।
मांसौदनमद्याद्यै: पिशाचदितितनयदानवा: पूज्या: ।
अभ्यञ्जनाञ्जनतिलै: पितरो मांसौदनैश्चापि ।।३०।।
सामयजुर्भिर्मुनयस्त्वृग्भिर्गन्धैश्च धूपमाल्ययुतै: ।
अश्लेषकवर्णैस्त्रिमधुरेण चाभ्यर्चयेद् नागान् ।।३१।।
धूपाज्याहुतिमाल्यैर्विबुधान् रत्न: स्तुतिप्रणामैश्च ।
गन्धर्वानप्सरसो गन्धैर्माल्यैश्च सुसुगन्धै: ।।३२।।
शेषांस्तु सार्ववणिकबलिभि: पूजां न्यसेच्च सर्वेषाम् ।
प्रतिसरवस्त्रपताकाभूषणयज्ञोपवीतानि ।।३३।।

भाषा—एतदनन्तर इस यज्ञ में अपेक्षित देवताओं की जिस प्रकार पूजा की जानी चाहिए, उसे मैं यहाँ कहता हूँ। यात्रा नाम के ग्रन्थ में ग्रह-यज्ञ प्रकरण में ग्रहों की पूजा-विधि जैसी बतायी गई है, उसी विधि से यहाँ भी ग्रहों की पूजा करनी चाहिए। मांस, भात, मद्य आदि से पिशाच, दैत्य व दानवों की पूजन होनी चाहिए। अभ्यञ्जन (स्निग्ध), कज्जल, तिल, मांस व भात से पितरों की पूजा करनी चाहिए। सामवेद व यजुर्वेद के मन्त्र, सुगन्ध द्रव्य, धूप व मालाओं से मुनियों की पूजा करनी चाहिए। अश्लेषक वर्ण और त्रिमधुर अर्थात् मधु, घृत व शर्करा से सर्पों की पूजा करनी चाहिए। धूप, घृत, हवन, माला, रत्न, स्तोत्र और प्रणामों से देवताओं की अर्चना करनी चाहिए। सुगन्धि द्रव्य, माला और सुन्दर गन्धों से गन्धर्व तथा अप्सराओं की तथा विधि वर्ण मिश्रित कलियों से शेष यक्षादि की पूजा करनी चाहिए। पूजा के मध्य में सभी देवता आदि को कुङ्कुम से लाल किया हुआ सूत्र, वस्त्र, ध्वजा, आभूषण तथा यज्ञोपवीत चढ़ाते जाना चाहिए।।२९-३३।।

तदनन्तर के कर्त्तव्य कथन

मण्डलपश्चिमभागे कृत्वाग्निं दक्षिणेऽथवा वेद्याम् ।
आदद्यात् सम्भारान् दर्भान् दीर्घानगर्भांश्च ।।३४।।
लाजाज्याक्षतदधिमधुसिद्धार्थकगन्धसुमनसो धूप: ।
गोरोचनाञ्जनतिला: स्वर्तुजमधुराणि च फलानि ।।३५।।
सघृतस्य पायसस्य च तत्र शरावाणि तैश्च सम्भारै: ।
पश्चिमवेद्यां पूजां कुर्यात् स्नानस्य सा वेदी ।।३६।।

माया—तत्पश्चात् मण्डल के पश्चिम या दक्षिण भाग में वेदी बनानी चाहिए, फिर उसे वेदी पर अग्नि स्थापन कर सामग्रियों को इकट्ठा करें। लम्बे, अखण्डित और गर्भ रहित कुशाओं को तथा पायस, घृत, अक्षत, दधि, मधु, सरसों, सुगन्धित द्रव्य, पुष्प, धूप, गोरोचन, कज्जल, तिल, अपने ऋतुजन्य मधुर फल आदि सामग्रियों के नाम हैं। इन सामग्रियों में से प्रत्येक के साथ घृत और खीर का शराव देकर इनसे उस वेदी के पश्चिम भाग में पूजा करनी चाहिए; क्योंकि वही पुष्य स्नान की वेदी है॥३४-३६॥

तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

तस्याः कोणेषु दृढ़ान् कलशान् सितसूत्रवेष्टितग्रीवान्।
सक्षीरवृक्षपल्लवफलापिधानान् व्यवस्थाप्य॥३७॥
पुष्यस्नानविमिश्रेणापूर्णानम्भसा सरत्नांश्च।
पुष्यस्नानद्रव्याण्यादद्याद् गर्गगीतानि॥३८॥

माया—पूर्वोक्त वेदी के चारों कोणों पर दृढ़ व श्वेत सूत्र से वेष्टित गले वाले, दूध वाले वृक्ष के पल्लव फलों से ढ़के चार कलशों को स्थापित करना चाहिए। उन कलशों को पुष्य स्नान विहित औषधियों से मिश्रित जल, रत्नों और गर्गोक्त पुष्य स्नान सम्बन्धी द्रव्यों से आपूर्ण करना चाहिए॥३७-३८॥

पुष्य स्नान द्रव्य कथन

ज्योतिष्मतीं त्रायमाणामभयामपराजिताम्।
जीवां विश्वेश्वरीं पाठां समङ्गां विजयां तथा॥३९॥
सहां च सहदेवीं च पूर्णकोशां शतावरीम्।
अरिष्टिकां शिवां भद्रां तेषु कुम्भेषु विन्यसेत्॥४०॥
ब्राह्मीं क्षेमामजां चैव सर्वबीजानि काञ्चनीम्।
मङ्गल्यानि यथालाभं सर्वौषध्यो रसास्तथा॥४१॥
रत्नानि सर्वगन्धाश्च बिल्वं च सविकङ्कतम्।
प्रशस्तनाम्न्यश्चौषध्यो हिरण्यं मङ्गलानि च॥४२॥

माया—पूर्वोक्त वेदी के चारों कोणों पर स्थापित कलशों में ज्योतिष्मती, त्रायमाण, अभय, अपराजिता, जीवा, विश्वेशरी, पाठा, समङ्गा, विजया, सहा, सहदेवी, पूर्णकोशा, शतावरी, अरिष्टिका, शिवा, भद्रा आदि औषधियों को डालने चाहिए। एवं ब्राह्मी, क्षेमा, अजा, सभी प्रकार के बीज, काञ्चनी, अन्य मंगल द्रव्य जैसे दधि, अक्षत, पुष्प आदि द्रव्यों में जितनी भी द्रव्यों की प्राप्ति हो, उतने ही द्रव्यों को ले लेना चाहिए।

सर्वौषधि, सभी रस, रत्न, सभी सुगन्धित द्रव्य, बेल, विकङ्कत, प्रशस्त औषधि जैसे—जया, जयन्ती, जीवपुत्रिका, पुनर्नवा, विष्णुक्रान्ता चक्राङ्गा, वाराही, लक्षणा आदि

स्वर्ण आदि धातु, माङ्गलिक औषधि जैसे—गोरोचन, सरसों, दुर्वा, हस्तिप्रद आदि सभी द्रव्यों को डाल देना चाहिए।।३९-४२।।

तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

आदावनडुहश्चर्म जरया संहृतायुषः ।
प्रशस्तलक्षणभृतः प्राचीनग्रीवमास्तरेत् ।।४३।।
ततो वृषस्य योधस्य चर्म रोहितमक्षतम् ।
सिंहस्याथ तृतीयं स्याद् व्याघ्रस्य च ततः परम् ।।४४।।
चत्वार्येतानि चर्माणि तस्यां वेद्यामुपास्तरेत् ।
शुभे मुहूर्ते सम्प्राप्ते पुष्ययुक्ते निशाकरे ।।४५।।

भाषा—प्रशस्त लक्षणों (इस ग्रन्थ के अध्याय ६१) से सम्पन्न वृद्ध होकर मरा हुआ बैल का चर्म लेकर सर्वप्रथम पूर्वाभिमुख बिछा देना चाहिए। एतदनन्तर लोहित वर्ण के योद्धा बैल का छिद्र रहित द्वितीय चर्म बिछाना चाहिए। तत्पश्चात् तृतीय सिंह का चर्म और तत्पश्चात् चतुर्थ व्याघ्र चर्म बिछाना चाहिए। पुष्य नक्षत्र स्थित चन्द्र के काल में शुभमुहूर्त देखकर वेदी के ऊपर इन चारों चर्मों को बिछा देना चाहिए।।४३-४५।।

तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

भद्रासनमेकतमेन कारितं कनकरजतताम्राणाम् ।
क्षीरतरुनिर्मितं वा विन्यस्यं चर्मणामुपरि ।।४६।।
त्रिविधस्तस्योच्छ्रायो हस्तः पादाधिकोऽर्धयुक्तश्च ।
माण्डलिकानन्तरजित्समस्तराज्यार्थिनां शुभदः ।।४७।।

भाषा—वेदी पर बिछाये गये चर्म के ऊपर स्वर्ण, चाँदी, ताँबा या दूधिया वृक्ष से बना हुआ सुन्दर आसन बिछाया जाना चाहिए। इस प्रकार के भद्रपीठ तीन प्रकार की ऊँचाई वाली होनी चाहिए अर्थात् एक हाथ, सवा हाथ और डेढ़ हाथ की ऊँचाई वाली भद्रपीठ अपेक्षानुसार बनानी चाहिए। इस प्रकार माण्डलिक राजा का शुभ करने वाली एक हाथ वाली, विजयेच्छु राजा का हित करने वाली सवा हाथ वाली तथा चक्रवर्ती राजा बनाने की आकांक्षा वाले राजा का हित करने वाली डेढ़ हाथ वाली भद्रपीठ होनी चाहिए।।४६-४७।।

एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

अन्तर्धाय हिरण्यं तत्रोपविशेन्नरेश्वरः सुमनाः ।
सचिवाप्तपुरोहितदैवपौरकल्याणनामवृतः ।।४८।।

भाषा—उपरोक्त भद्रपीठ के मध्य भाग में स्वर्ण रखकर मन्त्री, विश्वस्त बन्धु, पुरोहित, दैवज्ञ, कल्याणकारी नामों से युक्त नगरवासियों के साथ प्रसन्नमन होकर राजा को स्थित होना चाहिए।।४८।।

राजा का लक्षण कथन

वन्दिजनपौरविप्रैः प्रघुष्टपुण्याहवेदनिर्घोषैः ।
समृदङ्गशङ्खतूर्यैर्मङ्गलशब्दैर्हतानिष्टः ॥४९॥

माया—वह राजा ही भद्रपीठ पर बैठने के योग्य होता है, जो बन्दिजनों, पुरवासियों और ब्राह्मणों द्वारा उद्‌घोषित हो तथा पुण्याहवाचन, वेद ध्वनि, मृदङ्ग, शङ्ख और तुरही के माङ्गलिक ध्वनियों से जिनके अनिष्ट का निवारण हुआ हो॥४९॥

तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

अहतक्षौमनिवसनं पुरोहितः कम्बलेन सञ्छाद्य ।
कृतबलिपूजं कलशैरभिषिञ्चेत् सर्पिषा पूर्णैः ॥५०॥

माया—नवीन रेशमी वस्त्र पहने हुए और बलि तथा पूजा से निवृत्त हो चुके राजा का उसे कम्बल से आच्छादित कर पुरोहित को घी भरे हुए कलश से अभिषेक करना चाहिए॥५०॥

कलश का प्रमाण कथन

अष्टावष्टाविंशतिरष्टशतं वापि कलशपरिमाणम् ।
अधिकेऽधिके गुणोत्तरमयं च मन्त्रोऽत्र मुनिगीतः ॥५१॥

माया—आठ, अट्ठाईस, एक सौ आठ या आठ सौ कलश का परिमाण कहा गया है। जो कलश जितने अधिक गुण के होते हैं। उसका फल भी अधिक गुण वाला होता है। इस प्रकार के घृताभिषेक के प्रयोजनार्थ कथित मन्त्र आगे कहे जाते हैं॥५१॥

मुनि कथित मन्त्र कथन

आज्यं तेजः समुद्दिष्टमाज्यं पापहरं परम् ।
आज्यं सुराणामाहार आज्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥५२॥
भौमान्तरिक्षं दिव्यं वा यत्ते कल्मषमागतम् ।
सर्वं तदाज्यसंस्पर्शात् प्रणाशमुपगच्छतु ॥५३॥

माया—घृत तेज कहा गया है, घृत प्रकृष्ट पाप का नाशक है, घृत देवगणों का आहार है, घृत में ही लोक स्थित हैं, भौम अर्थात् चराचरोद्‌भव, आन्तरिक्ष अर्थात् उल्का, निर्घात, पवन, परिवेश, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष आदि से उत्पन्न; दिव्य अर्थात् ग्रह नक्षत्रोद्भव, जो पाप तुम्हारे साथ है, वे सब पाप घृत-स्पर्श से नष्ट हों॥५२-५३॥

तदनन्तर कर्त्तव्य कथन

कम्बलमपनीय ततः पुष्यस्नानाम्बुभिः सफलपुष्पैः ।
अभिषिञ्चेन्मनुजेन्द्रं पुरोहितोऽनेन मन्त्रेण ॥५४॥

भाषा—एतदनन्तर पुरोहित को राजा के शरीर से कम्बल हटा कर फल, फूलों के सहित पुष्य स्नानार्थ रखे जल से अग्रलिखित मन्त्र द्वारा राजा का अभिषेक करना चाहिए॥५४॥

अभिषेक (स्नानार्थ) मन्त्र कथन

सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ये च सिद्धाः पुरातनाः ।
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च साध्याश्च समरुद्गणाः ॥५५॥
आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ च भिषग्वरौ ।
अदितिर्देवमाता च स्वाहा सिद्धिः सरस्वती ॥५६॥
कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिः श्रीश्च सिनीवाली कुहूस्तथा ।
दनुश्च सुरसा चैव विनता कद्रुरेव च ॥५७॥
देवपत्न्यश्च सा नोक्ता देवमातर एव च ।
सर्वास्त्वामभिषिञ्चन्तु दिव्याश्चाप्सरसां गणाः ॥५८॥
नक्षत्राणि मुहूर्ताश्च पक्षाहोरात्रसन्धयः ।
संवत्सरा दिनेशाश्च कलाः काष्ठाः क्षणा लवाः ॥५९॥
सर्वे त्वामभिषिञ्चन्तु कालस्यावयवाः शुभाः ।
एते चान्ये च मुनयो वेदव्रतपरायणाः ॥६०॥
सशिष्यास्तेऽभिषिञ्चन्तु सदाराश्च तपोधनाः ।
वैमानिकाः सुरगणा मनवः सागरैः सह ॥६१॥
सरितश्च महाभागा नागाः किम्पुरुषास्तथा ।
वैखानसा महाभागा द्विजा वैहायसाश्च ये ॥६२॥
सप्तर्षयः सदाराश्च ध्रुवस्थानानि यानि च ।
मरीचिरत्रिः पुलहः पुलस्त्यः क्रतुरङ्गिराः ॥६३॥
भृगुः सनत्कुमारश्च सनकोऽथ सनन्दनः ।
सनातनश्च दक्षश्च जैगीषव्यो भगन्दरः ॥६४॥
एकतश्च द्वितश्चैव त्रितो जाबालिकश्यपौ ।
दुर्वासा दुर्विनीतश्च कण्वः कात्यायनस्तथा ॥६५॥
मार्कण्डेयो दीर्घतपाः शुनःशेफो विदूरथः ।
ऊर्ध्वः संवर्तकश्चैव च्यवनोऽत्रिः पराशरः ॥६६॥
द्वैपायनो यवक्रीतो देवराजः सहानुजः ।
पर्वतास्तरवो वल्ल्यः पुण्यान्यायतनानि च ॥६७॥
प्रजापतिर्दितिश्चैव गावो विश्वस्य मातरः ।
वाहनानि च दिव्यानि सर्वलोकाश्चराचराः ॥६८॥

अग्नयः पितरस्तारा जीमूताः खं दिशो जलम् ।
एते चान्ये च बहवः पुण्यसङ्कीर्तनाः शुभैः ।।६९।।
तोयैस्त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वोत्पातनिबर्हणैः ।
यथाभिषिक्तो मघवानेतैर्मुदितमानसैः ।।७०।।

माया—हे राजन्! सभी देवतागण तुम्हारा अभिषेक करें, सिद्ध, पुरातन देव, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, साध्य, वायुगण, आदित्य, वसु, रुद्र, वैद्यश्रेष्ठ, अश्विनी कुमार, अदिति, देवमाता, स्वाहा, सिद्धि, सरस्वती, कीर्त्ति, लक्ष्मी, धृति, श्री, सिनीवाली, कुहू, दनु, सुरसा, विनता, कद्रू, देवपत्नी, देवमाता, दिव्य अप्सरायें आदि ये तुम्हारा अभिषेक करें।

अश्विनी आदि २७ नक्षत्र, मुहूर्त्त, पक्ष, अहोरात्र की सन्धि, सम्वत्सर, सूर्यादि ग्रह, कला, काष्ठा, क्षण,लव; ये सभी काल के शुभ अवयव तुम्हारा अभिषेक करें। ये सभी और अन्य वेद व्रत परायण, शिष्य और स्त्रियों सहित तपस्वीगण भी तुम्हारा अभिषेक करें।

विमान वाहक देव, मनु, समुद्र, नदी, प्रधान नाग, किन्नर, वैखानस, श्रेष्ठ ब्राह्मण, आकाशगामी, स्त्रियों सहित सप्तर्षिगण, सभी ध्रुवस्थान, मरीचि, अत्रि,पुलह, पुलस्त्य, क्रतु, अङ्गिरा, भृगु,, सनत्कुमार, सनक, सनन्दन, सनातन, दक्ष,जैगीषव्य, भगन्दर, एकत, द्वित, त्रित, जाबालि,कश्यप, दुर्वासा, दुर्विनीत, कण्व, कात्यायन, मार्कण्डेय, दीर्घतप, शुनः शेफ, विदूरथ, ऊर्व, संवर्त्तक, च्यवन, अत्रि, पराशर, द्वैपायन, यवक्रीत, भाईयों सहित देवराज, पर्वत, वृक्ष, लता, पुण्यगृह, प्रज़ापति, दिति, गौ, विश्वमातायें दिव्यवाहन, चराचर, सबलोक, अग्नि, पित्तर, तारा, मेघ, आकाश, दिशा, जल; ये सभी तथा अन्य भी पवित्र कीर्त्ति सम्पन्न, सभी उत्पातों को नष्ट करने वाले; जिस प्रकार प्रसन्नचित्त होकर इन्द्र का अभिषेक किया था, उसी प्रकार तुम्हारा भी अभिषेक करें।।५५-७०।।

इन मन्त्रों के साथ एक और मन्त्र कथन

इत्येतैश्चान्यैश्चाप्यथर्वकल्पाहितैः सरुद्रगणैः ।
कौष्माण्डमहारौहिणकुबेरहृद्यैः समृद्ध्या च ।।७१।।

माया—उपरोक्त मन्त्रों के साथ-साथ अथर्वकल्पोक्त मन्त्र, रूद्रगण, कौष्माण्ड, महारोहिण तथा कौबेर हृदय नाम के मन्त्र से भी अभिषेक किया जाना चाहिए।।७१।।

एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

आपोहिष्ठातिसृभिर्हिरण्यवर्णेति चतसृभिर्जप्तम् ।
कार्पासिकवस्त्रयुगं बिभृयात् स्नातो नराधिपतिः ।।७२।।

माया—राजा के स्नान से निवृत्त होकर 'आपोहिष्ठा' इत्यादि तीन मन्त्रों तथा 'हिरण्यवर्ण' इत्यादि चार मन्त्रों से अभिसिञ्चित वस्त्र धारण करना चाहिए।।७२।।

एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

पुण्याहशङ्खशब्दैराचान्तोऽभ्यर्च्य देवगुरुविप्रान् ।
छत्रध्वजायुधानि च ततः स्वपूजां प्रयुञ्जीत ।।७३।।

माया—एतदनन्तर शुद्ध शरीर होकर राजा को देवता, गुरु और ब्राह्मणों का अभ्यर्चना कर छत्र, ध्वज और खड्ग की पूजा करनी चाहिए। तत्पश्चात् राजा अपने इष्ट देवता की पूजा करें।।७३।।

एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

आयुष्यं वर्चस्यं रायस्पोषाभिर्ऋग्भिरेताभिः ।
परिजप्तं वैजयिकं नवं विदध्यादलङ्कारम् ।।७४।।

एतदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

गत्वा द्वितीयवेदीं समुपविशेच्चर्मणामुपरि राजा ।
देयानि चैव चर्माण्युपर्यपर्येवमेतानि ।।७५।।
वृषस्य वृषदंशस्य रुरोश्च पृषतस्य च ।
तेषामुपरि सिंहस्य व्याघ्रस्य च ततः परम् ।।७६।।

माया—इसके बाद राजा वहाँ से दक्षिण भाग में जाकर द्वितीय वेदी में चर्म के आसन पर बैठे, चर्मों के आसन में विभिन्न चर्मों को वक्ष्यमाण प्रकार ऊपर-ऊपर रखना चाहिए। अर्थात् सर्वप्रथम बैल का , उसके ऊपर बिल्ली का, उसके बाद काला मृग का, फिर उसके बाद हरिण का, फिर उसके बाद सिंह का तथा सबसे ऊपर व्याघ्र का चर्म रखना चाहिए।।७५-७६।।

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

मुख्यस्थाने जुहुयात् पुरोहितोऽग्निं समित्तिलघृताद्यैः ।
त्रिनयनशक्रबृहस्पतिनारायणनित्यगतिऋग्भिः ।।७७।।

माया—पुरोहित मुख्यस्थान (दक्षिण स्थान) में लकड़ी, तिल, घृत आदि सामग्रियों से रुद्र, इन्द्र, बृहस्पति, विष्णु और वायु के मंत्रों का उच्चारण करते हुए अग्नि में आहुति दें।।७७।।

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

इन्द्रध्वजनिर्दिष्टान्यग्निनिमित्तानि दैवविद् ब्रूयात् ।
कृत्वाऽशेषसमाप्तिं पुरोहितः प्राञ्जलिर्ब्रूयात् ।।७८।।

माया—अब दैवज्ञ इन्द्रध्वज प्रसङ्ग में कहा गया अग्नि के लक्षण को व्यक्त करे, फिर यह कार्य पूरा होने पर पुरोहित हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोले॥७८॥

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय पार्थिवात्।
सिद्धिं दत्त्वा तु विपुलां पुनरागमनाय च ॥७९॥

माया—हे देवगण ! आप सभी राजा से पूजा प्राप्त कर चुके हैं; अत: उनको महान् सिद्धि प्रदान कर पुन: आने के लिए सम्प्रति प्रस्थान करें॥७९॥

तत्पश्चात् का कर्त्तव्य कथन

नृपतिरतो दैवज्ञं पुरोहितं चार्चयेद्धनैर्बहुभिः ।
अन्यांश्च दक्षिणीयान् यथोचितं श्रोत्रियप्रभृतीन् ॥८०॥

माया—अनन्तर राजा अनेक प्रकार के धनों से दैवज्ञ और पुरोहित का पूजन करें। फिर दूसरे दक्षिणा प्राप्त करने की योग्यता वाले श्रोत्रिय आदि की भी यथोचित पूजन करें॥८०॥

तदनन्तर का कर्त्तव्य कथन

दत्त्वाऽभयं प्रजानामाघातस्थानगान् विसृज्य पशून्।
बन्धनमोक्षं कुर्यादभ्यन्तरदोषकृद्वर्जम् ॥८१॥

माया—अनन्तर राजा अपने प्रजाजनों को अभयदान प्रदान करते हुए वधशाला में स्थित पशुओं जैसे छाग आदि के साथ-ही आभ्यान्तरिक अपराध करने वाले को छोड़कर अन्य समस्त बन्धन स्थान स्थित जनों को स्वतंत्र करे॥८१॥

पुष्य स्नान का मांहात्म्य

एतत्प्रयुज्यमानं प्रतिपुष्यं सुखयशोऽर्थवृद्धिकरम् ।
पुष्याद्विनार्धफलदा पौषी शान्तिः परा प्रोक्ता ॥८२॥

माया—पुष्य स्नान प्रत्येक पुष्य नक्षत्र में करने वाले को सुख, यश और धन की अभिवृद्धि होती है। पुष्य नक्षत्र को छोड़कर अन्य नक्षत्रों में यथाविधि पुष्य स्नान करने पर आधा फल मिलता है। लेकिन पुष्य नक्षत्र पूर्णिमा से युक्त हो, तो उसमें पुष्यस्नान करने वाले का यह स्नान सर्वोत्कृष्ट होता है॥८२॥

पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य

राष्ट्रोत्पातोपसर्गेषु राहोः केतोश्च दर्शने।
ग्रहावमर्दने चैव पुष्यस्नानं समाचरेत् ॥८३॥

भाषा—यदि राष्ट्र या देश में जिस-किसी प्रकार का उत्पात अथवा उपसर्ग हो अथवा केतु का दर्शन हो, तो अवश्य पुष्य स्नान करना चाहिए।।८३।।

पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य

नास्ति लोके स उत्पातो यो ह्यनेन न शाम्यति ।
मङ्गलं चापरं नास्ति यदस्मादतिरिच्यते ।।८४।।

भाषा—इस संसार में ऐसा कोई उत्पात नहीं, जो इस स्नान से नष्ट नहीं होता। तथा इस प्रकार का अन्य कोई मांगलिक कार्य नहीं, जो इससे अधिक शुभ करने वाला होता हो।।८४।।

पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य

अधिराज्यार्थिनो राज्ञः पुत्रजन्म च काङ्क्षतः ।
तत्पूर्वमभिषेके च विधिरेष प्रशस्यते ।।८५।।

भाषा—महाराजाओं का महाराजा बनने की आकांक्षा वाले और पुत्र की इच्छा करने वाले राजा को अपने प्रथम अभिषेक समय भी पुष्य स्नान की विधि ही अपनाना श्रेष्ठ है।।८५।।

पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य

महेन्द्रार्थमुवाचेदं बृहत्कीर्तिर्बृहस्पतिः ।
स्नानमायुष्प्रजावृद्धिसौभाग्यकरणं परम् ।।८६।।

भाषा—इस स्नान विधि को कीर्त्ति वाले बृहस्पति ने इन्द्र के लिए कहा था। इस स्नान विधि से आयु, प्रजा तथा सौभाग्य की वृद्धि होती है।।८६।।

पुष्य स्नान का और भी माहात्म्य

अनेनैव विधानेन हस्त्यश्वं स्नापयेत्ततः ।
तस्यामयविनिर्मुक्तं परां सिद्धिमवाप्नुयात् ।।८७।।

भाषा—उपरोक्त पुष्य स्नान विधि से जो राजा हाथी व घोड़ों का भी अभिषेक करता है, तो उसे रोग मुक्ति के साथ उसके हाथी व घोड़ों को भी परमसिद्धि की प्राप्ति होती है।।८७।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां पुष्यस्नानं नामाध्याय अष्टचत्वारिंशः।।४८।।

□□□

अथैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः-४९

पट्टलक्षण विचारः

सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन

विस्तरशो निर्दिष्टं पट्टानां लक्षणं यदाचार्यैः।
तत्संक्षेपः क्रियते मयाऽत्र सकलार्थसम्पन्नः ॥१॥

माया—पूर्वाचार्यों ने पट्टों (राज मुकुटों) के जिन लक्षणों को विस्तार से निर्देशित किया है, यहाँ पर सम्पूर्ण अर्थ से सम्पन्न उन्हीं लक्षणों को संक्षिप्त रूप में मेरे द्वारा प्रस्तुत किया जाता है॥१॥

मुकुट प्रमाण और उसका फल कथन

पट्टः शुभदो राज्ञां मध्येऽष्टावङ्गुलानि विस्तीर्णः।
सप्त नरेन्द्रमहिष्याः षड् युवराजस्य निर्दिष्टः ॥२॥
चतुरङ्गुलविस्तारः पट्टः सेनापतेर्भवति मध्ये।
द्वे च प्रसादपट्टः पञ्चैते कीर्तिताः पट्टाः ॥३॥

माया—राजा का मध्य भाग में आठ अंगुल विस्तार वाला मुकुट, रानी का मध्यभाग में सात अङ्गुल विस्तार वाला मुकुट, युवराज का छः अंगुल विस्तार वाला तथा सेनापति का चार अंगुल विस्तार वाला मुकुट शुभदायक होता है। एवं प्रसाद पट्ट संज्ञक दो अंगुल विस्तार वाला मुकुट राजा द्वारा किसी को भी सम्मानित करने हेतु पहनाया जाने वाला होता है। इस प्रकार कुल पाँच प्रकार के मुकुटों की चर्चा की गई है॥२-३॥

पुनः मुकुट प्रमाण और उसका फल कथन

सर्वे द्विगुणायामा मध्यादर्धेन पार्श्वविस्तीर्णाः।
सर्वे च शुद्धकाञ्चनविनिर्मिताः श्रेयसो वृद्ध्यै ॥४॥

माया—उपरोक्त सभी मुकुटों की लम्बाई विस्तार का द्विगुण और उनका पार्श्व विस्तार का आधा होना चाहिए। ये सभी मुकुट शुद्ध रूप से स्वर्ण से निर्मित होने पर श्रेय की अभिवृद्धि करने वाले होते हैं॥४॥

पुनः मुकुट प्रमाण और उसका फल कथन

पञ्चशिखो भूमिपतेस्त्रिशिखो युवराजपार्थिवमहिष्योः।
एकशिखः सैन्यपतेः प्रसादपट्टो विना शिखया ॥५॥

माया—राजा का पञ्चशिख, युवराज और रानी का त्रिशिख तथा सेनापति का

एकशिख मुकुट शुभकारक होता है। एवं प्रसादपट्ट नामक शिखाविहीन मुकुट होता है।।५।।

मुकुट से शुभाशुभ कथन

क्रियमाणं यदि पत्रं सुखेन विस्तारमेति पट्टस्य।
वृद्धिजयौ भूमिपतेस्तथा प्रजानां च सुखसम्पत् ।।६।।

माया—यदि मुकुट का बना पत्र आराम से विस्तारित हो जाय, तो राजा की अभिवृद्धि और विजय तथा प्रजाजनों को सुख व सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।।६।।

मुकुट से और भी शुभाशुभ कथन

जीवितराज्यविनाशं करोति मध्ये व्रणः समुत्पन्नः।
मध्ये स्फुटितस्त्याज्यो विघ्नकरः पार्श्वयोः स्फुटितः ।।७।।

माया—यदि मुकुट के निर्माण के समय धातुपत्र में छिद्र हो जाय, तो राजा काप्राण और राज्य दोनों को आपद् ग्रस्त कहना चाहिए। यदि वह मध्य में फट जाय, तो त्याग कर देना चाहिए। यदि वह दोनों पार्श्व भाग में फट जाय, तो विघ्नकारक होता है।।७।।

मुकुट के अशुभ लक्षण का परिहार कथन

अशुभनिमित्तोत्पत्तौ शास्त्रज्ञः शान्तिमादिशेद्राज्ञः।
शस्तनिमित्तः पट्टो नृपराष्ट्रविवृद्धये भवति ।।८।।

माया—मुकुट में अशुभ लक्षण दीखने पर शास्त्रज्ञजन राजा को उसकी शान्ति कराने हेतु प्रेरित करें। इस प्रकार शुभ लक्षण सम्पन्न मुकुट राजा और राज्य दोनों की अभिवृद्धि करने वाला होता है।।८।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां पट्टलक्षणाध्याय एकोनपञ्चाशत्तमः।।४९।।

□□□

अथ पञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५०

खड्गलक्षण विचारः

सर्वप्रथम खड्ग प्रमाण और विषमाङ्गुल फल

अङ्गुलशतार्धमुत्तम ऊनः स्यात् पञ्चविंशतिः खड्गः ।
अङ्गुलमानाज्ज्ञेयो व्रणोऽशुभो विषमपर्वस्थः ।।१।।

भाषा—पचास अंगुल प्रमाण का खड्ग श्रेष्ठ, पच्चीस अंगुल प्रमाण का खड्ग अधम और पच्चीस से पचास अंगुल प्रमाण के अन्तर्गत का खड्ग मध्यम होता है। यहाँ अंगुल प्रमाण से व्रण अथवा चिह्न मानने पर विषम अंगुलप्रमाण पर स्थित व्रण या चिह्न अशुभदायक जानना चाहिए। अतः वक्ष्यमाण प्रकार से विषम अर्थात् प्रथम, तृतीय, पञ्चम,सप्तम, नवम आदि अंगुल प्रमाण पर दृष्ट लक्षण अशुभफलदायक होता है।।१।।

व्रणों या चिह्नों का शुभफल कथन

श्रीवृक्षवर्धमानातपत्रशिवलिङ्गकुण्डलाब्जानाम् ।
सदृशा व्रणाः प्रशस्ता ध्वजायुधस्वस्तिकानां च ।।२।।

भाषा—बिल्व, वर्धमान, छत्र, शिवलिङ्ग, कुण्डल, कमल, ध्वज, खड्ग, स्वस्तिक आदि और इसी तरह के अन्य शुभ वस्तुओं का व्रण या चिह्न प्रशस्त कहा गया है।।२।।

व्रणों या चिह्नों का अशुभ फल कथन

कृकलासकाककङ्कक्रव्यादकबन्धवृश्चिकाकृतयः ।
खड्गे व्रणा न शुभदा वंशानुगताः प्रभूताश्च ।।३।।

भाषा—कृकलास, काक, कङ्क, क्रव्याद् (मांसाहारी) पक्षी, केवल धड़ भाग, बिच्छू आदि की आकृति वाला व्रण या चिह्न शुभदायक नहीं होता है अथवा खड्ग के वंश (मध्य से शिखर तक) भाग में बहुत अधिक दाग अर्थात् व्रण या चिह्न शुभकारक नहीं होते हैं।।३।।

खड्ग लक्षण और उसका फल कथन

स्फुटितो ह्रस्वः कुण्ठो वंशच्छिन्नो न दृङ्मनोऽनुगतः ।
अस्वन इति चानिष्टः प्रोक्तविपर्यस्त इष्टफलः ।।४।।

भाषा—फटा, छोटा, टूटा, मध्य से कटा तथा दृष्टि व मन से अप्रिय लगने वाला और शब्द रहित खड्ग अशुभदायी होता है। इससे भिन्न लक्षण युक्त शुभदायक खड्ग होता है।।४।।

खड्ग की चेष्टा और फल कथन

क्वणितं मरणायोक्तं पराजयाय प्रवर्तनं कोशात्।
स्वयमुद्गीर्णे युद्धं ज्वलिते विजयो भवति खड्गे ।।५।।

माया—यदि खड्ग से अकस्मात क्वणित ध्वनि हो, तो मरण होता है। म्यान से नहीं निकलने वाला खड्ग पराजय प्रद होता है। म्यान से स्वयं निकलने वाला खड्ग युद्धकारक होता है। एवं अकस्मात् खड्ग के प्रज्वलित हो जाने पर विजय मिलती है।।५।।

खड्ग के प्रसङ्ग से उपयोगी उपदेश कथन

नाकारणं विवृणुयान्न विघट्टयेच्च
पश्येन्न तत्र वदनं न वदेच्च मूल्यम्।
देशं न चास्य कथयेत् प्रतिमानयेन्न
नैव स्पृशेन्नृपतिरप्रयतोऽसियष्टिम् ।।६।।

माया—राजा को चाहिए कि अकारण खड्ग को म्यान से न निकाले, न चलावे, न उससे अपना मुख निहारे, उसका मूल्य और उत्पत्ति स्थान को गोपनीय रखे, खड्ग को अपने अंगुलियों से न नापे तथा असंयतावस्था में उसका न स्पर्श करे।।६।।

खड्ग का अन्य लक्षण कथन

गोजिह्वासंस्थानो नीलोत्पलवंशपत्रसदृशश्च।
करवीरपत्रशूलाग्रमण्डलाग्राः प्रशस्ताः स्युः ।।७।।

माया—खड्ग गाय के जीभ की तरह आकृति वाला, नीलकमल दल के समान, बाँस के पत्र के समान, करवीर पुष्प के पत्र की तरह, शूल की तरह अग्र भाग से युक्त तथा वृत्ताकृति के सदृश अग्र भाग वाला प्रशस्त है।।७।।

खड्ग का अन्य लक्षण कथन

निष्पन्नो न छेद्यो निकषैः कार्यः प्रमाणयुक्तः सः।
मूले म्रियते स्वामी जननी तस्याग्रतश्छिन्ने ।।८।।

माया—उपरोक्त प्रमाण के खड्गों का कसौटी से परीक्षण करना अथवा प्रमाण से अधिक होने पर उसे काटना ठीक नहीं है, लेकिन उसे घिर का प्रमाण तुल्य करना चाहिए। खड्ग के मूल भाग को काटने से उसके स्वामी का तथा अग्र भाग को काटने से उसके स्वामी की माता का मरण होता है।।८।।

खड्ग की मूठ से व्रण कथन

यस्मिन् त्सरुप्रदेशे व्रणो भवेत् तद्वदेव खड्गस्य।
वनितानामिव तिलको गुह्ये वाच्यो मुखे दृष्ट्वा ।।९।।

माया—जैसे स्त्रियों के मुख पर स्थित तिल को देखकर उनके गृह्यस्थान स्थित तिल को जाना और कहा जाता है, वैसे-ही खड्ग की मूठ के दाग को देखकर, उस खड्ग के मध्य या अग्र भाग में व्रण जानना चाहिए।।९।।

प्रश्न से खड्गस्थ व्रण ज्ञान के उपाय कथन

अथवा स्पृशति यदङ्गं प्रष्टा निस्त्रिंशभृत्तदवधार्य ।
कोशस्थस्यादेश्यो व्रणोऽस्ति शास्त्रं विदित्वेदम् ।।१०।।

माया—अथवा किसी खड्ग धारण किय हुए व्यक्ति द्वारा यह पूछा जाना कि मेरे इस खड्ग में व्रण है या नहीं, तो इस स्थिति में वह पृच्छक अपने जिस-किसी अङ्ग का स्पर्श करता हो, उसके अनुसार निश्चयपूर्वक आगे बताये प्रकार से कोशस्थ खड्ग में व्रण की स्थिति को बताना चाहिए।।१०।।

खड्ग में व्रण ज्ञान का प्रकार कथन

शिरसि स्पृष्टे प्रथमेऽङ्गुले द्वितीये ललाटसंस्पर्शे ।
भ्रूमध्ये च तृतीये नेत्रे स्पृष्टे चतुर्थे च ।।११।।

माया—प्रश्न पूछते हुए पृच्छक द्वारा शिर का स्पर्श करने से खड्ग के मूल से प्रथम अंगुल पर; ललाट का स्पर्श करने से द्वितीय अंगुल पर; भ्रूमध्य का स्पर्श करने से तृतीय अंगुल पर तथा नेत्र का स्पर्श करने से चतुर्थ अंगुल पर व्रण बताना चाहिए।।११।।

और भी व्रण ज्ञान का प्रकार कथन

नासौष्ठकपोलहनुश्रवणग्रीवांसके च पञ्चाद्याः ।
उरसि द्वादशसंस्थस्त्रयोदशे कक्षयोर्ज्ञेयः ।।१२।।

माया—अनन्तर नासिका स्पर्श करने से पञ्चम अंगुल पर; ओष्ठ का स्पर्श करने से षष्ठ अंगुल पर; गाल का स्पर्श करने से सप्तम अंगुल पर; ठोड़ी स्पर्श करने से अष्टम अंगुल पर; कान स्पर्श करने से नवम अंगुल पर; गर्दन स्पर्श करने से दशम अंगुल पर; कन्धे का स्पर्श करने से एकादशम अंगुल पर; छाती का स्पर्श करने से द्वादशम अंगुल पर; काँख स्पर्श करने से त्रयोदश अंगुल पर व्रण जानना चाहिए।।१२।।

और भी खड्ग में व्रण ज्ञान प्रकार कथन

स्तनहृदयोदरकुक्षिनाभौ तु चतुर्दशादयो ज्ञेयाः ।
नाभीमूले कट्यां गुह्ये चैकोनविंशतितः ।।१३।।

माया—तदनुसार स्तन स्पर्श करने से चतुर्दश अंगुल पर; हृदय का स्पर्श करने से पञ्चदश अंगुल पर; पेट स्पर्श करने से षोडश अंगुल पर; कुक्षि स्पर्श करने से सप्तदश

अंगुल पर; नाभि स्पर्श करने से अष्टादश अंगुल पर; नाभि मूल स्पर्श करने से एकोनविंशति अंगुल पर; कटि प्रदेश स्पर्श करने से विंशति अंगुल पर व्रण कहना चाहिए॥१३॥

और भी खड्ग में व्रणज्ञान का प्रकार कथन

ऊर्वोर्द्वाविंशे स्यादूर्वोर्मध्ये व्रणस्त्रयोविंशे।
जानुनि च चतुर्विंशे जङ्घायां पञ्चविंशे च ॥१४॥

माया—एवं ऊरू स्पर्श करने से द्वाविंशति अंगुल पर; ऊरू मध्य भाग स्पर्श करने पर त्रयोविंशति अंगुल पर; जानु स्पर्श करने से चतुर्विंशति अंगुल पर तथा जंघा स्पर्श करने से पञ्चविंशति अंगुल पर व्रण बताना चाहिए॥१४॥

और खड्ग में व्रणज्ञान का प्रकार कथन

जङ्घामध्ये गुल्फे पार्ष्ण्यां पादे तदङ्गुलीष्वपि च।
षड्विंशतिकाद् यावत्त्रिंशदिति मतेन गर्गस्य ॥१५॥

माया—अनन्तर जंघा मध्य स्पर्श करने से षड्विंशति अंगुल पर; गुल्फ स्पर्श करने से सप्तविंशति अंगुल पर; एड़ी स्पर्श करने से अष्टाविंशति अंगुल पर; पैर स्पर्श करने से एकोनत्रिंश अंगुल पर तथा पैर की अंगुलियों का स्पर्श करने से त्रिंशद् अंगुल पर व्रण बताना चाहिए। ऐसा गर्गाचार्य के मतानुसार कहा गया है॥१५॥

उपरोक्त खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन

पुत्रमरणं धनाप्तिर्धनहानिः सम्पदश्च बन्धश्च।
एकाद्यङ्गुलसंस्थैर्व्रणैः फलं निर्दिशेत् क्रमशः ॥१६॥

माया—प्रथम आदि अंगुलियों में व्रण होने से क्रमशः पुत्र मरण, धन प्राप्ति, धनहानि, सम्पत्ति और बन्धन आदि प्रकार का फल कहा जाना चाहिए अर्थात् प्रथम अंगुली में व्रण होने से पुत्र मरण, द्वितीय में धन प्राप्ति, तृतीय में धन हानि, चतुर्थ में सम्पति तथा पञ्च में बन्धन योग बताना चाहिए॥१६॥

और खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन

सुतलाभः कलहो हस्तिलब्धयः पुत्रमरणधनलाभौ।
क्रमशो विनाशवनिताप्तिचित्तदुःखानि षट्प्रभृति ॥१७॥

माया—षष्ठ आदि अंगुल में व्रण होने की स्थिति में क्रमशः सुतलाभ, कलह, हाथियों का लाभ, पुत्र मरण, धन लाभ, विनाश, स्त्रीप्राप्ति, मानसिक दुःख कहना चाहिए अर्थात् षष्ठ अंगुली में व्रण होने से सुतलाभ, सप्तम में कलह, अष्टम में हाथियों का लाभ, नवम में पुत्र मरण, दशम में धनलाभ, एकादशम में विनाश, द्वादश में स्त्री प्राप्ति और त्रयोदश में मानसिक दुःख होता है॥१७॥

और भी खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन

लब्धिर्हानिः स्त्रीलब्धयो वधो वृद्धिमरणपरितोषाः ।
ज्ञेयाश्चतुर्दशादिषु धनहानिश्चैकविंशे स्यात् ।।१८।।

माया—एवम्प्रकारेण चतुर्दश अंगुली में व्रण की स्थिति में लाभ, पञ्चदश से हानि, षोडश से स्त्री लाभ, सप्तदश से वध, अष्टादश से वृद्धि, एकोनविंशति से मरण, विंशति अंगुलस्थ व्रण से आत्मसंतोष तथा एकविंशति अगुली में स्थित व्रण से धन हानि होती है।।१८।।

और भी खड्गस्थ व्रण प्रकार का फल कथन

वित्ताप्तिरनिर्वाणं धनागमो मृत्युसम्पदोऽस्वत्वम् ।
ऐश्वर्यमृत्युराज्यानि च क्रमात् त्रिंशदिति यावत् ।।१९।।

माया—इसी तरह द्वाविंश अंगुल में व्रण की स्थित से धन्लाभ, त्रिविंशति से मरण, चतुर्विंशति से धनलाभ, पञ्चविंशति से मृत्यु, षड्विंशति से सम्पत्ति, सप्तविंशति से निर्धनता, अष्टाविंशति से ऐश्वर्य, एकोनत्रिंश से भी मृत्यु तथा त्रिशद् अंगुलस्थ व्रण के होने से राज्य प्राप्ति होती है।।१९।।

त्रिशद् अंगुलों के पश्चात् व्रणों का फल कथन

परतो न विशेषफलं विषमसमस्थास्तु पापशुभफलदाः ।
कैश्चिदफलाः प्रदिष्टास्त्रिंशत्परतोऽग्रमिति यावत् ।।२०।।

माया—वैसे तो त्रिशद् अंगुल के पश्चात् विशेष फल नहीं होता है; फिर भी सामान्यतया विषम अंगुलस्थ व्रण से अशुभफल और सम अंगुलस्थ व्रण से शुभफल की प्राप्ति बताना उपयुक्त है। कुछ आचार्य तीस अंगुल बाद के अङ्गलों में खड्ग के अग्र तक व्रण की स्थिति को निष्फल कहते हैं।।२०।।

खड्ग में गन्ध का सलक्षण फल कथन

करवीरोत्पलगजमदघृतकुङ्कुमकुन्दचम्पकसगन्धः ।
शुभदोऽनिष्टो गोमूत्रपङ्कमेदःसदृशगन्धः ।।२१।।
कूर्मवसासृक्क्षारोपमश्च भयदुःखदो भवति गन्धः ।
वैदूर्यकनकविद्युत्प्रभो जयारोग्यवृद्धिकरः ।।२२।।

माया—करवीर, कमल, हाथीमद, घृत, कुङ्कुम, कुन्द अथवा चम्पा पुष्प के सदृश गन्ध होने पर शुभदायक कहा गया है। परन्तु गोमूत्र, पङ्क या मेद के समान गन्ध होने पर अशुभदायक माना है।

कछुआ, मज्जा, रक्त अथवा क्षार के समान गन्ध होने पर भय उत्पन्न करने वाला

और दुःखदायक तथा वैदूर्यमणि, स्वर्ण, विद्युत् आदि के समान खड्ग की कान्ति होने पर जय, आरोग्य तथा उन्नतिकारक कहा गया है॥२१-२२॥

शस्त्रपान प्रकार कथन

इदमौशनसं च शस्त्रपानं रुधिरेण श्रियमिच्छतः प्रदीप्ताम्।
हविषा गुणवत्सुताभिलिप्सोः सलिलेनाक्षयमिच्छतश्च वित्तम् ॥२३॥
वडवोष्ट्रकरेणुदुग्धपानं यदि पापेन समीहतेऽर्थसिद्धिम्।
झषपित्तमृगाश्वबस्तदुग्धैः करिहस्तच्छिदये सतालगर्भैः ॥२४॥

माया—एतदनन्तर उत्कृष्ट लक्ष्मी की अभिलाषा करने वाले को अपने शस्त्र में रक्त अर्थात् खून से पान देना चाहिए। इसी तरह गुणी पुत्र की चाहत रखने वालों को घृत से, अतुलित धन की लालसा करने वालों को जल से , पापकर्म (मारणादि) से धनोपार्जित करने वाले को घोड़ी, ऊँटनी, हथिनी आदि के दूध से तथा हाथी के शुण्ड को काटने की अपेक्षा वाले को ताड़ रस अर्थात् ताड़ी में मछली के पित्त और हिरणी, घोड़ी अथवा बकरी के दूध मिलाकर उस मिश्रण से पान देना चाहिए॥२३-२४॥

शस्त्रपान देने का और प्रकार कथन

आर्कं पयो हुडुविषाणमषीसमेतं
पारावताखुशकृता च युतः प्रलेपः।
शस्त्रस्य तैलमथितस्य ततोऽस्य पानं
पश्चाच्छितस्य न शिलासु भवेद्विघातः ॥२५॥

माया—तथा तिल के तेल से शस्त्र पर मालिश करने के पश्चात् आकपुष्प के वृक्ष का दूध, छागसींग का भस्म तथा कबूतर व चूहे की बींट; सभी को मिलाकर उस मिश्रण का लेपन करना चाहिए, तत्पश्चात् शस्त्र को तेज या धारदार करने के बाद उससे पत्थर पर भी मारने से शस्त्र टूटता नहीं॥२५॥

शस्त्र पान देने का और प्रकार कथन

क्षारे कदल्या मथितेन युक्ते दिनोषिते पायितमायसं यत्।
सम्यक् शितं चाश्मनि नैति भङ्गं न चान्यलोहेष्वपि तस्य कौण्ठ्यम् ॥२६॥

माया—केले की राख को मट्ठा में मिला कर उसमें लोहे को छोड़ दें, एक अहोरात्र पश्चात् उसे निकाल कर उस लोहे में तेज या धार उत्पन्न कर उससे पत्थर अथवा अन्य लोहे पर वार करने से धारदार लोहा टूटता नहीं॥२६॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां खड्गलक्षणाध्यायः पञ्चाशत्तमः॥५०॥

□□□

अथैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५१

अङ्गविद्या विचारः

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

दैवज्ञेन शुभाशुभं दिगुदितस्थानाहृतानीक्षता
वाच्यं प्रष्टृनिजापराङ्गघटनां चालोक्य कालं धिया।
सर्वज्ञो हि चराचरात्मकतयाऽसौ सर्वदर्शी विभु-
श्चेष्टाव्याहृतिभिः शुभाशुभफलं सन्दर्शयत्यर्थिनाम् ॥१॥

माया—दैवज्ञ को पृच्छक के शुभाशुभ फल का उस की दिशा, वाणी, स्थान, उसके द्वारा लायी गई वस्तु तथा पृच्छक के स्वयं के अपने और उस समय स्थित अन्य व्यक्तियों के अङ्ग आदि सम्बन्धी घटनाओं का अवलोकन करते हुए उस काल का भी अपने विवेक से विचार कर निर्णय करना चाहिए। क्योंकि वह काल समस्त जन्तुओं और स्थावरों का आत्मस्वरूप होने से प्रभु है, सब कुछ जानने वाला और सबको देखने वाला भी है। वही चेष्टा और सम्भाषणों से पृच्छक का शुभाशुभ फल स्पष्टतया दिखलाता है॥१॥

प्रश्नार्थ शुभ स्थान निर्देशार्थ कथन

स्थानं पुष्पसुहासिभूरिफलभृत्सुस्निग्धकृत्तिच्छदा-
सत्पक्षिच्युतशस्तसञ्ज्ञिततरुच्छायोपगूढं समम्।
देवर्षिद्विजसाधुसिद्धनिलयं सत्पुष्पसस्योक्षितं
सत्स्वादूदकनिर्मलत्वजनिताह्लादं च सच्छाद्वलम् ॥२॥

माया—इस प्रकार खिले हुए पुष्पों से सम्पन्न, बहुत-सारे फलों वाले, चिकना छाल और पत्तों वाले अशुभकर पक्षियों से विहीन, प्रशस्त वृक्षों की छाया से व्याप्त तथा समतल भूमि एवं देवता, ऋषि, द्विज, साधुओं अथवा सिद्धों से सम्बन्धित स्थान, सुन्दर पुष्प व धान्यों से परिपूर्ण स्थान, सुन्दर, स्वादिष्ट व स्वच्छ जल से उत्पन्न, आह्लादित स्थान और सुन्दर दुर्वाओं से आच्छादित स्थान; ऐसे स्थानों पर पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछे जाना शुभकारक होता है॥२॥

प्रश्नार्थ अशुभ स्थान निर्देशार्थ कथन

छिन्नभिन्नकृमिखातकण्टकिप्लुष्टरूक्षकुटिलैर्न सत्कुजैः।
क्रूरपक्षियुतनिन्द्यनामभिः शुष्कशीर्णबहुपर्णचर्मभिः ॥३॥

माया—जो कटा-फटा, कृमि युक्त, गड्ढों वाला और काँटों से युक्त जला,

रूखा, वक्री, अशुभकारी पक्षियों के निवास करने वाला, अल्प पत्र और छाल से रहित वृक्ष से युक्त आदि जैसे स्थान प्रश्न पूछने के योग्य नहीं होता है।।३।।

और भी प्रश्नार्थ अशुभ स्थान निर्देशार्थ कथन

श्मशानशून्यायतनं चतुष्पथं तथाऽमनोज्ञं विषमं सदोषरम्।
अवस्कराङ्गारकपालभस्मभिश्चितं तुषैः शुष्कतृणैर्न शोभनम् ।।४।।

माया—श्मशान, एकान्त देव गृह, चतुष्पथ, मन में ग्लानि उत्पन्न करने योग्य, असमतल, सदा से ऊषर (परती भमि); अशुद्ध टूटे-फूटे भाण्ड, कोयला, मानव कपाल, भस्म, तुष (भूसी) और सूखे-से घासों से आच्छादित आदि जैसे स्थान भी प्रश्न करने के लिए निन्द्य कहा गया है।।४।।

और भी प्रश्नार्थ अशुभ स्थान निर्देशार्थ कथन

प्रव्रजितनग्ननापितरिपुबन्धनसौनिकैस्तथा श्वपचैः।
कितवयतिपीडितैर्युतमायुधमाध्वीकविक्रयैर्न शुभम् ।।५।।

माया—सन्यासी, नग्न मनुष्य, हजाम, शत्रु, बन्धक रखने वाला, वध शाला, चाण्डाल, धूर्त, यति आदि के निवास करने के स्थान में प्रश्न नहीं करना चाहिए, इसी तरह मद्यशाला, शस्त्रगृह जैसे स्थान भी प्रश्नार्थ निन्द्य होते हैं।।५।।

प्रश्नार्थ दिशा व काल का लक्षण कथन

प्रागुत्तरेशाश्च दिशः प्रशस्ताः प्रष्टुर्न वाय्वम्बुयमाग्निरक्षः।
पूर्वाह्णकालेऽस्ति शुभं न रात्रौ सन्ध्याद्वये प्रश्नकृतोऽपराह्णे ।।६।।

माया—पूर्व दिशा, उत्तर दिशा व ईशान कोण की ओर मुख कर प्रश्न पूछना प्रशस्त है। वायव्य कोण, पश्चिम दिशा, दक्षिण दिशा, आग्नेय कोण, नैर्ऋत्य कोण आदि की ओर मुख कर प्रश्न पूछना अप्रशस्त अर्थात् अशुभदायक है। एवं पूर्वाह्ण काल में प्रश्न पूछना शुभदायक होता है, लेकिन रात्रि, दोनों सन्ध्यायें या अपराह्णकाल में प्रश्न पूछना अशुभदायक है।।६।।

प्रश्न काल में अन्य शुभाशुभ लक्षण कथन

यात्राविधाने हि शुभाशुभं यत् प्रोक्तं निमित्तं तदिहापि वाच्यम्।
दृष्ट्वा पुरो वा जनताहृतं वा प्रष्टुः स्थितं पाणितलेऽथ वस्त्रे ।।७।।

माया—जैसा यात्रा विधान में शुभाशुभ निमित्त बताये गये हैं, उन निमित्तों के सम्मुख रहने पर, दूसरे मनुष्य से आगत, पृच्छक के हस्तगत या वस्त्र में दृष्ट शुभाशुभ का विचार करना चाहिए। तात्पर्य यह कि सरसों, शीशा, जल, काजल आदि दृष्ट होने पर शुभ और कपास, औषधि, कृष्णधान्य आदि के दृष्ट होने पर अशुभ जानना चाहिए।।७।।

अङ्गविद्या विचारः-५१

पुरुषसंज्ञक अङ्ग कथन

अथाङ्गान्यूर्वोष्ठस्तनवृषणपादं च दशना
भुजौ हस्तौ गण्डौ कचगलनखाङ्गुष्ठमपि यत्।
सशङ्खं कक्षांसं श्रवणगुदसन्धीति पुरुषे

माया—ऊरु, ओष्ठ, स्तन, अण्डकोष, पाद, दाँत, बाहु, हाथ, गाल, बाल, कण्ठ, नाख, अंगुष्ठ, शंख, काँख, कन्धा, कान, गुप्तेन्द्रिय, अङ्गसन्धि स्थान आदि सभी अङ्ग पुरुष संज्ञक होते हैं।।७-१/२।।

स्त्री संज्ञक अङ्ग कथन

स्त्रियां भ्रूनासास्फिग्वलिकटिसुलेखाङ्गुलिचयम् ।।८।।
जिह्वा ग्रीवा पिण्डिके पार्ष्णियुग्मं जङ्घे नाभिः कर्णपाली कृकाटी।

माया—भौंह, नाक, स्फिक्, त्रिवली, कमर, करमध्य की स्वच्छ रेखा, अंगुली, जीह्वा, गला, दोनों कन्धाओं का पृष्ठ भाग, एड़ी, जंघा, नाभि, कर्णपाली, कृकाटी (गले का पृष्ठ भाग) आदिसभी अङ्ग स्त्री संज्ञा से युक्त होती है।।८-१/२।।

नपुंसक संज्ञक अङ्ग कथन

वक्त्रं पृष्ठं जत्रुजान्वस्थिपार्श्वंहृत्ताल्वक्षी मेहनोरस्त्रिकं च ।।९।।
नपुंसकाख्यं च शिरो ललाटमाश्वाद्यसंज्ञैरपरैश्चिरेण।
सिद्धिर्भवेज्जातु नपुंसकैर्नो रूक्षक्षतैर्भग्नकृशैश्च पूर्वैः ।।१०।।

माया—मुख, पीठ, काँखों की सन्धियाँ, जानु, हड्डी, पार्श्वभाग, हृदय, तालु, नेत्र, लिङ्ग, छाती, त्रिक (कटि प्रदेश पृष्ठ भाग), शिर, ललाट आदि अंग नुपंसक संज्ञक हैं।

आद्य अर्थात् पुरुष संज्ञक अङ्ग का स्पर्श करता हुआ पृच्छक के प्रश्न करने पर शीघ्र कार्य सिद्धि कहनी चाहिए। अपर अर्थात् स्त्री संज्ञक अङ्ग के स्पर्श करने से देर से कार्यसिद्धि तथा नपुंसक संज्ञक अङ्ग स्पर्श से 'कदापि कार्य सिद्धि नहीं' होगी कहनी चाहिए। एवं पुरुष संज्ञक या स्त्री संज्ञक अंग रूक्ष, विक्षत, भग्न अथवा दुबला होने पर भी कभी भी कार्य सिद्धि नहीं ही कहनी चाहिए।।९-१०।।

पृथक्-पृथक् अङ्ग स्पर्श फल कथनं

स्पृष्टे वा चालिते वापि पादाङ्गुष्ठेऽक्षिरुग्भवेत्।
अङ्गुल्यां दुहितुः शोकं शिरोघाते नृपाद् भयम् ।।११।।

माया—पृच्छक के अपने पैर के अंगुष्ठ को स्पर्श करते अथवा हिलाते हुए प्रश्न पूछने से नेत्र रोग; अंगुली स्पर्श करते या हिलाते हुए प्रश्न पूछने से कन्या को शोक तथा शिर पर आघात करते हुए प्रश्न पूछने से राजभय कहना चाहिए।।११।।

छाती आदि अंगों के स्पर्श का फल कथन

विप्रयोगमुरसि स्वगात्रतः कर्पटाहतिरनर्थदा भवेत् ।
स्यात् प्रियाप्तिरभिगृह्य कर्पटं पृच्छतश्चरणपादयोजितुः ।।१२।।

पृच्छक अपनी छाती स्पर्श करता हुआ प्रश्न पूछे, तो विप्रयोग अर्थात् प्रेम की विछोह होता है। अपने शरीर से वस्त्र उतारते हुए प्रश्न पूछने से अनर्थ होता है। वस्त्र को पकड़ कर एक पैर को दूसरे पर रखते हुए प्रश्न करने पर प्रियजन से मिलन होता है।।१२।।

पैर के अंगुष्ठादि से फल कथन

पादाङ्गुष्ठेन विलिखेद् भूमिं क्षेत्रोत्थचिन्तया ।
हस्तेन पादौ कण्डूयेत्तस्य दासीमयी च सा ।।१३।।

भाषा—पृच्छक द्वारा पैर के अंगुष्ठ से जमीन पर लिखने का प्रयत्न करने पर खेती-गृहस्थी की चिन्ता होती है। अपने दोनों हाथों से अपने ही दोनों पैरों को खुजलाने पर दासी की चिन्ता होती है।।१३।।

प्रश्न समय ताल या भोजपत्र दर्शन का फल कथन

तालभूर्जपटदर्शनेंऽशुकं चिन्तयेत् कचतुषास्थिभस्मगम् ।
व्याधिराश्रयति रज्जुजालकं वल्कलं च समवेक्ष्य बन्धनम् ।।१४।।

भाषा—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछे जाते समय ताल अर्थात् ताड़ पत्र अथवा भोजपत्र अथवा वस्त्र का दर्शन होने से वस्त्र की चिन्ता जाननी चाहिए। बाल, भूसी, अस्थि या भस्म पर स्थित होकर प्रश्न पूछने पर रोग तथा रस्सी का जाल अथवा वृक्ष का छाल प्रश्न के समय दिखे, तो बन्धन कहना चाहिए।।१४।।

प्रश्न समय पीपल आदि दर्शन का फल कथन

पिप्पलीमरिचशुण्ठिवारिदै रोध्रकुष्ठवसनाम्बुजीरकैः ।
गन्धमांसिशतपुष्पया वदेत् पृच्छतस्तगरकेण चिन्तयेत् ।।१५।।
स्त्रीपुरुषदोषपीडितसर्वार्थसुतार्थधान्यतनयानाम् ।
द्विचतुष्पदक्षितीनां विनाशतः कीर्तितैर्दृष्टैः ।।१६।।

भाषा—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय पीपल, मिर्च, सोंठ, मुस्ता, लोध, कूर, वस्त्र, जल, जीरा, गन्धमांसि (बालछड़), सोंफ, तगर के फूल का नाम बोलने अथवा दर्शन होने से क्रमशः स्त्री दोष, पुरुष दोष, रोगी, सर्वनाश, अर्थनाश, पुत्रनाश, अर्थनाश, धान्यनाश, पुत्रनाश, द्विपदनाश, चतुष्पदनाश, भूमि नाश आदि की चिन्ता होती है। अर्थात् पीपल कहने या दर्शन होने से स्त्री दोष, मिर्च कहने या दर्शन से पुरुष दोष आदि की तथा अन्य का भी इसी प्रकार चिन्ता करनी चाहिए।।१५-१६।।

प्रश्न समय हस्तस्थ न्यगोधादि वश फल कथन

न्यग्रोधमधुकतिन्दुकजम्बूप्लक्षाम्रबदरजातिफलैः ।
धनकनकपुरुषलोहांशुकरूप्यौदुम्बराप्तिरपि करगैः ।।१७।।

माया—पृच्छक द्वारा अपने हाथ मे बड़, महुआ, तेन्दू, जामुन, पाकड़, आम, बेर, आदि लेकर प्रश्न पूछने पर क्रम से धन, स्वर्ण, द्विपद, लोहा, वस्त्र, चाँदी, ताँबा आदि का लाभ होता है अर्थात् बड़ हाथ में होने से धन का लाभ, महुआ हाथ में होने से स्वर्ण लाभ, तेन्दु से द्विपद, जातुन से लोहा, पाकड़ से वस्त्र, आम से चाँदी और बेर से ताँबा का लाभ होता है।।१७।।

प्रश्न समय के धान्य पूर्णपात्र आदि का फल कथन

धान्यपरिपूर्णपात्रं कुम्भः पूर्णः कुटुम्बवृद्धिकरौ ।
गजगोशुनां पुरीषं धनयुवतिसुहृद्विनाशकरम् ।।१८।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछते समय धान्यपूर्ण पात्र अथवा पूर्ण कुम्भ (पाढ़ा) दीखने पर उसके कुटुम्ब की वृद्धि होतीहै। प्रश्न पूछते समय हाथी की लीद, गाय का गोबर और कुत्ते की विष्ठा दीखने पर क्रमशः धन का नाश, युवती, स्त्री नाश और मित्रों का नाश होता है।।१८।।

प्रश्न समय पशु आदि के दर्शन का फल कथन

पशुहस्तिमहिषपङ्कजरजतव्याघ्रैर्लभेत् सन्दृष्टैः ।
अविधननिवसनमलयजकौशेयाभरणसङ्घातम् ।।१९।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय पशु, हाथी, महिष, कमल, चाँदी और बाघ के दीखने पर क्रम से कम्बल आदि ऊनी वस्त्र, धन, रेशमी वस्त्र, चन्दन, रेशमी वस्त्र तथा अलङ्करण का लाभ होता है। अर्थात् प्रशन समय में पशु दर्शन से ऊनी वस्त्र का, हाथी से धन का, महिष से रेशमी वस्त्र का, कमल से चन्दन का, चाँदी से रेशमी वस्त्र का और बाघ के दर्शन से अलङ्करण का लाभ होता है।।१९।।

प्रश्न समय में वृद्धश्रावक आदि दर्शन फल कथन

पृच्छा वृद्धश्रावकसुपरिव्राड्दर्शने नृभिर्विहिता ।
मित्रद्यूतार्थभवा गणिकानृपसूतिकार्थकृता ।।२०।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय वृद्ध श्रावक का दर्शन होने से मित्र, द्यूत और धन प्रसङ्ग की चिन्ता होती है। एवं उत्कृष्ट सन्यासीका दर्शन होने से वेश्या, राजा और प्रसूता स्त्री की चिन्ता होती है।।२०।।

प्रश्न समय में शावय आदि दर्शन फल कथन

शाक्योपाध्यायार्हन्निर्ग्रन्थिनिमित्तनिगमकैवर्तैः ।
चौरचमूपतिवणिजां दासीयोधापणस्थवध्यानाम् ।।२१।।

माया—पृच्छक के प्रश्न पूछने के समय शाक्य, उपाध्याय, अर्हन्, निर्ग्रन्थी, दैवज्ञ, निगम और धीवर का दर्शन होने से क्रम से चोर, सेनापति, वणिक्, दासी, योद्धा, व्यवसायी और वध के प्रसङ्ग की चिन्ता होती है अर्थात् शाक्य दर्शन होने से चोर की, उपाध्याय से सेनापति की; अर्हन् से वणिक्, निग्रन्थी से दासी, दैवज्ञ से योद्धा निगम से व्यवसायी तथा धीवर का दर्शन होने से वध की चिन्ता होती है।।२१।।

प्रश्न समय में तापस आदि दर्शन फल कथन

तापसे शौण्डिके दृष्टे प्रोषितं पशुपालनम् ।
हृद्गतं प्रच्छकस्य स्यादुञ्छवृत्तौ विपन्नता ।।२२।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय तापस का दर्शन होने से प्रवासी पन की, शौण्डिक (मद्य विक्रेता) का दर्शन होने से पशुओं की रक्षा-सुरक्षा की तथा उच्छ वृति वाले व्यक्ति का दर्शन होने से विपन्नता सम्बन्धी चिन्ता होती है।।२२।।

पृच्छक के शब्दों से वस्तु चिन्ता कथन

इच्छामि प्रष्टुं भण पश्यत्वार्यः समादिशेत्युक्ते ।
संयोगकुटुम्बोत्था लाभैश्वर्योद्भता चिन्ता ।।२३।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के लिए उसके मुँह से निकलने वाले शब्द 'मैं पूछना चाहता हूँ या आप कहिए, इस प्रकार के हों, तो समझौता अथवा कुटुम्ब प्रसङ्ग की 'आप देखिए' इस प्रकार के हो, तो लाभ प्रसङ्ग की तथा 'आप आज्ञा दें' इस प्रकार के हों, तो ऐश्वर्य वृद्धि प्रसङ्ग की चिन्ता समझनी चाहिए।।२३।।

प्रश्न समय के शब्दों से अन्य चिन्ता कथन

निर्दिशेति गदिते जयाध्वजा प्रत्यवेक्ष्य मम चिन्तितं वद ।
आशु सर्वजनमध्यगं त्वया दृश्यतामिति च बन्धुचौरजा ।।२४।।

माया—पृच्छक के मुख से सर्वप्रथम 'बताईए' इस प्रकार के शब्द निकलने पर विजय अथवा पथ प्रसङ्ग की, 'देखकर मेरे हृदय गत बातों को बताईए' इस प्रकार के शब्द निकलने पर बन्धु सम्बन्धी तथा 'आप शीघ्र देखिए' इस प्रकार के शब्द निकलने पर सभी लोगों के बीच स्थित पृच्छक के चोर प्रसङ्ग की चिन्ता बतानी चाहिए।।२४।।

अङ्गों के स्पर्श से चौर विज्ञान कथन

अन्तःस्थेऽङ्गे स्वजन उदितो बाह्यजे बाह्य एव
पादाङ्गुष्ठाङ्गुलिकलनया दासदासीजनः स्यात् ।

जङ्घे प्रेष्यो भवति भगिनी नाभितो हृत्स्वभार्या
पाण्यङ्गुष्ठाङ्गुलिचयकृतस्पर्शने पुत्रकन्ये ।।२५।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय अपना अन्तरङ्ग अङ्ग का स्पर्श करने से स्वजन, बाह्य अङ्ग का स्पर्श करने से बाहरीजन, पैर के अंगुष्ठ का स्पर्श करने से दास, पैर की अंगुली का स्पर्श करने से दासी, जंघा स्पर्श करने से प्रेष्य (दूत), नाभि का स्पर्श करने से बहन, हृदय स्पर्श करने से उसकी स्त्री, हाथ की अंगुष्ठ स्पर्श करने से उसका पुत्र तथा हाथ की अंगुली स्पर्श करने से उसकी कन्या को 'चोर' समझना चाहिए।।२५।।

उदर आदि स्पर्श से चोर विज्ञान कथन

मातरं जठरे मूर्ध्नि गुरुं दक्षिणवामकौ ।
बाहू भ्राताऽथ तत्पत्नी स्पृष्ट्वैवं चौरमादिशेत् ।।२६।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछन के समय अपना पेट स्पर्श करने पर माता, शिर स्पर्श करने पर गुरु, दाहिना हाथ स्पर्श करने पर भाई तथा बायाँ हाथ स्पर्श करने पर उसकी भाभी को चोर जानना चाहिए।।२६।।

चोरी गई वस्तु का लाभालाभ कथन

अन्तरङ्गमवमुच्य बाह्यगस्पर्शनं यदि करोति पृच्छकः ।
श्लेष्ममूत्रशकृतस्त्यजत्यथो पातयेत् करतलस्थवस्तु चेत् ।।२७।।

भृशमवनामिताङ्गपरिमोटनतोऽप्यथवा
जनधृतरिक्तभाण्डमवलोक्य च चौरजनम् ।
हृतपतितक्षतास्मृतविनष्टविभग्नगतो-
न्मुषितमृताद्यनिष्टरवतो लभते न हृतम् ।।२८।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय अपने अन्तरङ्ग अंगों के अतिरिक्त बाह्य अंगों का स्पर्श करने, कफ फेंकने, मूत्रोत्सर्ग या मलोत्सर्ग करने, अपने हाथ की वस्तु के गिराने, अपने शरीर को झुकाने अथवा अंगों को आहत करने से चोरी गई वस्तु का नहीं मिलना जानना चाहिए। अथवा प्रश्न के समय 'हर लिया' 'गिर गया', 'कट गया', 'भूल गया', 'नष्ट हो गया', टूट गया, चोरी गया, मर गया आदि निकृष्ट शब्दों के सुनाई देने से भी चोरी गई वस्तु नहीं मिलती है।।२७-२८।।

रोगी मरण व भोजन ज्ञान कथन

निगदितमिदं यत्तत्सर्वं तुषास्थिविषादिकैः
सह मृतिकरं पीडार्तानां समं रुदितक्षतैः ।
अवयवमपि स्पृष्ट्वाऽन्तःस्थं दृढं मरुदाहरे-
दतिबहु तदा भुक्त्वाऽन्नं संस्थितः सुहितो वदेत् ।।२९।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय अपने अन्तरङ्ग अंगों के बजाय बाह्य अंगों का स्पर्श करने, कफ फेंकने, मूत्रोत्सर्ग या मलोत्सर्ग करने, अपने हाथ की वस्तु को गिराने, अपने शरीर को झुकाने या अपने अङ्ग को तोड़ने इत्यादि पूर्वोक्त श्लोक २७-२८ में कथित के साथ तुष (भूसी), हड्डी, विष आदि देखने से रोने या छिंक होने से रोगियों की मृत्यु होती है।

पृच्छक द्वारा अपने अन्त:स्थ दृढ़ अंगों को स्पर्श करते हुए श्वास निकालने के साथ प्रश्न पूछने से पता चलता है कि पृच्छक बहुत अधिक अन्न खाकर प्रमुदित मन स्थित है, ऐसा ज्योतिष को जानना चाहिए।।२९।।

ललाट आदि स्पर्श से भोजन ज्ञान कथन

ललाटस्पर्शनाच्छूकदर्शनाच्छालिजौदनम् ।
उर:स्पर्शात् षष्टिकाख्यं ग्रीवास्पर्शे च यावकम् ।।३०।।

माया—पृच्छक द्वारा ललाट स्पर्श करने अथवा शूक धान्य का दर्शन करने से साठी का चावल; छाती का स्पर्श करने से षष्ठिक धान्य तथा गर्दन का स्पर्श करने से यव उसने खाया है, इस प्रकार का कथन करना चाहिए।।३०।।

कुक्षि अङ्ग आदि स्पर्श से भोजन कथन

कुक्षिकुचजठरजानुस्पर्शे माषा: पयस्तिलयवाग्व: ।
आस्वादयते चोष्ठौ लिहते मधुरं रसं ज्ञेयम् ।।३१।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न के समय कुक्षि, कुच, जठर और जानु स्पर्श करने पर क्रम से पृच्छक माष, दूध, तिल और यव खाने के बाद प्रस्तुत हुआ है। पृच्छक के ओष्ठ बार-बार चाटने या चबाने से प्रकट होता है कि मधुर सरस भोजन खाकर प्रस्तुत हुआ है, इस प्रकार का विचार व्यक्त करना चाहिए।।३१।।

सृक्क आदि स्पर्श से भोजन ज्ञान कथन

विसृक्के स्फोटयेज्जिह्वामाम्ले वक्त्रं विकूणयेत् ।
कटुकेऽथ कषायेऽथ हिक्केत् ष्ठीवेच्च सैन्धवे ।।३२।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय, सृक्क अर्थात् ओष्ठ प्रदेश में बार-बार जिह्वा से स्पर्श करने से पृच्छक खट्टा, उसके मुख खुजलाने पर कड़ुआ, उसके हिचकी करने पर कषैला और उसके बार-बार थूकने से लवण खाकर प्रस्तुत हुआ, इस प्रकार जानना चाहिए।।३२।।

श्लेष्मक त्याग आदि से भोजन ज्ञान कथन

श्लेष्मत्यागे शुष्कतिक्तं तदल्पं श्रुत्वा क्रव्यादं वा प्रेक्ष्य वा मांसमिश्रम् ।
भ्रूगण्डौष्ठस्पर्शने शाकुनं तद्धुक्तं तेनेत्युक्तमेतन्निमित्तम् ।।३३।।

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछने के समय श्लेष्मा (कफ) का त्याग करने से कुछ तीतरस युक्त वस्तु उसके द्वारा खाया गया, मांसाहारी पक्षी बोली सूनने या उसे देखने से मांस मिश्रित वस्तु उसकें द्वारा खाया गया, तथा भ्रू, गाल या ओष्ठ का स्पर्श करने पर पृच्छक द्वारा पक्षी का मांस भक्षण किया है, इस प्रकार बताना चाहिए॥३३॥

मूर्धा आदि के स्पर्श करने से भोजन ज्ञान कथन

मूर्धगलकेशहनुशङ्खकर्णजङ्घं वस्तिं च स्पृष्ट्वा।
गजमहिषमेषशूकरगोशशमृगमहिषमांसयुग्भुक्तम् ॥३४॥

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न करते हुए मूर्धा (शिर), कण्ठ, ठोड़ी, केश, कनपटी, कान, जंघा और वस्ति का स्पर्श करने से क्रम से उसने हाथी, भैंस, शूकर, मेष, गौ, खरगोश, मृग व भैंस मांस मिश्रित खाना खाया है, इस प्रकार बताना चाहिए॥३४॥

अपशकुन से भोजन ज्ञान कथन

दृष्टे श्रुतेऽप्यशकुने गोधामत्स्यामिषं वदेद्भुक्तम्।
गर्भिण्या गर्भस्य च निपतनमेवं प्रकल्पयेत् प्रश्ने ॥३५॥

माया—पृच्छक द्वारा प्रश्न के समय अपशकुन देखने अथवा सूनने से उसने गोह मछली का मांस खाया है, इस प्रकार बताया जाना चाहिए। इसी प्रकार गर्भिणी स्त्री सम्बन्धी प्रश्न के अवसर पर गर्भश्राव का चिन्तन करना चाहिए अर्थात् गर्भ सम्बन्धी प्रश्न के समय अपशकुन देखने या सूनने से गर्भस्राव होगी, कहना चाहिए॥३५॥

लड़की या लड़का पैदा होगा? कथन

पुंस्त्रीनपुंसकाख्ये दृष्टेऽनुमिते पुरःस्थिते स्पृष्टे।
तज्जन्म भवति पानान्नपुष्पफलदर्शने च शुभम् ॥३६॥

माया—गर्भिणी के प्रश्न के समय पृच्छक द्वारा 'पुरुष, स्त्री य नपुंसक को देखे, तो उसका विचार करना चाहिए। पृच्छक द्वारा उसको अपने सम्मुख देखने या उसका स्पर्श करने से क्रम से वैसे शिशु के जन्म की कल्पना करनी चाहिए अर्थात् पुरुष दर्शन करने से पुरुष शिशु, स्त्री दर्शन करने से स्त्री शिशु का तथा नपुंसक दर्शन करने से नपुंसक शिशु का जन्म बताना चाहिए। गर्भ प्रश्न के समय आसव, अन्य,पुष्प, फल आदि दर्शन का स्पर्श करने से शुभ ही होता है॥३६॥

गर्भ चिन्ता ज्ञान कथन

अङ्गुष्ठेन भ्रूदरं वाङ्गुलिं वा स्पृष्ट्वा पृच्छेद् गर्भचिन्ता तदा स्यात्।
मध्याज्याद्यैर्हेमरत्नप्रवालैरग्रस्थैर्वा मातृधात्र्यात्मजैश्च ॥३७॥

माया—प्रश्नकर्त्री द्वारा अपने अंगुष्ठ से भ्रूयुगल, पेट या अंगुलियों का स्पर्श

करते हुए प्रश्न पूछने से अथवा प्रश्न के समय मधु, घृत, शुभफल आदि, स्वर्ण, रत्न, मूँगा, मोती, धाई, माता या पुत्र सम्मुख दीखने पर गर्भ की चिन्ता बतानी चाहिए।।३७।।

गर्भ तथा गर्भपात कथन

गर्भयुता जठरे करगे स्याद् दुष्टनिमित्तवशात्तदुदासः ।
कर्षति तज्जठरं यदि पीठोत्पीडनतः करगे च करेऽपि ।।३८।।

भाषा—गर्भ सम्बन्धी प्रश्न के समय स्त्री द्वारा पेट पर हाथ रखकर प्रश्न पूछने से सिद्ध होता है कि गर्भ है, इस प्रकार बताया जाना चाहिए। ऐसे समय अपशकुन के दीखने और प्रश्नकर्त्री द्वारा अपनी पीठ को मलते हुए पेट को भी खुजलाने से या हाथ में हाथ रखकर प्रश्न पूछने से गर्भपात होता है।।३८।।

गर्भस्थिति ज्ञान कथन

घ्राणाया दक्षिणे द्वारे स्पृष्टे मासोत्तरं वदेत् ।
वामेऽब्दौ कर्ण एवं मा द्विचतुर्ब्दः श्रुतिस्तने ।।३९।।

भाषा—प्रश्नकर्त्री के 'गर्भ स्थिति होगी अथवा नहीं', इस प्रकार के प्रश्न करने के समय उस स्त्री द्वारा नासिका के दाहिना द्वार (पिङ्गला नाड़ी) को स्पर्श करने से एक मास बाद, बायाँ द्वार (इडानाड़ी) को स्पर्श करने से दो वर्ष, दाहिना कर्ण स्पर्श करने से दो मास पश्चात्, बायाँ कर्ण स्पर्श करने से दो वर्ष पश्चात्, दाहिना स्तन स्पर्श करने से चार वर्ष पश्चात् तथा बायाँ स्तन स्पर्श करने से दो वर्ष पश्चात् गर्भ की स्थिति होगी, इस प्रकार का कथन करना चाहिए।।३९।।

सन्तान संख्या ज्ञान कथन

वेणीमूले त्रीन् सुतान् कन्यके द्वे कर्णे पुत्रान् पञ्च हस्ते त्रयं च ।
अङ्गुष्ठान्ते पञ्चकं चानुपूर्व्या पादाङ्गुष्ठे पार्ष्णियुग्मेऽपि कन्याम् ।।४०।।

भाषा—गर्भ-सम्बन्धी प्रश्न में स्त्री के 'मुझे कितनी सन्तान होगी' इस प्रकार के प्रश्न के समय अपनी केशों के मूल का स्पर्श करने से तीन पुत्र और दो पुत्रियाँ, कान स्पर्श करने पर पाँच पुत्र, हाथ स्पर्श करने से तीन पुत्र, कनिष्ठा अंगुली स्पर्श करने पर एक पुत्र, अनामिका अंगुली स्पर्श करने पर दो पुत्र, मध्यमा अंगुली स्पर्श करने पर तीन पुत्र, तर्जनी अंगुली स्पर्श करने पर चार पुत्र, अंगुष्ठ स्पर्श करने पर पाँच पुत्र तथा पैर का अंगुष्ठ या दोनों एड़ियाँ स्पर्श करने पर मात्र एक पुत्री कहना चाहिए।।४०।।

और भी सन्तान संख्या ज्ञान कथन

सव्यासव्योरुसंस्पर्शे सूते कन्यासुतद्वयम् ।
स्पृष्टे ललाटमध्यान्ते चतुस्त्रितनया भवेत् ।।४१।।

माया—उपरोक्त प्रकार के प्रश्न में स्त्री द्वारा अपना दाहिना ऊरू स्पर्श करने पर दो पुत्रियाँ, बायाँ ऊरु स्पर्श से दो पुत्र, ललाट मध्य स्पर्श से चार पुत्रियाँ तथा ललाट का अन्तभाग स्पर्श करने से भी तीन पुत्रियाँ कहनी चाहिए॥४१॥

प्रसव कालिक नक्षत्र ज्ञान कथन

शिरोललाटभ्रूकर्णगण्डं हनुरदा गलम्।
सव्यापसव्यस्कन्धश्च हस्तौ चिबुकनालकम्॥४२॥
उरः कुचं दक्षिणमप्यसव्यंहृत्पार्श्वमेवं जठरं कटिश्च।
स्फिक्पायुसन्ध्यूरुयुगं च जानू जङ्घेऽथ पादाविति कृत्तिकादौ॥४३॥

माया—गर्भ सम्बन्धि प्रश्न में "सन्तान किस नक्षत्र में उत्पन्न होगी' इस तरह के प्रश्न के समय स्त्री द्वारा शिर, ललाट, भौं, कान, गाल, कनपटी, दाँत, गर्दन, दक्षिण स्कन्ध वाम स्कन्ध, दोनों हाथ, ठोड़ी, कण्ठ, छाती, दक्षिण स्तन, वामस्तन, हृदय, दायाँ पार्श्व, बाँया पार्श्व, पेट कमर, स्फिक् (कुल्हा) तथा गुदा की सन्धि, दक्षिण ऊरु, वाम ऊरु, जानु, जंघा पैर आदि २७ अंगों के स्पर्श करने से कृत्तिका आदि नक्षत्र में जन्म का होना, बताना चाहिए। अर्थात् शिर के स्पर्श से कृत्तिका, ललाट स्पर्श से रोहिणी, भौं स्पर्श से मृग-शिरा, कान स्पर्श से आर्द्रा, गाल स्पर्श, पुनर्वसु आदि प्रकार जन्म नक्षत्र जानना चाहिए॥४२-४३॥

अध्यायोपसंहार कथन

इति निगदितमेतद् गात्रसंस्पर्शलक्ष्म
प्रकटमभिमताप्त्यै वीक्ष्ये शास्त्राणि सम्यक्।
विपुलमतिरुदारो वेत्ति यः सर्वमेत-
न्नरपतिजनताभिः पूज्यतेऽसौ सदैव॥४४॥

माया—इस प्रकार अनेक शास्त्रों को ध्यानपूर्वक अवलोकन कर इष्ट सिद्धि हेतु अत्यन्त स्फुट् अवयव स्पर्शन लक्षणों को कहने का प्रयत्न किया गया है, इसे जानने वाले अत्यन्त बुद्धिमान् उदार ज्योतिष सदा राजा और प्रजा से सम्मानित होते रहते हैं॥४४॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-
दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी
व्याख्यायामङ्गविद्यानामैकपञ्चाशत्तमः॥५१॥

□□□

अथ द्विपञ्चाशत्तोऽध्यायः-५२

पिटकलक्षण निरूपणम्

ब्राह्मण आदि जातियों का पिटक (फुन्सी) लक्षण कथन

सितरक्तपीतकृष्णा विप्रादीनां क्रमेण पिटका ये।
ते क्रमशः प्रोक्तफला वर्णानां नाग्रजातानाम् ।।१।।

भाषा—श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण का पिटक क्रम से ब्राह्मण आदि चार वर्णों को वक्ष्यमाण प्रकार फलकारक होता है। परन्तु ब्राह्मणों को केवल श्वेत पिटक, क्षत्रियों को श्वेत और लाल (रक्त), वैश्यों को श्वेत, लाल और पीला तथा शूद्रों को श्वेत, लाल, पीला और काला पिटक फलदायक होता है।।१।।

पिटक विशेषता से फल कथन

सुस्निग्धव्यक्तशोभाः शिरसि धनचयं मूर्ध्नि सौभाग्यमारा-
द्दौर्भाग्यं भ्रूयुगोत्थाः प्रियजनघटनामाशु दुःशीलतां च।
तन्मध्योत्थाश्च शोकं नयनपुटगता नेत्रयोरिष्टदृष्टिं
प्रव्रज्यां शङ्खदेशेऽश्रुजलनिपतनस्थानगा रान्ति चिन्ताम् ।।२।।

भाषा—सुन्दर, स्वच्छ (विमल) तथा स्फुट आभा युक्त पिटक (फुन्सी) शिरोभाग में होंने से धन का संग्रह, मस्तक में होने से सौभाग्य प्राप्ति, दोनों भौं में दुर्भाग्य सूचक, भ्रमूध्य भाग में शीघ्र ही स्वजनों का संयोग तथा दुःशीलता भी, नेत्रपुट में शोक, दोनों नेत्रों में इष्ट का दर्शन, शङ्ख स्थान में होने पर प्रव्रज्या योग तथा अश्रुपात के स्थान में होने पर चिन्ता उत्पन्न करने वाला होता है।।२।।

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन

घ्राणागण्डे वसनसुतदाश्चौष्ठयोरन्नलाभं
कुर्युस्तद्वच्चिबुकतलगा भूरि वित्तं ललाटे।
हन्वोरेवं गलकृतपदा भूषणान्यन्नपाने
श्रोत्रे षद्भूतणगणमपि ज्ञानमात्मस्वरूपम् ।।३।।

भाषा—तदनन्तर नासिका में पिटक के होने पर वस्त्र प्राप्ति, गाल में पुत्र लाभ, ओष्ट और ठोड़ी में अन्न प्राप्ति, ललाट व हनु में अत्यन्त धन लाभ, कण्ठ में भूषण, अन्न और पेय पदार्थ की पदार्थ की प्राप्ति और कान में पिटक होने से कर्णाभूषणों की प्राप्ति तथा आध्यात्मिक ज्ञान युक्त मनुष्य होता है।।३।।

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन

शिर:सन्धिग्रीवाहृदयकुचपार्श्वोरसि गता
अयोघातं घातं सुततनयलाभं शुचमपि।
प्रियप्राप्तिं स्कन्धेऽप्यटनमथ भिक्षार्थमसकृ-
द्विनाशं कक्षोत्था विदधति धनानां बहुमुखम्।।४।।

माया—तथा शिरोभाग की सन्धि, गर्दन, हृदय, स्तन, पार्श्वभाग और छाती आदि में पिटक होने से क्रम से शस्त्र पीड़ा, आघात, पुत्रलाभ, शोक तथा प्रिय वस्तु का लाभ होता है। कन्धे में होने से भिक्षाटन के लिए बार-बार भटकने वाला तथा कुक्षि में पिटक होने पर अनेक प्रकार से धन हानि होती है।।४।।

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन

दु:खशत्रुनिचयस्य विनाशं पृष्ठबाहुयुगजा रचयन्ति।
संयमं च मणिबन्धनजाता भूषणाद्यमुपबाहुयुगोत्था:।।५।।

माया—जिसके पृष्ठभाग में पिटक हो, तो उसके दु:खों का, बाहों में होने पर शत्रुगणों का नाश करने वाला होता है। मणिबन्ध में होने से हथकड़ी तथा दोनों भुजाओं में पिटक के होने से आभूषणादि की प्राप्ति कराने वाला होता है।।५।।

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन

धनाप्तिं सौभाग्यं शुचमपि कराङ्गुल्युदरगा:
सुपानान्नं नाभौ तदध इह चौरैर्धनहृतिम्।
धनं धान्यं बस्तौ युवतिमथ मेढ्रे सुतनयान्
धनु सौभाग्यं वा गुदवृषणजाता विदधति।।६।।

माया—अनन्तर हाथ में फुन्सी होने से धन प्राप्ति, अंगुलियों में होने से सौभाग्य, पेट में शोक, नाभि में सुन्दर अन्न व जल की प्राप्ति, नाभि के अधोभाग में चोरों द्वारा धनहरण, वस्ति भाग (नाभि और लिङ्ग मूल पर्यन्त) में धन धान्य की प्राप्ति, लिङ्ग में स्त्री और सुन्दर पुत्रों की प्राप्ति, गुदा में धन प्राप्ति, तथा अण्ड कोष में पिटक (फुन्सी) के होने से सौभाग्य प्राप्ति होती है।।६।।

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन

ऊर्वोर्यानाङ्गनालाभं जान्वो: शत्रुजनात् क्षतिम्।
शस्त्रेण जङ्घयोर्गुल्फेऽध्वबन्धक्लेशदायिन:।।७।।

माया—इसके बाद ऊरु में पिटक होने से वाहन और स्त्री प्राप्ति, जानु में शत्रुओं

से हानि, जांघ में शस्त्र से नाश तथा गुल्फ (टखना) में पिटक के होने से यात्रा और बन्धन से कष्ट प्राप्ति होती है॥७॥

और भी पिटक की विशेषता से फल कथन

स्फिक्पार्ष्णिपादजाता धननाशागम्यगमनमध्वानम्।
बन्धनमङ्गुलिनिचयेऽङ्गुष्ठे च ज्ञातिलोकतः पूजाम्॥८॥

माया—तत्पश्चात् स्फिक् या कुल्हा में पिटक की स्थिति से धनहानि, एड़ी में होने से अगम्य स्थान में गमन, पैर में होने से यात्रा, घूमना या सैर सपाटा, अंगुलियों में होने पर बन्धन तथा अंगुष्ठ में पिटक होने से बन्धुजनों से सम्मान की प्राप्ति होती है॥८॥

कुछ अन्य विशेष फल कथन

उत्पातगण्डपिटका दक्षिणतो वामतस्त्वभीघाताः।
धन्या भवन्ति पुंसां तद्विपरीताश्च नारीणाम्॥९॥

माया—अङ्गस्पन्दन रूप उत्पात, गण्ड और पिटक, ये पुरुषों के दक्षिण भाग में शुभदायक होते हैं। अभिघात पिटक वाम भाग में शुभ होते हैं। तात्पर्य यह कि अङ्गस्पन्दन रूप उत्पात व गण्ड यदि वाम भाग गत हो, तो अशुभ और अभिघात पिटक दक्षिण भाग में हो, तो अशुभ फलदायक होता है। इसके विपरीत स्त्रियों के जानने चाहिए॥९॥

अन्य चिह्नों के फल निर्देश प्रकार कथन

इति पिटकविभागः प्रोक्त आमूर्धतोऽयं
व्रणतिलकविभागोऽप्येवमेव प्रकल्प्यः।
भवति मशकलक्ष्मावर्तजन्मापि तद्व-
न्निगदितफलकारि प्राणिनां देहसंस्थम्॥१०॥

माया—इस प्रकार शिर से लेकर सभी अंगों के पिटकों का फल कहा गया है। इन अंगों में व्रण या तिल के रहने पर भी इसी तरह के फलों की चिन्ता करनी चाहिए और भी मनुष्यों के शरीर में मशक, चिह्न, रोमावर्त का फल भी उपरोक्त प्रकार से स्वविवेक से जानने चाहिए॥१०॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां पिटकलक्षणाध्यायो द्विपञ्चाशत्तमः॥५२॥

□□□

अथ त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५३

वास्तुविद्याविचारः

सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन

वास्तुज्ञानमथातः कमलभवान्मुनिपरम्परायातम्।
क्रियतेऽधुना मयेदं विदग्धसांवत्सरप्रीत्यै ।।१।।

माया—पिटक लक्षण कहने के अनन्तर ब्रह्माजी से लेकर ऋषि-मुनि जनों से प्राप्त परम्परागत वास्तु विद्या को विद्वान् दैवज्ञजनों की प्रीति के लिए मेरे (ग्रन्थकार) द्वारा यहाँ भी कहा जाता है।।१।।

वास्तुविद्या की उत्पत्ति प्रदर्शनार्थ कथन

किमपि किल भूतमभवद्रुन्धानं रोदसी शरीरेण।
तदमरगणेन सहसा विनिगृह्याधोमुखं न्यस्तम् ।।२।।
यत्र च येन गृहीतं विबुधेनाधिष्ठितः स तत्रैव।
तदमरमयं विधाता वास्तुनरं कल्पयामास ।।३।।

माया—बहुत पहले अपने शरीर से पृथ्वी और आकाश को व्याप्त करने वाला एक अज्ञात नाम पुरुष की उत्पत्ति हुई, जिसे देवताओं ने सहसा पकड़ कर पृथ्वी पर अधोमुख स्थापित करते हुए, उस काल में जो देवता जिस किसी अङ्ग को पकड़ रखे थे, उस-उस अङ्ग में अपना-अपना स्थान भी बना लिया। इस प्रकार वह देवमय अज्ञात नाम पुरुष ब्रह्माजी द्वारा 'वास्तु पुरुष' नाम से सम्बोधित हुआ।।२-३।।

राजगृह के प्रमाण कथन

उत्तममष्टाभ्यधिकं हस्तशतं नृपगृहं पृथुत्वेन।
अष्टाष्टोनान्येवं पञ्च सपादानि दैर्घ्येण ।।४।।

माया—राजा आदि के साथ सभी ब्राह्मण आदि वर्णों में प्रत्येक के पाँच-पाँच प्रकार के गृह कथन क्रम में राजगृह प्रमाण इस प्रकार से कहे गए हैं—राजा का प्रधान गृह का १०८ हाथ विस्तार (चौड़ाई) तथा अन्य चार गृह का प्रधान गृह से आठ-आठ हाथ न्यून विस्तार क्रम से होने चाहिए। गृह विस्तार में उसका-उसका ही चतुर्थांश मिलाकर उसका-उसका दैर्घ्य (लम्बाई) होने चाहिए। यहाँ कहा गया है कि प्रधान राजगृह १०८ हाथ विस्तार और १३५ अर्थात् १०८ + २७ हाथ दैर्घ्य वाला उत्तम होता है। पुनः द्वितीय आठ हाथ कम अर्थात् १०० हाथ विस्तार और १२५ हाथ दैर्घा वाला राजगृह होता है। पुनरपि तृतीय पूर्व से आठ हाथ कम अर्थात् ९२

हाथ विस्तार और ११५ हाथ दैर्ध्य वाला राज गृह होता है। चतुर्थ ८४ हाथ विस्तार और १०५ हाथ दैर्ध्य वाला राजगृह होता है तथा पाँचवा ७६ हाथ विस्तार और ९५ हाथ दैर्ध्य वाला राजगृह होता है। ये सभी राजगृह क्रम से उत्तमादि फल प्रदान करने वाले होते हैं॥४॥

सेनापतिगृह प्रमाण कथन

षड्भिः षड्भिर्हीना सेनापतिसद्मनां चतुःषष्टिः ।
एवं पञ्च गृहाणि षड्भागसमन्विता दैर्घ्यम् ॥५॥

माया—सेनापति के प्रधान गृह का ६४ हाथ विस्तार होता है। अन्य चार गृहों में क्रम से छः-छः न्यून करके विस्तार देना चाहिए तथा उन विस्तारों से उनका अलग-अलग षष्ठांश तुल्य उन-उन विस्तारों में जोड़ देने पर उन-उन विस्तारों वाले गृहों का दैर्ध्य होते हैं। यहाँ कहा गया है कि सेनापति के प्रधान गृह का विस्तार ६४ हाथ, दूसरे गृह का विस्तार ५८ हाथ, तृतीय गृह का विस्तार ५२ हाथ, चतुर्थ गृह का विस्तार ४६ हाथ तथा पाँचवें गृह का विस्तार ४० हाथ होता है। तथा इन विस्तारों में अपना षष्ठांश मिलाने से उस-उस का दैर्ध्य होता है। जैसे प्रधान गृह का दैर्ध्य ७४ हाथ १६ अङ्गुल, दूसरा ६७ हाथ १६ अंगुल, तीसरा ६० हाथ १६ अङ्गुल चौथा ५३ हाथ १६ अङ्गुल तथा पाँचवां ४६ हाथ १६ अङ्गुल होता है॥५॥

सचिव गृह प्रमाण कथन

षष्टिश्चतुश्चतुर्भिर्हीना वेश्मानि पञ्च सचिवस्य ।
स्वाष्टांशयुतो दैर्घ्यं तदर्धतो राजमहिषीणाम् ॥६॥

माया—सचिव गृह में प्रथम गृह का ६० हाथ विस्तार होता है। अन्य चार गृहों में चार-चार हाथ कम करके क्रम से विस्तार लेना चाहिए। उन विस्तारों का अपना-अपना अष्टम भाग सहित उनका दैर्ध्य जानना चाहिए अर्थात् प्रथम गृह का विस्तार ६० हाथ और दैर्श्य ६७।१२; द्वितीय गृह में विस्तार ५६ हाथ और दैर्ध्य ६३ हाथ; तृतीय गृहं में विस्तार ५२ हाथ और दैर्ध्य ५८।१२; चतुर्थ गृह का विस्तार ४८ और दैर्ध्य ५४ तथा पञ्चम गृह का विस्तार ४४ और दैर्ध्य ४९।१२ होता है।

एवं उपरोक्त विस्तार और दैर्ध्य के आधे प्रमाण से राजमहिषियों का गृह होना चाहिए अर्थात् प्रथम गृह में ३० हाथ विस्तार ३३।६ दैर्ध्य; द्वितीय गृह में २८ हाथ विस्तार और ३१।१२ हस्तादि दैर्ध्य; तृतीय गृह में विस्तार २६ और दैर्ध्य २९।६; चतुर्थ गृह में विस्तार २४ हाथ और दैर्ध्य २७ हाथ तथा पञ्चम गृह में विस्तार २२ और दैर्ध्य २४।१८ देना चाहिए॥६॥

युवराज आदि के गृह प्रमाण कथन

षड्भिः षड्भिश्चैवं युवराजस्यापवर्जिताऽशीतिः ।
त्र्यंशान्विता च दैर्घ्यं पञ्च तदर्धैस्तदनुजानाम् ।।७।।

माया—इस प्रकार युवराज के प्रथमगृह में विस्तार ८० हाथ होता है तथा अन्य चार गृहों में ६-६ हाथ कम करते हुए विस्तार समझनी चाहिए और इन पाँच गृहों के विस्तार में उसी विस्तार का तृतीयांश जोड़ते हुए दैर्ध्य कल्पना को साकार करना चाहिए अर्थात् प्रथम गृह का विस्तार ८० और दैर्ध्य १०६।१६; द्वितीय गृह का विस्तार ७४ और दैर्ध्य ९८।१६; तृतीय गृह का विस्तार ६८ और ९०।१६; चतुर्थ गृह का विस्तार ६२ और ८२।१६ तथा पंचम गृह का विस्तार ५६ और ७४।१६ होना चाहिए।

अब युवराज के छोटे भाईयों के गृहों के विस्तार व दैर्ध्य कहा जाता है। उनके गृहों के विस्तार व दैर्ध्य युवराज के गृह के विस्तार व दैर्ध्य का आधा लेना चाहिए अर्थात् उनके प्रथम गृह का विस्तार ४० और दैर्ध्य ५३।८; द्वितीय गृह का विस्तार ३७ और ४९।८; तृतीय का ३४ और ४५।८; चतुर्थ का ३१ और ४१।८ तथा पंचम गृह का विस्तार २८ और दैर्ध्य ३७।८ होना चाहिए।।७।।

सामन्त, वरिष्ठ राजपुरुष, कञ्चुकि आदि का गृह कथन

नृपसचिवान्तरतुल्यं सामन्तप्रवरराजपुरुषाणाम् ।
नृपयुवराजविशेषः कञ्चुकिवेश्याकलाज्ञानाम् ।।८।।

माया—उपरोक्त राजगृह प्रकारों तथा सचिव गृह प्रकारों के विस्तारों के अन्तर तुल्य विस्तार और दैर्घ्यों के अन्तर तुल्य दैर्घ्य ग्रहण कर सामन्तों, वरिष्ठ राजपुरुषों का गृह निर्माण करना चाहिए तथा राजगृह और युवराज गृह के विस्तारों के अन्तर तुल्य विस्तार और दैर्घ्यों के अन्तर तुल्य दैर्घ्य ग्रहण कर कञ्चुकी, वेश्या तथा कलाकारों की गृहनिर्मित करनी चाहिए।।८।।

अध्यक्ष, कर्माध्यक्ष, अधिकारी पुरुषों के गृह प्रमाण कथन

अध्यक्षाधिकृतानां सर्वेषां कोशरतितुल्यम् ।
युवराजमन्त्रिविवरं कर्मान्ताध्यक्षदूतानाम् ।।९।।

माया—अश्वशाला, गजशाला, गोशाला आदि शालाओं के अध्यक्षों, अधिकारियों या कार्याध्यक्षों आदि के लिए कोशगृह अथवा रतिगृह के समान गृह होना चाहिए। एवं कर्मशालाओं के अध्यक्षों, दूतों आदि का गृह युवराज और सचिव गृह के विस्तारों और दैर्घ्यों के अन्तर तुल्य विस्तार व दैर्घ्य से निर्मित करनी चाहिए।।९।।

दैवज्ञ, चिकित्सक, पुरोहित गृह प्रमाण कथन

चत्वारिंशद्धीना चतुश्चतुर्भिस्तु पञ्च यावदिति ।
षड्भागयुता दैर्ध्यं दैवज्ञपुरोधसोर्भिषजः ।।१०।।

भाषा—दैवज्ञ, चिकित्सक, पुरोहित आदि के गृह निर्माण के प्रसङ्ग में प्रथम गृह हेतु ४० हाथ का विस्तार होता है। शेष चार गृहों के लिए ४-४ हाथ कम कर अर्थात् ३६, ३२, २८ और २४ हाथ विस्तार लेना चाहिए। इन विस्तारों में अपना षष्ठांश युक्त दैर्ध्य अर्थात् ४६।१६, ४२, ३६।८, ३२।१६ और २८ लेना चहिए।।१०।।

गृह की ऊँचाई और एक शाल गृह का दैर्ध्य प्रमाण कथन

वास्तुनि यो विस्तारः स एव चोच्छ्रायनिश्चयः शुभदः ।
शालैकेषु गृहेष्वपि विस्ताराद् द्विगुणितं दैर्ध्यम् ।।११।।

भाषा—विस्तार के समान गृह की ऊँचाई भी होनी चाहिए और एक शाल गृह में विस्तार के द्विगुण दैर्ध्य लेना चाहिए। ऐसा करना शुभदायक होता है।।११।।

ब्राह्मण आदि वर्णों का वास्तु विस्तार और दैर्ध्य कथन

चातुर्वर्ण्यव्यासो द्वात्रिंशत् सा चतुश्चतुर्हीना ।
आषोडशादिति परं न्यूनतरमतीव हीनानाम् ।।१२।।
सदशांशं विप्राणां क्षत्रस्याष्टांशसंयुतं दैर्ध्यम् ।
षड्भागयुतं वैश्यस्य भवति शूद्रस्य पादयुतम् ।।१३।।

ब्राह्मण, क्षत्रियं, वैश्य, शूद्र और शूद्रेतर जातियों के गृहों का विस्तार क्रंम से ३२ हाथ में ४-४ हाथ कम कर विस्तार लेना चाहिए अर्थात् ब्राह्मणों के गृहों का विस्तार ३२, २८, २४, २० या १६; क्षत्रियों के गृहों का विस्तार २८, २४, २० या १६; वैश्यों के गृहों का विस्तार २४, २० या १६; शूद्रों के गृहों का विस्तार २० या १६ तथा इससे न्यून विस्तार का गृह शूद्रेतर नीच जातियों का बनाना चाहिए। अब इनके गृहों का दैर्ध्य कहा जाता है ब्राह्मणों आदि जातियों के गृहों का दैर्ध्य उनके गृहों के विस्तारों का क्रम से दशमांश, अष्टमांश, षष्ठांश और चतुर्थांश अधिक लेना चाहिए।।१२-१३।।

कोश-रति और राजपुरुष वास्तु प्रमाण कथन

नृपसेनापतिगृहयोरन्तरमानेन कोशरतिभवने ।
सेनापतिचातुर्वर्ण्यविवरतो राजपुरुषाणाम् ।।१४।।

भाषा—राजगृह और सेनापति गृह के अन्तर तुल्य कोश या रति गृह बनाना चाहिए तथा सेनापति और ब्राह्मणादि वर्णों के गृह के अन्तर तुल्य राजपुरुषों का गृह

बनाना चाहिए। कहने का तात्पर्य है कि सेनापति और ब्राह्मण के गृह के अन्तर तुल्य ब्राह्मण राजपुरुष का ; सेनापति और क्षत्रिय के गृह के अन्तर तुल्य क्षत्रिय राजपुरुष का; सेनापति और वैश्य के गृह के अन्तर तुल्य वैश्य राजपुरुष का तथा सेनापति और शूद्र के गृह के अन्तर तुल्य शूद्र राजपुरुष की गृह निर्मित करनी चाहिए॥१४॥

पारशव आदि के वास्तु प्रमाण कथन

अथ पारशवादीनां स्वमानसंयोगदलसमं भवनम्।
हीनाधिकं स्वमानादशुभकरं वास्तु सर्वेषाम् ॥१५॥

माया—ब्राह्मण से शूद्रा स्त्री में उत्पन्न सन्तान पारशव, वेश्या में उत्पन्न सन्तान भूर्जकण्टक और क्षत्रिया स्त्री में उत्पन्न सन्तान मूर्धावसिक्त कहलाता है। इनके माता-पिता के वर्ण जन्य गृहमान के योगार्द्ध तुल्य विस्तार और दैर्घ्य से उनका गृह निर्माण करना चाहिए। इस प्रकार उपरोक्त मान से कम या अधिक मान से गृह का निर्माण हानिकारक होता है॥१५॥

पशु, आश्रमी आदि के वास्तु प्रमाण कथन

पश्वाश्रमिणाममितं धान्यायुधवह्निरतिगृहाणां च।
नेच्छन्ति शास्त्रकारा हस्तशतादुच्छ्रितं परतः ॥१६॥

माया—पशुओं, आश्रमियों (सन्यासियों), धान्यों, आयुधों, अग्नि, क्रीड़ा आदि सम्बन्धी गृह को अपरिमित अर्थात् इच्छानुसार अथवा सुविधानुसार बनानी चाहिए। फिर भी सौ हाथ से अधिक ऊँचाई वाला गृह की अभिलाषा वास्तु शास्त्र को जानने वाले नहीं करते हैं; क्योंकि ऐसा गृह अशुभकारक होता है॥१६॥

सेनापति और राजा के गृह का शाला और अलिन्द प्रमाण कथन

सेनापतिनृपतीनां सप्ततिसहिते द्विधाकृते व्यासे।
शाला चतुर्दशहृते पञ्चत्रिंशद्धृतेऽलिन्दः ॥१७॥

माया—सेनापति और राजा के गृह के व्यास प्रमाण के अङ्कों को परस्पर जोड़े, और उसमें सत्तर (७०) मिलाकर दो स्थान में रखना चाहिए। उसके एक स्थान में १४ से भाग देने पर जितनी लब्धि हो, वह शाला अर्थात् गृह के अन्दर का भाग तथा दूसरे स्थान में १५ से भाग देने पर जितनी लब्धि हो, वह अलिन्द अर्थात् शाला भित्ति के बाह्य भाग का सोपान युक्त आँगन का परिमाण होता है॥१७॥

ब्राह्मण आदि का शाला व अलिन्द प्रमाण कथन

हस्तद्वात्रिंशादिषु चतुश्चतुस्त्रित्रिकत्रिकाः शालाः।
सप्तदशत्रितयतिथित्रयोदशकृताङ्गुलाभ्यधिकाः ॥१८॥

त्रित्रिद्विद्विद्विसमाः क्षयक्रमादङ्गुलानि चैतेषाम् ।
व्येका विंशतिरष्टौ विंशतिरष्टादश त्रितयम् ।।१९।।

भाषा—उपरोक्त ब्राह्मण आदि के गृह प्रमाण के क्रम से ३२, २८, २४, २० या १६ हाथ विस्तार में क्रम से ४।१७; ४।३; ३।१५; ३।१३; ३।४ हस्ताङ्गुल प्रमाण की शाला तथा क्रम से ३।१९; ३।८; २।२०; २।१८; २।३ हस्ताङ्गुल प्रमाण का अलिन्द देना चाहिए॥१८-१९॥

वीथिका प्रमाण तथा उससे उपलक्षित वास्तु स्थलनाम कथन

शालात्रिभागतुल्या कर्तव्या वीथिका बहिर्भवनात् ।
यद्यग्रतो भवति सा सोष्णीषं नाम तद्वास्तु ।।२०।।
सायाश्रयमिति पश्चात् सावष्टम्भं तु पार्श्वसंस्थितया ।
सुस्थितमिति च समन्ताच्छास्त्रज्ञैः पूजिताः सर्वाः ।।२१।।

भाषा—पूर्वोक्त शाला प्रमाण के तृतीय भाग के समान गृह के बाहर वीथिका अर्थात् रिक्त स्थल रखनी चाहिए। यह रिक्त स्थान जब भवन के पूर्व में हो, तो भवन का नाम 'सोष्णीष', पश्चिम में हो, तो सायाश्रय; उत्तर में होने पर 'सावष्टम्भ' और दक्षिण में होने पर उस भवन का नाम 'सुस्थित' होता है। इस प्रकार वास्तु की प्रशंसा वास्तु विशेषज्ञों ने की है॥२०-२१॥

वास्तु की ऊँचाई का प्रमाण

विस्तारषोडशांशः सचतुर्हस्तो भवेद् गृहोच्छ्रायः ।
द्वादशभागेनोनो भूमौ भूमौ समस्तानाम् ।।२२।।

भाषा—प्रथम गृह का जितना विस्तार हो, उसके सोलहवें भाग में चार हाथ मिला कर उस प्रथम गृह की ऊँचाई होती है। उसमें से उसका ही द्वादशांश निकाल देने से जितना हुआ, उतनी द्वितीय गृह की ऊँचाई होती है। इसी तरह पुनः-पुनः द्वादशांश हीन करते हुए तृतीयादि अग्रिम-अग्रिम गृह की ऊँचाई लेनी चाहिए॥२२॥

भित्तिप्रमाण ज्ञान में विशेष कथन

व्यासात् षोडशभागः सर्वेषां सद्मनां भवति भित्तिः ।
पक्वेष्टकाकृतानां दारुकृतानां तु न विकल्पः ।।२३।।

भाषा—सभी पक्की ईंट से बने गृहों के व्यास का सोलहवाँ अंश ही उस गृह के भित्ति का प्रमाण होता है। परन्तु लकड़ी, बाँस आदि से बने गृहों में उपरोक्त व्यवस्था मान्य नहीं है, वहाँ सुविधा के अनुसार भित्ति बनानी चाहिए।।२३।।

ब्राह्मणादि को छोड़कर अन्य के गृह द्वार प्रमाण कथन

एकादशभागयुतः ससप्ततिर्नृपबलेशयोर्व्यासः ।
उच्छ्रायोऽङ्गुलतुल्यो द्वारस्यार्धेन विष्कम्भः ।।२४।।

माया—राजा और सेनापति के गृह के विस्तार का एकादश अंश उस विस्तार में सत्तर के साथ जोड़कर, जितना योग फल हो, उसके तुल्य अङ्गुल प्रधान द्वार की ऊँचाई और उस ऊँचाई के आधे के समान उस द्वार का व्यास लेना चाहिए॥२४॥

ब्राह्मण आदि द्वार प्रमाण कथन

विप्रादीनां व्यासात् पञ्चांशोऽष्टादशाङ्गुलसमेतः ।
साष्टांशो विष्कम्भो द्वारस्य त्रिगुण उच्छ्रायः ॥२५॥

माया—ब्राह्मण आदि चातुर्वर्णों के गृह के व्यास का पंचमांश युक्त अष्टादशाङ्गुल उसमें उसी का अष्टम भाग जोड़कर जो हो, उतने अङ्गुल प्रमाण द्वार का विस्तार और उस विस्तार की त्रिगुणी ऊँचाई लेनी चाहिए॥२५॥

शाखा उदुम्बर का गोलाई व स्तम्भाग्रमूल प्रमाण कथन

उच्छ्रायहस्तसंख्यापरिमाणान्यङ्गुलानि बाहुल्यम् ।
शाखाद्वयेऽपि कार्यं सार्धं तत् स्यादुदुम्बरयोः ॥२६॥
उच्छ्रायात् सप्तगुणादशीतिभागः पृथुत्वमेतेषाम् ।
नवगुणितेऽशीत्यंशः स्तम्भस्य दशांशहीनोऽग्रे ॥२७॥

माया—ऊँचाई जितने हस्त हो, उसके समान अङ्गुल दोनों शाखाओं की गोलाई होनी चाहिए, उस डेढ़ गुणित गोलाई के समान अङ्गुलात्मक उदुम्बर अर्थात् देहली की मोटाई लेनी चाहिए।

राजद्वार की ऊँचाई को सात से गुणा और अस्सी से भागने पर उसके भागफल तुल्य शाखा और उदुम्बर की विस्तृति बनानी चाहिए तथा स्तम्भ की ऊँचाई को नौ गुणा और अस्सी से भागने पर भागफल तुल्य उस स्तम्भ के मूल की मोटाई तथा उसका दशवाँ भाग कम मोटाई के समान उसकी मोटाई लेनी चाहिए॥२६-२७॥

स्तम्भों का नाम कथन

समचतुरस्रो रुचको वज्रोऽष्टास्रिर्द्विवज्रको द्विगुणः ।
द्वात्रिंशता तु मध्ये प्रलीनको वृत्त इति वृत्तः ॥२८॥

माया—स्तम्भ का मध्यभाग तुल्य चतुष्कोणात्मक हो, तो उसे रुचक; अष्टकोणात्मक हो, तो उसे वज्र; षोडश कोणात्मक हो, तो द्विवज्र द्वात्रिंशद् कोणात्मक हो, तो उसे प्रलीनक तथा वह यदि वर्त्तुलाकार हो, तो उसे वृत्तस्म्भ कहते हैं। इस प्रकार ये पाँच प्रकार के स्तम्भ शुभदायक तथा अन्य प्रकार का अशुभदायक होता है॥२८॥

स्तम्भ के ऊपर-नीचे की रचना कथन

स्तम्भं विभज्य नवधा वहनं भागो घटोऽस्य भागोऽन्यः ।
पद्मं तथोत्तरोष्ठं कुर्याद् भागेन भागेन ॥२९॥

माया—स्तम्भ का नौ भाग करने पर उसके नीचे के भाग का नाम वहन, उससे ऊपर का भाग घट, उससे ऊपर का भाग पद्म तथा उसके ऊपर के चौथे भाग को उत्तरोष्ठ नाम से जाना जाता है, जिसमें सौन्दर्य के लिए आकृति बनाया जाता है।।२९।।

भारतुल्य, तुला व उपतुला प्रमाण कथन

स्तम्भसमं बाहुल्यं भारतुलानामुपर्युपर्यासाम् ।
भवति तुलोपतुलानामूनं पादेन पादेन ।।३०।।

माया—स्तम्भ योग्य मोटाई से युक्त पंचम भाग का नाम भारतुला; उसके ऊपर के भाग का नाम तुला; तदनन्तर सातवाँ भाग का नाम उपतुला है। लेकिन राजा के गृह के अतिरिक्त भारतुला में चतुर्थ भाग हीन कर मान लेना चाहिए।।३०।।

सर्वतोभद्र वास्तु लक्षण कथन

अप्रतिषिद्धालिन्दं समन्ततो वास्तु सर्वतोभद्रम् ।
नृपविबुधसमूहानां कार्यं द्वारैश्चतुर्भिरपि ।।३१।।

माया—जब गृह के चारों ओर अलिन्द बने हों, तो उसे सर्वतोभद्र वास्तु कहा जाता है। इस प्रकार यह गृह चारों दिशाओं में चार द्वारों से उपलक्षित राजा तथा देवताओं के लिए बने होते हैं।।३१।।

नन्द्यावर्त्त वास्तु लक्षण कथन

नन्द्यावर्तमलिन्दैः शालाकुड्यात् प्रदक्षिणान्तगतैः ।
द्वारं पश्चिममस्मिन् विहाय शेषाणि कार्याणि ।।३२।।

माया—जब गृह में शाला की भीति से प्रारम्भ कर प्रदक्षिण क्रम से अलिन्द बना हो, उसे नन्द्यावर्त वास्तु कहा जाता है। इस प्रकार के गृह या वास्तु में पश्चिम दिशा के द्वार का अभाव रहता है । अन्य तीन पूर्व, दक्षिण और उत्तर दिशाओं के द्वार होते हैं।।३२।।

वर्द्धमान वास्तु लक्षण कथन

द्वारालिन्दोऽन्तगतः प्रदक्षिणोऽन्यः शुभस्ततश्चान्यः ।
तस्मिंश्च वर्धमाने द्वारं तु न दक्षिणं कार्यम् ।।३३।।

माया—प्रधान गृह के जो द्वार, वहाँ जो अलिन्द वह है द्वारालिन्द। वह अन्तगत अर्थात् दक्षिणोत्तर भित्ति संलग्न हो तथा द्वितीयालिन्द उसके प्रदक्षिण क्रम से स्थित हो और तृतीयालिन्द उसके प्रदक्षिण क्रम से गया हो एवं दक्षिण द्वार का अभाव हो, तो वह वर्धमान वास्तु कहलाता है।।३३।।

स्वस्तिक वास्तु लक्षण कथन

अपरोऽन्तगतोऽलिन्दः प्रागन्तगतौ तदुत्थितौ चान्यौ ।
तदवधिविधृतश्चान्यः प्राग्द्वारं स्वस्तिके शुभदम् ।।३४।।

माया—स्वस्तिक वास्तु में पश्चिमालिन्द अन्तगत अर्थात् दक्षिणोत्तर शाला संलग्न होता है। पश्चिमालिन्द से निःस्सरित और दो अलिन्द पूर्वदिशागत शाला से संलग्न होते हैं। इन दोनों के बीच पूर्वदिशागत अलिन्द भी होता है। इसमें केवल पूर्वदिशा में द्वार होने से शुभफलदा होता है॥३४॥

रूचकवास्तुलक्षण कथन

प्राक्पश्चिमावलिन्दावन्तगतौ तदवधिस्थितौ शेषौ।
रुचके द्वारं न शुभदमुत्तरतोऽन्यानि शस्तानि ॥३५॥

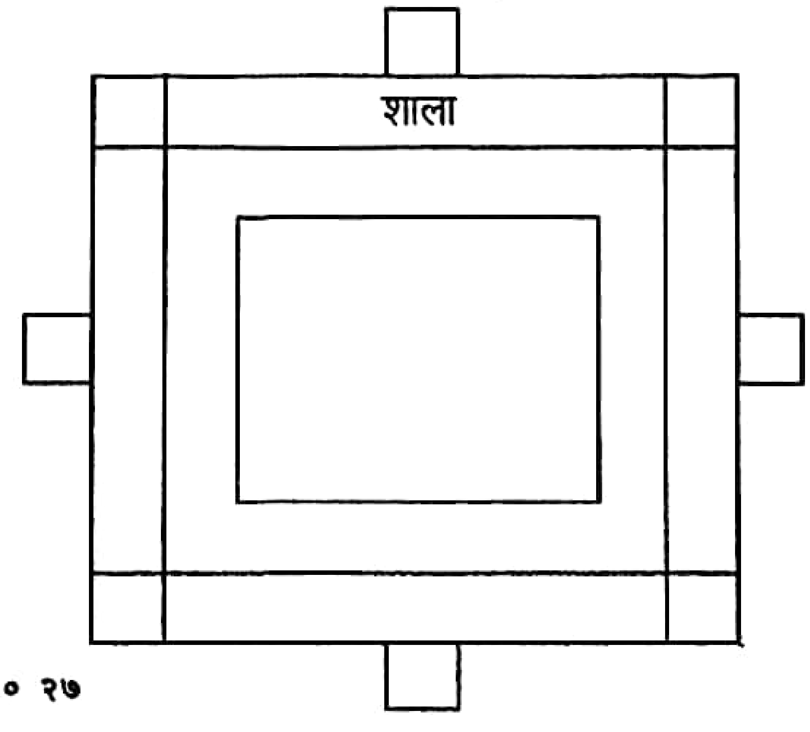
माया—रूचक वास्तु में पूर्व और पश्चिम के दो अलिन्द अन्तगत और उनके बीच में दो संलन होते हैं। इस रुचक नाम के वास्तु में उत्तर दिशा के द्वार का अभाव होना, शुभदायक होता है। अन्य दिशा के द्वार शुभफलद होते हैं॥३५॥

सर्वतोभद्र आदि पाँच चतुःशालाओं का फल कथन

श्रेष्ठं नन्द्यावर्तं सर्वेषां वर्धमानसंज्ञं च।
स्वस्तिकरुचके मध्ये शेषं शुभदं नृपादीनाम् ॥३६॥

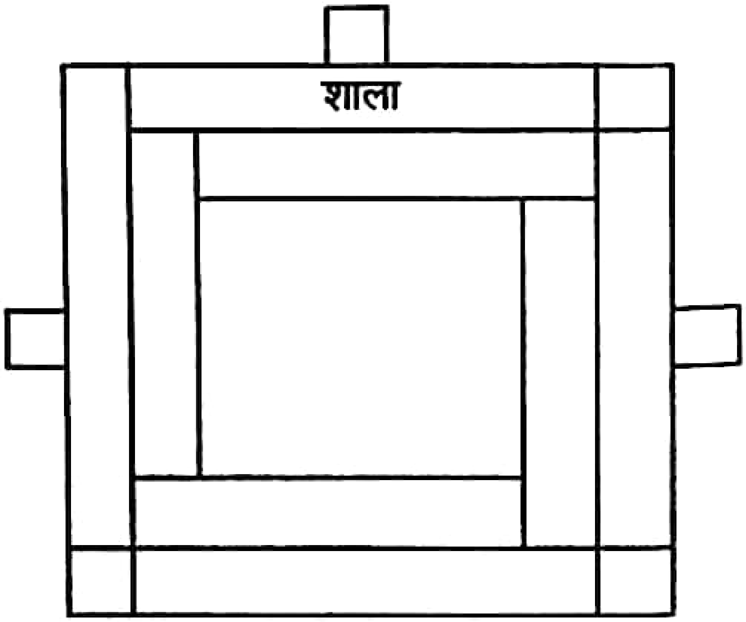
माया—सभी जातियों के लिए नन्द्यावर्त और वर्धमान नाम के चतुःशालाएँ श्रेष्ठ हैं तथा स्वस्तिक और रूचक चतुःशालाऐं मध्यम होते हैं। अन्य सर्वतोभद्र नाम का चतुःशाला राजा आदि अर्थात् राजा, मन्त्री, अन्य राज्याश्रितजनों, देवताओं आदि के लिए शुभदायक होता है। अन्य जन के लिए अशुभदायक होता है॥३६॥

पूर्वा।
सर्वतोभद्रम्।



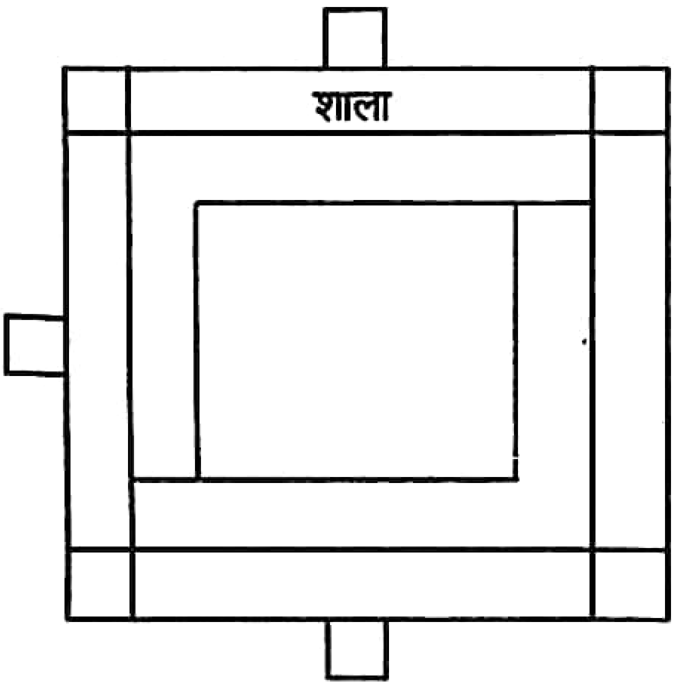
पूर्वा ।

नन्द्यावर्तम् ।



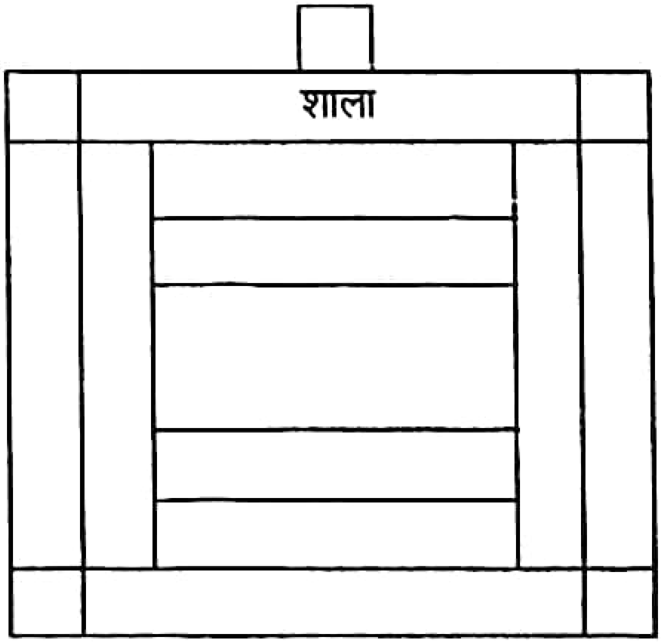
पूर्वा ।

वर्धमानम् ।



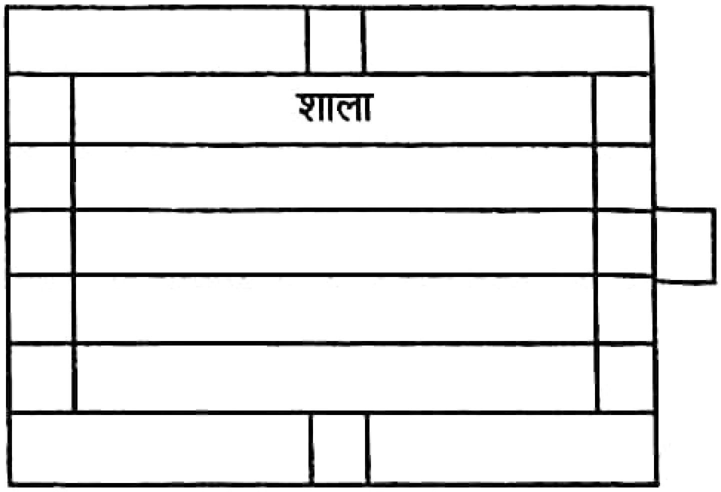
पूर्वा।

स्वस्तिकम्।



पूर्वा।

रुचकम्।



हिरण्य आदि त्रिशालाओं का सफल कथन

उत्तरशालाहीनं हिरण्यनामं त्रिशालकं धन्यम्।
प्राक्शालया वियुक्तं सुक्षेत्रं वृद्धिदं वास्तु।।३७।।
याम्याहीनं चुल्ली त्रिशालकं वित्तनाशकरमेतत्।
पक्षघ्नमपरया वर्जितं सुतध्वंसवैरकरम्।।३८।।

भाषा—जिस वास्तु में उत्तर दिशा की ओर शाला (भित्ति) का अभाव हो और अन्य पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशाओं में शालाऐं (भित्ति) हों, तो उसे हिरण्य संज्ञक त्रिशाल वास्तु कहा जाता है। इस प्रकार का वास्तु शुभदायक होता है।

जिसमें पूर्व दिशा की ओर शाला का अभाव हो और अन्य दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशाओं में शालायें हों, तो उसे सुक्षेत्र संज्ञक त्रिशाल वास्तु कहा जाता है। ऐसा वास्तु वृद्धिदायक होता है।

जिसमें दक्षिण दिशा की भित्ति का अभाव हो और अन्य पूर्व, पश्चिम और उत्तर दिशाओं में भित्तियाँ हों, तो उसे चुल्लीसंज्ञक विशाल वास्तु कहा जाता है। इस प्रकार का वास्तु धनसम्पत्ति की हानि करने वाला होता है।

जिसमें पश्चिम की भित्ति का अभाव हो और अन्य तीन शालायें हों, तो उसे पक्षघ्न संज्ञक त्रिशाल वास्तु कहा गया है। इस प्रकार के वास्तु में निवास करने वालों के पुत्र की हानि तो होती ही है, उसका अन्य जनों से द्वेष भी बढ़ता है।।३७-३८।।

सिद्धार्थादि द्विशाल वास्तु का सफल कथन

सिद्धार्थमपरयाम्ये यमसूर्यं पश्चिमोत्तरे शाले।
दण्डाख्यमुदक्पूर्वे वाताख्यं प्राग्युता याम्या ।।३९।।
पूर्वापरे तु शाले गृहचुल्ली दक्षिणोत्तरे काचम्।
सिद्धार्थेऽर्थावाप्तिर्यमसूर्ये गृहपतेर्मृत्युः ।।४०।।
दण्डवधो दण्डाख्ये कलहोद्वेगः सदैव वाताख्ये।
वित्तविनाशश्चुल्ल्यां ज्ञातिविरोधः स्मृतः काचे ।।४१।।

माया—जिस वास्तु में दक्षिण और पश्चिम दिशाओं में शाला हो, तो उसे सिद्धार्थसंज्ञक द्विशाला वास्तु कहा जाता है। जिसके पश्चिम और उत्तर दिशाओं में शाला होने पर यम सूर्यसंज्ञक वास्तु होता है। उत्तर और पूर्व दिशाओं में शाला होने पर दण्ड संज्ञक वास्तु होता है। पूर्व और दक्षिण दिशाओं में शाला होने पर वातसंज्ञक वास्तु होता है। पूर्व और पश्चिम दिशाओं में शाला होने से गृहचुल्ली संज्ञक वास्तु होता है। दक्षिण और उत्तर दिशाओं में शाला होने पर काँच संज्ञक वास्तु होता है।

इस प्रकार सिद्धार्थ वास्तु में धनलाभ, यमसूर्य वास्तु में गृहपति का मरण, दण्ड वास्तु में निवास करने पर दण्ड के कारण मरण होता है। वातसंज्ञक वास्तु में हमेशा झगड़ा होता है। गृहचुल्ली में अर्थहानि तथा काच वास्तु में बन्धु बान्धवों से द्वेष उत्पन्न होता है।।३९-४१।।

एकाशी कोष्ठ क्षेत्र प्रदर्शनार्थ कथन

एकाशीतिविभागे दश दश पूर्वोत्तरायता रेखाः।
अन्तस्त्रयोदश सुरा द्वात्रिंशद्बाह्यकोष्ठस्थाः ।।४२।।

माया—एकाशी कोष्ठक वाले क्षेत्र का निर्माण करने के लिए दस पूर्व और पश्चिम खडी वसी की रेखाऐं और दस दक्षिण और उत्तरा पड़ी सीधी रेखाऐं बनानी चाहिए। इस प्रकार से रेखायें खींचने से ८१ कोष्ठकों का क्षेत्र निर्मित होता है। उसके बाहरी भाग में बत्तीस और अन्दर तेरह देवताओं को स्थापित किया जाता है।।४२।।

बाहरी कोष्ठकों के द्वात्रिंश देवताओं के नाम कथन

शिखिपर्जन्यजयन्तेन्द्रसूर्यसत्या भृशोऽन्तरिक्षश्च ।
ऐशान्यादिक्रमशो दक्षिणपूर्वेऽनिलः कोणे ।।४३।।
पूषा वितथबृहत्क्षतयमगन्धर्वाख्यभृङ्गराजमृगाः ।
पितृदौवारिकसुग्रीवकुसुमदन्ताम्बुपत्यसुराः ।।४४।।
शोषोऽथ पापयक्ष्मा रोगः कोणे ततोऽहिमुख्यौ च ।
भल्लाटसोमभुजगास्ततोऽदितिर्दितिरिति क्रमशः ।।४५।।

माया—उपरोक्त क्षेत्र के ईशान आदि कोण से प्रदक्षिण क्रम से ३२ देवता यथा शिखी, पर्यन्य, जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश, अन्तरिक्ष; अग्निकोण में वायु अथवा अग्नि, पूषा, वितथ, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व, भृङ्गराज, मृग, पितर, दौवारिक, सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर, शोष, पापयक्ष्मा; वायव्य कोण में रोग, नाग, मुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग, अदिति और दिति स्थापित किये जाते हैं।।४३-४५।।

अन्तःस्थ कोष्ठकों के त्रयोदश देवता कथन

मध्ये ब्रह्मा नवकोष्ठकाधिपोऽस्यार्यमा स्थितः प्राच्याम् ।
एकान्तरात् प्रदक्षिणमस्मात् सविता विवस्वांश्च ।।४६।।
विबुधाधिपतिस्तस्मान्मित्रोऽन्यो राजयक्ष्मनामा च ।
पृथिवीधरापवत्सावित्येते ब्रह्मणः परिधौ ।।४७।।
आपो नामैशाने कोणे हौताशने च सावित्रः ।
जय इति च नैर्ऋते रुद्र आनिलेऽभ्यन्तरपदेषु ।।४८।।

माया—उपरोक्त क्षेत्र के अन्तःस्थ नौ कोष्ठकों में ब्रह्मा, उससे पूर्व दिशा के कोष्ठकों में अर्यमा और प्रदक्षिण क्रम से सविता, विवश्वान, इन्द्र, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर, आपवत्स आदि देवता एकान्तर कोष्ठकों में ब्रह्माजी के चारों ओर अवस्थित हैं तथा आप नामक देव ब्रह्माजी से ईशानकोण में पर्यन्य देव के नीचे, अग्निकोण में सावित्र नामक देव अन्तरिक्ष नामक देव के नीचे, नैऋत्यकोण में जय नामक देव दौवारिक देव के ऊपर तथा वायव्य कोण में रूद्र नामक देव पापयक्ष्मा देवता के ऊपर विराजित हैं। विशेष एकाशीकोष्ठ क्षेत्र देखने से स्पष्ट है।।४६-४८।।

उपरोक्त क्षेत्रस्थित देवताओं का पदसंख्या प्रदर्शनार्थ कथन

आपस्तथापवत्सः पर्जन्योऽग्निर्दितिश्च वर्गोऽयम् ।
एवं कोणे कोणे पदिकाः स्युः पञ्च पञ्च सुराः ।।४९।।
बाह्या द्विपदाः शेषास्ते विबुधा विंशतिः समाख्याताः ।
शेषाश्चत्वारोऽन्ये त्रिपदा दिक्ष्वर्यमाद्यास्ते ।।५०।।

माया—इस तरह उपरोक्त क्षेत्र के ईशान कोण स्थित आप, आपवत्स, पर्यन्य, शिखी,

दिति आदि पाँच देवता एक-एक कोष्ठक में होने से एक पद वाले देवता हैं। इसी प्रकार अन्य अग्नि, नैर्ऋत्य और वायव्य कोणों में से प्रत्येक में पाँच-पाँच देवता एक पदिक हैं अर्थात् सविता, सावित्र, अनल अथवा अनिल, अन्तरिक्ष और पूषा अग्नि कोण में; इन्द्र, जय, दौवारिक, पिता, मृग आदि नैर्ऋत्य कोण में; राजयक्ष्मा, रूद्र, पापयक्ष्मा, रोग, नाग आदि पाँच एकपदिक देवता वायव्य कोण में विराजते हैं। शेष बाह्य कोष्ठकों में स्थित बीस देवता द्विपदिक अर्थात् दो-दो कोष्ठकों में स्थित होते हैं। तात्पर्य यह कि बाह्य दो-दो कोष्ठकों में क्रम से पूर्वदिशा में जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश आदि; दक्षिण दिशा में वितय, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व, भृङ्गराज; पश्चिम दिशा में सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर, शोष आदि तथा उत्तर दिशा में मुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग , अदिति, आदि सभी द्विपदिक देवता विराजमान रहते हैं। मध्य कोष्ठकस्थ ब्रह्मा से पूर्वदिशा के तीन कोष्ठकों में अर्यमां, दक्षिणदिशा के तीन कोष्ठकों में विवश्वान् , पश्मिच दिशा के तीन कोष्ठकों में मित्र तथा उत्तर दिशा के तीन कोष्ठकों में पृथ्वीधर नाम के देवता स्थित होते हैं, ये चारों त्रिपदिक देवता कहलाते हैं।।४९-५०।।

वास्तुपुरुष के अङ्ग प्रविभागस्थ देवताओं के नाम कथन

पूर्वोत्तरदिङ्मूर्धा पुरुषोऽयमवाङ्मुखोऽस्य शिरसि शिखी ।
आपो मुखे स्तनेऽस्यार्यमा ह्युरस्यापवत्सश्च ।।५१।।
पर्जन्याऽद्या बाह्या दृक्श्रवणोरःस्थलांसगा देवाः ।
सत्याद्याः पञ्च भुजे हस्ते सविता च सावित्रः ।।५२।।
वितथो बृहत्क्षतयुतः पार्श्वे जठरे स्थितो विवस्वांश्च ।
ऊरू जानु च जङ्घे स्फिगिति यमाद्यैः परिगृहीताः ।।५३।।
एते दक्षिणपार्श्वे स्थानेष्वेवं च वामपार्श्वस्थाः ।
मेढ्रे शक्रजयन्तो हृदये ब्रह्मा पिताऽङ्घ्रिगतः ।।५४।।

भाषा—यह वास्तुपुरुष पूर्वोत्तर (ईशान) कोण की ओर शिर रखकर अधोमुख स्थित है। इसके शिरोभाग में अग्नि, मुख में आप, स्तन में अर्यमा तथा वक्षःस्थल में आपवत्स स्थित माने गए हैं।

बाह्य कोष्ठकों में स्थित पर्यन्य आदि देवता नेत्र, कान, वक्षःस्थल तथा कन्धों में अर्थात् पर्यन्य दोनों नेत्र में, कान में जयन्त, वक्षःस्थल में इन्द्र तथा कन्धा में सूर्य स्थित कहे गए हैं। एवं भुजा में सत्य आदि पंचदेव अर्थात् सत्य, भृश, अन्तरक्षि, अनिल और पूषा तथा हाथों में वितथ और बृहत्क्षत, पेट में विवश्वान् ऊरुओं में यम, जानुओं में गन्धर्व, जंघाओं में भृङ्गराज और कुल्हा में मृग देवता स्थित माने गए हैं। इस प्रकार वास्तु पुरुष के दक्षिण अङ्गो में स्थित देवताओं के नामों को कहा गया है। इसी तरह उसके वाम अङ्गों में स्थित देवताओं के नाम पृथक् रूप से जानना चाहिए

अर्थात् वास्तु पुरुष के वाम स्तन में पृथ्वीधर; वाम नेत्र में दिति, वाम कान में अदिति; वक्ष स्थल में भुजग; कन्धा में सोम; भुजा में भल्लाट, मुख्य, अहि, रोग और पापयक्ष्मा; हाथ में रुद्र और राजयक्ष्मा; पार्श्व में शोष और असुर; ऊरु में वरुण; जानु में कुसुमदन्तः जंघा में सुग्रीव और कुल्हा में दौवारिक नाम के देवता स्थित माने गए हैं।

और फिर लिङ्ग में शक्र और जयन्त; हृदय में ब्रह्मा तथा पैर में पिता नाम के देवताओं के निवास हैं। इस प्रकार एकासी कोष्ठकों में राज्य, नगर, कस्बा, ग्राम, गृह आदि के प्रसङ्गों में वास्तु पुरुष के विविध अङ्गों के प्रविभाग करा विचार करना श्रेयस्कर है।।५१-५४।।

चौंसठ कोष्ठकात्मक वास्तु पुरुष के देवताओं के प्रविभाग कथन

अष्टाष्टकपदमथवा कृत्वा रेखाश्च कोणगास्तिर्यक् ।
ब्रह्मा चतुष्पदोऽस्मिन्नर्धपदा ब्रह्मकोणस्थाः ।।५५।।
अष्टौ च बहिष्कोणेष्वर्धपदास्तदुभयस्थिताः सार्धाः ।
उक्तेभ्यो ये शेषास्ते द्विपदा विंशतिस्ते हि ।।५६।।

भाषा—अथवा नौ रेखा खड़ी और नौ रेखा पड़ी (तिर्यक) खींच कर चौंसठ कोष्ठकात्मक क्षेत्र बनाना चाहिए, उस क्षेत्र के चारों कोणों को दो कर्ण रेखाओं से मिलाना चाहिए। इस प्रकार चौंसठ पदीय क्षेत्र में द्वादश कोष्ठक, कोण के आरम्भ से आधा आधा होकर २४ अर्द्धपद होते हैं। इस क्षेत्र के मध्य के चार पूर्ण कोष्ठकों या पदों के ब्रह्मा स्वामी होता है। फिर ब्रह्मा के चारों कोणों में आधा-आधा पद का अष्टदेवता जैसे—आप-पापवत्स, सविता-सावित्र, इन्द्र-जयन्त, राज्यक्ष्मा-रूद्र स्वामी होते हैं। इस क्षेत्र के बाह्य चारों कोणों के आधे-आधे पद के दिति-शिखी, अन्तरिक्ष, अनिल या अनल, मृग-पिता, पापयक्ष्मा-रोग आदि स्वामी होते हैं, इसलिए इसे अर्धपदीय देवता कहते हैं। इन चारों कोणस्थ देवताओं के पश्चात् दोनों ओर पर्यन्य, भृश, पूषा, भृङ्गराज, दौवारिक, शोष, नाग, अदिति आदि आठ देवता सार्धपदीय अर्थात् एक सम्पूर्ण और आधे पद के स्वामी होते हैं। अवशिष्ट बीस देवता जैसे जयन्त, इन्द्र, सूर्य सत्य, वितथ, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व, सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर, मुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग, अर्यमा, विवश्वान् , मित्र पृथ्वीधर दो-दो पदों के स्वामी होने से इन्हें द्विपदीय देवता कहते हैं।

इस प्रकार आचार्य यहाँ दो प्रकार के चतुरस्र वास्तु के प्रसङ्ग में चर्चा करते प्रतीत होते हैं, जबकि व्यवहार में चतुरस्र, वृत्ताकार, त्रिकोणाकार, षट्कोणाकार आदि विविध स्वरूप के वास्तु का दर्शन होता है। अतः यहाँ उनका अलग से विस्तारभय से चर्चा करना सम्भव नहीं है। इस सम्बन्ध में इस ग्रन्थ की भट्टोत्पली का अध्ययन करना ही श्रेयस्कर है।।५५-५६।।

चतुरस्रे एकाशीति पदो वास्तुनरः

ई पू अनलः आ

शिखी	पर्जन्यः	जयन्तः	इन्द्रः	सूर्यः	सत्यः	भृशः	अन्त-रिक्षः	अनिलः
दितिः	आपः	जयन्तः	इन्द्रः	सूर्यः	सत्यः	भृशः	सावित्रः	पूषा
अदितिः	अदितिः	आप-वत्सः	अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा	सविता	वितथः	वितथः
भुजगः	भुजगः	पृथिवी-धरः	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विव-श्वान्	बृहक्षतः	बृहक्षतः
सोमः	सोमः	पृथिवी-धरः	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विव-श्वान्	यमः	यमः
भल्लाटः	भल्लाटः	पृथिवी-धरः	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विव-श्वान्	गन्धर्वः	गन्धर्वः
मुख्यः	मुख्यः	राज-यक्ष्मा	मित्रः	मित्रः	मित्रः	इन्द्रः	भृङ्गराज	भृङ्गराज
नागः	रुद्रः	शोषः	असुर	वरुणः	कुसुम-दन्तः	सुग्रीवः	जयः	मृगः
रोगः	पाप-यक्ष्मा	शोषः	असुरः	वरुणः	कुसुम-दन्तः	सुग्रीव	दौवा-रिकः	पिता

उ (left) द (right)

वा प नै

चतुरस्रे चतुःषष्टि पदो वास्तुनरः

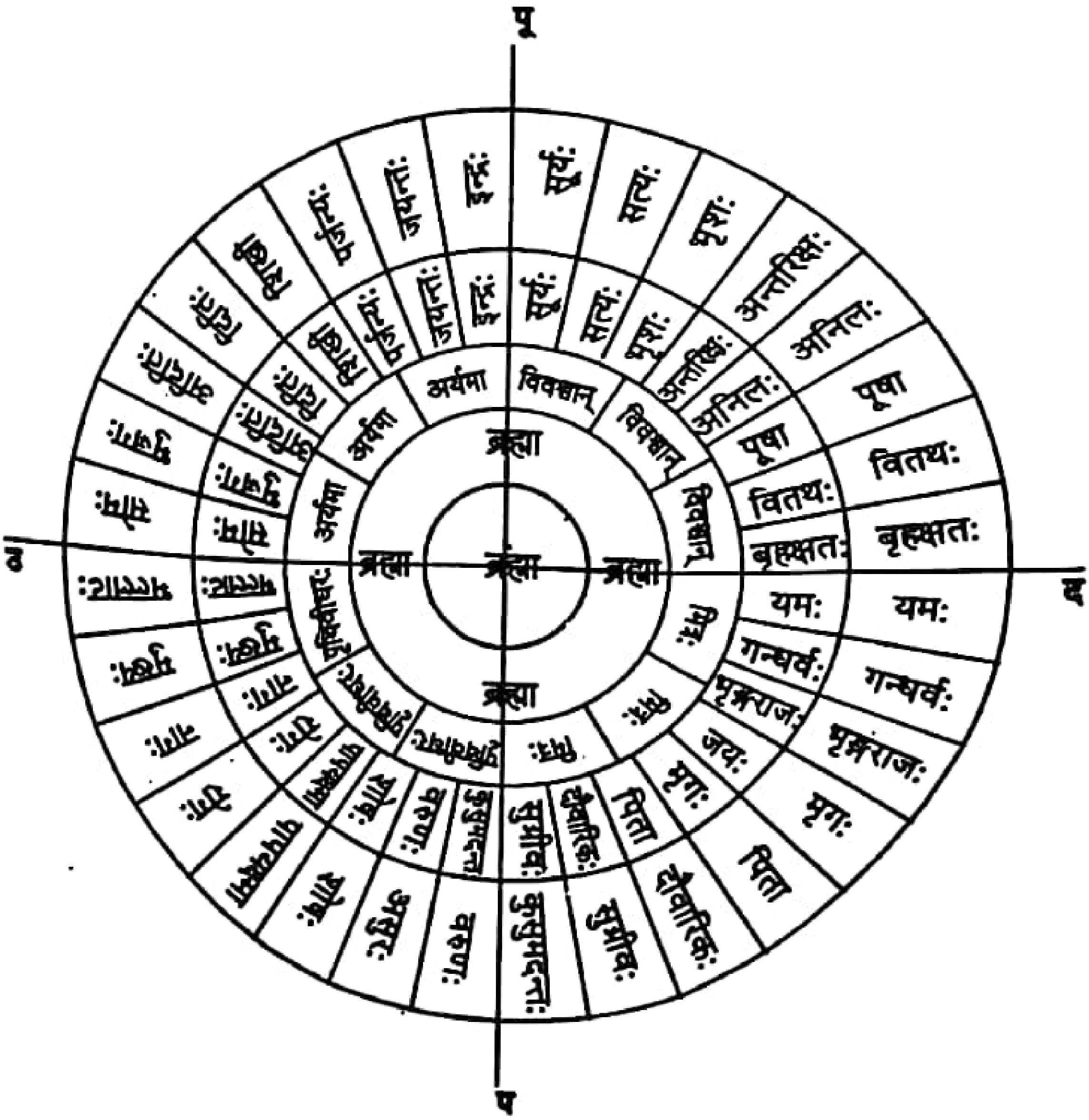
ई पू आ

शिखी / दितिः	पर्जन्यः	जयन्तः	इन्द्रः	सूर्यः	सत्यः	भृशः	अन्तरिक्षः / अनिलः
अदितिः	पर्जन्यः / अदितिः	जयन्तः	इन्द्रः	सूर्यः	सत्यः	भृशः / पूषा	पूषा
भुजगः	भुजगः	आपवत्सः / आपः	अर्यमा	अर्यमा	सविता / सावित्रः	वितथः	वितथः
सोमः	सोमः	पृथिवीधरः	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान्	बृहक्षतः	बृहक्षतः
भल्लाटः	भल्लाटः	पृथिवीधरः	ब्रह्मा	ब्रह्मा	विवश्वान्	यमः	यमः
मुख्यः	मुख्यः	रुद्रः / राजयक्ष्मा	मित्रः	मित्रः	इन्द्रः / जयः	गन्धर्वः	गन्धर्वः
नागः	नागः / शोषः	असुरः	वरुणः	कुसुमदन्तः	सुग्रीवः	भृङ्गराजः / दौवारिकः	भृङ्गराजः
रोगः / पापयक्ष्मा	शोषः	असुरः	वरुणः	कुसुमदन्तः	सुग्रीवः	दौवारिकः	मृगः / पिता

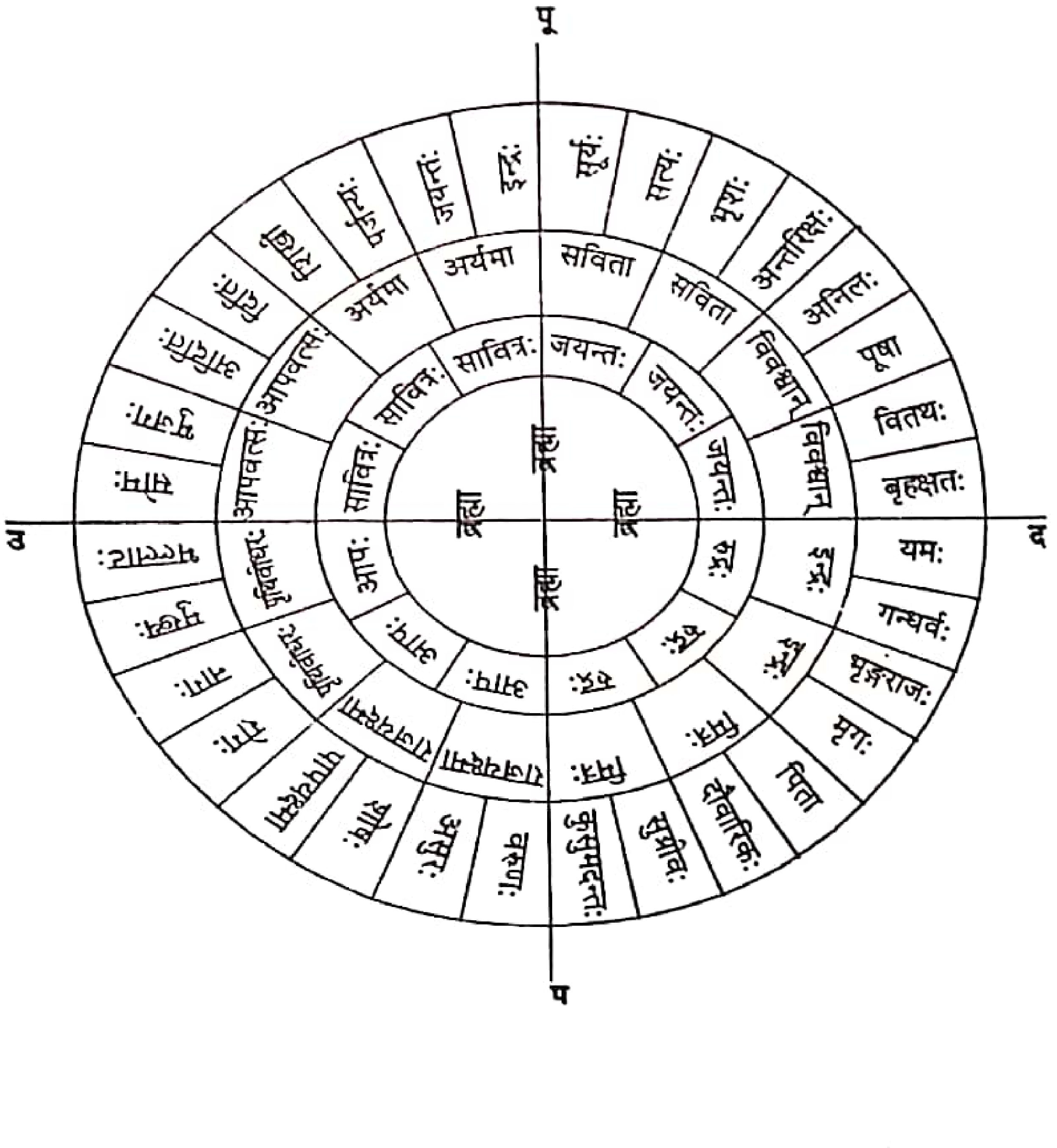
उ (left) — द (right)

वा प नै

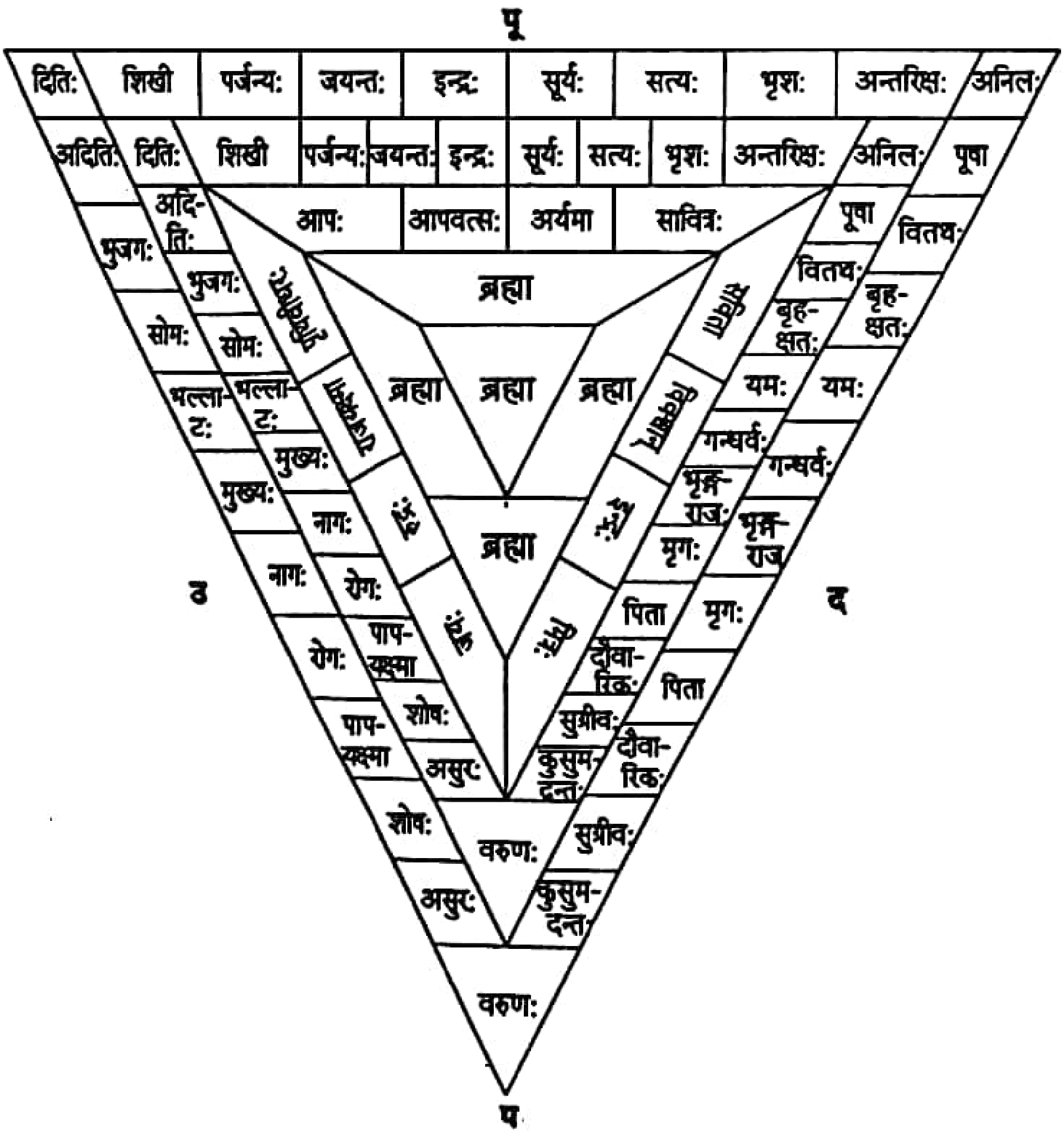
वृत्ते एकाशीति पदो वास्तुनरः



वृत्ते चतुःषष्टि पदो वास्तुनरः



त्र्यस्रे एकाशीति पदो वास्तुनरः



अब वास्तु के मर्म विभाग प्रदर्शनार्थ कथन

सम्पाता वंशानां मध्यानि समानि यानि च पदानाम्।
मर्माणि तानि विन्द्यात्र तानि परिपीडयेत् प्राज्ञः ।।५७।।

माया—क्षेत्रों के पदों के मध्य या केन्द्र स्थान में वंशों अर्थात् चारों कोणों को मिलाने वाली दो कर्ण रेखाओं का पारस्परिक कटान (सम्पात्) स्थान को उस क्षेत्र का मर्म स्थान कहा जाता है। उस मर्म स्थान को बुद्धिमान् जन पीड़ित न करें, क्योंकि पीड़ित मर्म स्थान दोषावह होता है।।५७।।

पीडित मर्म स्थान फल कथन

तान्यशुचिभाण्डकीलस्तम्भाद्यैः पीडितानि शल्यैश्च।
गृहभर्तुस्तत्तुल्ये पीडामङ्गे प्रयच्छन्ति ।।५८।।

माया—वास्तु पुरुष का मर्मस्थान अपवित्र भाण्ड, कील, खम्भा, शल्य आदि से पीड़ित हो, तो उसके समतुल्य अङ्ग में गृहपति को पीड़ा मिलती है। अर्थात् वह पीड़ित मर्मस्थान वास्तुपुरुष के जिस-किसी अङ्ग का द्योतक हो, उसके समान अङ्ग में गृहपति को भी पीड़ा होती है।।५८।।

शल्य ज्ञान प्रकार कथन

कण्डूयते यदङ्गं गृहभर्तुर्यत्र वाऽमराहुत्याम्।
अशुभं भवेन्निमित्तं विकृतेर्वाग्नेः सशल्यं तत् ।।५९।।

माया—गृहपति हवन करने के समय अथवा प्रश्न के समय अपने जिस अङ्ग को खुजलाते हों, वास्तु पुरुष के उस अङ्ग स्थान में शल्य है, जानना चाहिए अथवा जिस देवता की आहुति काल में अशुभदायक निमित्त अर्थात् छींकना, रोना, चिल्लाना, अधोवायु त्यागना या अन्य अशुभ शब्द का सूनाई देना आदि अथवा अग्नि का विकृत होना अर्थात् विस्फुलिङ्ग शब्द सहित दुर्गन्ध होना आदि उत्पन्न हो, तो उस सम्बन्धित देवता के अङ्ग स्थान में शल्य समझना चाहिए।।५९।।

शल्य प्रकारवश शुभाशुभ फल कथन

धनहानिर्दारुमये पशुपीडा रुग्भयानि चास्थिकृते।
(लोहमये शस्त्रभयं कपालकेशेषु मृत्युः स्यात् ।।६०क।।
अङ्गारे स्तेनभयं भस्मनि च विनिर्दिशेत्सदाऽग्निभयम्।
शल्यं हि मर्मसंस्थं सुवर्णरजतादृतेऽत्यशुभम् ।।६०ख।।
मर्मण्यमर्मगो वा निरुणद्ध्यर्थागमं तुषसमूहः।)
अपि नागदन्तको मर्मसंस्थितो दोषकृद् भवति ।।६०।।

माया—काष्ठ शल्य के होने पर धननाश, हड्डी शल्य होने पर पशुपीड़ा और रोग भय , लौह शल्य के होने पर शस्त्रभय, कपाल के केश रूप शल्य होने से मृत्यु होती है॥

कोयले का शल्य होने से चोरों का भय, भस्म का शल्य होने से हमेशा अग्निभय रहता है।

एवं स्वर्ण और चाँदी के इतर कोई भी शल्य वास्तु पुरुष के मर्मस्थल में होने पर अत्यन्त अशुभ होता है।

तथा धान्य सम्बन्धी भूसी मर्मस्थान अथवा अन्य स्थान में होने से धनागम को बाधित करने वाला होता है और नागदन्त मर्मस्थल में होने पद दोषकारक होता है लेकिन अन्य स्थान पर होने से शुभकारक होता है॥६०क-६२ख-६०॥

वंशसूत्र और महामर्मस्थान कथन

रोगाद्वायुं पितृतो हुताशनं शोषसूत्रमपि वितथात् ।
मुख्याद् भृशं जयन्ताच्च भृङ्गमदितेश्च सुग्रीवम् ॥६१॥
तत्सम्पाता नव ये तान्यतिमर्माणि सम्प्रदिष्टानि ।
यश्च पदस्याष्टांशस्तत् प्रोक्तं मर्मपरिमाणम् ॥६२॥

माया—रोग से वायु, पिता से शिखी, वितथ से शोष, मुख्य से भृश, जयन्त से भृङ्ग तथा अदिति से सुग्रीव पर्यन्त छः सूत्र बाँधना चाहिए। इस प्रकार इन षड् सूत्रों के पारस्परिक नौ सम्पात (कटान) स्थान वास्तुपुरुष का महामर्म स्थान होते हैं और प्रत्येक पद का अष्टम भाग तुल्य उसका मर्मस्थान का परिमाण कहा गया है॥६१-६२॥

वंश व शिरा का परिमाण कथन

पदहस्तसंख्यया सम्मितानि वंशोऽङ्गुलानि विस्तीर्णः ।
वंशव्यासोऽध्यर्धः शिराप्रमाणं विनिर्दिष्टम् ॥६३॥

माया—उपरोक्त षड् सूत्रों की वंश संज्ञा और वास्तु क्षेत्र में पदज्ञानार्थ जो ऊर्ध्वाधर और तिर्यक् दश-दश रेखायें खींचे जाते हैं, उन रेखाओं की शिरा संज्ञा कही गई है। वास्तु क्षेत्र में एक पद का विस्तार जितने हस्त हों, उतने अङ्गुल प्रत्येक वंश का विस्तार तथा उस विस्तार से सार्ध विस्तार शिरा का विस्तार होता है॥६३॥

वास्तु में ब्रह्मपदों का महत्त्व कथन

सुखमिच्छन् ब्रह्माणं यत्नाद्रक्षेद् गृही गृहान्तःस्थम् ।
उच्छिष्टाद्युपघाताद् गृहपतिरुपतप्यते तस्मिन् ॥६४॥

माया—सुख की इच्छा करने वाले गृहपतियों को वास्तु के मध्य में स्थित ब्रह्मा से सम्बन्धित स्थान का सयत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए क्योंकि उस स्थान पर उच्छिष्ट अर्थात् जूठ, कूड़ाकर्कट, अपवित्र चीजों आदि को रखने से गृहपति पीड़ित होता है॥६४॥

विकल वास्तु का दोष प्रदर्शनार्थ कथन

दक्षिणभुजेन हीने वास्तुनरेऽर्थक्षयोऽङ्गनादोषाः ।
वामेऽर्थधान्यहानिः शिरसि गुणैर्हीयते सर्वैः ॥६५॥
स्त्रीदोषाः सुतमरणं प्रेष्यत्वं चापि चरणवैकल्ये ।
अविकलपुरुषे वसतां मानार्थयुतानि सौख्यानि ॥६६॥

माया—वास्तु पुरुष यदि दक्षिण भुजा से रहित हो, तो गृहपति को धनहानि और स्त्रीजन्य दोषों का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार वाम भुजा रहित होने पर उसके अन्न धन की हानि; शिर रहित होने पर अन्न धन के साथ सभी प्रकार के गुणों की हानि और पैरों से हीन होने पर स्त्रीजन्य दोष, पुत्र शोक और सेवा करने वाला नौकर होता है।

वास्तु पुरुष के सभी अङ्गों वाला होने से उस वास्तु में निवास करने वाले जनों का मान-सम्मान, धन-सम्पदा आदि की वृद्धि होने के साथ उन्हें सुख की प्राप्ति भी होती है॥६५-६६॥

गृह की तरह ग्रामों व नगरों में भी वास्तु पुरुष प्रविभाग कथन

गृहनगरग्रामेषु च सर्वत्रैवं प्रतिष्ठिता देवाः ।
तेषु च यथानुरूपं वर्णा विप्रादयो वास्याः ॥६७॥

माया—गृह, नगर और ग्राम में उपरोक्त प्रकार से वास्तु देवता स्थित होते हैं। अतः नगर व ग्राम में ब्राह्मण आदि चातुवर्णों को अपने-अपने प्राप्त क्रम से वास करना चाहिए॥६७॥

चातुर्वर्णों के वास करने का क्रम कथन

वासगृहाणि च विन्द्याद्विप्रादीनामुदग्दिगाद्यानि ।
विशतां च यथा भवनं भवन्ति तान्येव दक्षिणतः ॥६८॥

माया—ब्राह्मण आदि चातुवर्णों को क्रम से ग्राम या नगर में उत्तर आदि दिशा के क्रम से निवास करने हेतु गृह बनाने चाहिए। अर्थात् ब्राह्मण उत्तर दिशा में, क्षत्रिय पूर्व दिशा में, वैश्य दक्षिण और शूद्र पश्चिम दिशा में गृह बनायें।

उनके द्वारा गृह इस प्रकार बनाने का प्रयत्न करना चाहिए, जिससे कि उसके

आङ्गन में प्रवेश करते समय गृह दक्षिण दिशा में पड़े अर्थात् पूर्वाभिमुख गृह के आङ्गन का द्वारा उत्तर दिशा में, दक्षिणाभिमुख गृह के आङ्गन का द्वार पूर्व दिशा में, पश्चिमाभिमुख गृह के आङ्गन का द्वार दक्षिण दिशा में और उत्तराभिमुख गृह के आङ्गन का द्वार पश्चिम दिशा में करना चाहिए॥६८॥

चारों दिशाओं में बत्तीस द्वारों के फल प्रदर्शनार्थ कथन

नवगुणसूत्रविभक्तान्यष्टगुणेनाथवा चतुःषष्टेः।
द्वाराणि यानि तेषामनलादीनां फलोपनयः॥६९॥

माया—पूर्वोक्त एकाशी पदों के क्षेत्र में नवगुणित सूत्र से अथवा चौंसठ पदों के क्षेत्र में अष्टगुणित सूत्र से विभाजित अनल आदि देवता जन्य बत्तीस द्वारों के फलों को क्रम से आगे कहा जा रहा है॥६९॥

पूर्व द्वार फल कथन

अनिलभयं स्त्रीजननं प्रभूतधनता नरेन्द्रवाल्लभ्यम्।
क्रोधपरतानृतत्वं क्रौर्यं चौर्यं च पूर्वेण॥७०॥

माया—पूर्वोक्त वास्तु क्षेत्र में पूर्व दिशा में शिखी से अन्तरिक्ष पर्यन्त आठ देवता स्थित माने गए हैं। उन देवताओं में शिखी देवता के स्थान पर द्वार के स्थित होने पर अग्नि से भय उत्पन्न होता है। इसी तरह पर्य्यन्य स्थान पर द्वार होने से कन्या सन्तान की प्राप्ति, जयन्त के स्थान पर द्वार होने से प्रभूत धन प्राप्ति, इन्द्रस्थ द्वार से राजकीय प्रसन्नता, सूर्यस्थ द्वार से क्रोध, सत्यस्थ द्वार से मिथ्या वाचन, भृशस्थ द्वार से क्रूरकर्म, तथा अन्तरिक्षस्थ द्वार से तस्करी करने की प्रवृत्ति होती है॥७०॥

दक्षिण द्वार फल कथन

अल्पसुतत्वं प्रैष्यं नीचत्वं भक्ष्यपानसुतवृद्धिः।
रौद्रं कृतघ्नमधनं सुतवीर्यघ्नं च याम्येन॥७१॥

माया—पूर्वोक्त वास्तु क्षेत्र के दक्षिण दिशा में अनिल या अनल से मृग पर्यन्त आठ देवता स्थित माने गए हैं। उन देवताओं में अनिल या अनल देवता स्थानस्थ द्वार होने से अल्पपुत्र, पौष्णस्थ द्वार से सेवा करने की भावना, वितथस्थ द्वार से नीचकर्म करने की भावना, बृहत्क्षतस्थ द्वार से आहार के साथ पुत्रवृद्धि, याम्यस्थ द्वार से अशुभ, गन्धर्वस्थ द्वार से कृतघ्न, भृङ्गस्थ से निर्धनता और मृगस्थ से पुत्र के बल की हानि होती है॥७१॥

पश्चिम द्वार फल कथन

सुतपीडा रिपुवृद्धिर्न सुतधनाप्तिः सुतार्थफलसम्पत्।
धनसम्पन्नृपतिभयं धनक्षयो रोग इत्यपरे॥७२॥

माया—इसी तरह पश्चिम दिशा में पिता से पापयक्ष्मा तक अष्टदेवता स्थित माने गए हैं। उन देवताओं में पिता स्थान स्थित द्वार से पुत्रों को पीड़ा, द्वौवारिक स्थानस्थ द्वार से शत्रुओं की वृद्धि, सुग्रीवस्थ द्वार से पुत्र व धन की हानि, कुसुमदन्तस्थ द्वार से पुत्र-धन-सम्पत्ति की प्राप्ति, वारुण द्वार से धन-सम्पत्ति प्राप्ति, असुरस्थ द्वार से राजकीय भय, शोष स्थानस्थ द्वार से धननाश तथा पापयक्ष्मा स्थानस्थ द्वार से रोग सम्भव होता है।।७२।।

उत्तर द्वार फल कथन

वधबन्धो रिपुवृद्धिः सुतधनलाभः समस्तगुणसम्पत्।
पुत्रधनाप्तिर्वैरं सुतेन दोषाः स्त्रिया नैःस्वम्।।७३।।

माया—तथा उत्तर दिशा में रोग से दिति पर्यन्त अष्टदेवता स्थित माने गए हैं। उन देवताओं में रोग स्थानस्थ द्वार से मरण और बन्धन, सर्पस्थ द्वार से शत्रुवृद्धि, मुख्य स्थानस्थ द्वार से पुत्र-धन आदि की प्राप्ति, भल्लाटस्थ द्वार से सभी गुणों और सम्पत्ति की प्राप्ति, सोमस्थ द्वार से पुत्र व धन की प्राप्ति, अदिति स्थानस्थ द्वार से पुत्र द्वेष तथा दिति स्थानस्थ द्वार से स्त्रियों के दोष के कारण निर्धनता आती है।।७३।।

द्वारवेध फल कथन

मार्गतरुकोणकूपस्तम्भभ्रमविद्धमशुभदं द्वारम्।
उच्छ्रायाद् द्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय।।७४।।

माया—यदि गृहद्वार के सम्मुख मार्ग, वृक्ष, अन्य गृह का कोना, कुँआ, स्तम्भ या खम्भा, भ्रम अर्थात् जल निकासी की नाली आदि हो, तो इस प्रकार गृहद्वार वेध युक्त होने से अशुभफलकारक होता है। इसका परिहार यह है कि यदि गृहद्वार की ऊँचाई से द्विगुणित भूमि को छोड़कर आगे इन चीजों का वेध हो, तो भी वे मार्गादि अशुभकर नहीं होते हैं।।७४।।

मार्ग आदि वेध में विशेषफल कथन

रथ्याविद्धं द्वारं नाशाय कुमारदोषदं तरुणा।
पङ्कद्वारे शोको व्ययोऽम्बुनिःस्राविणि प्रोक्तः।।७५।।
कूपेनापस्मारो भवति विनाशश्च देवताविद्धे।
स्तम्भेन स्त्रीदोषाः कुलनाशो ब्राह्मणाभिमुखे।।७६।।

माया—मार्ग से विद्ध द्वार होने पर गृहस्वामी का मरण,वृक्ष से विद्ध रहने पर बच्चों में दोष, पंक से विद्ध द्वार रहने पर शोक, नाली से विद्ध रहने पर अनावश्यक व्यय, कुआँ से विद्ध रहने पर अपस्मार से पीड़ा, देवप्रतिमा से विद्ध रहने पर गृहपति की हानि, स्ताम्भ या खम्भा से विद्ध होने पर स्त्रीदोष, ब्रह्मा के सम्मुख होने पर कुल की हानि होती है।।७५-७६।।

द्वार फल में अन्य विशेष फल कथन

उन्मादः स्वयमुद्घाटितेऽथ पिहिते स्वयं कुलविनाशः।
मानाधिके नृपभयं दस्युभयं व्यसनमेव नीचे च ।।७७।।
द्वारं द्वारस्योपरि यत्तत्र शिवाय सङ्कटं यच्च।
आव्यात्तं क्षुद्भयदं कुब्जं कुलनाशनं भवति ।।७८।।
पीडाकरमतिपीडितमन्तर्विनतं भवेदभावाय।
बाह्यविनते प्रवासो दिग्भ्रान्ते दस्युभिः पीडा ।।७९।।

भाषा—गृह का द्वार स्वतः खुल जाने वाला हो, तो उसके निवासीजनों को उन्माद ग्रस्त कहना चाहिए। द्वार यदि स्वयं बन्द होने वाला हो, तो कुल का नाश कहना चाहिए। पूर्वोक्त परिमाण से बड़ा द्वार का परिमाण होने पर राजभय और उक्त परिमाण से छोटा द्वार का परिमाण होने से चोरोंसे भय और दुःख होता है। जब गृह में एक कमरा के ऊपर उससे दूसरे मन्जिल के कमरा का द्वार हो तो, भी शुभ नहीं होता है। जब द्वार की मोटाई कम हो, तो भी शुभ नहीं होता है। मृदङ्गाकार विशाल द्वार भूख से पीड़ित करता है। जब द्वार कुब्ज (कुबड़ा) हो तो कुल का नाश करने वाला होता है। द्वार जब अपने भार से दबा हुआ हो, तो गृहपति को पीड़ित करता है। अन्दर की ओर झुका हुआ-सा द्वार गृहपति के मरण का कारण होता है। बाहर की ओर झुका-हुआ-सा द्वार गृहपति को प्रवासी करता है। दिग्भ्रान्त अर्थात् अपनी दिशा से भिन्न दिशा का द्वार गृहपति को चोरों का भय करता है।।७७-७९।।

द्वारफल में विशेष कथन

मूलद्वारं नान्यैर्द्वारैरभिसन्दधीत रूपर्द्ध्या।
घटफलपत्रप्रमथादिभिश्च तन्मङ्गलैश्चिनुयात् ।।८०।।

भाषा—प्रधान द्वार की जैसी रचना आकृति बनाई गई हो, वैसी रचना आकृति वाला अन्य द्वार नहीं लगाना चाहिए। उस मूल द्वार की शोभा और सुन्दरता को कलश, श्रीफल, पत्र, पुष्प आदि से सजावट कर बढ़ानी चाहिए।।८०।।

गृहादि के बाह्य कोणों में निवास फल कथन

ऐशान्यादिषु कोणेषु संस्थिता बाह्यतो गृहस्यैताः।
चरकी विदारिनामाऽथ पूतना राक्षसी चेति ।।८१।।
पुरभवनग्रामाणां ये कोणास्तेषु निवसतां दोषाः।
श्वपचादयोऽन्त्यजात्यास्तेष्वेव विवृद्धिमायान्ति ।।८२।।

भाषा—गृह के बाह्य भाग से ईशान आदि चार कोनों में क्रमशः चरकी, विदारिका, पूतना और राक्षसी स्थित होती है। अतः नगर, गृह, ग्राम आदि के इन

कोनों में निवास करने वाले जनों को कष्ट प्राप्त होता है; परन्तु श्वपच आदि जैसे चाण्डाल, डोम, अन्त्यज आदि निम्न वर्गीय जनों की उन ईशान आदि चारों कोनों में निवास करने से संवृद्धि होती है॥८१-८२॥

दिशाओं के अनुसार शुभाशुभ वृक्षों का कथन

याम्यादिष्वशुभफला जातास्तरव: प्रदक्षिणेनैते।
उदगादिषु प्रशस्ता: प्लक्षवटोदुम्बराश्वत्था ॥८३॥

माया—दक्षिण आदि दिशाओं में प्रदक्षिण क्रम से प्लक्ष (पाकर), वट, उदुम्बर (गूलर) और अश्वत्थ (पीपल) अशुभफलकारक होते हैं तथा उत्तर आदि दिशाओं में वे शुभफलकारक होते हैं। अर्थात् दक्षिण में पाकर,पश्चिम में वट, उत्तर में उदुम्बर और पूर्व दिशा में अश्वत्थ का वृक्ष अशुभद तथा उत्तर में पाकर, पूर्व में वट, दक्षिण में गूलर और पश्चिम में पीपल शुभद होते हैं॥८३॥

गृह के आसन्न वृक्षों का शुभाशुभ फल कथन

आसन्ना: कण्टकिनो रिपुभयदा: क्षीरिणोऽर्थनाशाय।
फलिन: प्रजाक्षयकरा दारूण्यपि वर्जयेदेषाम् ॥८४॥
छिन्द्याद्यदि न तरूंस्तान् तदन्तरे पूजितान् वपेदन्यान्।
पुन्नागाशोकारिष्टबकुलपनसान् शमीशालौ ॥८५॥

माया—कँटीले वृक्षों के गृह के नजदीक में होने से शत्रुओं का भय रहता है। दुधयुक्त पेड़ गृह के पस होने से धन की हानि करने वाला होता है। फलवाले पेड़ों के गृह के पास होने से सन्तान की हानि होती है। इन पेड़ों का काष्ठ भी गृह में उपयोंग करना अशुभ कारक होता है। उक्त दोषद पेड़ों को काटकर उनके स्थान पर पुन्नाग, अशोक, अरिष्ट, बकुल, कटहल, शमी या शाल आदि पेड़ लगाने से उपरोक्त दोष नहीं होता है॥८४-८५॥

प्रशस्त भूमि लक्षण और फल कथन

शस्तौषधिद्रुमलता मधुरा सुगन्धा
स्निग्ध समा न सुषिरा च महीनराणाम्।
अप्यध्वनि श्रमविनोदमुपागतानां
धत्ते श्रियं किमुत शाश्वतमन्दिरेषु ॥८६॥

माया—प्रशस्त औषधियों से युक्त, द्रुम अर्थात् पलाश; पीपल आदि याज्ञिक वृक्षों से युक्त तथा लताओं जैसे श्यामलताओं आदि से सम्पन्न; मधुर, सुगन्धयुक्त, निर्मल आदि मृत्तिका से युक्त और समतल तथा छिद्र रहित भूमि, जो भूमि मार्ग से गमन करने वालों के उत्पन्न श्रम को दूर करने वाला और उस भूमि पर अल्पकाल

के लिए ही स्थित होने पर उस जन की श्रीवृद्धि करने वाली होती है, तो जिनका गृह ऐसे भूमि के पास हमेशा स्थित हो, तो उनकी क्या अर्थात् उनकी श्रीवृद्धि तो अवश्य ही होती है॥८६॥

अन्य गृह के निकटस्थ गृह का फल कथन

सचिवालयेऽर्थनाशो धूर्तगृहे सुतवधः समीपस्थे।
उद्वेगो देवकुले चतुष्पदे भवति चाकीर्तिः ॥८७॥
चैत्ये भयं ग्रहकृतं वल्मीकश्वभ्रसङ्कुले विपदः।
गर्त्तायां तु पिपासा कूर्माकारे धनविनाशः ॥८८॥

भाषा—सचिव (मन्त्री के गृह के समीप गृह वाले की धनहानि, धूर्त गृह के समीप रहने पर पुत्र की हानि, देवगृह के समीप रहने पर मन में उद्वेग, चतुष्पथ या चौराहा के समीप रहने पर अपयश और चैत्य यानि प्रधान वृक्ष के समीप गृह रहने पर ग्रहों से भय उत्पन्न होता है। वल्मीक युक्त अथवा श्वभ्र भूमि जिसके गृह के समीप हो, उसके ऊपर विपत्ति आती है। गृह के समीप गर्त या गड्ढा रहने पर भी गृहपति प्यासा रहने वाला होता है। कूर्म के आकार की भूमि जिसके गृह समीप हो, तो उसका भी धननाश होता है॥८७-८८॥

चातुवर्ण्य भूमि लक्षण कथन

उदंगादिप्लवमिष्टं विप्रादीनां प्रदक्षिणेनैव।
विप्रः सर्वत्र वसेदनुवर्णमथेष्टमन्येषाम् ॥८९॥

भाषा—उत्तर दिशा की ओर से ढलान युक्त भूमि में ब्राह्मणों को, पूर्व की ओर ढलान युक्त भूमि में क्षत्रियों को, दक्षिण दिशा की ओर ढ़लान युक्त भूमि में वैश्यों को तथा पश्चिम दिशा की ओर ढलान युक्त भूमि में शूद्रों का अपना गृह बनाना शुभदायक होता है। ऐसे ब्राह्मणों को चारों दिशाओं के ढलान युक्त भूमि में घर बनाने चाहिए, परन्तु अन्य वर्णों को अपनी-अपनी दिशाओं के ढलान भूमि में ही गृह बनाना शुभदायक है॥८९॥

भूमि विधानवश शुभाशुभ कथन

गृहमध्ये हस्तमितं खात्वा परिपूरितं पुनः श्वभ्रम्।
यद्यूनमनिष्टं तत् समे समं धन्यमधिकं यत् ॥९०॥

भाषा—गृह के मध्य भाग में गृहपति द्वारा एक हाथ लम्बी व एक हाथ चौड़ी और एक हाथ गहरी खाई खोदकर उस खाई को उसी की मिट्टी से भरने पर यदि मिट्टी कम पड़ जाय, तो अशुभ; बराबर हो जाय, तो सम तथा मिट्टी खाई भरने के बाद भी बच जाय, तो शुभ जानना चाहिए॥९०॥

प्रकारान्तर से भूति विधान वश शुभाशुभ कथन

श्वभ्रमथवाऽम्बुपूर्णं पदशतमित्वा गतस्य यदि नोनम्।
तद्धन्यं यच्च भवेत् पलान्यपामाढकं चतु:षष्टि: ।।९१।।

माया—उपरोक्तानुसार एक हाथ लम्बी, चौड़ी और गहरी खाई खोदकर उसमें जल भरना चाहिए। उसके पश्चात् वहाँ से सौ पद चलकर जायँ, पुन: लौट आवें। इतने समय में खाई का जल पूर्ववत् बना रहे, तो शुभ जानना चाहिए। एक टोकरी में एक आढ़क प्रमाण की धूलि को भरें फिर उसे तौलना चाहिए, तब वह धूलि यदि चौंसठ पल प्रमाण हो, तो उस भूमि को शुभ जानना चाहिए।।९१।।

कच्चे मृत्पात्र के दीपकवश भूमि का शुभाशुभफल कथन

आमे वा मृत्पात्रे श्वभ्रस्थे दीपवर्तिरभ्यधिकम्।
ज्वलति दिशि यस्य शस्ता सा भूमिस्तस्य वर्णस्य ।।९२।।

माया—चार बर्त्तियों वाला दीपक कच्चे मिट्टी के बर्तन में जलाना चाहिए। उन बत्तियों में ब्राह्मण आदि चातुवर्णों की कल्पना कर उस बर्तन को खाई में डालें। इस प्रकार जिस-किसी दिशा की बत्ति देर तक जलती रहे, उस दिशा के वर्ण के लिए उस भूमि को शुभ जाननी चाहिए।।९२।।

पुष्पवश भूमि का शुभाशुभ कथन

श्वभ्रोषितं न कुसुमं यस्य प्रम्लायतेऽनुवर्णसमम्।
तत्तस्य भवति शुभदं यस्य च यस्मिन् मनो रमते ।।९३।।

माया—ब्राह्मण आदि चातुवर्ण वाचक वर्ण वाले श्वेत, लाल, पीत और कृष्ण पुष्पों को रात्रि के समय खाई में डाल देना चाहिए। प्रात: काल उन पुष्पों को खाई से निकाल कर देखना चाहिए कि किस वर्ण का पुष्प कुम्हलाया है? जिस वर्ण का पुष्प कुम्हलाया न हो, उस वर्ण से सम्बन्धित ब्राह्मणादि जन के लिए वह भूमि शुभ होती है।

अथवा निवास करने की इच्छा रखने वाले जन का मन जहाँ पर प्रसन्न रहे, वहीं पर उसे वास करना चाहिए। इसमें फिर विशेष विचार की आवश्यकता नहीं।।९३।।

ब्राह्मणादि वर्णों के अन्य भूमि लक्षण कथन

सितरक्तपीतकृष्णा विप्रादीनां प्रशस्यते भूमि:।
गन्धश्च भवति यस्यां घृतरुधिरान्नाद्यमद्यसम: ।।९४।।
कुशयुक्ता शरबहुला दूर्वाकाशावृता क्रमेण मही।
ह्यनुवर्णं वृद्धिकरी मधुरकषायाम्लकटुका च ।।९५।।

माया—ब्राह्मण आदि चतुवर्णों को क्रम से श्वेत, लाल, पीत और कृष्ण वर्ण

की भूमि शुभदा होती है। फिर ब्राह्मण आदि वर्णों को ही क्रम से घृतगन्धा, रक्तगन्धा, अन्नगन्धा और मद्यगन्धा भूमि शुभदा कही गई है। इसी तरह ब्राह्मणादि चतुवर्णों को क्रम से कुशों वाला, मुञ्जों वाला, दूबों वाला और कासों वाला भूमि शुभकारी होती है। एवं ब्राह्मणादि वर्णों को क्रम से मधुर, कषैली, खट्टी और कड़वी स्वाद युक्त भूमि, शुभदा कही गई है॥९४-९५॥

गृहारम्भ पूर्व का विधान कथन

कृष्टां प्ररूढबीजां गोऽध्युषितां ब्राह्मणैः प्रशस्तां च ।
गत्वा महीं गृहपतिः काले सांवत्सरोद्दिष्टे ॥९६॥
भक्ष्यैर्नानाकारैर्दध्यक्षतसुरभिकुसुमधूपैश्च ।
दैवतपूजां कृत्वा स्थपतीनभ्यर्च्य विप्रांश्च ॥९७॥
विप्रः स्पृष्ट्वा शीर्षं वक्षश्च क्षत्रियो विशश्चोरू ।
शूद्रः पादौ स्पृष्ट्वा कुर्याद्रिखां गृहारम्भे ॥९८॥

भाषा—गृहस्वामी को चाहिए कि वह ब्राह्मणों से प्रशंसा की गई भूमि को प्रथम हल से जोतकर उसमें बीज बोयें। उसके पश्चात् जब बीज पक जाय, तो एक रात के लिए उसमें गायों को बैठायें। तदनन्तर ज्यौतिष के अनुसार बताये गये मुहूर्त्त में उस स्थान पर जाकर विविध प्रकार के भक्ष्य वस्तु दधि, अक्षत, सुगन्ध, पुष्प, धूप आदि से क्षेत्रपति, स्थपति (राजमिस्त्री) तथा ब्राह्मणों की पूजार्चन करें, उसके बाद गृह स्वामी यदि ब्राह्मण हो, तो शिर; क्षत्रिय हो, तो छाती; वैश्य हो, तो ऊरु तथा शूद्र हो, तो पैर को स्पर्श कर गृहारम्भ करने की रेखा बनायें॥९६-९८॥

अङ्गुष्ठ आदि कृत रेखा फल कथन

अङ्गुष्ठेन कुर्यान्मध्याङ्गुल्याऽथवा प्रदेशिन्या ।
कनकमणिरजतमुक्तादधिफलकुसुमाक्षतैश्च शुभम् ॥९९॥
शस्त्रेण शस्त्रमृत्युर्बन्धो लोहेन भस्मनाग्निभयम् ।
तस्करभयं तृणेन च काष्ठोल्लिखिता च राजभयम् ॥१००॥
वक्रा पादालिखिता शत्रुभयक्लेशदा विरूपा च ।
चर्माङ्गारास्थिकृता दन्तेन च भर्तुरशिवाय ॥१०१॥
वैरमपसव्यलिखिता प्रदक्षिणं सम्पदो विनिर्देश्याः ।
वाचः परुषा निष्ठीवितं क्षुतं चाशुभं कथितम् ॥१०२॥

भाषा—गृहारम्भ की रेखा अङ्गुष्ठ, मध्यमा, प्रदेशिनी, स्वर्ण, चाँदी, मोती, दही, फल, फूल अथवा अक्षत से खींचने पर गृहस्वामी का शुभ होता है। वही रेखा शस्त्र से खींचने पर गृहस्वामी की मृत्यु शस्त्र से होती है। इसी प्रकार लोहा से खींचने पर

बन्धन; भस्म से रेखा बनाने पर अग्निभय; तृण से रेखा करने पर चोर भय और काष्ठ से रेखा बनाने पर राजा से भय रहता है।

वक्री पैर से बनायी हुई या आकृति हीन रेखा गृहस्वामी को शत्रुभय और कष्ट देने वाली होती है। चर्म, कोयला, हड्डी अथवा दाँत से बनायी गई रेखा गृहस्वामी के लिए अशुभ होती है। बाँये क्रम से बनायी गई रेखा शत्रुता और दायें क्रम से बनायी गई रेखा सम्पत्ति देने वाली होती है। गृहारम्भ के समय क्रूर वाणी का प्रयोग, थूकना या छींकना आदि अशुभकारी है॥९९-१०२॥

शल्यज्ञान विवेचन पूर्वक उसका विधान कथन

अर्द्धनिचितं कृतं वा प्रविशन् स्थपतिर्गृहे निमित्तानि।
अवलोकयेद् गृहपति: क्व संस्थित: स्पृशति किं चाङ्गम्॥१०३॥
रविदीप्तो यदि शकुनिस्तस्मिन् काले विरौति परुषरवम्।
संस्पृष्टाङ्गसमानं तस्मिन् देशेऽस्थि निर्देश्यम्॥१०४॥

माया—अर्द्धनिर्मित या पूर्ण निर्मित गृह में प्रवेश करते समय स्थपति (राजमिस्त्री) अग्रोक्त चिह्नों या लक्षणों पर अपना ध्यान केन्द्रित करें कि उस समय गृहस्वामी कहाँ हैं और अपने किस अङ्ग को स्पर्श कर रहा है।उसी समय दीप्त दिशा में स्थित पक्षी समूह कठोर ध्वनि कर रहे हों, तो गृहस्वामी जहाँ स्थित हो, उस स्थान के नीचे और गृहस्वामी के स्पर्शित अङ्ग के समान अङ्ग की शल्य (हड्डी) जाननी चाहिए।

यहाँ प्रसङ्गवश दीप्त आदि दिशाओं के लक्षण इस प्रकार जाननी चाहिए। जैसे उदय के समय सू सूर्य एक-एक प्रहर क्रम से पूर्व आदि आठ दिशाओं में रहता है। अर्थात् उदय काल से एक प्रहर तक सूर्य पूर्व दिशा में, द्वितीय प्रहर तक अग्नि कोण में, तृतीय प्रहर तक दक्षिण दिशा में चतुर्थ प्रहर सूर्यस्तकाल तक नैऋत्य कोण में रहता है। इसी प्रकार सूर्य प्रथम प्रहर रात्रि तक पश्चिम दिशा में, द्वितीय प्रहर रात्रि तक वायव्य कोण में, तृतीय प्रहर रात्रि पर्यन्त उत्तर दिशा में और चतुर्थ प्रहर, सूर्योदय काल पूर्व तक ईशान कोण में रहता है। फिर जिस दिशा को सूर्य त्याग दिया हो; उस दिशा को अङ्गारिणी, जिस दिशा में सूर्य स्थित हो, उसे दीप्त; जिस दिशा में जाने वाला हो, उसे धूमित तथा शेष सभी दिशाओं को शांत कहा जाता है। अर्थात् उदय से एक प्रहर तक ईशान कोण अङ्गारिणी, उस समय पूर्व दिशा दीप्त, अग्निकोण धूमित और शेष सभी पाँच दिशायें शान्त नाम की होती है॥१०३-१०४॥

शकुनकाल में हाथी आदि के स्वरवश हड्डी ज्ञान कथन

शकुनसमयेऽथवाऽन्ये हस्त्यश्वश्वादयोऽनुवाशन्ते।
तत्प्रभवमस्थि तस्मिंस्तदङ्गसम्भूतमेवेति॥१०५॥

भाषा—उपरोक्त शकुन जानने के समय यदि दीप्त दिशा की ओर मुख वाले हाथी, घोड़ा, कुत्ता आदि पशु ध्वनि करें, तो उस समय गृहपति जहाँ स्थित हो, उसके नीचे उसी ध्वनि करने वाले पशु के उसी अङ्ग की हड्डी कहनी चाहिए, अपने जिस अङ्ग का गृहस्वामी स्पर्श किया हुआ हो॥१०५॥

गधा आदि से शल्य ज्ञानार्थ कथन

सूत्रे प्रसार्यमाणे गर्दभरावोऽस्थिशल्यमाचष्टे।
श्वशृगाललङ्घिते वा सूत्रे शल्यं विनिर्देश्यम् ॥१०६॥

भाषा—उपरोक्त प्रकार शकुन ज्ञान के क्रम में सूत्र को विस्तारित करते समय गदहा की ध्वनि सूनाई दे, तो गृहस्वामी के स्थित स्थान के नीचे शल्य जाननी चाहिए। एवं कुत्ता अथवा शृङ्गाल द्वारा उस विस्तारित सूत्र को लांघ दियां जाय, तो भी पूर्वोक्त स्थान में शल्य समझना चाहिए॥१०६॥

शकुन के समय धन ज्ञानार्थ कथन

दिशि शान्तायां शकुनिर्मधुरविरावी यदा तदा वाच्यः।
अर्थस्तस्मिन् स्थाने गृहेश्वराधिष्ठितेऽङ्गे वा ॥१०७॥

भाषा—उपरोक्त प्रकार शकुन ज्ञान के क्रम में जहाँ से शान्त दिशा की ओर मुख करके पक्षी समूह मधुर ध्वनि करते हों अथवा वास्तु (गृह) पुरुष के जिस-किसी अङ्ग पर स्थित हों, उस अङ्ग विशेष के नीचे स्थान में धन है, ऐसा कथन करना चाहिए॥१०७॥

अन्यान्य शुभाशुभ ज्ञानार्थ कथन

सूत्रच्छेदे मृत्युः कीले चावाङ्मुखे महान् रोगः।
गृहनाथस्थपतीनां स्मृतिलोपे मृत्युरादेश्यः ॥१०८॥
स्कन्धाच्च्युते शिरोरुक् कुलोपसर्गोऽपवर्जिते कुम्भे।
भग्नेऽपि च कर्मिवधश्च्युते करात् गृहपतेर्मृत्युः ॥१०९॥

भाषा—उपरोक्त शकुन ज्ञान के समय सूत्र विस्तारित करते खण्डित हो जाय, तो गृहस्वामी की मृत्यु जाननी चाहिए। कील गाड़ते समय, उसका मुख नीचे की ओर झुक जाय, तो गृहस्वामी को कठिन रोग होता है। शकुन के समय गृहस्वामी के साथ स्थपति (राजमिस्त्री) की स्मरण शक्ति क्षीण हो जाय, तो उन दोनों की मृत्यु जाननी चाहिए। लाते हुए जल से भरा कलश गिर जाय, तो गृहस्वामी को शिर का रोग; गिर कर उलट जाय, तो उसके कुल में उत्पात; कलश फूट जाय, तो राजमिस्त्री की मृत्यु और कलश हाथ से फूट जाय तो गृह स्वामी की मृत्यु होती है॥१०८-१०९॥

शिलान्यास प्रदर्शनार्थ कथन

दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत् प्रथमम् ।
शेषा: प्रदक्षिणेन स्तम्भाश्चैवं समुत्थाप्या: ।।११०।।
छत्रस्त्रगम्बरयुत: कृतधूपविलेपन: समुत्थाप्य: ।
स्तम्भस्तथैव कार्यो द्वारोच्छ्राय: प्रयत्नेन ।।१११।।

माया—सर्वप्रथम ईशान कोण अर्थात् उत्तर-पूर्व के कोण मतान्तर से अग्निकोण अर्थात् पूर्व-दक्षिण कोण में पूजापूर्वक शिलान्यास करना चाहिए, तत्पश्चात् प्रदक्षिण क्रम से अन्य शेष दिशाओं में भी शिलाओं का स्थापन करना चाहिए। इसी प्रकार स्तम्भ बनाने का कार्य भी ईशान कोण अथवा मतान्तर से अग्निकोण से करना चाहिए। एवं छत्र, माला, वस्त्र, धूप और चन्दन से युक्त होकर स्तम्भ को खड़ा करना चाहिए। इसी प्रकार द्वार को भी प्रयाश पूर्वक खड़ा करें॥११०-१११॥

स्तम्भ आदि पर पक्षी आदि स्थिति फल कथन

विहगादिभिरवलीनैराकम्पितपतितदु:स्थितैश्च तथा ।
शक्रध्वजसदृशफलं तदेव तस्मिन् विनिर्दिष्टम् ।।११२।।

माया—स्तम्भ अथवा द्वार के ऊपर पक्षी आदि प्राणि स्थित हो अथवा खड़ा करने के समय वे कम्पित हो अथवा गिरे या सही-सही खड़ा न हो, तो पूर्वाध्यायोक्त इन्द्रध्वज की तरह उसका फल कथन करना चाहिए॥११२॥

वास्तु भूमि विषयक विशेष कथन

प्रागुत्तरोन्नते धनसुतक्षय: सुतवधश्च दुर्गन्धे ।
वक्रे बन्धुविनाशो न सन्ति गर्भाश्च दिङ्मूढे ।।११३।।
इच्छेद्यदि गृहवृद्धिं तत: समन्ताद्विवर्धयेत्तुल्यम् ।
एकोद्देशे दोष: प्रागथवाऽप्युत्तरे कुर्यात् ।।११४।।

माया—वास्तु भूमि यदि पूर्व अथवा उत्तर दिशा में उन्नत अर्थात् उठी हुई हो, तो पुत्र और धन की हानि होती है। वास्तु भूमि दुर्गन्ध युक्त हो, तो पुत्र की हानि, वह ढेढ़ी हो, तो बन्धुओं की हानि, दिग्भ्रमित अर्थात् दिशा ज्ञान रहित भूमि होने पर स्त्रियाँ गर्भ के अभाव से ग्रस्त होती हैं।

अपने गृह की उन्नति की आकांक्षा रखने वाले व्यक्ति को चाहिए कि वह वास्तु भूमि को सभी दिशाओं में समान रूप से विस्तारित करें। जब वास्तुभूमि को विस्तारित करना हो, तो उत्तर अथवा पूर्व की ओर विस्तारित करे, क्योंकि उस दिशा में विस्तारित करने का अल्प दोष अर्थात् मित्रों से द्वेष, चित्त में सन्ताप आदि होता है,

जो सहनीय है। जिन्हें इन दोषों को भी सहन करने योग्य शक्ति का अभाव हो, उन्हें वास्तु भूमि को विस्तारित नहीं करना चाहिए॥११३-११४॥

वास्तु भूमि विस्तारित करने का फल कथन

प्राग्भवति मित्रवैरं मृत्युभयं दक्षिणेन यदि वृद्धिः ।
अर्थविनाशः पश्चादुदग्विवृद्धिर्मनस्तापः ॥११५॥

माया—वास्तु भूमि को पूर्व अथवा उत्तर की ओर विस्तारित करने से मित्रों से द्वेष, दक्षिण ओर विस्तारित करने से मृत्यु का भय, पश्चिम की ओर विस्तारित करने से धन की हानि और उत्तर की ओर विस्तारित करने पर मन में सन्ताप होता है॥११५॥

चतुःशाल गृह में देव आदि गृह का निर्णय कथन

ऐशान्यां देवगृहं महानसं चापि कार्यमाग्नेय्याम् ।
नैर्ऋत्यां भाण्डोपस्करोऽर्थधान्यानि मारुत्याम् ॥११६॥

माया—ईशान कोण में देवता का, आग्नेय कोण में पाकशाला का, नैर्ऋत्य कोण में गृहसागग्री रखने का और वायव्य कोण में धन-धान्य रखने का गृह बनाने चाहिए॥११६॥

वास्तु (गृह) स्थान से पूर्व आदि में जल फल कथन

प्राच्यादिस्थे सलिले सुतहानिः शिखिभयं रिपुभयं च ।
स्त्रीकलहः स्त्रीदौष्ट्यं नैःस्व्यं वित्तात्मजविवृद्धिः ॥११७॥

माया—वास्तु स्थान से पूर्व आदि दिशाओं में जल के स्थित होने पर क्रम से पुत्रनाश, अग्निभय, शत्रुभय, स्त्रियों में कलह, स्त्रियों में दुःशीलता, निर्धनता, धन की वृद्धि तथा पुत्रों की वृद्धि होती है अर्थात् पूर्व दिशा में जल स्थित होने से पुत्र का नाश; अग्नि कोण में अग्निभय; दक्षिण दिशा में शत्रुभय, नैर्ऋत्य कोण में स्त्रियों में कलह; पश्चिम दिशा में स्त्रियों में दुःशीलता, वायव्य कोण में निर्धनता, उत्तर दिशा में धन की वृद्धि तथा ईशान कोण में पुत्रों की वृद्धि होती है॥११७॥

गृह निर्माणार्थ काटने योग्य वृक्ष कथन

खगनिलयभग्नसंशुष्कदग्धदेवालयश्मशानस्थान् ।
क्षीरतरुधवविभीतकनिम्बारणिवर्जितान् छिन्द्यात् ॥११८॥

माया—पक्षियों का घोंसला युक्त, टूटा हुआ, देवालय के पास स्थित, श्मशानस्थ, दूधयुक्त, वच, बहेड़ा, नीम, अरलू आदि वृक्षों को छोड़कर अन्य सभी वृक्षों को गृह निर्माणार्थ काटना चाहिए॥११८॥

वृक्ष काटने की विधि और उसके गिरने का शुभाशुभ फल कथन

रात्रौ कृतबलिपूजं प्रदक्षिणं छेदयेद् दिवा वृक्षम्।
धन्यमुदक्प्राक्पतनं न ग्राह्योऽतोऽन्यथा पतित: ।।११९।।

माया—जो वृक्ष काटने योग्य हो, उसके लिए रात्रि के समय पूजा के साथ बलि देकर सुबह ईशान कोण आदि मे प्रदक्षिण क्रम से उसे काटना चाहिए। वह वृक्ष कटकर उत्तर अथवा पूर्व दिशा में गिरा हो, तो शुभ होता है, लेकिन अन्य दिशाओं में गिरने पर अशुभ फल होता है।।११९।।

शुभाशुभ और वृक्षशल्य ज्ञानार्थ कथन

छेदो यद्यविकारी तत: शुभं दारु तद्गृहौपयिकम्।
पीते तु मण्डले निर्दिशेत् तरोर्मध्यगां गोधाम्।।१२०।।
मञ्जिष्ठाभे भेको नीले सर्पस्तथाऽरुणे सरट:।
मुद्गाभेऽश्मा कपिले तु मूषकोऽम्मश्च खड्गाभे।।१२१।।

माया—कटे हुए वृक्ष का कटा प्रदेश विकारहीन होने पर उसकी लकड़ी गृहकार्य हेतु शुभ होती है। वृक्ष के कटे प्रदेश में पीले वर्ण का मण्डल दीखता हो, तो वृक्ष के मध्य भाग में गोधा याने सनगोहि, मञ्जीठ के समान लाल रंग का मण्डल दीखने पर उसमें मेढ़क, नील वर्ण का मण्डल दीखने पर सर्प; लाल वर्ण का मण्डल दीखने पर गिरगिट; मूँग के समान वर्ण का मण्डल दीखने पर पत्थर, पीत मण्डल दीखने पर चूहा तथा खड्ग के समान मण्डल दीखने से जल का स्थल जानना चाहिए।।१२०-१२१।।

गृहस्वामी के लिए उपदेशार्थ कथन

धान्यगोगुरुहुताशसुराणां न स्वपेदुपरि नाप्यनुवंशम्।
नोत्तरापरशिरा न च नग्नो नैव चार्द्रचरण: श्रियमिच्छन्।।१२२।।

माया—श्री की इच्छा रखने वाले मनुष्य को अन्न, गौ, गुरु, अग्नि, तथा देवता के ऊपर तथा वंशों के ऊपर भी नहीं सोना चाहिए। उत्तर या पश्चिम की ओर शिर कर भी नहीं सोना चाहिए। एवं नंगा और जल से भींगे पैर रखकर भी नहीं सोना चाहिए।।१२२।।

गृहप्रवेश काल के गृह लक्षण कथन

भूरिपुष्पविकरं सतोरणं तोयपूर्णकलशोपशोभितम्।
धूपगन्धबलिपूजितामरं ब्राह्मणध्वनियुतं विशेद् गृहम्।।१२३।।

माया—अधिकतर पुष्पों से सुशोभित, तोरण से अलंकृत, जल से भरे कलशों

से युक्त, धूप, गन्ध, पुष्प आदि से पूजित देवताओं से सम्पन्न तथा ब्राह्मणों से की गई वेद ध्वनियों से सुसम्पन्न गृह में प्रवेश करना चाहिए।

यहाँ ध्यानार्ह है कि 'धूप गन्ध बलिपूजितामरं' यह वाक्य साधारण देवों के लिए ही कहा गया है। अतः साधारणतः इन देवताओं की पूजा अतिरिक्त स्थान में ही करनी चाहिए। वास्तु मध्य में शिखी, पर्यन्य आदि तथा अर्यमा की ही पूजा करनी उचित है। अतः इन स्थानों पर बाह्य देवों की पूजा नहीं ही करनी चाहिए।।१२३।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां वास्तुविद्याविचारो नाम त्रिपञ्चाशत्तमः ।।५३।।

□□□

अथ चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५४

दकार्गलनिरूपणम्

जल का स्वरूपादि कथन

धर्म्यं यशस्यं च वदाम्यतोऽहं दकार्गलं येन जलोपलब्धिः ।
पुंसां यथाङ्गेषु शिरास्तथैव क्षितावपि प्रोन्नतनिम्नसंस्थाः ॥१॥
एकेन वर्णेन रसेन चाम्भश्च्युतं नभस्तो वसुधाविशेषात् ।
नानारसत्वं बहुवर्णतां च गतं परीक्ष्यं क्षितितुल्यमेव ॥२॥

भाषा—वास्तुविद्या सम्बन्धी विचारों को व्यक्त करने के पश्चात् मैं वराहमिहिर, पुरातन महर्षियों व मनीषियों के भूगर्भ सम्बन्धि विशिष्ट ज्ञान का साङ्गोपाङ्ग परीक्षण कर प्रायोगिक अनुभव की समपुष्टि पूर्वक जिसके ज्ञान से भूगर्भगत जल का ज्ञान होता है; उस धर्म रूप, कल्याणकारी, यश देने वाला एवं पृथ्वी में से उपयुक्त जल प्राप्त कराने वाले शास्त्र को कहता हूँ। जिस तरह मनुष्यों के हाथ-पैर आदि अवयवों में रक्तवाहिनी नाड़ियाँ हैं, उसी तरह पृथ्वी में भी ऊँची-नीची गुह्य स्थानों में जल वहन करने हेतु शिरायें (नाड़ियाँ) स्थित हैं।

आकाश से एक रंग और एक रस-स्वाद वाला जल पृथ्वी पर गिरने के बाद पृथ्वी की मिट्टी आदि की विशेषता से तथा जमीन में भेद होने से विभिन्न रस-स्वाद आदि एवं विभिन्न रंग वाला होता है। इस प्रकार पृथ्वी के वर्ण व रस के सदृश जल के रस (स्वाद) व वर्ण सिद्ध होते हैं। अतएव मिट्टी और उसके वर्ण व रस का परीक्षण करते हुए जल के रस स्वाद, वर्ण, गन्ध आदि का भी परीक्षण करना चाहिए ॥१-२॥

पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी कथन

पुरुहूतानलयमनिर्ऋतिवरुणपवनेन्दुशङ्करा देवाः ।
विज्ञातव्याः क्रमशः प्राच्याद्यानां दिशां पतयः ॥३॥

भूगर्भस्थ शिराओं का ज्ञान कथन

दिक्पतिसंज्ञा च शिरा नवमी मध्ये महाशिरानाम्नी ।
एताभ्योऽन्याः शतशो विनिःसृता नामभिः प्रथिताः ॥४॥

शुभाशुभशिराओं का कथन

पातालादूर्ध्वशिरा शुभा चतुर्दिक्षु संस्थिता याश्च ।
कोणदिगुत्था न शुभाः शिरानिमित्तान्यतो वक्ष्ये ॥५॥

भाषा—इन्द्र, अग्नि, यम, निऋति (राक्षस), वरुण, वायु, चन्द्र एवं शंकर ये आठ देवता पूर्व, अग्निकोण, दक्षिण, नैऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर एवं ईशान क्रमश: इन आठ दिशाओं के अधिपति हैं, ऐसा समझना चाहिये।

इन इन्द्रादि देवताओं के नाम से आठ दिशाओं में आठ मुख्य शिरायें, (मुख्य जलधारा प्रवाह) हैं, जो सर्वविदित हैं तथा उनमें महाशिरा नामक एक नौवीं शिरा भी है। उसमें जल का अथाह प्रवाह विद्यमान रहता है। इसके अतिरिक्त सैकड़ों अनेक उपमुख्य शिरायें (प्रवाह) हैं, जो अपने-अपने नाम से प्रसिद्ध और यत्र-तत्र प्रवाहित होती हैं। एवम् इनके बाद में स्थानानुसार विभिन्न नाम हुए हैं।

जमीन में पाताल से उर्ध्व गतिशील शिरा (प्रवाह) और पूर्व आदि चार दिशाओं में स्थित शिरायें (प्रवाह) शुभ तथा अग्नि कोण आदि विदिशाओं में स्थित शिरायें अशुभ हैं। एतदनन्तर शिराओं के निमित्तों (लक्षणों) को कहा जा रहा है ॥३-५॥

वेदमजनूँ के पेड़ से शिरा परिज्ञान कथन

यदि वेतसोऽम्बुरहिते देशे हस्तैस्त्रिभिस्ततः पश्चात्।
सार्धे पुरुषे तोयं वहति शिरा पश्चिमा तत्र ॥६॥

शिराओं की स्थिति का लक्षण कथन

चिह्नमपि चार्धपुरुषे मण्डूकः पाण्डुरोऽथ मृत् पीता।
पुटभेदकश्च तस्मिन् पाषाणो भवति तोयमधः ॥७॥

भाषा—यदि जल रहित देश के भूमि में वेंत या वेदमजनूँ या कटीले वृक्ष हों, तो ऐसे वृक्षों से तीन हाथ दूरी पर पश्चिम दिशा में डेढ़ मनुष्य नीचे गहराई में जल की प्राप्ति समझनी चाहिए। वहाँ पश्चिमी शिरा (जल धारा) प्रवाहित होती है। एक मनुष्य की परिभाषा, परम्परा में इस प्रकार बतायी जाती है—पैर से लेकर दोनों भुजा मनुष्य के उठाने पर जितनी लम्बाई होती है, उसे एक मनुष्य कही जाती है।

उक्त स्थानों पर खुदाई करने के समय कुछ चिह्न भी स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। इस सम्बन्ध में आचार्य का कहना है कि अर्द्ध पुरुष की खुदाई के बाद मेढ़क, जो पाण्डुवर्ण का होता है, दिखाई पड़ता है। तदनन्तर खुदाई करते हुए पीली मिट्टी, उसके बाद के स्तर में पत्थर और उस पत्थर के नीचे बहुत सारा जल उपलब्ध होता है ॥६-७॥

जामुन पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन

जम्ब्वाश्चोदग्घस्तैस्त्रिभिः शिराधो नरद्वये पूर्वा।
मृल्लोहगन्धिका पाण्डुरा च पुरुषेऽत्र मण्डूकः ॥८॥

भाषा—यदि जल विहीन प्रदेश में जंबु (जामुन) का बड़ा पेड़ हो, तो उस पेड़

की उत्तर दिशा में उससे (जामुन) तीन हाथ दूर खोदने पर दो मनुष्य नीचे पूर्व दिशा की शिरा (पानी का प्रवाह) मिलेगा। खुदाई के समय यहाँ भी कुछ चिह्न मिलते हैं–एक मनुष्य खुदाई पर लौह गन्ध वाली मिट्टी, तदनन्तर पीली-सफेद मिट्टी और उसके नीचे मेढ़क दिखलाई पड़ता है ॥८॥

जामुन पेड़ से पूर्व बॉबी होने से जलशिरा परिज्ञान कथन

जम्बूवृक्षस्य प्राग्वल्मीको यदि भवेत् समीपस्थः।
तस्माद्दक्षिणपार्श्वे सलिलं पुरुषद्वये स्वादु ॥९॥
अर्धपुरुषे च मत्स्यः पारावतसन्निभश्च पाषाणः।
मृद्भवति चात्र नीला दीर्घं कालं च बहु तोयम् ॥१०॥

माया—जंबू वृक्ष (जामुन) के पूर्व दिशा में यदि समीप में वल्मीकी (बाँबी, चीटियों का टीला) हो, तो उसके दक्षिण में तीन हाथ दूरी पर खोदने से दो मनुष्य-दस हाथ नीचे मीठा पानी (जल) निकलेगा। उसका चिह्न है, अढ़ाई हाथ (आधा मनुष्य) नीचे खोदने से मछली निकलेगी एवं उसके नीचे स्तर में पारावत (कबूतर) रंग का पत्थर निकलेगा। उसके नीचे बादलों के स्वाभाविक रंग की नील मिट्टी निकलेगी। उसके पश्चात् दीर्घकाल तक रहने वाला पर्याप्त जल मिलता है ॥९-१०॥

गूलर के पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन

पश्चादुदुम्बरस्य त्रिभिरेव करैर्नरद्वये सार्धे।
पुरुषे सितोऽहिरश्माञ्जनोपमोऽधः शिरा सुजला ॥११॥

माया—जिस जल विहीन जमीन के ऊपर उदुम्बर (गूलर) का पेड़ हो, उसके पश्चिम में तीन हाथ दूरी पर साढ़े बारह हाथ (अढ़ाई पोरसा, ढ़ाई मनुष्य) खोदने पर उत्तम पानी का प्रवाह (जल शिरा) प्राप्त होगा। उसका चिह्न है कि पाँच हाथ (एक पोरसा) नीचे श्वेत सर्प दिखाई देगा। उसके नीचे काले रंग का पत्थर मिलेगा। उस पत्थर को तोड़ने पर मीठे पानी का प्रवाह (जल शिरा) मिलेगा ॥११॥

अर्जुन पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

उदगर्जुनस्य दृश्यो वल्मीको यदि ततोऽर्जुनाद्धस्तैः।
त्रिभिरम्बु भवति पुरुषैस्त्रिभिरर्धसमन्वितैः पश्चात् ॥१२॥
श्वेता गोधार्धनरे पुरुषे मृद्धूसरा ततः कृष्णा।
पीता सिता ससिकता ततो जलं निर्दिशेदमितम् ॥१३॥

माया—जिस जमीन के ऊपर अर्जुन वृक्ष हो तथा उसके उत्तर दिशा में चींटी का टीला (बाँबी, वल्मीक) हो, तो अर्जुन वृक्ष के पश्चिम दिशा में तीन हाथ दूर साढ़े सत्तरह हाथ (साढ़े तीन पोरसा, साढ़े तीन मनुष्य) नीचे पानी का प्रवाह होगा।

खोदने के समय उसका चिह्न है कि आधा हाथ नीचे श्वेत गोधा (गोह) मिलेगा। उसके एक मनुष्य नीचे सफेद-काली मिट्टी फिर काली-भूरी मिश्रित मिट्टी उसके नीचे काली मिट्टी, उसके बाद पीली मिट्टी और फिर बालू वाली मिट्टी तत्पश्चात् अथाह जल राशि मिलेगी ॥१२-१३॥

निर्गुण्ड (सिन्दुवार) पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

वल्मीकोपचितायां निर्गुण्ड्यां दक्षिणेन कथितकरैः।
पुरुषद्वये सपादे स्वादु जलं भवति चाशोष्यम् ॥१४॥
रोहितमत्स्योऽर्धनरे मृत् कपिला पाण्डुरा ततः परतः।
सिकता सशर्कराऽथ क्रमेण परतो भवत्यम्भः ॥१५॥

माया—जिस जमीन के ऊपर वल्मीकी हो उसके ऊपर निर्गुण्डी, नगोड़ (सिन्दुवार वृक्ष, सिन्दुवारेन्द्रसुरसौ निर्गुण्डीन्द्राणिकेति-अमरकोष) का वृक्ष हो उसके दक्षिण दिशा में तीन हाथ दूर सवा ग्यारह हाथ गहरी जमीन में नीचे मीठा पानी निकलेगा, यह कभी न सूखने वाला स्रोत है। खोदाई के समय का उसका चिह्न है कि अढ़ाई हाथ नीचे रोहित (रोहू) जाति की जमीन पर रहने वाली मछली मिलेगी। उसके नीचे काली-पीली मिट्टी मिलेगी। तत्पश्चात् रेत-बालू युक्त मिट्टी निकलेगी। उसके नीचे जल निकलेगा ॥१४-१५॥

बेर के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

पूर्वेण यदि बदर्या वल्मीको दृश्यते जलं पश्चात्।
पुरुषैस्त्रिभिरादेश्यं श्वेता गृहगोधिकार्द्धनरे ॥१६॥

माया—जिस जमीन के ऊपर वदरी (वेर) का पेड़ हो तथा उस पेड़ के उगने की दिशा (पूर्व दिशा) में यदि चींटियों की बाँबी हो, तो इसके पश्चिम में तीन हाथ दूर पन्द्रह हाथ (तीन मनुष्य) नीचे जमीन में खोदने पर जल निकलेगा। अढ़ाई हाथ खोदने पर गृहगोधा (ढ़ेला छिपकली) निकलेगी ॥१६॥

ढाक व वेर के पेड़ों के संयोग से जलशिरा का ज्ञान कथन

सपलाशा बदरी चेद् दिश्यपरस्यां ततो जलं भवति।
पुरुषत्रये सपादे पुरुषेऽत्र च दुण्डुभश्चिह्नम् ॥१७॥

माया—जल शून्य प्रदेश में जहाँ पलाश (ढाक) के सहित या युक्त बदरी (वेर) के वृक्ष हो, उनके पीछे चींटी का बांबी हो या न हो, फिर भी उस पेड़ के पश्चिम दिशा में तीन हाथ छोड़कर सवा सोलह हाथ नीचे पानी निकलेगा। पाँच हाथ नीचे दुंडुभ नामक विना विष वाला सर्प दिखाई देगा ॥१७॥

वेल और गूलर पेड़ के संयोग से जलशिरा परिज्ञान कथन

बिल्वोदुम्बरयोगे विहाय हस्तत्रयं तु याम्येन।
पुरुषस्त्रिभिरम्बु भवेत् कृष्णोऽर्द्धनरे च मण्डूकः ॥१८॥

माया—जिस जमीन के ऊपर वेल और गुलर दोनों पास-पास हों या युक्त हों, तो उसके दक्षिण दिशा की तरफ तीन हाथ छोड़कर पन्द्रह हाथ नीचे (गहराई में) पानी निकलेगा और अढ़ाई हाथ नीचे (गहराई में) काले रंग का मंडूक (मेढ़क) दिखेगा ॥१८॥

फल्गु के वृक्ष से जलशिरा परिज्ञान कथन

काकोदुम्बरिकायां वल्मीको दृश्यते शिरा तस्मिन्।
पुरुषत्रये सपादे पश्चिमदिक्स्था वहति सा च ॥१९॥
आपाण्डुपीतिका मृद्गोरसवर्णश्च भवति पाषाणः।
पुरुषार्धे कुमुदनिभो दृष्टिपथं मूषको याति ॥२०॥

माया—जिस जमीन के ऊपर काकोदुम्बरिका (अमर कोष में 'काकोदुम्बरिका फल्गुर्मल पूर्जघने फलेति', कठुंबरी) का पेड़ उगी हो और उसके पास चींटी की बॉंबी हो, उसके नीचे पश्चिम दिशा में बहने वाला सवा सोलह हाथ नीचे जल का प्रवाह (जल शिरा) होता है। इसको जानने का चिह्न है, पहले सफेद-पीली मिट्टी निकलेगी उसके नीचे सफेद रंग का पत्थर आयेगा। इसके नीचे अढ़ाई हाथ खोदने पर सफेद रंग का चूहा दिखेगा ॥१९-२०॥

कपिल के पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन

जलपरिहीने देशे वृक्षः कम्पिल्लको यदा दृश्यः।
प्राच्यां हस्तत्रितये वहति शिरा दक्षिणा प्रथमम् ॥२१॥
मृन्नीलोत्पलवर्णा कापोता दृश्यते ततस्तस्मिन्।
हस्तेऽजगन्धको मत्स्यकः पयोऽल्पं च सक्षारम् ॥२२॥

माया—जल शून्य प्रदेश में जमीन के ऊपर कम्पिल्लक (कपिल कवीला) वृक्ष (जिसकी छाल से लाल रंग उत्पन्न होता है, दूसरा नाम लोहितांग आदि है।) हो, तो पूर्व दिशा में तीन हाथ छोड़कर दक्षिण दिशा की जल शिरा के (पानी का प्रवाह) होती है। उसकी साढ़े सोलह हाथ जमीन खोदने पर पानी निकलेगा। उसका लक्षण है पहले काले बादल की तरह काली मिट्टी निकलेगी फिर चितकबरी नीले रंग की मिट्टी निकलेगी एवं तत्पश्चात् बकरे जैसी गंध वाली मछलियाँ निकलेगी इसके बाद खारा पानी होगा ॥२१-२२॥

शोणाक पेड़ के कुमुदा नाम की जलशिरा का ज्ञान कथन

शोणाकतरोरपरोत्तरे शिरा द्वौ करावतिक्रम्य ।
कुमुदा नाम शिरा सा पुरुषत्रयवाहिनी भवति ॥२३॥

भाषा—जिस जल विहीन जमीन के ऊपर अरडसा, शोणाक, श्वोनाक (सरिवन) वृक्ष हों, तो उस पेड़ के वायव्य कोण की दिशा में दो हाथ छोड़कर पानी का प्रवाह होगा। इस पृथ्वी के शिरा (प्रवाह) का नाम कुमुदा है। उस जमीन में पन्द्रह हाथ खोदने पर प्रवाह बहता है ॥२३॥

बहेड़ा पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

आसन्नो वल्मीको दक्षिणपार्श्वे विभीतकस्य यदि ।
अध्यर्धे भवति शिरा पुरुषे ज्ञेया दिशि प्राच्याम् ॥२४॥

भाषा—जिस जमीन के ऊपर विभीतक (बहेड़ा) वृक्ष हो उसके दक्षिण दिशा में बांवी हो, तो इसके दो हाथ पर पूर्व दिशा में साढ़े सात हाथ नीचे पानी का प्रवाह होगा ॥२४॥

पुनः बहेड़े के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

तस्यैव पश्चिमायां दिशि वल्मीको यदा भवेद्धस्ते ।
तत्रोदग् भवति शिरा चतुर्भिरर्धाधिकैः पुरुषैः ॥२५॥
श्वेतो विश्वम्भरकः प्रथमे पुरुषे तु कुङ्कुमाभोऽश्मा ।
अपरस्यां दिशि च शिरा नश्यति वर्षत्रयेऽतीते ॥२६॥

भाषा—वहेड़े के पेड़ से पश्चिम दिशा में एक हाथ छोड़कर बॉवी हो, तो उस पेड़ की उत्तर दिशा में एक हाथ छोड़कर बाइस हाथ नीचे जल शिरा या पानी का प्रवाह होता है। उसका लक्षण है कि पाँच हाथ नीचे विश्वम्भरक नामक सर्प या विशेष प्राणि दिखते हैं। फिर लाल दिखने वाले पत्थर दिखाई देते हैं। उसके नीचे पश्चिम की ओर बहते पानी का प्रवाह मिलेगा। यह प्रवाह तीन वर्ष बाद बंद हो जायेगा ॥२५-२६॥

कोविदार (सप्तवर्ण) के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

सकुशः सित ऐशान्यां वल्मीको यत्र कोविदारस्य ।
मध्ये तयोर्नरैरर्धपञ्चमैस्तोयमक्षोभ्यम् ॥२७॥
प्रथमे पुरुषे भुजगः कमलोदरसन्निभो मही रक्ता ।
कुरुविन्दः पाषाणश्चिह्नान्येतानि वाच्यानि ॥२८॥

भाषा—जिस जमीन के ऊपर कोविदार (कचनार, छितिवन या सप्तवर्ण) के

वृक्ष के ईशान कोण में कुशा युक्त वल्मीक सफेद अथवा काला हो, तो कचनार एवं वल्मीक के मध्य में बाईस हाथ नीचे अथाह एवं भारी वेग वाला जल होता है। उसके लक्षण हैं कि पाँच हाथ खोदने पर कमल पुष्प जैसा सर्प निकलेगा। उसके नीचे लाल मिट्टी होगी एवं उसके नीचे कुरुविंद नामक लाल पत्थर आवेगा। उसके नीचे पानी निकलेगा ॥२७-२८॥

बॉवी युक्त सप्तपर्ण पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन

यदि भवति सप्तपर्णो वल्मीकवृतस्तदुत्तरे तोयम्।
वाच्यं पुरुषैः पञ्चभिरत्रापि भवन्ति चिह्नानि ॥२९॥
पुरुषार्धे मण्डूको हरितो हरितालसन्निभा भूश्च।
पाषाणोऽभ्रनिकाशः सौम्या च शिरा शुभाम्बुवहा ॥३०॥

माया—जिस जल रहित भूमि पर वल्मीक से घिरे सप्तपर्ण (छितिवन, कोविदारक) के वृक्ष हो, तो उसके उत्तर दिशा में एक हाथ छोड़कर पच्चीस हाथ नीचे पानी है ऐसा समझना चाहिये। उसके चिह्न हैं—अढ़ाई हाथ नीचे हरे रंग का मंडूक निकलेगा। उसके बाद हरताल रंग की जैसी पीली मिट्टी उसके बाद अभ्रक जैसा काला पत्थर निकलेगा। तत्पश्चात् उसके नीचे मधुर व उत्तम पानी का वेगमान् प्रवाह उत्तरवाहिनी प्रवाह बहता दिखेगा ॥२९-३०॥

वृक्ष के नीचे मेढ़क की स्थितिवश जलशिरा ज्ञान कथन

सर्वेषां वृक्षाणामधः स्थितो दर्दुरो यदा दृश्यः।
तस्माद्धस्ते तोयं चतुर्भिरर्धाधिकैः पुरुषैः ॥३१॥
पुरुषे तु भवति नकुलो नीला मृत्पीतिका ततः श्वेता।
दर्दुरसमानरूपः पाषाणो दृश्यते चात्र ॥३२॥

माया—जिस-किसी वृक्ष के नीचे जड़ के पास बैठा मेढक दिखाई पड़े, तो उस पेड़ के उत्तर दिशामें एक हाथ छोड़कर साढ़े बाईस हाथ नीचे जमीन में पानी निकलेगा। उसका चिह्न है—पाँच हाथ खोदने पर नेवला निकलेगा उसके नीचे नीली-पीली मिट्टी निकलेगी एवं बाद में सफेद मिट्टी निकलेगी। उसके पश्चात् मेढक के रंग का पत्थर दिखेगा। उसके नीचे पानी निकलेगा ॥३१-३२॥

करञ्जक पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

यद्यहिनिलयो दृश्यो दक्षिणतः संस्थितः करञ्जस्य।
हस्तद्वये तु याम्ये पुरुषत्रितये शिरा सार्धे ॥३३॥
कच्छपकः पुरुषार्द्धे प्रथमं चोद्भिद्यते शिरा पूर्वा।
उदगन्या स्वादुजला हरितोऽश्माधस्ततस्तोयम् ॥३४॥

माया—जल विहीन जमीन में करंज का पेड़ हो एवं उसके दक्षिण दिशा में वल्मीक हो, तो उस करंज के पेड़ के दक्षिण दिशा में दो हाथ छोड़कर साढ़े सत्रह हाथ नीचे पानी का प्रवाह समझना चाहिये।

उसका चिह्न है—अढ़ाई हाथ खोदने पर कछुवा निकलेगा। फिर पहले पूर्व दिशा की ओर जाता जल प्रवाह दिखाई देगा। फिर नीचे खोदने पर तोते के रंग का हरा पत्थर आयेगा, उसके नीचे उत्तर दिशा की ओर जाने पर मीठे जल का प्रवाह दिखाई पड़ेगा। अथाह पानी निकलेगा ॥३३-३४॥

महुआ के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

उत्तरतश्च मधूकादहिनिलयः पश्चिमे तरोस्तोयम्।
परिहृत्य पञ्च हस्तानर्धाष्टमपौरुषान् प्रथमम् ॥३५॥
अहिराजः पुरुषेऽस्मिन् धूम्रा धात्री कुलुत्थवर्णोऽश्मा।
माहेन्द्रीं भवति शिरा वहति सफेनं सदा तोयम् ॥३६॥

माया—जल विहीन जमीन में जहाँ महुआ का पेड़ हो उसके उत्तर दिशा में सर्प निवास स्थान हो, तो महुआ के पेड़ से पाँच हाथ छोड़कर पश्चिम दिशा में जमीन साढ़े बयालीस हाथ खोदने पर पानी निकलेगा।

उसका चिह्न है कि पाँच हाथ खोदने पर बड़ा सर्प दिखाई पड़ेगा। फिर धुँए के रंग जैसी काली जमीन मिलेगी फिर कुलित्य (कुलथी) रंग का पत्थर निकलेगा। उसके नीचे पूरब के दिशा में बहता प्रवाह दिखाई देगा, जिसमें फेनयुक्त बहुत जल होगा ॥३५-३६॥

तालमखाना के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

वल्मीकः स्निग्धो दक्षिणेन तिलकस्य सकुशदूर्वश्चेत्।
पुरुषैः पञ्चभिरम्भो दिशि वारुण्यां शिरा पूर्वा ॥३७॥

माया—तिलक वृक्ष (तालमखाना) के दक्षिण दिशा में चिकनी कुशा व दुर्वा से युक्त वल्मीक है अथवा चींटियों की बाँवी है, तो उस पेड़ से पाँच हाथ छोड़कर पश्चिम दिशा की तरफ जाने पर पच्चीस हाथ नीचे जलप्रवाह मिलेगा। उस पूर्व शिरा में बहुत पानी होता है ॥३७॥

कदम्ब के पेड़ से पश्चिम दिशा में स्थित सर्पवास से जलशिरा का ज्ञान कथन

सर्पावासः पश्चाद्यदा कदम्बस्य दक्षिणेन जलम्।
परतो हस्तत्रितयात् षड्भिः पुरुषैस्तुरीयोनैः ॥३८॥
कौबेरी चात्र शिरा वहति जलं लोहगन्धि चाक्षोभ्यम्।
कनकनिभो मण्डूको नरमात्रे मृत्तिका पीता ॥३९॥

माया—जिस कदम्ब वृक्ष के पश्चिम में बाँवी हो, तो कदंब के पेड़ के दक्षिण दिशा में तीन हाथ छोड़कर एकतीस हाथ नीचे जमीन में जल निकलेगा।

उसका चिह्न है—वहाँ लौह गन्ध युक्त अधिक जल वाली उत्तर वाहिनी शिरा (जल प्रवाह) मिलेगी । पाँच हाथ खोदने पर सोने के रंग जैसा मेढ़क निकलता है और पीले रंग की मिट्टी निकलती है ।।३८-३९।।

ताल या नारियल पेड़ से शिराज्ञान कथन

वल्मीकसंवृतो यदि तालो वा भवति नालिकेरो वा।
पश्चात् षड्भिर्हस्तैर्नरैश्चतुर्भिः शिरा याम्या ।।४०।।

माया—ताड़ अथवा नारियल के पेड़ बाँबी से घिरें हों, तो इस पेड़ के पश्चिम दिशा में छः हाथ छोड़ बीस हाथ नीचे पानी का प्रवाह होगा, जो दक्षिण दिशा में बहने वाली शिरा (जलधारा) होगी ।।४०।।

कपित्थ के पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन

याम्येन कपित्थस्याहिसंश्रयश्चेदुदग्जलं वाच्यम्।
सप्त परित्यज्य करान् खात्वा पुरुषान् जलं पञ्च ।।४१।।
कर्बुरकोऽहिः पुरुषे कृष्णा मृत् पुटभिदपि च पाषाणः ।
श्वेता मृत् पश्चिमतः शिरा ततश्चोत्तरा भवति ।।४२।।

माया—कपित्थ (कैथ) के पेड़ से दक्षिण दिशा में बाँबी हो, तो उस पेड़ से उत्तर दिशा में सात हाथ छोड़कर पच्चीस हाथ नीचे जल होगा। उसका चिह्न है कि पाँच हाथ नीचे खोदने पर चितकबरा साँप निकलेगा। फिर काली मिट्टी आयेगी। तत्पश्चात् अग्नि कोण के पत्थर टूटने पर पानी आयेगा। फिर सफेद मिट्टी आयेगी। उसके नीचे पश्चिम की ओर जाने वाला जल-प्रवाह मिलेगा। उसके नीचे उत्तर दिशा में जाने वाला जल-प्रवाह प्राप्त होगा ।।४१-४२।।

अश्मंतक के पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

अश्मन्तकस्य वामे बदरी वा दृश्यतेऽहिनिलयो वा।
षड्भिरुदक् तस्य करैः सार्धे पुरुषत्रये तोयम् ।।४३।।
कूर्मः प्रथमे पुरुषे पाषाणो धूसरः ससिकता मृत्।
आदौ च शिरा याम्या पूर्वोत्तरतो द्वितीया च ।।४४।।

माया—अश्मंतक वृक्ष के बायीं तरफ अथवा उत्तर दिशा में बदरी (बेर) का वृक्ष हो अथवा बाँवी हो, तो इस पेड़ से उत्तर दिशा में छः हाथ छोड़कर साढ़े सतरह हाथ नीचे जल है, ऐसा समझना चाहिये।

उसके लक्षण—पाँच हाथ नीचे कछुआ निकलेगा। उसके बाद धूसर (मिट्टी मिला) पत्थर निकलेगा। उसके बाद बलुई मिट्टी निकलेगी। बाद में दक्षिण में जाने वाला जल-प्रवाह दिखाई पड़ेगा। उसके नीचे ईशान कोण की शिरा से जल धारा प्रवाहित होती देखी जा सकेगी ।।४३-४४।।

हरिद्र पेड़ से जलशिरा परिज्ञान कथन

वामेन हरिद्रतरोर्वल्मीकश्चेज्जलं भवति पूर्वे।
हस्तत्रितये सत्र्यंशैः पुम्भिः पञ्चभिर्भवति ।।४५।।
नीलो भुजगः पुरुषे मृत् पीता मरकतोपमश्चाश्मा।
कृष्णा भूः प्रथमं वारुणी शिरा दक्षिणेनान्या ।।४६।।

माया—हरिद्र (हरदर या हलहुआ) पेड़ के बायीं तरफ (अथवा उत्तर दिशा में) बांबी हो, तो इस पेड़ से तीन हाथ छोड़कर पूर्व दिशा में सत्ताईस हाथ नीचे पानी का प्रवाह है, ऐसा समझना चाहिये।

उसके चिह्न—पाँच हाथ नीचे खोदने पर नीला सर्प दिखाई देगा। उसके बाद पीली मिट्टी निकलेगी। उसके बाद मरकत मणि के रंग (हरा रंग) का पत्थर निकलेगा। फिर काली जमीन आयेगी। उसके नीचे पहले पश्चिम दिशा की ओर प्रवाहित जल-प्रवाह दिखाई देगा एवं उसके नीचे भी एक जलप्रवाह है, जो दक्षिण दिशा की ओर प्रवाहित होगा तथा जिससे पुष्कर जल प्राप्त होगा ।।४५-४६।।

जलहीन प्रदेश में जलीय चिह्न से जलशिरा का ज्ञान कथन

जलपरिहीने देशे दृश्यन्तेऽनूपजानि चेन्निमित्तानि।
वीरणदूर्वा मृदवश्च यत्र तस्मिन् जलं पुरुषे ।।४७।।

भंगरैया आदि से जल का ज्ञान कथन

भार्ङ्गी त्रिवृता दन्ती सूकरपादी च लक्ष्मणा चैव।
नवमालिका च हस्तद्वयेऽम्बु याम्ये त्रिभिः पुरुषैः ।।४८।।

माया—अनुपजाऊ जल विहीन भूमि में बेकार पड़ी जमीन या (दूसरे अर्थ में) जलवाले प्रदेश का लक्षण दिखाई दे और जहाँ वीरण (गाँडर), दूर्वा अति कोमल उगे हों, तो उस स्थान से पाँच हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिये ।।४७।।

जो जमीन जल विहीन हों उस पर पानी वाले प्रदेश के चिह्न हों और उस पर भारंगी (भंगरैया), निसोत, इन्द्रदंती (दंतिया = जयपाल), सूकरपादी एवं लक्ष्मणा (हनुमान बेल) औषधियाँ उगी हों एवं मोगरा आदि हों तो उस पेड़ के दक्षिण दिशा में दो हाथ छोड़कर जमीन में पन्द्रह हाथ नीचे जल मिलेगा, ऐसा समझना चाहिये ।।४७-४८।।

जलहीन देश मे बाँबी युक्त तिलकादि पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

स्निग्धाः प्रलम्बशाखा वामनविकटद्रुमाः समीपजलाः ।
सुषिरा जर्जरपत्रा रूक्षाश्च जलेन सन्त्यक्ताः ।।४९।।

माया—जिस प्रदेश में निर्मल-लम्बी शाखाओं वाले छोटे-छोटे फैली हुई पेड़ हों, उस प्रदेश में जल अधिक गहराई में न होकर समीप में ही होता है और जिस प्रदेश में अन्तः सार वाले और विवर्ण पत्ते वाले तथा रूक्ष या रूखे पेड़ हों, उस प्रदेश में निश्चय ही जलाभाव जानना चाहिए।।४९।।

पुनः जलहीन देश में बाँबी युक्त तिलकादि पेड़ से जलशिरा का ज्ञान कथन

तिलकाम्रातकवरुणकभल्लातकविल्वतिन्दुकाङ्कोलाः ।
पिण्डारशिरीषाञ्जनपरूषका वञ्जुलोऽतिबला ।।५०।।
एते यदि सुस्निग्धा वल्मीकैः परिवृतास्ततस्तोयम् ।
हस्तैस्त्रिभिरुत्तरतश्चतुर्भिरर्धेन च नरेण ।।५१।।

जिस जमीन पर तिलक, आम्रातक (अंबाड़ा), वरूणक (वरण), भल्लातक (भिलावा), बेल, तेन्दु (तेन्दुआ), अंकोल, पिंडार शिरीष, अंजन, पुरुषक (फालसा), अशोक, अतिवला आदि के सुन्दर बड़े पेड़ हों तथा बांबी से युक्त हो, तो इन वृक्षों के उत्तर दिशा में तीन हाथ छोड़कर साढ़े बाईस हाथ नीचे पानी का प्रवाह होगा, ऐसा समझना चाहिये ।।४९-५१।।

तृण सहित-रहित भूमि से जल या धन का ज्ञान कथन

अतृणे सतृणा यस्मिन् सतृणे तृणवर्जिता मही यत्र ।
तस्मिन् शिरा प्रदिष्टा वक्तव्यं वा धनं चास्मिन् ।।५२।।

माया—जिस तृण विहीन प्रदेश में जहाँ तृण हो अथवा जिस प्रदेश में घास-तृण उगी हो लेकिन वहाँ कोई घास रहित स्थान हो, तो उस जमीन में साढ़े बाईस हाथ नीचे पानी होगा अथवा धन प्राप्त होगा ।।५२।।

कंटक व अकंटक पेड़ से जल या धन का ज्ञान कथन

कण्टक्यकण्टकानां व्यत्यासेऽम्भस्त्रिभिः करैः पश्चात् ।
खात्वा पुरुषत्रितयं त्रिभागयुक्तं धनं वा स्यात् ।।५३।।

माया—जिस जमीन पर काँटे वाले बबूल, बेर जैसे पेड़ों के बीच बिना काँटा वाला पेड़ अथवा विना काँटे वाले पेड़ों के बीच काँटा वाला पेड़ हो अथवा काँटे वाले पेड़ में काँटा न हो अथवा काँटा रहित पेड़ में काँटा उगा हो, तो उस पेड़ से तीन हाथ छोड़कर पश्चिम दिशा में साढ़े सोलह हाथ नीचे पानी अथवा धन मिलेगा ।।५३।।

चरण ताड़ित भूमि से जल का ज्ञान कथन

नदति मही गम्भीरं यस्मिंश्चरणाहता जलं तस्मिन् ।
सार्धैस्त्रिभिर्मनुष्यैः कौवेरी तत्र च शिरा स्यात् ।।५४।।

माया—पांनी रहित जिस जमीन में पैर से ताडन करने पर गम्भीर ध्वनि निकले उस जमीन के नीचे साढ़े सत्तरह हाथ नीचे जल और उत्तर दिशा की ओर जाने वाला जल का प्रवाह है, ऐसा समझना चाहिये ।।५४।।

पेड़ की डालियों से जल का ज्ञान कथन

वृक्षस्यैका शाखा यदि विनता भवति पाण्डुरा वा स्यात् ।
विज्ञातव्यं शाखातले जलं त्रिपुरुषं खात्वा ।।५५।।

माया—जिस पानी रहित भूमि के ऊपर वृक्ष की एक डाल नीचे की ओर झुकी हो या पीली पड़ गई हो एवं उस शाखा के वीच के स्थान की मिट्टी सफेद पीली हो, तो इस पेड़ के नीचे पन्द्रह हाथ खोदने पर पानी निकलेगा। ऐसा समझना चाहिए ।।५५।।

फल-पुष्पों से जल प्रवाह का ज्ञान कथन

फलकुसुमविकारो यस्य तस्य पूर्वे शिरा त्रिभिर्हस्तैः ।
भवति पुरुषैश्चतुर्भिः पाषाणोऽधः क्षितिः पीता ।।५६।।

माया—जिस जमीन के ऊपर उगे पेड़ के फल और फूल में विकृति दिखाई पड़े अर्थात् अपने स्वाभाविक रंग से हटकर दिखाई दे, तो उस पेड़ से पूर्व दिशा में तीन हाथ छोड़कर बीस हाथ नीचे जल का प्रवाह है, ऐसा समझना चाहिए और उस स्थान की जमीन खोदने पर पत्थर आदि तोड़ने पर नीचे पीली जमीन दिखेगी ।।५६।।

काँटों वाले पेड़ से जल का ज्ञान कथन

यदि कण्टकारिका कण्टकैर्विना दृश्यते सितैः कुसुमैः ।
तस्यास्तलेऽम्बु वाच्यं त्रिभिर्नरैरर्धपुरुषे च ।।५७।।

माया—जिस पानी रहित जमीन के ऊपर बड़े काँटो वाला अथवा विना काँटो का पेड़ उगा हो और उस पर सफेद कुसुम लगे हों, तो सत्तरह हाथ नीचे पानी होगा, ऐसा समझना चाहिए अथवा इस प्रकार समझना चाहिये कि काँटों से रहित और सफेद कुसुमों से युक्त कटेरी का वृक्ष, जिस स्थान पर हो, उस वृक्ष के नीचे साढ़े तीन पुरुष या सत्तरह हाथ गहराई में जल होगा। ।।५७।।

खजूर पेड़ से जल का ज्ञान कथन

खर्जूरी द्विशिरस्का यत्र भवेज्जलविवर्जिते देशे ।
तस्याः पश्चिमभागे निर्देश्यं त्रिपुरुषैर्वारि ।।५८।।

माया—जिस जल विहीन भूमि पर दो सिरा वाला खजूर का पेड़ उगा हो अथवा खजूर के एक पेड़ के दो भाग हो गये हो तो उस पेड़ से पश्चिम दिशा में दो हाथ छोड़कर पन्द्रह हाथ खोदने पर जल निकलेगा ॥५८॥

कर्णिकार व ढाक पेड़ से जल का ज्ञान कथन

यदि भवति कर्णिकारः सितकुसुमः स्यात्पलाशवृक्षो वा।
सव्येन तत्र हस्तद्वयेऽम्बु पुरुषद्वये भवति ॥५९॥

माया—जिस पानी रहित भूमि पर सफेद कुसुमयुक्त कर्णिकार (कठचम्पा) या ढाक (पलाश) का पेड़ हो, तो उस वृक्ष से दक्षिण दिशा में दो हाथ छोड़कर दस हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिए ॥५९॥

वाष्प व धूम्र से जल का ज्ञान कथन

यस्यामूष्मा धात्र्यां धूमो वा तत्र वारि नरयुगले।
निर्देष्टव्या च शिरा महता तोयप्रवाहेण ॥६०॥

माया—जिस पानी रहित जमीन से धुँआ या वाष्प निकलता हो, उस जमीन में दस हाथ नीचे प्रबल जल प्रवाह बहता है, ऐसा समझना चाहिए ॥६०॥

धान्य-फसल से जल का ज्ञान कथन

यस्मिन् क्षेत्रोद्देशे जातं सस्यं विनाशमुपयाति।
स्निग्धमतिपाण्डुरं वा महाशिरा नरयुगे तत्र ॥६१॥

माया—जिस खेत में बोई धान्य (फसल) उगकर नष्ट हो जाती है अथवा जिस जगह का बोया धान्य चिकने या पीले पड़ जाते हैं या नीब जैसे पीले रंग के हो जाते हैं। वहाँ दस हाथ नीचे बहुत शक्तिशाली प्रवाह बहता है, ऐसा समझना चाहिए ॥६१॥

मरूभूमि में जल प्रवाह का ज्ञान कथन

मरुदेशे भवति शिरा यथा तथातः परं प्रवक्ष्यामि।
ग्रीवा करभाणामिव भूतलसंस्थाः शिरा यान्ति ॥६२॥

माया—अतः अब जल विहीन मारवाड़ जैसे प्रदेश में जिस प्रकार की जल शिरा (जल प्रवाह) होती है, उसी प्रकार उसको कहता हूँ। उस प्रदेश की पृथ्वी के अन्दर जल शिरायें (प्रवाह) ऊँट के गर्दन की तरह ऊँची-नीची होती हैं ॥६२॥

पीलु पेड़ से जल प्रवाह का ज्ञान कथन

पूर्वोत्तरेण पीलोर्यदि वल्मीको जलं भवति पश्चात्।
उत्तरगमना च शिरा विज्ञेया पञ्चभिः पुरुषैः ॥६३॥

चिह्नं दर्दुर आदौ मृत् कपिला तत्परं भवेद्धरिता ।
भवति च पुरुषेऽधोऽश्मा तस्य तलेऽम्भो विनिर्देश्यम् ।।६४।।

माषा—जिस जमीन के ऊपर पीले रंग का पेड़ या पीलु (पिलुआ-अमरकोष में कहा गया है 'पीलौ गुडफलं स्त्रंसति इति') नामक पेड़ से यदि पूर्वोत्तर दिशा अर्थात् ईशान कोण में बांबी का टीला हो, तो इस पेड़ से पश्चिम दिशा में साढ़े चार हाथ छोड़कर पच्चीस हाथ नीचे उत्तर दिशा में बहने वाला पानी का प्रवाह होगा, ऐसा जानना चाहिये ॥

उसके चिह्न—प्रथम पाँच हाथ जमीन खोदने पर मेढ़क निकलेगा। फिर पीली तथा हरी रंग की मिट्टी तत्पश्चात् लालाभ रंग लिये सफेद मिट्टी निकलेगी। उसके बाद पत्थर मिलेगा, जिसे तोड़ने पर जल प्रवाह दिखेगा ।।६३-६४।।

पुनः पीलु पेड़ से जल ज्ञान प्रकार कथन

पीलोरेव प्राच्यां वल्मीकोऽतोऽर्धपञ्चमैर्हस्तैः ।
दिशि याम्यायां तोयं वक्तव्यं सप्तभिः पुरुषैः ।।६५।।
प्रथमे पुरुषे भुजगः सितासितो हस्तमात्रमूर्त्तिश्च ।
दक्षिणतो वहति शिरा सक्षारं भूरि पानीयम् ।।६६।।

माषा—जिस जमीन पर पीलु या पीलुडी (पीले रंग का) पेड़ उगा हो; उसके पूर्व दिशा में बांबी हो, तो उस पेड़ के दक्षिण दिशा की ओर साढ़े पाँच हाथ छोड़कर सात पुरुष या ३५ हाथ नीचे पानी का प्रवाह होगा, ऐसा समझना चाहिए ।

उसके चिह्न—पाँच हाथ नीचे खोदने पर सफेद-काले रंग का एक हाथ लम्बा सर्प दिखाई पड़ेगा। उसके नीचे दक्षिण की ओर बहने वाला अथाह पानी का प्रवाह मिलेगा किन्तु उसका स्वाद थोड़ा खारा होगा ।।६५-६६।।

करील पेड़ से जल का ज्ञान कथन

उत्तरतश्च करीरस्याहिगृहं दक्षिणे जलं स्वादु ।
दशभिः पुरुषैर्ज्ञेयं पुरुषे पीतोऽत्र मण्डूकः ।।६७।।

माषा—जिस जल रहित मरूभूमि में करील (करीर) का पेड़ हो एवं उसके उत्तर दिशा में बांबी हो, तो उस पेड़ से साढ़े चार हाथ छोड़कर दक्षिण दिशा में पचास हाथ नीचे पर्याप्त मात्रा में मीठा जल निकलेगा। उसको पाँच हाथ नीचे खोदने पर पीले रंग का मेढ़क निकलेगा, यह चिह्न है ।।६७।।

रोहितक पेड़ से जल का ज्ञान कथन

रोहीतकस्य पश्चादहिवासश्चेत्त्रिभिः करैर्याम्ये ।
द्वादश पुरुषान् खात्वा सक्षारा पश्चिमेन शिरा ।।६८।।

माया—जिस मरूभूमि के ऊपर रोहितक (लाल करञ्ज) का वृक्ष उगा हो एवं उसकी पश्चिम दिशा में बांबी हो, तो उस पेड़ से तीन हाथ छोड़कर दक्षिण दिशा में साठ हाथ खोदने पर पश्चिम मुख वाला पानी का प्रवाह निकलेगा, परन्तु वह जल अपनी प्रकृति में क्षारीय होगा ॥६८॥

अर्जुन पेड़ से जल का ज्ञान कथन

इन्द्रतरोर्वल्मीकः प्राग्दृश्यः पश्चिमे शिरा हस्ते।
खात्वा चतुर्दश नरान् कपिला गोधा नरे प्रथमे ॥६९॥

माया—जिस मरूभूमि प्रदेश में इन्द्रजव या अर्जुन नामक पेड़ उगा हो एवं उसकी पूर्व दिशा में बांबी दिखाई पड़े, तो उस पेड़ से पश्चिम दिशा में एक हाथ छोड़कर ७० हाथ नीचे खोदने पर जल का प्रवाह निकलेगा। पाँच हाथ खोदने पर कपिला (पीला) गोधा गोह दिखलाई देगा ॥६९॥

धतूरा पेड़ से जल का ज्ञान कथन

यदि वा सुवर्णनाम्नस्तरोर्भवेद्वामतो भुजङ्गगृहम्।
हस्तद्वये तु याम्ये पञ्चदशनरावसानेऽम्बु ॥७०॥
क्षारं पयोऽत्र नकुलोऽर्धमानवे ताम्रसन्निभश्चाश्मा।
रक्ता च भवति वसुधा वहति शिरा दक्षिणा तत्र ॥७१॥

माया—जिस मरूभूमि में धतूरा का पेड़ उगा हो अथवा वैसा कोई अन्य वृक्ष उगा हो। उसकी डाली की बायीं ओर अथवा उसके उत्तर दिशा में बांबी हो, तो उस पेड़ से दक्षिण दिशा में दो हाथ छोड़कर पचहत्तर हाथ नीचे जमीन में जल प्रवाह है, जिसमें खारा जल बहता है।

उसके लक्षण—अढ़ाई हाथ नीचे नेवला निकलेगा उसके बाद ताँबे के रंग का पत्थर मिलेगा। फिर लाल रंग की मिट्टी, रेत निकलेगी। उसके नीचे दक्षिण दिशा में बहने वाला जल का प्रवाह मिलेगा ॥७०-७१॥

बेर व लाल करञ्ज की युति से जल का ज्ञान कथन

बदरीरोहितवृक्षौ सम्पृक्तौ चेद्विनापि वल्मीकम्।
हस्तत्रयेऽम्बु पश्चात् षोडशभिर्मानवैर्भवति ॥७२॥
सुरसं जलमादौ दक्षिणा शिरा वहति चोत्तरेणान्या।
पिष्टनिभः पाषाणो मृत् श्वेता वृश्चिकोऽर्धनरे ॥७३॥

माया—जिस जमीन के ऊपर रोहित और बदरी के वृक्ष एक साथ मिले अथवा साथ-साथ में पास-पास हो, तो बांबी के बिना भी इस पेड़ से तीन हाथ छोड़कर पश्चिम दिशा में अस्सी हाथ नीचे मीठे पानी का प्रवाह है, ऐसा समझना चाहिये।

उसके चिह्न—पहले दक्षिण दिशा में जल का प्रवाह दिखाई देगा। फिर उत्तर दिशा में जल प्रवाह आयेगा। आटा के समान सफेद पत्थर, सफेद मिट्टी निकलेगा। पहले ढ़ाई हाथ पर विच्छू-विच्छी दिखाई देगा ॥७२-७३॥

करील व वेर के युति से जल का ज्ञान कथन

सकरीरा चेद्वदरी त्रिभिः करैः पश्चिमेन तत्राम्भः।
अष्टादशभिः पुरुषैरैशानी वहुजला च शिरा ॥७४॥

भाषा—यदि करीर वृक्ष से युक्त वदरी के वृक्ष मिले अथवा इस तरह से दिखें कि पास-पास है, तो उन पेड़ों से तीन हाथ पर पश्चिम दिशा में नब्वे हाथ नीचे ईशान कोण की ओर वहने वाली पानी की काफी मोटी धारा होगी ॥७४॥

पीलु व वेर पेड़ के युति से जल का ज्ञान कथन

पीलुसमेता वदरी हस्तत्रयसम्मिते दिशि प्राच्याम्।
विंशत्या पुरुषाणामशोष्यमम्भोऽत्र सक्षारम् ॥७५॥

भाषा—जिस पीलु के वृक्ष के साथ वदरी का पेड़ मिलकर उगा हो अथवा बदरी का पेड़ उस समीप में हो, तो उस पेड़ के पूर्वी दिशा में तीन हाथ छोड़कर सौ हाथ नीचे खारे पानी का अटूट प्रवाह निकलेगा ॥७५॥

अर्जुन व करील या अर्जुन व वेल से जल का ज्ञान कथन

ककुभकरीरावेकत्र संयुतौ यत्र ककुभविल्वौ वा।
हस्तद्वयेऽम्बु पश्चान्नरैर्भवेत् पञ्चविंशत्या ॥७६॥

भाषा—जिस प्रदेश में अर्जुन और करीर अथवा अर्जुन के साथ बेल (विल्व) दोनों के पेड़ का संयोग हों। दोनों मिले अथवा साथ-साथ हो, तो उस वृक्ष के पश्चिम दिशा में दो हाथ छोड़कर एक सौ पच्चीस हाथ नीचे पानी का प्रवाह है, ऐसा समझना चाहिए ॥७६॥

बाँबी के ऊपर उगे दूब आदि से जल का ज्ञान कथन

वल्मीकमूर्धनि यदा दूर्वा च कुशाश्च पाण्डुराः सन्ति।
कूपो मध्ये देयो जलमत्र नरैकविंशत्या ॥७७॥

भाषा—जल विहीन जिस मरूभूमि में बांबी के ऊपर घास, कुशा आदि उगे हों, तो उस बांबी की जगह में कुँआ खोदने पर एक सौ पाँच हाथ नीचे पानी का प्रवाह निकलेगा ॥७७॥

कदम्ब व दुर्वा युत बाँबी से जल का ज्ञान कथन

भूमिः कदम्बकयुता वल्मीके यत्र दृश्यते दूर्वा।
हस्तद्वयेन याम्ये नरैर्जलं पञ्चविंशत्या ॥७८॥

माया—जिस भूमि में कदंब का पेड़ उगा हो एवं बांबी के ऊपर घास उगी हो, तो उस कदंब के पेड़ तथा बांबी से दक्षिण दो हाथ छोड़कर एक सौ पच्चीस हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिए ।।७८।।

बाँबी आवृत रोहितक पेड़ से जल का ज्ञान कथन

वल्मीकत्रयमध्ये रोहीतकपादपो यदा भवति ।
नानावृक्षैः सहितस्त्रिभिर्जलं तत्र वक्तव्यम् ।।७९।।
हस्तचतुष्के मध्यात् षोडशभिश्चाङ्गुलैरुदग्वारि ।
चत्वारिंशत् पुरुषान् खात्वाऽश्माऽधः शिरा भवति ।।८०।।

माया—जिस जमीन पर तीन बांबी के बीच में रोहितक (लाल करंज) का पेड़ हो एवं उसके आस-पास अन्य प्रकार के वृक्ष उगें हों, तो भी वहाँ पानी है, ऐसा समझना चाहिए ।

उसके चिह्न—उन बांबियों के बीच में से चार हाथ सोलह अंगुल छोड़कर दो सौ हाथ नीचे बड़ा पत्थर और उसके नीचे बड़ा पानी का प्रवाह मिलेगा ।।७९-८०।।

शमी पेड़ से जल ज्ञान प्रकार कथन

ग्रन्थिप्रचुरा यस्मिन् शमी भवेदुत्तरेण वल्मीकः ।
पश्चात् पञ्चकरान्ते शतार्धसंख्यैर्नरैः सलिलम् ।।८१।।

माया—जिस जमीन के ऊपर शमी (बाँस) के पेड़ में अनेक गाँठे हों तथा उसके उत्तर दिशा में बांबी हो, तो उस शमी वृक्ष के पश्चिम दिशा में पाँच हाथ छोड़कर अढ़ाई सौ हाथ नीचे पानी का प्रवाह जानना चाहिए ।।८१।।

पञ्च बाँबी से जल ज्ञान प्रकार कथन

एकस्थाः पञ्च यदा वल्मीका मध्यमो भवेच्छ्वेतः ।
तस्मिन् शिरा प्रदिष्टा नरषष्ट्या पञ्चवर्जितया ।।८२।।

माया—जिस जमीन के ऊपर पास-पास पाँच बांबी हो, उसमें बीच वाली बांबी सफेद रंग जैसी हो, तो उस बांबी के नीचे कुँआ खोदने पर दो सौ पचहत्तर हाथ नीचे पानी का प्रवाह मिलेगा, ऐसा जानना चाहिये ।।८२।।

पलाश व शमी पेड़ युति जल ज्ञान प्रकार कथन

सपलाशा यत्र शमी पश्चिमभागेऽम्बु मानवैः षष्ट्या ।
अर्धनरेऽहिः प्रथमं सवालुका पीतमृत् परतः ।।८३।।

माया—जिस जमीन के ऊपर पलाश (ढाक) का पेड़ हो, साथ ही साथ शमी (बाँस) का पेड़ हो, तो इन पेड़ों से पश्चिम दिशा में पाँच हाथ पर तीन सौ हाथ नीचे पानी होगा, ऐसा जानना चाहिए ।

उसके चिह्न—अढ़ाई हाथ नीचे खोदने पर सर्प निकलेगा उसके नीचे रेत बालू वाली मिट्टी आयेगी, फिर पीली मिट्टी निकलेगी ॥८३॥

बल्मीक युत रोहितक पेड़ से जल का ज्ञान कथन

वल्मीकेन परिवृतः श्वेतो रोहीतको भवेद्यस्मिन् ।
पूर्वेण हस्तमात्रे सप्तत्या मानवैरम्बु ॥८४॥

भाषा—जिस प्रदेश में रोहितक का पेड़ हो एवं वह बांवियों से घिरा हो अर्थात् उसके चारो ओर बांबियाँ हों और वह वृक्ष सफेद रंग का हो गया हो, तो इस पेड़ के पूर्व दिशा में एक हाथ छोड़कर साढ़े तीन सौ हाथ नीचे पानी का प्रवाह जानना चाहिए ॥८४॥

श्वेत काँटों वाले शमी पेड़ से जल का ज्ञान कथन

श्वेता कण्टकवहुला यत्र शमी दक्षिणेन तत्र पयः ।
नरपञ्चकसंयुतया सप्तत्याहिर्नरार्धे च ॥८५॥

भाषा—शमी (बाँस) के बहुत काँटों वाला पेड़ सफेद रंग की जमीन पर उगा हो या सफेद काँटों से युत शमी का पेड़ हो, तो उस पेड़ की दक्षिण दिशा में एक हाथ छोड़कर उस तीन सौ पचहत्तर हाथ नीचे पानी का प्रवाह बहता है । अढ़ाई हाथ खोदने पर सर्प निकलेगा यह चिह्न जानना चाहिए ॥८५॥

जल का सामान्य ज्ञान कथन

मरुदेशे यच्चिह्नं न जाङ्गले तैर्जलं विनिर्देश्यम् ।
जम्बूवेतसपूर्वैर्ये पुरुषास्ते मरौ द्विगुणाः ॥८६॥

भाषा—मरुभूमि में जिन-जिन लक्षणों से जल का ज्ञान कराया गया है, उन चिह्नों या लक्षणों से जाङ्गल प्रदेश, जहाँ स्वल्प जल की प्राप्ति होती है, में जलज्ञान नहीं कहना उचित है । प्रारम्भ में जो जामुन, बेंत आदि के द्वारा जिस प्रकार जलज्ञान करने के लिए पुरुष या हस्त प्रमाण कहा गया है, मरुभूमि में उसे द्विगुणित कर ग्रहण करना चाहिये ॥८६॥

जंगल में जल विषयक सामान्य चिह्न कथन

जम्बूस्त्रिवृता मौर्वी शिशुमारी सारिवा शिवा श्यामा ।
वीरुधयो वाराही ज्योतिष्मती गरुडवेगा च ॥८७॥
सूकरिकमाषपर्णीव्याघ्रपदाश्चेति यद्यहेर्निलये ।
वल्मीकादुत्तरतस्त्रिभिः करैस्त्रिपुरुषे तोयम् ॥८८॥

भाषा—जंबू, निशोत, मोखले (मौर्वी), शिशुमारी, सारिवा, शिवा (शमी, हरण),

श्यामा (कपुरीमधुरी), वाराही (वाराही कंद), ज्योतिष्मति (मालकाकणी), गरुडवेगा (पातालगरूड़ी), सूकरिका, माषपर्णी (मूड़), व्याघ्रपदा आदि औषधियाँ बांबी के ऊपर उगे हों, तो बांबियो (वल्मीक) से तीन हाथ छोड़कर उत्तर दिशा में पन्द्रह हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिए॥८७-८८॥

एतदनूपे वाच्यं जाङ्गलभूमौ तु पञ्चभिः पुरुषैः।
एतैरेव निमित्तैर्मरुदेशे सप्तभिः कथयेत् ॥८९॥

उपरोक्त कही गई चिह्न अनूप प्रदेश वाले जल प्रदेश के लिए समझना चाहिए, किन्तु ये चिह्न खराब जल वाले जंगल प्रदेश में दिखाई पड़े तो पच्चीस हाथ नीचे पानी होगा, यह समझना चाहिए। यह सभी चिह्न मरुभूमि में मिलें, तो पैंतीस हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिये ॥८९॥

विकृत भूमि से जल का ज्ञान कथन

एकनिमा यत्र मही तृणतरुवल्मीकगुल्मपरिहीना।
तस्यां यत्र विकारो भवति धरित्र्यां जलं तत्र ॥९०॥

माया—जिस प्रदेश में जमीन बिल्कुल तृण, पेड़-पौधों, बाँबियों, गुल्मों आदि से रहित एक वर्ण का दिखती हो, उस जमीन का कोई भाग देखने में अलग रंग वाला दिखे, तो ऐसा समझना चाहिये कि उस विकारयुत भूमि के २५ हाथ नीचे जल होगा ॥९०॥

भूलक्षण से जल का ज्ञान कथन

यत्र स्निग्धा निम्ना सवालुका सानुनादिनी वा स्यात्।
तत्रार्धपञ्चकैर्वारि मानवैः पञ्चभिर्यदि वा ॥९१॥

माया—जिस प्रदेश में जमीन चिकनी, नीची, बालू वाली एवं पैर रखने से शब्द करने वाली हो तो वहाँ साढ़े बाइस या पच्चीस हाथ नीचे जल है, ऐसा समझना चाहिए ॥९१॥

स्निग्धादि वृक्षों से जल का ज्ञान कथन

स्निग्धतरूणां याम्ये नरैश्चतुर्भिर्जलं प्रभूतं च।
तरुगहनेऽपि हि विकृतो यस्तस्मात् तद्वदेव वदेत् ॥९२॥

माया—जिस जमीन के ऊपर रस से भरे ताजे लगने वाले स्निग्ध पेड़ उगे हों उन पेड़ों के बीस हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिए। जिस जमीन के ऊपर बहुत से पेड़ उगे हों उनमें से एक पेड़ के पत्ते, फल-फूल विकारयुत हो अर्थात् उन्हें जिस रंग का दिखना चाहिये वैसा न होकर अन्य प्रकार के हों, तो उन पेड़ों के दक्षिण में बीस हाथ नीचे पानी होगा, ऐसा समझना चाहिये ॥९२॥

भूदर्शन से जल का ज्ञान कथन

नमते यत्र धरित्री सार्धे पुरुषेऽम्बु जाङ्गलानूपे ।
कीटा वा यत्र विनालयेन बहवोऽम्बु तत्रापि ।।९३।।

भाषा—यदि स्वल्प अथवा सामान्य जल वाले प्रदेश में जमीन नीची हो और पैर पटकने पर आवाज नीचे जाती हो, तो उस जमीन में साढ़े सात हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिए। उस बांबी विहीन प्रदेश में विविध प्रकार के जीवजन्तु कीड़े, विना रहने के स्थान में दिखाई पड़े तो वहां साढ़े सात हाथ नीचे पानी है, ऐसा समझना चाहिये ।।९३।।

गर्म व शीतल भूमि से जल का ज्ञान कथन

उष्णा शीता च मही शीतोष्णाम्भस्त्रिभिर्नरैः सार्धैः ।
इन्द्रधनुर्मत्स्यो वा वल्मीको वा चतुर्हस्तात् ।।९४।।

भाषा—जिस प्रदेश में सब जगह गरम और एक जगह ठण्डी या सब जगह ठण्डी और एक जगह में गरम जमीन अनुभव होती हो, तो वहाँ साढ़े सत्रह हाथ नीचे पानी होगा तथा जिस स्वल्प जल वाले या अधिक जल वाले जमीन पर इन्द्रधनुष दिखे, जमीन में मछली दिखे अथवा बांबी हो, तो उस भूमि में चार हाथ छोड़कर साढ़े सतरह हाथ नीचे पानी मिलेगा, ऐसा जानना चाहिए ।।९४।।

बाँबी पंक्ति से जल ज्ञान प्रकार कथन

वल्मीकानां पङ्क्त्यां यद्येकोऽभ्युच्छ्रितः शिरा तदधः ।
शुष्यति न रोहते वा सस्यं यस्यां च तत्राम्भः ।।९५।।

भाषा—जिस जमीन के ऊपर बाँबियों की पंक्तियाँ हों जो हार जैसी दिखें, तो उनमें जिस बांबी का स्थान ऊँचा हो, तो उस ऊँचे बाँबी के बीस हाथ नीचे जमीन में पानी का प्रवाह होगा। जिस जमीन में बोये पौधे उगकर सूख जाय अथवा उगे ही नहीं। उसके बगल जमीन में अनाज उगने का प्रमाण मिले, उस जमीन में बीस हाथ नीचे पानी है, निश्चित जानना चाहिए ।।९५।।

बड़-पीपल-गूलर आदि वृक्षत्रय से जल का ज्ञान कथन

न्यग्रोधपलाशोदुम्बरैः समेतैस्त्रिभिर्जलं तदधः ।
वटपिप्पलसमवाये तद्वद्वाच्यं शिरा चोदक् ।।९६।।

भाषा—जिस जमीन में बड़, पीपल, पलाश, गूलर आदि पेड़ों में से कम से कम तीन पेड़ एकत्रित हों और बड़ व पीपल, ये दोनों पेड़ संयुक्त हो, वहाँ इन पेड़ों के नीचे नीचे की गहराई में जल प्राप्त होगा, वहीं उत्तर जल शिरा (जल प्रवाह) भी मिलेगी ।।९६।।

शुभाशुभ कूप स्थान कथन

आग्नेये यदि कोणे ग्रामस्य पुरस्य वा भवेत् कूपः।
नित्यं स करोति भयं दाहं च समानुषं प्रायः ॥९७॥
नैर्ऋतकोणे बालक्षयं च वनिताभयं च वायव्ये।
दिक्त्रयमेतत्त्यक्त्वा शेषासु शुभावहाः कूपाः ॥९८॥

माया—जिस ग्राम अथवा नगर के अग्निकोण में कुँआ हो, तो ग्राम के वासियों को सर्वदा अग्नि भय और अनेक प्रकार से भय के कारण प्राप्त होता रहेगा। अधिकतर मनुष्यों के साथ अग्नि कोण में बने भवन खण्ड के मुख्य भाग में अकस्मात् आग लग जायेगी, मनुष्य भी मरेंगे। ग्राम के नैऋत्य कोण में यदि कुँआ हो, तो ग्राम के लड़को की मृत्यु होगी। वायव्य कोण में स्थित कुँआ हो, तो ग्राम की स्त्रियों को भय होगा। इन तीन दिशाओं को छोड़कर ग्राम के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर अथवा ईशान कोण में कुँआ खुदवाना ग्रामवासियों हेतु कल्याणकारी एवं शुभद होगा ॥९७-९८॥

ग्रन्थकर्त्ता का विशेष कथन

सारस्वतेन मुनिना दकार्गलं यत्कृतं तदवलोक्य।
आर्याभिः कृतमेतद् वृत्तैरपि मानवं वक्ष्ये ॥९९॥

माया—सारस्वत मुनि का रचा हुआ यह जल शास्त्र (उदकार्गल) देखकर मैं (वराहमिहिराचार्य) ने आर्य भाषा (संस्कृत) में उपरोक्त प्रमाणों को रचा है। अब मैं यहाँ मनूक्त उदकार्गल का छन्दों-वृतों में ही वर्णन करता हूँ ॥९९॥

जल ज्ञानदायक वृक्ष के लक्षण कथन

स्निग्धा यतः पादपगुल्मवल्ल्यो
निश्छिद्रपत्राश्च ततः शिरास्ति।
पद्मक्षुरोशीरकुलाः सगुण्ड्राः
काशाः कुशा वा नलिका नलो वा ॥१००॥
खर्जूरजम्ब्वर्जुनवेतसाः स्युः
क्षीरान्विता वा द्रुमगुल्मवल्ल्यः।
छत्रेभनागाः शतपत्रनीपाः
स्युर्नक्तमालाश्च ससिन्दुवाराः ॥१०१॥
विभीतको वा मदयन्तिका वा
यत्रास्ति तस्मिन् पुरुषत्रयेऽम्बः।
स्यात् पर्वतस्योपरि पर्वतोऽन्य-
स्तत्रापि मूले पुरुषत्रयेऽम्बः ॥१०२॥

भाषा—जिस जमीन के ऊपर स्निग्ध, छिद्र रहित पत्तों से युक्त वृक्ष, गुल्म या लता हो, उस प्रदेश में १५ हाथ नीचे जल शिरा (जल प्रवाह) है, ऐसा जानना चाहिए या फिर स्थल कमल, गोखरू, उशीर (खस) आदि कुल के पौधा विशेष, गुण्ड्र (सरकण्डा, शर या पाठान्तर में 'सगुंद्र' लेने पर गाँठवाला बड़ लेकिन यह असंगत प्रतीत होता है।), काश, कुशा, नलिका, नल ये तृण विशेष तथा खजूर, जामुन, अर्जुन, बेंत ये वृक्ष विशेष एवं दूधवाले वृक्ष, गुल्म और लता, छत्री, हस्तिकर्णी, नागकेशर, कमल, कदम्ब, करञ्ज, ये सभी सिन्दुवार वृक्ष के साथ तथा बहेड़ा वृक्ष विशेष, मदयन्तिका पौधा विशेष, ये सभी जहाँ पर हों, वहाँ पर १५ हाथ नीचे जल है, को प्रकट करता है। जिस जमीन पर एवं पर्वत के ऊपर दूसरा पर्वत हो, वहाँ पर भी तीन पुरुष नीचे या पन्द्रह हाथ नीचे जल जानना चाहिए ॥१००-१०२॥

मूँज आदि से युत भूमि में सुस्वादु जल का ज्ञान कथन

या मौञ्जिकैः काशकुशैश्च युक्ता
नीला च मृद्यत्र सशर्करा च।
तस्यां प्रभूतं सुरसं च तोयं
कृष्णाथवा यत्र च रक्तमृद्वा ॥१०३॥

भाषा—जिस जमीन में मांजिक की बेल आदि काश, कुश या मूञ्ज हो एवं उस जमीन की मिट्टी बदली जैसी काली-पीली अथवा बालू मिश्रित हो अथवा मिट्टी काली या लाल हो तो उस जमीन में पन्द्रह हाथ नीचे सुस्वादु मधुर पानी है, ऐसा जानना चाहिए ॥१०३॥

भूमि के वर्ण से जल का ज्ञान कथन

सशर्करा ताम्रमही कषायं क्षारं धरित्री कपिला करोति।
आपाण्डुरायां लवणं प्रदिष्टं मृष्टं पयो नीलवसुन्धरायाम् ॥१०४॥

भाषा—जिस जमीन की मिट्टी ताँबे के रंग की हो बालू मिश्रित हो उसका पानी कसैला होता है। जिस जमीन की मिट्टी कपिल (भूरी) चितकबरी हो तो उसका पानी खारा होता है। जो पाण्डु या सफेद जमीन हो तो उसका पानी नमकीन (लवणयुक्त) होता है। एवं जिस जमीन का रंग बदली के जैसा नीला हो तो उसका जल मीठा होता है ॥१०४॥

शाक आदि के चिह्न से जल ज्ञान प्रकार कथन

शाकाश्वकर्णार्जुनविल्वसर्जाः श्रीपर्ण्यरिष्टाधवशिंशपाश्च।
छिद्रैश्च पत्रैर्द्रुमगुल्मवल्ल्यो रूक्षाश्च दूरेऽम्बु निवेदयन्ति ॥१०५॥

माया—जिस भूमि पर छिद्रयुक्त पत्तों से युक्त शाक (सब्जी), अश्वकर्ण (सखुआ), अर्जुन, बेल, सर्ज, श्रीपर्णी, अरिष्ट, धव, शीशम आदि पेड़ तथा छिद्र वाले, रूखे पत्तों से युक्त वृक्ष, गुल्म, लता आदि हो, तो उस भूमि के अन्दर बहुत दूर पर जल होगा ॥१०५॥

भूवर्ण से जल ज्ञान प्रकार कथन

सूर्याग्निभस्मोष्ट्रखरानुवर्णा या निर्जला सा वसुधा प्रदिष्टा।
रक्ताङ्कुराः क्षीरयुताः करीरा रक्ता धरा चेज्जलमश्मनोऽधः ॥१०६॥

माया—जिस जमीन में सूर्य, अग्नि, भस्म, ऊँट या गधे के रंग की मिट्टी हो, उस जमीन में जल नहीं है, ऐसा समझना चाहिए। जिस जमीन पर करीर का पेड़ लाल अंकुर एवं क्षीर वाला हो और जमीन की मिट्टी लालाभ हो, तो ऐसा जानना चाहिए कि उस जमीन में पत्थर के नीचे पानी है ॥१०६॥

पाषाण वर्ण से जल ज्ञान प्रकार कथन

वैदूर्यमुद्गाम्बुदमेचकाभा पाकोन्मुखोदुम्बरसन्निभा वा।
भङ्गाञ्जनाभा कपिलाथवा या ज्ञेया शिला भूरिसमीपतोया ॥१०७॥

माया—जिस जमीन के खोदते ही पत्थर शिला वैदूर्यमणि जैसे रंग का, बरसात के काले बादल के रंग का, पकने पर सफेद हुए फल जैसा, सुरमे जैसा काला, भूरे रंग का पत्थर हो, तो उसके नीचे समीप में ही अथाह जल होगा, ऐसा जानना चाहिए ॥१०७॥

पुनः पाषाण वर्ण से जल का ज्ञान कथन

पारावतक्षौद्रघृतोपमा या क्षौमस्य वस्त्रस्य च तुल्यवर्णा।
या सोमवल्ल्याश्च समानरूपा साप्याशु तोयं कुरुतेऽक्षयञ्च ॥१०८॥

माया—जिस पत्थर अथवा शिला का रंग कबूतर, शहद, घी, रेशमी कपड़े अथवा सोमवल्ली जैसा हो, तो उसके नीचे अक्षय जल होगा, ऐसा जानना चाहिए ॥१०८॥

शिलास्वरूप वर्ण से जल का ज्ञान कथन

ताम्रैः समेता पृषतैर्विचित्रै-
रापाण्डुभस्मोष्ट्रखरानुरूपा।
भृङ्गोपमाङ्गुष्ठिकपुष्पिका वा
सूर्याग्निवर्णा च शिला वितोया ॥१०९॥

माया—जिस भूमि को खोदते समय ताँबे के रंग के विन्दुओं से युक्त, विचित्र विन्दु वाला, पाण्डु वर्ण का, भस्म, ऊँट, गदहा आदि के वर्ण वाला, अङ्गुष्ठिका

वृक्ष के समान नीला, सूर्य या अग्नि के वर्ण वाला पत्थर मिले, तो वहाँ पर जल नहीं है, जानना चाहिए ॥१०९॥

चन्द्रकिरण आदि सदृश पाषाण से जल ज्ञान कथन

चन्द्रातपस्फटिकमौक्तिकहेमरूपा
याश्चेन्द्रनीलमणिहिङ्गुलुकाञ्जनाभाः
सूर्योदयांशुहरितालनिभाश्च याः स्यु-
स्ताः शोभना मुनिवचोऽत्र च वृत्तमेतत् ॥११०॥

भाषा—चन्द्रमा की चाँदनी जैसी, स्फटिक मणि जैसी, मोती, सोना, इन्द्रमणि जैसी, नीलम, हिंगुल, सुरमा, सूर्योदय की किरणों जैसी अथवा हरताल जैसी चमकती तेजस्वी शिला वाली जमीन हो, तो कल्याणकारी रिद्धि-सिद्धि देने वाली होती है इस प्रकार मुनियों के कहे हुए को वृत्त या छन्द में यहाँ मैंने कहा है ॥११०॥

एता ह्यभेद्याश्च शिलाः शिवाश्च यक्षैश्च नागैश्च सदाभिजुष्टाः ।
येषां च राष्ट्रेषु भवन्ति राज्ञां तेषामवृष्टिर्न भवेत् कदाचित् ॥१११॥

ऐसी पूर्व कथित शुभ शिलायें आवें, तो उसे तोड़िये मत, वे अभेद्य एवं कल्याण कारी हैं। जिस राज्य-राष्ट्र में ऐसी शिला हो, वहाँ अकाल नहीं पड़ता, न ही अनावृष्टि हाती है। ऐसी शिला की रक्षा सदा यक्ष-नाग करते हैं ॥१११॥

शिला तोड़ने का उपाय कथन

भेदं यदा नैति शिला तदानीं पलाशकाष्ठैः सह तिन्दुकानाम् ।
प्रज्वालयित्वानलमग्निवर्णा सुधाम्बुसिक्ता प्रविदारमेति ॥११२॥

भाषा—कुँआ खोदते समय शक्तिशाली पत्थर या शिला आवे और परिश्रमपूर्वक भी टूटे नहीं, तो पलाश (ढाक) की लकड़ी तथा तिन्दु (तेन्दुआ) पेड़ की लकड़ी उस शिला या पत्थर के ऊपर रखकर सुलगाना चाहिये। जब पत्थर या शिला लाल रंग के जैसी दिखने लगे तो उस पर चूने के पानी का छींटा मारने से तथा हिलाने से शिला टूट जायेगी। बहुत शक्तिशाली शिला हो, तो दो से सात वार उपरोक्त विधि अनुसार लकड़ी जला कर चूने के पानी का छींटा देने से शिला निश्चय ही टूट जायेगी ॥११२॥

पुनः शिला तोड़ने की विधि कथन

तोयं श्रितं मोक्षकभस्मना वा यत्सप्तकृत्वः परिषेचनं तत् ।
कार्यं शरक्षारयुतं शिलायाः प्रस्फोटनं वह्निवितापितायाः ॥११३॥

भाषा—उपरोक्त पलाश एवं तिन्दु की लकड़ियाँ सुलगा कर शिला के लाल

होने के बाद उस पर चिता भस्म घोल कर गर्म शिला पर डालने से या सात बार छींटा मारने से वह पत्थर या शिला टूट जाती है, उक्त श्लोक का इस प्रकार भी अर्थ हो सकता है—

मोक्षक (काली पाढ़रि) वृक्ष की लकड़ी का भस्म मिलाकर पानी को खूब गर्म करना चाहिए, फिर उसमें शर वृक्ष का भस्म मिलाना चाहिए, उसके बाद पूर्ववत् तपायी गईं शिला पर उस घोल का सात बार छिड़काव करने से वह शिला टूट या फूट जाती है ॥११३॥

पुनः शिला तोड़ने के उपाय कथन

तक्रकाञ्जिकसुराः सकुलत्था योजितानि बदराणि च तस्मिन्।
सप्तरात्रमुषितान्यभितप्तां दारयन्ति हि शिलां परिषेकैः ॥११४॥

माया—तक्रकांजिकसुरा एक पात्र में तीन मात्रा लेकर, उसमें कत्था तथा बादराणि की लकड़ी डालकर सात दिन सड़ने दें। तत्पश्चात् कुँए में पूर्वोक्त लकड़ी सुलगाकर पत्थर लाल कर देवें। उस शिला पर उस सड़े सुरा के जल का छींटा मारने से शिला टूट जायेगी। शिला की शक्ति के अनुसार अधिक से अधिक सात बार ऐसा करना होगा।

कृति—तक्रकांजिक सुरा एवं आसव चार-चार मन एक कोठली में भरे एक मन कत्था, एक मन बदरी लकड़ी डाल सात दिन तक ढककर रखें, उसे सड़ने दें, फिर उसका उपयोग करे इस प्रकार भी उपरोक्त श्लोक का अर्थ सम्भव है—

तक्र = छाछ; काँजी, सुरा = मद्य और कुलथी, इन सबों को मिलाकर एक बर्तन में सात रात तक रखना चाहिए। बाद में अग्नि से तपाई हुईं शिला पर उसे बार-बार छिड़कने से शिला टूट जाती है ॥११४॥

पुनः शिला तोड़ने के उपाय कथन

नैम्बं पत्रं त्वक्च नालं तिलानां
सापामार्गं तिन्दुकं स्याद् गुडूची।
गोमूत्रेण स्रावितः क्षार एषां
षट्कृत्वोऽतस्तापितो भिद्यतेऽश्मा ॥११५॥

माया—नींबू का पत्ता, छाल, तलसरा, अपामार्ग, तिन्दुक की लकड़ी, गुडुची आदि को गोमूत्र में रखकर क्षार बनावें तत्पश्चात् कुँआ के पत्थर को सुलगा कर लाल कर दें, एवं उसका (क्षारका) छींटा नौं बार मारें, तो वज्र जैसी शीला भी टूट जायेगी।

कृति—नींबू का पत्ता आदि छः वस्तुएँ एक-एक मन लेकर मिलावें। उसमें छः

मन गोमूत्र मिलाकर क्षार तैयार करें। एवं तपी शिला पर इसका छींटा मारे। श्लोक का अर्थ इस प्रकार भी कर सकते हैं—

नींब के पत्ते, उसकी छाल, तिलों का नाल, अपामार्ग, तेन्दुफल, गिलोय आदि की भस्म को गोमूत्र में मिलाकर, उसे तपाई हुई शिला पर छः बार छिड़काव करने से शिला फूट जाती है ॥११५॥

शस्त्रास्त्रों की धार बनाने की विधि कथन

आर्कं पयो हुडुविषाणमषीसमेतं
पारावताखुशकृता च युतः प्रलेपः।
टङ्कस्य तैलमथितस्य ततोऽस्य पानं
पश्चाच्छितस्य न शिलासु भवेद्विघातः ॥११६॥

भाषा—आर्क का दूध, हुडु सेमरसींग की भस्म, पारावत का चूर्ण; ये सभी दोनों भाग में लेप कर दे। फिर उस के ऊपर आक का दूध डाल दें। पहले महीन कपड़े में चूर्ण छानकर आक का दूध डालें। जब हथियार या औजार लाल हो जाय तो उस का अगला भाग तेल में डुबाईये। इस तरह हथियार या औजार को तेल में डूबोने से उसकी धार समाप्त नहीं होगा एवं वह वज्र के समान मजबूत हो जायेगा, इसका यह भी संगत अर्थ हो सकता है—

लौह-शस्त्र पर प्रथम तिल के तेल मलना चाहिए, उसके बाद मेष के सींग का भस्म तथा कबूतर और चूहे की वीट से युत आक के वृक्ष के दूध का लेप करना चाहिए। तत्पश्चात् उसको आग में तपाकर पूर्ववत् पान देना चाहिए। इस प्रकार तेज धार वाले शस्त्र से पत्थर पर मारने से भी उसकी धार नहीं टूटती है ॥११६॥

पुनः धार बनाने की विधि कथन

क्षारे कदल्या मथितेन युक्ते
दिनोषिते पायितमायसं यत्।
सम्यक् शितं चाश्मनि नैति भङ्गं
न चान्यलोहेष्वपि तस्य कौण्ठ्यम् ॥११७॥

भाषा—कदली (कंदा) से प्राप्त तेल में शस्त्र को क्षार डालकर तेल को खूब मथे अथवा कदली से बना कर खाने वाले मट्ठे में एक रात ऐसे ही रहने दें। फिर पत्थर काटने वाले हथियार-औजार को शित (सेमर) की राख का महीन चूर्ण बना कर उसके सामने भाग में लगावें तथा आक का दूध उस पर छोड़ कर उसे तपावें फिर तेल में डुबोये तो उस औजार की धार नष्ट नहीं होगी ॥११७॥

वापी निर्माण विधि कथन

पाली प्रागपरायताम्बु सुचिरं धत्ते न याम्योत्तरा
कल्लोलैरवदारमेति मरुता सा प्रायशः प्रेरितैः ।
तां चेदिच्छति सारदारुभिरपां सम्पातमावारयेत्
पाषाणादिभिरेव वा प्रतिचयं क्षुण्णं द्विपाश्वादिभिः ।।११८।।

माया—बड़ी या मोटी जमोड बाँधनी हो तो उसे पूर्व पश्चिम की (पाली) लम्बाई में बाँधने पर उसमें पानी पर्याप्त रहेगा, सूखेगा नहीं। उसे उत्तर दक्षिण की लम्बाई में बाँधनी हो, तो जोर की हवा चलने से वह जमोड जल्दी टूट जायेगी और उसमें लम्बे समय तक पानी नहीं रहेगा। दक्षिण उत्तर की लम्बाई में जमोड़ बाँधना हो अथवा उस जगह स्थान अनुकूल हो, तो उस जमोड को बाँधने के बाद मज़बूत लकड़ी की पटिया लगा कर अटका देने से अथवा पत्थर की ईटों से घेरा बनाने में चूना-रेती हाथी आदि पशु के पैरों से कुचले पत्थर के टुकड़ों से जमोड बनाने से अथवा घेरा तैयार करने के बाद उसे चुनवा दें।।११८।।

वापी के तट को बनाने वाले योग्य पेड़

ककुभवटाम्रप्लक्षकदम्बैः सनिचुलजम्बूवेतसनीपैः ।
कुरबकतालाशोकमधूकैर्बकुलविमिश्रैश्चावृततीराम् ।।११९।।

माया—पूर्वोक्त वापी में लकड़ी प्रायः अर्जुन, बरगद, आम, पीपल, कदंब, जंबु, बेंत, नीप (कदम्ब भेद), कुरबक, ताड़, अशोक, महुआ, जामुन, बोलसरी आदि वृक्षों की लकड़ियों से जमोड़ (किनारे) को चारों ओर से तैयार कर घेरा बनवायें।।११९।।

जलगमनागमनमार्ग निर्माण कथन

द्वारं च नैर्वाहिकमेकदेशे कार्यं शिलासञ्चितवारिमार्गम् ।
कोशस्थितं निर्विवरं कपाटं कृत्वा ततः पांशुभिरावपेत्तम् ।।१२०।।

माया—वापी की जमोड़ की एक शिरा या एक भाग पानी भरने अन्दर ठहरने के लिये पगडण्डी वाला रास्ता बनावें। उस एक भाग में पत्थर का जगत एवं पानी निकास हेतु एक मार्ग गड्ढा या गटर में मिलावें। नहीं तो पत्थर की जगत पर धूल राख आदि जमा हो जायेगी।।१२०।।

जल शुद्ध करने के उपाय और उसका लाभ कथन

अञ्जनमुस्तोशीरैः सराजकोशातकामलकचूर्णैः ।
कतकफलसमायुक्तैर्योगः कूपे प्रदातव्यः ।।१२१।।

माया—अंजन (अणता का पेड़ जिसका प्रयोग स्त्रियाँ अंजन बनाने में करती हैं), मोथा, वड़, राजकेशर, आँवला, निर्मली ये सभी बराबर भाग में चूर्ण बनाकर कुँए में डालें। जिससे जल शुद्ध हो।।१२१।।

कलुषं कटुकं लवणं विरसं सलिलं यदि वा शुभगन्धि भवेत्।
तदनेन भवत्यमलं सुरसं सुसुगन्धि गुणैरपरैश्च युतम् ।।१२२।।

माया—जिस कुँए का पानी दूषित, कडुआ, नमकीन अथवा विचित्र स्वाद वाला हो, दुर्गन्ध-युक्त हो अथवा हानिकारक गैस या गन्ध कुँए से आती हो उस कुँए में उपरोक्त चूर्ण १५-२० सेर (किलो) डालने से पानी साफ निर्मल स्वाद वाला, मीठा हो जायेगा ।।१२२।।

कूप, वापी खोदवाने का मुहूर्त्त कथन

हस्तो मघानुराधापुष्यधनिष्ठोत्तराणि रोहिण्यः ।
शतभिषगित्यारम्भे कूपानां शस्यते भगणः ।।१२३।।

माया—हस्त, मघा, अनुराधा, पुष्य, धनिष्ठा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, शतभिषा, इन नक्षत्रों में कुँआ खोदने (बोरिंग) करने अथवा पाताल कुँआ खोदने का कार्य आरम्भ करना उत्तम होता है ।।१२३।।

कृत्वा वरुणस्य बलिं वटवेतसकीलकं शिरास्थाने ।
कुसुमैर्गन्धैर्धूपैः सम्पूज्य निधापयेत् प्रथमम् ।।१२४।।

जिस स्थान पर पृथ्वी में जल प्रवाह कि सम्भावना हो एवं कुँआ खोदना हो, बोरिंग करना हो, तो उस जमीन पर पहले बरगद-वेंत की कीली गाड़ने के बाद कुसुम गंध धूपादि से ब्राह्मण द्वारा वरुण बलि करावें। तत्पश्चात् खुदाई करावें तो पर्याप्त जल मिलेगा ।।१२४।।

अध्यायोपसंहार कथन

मेघोद्भवं प्रथममेव मया प्रदिष्टं
ज्येष्ठामतीत्य बलदेवमतादि दृष्ट्वा ।
भौमं दकार्गलमिदं कथितं द्वितीयं
सम्यग्वराहमिहिरेण मुनिप्रसादात् ।।।१२५।।

माया—ज्येष्ठपूर्णिमा के पश्चात् जिस प्रकार जल का ज्ञान सम्भव होता है, उसे मैं (ग्रन्थकार) ने पहले ही कहा है। इस अध्याय में बलदेव आदि पूर्वाचार्यों के मतों को जानकर पूर्व मुनियों की दया से ही मैं (ग्रन्थकार) ने भूमिगत जल के ज्ञान को इस दकार्गल नामक अध्याय को कहा है।।१२५।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां दकार्गलनिरूपणमं नाम शास्त्रम् चतुष्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।।५४।।

□□□

अथपञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५५

वृक्षायुर्वेदविचारः

प्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

प्रान्तच्छायाविनिर्मुक्ता न मनोज्ञा जलाशयाः ।
यस्मादतो जलप्रान्तेष्वारामान् विनिवेशयेत् ।।१।।

माया—जिस वापी, कुआँ, तालाब आदि रूप जलाशयों के प्रान्त भाग छाया विहीन होते हैं, तो वे चित्त को आह्लादित करने वाले नहीं होते हैं। इस कारण उन जलाशयों के किनारे वृक्षवाटिका (बाग-बगीचा) लगाना चाहिए।।१।।

वृक्ष योग्य भूमि का लक्षण कथन

मृद्वी भूः सर्ववृक्षाणां हिता तस्यां तिलान् वपेत् । '
पुष्पितांस्तांश्च मृद्नीयात् कर्मैतत् प्रथमं भुवः ।।२।।

माया—सभी वृक्षों के निमित्त कोमल (मधुर) भूमि प्रशस्त है। जिस भूमि में वाटिका लगाने का निश्चय किया जाय, उस भूमि में सर्वप्रथम तिल को बोना चाहिए। तिल के पौधे जब फूल-फल जाय, तब उन्हें उसी भूमि में उपमर्दित कर देना चाहिए। यह उस वाटिका भूमि का प्रथम कर्म कहलाता है।।२।।

गृह समीप या वाटिका भूमि में प्रथम लगाने योग्य वृक्ष कथन

अरिष्टाशोकपुन्नागशिरीषाः सप्रियङ्गवः ।
मङ्गल्याः पूर्वमारामे रोपणीया गृहेषु वा ।।३।।

माया—गृह के समीप या वृक्ष वाटिका में प्रथम बार मंगलकारक अरिष्ट (नींव), अशोक, पुन्नाग, शिरीष, प्रियंगु आदि वृक्षों को लगाने चाहिए।।३।।

वृक्षों के कलम लगाने का प्रकार कथन

पनसाशोककदलीजम्बूलकुचदाडिमाः ।
द्राक्षापालीवताश्चैव बीजपूरातिमुक्तकाः ।।४।।
एते द्रुमाः काण्डरोप्या गोमयेन प्रलेपिताः ।
मूलोच्छेदेऽथवा स्कन्धे रोपणीयाः परं ततः ।।५।।

माया—कटहल, अशोक, केला, जामुन, लकुच (बड़हर), अनार, दाख, पालीवत, बिजौरा, अतिमुक्तक आदि वृक्षों की शाखाओं में गोमय (गाय का गोबर) लेपन कर अन्य विजातीय वृक्ष की मूल अथवा शाखा पर तब तक लगाये रखना चाहिए, जब तक कि उसमें मूल जड़ नहीं आ जाय। तत्पश्चात् उसे वहाँ से हटाकर उसका आरोपण करना चाहए, इसी प्रकार वृक्षों का कलम लगाना चाहिए।।४-५।।

वृक्ष आरोपण काल कथन

अजातशाखान् शिशिरे जातशाखान् हिमागमे ।
वर्षागमे च सुस्कन्धान् यथादिक्स्थान् प्ररोपयेत् ।।६।।

माया—अजातशाखा अर्थात् उपरोक्त कलम के रूप में लगाये जाने वाले वृक्षों से भिन्न वृक्षों को शिशिर ऋतु अर्थात् माघ व फाल्गुन मासों में वृक्षों के कलम को हेमन्त ऋतु अर्थात् मार्गशीर्ष व पौष मासों में बड़े शाखाओं वाले वृक्षों को वर्षा ऋतु अर्थात् श्रावण-भाद्रपद मासों में दिशाओं का विचार करते हुए समारोपित करना चाहिए।।६।।

वृक्षारोपण के नियम कथन

घृतोशीरतिलक्षौद्रविडङ्गक्षीरगोमयैः ।
आमूलस्कन्धलिप्तानां संक्रामणविरोपणम् ।।७।।

माया—घी, उशीर (खस), तिल, मधु, विडङ्ग, दूध, गोमय आदि सभी वस्तुओं को मिला और पीस कर वृक्ष के मूल से अग्र पर्यन्त लेपन कर एक स्थान से दूसरे स्थान में लगाने चाहिए।।७।।

वृक्षारोपण प्रकार कथन

शुचिर्भूत्वा तरोः पूजां कृत्वा स्नानानुलेपनैः ।
रोपयेद्रोपितश्चैव पत्रैस्तैरेव जायते ।।८।।

माया—दैनिकचर्या से निवृत्त होकर शुचिता की अवस्था में स्नान, अनुलेपन आदि पूजन सामग्री के द्वारा आरोपण योग्य वृक्ष की पूजा करनी चाहिए, तत्पश्चात् उसे अन्य स्थान में लगाने चाहिए। इस प्रकार वृक्ष लगाने से उसमें उपलब्ध पत्रों, अङ्कुरों से ही वह वृक्ष संवृद्ध होने लगता है, कथमपि वह सूखता नहीं है।।८।।

आरोपित वृक्ष का सिंचन प्रकार कथन

सायं प्रातश्च घर्मर्तौ शीतकाले दिनान्तरे ।
वर्षासु च भुवः शोषे सेक्तव्या रोपिता द्रुमाः ।।९।।

माया—उपरोक्त प्रकार से समारोपित वृक्षों को ग्रीष्म ऋतु काल में सुबह और शाम को, शीत काल अर्थात् शरद् और हेमन्त काल में एक दिन के अन्तर से तथा वर्षा ऋतु काल में मिट्टी के सूख जाने पर सिञ्चित करना चाहिए।।९।।

अनूप प्रदेश में उत्पन्न वृक्ष कथन

जम्बूवेतसवानीरकदम्बोदुम्बरार्जुनाः ।
बीजपूरकमृद्वीकालकुचाश्च सदाडिमाः ।।१०।।

वञ्जुलो नक्तमालश्च तिलक: पनसस्तथा ।
तिमिरोऽम्रातकश्चेति षोडशानूपजा: स्मृता: ।।११।।

माया—अनूप (बहुजलीय) प्रदेश में उत्पन्न और संवृद्ध होने वाले जामुन, वेंत, वानीर, कदम्ब, गूलर, अर्जुन, बिजौरा, दाख, बड़हर, दाडिम, बञ्जुल, नक्तमाल, तिलक, कटहल, तिमिर, अम्बाड़ा आदि १६ वृक्षों को कहे गए हैं।।१०-११।।

वृक्षारोपण प्रमाण क्रम कथन

उत्तमं विंशतिर्हस्ता मध्यमं षोडशान्तरम् ।
स्थानात् स्थानान्तरं कार्यं वृक्षाणां द्वादशावरम् ।।१२।।

माया—बीस हाथ की दूरी पर उत्तम, सोलह हाथ की दूरी पर मध्यम और बारह हाथ की दूरी पर वृक्षों को समरोपित करना अधम कहा गया है।।१२।।

वृक्षों के बीच की दूरी का महत्त्व कथन

अभ्यासजातास्तरव: संस्पृशन्त: परस्परम् ।
मिश्रैर्मूलैश्च न फलं सम्यग्यच्छन्ति पीडिता: ।।१३।।

माया—जब प्रत्येक वृक्ष एक-दूसरे के सन्निकटस्थ हो या आपस में एक-दूसरे को स्पर्श करता हो या दो वृक्षों की जड़े जुड़ी हुई हों, तो वे वृक्ष पीड़ा युक्त होने से अल्प फल देने वाले होते हैं।।१३।।

वृक्षों में रोग और उनके लक्षण कथन

शीतवातातपै रोगो जायते पाण्डुपत्रता ।
अवृद्धिश्च प्रवालानां शाखाशोषो रसस्रुति: ।।१४।।

माया—शीत, वायु, धूप आदि के अति सेवन से वृक्षों में रोग उत्पन्न हो जाता है। रोगग्रस्त वृक्षों के पत्र प्राय: पीतवर्ण के हो जाते हैं, उनके अङ्कुरों की वृद्धि रूक जाती हैं, उनकी शाखायें भी सूखने लगती हैं तथा उनसे रस भी टपकते रहते हैं।।१४।।

वृक्षों की चिकित्सा कथन

चिकित्सितमथैतेषां शस्त्रेणादौ विशोधनम् ।
विडङ्गघृतपङ्काक्तान् सेचयेत् क्षीरवारिणा ।।१५।।

माया—रोगग्रस्त वृक्षों की चिकित्सा की जानी चाहिए। सर्वप्रथम उपरोक्त प्रकार के वृक्षों की जिस शाखा में विकृति हो, उसे किसी उपयुक्त शस्त्र से काट देना चाहिए; तत्पश्चात् विडङ्ग, घी तथा पंक (गीली मिट्टी) के मिश्रण से उस पर लेपन कर दुग्ध और पानी के मिश्रण से उस वृक्ष का सिंचन करना चाहिए।।१५।।

फल हानि चिकित्सा कथन

फलनाशे कुलत्थैश्च माषैर्मुद्गैस्तिलैर्यवैः ।
शृतशीतपयःसेकः फलपुष्पसमृद्धये ।।१६।।

माया—यदि वृक्ष में उचित काल के बाद भी फल नहीं लगते हें, तो उस स्थिति में कुल्थी, उड़द, मूँग, तिल और जौ के मिश्रण को दूध में डालकर आँच पर खौला देना चाहिए, फिर ठण्डा होने के पश्चात् उससे वृक्षों का सिञ्चन करने से उसमें फूल और फल लगने लगते हैं।।१६।।

वृक्ष की संवृद्धि के उपाय कथन

अविकाजशकृच्चूर्णस्याढके द्वे तिलाढकम् ।
सक्तुप्रस्थो जलद्रोणे गोमांसतुलया सह ।।१७।।
सप्तरात्रोषितैरेतैः सेकः कार्यो वनस्पतेः ।
वल्मीगुल्मलतानां च फलपुष्पाय सर्वदा ।।१८।।

माया—भेड़ और छाग (बकरा) की मैंगन (विष्ठा) को सूखाकर उसके दो आढ़क चूर्ण में तिल एक आढ़क, सत्तू एक प्रस्थ, जल एक द्रोण, गोमांस एक तुला आदि के मिश्रण को एक पात्र में सात रात्रि पर्यन्त रखना चाहिए, फिर उससे वृक्ष, गुल्म, लता आदि का सिंचन करने से उनमें फलों, फूलों आदि की अपेक्षित वृद्धि होती है।।१७-१८।।

बीजवपन प्रकार कथन

वासराणि दश दुग्धभावितं बीजमाज्ययुतहस्तयोजितम् ।
गोमयेन बहुशो विरूक्षितं क्रौडमार्गपिशितैश्च धूपितम् ।।१९।।
मांससूकरवसासमन्वितं रोपितं च परिकर्मितावनौ ।
क्षीरसंयुतजलावसेचितं जायते कुसुमयुक्तमेव तत् ।।२०।।

माया—किसी भी वृक्ष के बीज को घी के साथ हाथ में लेकर उससे मल-मल कर दूध में डाल दस दिन पर्यन्त रखना चाहिए। तदनन्तर उस भिगोयें बीज को गोबर से मल-मल कर सूखा कर सूकर और हिरण के मांस का धूपन देना चाहिए, फिर मांस और सूकर की वसा के साथ उन बीजों को उपरोक्त प्रकार से तिल बोईं और मर्दित भूमि में बोना चाहिए। तत्पश्चात् दुग्ध मिश्रित पानी से सिञ्चन करने से उचित समय पर उसमें फल व फूल निश्चय ही लगते हैं।।१९-२०।।

इमली के बीज को बोने का प्रकार

तिन्तिडीत्यपि करोति वल्लरीं व्रीहिमाषतिलचूर्णसक्तुभिः ।
पूतिमांससहितैश्च सेचिता धूपिता च सततं हरिद्रया ।।२१।।

माया—इमली के बीज को भी धान, उड़द तिल आदि के चूर्ण और और सत्तू को सड़े हुए मांस के साथ मिलाकर सिंचित या भिंगोकर हल्दी का धूपन देने से उस इमली के बीज में भी नवांकुर निकल आता है, तो अन्य बीजों का क्या कहना॥२१॥

कपित्थ बीजारोपण का प्रकार

कपित्थवल्लीकरणाय मूलान्यास्फोतधात्रीधववासिकानाम् ।
पलाशिनी वेतससूर्यवल्ली श्यामातिमुक्तैः सहिताष्टमूली ॥२२॥
क्षीरे शृते चाप्यनया सुशीते ताला शतं स्थाप्य कपित्थबीजम् ।
दिने दिने शोषितमर्कपादैर्मासं विधिस्त्वेष ततोऽधिरोप्यम् ॥२३॥
हस्तायतं तद्द्विगुणं गभीरं खात्वावटं प्रोक्तजलावपूर्णम् ।
शुष्कं प्रदग्धं मधुसर्पिषा तत् प्रलेपयेद् भस्मसमन्वितेन ॥२४॥
चूर्णीकृतैर्माषतिलैर्यवैश्च प्रपूरयेद् मृत्तिकयान्तरस्थैः ।
मत्स्यामिषाम्भस्सहितं च हन्याद्यावद् घनत्वं समुपागतं तत् ॥२५॥
उप्तं च बीजं चतुरङ्गुलाधो मत्स्याम्भसा मांसजलैश्च सिक्तम् ।
वल्ली भवत्याशु शुभप्रवाला विस्मापनी मण्डपमावृणोति ॥२६॥

माया—कपित्थ के बीज को अङ्कुरित करने हेतु विष्णुक्रान्ता, आँवला, धव, वासा आदि को उनके पत्रों सहित वेंत, सूर्यमुखी, निसोत और अतिमुक्तक; इन आठ बुटियों के मूलों को दूध में भींगोकर आँच पर खौला कर ठण्डा करते हुए उसमें कपित्थ के बीजों को डालना चाहिए। फिर सौ बार ताली बजाने में जितना समय लगता हो, उतने काल पश्चात् दूध से उन बीजों को निकाल कर धूप में सूखा देना चाहिए। इस तरह इस प्रक्रिया को नित्य एक मास तक करते रहने के बाद में उन बीजों को बोना चाहिए।

एक हाथ लम्बा, एक हाथ चौड़ा और दो हाथ गहरा गड्ढा खोदकर उसको पूर्वोक्तानुसार दूध मिश्रित जल से भरना चाहिए। उस गड्ढे को सूख जाने पर अग्नि से जलाना तथा उसके भस्म, घृत और शहद के मिश्रण से उसी गड्ढे का लेपन करना चाहिए। तत्पश्चात् मिट्टी के साथ उड़द, तिल और जौ के चूर्ण को मिलाकर उस गड्ढे को भरना और मत्स्यमांस युक्त जल से उस गड्ढे को ऊपर से तब तक ठोकना पीटना चाहिए, जब तक वह कठिन समतल न हो जाय। फिर उस समतल भूमि में चार अङ्गुल अन्दर पूर्ववत् सिद्ध कपित्थ के बीज का आरोपण कर मत्स्य और माँस के जल से उसे सिचिंत करना चाहिए। इस प्रकार मनोहर पत्रों से सम्पन्न मण्डप को ढँकने योग कपित्थ वल्ली उत्पन्न होती है॥२२-२६॥

अन्य वृक्षों के आरोपण प्रकार

शतशोऽङ्कोलसम्भूतफलकल्केन भावितम् ।
एतत्तैलेन वा बीजं श्लैष्मातकफलेन वा ।।२७।।
वापितं करकोन्मिश्रमृदि तत्क्षणजन्मकम् ।
फलभारान्विता शाखा भवतीति किमद्भुतम् ।।२८।।

माया—अङ्कोल वृक्ष के फल के कल्क (गुदा) या तेल अथवा श्लेष्मातक (लसौड़े) फल के कल्क या तेल से सौ बार भावना दिए हुए अथवा सिक्त किये हुए अपेक्षित बीजों को ओलों से भीगी हुई मिट्टी में समारोपित करने पर तत्क्षण उनमें अङ्कुर उत्पन्न हो जाते हैं, जो जल्दी ही वृक्ष रूप में प्रकट होता है और उसकी शाखाऐं फूलों व फलों के भार से झुक जाती हैं, इसमें कैसा आश्चर्य?।।२७-२८।।

श्लेष्मातक का आरोपण प्रकार कथन

श्लेष्मातकस्य बीजानि निष्कुलीकृत्य भावयेत् प्राज्ञः ।
अङ्कोलविज्जलाद्भिश्छायायां सप्तकृत्वैवम् ।।२९।।
माहिषगोमयघृष्टान्यस्य करीषे च तानि निक्षिप्य ।
करकाजलमृद्योगे न्युप्तान्यह्ना फलकराणि ।।३०।।

माया—बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि छिलका रहित श्लेष्मातक के बीज को अङ्कोल फल के अन्त:स्थ जल से भावना देकर छाया में सुखायें, इस तरह सात बार करना चाहिए। तत्पश्चात् महिष के गोबर में उसको घिसकर महिष के सूखे गोबर के ढ़ेर पर रखे, फिर ओलों से भीगी हुई मिट्टी में उन बीजों को आरोपित करने से एक ही दिन में श्लेष्मातक का वृक्ष फल के साथ उत्पन्न हो जाता है।।२९-३०।।

वृक्षारोपण के नक्षत्र कथन

ध्रुवमृदुमूलविशाखा गुरुभं श्रवणस्तथाश्विनी हस्तः ।
उक्तानि दिव्यदृग्भिः पादपसंरोपणे भानि ।।३१।।

माया—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मूल, विशाखा, पुष्य, श्रवण, अश्विनी, हस्त आदि नक्षत्र वृक्षारोपण हेतु सर्वप्रशस्त होता है, ऐसा दिव्य दृष्टि वाले मुनिजनों ने कहा है।।३१।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां वृक्षायुर्वेदोनाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।।५५।।

□□□

अथ षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५६

प्रासादलक्षणविचारः

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

कृत्वा प्रभूतं सलिलमारामान् विनिवेश्य च।
देवतायतनं कुर्याद् यशोधर्माभिवृद्धये ॥१॥

माया—बहुत जल से युक्त जलाशय का निर्माण कर तथा वृक्षवाटिका लगाकर अपने यश और धर्म की अभिवृद्धि के लिए देव-मन्दिर बनाना चाहिए॥१॥

देवालय बनवाने का महत्त्व प्रदर्शनार्थ कथन

इष्टापूर्तेन लभ्यन्ते ये लोकास्तान् बुभूषता।
देवानामालयः कार्यो द्वयमप्यत्र दृश्यते ॥२॥

माया—इष्ट कर्म अर्थात् यज्ञ, अनुष्ठान आदि करने तथा पूर्त कर्म अर्थात् वापी, कूप, तडाग आदि बनवाने से जिन उत्तम लोकों की प्राप्ति होती है; उन दोनों लोकों की आकांक्षा करने वाले जनों को देवालय का अवश्य निर्माण कराना चाहिए, क्योंकि इससे दोनों लोकों की प्राप्ति होती दिखती है॥२॥

देवता निवास स्थान का कथन

सलिलोद्यानयुक्तेषु कृतेष्वकृतकेषु च।
स्थानेष्वेतेषु सान्निध्यमुपगच्छन्ति देवताः ॥३॥

माया—उस स्थान पर देवता जाते या निवास करते हैं, जो स्थान जलाशय के समीप स्थित हो अथवा उपवन के समीप; चाहे वह कृत्रिम हो अथवा प्राकृतिक॥३॥

पुनः देवता निवास स्थान कथन

सरःसु नलिनीछत्रनिरस्तरविरश्मिषु।
हंसांसाक्षिप्तकह्लारवीथीविमलवारिषु ॥४॥
हंसकारण्डवक्रौञ्चचक्रवाकविराविषु।
पर्यन्तनिचुलच्छायाविश्रान्तजलचारिषु ॥५॥

माया—इस प्रकार के सरोवर में देवता सदा विराजते और विहार करते हैं, जिनमें कमल रूप छत्र से सूर्य किरण दूर किये गए हों; हंसों के कंधों से प्रेरित श्वेत मलों से बने हुए मार्गों में विमल या स्वच्छ जल हो; जिसमें हंस, कारण्डव, क्रौञ्च,

चक्रवाक आदि पक्षियों द्वारा शब्द किया जा रहा हो, तथा जिसके किनारे स्थित निचुल वृक्षों की छाया में जल जन्तु भी विश्राम करते हों॥४-५॥

और भी देवता निवास कथन

क्रौञ्चकाञ्चीकलापाश्च कलहंसकलस्वराः ।
नद्यस्तोयांशुका यत्र शफरीकृतमेखलाः ॥६॥
फुल्लतीरद्रुमोत्तंसाः सङ्गमश्रोणिमण्डलाः ।
पुलिनाभ्युन्नतोरस्या हंसवासाश्च निम्नगाः ॥७॥

माया—क्रौंच पक्षी की तरह जिनका कांची कलाप; कलहंसों की तरह जिनका मधुर स्वर रूप स्वर; जल ही जिनका वस्त्र है; मत्स्य जिनका मेखला है; किनारे स्थित पुष्प सम्पन्न वृक्ष जिनका कर्णपूर है; जल और स्थल के संगम रूप जिनका श्रोणिमण्डल; पुलिन की तरह जिनके उठे स्तन तथा हंस ही जिनका हास्य है, इस प्रकार की नीचे की ओर बहने वाली नदियों के समीपवर्ति स्थानों में देवता निवास और विहार करते हैं॥६-७॥

और भी देवता निवास स्थान कथन

वनोपान्तनदीशैलनिर्झरोपान्तभूमिषु ।
रमन्ते देवता नित्यं पुरेषूद्यानवत्सु च ॥८॥

माया—वन, नदी, पर्वत और झरनों के निकटवर्ति स्थानों तथा वाटिकाओं से सुसम्पन्न नगरों में देवता सदा निवास और विहार करते हैं॥८॥

देवतालय के योग्य भूमि कथन

भूमयो ब्राह्मणादीनां याः प्रोक्ता वास्तुकर्मणि ।
ता एव तेषां शस्यन्ते देवतायतनेष्वपि ॥९॥

माया—वास्तु विचार के प्रसङ्ग में ब्राह्मण आदि चातुर्वर्णो के लिए जैसी भूमि शुभ कही गई है, देवालय निर्माणार्थ उन वर्णों के लिए भी तत्तद् भूमि को प्रशस्त कहा गया है॥९॥

देवतालय में वास्तुपुरुष लक्षण और द्वार विभाग कथन

चतुःषष्टिपदं कार्यं देवतायतनं सदा ।
द्वारं च मध्यमं तस्मिन् समदिक्स्थं प्रशस्यते ॥१०॥

माया—देवतालय के लिए सदा ही पूर्वोक्त वास्तुविचार का चौंसठ पद का वास्तु बनाना चाहिए और उसमें मध्यम द्वार सभी दिशाओं में स्थित होना, प्रशस्त माना गया है॥१०॥

देवतालय का विधान कथन

यो विस्तारो भवेद् यस्य द्विगुणा तत्समुन्नतिः ।
उच्छ्रायाद् यस्तृतीयांशस्तेन तुल्या कटिः स्मृता ।।११।।
विस्तारार्धं भवेद् गर्भो भित्तयोऽन्याः समन्ततः ।
गर्भपादेन विस्तीर्णं द्वारं द्विगुणमुच्छ्रितम् ।।१२।।
उच्छ्रायात् पादविस्तीर्णा शाखा तद्वदुदुम्बरः ।
विस्तारपादप्रतिमं बाहुल्यं शाखयोः स्मृतम् ।।१३।।
त्रिपञ्चसप्तनवभिः शाखाभिस्तत् प्रशस्यते ।
अधः शाखाचतुर्भागे प्रतीहारौ निवेशयेत् ।।१४।।
शेषं मङ्गल्यविहगैः श्रीवृक्षैः स्वस्तिकैर्घटैः ।
मिथुनैः पत्रवल्लीभिः प्रमथैश्चोपशोभयेत् ।।१५।।
द्वारमानाष्टभागोना प्रतिमा स्यात् सपिण्डिका ।
द्वौ भागौ प्रतिमा तत्र तृतीयांशश्च पिण्डिका ।।१६।।

माया—देवतालय के विस्तार से दोगुनी उसकी ऊँचाई तथा ऊँचाई का तृतीयांश कटि भाग होता है। देवतालय का कटिभाग वह है, जिस स्थान से सीढ़ी के ऊपर उस का प्रारम्भ किया जाता है। विस्तार का अर्द्धांश गर्भ और शेष सभी दिशाओं में भीत होती है। गर्भ के चतुर्थांश तुल्य द्वार का विस्तार तथा उसका द्विगुणित तुल्य द्वार की ऊँचाई होती है। उस द्वार की ऊँचाई के समान प्रमाण का उसका शाखा अर्थात् चौखट का लम्बवत् किनारा और उदुम्बर अर्थात् चौखट के ऊपर की लकड़ी की चौड़ाई होती है। यहाँ पर शाखा के चतुर्थांश का चतुर्थांश के समान शाखाओं की मोटाई ली जाती है। शाखाओं की चौड़ाई के बीच में तीन, पाँच, सात अथवा नौ शाखायें होने से द्वार उत्तम होता है। शाखद्वय के नीचे के चतुर्थांश में दो प्रतिहार अर्थात् नन्दी, दण्ड आदि की मूर्त्तियाँ खुदवानी चाहिए। शाखाओं के तीन चतुर्थांश भागों को हंस आदि शुभपक्षी, बेल, स्वस्तिक, कलश, पुरुषस्त्री का जोड़ा, पत्रों और लताओं से सुन्दर बनाने चाहिए। द्वार की ऊँचाई में उसका अठवाँ भाग छोड़कर जितना शेष हो, उतने की पिण्डिका अर्थात् देवता स्थापन की पीठिका होती है, जिसको लेकर देवमूर्त्ति की ऊँचाई होती है। पिण्डिका से मूर्त्ति की ऊँचाई के तीन भागों में से दो भाग के समतुल्य ऊँची मूर्त्ति तथा एक भाग के समतुल्य पिण्डिका बनानी चाहिए। इस प्रकार का प्रमाण सभी वर्णों के देवतालय के लिए जानना चाहिए।।११-१६।।

प्रासादों का नाम कथन

मेरुमन्दरकैलासविमानच्छन्दनन्दनाः ।
समुद्गपद्मगरुडनन्दिवर्धनकुञ्जराः ॥१७॥
गुहराजो वृषो हंसः सर्वतोभद्रको घटः ।
सिंहो वृत्तश्चतुष्कोणः षोडशाष्टाश्रयस्तथा ॥१८॥
इत्येते विंशतिः प्रोक्ताः प्रासादाः संज्ञया मया ।
यथोक्तानुक्रमेणैव लक्षणानि वदाम्यतः ॥१९॥

माया—मेरु, मन्दर, कैलास, विमानच्छंद, नन्दन, समुद्गा, पद्म, गरुड, नन्दिवर्धन, कुञ्जर, गुहराज, वृष, हंस, सर्वतोभद्र, घट, सिंह, वृत्त, चतुष्कोण, षोडशाश्रि, अष्टाश्रि आदि कुल बीस प्रासादों के नाम मैं (ग्रन्थकार) ने कहा है, आगे क्रमशः उनके लक्षणों को कहा जा रहा है॥१७-१९॥

मेरु संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

तत्र षडश्रिर्मेरुर्द्वादशभौमो विचित्रकुहरश्च ।
द्वारैर्युतश्चतुर्भिर्द्वात्रिंशद्धस्तविस्तीर्णः ॥२०॥

माया—मेरु संज्ञक प्रासाद षट्कोणाकार होता है। उसमें बारह भूमिका (मञ्जिल) और वह अनेक प्रकार के गवाक्षों या खिड़कियों से युक्त होता है। उसके चारों दिशाओं में चार द्वार होते हैं तथा उसका विस्तार बत्तीस हाथ प्रमाण का होता है॥२०॥

मन्दर और कैलाश संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

त्रिंशद्धस्तायामो दशभौमो मन्दरः शिखरयुक्तः ।
कैलासोऽपि शिखरवानष्टाविंशोऽष्टभौमश्च ॥२१॥

माया—मन्दर संज्ञक प्रासाद भी षट्कोणाकार होने के साथ तीस हाथ प्रमाण तुल्य विस्तार वाला, दस भूमिका (खण्ड) से युक्त और शिखरों वाला होता है।

कैलाश संज्ञक प्रासाद में षट्कोण तो होता है, लेकिन वह अट्ठाईस हाथ प्रमाण तुल्य विस्तार और आठ भूमिका के साथ शिखरों से युक्त होता है॥२१॥

विमानच्छंद व नन्दन संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

जालगवाक्षकयुक्तो विमानसंज्ञस्त्रिसप्तकायामः ।
नन्दन इति षड्भौमो द्वात्रिंशः षोडशाण्डयुतः ॥२२॥

माया—विमानच्छंद नाम के प्रसाद में जालीयुक्त खिड़कियाँ, ईक्कीस हाथ विस्तार, आठ भूमिका और छः कोण उपलब्ध होता है।

नन्दन नामक प्रासाद छः कोण, छः भूमिका, बत्तीस हाथ विस्तार तथा सोलह अण्डों अर्थात् शिखरों वाला होता है॥२२॥

समुद्र और पद्म संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

वृत्तः समुद्रनामा पद्मः पद्माकृतिः शया अष्टौ।
शृङ्गेणैकेन भवेदेकैव च भूमिका तस्य॥२३॥

माया—समुद्ग संज्ञक प्रासाद वृत्ताकार और पद्म संज्ञक प्रासाद पद्म (कमल) की आकृति वाला होता है। ये दोनों आठ हाथ विस्तार वाले; एक-एक शृङ्ग से युक्त तथा एक ही भूमिका वाले होते हैं॥२३॥

गरुड़ और नन्दिवर्धन संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

गरुडाकृतिश्च गरुडो नन्दीति च षट्चतुष्कविस्तीर्णः।
कार्यस्तु सप्तभौमो विभूषितोऽण्डैस्तु विंशत्या॥२४॥

माया—गरुड़ संज्ञक प्रासाद गरुड़ की आकृति का होता है। नन्दिवर्धन संज्ञक प्रासाद भी तदनुरूप होता है, लेकिन यहाँ गरुड़ की आकृति में पंख तथा पूँछ का अभाव होता है। इन दोनों प्रासाद का विस्तार चौबीस हाथ होता है। इनमें सात भूमिका और बीस शिखरें भी शोभायमान होते हैं॥२४॥

कुञ्जर व गुहराज संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

कुञ्जर इति गजपृष्ठः षोडशहस्तः समन्ततो मूलात्।
गुहराजः षोडशकस्त्रिचन्द्रशाला भवेद् वलभी॥२५॥

माया—कुञ्जर नामक प्रासाद गजपृष्ठ के समान स्वरूप वाला तथा मूल से चारों ओर सोलह हाथ विस्तार वाला भी होता है।

वृष, हंस और घट संज्ञक प्रासादों का लक्षण कथन

वृष एकभूमिश्रृङ्गो द्वादशहस्तः समन्ततो वृत्तः।
हंसो हंसाकारो घटोऽष्टहस्तः कलशरूपः॥२६॥

माया—वृष संज्ञक प्रासाद एक भूमिका, एक शृङ्ग, बारह हाथ विस्तार तथा चारों ओर से वृत्ताकृति वाला होता है।

हंस नाम का प्रासाद हंस पक्षी की अनुकृति वाला, बारह हाथ विस्तार वाला, एक भूमिका तथा एक शृङ्ग वाला होता है।

घट नाम का प्रासाद कलशानुकृति वाला, आठ हाथ का विस्तार वाला, एक शृङ्ग और एक भूमिका से युक्त होता है॥२६॥

सर्वतोभद्र संज्ञक प्रासाद लक्षण कथन

द्वारैर्युतश्चतुर्भिर्बहुशिखरो भवति सर्वतोभद्रः।
बहुरुचिरचन्द्रशालः षड्विंशः पञ्चभौमश्च ॥२७॥

भाषा—सर्वतोभद्र नाम के प्रासाद अनेक शिखरों से सम्पन्न, बहुत-से मनोरम चन्द्रशालाओं से युक्त, चार दिशाओं में प्रत्येक में एक-एक द्वार अर्थात् चार द्वारों से युक्त होता है और उसका विस्तार छब्बीस हाथ होता है। उसमें चार कोण के साथ-साथ पाँच भूमिकायें भी होती हैं॥२७॥

सिंह आदि प्रासादों के लक्षण कथन

सिंहः सिंहाक्रान्तो द्वादशकोणोऽष्टहस्तविस्तीर्णः।
चत्वारोऽञ्जनरूपाः पञ्चाण्डयुतस्तु चतुरस्रः ॥२८॥

भाषा—सिंह की अनुकृतियों से शोभायमान सिंह संज्ञक प्रासाद होता है। इसमें बारह कोण के साथ-साथ आठ हाथ का विस्तार भी होता है। शेष वृत्त, चतुष्कोण, षोडशाश्रि, अष्टाश्रि आदि प्रासाद अपने नाम तुल्य अनुकृति होने के साथ-साथ कृष्णवर्ण के होते हैं, कहने का तात्पर्य यह है कि इन प्रासादों के आन्तरिक भाग में अन्धकार होता है॥२८॥

मय और विश्वकर्मा के अनुसार भूमिका प्रमाण कथन

भूमिकाङ्गुलमानेन मयस्याष्टोत्तरं शतम्।
सार्द्धं हस्तत्रयं चैव कथितं विश्वकर्मणा ॥२९॥

भाषा—अङ्गुल प्रमाण से भूमिका १०८ अङ्गुल का होना चाहिए, ऐसा मय के मत से जानना चाहिए, लेकिन विश्वकर्मा के मत से साढ़े तीन हाथ होता है॥२९॥

उपरोक्त मतों की एक वाक्यता कथन

प्राहुः स्थपतयश्चात्र मतमेकं विपश्चितः।
कपोतपालिसंयुक्ता न्यूना गच्छन्ति तुल्यताम् ॥३०॥

भाषा—विद्वान् राजमिस्त्री मय और विश्वकर्मा के मतों को पृथक्-पृथक् नहीं मानकर एक-ही मानते हैं; क्योंकि विश्वकर्मा ने भूमिका का प्रमाण कपोतपालिका को वर्जित कर कहा है। इस प्रकार मय मत के अनुकूल प्रमाण में से कपोतपालिका के चौबीस अङ्गुल प्रमाण निकाल देने से विश्वकर्मा मत के तुल्य मय का मत प्रमाण भी हो जाता है॥३०॥

अध्यायोपसंहारार्थ कथन

प्रासादलक्षणमिदं कथितं समासाद्
गर्गेण यद्विरचितं तदिहास्ति सर्वम् ।
मन्वादिभिर्विरचितानि पृथूनि यानि
तत्संस्पृशन् प्रति मयात्र कृतोऽधिकारः ।।३१।।

माया—मैं (ग्रन्थकार) ने सारांश रूप में इस प्रासाद लक्षण को प्रस्तुत किया है। फिर भी गर्ग मुनि सम्बन्धी इन विषयों के समस्त प्रसङ्गों को यहाँ कहा गया है। वैसे मनु आदि मुनियों ने जो कुछ इस प्रसङ्ग में विस्तार से कहा है, उन्हें स्मरण कराने हेतु भी मैंने यह अध्याय कहा है।।३१।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां प्रासादलक्षण नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।।५६।।

□□□

अथ सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५७

वज्रलेपलक्षणविचारः

सर्वप्रथम वज्रलेप तैयार करने का प्रथम प्रकार

आमं तिन्दुकमामं कपित्थकं पुष्पमपि च शाल्मल्याः।
बीजानि शल्लकीनां धन्वनवल्को वचा चेति ॥१॥
एतैः सलिलद्रोणः क्वाथयितव्योऽष्टभागशेषश्च।
अवतार्योऽस्य च कल्को द्रव्यैरेतैः समनुयोज्यः ॥२॥
श्रीवासकरसगुग्गुलुभल्लातककुन्दुरूकसर्जरसैः।
अतसीबिल्वैश्च युतः कल्कोऽयं वज्रलेपाख्यः ॥३॥

माया—तिन्दु और कपित्य का कच्चा फल, शाल्मलि का पुष्प, शल्लकी का बीज, धन्वन् वृक्ष की छाल, वच आदि को एक द्रोण जल में डालकर तब तक आँच देना चाहए, जब तक उस क्वाथ का आठवाँ भाग अवशिष्ट नहीं रह जाय, फिर उसको आँच से उतार कर उस क्वाथ में श्रीवासक वृक्ष का गोंद, रस (बोल), गुग्गुल, भल्लातक, कुन्दुरु (देवदारु) वृक्ष का गोंद, सर्जरस (संखुआ) का गोंद, अतसी, बेल का फल आदि का चूर्ण बनाकर या उन्हें पीसकर मिलाने से यह वज्रलेप संज्ञक काढ़ा-सा हो जाता है॥१-३॥

वज्रलेप की विशेषता

प्रासादहर्म्यवलभीलिङ्गप्रतिमासु कुड्यकूपेषु।
सन्तप्तो दातव्यो वर्षसहस्रायुतस्थायी ॥४॥

माया—वज्रलेप को तप्तावस्था में देवप्रासाद, महल, वलभी, शिवलिङ्ग, देवमूर्ति, भीत, कुँआ आदि के निर्माण कार्य में जोड़ने के काम में उपयोग करना चाहिए। इस प्रकार का जोड़ करोड़ वर्ष पर्यन्त भी स्थायी रहता है॥४॥

वज्रलेप तैयार करने का एक अन्य प्रकार कथन

लाक्षाकुन्दुरुगुग्गुलुगृहधूमकपित्थबिल्वमध्यानि।
नागफलनिम्बतिन्दुकमदनफलमधूकमञ्जिष्ठाः ॥५॥
सर्जरसरसामलकानि चेति कल्कः कृतो द्वितीयोऽयम्।
वज्राख्यः प्रथमगुणैरयमपि तेष्वेव कार्येषु ॥६॥

माया—उपरोक्त प्रकार से क्वाथ तैयार करने के बाद उसमें लाख, कुन्दुरुक का गोंद, गुग्गुल, रसोई के धुऐं से बनी जाला, कपित्थ फल, बेल फल, नागवाला का

फल, महुआ फल, मजीठ, राल, बोल, आँवला आदि का चूर्ण बनाकर या पीसकर डालने से प्रथम वज्रलेप के गुणों से युक्त उपरोक्त प्रयोजन के लिए यह दूसरा वज्रलेप तैयार हो जाता है।।५-६।।

वज्रलेप तैयार करने का प्रकार कथन

गोमहिषाजविषाणैः खररोम्णा महिषचर्मगव्यैश्च ।
निम्बकपित्थरसैः सह वज्रतलो नाम कल्कोऽन्यः ।।७।।

माया—उपरोक्त क्वाथ में गाय, भैंस, बकरा आदि का सिंग, गधा का बाल, भैंस का चर्म, गाय का गोबर, नीमफल, कपित्थफल, बोल आदि का चूर्ण बनाकर या उसे पीसकर मिलाने से पूर्वोक्त विशेषताओं से युक्त उपरोक्त प्रयोजनों के लिए उपयोगी तृतीय लेप होता है, जिसे वज्रतल कहा गया है।।७।।

वज्रसंघात तैयार करने का प्रकार कथन

अष्टौ सीसकभागाः कांसस्य द्वौ तु रीतिकाभागः ।
मयकथितो योगोऽयं विज्ञेयो वज्रसङ्घातः ।।८।।

माया—जितना लेप तैयार करना हो, उसका अष्टमांश सीसा, दो भाग कासा एक भाग पीतल आदि को एकत्रित आँच पर देकर गलाने से मयोक्त वज्रसंघात संज्ञक चतुर्थ लेप होता है।।८।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां वज्रलेपलक्षण नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।।५७।।

□□□

अथाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः-५८

प्रतिमालक्षणविचारः

सर्वप्रथम परमाणु-प्रमाण कथन

जालान्तरगे भानौ यदणुतरं दर्शनं रजो याति।
तद्विन्द्यात् परमाणुं प्रथमं तद्धि प्रमाणानाम्॥१॥

भाषा—जालान्तर में प्रवेश करने वाला सूर्य किरण और उसमें दीखने वाला जो धूलकण, उसे परमाणु समझना चाहिए। यह सभी प्रमाणों में प्रथम प्रमाण है॥१॥

परमाणु प्रमाण में और भी कथन

परमाणुरजो बालाग्रलिक्षयूकं यवोऽङ्गुलं चेति।
अष्टगुणानि यथोत्तरमङ्गुलमेकं भवति संख्या॥२॥

भाषा—आठ परमाणु एक रज, आठ रज का एक बालाग्र, आठ बालाग्र की एक लिक्षा, आठ लिक्षा का एक यूक, आठ यूक का एक यव तथा आठ यव का एक अङ्गुल और एक अङ्गुल की संख्या होती है॥२॥

सभी प्रतिमाओं का प्रमाण कथन

देवागारद्वारस्याष्टांशोनस्य यस्तृतीयोंऽशः।
तत्पिण्डिकाप्रमाणं प्रतिमा तद्द्विगुणपरिमाणा॥३॥

भाषा—देवतालय के द्वार का आठवाँ भाग कम ऊँचाई का तृतीय भाग के समान पिण्डिका और पिण्डिका का दोगुना प्रतिमा करनी चाहिए॥३॥

प्रतिमा के अवयव प्रमाण का कथन

स्वैरङ्गुलप्रमाणैर्द्वादश विस्तीर्णमायतं च मुखम्।
नग्नजिता तु चतुर्दश दैर्घ्येण द्राविडं कथितम्॥४॥

भाषा—प्रतिमा की ऊँचाई के द्वादशांश के प्रत्येक भाग का पृथक्-पृथक् नवमांश करने से प्रत्येक लघुभाग एक-एक अङ्गुल का हो जाता है। चूँकि सभी प्रतिमा अपने-अपने अङ्गुल प्रमाण से एक सौ आठ अङ्गुल प्रमाण की होती है। अपने अङ्गुल प्रमाण से प्रतिमा का मुख द्वादश अङ्गुल चौड़ा और चतुर्दश अङ्गुल लम्बा बनाया जाना चाहिए। इस प्रकार का मान द्रविड़ों ने माना है॥४॥

पुनः प्रतिमा अवयव प्रमाण कथन

नासाललाटचिबुकग्रीवाश्चतुराङ्गुलास्तथा कर्णौ।
द्वे अङ्गुले च हनुनी चिबुकं च द्व्यङ्गुलं विततम्॥५॥

माया—इस तरह प्रतिमा की नासिका, ललाट, चिबुक (ठोड़ी) गर्दन और कान में से प्रत्येक चार अङ्गुल और हनु के साथ चिबुक का विस्तार दो-दो अङ्गुल करना चाहिए॥५॥

पुनरपि प्रतिमा अवयव प्रमाण कथन

अष्टाङ्गुलं ललाटं विस्ताराद् द्वयङ्गुलात् परे शङ्खौ।
चतुरङ्गुलौ तु शङ्खौ कर्णौ तु द्वयङ्गुलौ पृथुलौ॥६॥

माया—मस्तक की चौड़ाई आठ अङ्गुल, दोनों कनपट्टी की चौड़ाई दो-दो अङ्गुल और उसकी लम्बाई चार-चार अङ्गुल तथा कानों की लम्बाई दो-दो अङ्गुल बनाना चाहिए॥६॥

और भी प्रतिमा अवयव प्रमाण कथन

कर्णोपान्तः कार्योऽर्धपञ्चमे भ्रूसमेन सूत्रेण।
कर्णस्रोतः सुकुमारकं च नेत्रप्रबन्धसमम्॥७॥

माया—नेत्रान्त भाग से भ्रू के समान्तर सूत्र में साढ़े चार अङ्गुल पर कर्णाग्र तथा कर्णस्रोत और सुकुमारक अर्थात् कर्ण स्रोत के समीप का उन्नत भाग को नेत्र प्रबन्ध के समान बनाने चाहिए॥७॥

वशिष्ठोक्त प्रतिमा रचना प्रकार कथन

चतुरङ्गुलं वसिष्ठः कथयति नेत्रान्तकर्णयोर्विवरम्।
अधरोऽङ्गुलप्रमाणस्तस्यार्धेनोत्तरोष्ठश्च ॥८॥

माया—मुनि वशिष्ठ के अनुसार आँख से कान की दूरी चार अङ्गुल, अधरोष्ठ एक अङ्गुल, ऊर्ध्वोष्ठ आधा अङ्गुल प्रमाण का करना चाहिए॥८॥

और भी अन्य कथन

अर्धाङ्गुला तु गोच्छा वक्त्रं चतुरङ्गुलायतं कार्यम्।
विपुलं तु सार्धमङ्गुलमव्यात्तं त्र्यङ्गुलं व्यात्तम्॥९॥

माया—अङ्गुलार्द्ध गोच्छा का विस्तार तथा चार अङ्गुल मुख का दैर्ध्य बनाना चाहिए। इसी तरह डेढ़ अङ्गुल अव्यात्त अर्थात् अविस्तृत मुख तथा तीन अङ्गुल व्यात्त (विस्तृत) मुख का विस्तार बनाना चाहिए॥९॥

और भी अन्य कथन

द्वयङ्गुलतुल्यौ नासापुटौ च नासा पुटाग्रतो ज्ञेया।
स्याद् द्वयङ्गुलमुच्छ्रायश्चतुरङ्गुलमन्तरं चाक्ष्णोः॥१०॥

माया—नासिका के दोनों पुट दो-दो अङ्गुल, पुटों के अग्र स्थान से नाक चार

अङ्गुल, उसकी ऊँचाई दो अङ्गुल तथा दोनों नेत्रों का अन्तर चार अङ्गुल बनाना चाहिए॥१०॥

और भी अन्यान्य कथन

द्व्यङ्गुलमितोऽक्षिकोशो द्वे नेत्रे तत्त्रिभागिका तारा।
दृक्तारा पञ्चांशो नेत्रविकाशोऽङ्गुलं भवति ॥११॥

माया—नेत्र कोश दो-दो अङ्गुल, नेत्र का तृतीय भाग समतारा, नेत्र प्रमाण के पाँचवाँ भाग के समान दृष्टि तारा अर्थात् नेत्र और तारा के मध्य भाग तथा नेत्र का विकाश एक अङ्गुल होता है॥११॥

और भी अन्यान्य कथन

पर्यन्तात् पर्यन्तं दश भ्रुवोऽर्धाङ्गुलं भ्रुवोर्लेखा।
भ्रूमध्यं द्व्यङ्गुलकं भ्रूर्दैर्घ्येणाङ्गुलचतुष्कम् ॥१२॥

माया—एक भौं के प्रान्त भाग से अन्य भौं के प्रान्त भाग तक दश अङ्गुल, आधा अङ्गुल भौं की चौड़ाई, दो अङ्गुल भौं का मध्य भाग तथा चार अङ्गुल की प्रत्येक भौं की लम्बाई होनी चाहिए॥१२॥

और भी अन्यान्य कथन

कार्या तु केशरेखा भ्रूबन्धसमाङ्गुलार्धविस्तीर्णा।
नेत्रान्ते करवीरकमुपन्यसेदङ्गुलप्रमितम् ॥१३॥

माया—मस्तक के ऊपर केश रेखा भ्रू बन्ध के समान करना चाहिए और आधा अङ्गुल केश रेखा की चौड़ाई रखना चाहिए। नेत्रान्त में करवीरक एक अङ्गुल का देना चाहिए॥१३॥

और भी अन्यान्य कथन

द्वात्रिंशत् परिणाहाच्चतुर्दशायामतोऽङ्गुलानि शिरः।
द्वादश तु चित्रकर्मणि दृश्यन्ते विंशतिरदृश्याः ॥१४॥

माया—शिर की लम्बाई बत्तीस अङ्गुल और चौड़ाई चौदह अङ्गुल बनानी चाहिए। चित्र के रूप में मात्र द्वादश अङ्गुल शिर दृष्ट होता है, अवशिष्ट बीस अङ्गुल पृष्ठ भाग अदृष्ट रहता है॥१४॥

नग्नजित् के अनुसार प्रतिमा निर्माण प्रकार कथन

आस्यं सकेशनिचयं षोडश दैर्घ्येण नग्नजित्प्रोक्तम्।
ग्रीवा दश विस्तीर्णा परिणाहाद्विंशतिः सैका ॥१५॥

माया—नग्नजित् के अनुसार प्रतिमा बनाने के समय केश रेखा के साथ मुख

का विस्तार सोलह अङ्गुल, गर्दन का विस्तार दश अङ्गुल तथा उसकी लम्बाई इक्कीस अङ्गुल रखनी चाहिए।।१५।।

और भी अन्यान्य कथन

कण्ठाद् द्वादश हृदयं हृदयान्नाभी च तत्प्रमाणेन।
नाभीमध्याद् मेढ्रान्तरं च तत्तुल्यमेवोक्तम् ।।१६।।

माया—कण्ठ के नीचे के भाग से हृदय पर्यन्त, हृदय से नाभि पर्यन्त तथा नाभिमध्य से लिङ्ग मध्य पर्यन्त द्वादश अङ्गुल का अन्तर रखने के लिए कहा गया है।।१६।।

और भी अन्यान्य कथन

ऊरू चाङ्गुलमानैश्चतुर्युता विंशतिस्तथा जंङ्घे।
जानुकपिच्छे चतुरङ्गुले च पादौ च तत्तुल्यौ ।।१७।।

माया—ऊरु अर्थात् घुटना से ऊपर का भाग तथा जंघा चौबीस-चौबीस अङ्गुल, जानु अर्थात् घुटना कपिच्छ चार-चार अङ्गुल तथा पैर के गांठ से नीचे पर्यन्त भी चार-चार अङ्गुल रखना चाहिए।।१७।।

और भी अन्यान्य कथन

द्वादशदीर्घौ षट् पृथुतया च पादौ त्रिकायताङ्गुष्ठौ।
पञ्चाङ्गुलपरिणाहौ प्रदेशिनी त्र्यङ्गुलं दीर्घा ।।१८।।

माया—पैर की लम्बाई द्वादश अङ्गुल और चौड़ाई छः अङ्गुल, पैरों में अङ्गुष्ठ की लम्बाई तीन अङ्गुल तथा पैरों की प्रदेशिनी अर्थात् अङ्गुष्ठ के पास की अङ्गुली की लम्बाई तीन अङ्गुल बनानी चाहिए।।१८।।

और भी अन्यान्य कथन

अष्टांशाष्टांशोनाः शेषाङ्गुल्यः क्रमेण कर्तव्याः।
सचतुर्थभागमङ्गुलमुत्सेधोऽङ्गुष्ठकस्योक्तः ।।१९।।

माया—पैर की प्रदेशिनी से आठवाँ-आठवाँ भाग कम करते हुए क्रमशः अन्य तीन अङ्गुलियों का निर्माण करना चाहिए। अङ्गुष्ठ की ऊचाँई सवा अङ्गुल तथा अन्य अङ्गुलियों की ऊँचाई अनुपात से कम-कम करते हुए बनानी चाहिए।।१९।।

और भी अन्यान्य कथन

अङ्गुष्ठनखः कथितश्चतुर्थभागोनमङ्गुलं तज्ज्ञैः।
शेषनखानामर्धाङ्गुलं क्रमात् किञ्चिदूनं वा ।।२०।।

माया—प्रतिमा के लक्षणों के जानकारों ने अङ्गुष्ठ नख को तीन चौथाई अङ्गुल

लम्बा तथा अन्य अङ्गुलियों के नखों को आधा अङ्गुल अर्थात् कुछ कम-कम कर बनाने चाहिए, जो सौन्दर्य को प्रकट करे॥२०॥

और भी अन्यान्य कथन

जङ्घाग्रे परिणाहश्चतुर्दशोक्तस्तु विस्तरात् पञ्च।
मध्ये तु सप्त विपुला परिणाहात् त्रिगुणिताः सप्त॥२१॥

माया—जंघा के अग्र भाग चतुर्दश अङ्गुल मोटा और पाँच अङ्गुल विस्तार वाला तथा उसका मध्य भाग आठ अङ्गुल विस्तार वाला और इक्कीस अङ्गुल मोटा होना चाहिए॥२१॥

और भी अन्यान्य कथन

अष्टौ तु जानुमध्ये वैपुल्यं त्र्यष्टकं तु परिणाहः।
विपुलौ चतुर्दशोरू मध्ये द्विगुणश्च तत्परिधिः॥२२॥

माया—जानु मध्य आठ अङ्गुल विस्तार वाला और चौबीस अङ्गुल मोटा तथा ऊरु मध्य चौदह अङ्गुल विस्तार वाला और अट्ठाईस अङ्गुल मोटा करना चाहिए॥२२॥

और भी अन्यान्य कथन

कटिरष्टादश विपुला चत्वारिंशच्चतुर्युता परिधौ।
अङ्गुलमेकं नाभी वेधेन तथा प्रमाणेन॥२३॥

माया—कटि भाग अट्ठारह अङ्गुल चौड़ा चवालिस अङ्गुल उसकी परिधि बनानी चाहिए तथा नाभि प्रदेश का विस्तार एक अङ्गुल वेध और प्रमाण से लेना चाहिए॥२३॥

और भी अन्यान्य कथन

चत्वारिंशद्द्वियुता नाभीमध्येन मध्यपरिणाहः।
स्तनयोः षोडश चान्तरमूर्ध्वं कक्ष्ये षडङ्गुलिके॥२४॥

माया—नाभि मध्य से उसकी बयालिस अङ्गुल मोटाई होती है। दोनों स्तनों के मध्य की दूरी सोलह अङ्गुल और स्तनों के ऊपर से बगल में छः-छः अङ्गुल के काँख होते हैं॥२४॥

और भी अन्यान्य कथन

अष्टावंसौ द्वादश बाहू कार्यौ तथा प्रबाहू च।
बाहू षड्विस्तीर्णौ प्रतिबाहू त्वङ्गुलचतुष्कम्॥२५॥

माया—कन्धों की लम्बाई गर्दन से आठ अङ्गुल और दोनों बाहु बारह-बारह अङ्गुल लम्बे तथा प्रबाहु भी बनानी चाहिए, जहाँ बाहु छः अङ्गुल विस्तार वाले और प्रबाहु चार अङ्गुल विस्तार वाले करने चाहिए॥२५॥

और भी अन्यान्य कथन

षोडश बाहू मूले परिणाहाद् द्वादशाग्रहस्ते च।
विस्तारेण करतलं षडङ्गुलं सप्त दैर्घ्येण ॥२६॥

माया—सोलह अङ्गुल मोटा बाहुमूल, बारह अङ्गुल मोटा प्रकोष्ठ, छः अङ्गुल चौड़ाई वाला करतल और उसकी लम्बाई सात अङ्गुल करनी चाहिए॥२६॥

और भी अन्यान्य कथन

पञ्चाङ्गुलानि मध्या प्रदेशिनी मध्यपर्वदलहीना।
अनया तुल्या चानामिका कनिष्ठा तु पर्वोना ॥२७॥

माया—अङ्गुष्ठ के पास की अङ्गुली प्रदेशिनी, उसके बाद की मध्यमा, उसके बाद की अनामिका और उसके आगे की कनिष्ठा अङ्गुली होती है। तथा प्रत्येक अङ्गुली में तीन पौरें होते हैं। वहाँ मध्यमा की लम्बाई पाँच अङ्गुल, मध्यमा के बीच के पौर को घटाकर प्रदेशिनी की लम्बाई हो जाती है। उसी के समान अनामिका भी होती है तथा अनामिका के एक पौर हीन करने से कनिष्ठा अङ्गुली की लम्बाई हो जाती है॥२७॥

और भी अन्यान्य कथन

पर्वद्वयमङ्गुष्ठः शेषाङ्गुल्यस्त्रिभिस्त्रिभिः कार्याः।
नखपरिमाणं कार्यं सर्वासां पर्वणोऽर्धेन ॥२८॥

माया—अङ्गुष्ठ में दो पौर तथा अन्य चार अङ्गुलियों में तीन-तीन पौर (पर्व) बनाने चाहिए। प्रत्येक अङ्गुली के पर्व के आधे परिमाण का उस-उस अङ्गुली का नख बनाने चाहिए॥२८॥

प्रतिमा स्वरूप प्रदर्शनार्थ कथन

देशानुरूपभूषणवेषालङ्कारमूर्तिभिः कार्या।
प्रतिमा लक्षणयुक्ता सन्निहिता वृद्धिदा भवति ॥२९॥

माया—अपने-अपने देशाचार के अनुसार प्रतिमा के आभूषण, वेष, अलंकार के साथ उसका शरीर बनाने चाहिए; क्योंकि शुभ लक्षण सम्पन्न प्रतिमा में देवता की स्थिति होती है, जो उसको बनाने वाले का सदा सब प्रकार से कल्याण करने वाला होता है॥२९॥

प्रतिमा का विशेष लक्षण कथन

दशरथतनयो रामो बलिश्च वैरोचनिः शतं विंशम्।
द्वादशहान्या शेषाः प्रवरसमन्यूनपरिमाणाः ॥३०॥

भाषा—दशरथ पुत्र राम और विरोचन पुत्र बलि की प्रतिमा एक सौ बीस अङ्गुल लम्बी बनायें, वैसे अन्य सभी प्रतिमा उत्तम १०८ अङ्गुल की, मध्यमा ९६ अङ्गुल की और अधमा ८४ अङ्गुल की होती है॥३०॥

भगवान् विष्णु प्रतिमा स्वरूप कथन

कार्योऽष्टभुजो भगवांश्चतुर्भुजो द्विभुज एव वा विष्णुः ।
श्रीवत्साङ्कितवक्षाः कौस्तुभमणिभूषितोरस्कः ॥३१॥
अतसीकुसुमश्यामः पीताम्बरनिवसनः प्रसन्नमुखः ।
कुण्डलकिरीटधारी पीनगलोरःस्थलांसभुजः ॥३२॥
खड्गगदाशरपाणिर्दक्षिणतः शान्तिदश्चतुर्थकरः ।
वामकरेषु च कार्मुकखेटकचक्राणि शङ्खश्च ॥३३॥
अथ च चतुर्भुजमिच्छति शान्तिद एको गदाधरश्चान्यः ।
दक्षिणपार्श्वे त्वेवं वामे शङ्खश्च चक्रं च ॥३४॥
द्विभुजस्य तु शान्तिकरो दक्षिणहस्तोऽपरश्च शङ्खधरः ।
एवं विष्णोः प्रतिमा कर्तव्या भूतिमिच्छद्भिः ॥३५॥

भाषा—अष्टभुज, चतुर्भुज अथवा द्विभुज विष्णु की प्रतिमा बनानी चाहिए। श्रीवत्स लक्षण और कौस्तुभमणि से श्री विष्णु के वक्षः स्थल को शोभायमान करना चाहिए। अतसी पुष्प के सदृश उस प्रतिमा का श्याम वर्ण करते हुए पीताम्बर पहनाना चाहिए। प्रसन्न मुख, कुण्डल, किरीट धारण की हुई, पुष्ट कण्ठ, वक्षःस्थल, कन्धा और भुजा वाली; दक्षिण भाग के तीन हाथों में क्रमशः खड्ग, गदा और बाण धारण की हुई, चतुर्थ हाथ सदा अभय मुद्रा को प्रदर्शित करने वाली तथा वामभाग के चार हाथों में क्रमशः धनुष, ढाल, चक्र और शंख ली हुई अष्टभुज विष्णु की प्रतिमा बनानी चाहिए।

अपेक्षानुसार चतुर्भुज विष्णु की प्रतिमा बनानी हो, तो दक्षिण भाग के एक हाथ सदा अभय मुद्रा में, दूसरे में गदा होनी चाहिए, तथा वामभाग के एक हाथ शंख और दूसरे हाथ में चक्र धारण की होनी चाहिए।

द्विभुज विष्णु की प्रतिमा बनाने की अपेक्षा हो, तो दक्षिण हाथ में अभय मुद्रा और वाम हाथ में शंख धारण की हुई प्रतिमा बनानी चाहिए। इस प्रकार ऐश्वर्य की आकांक्षा करने वाले जन को अवश्य ही विष्णु की प्रतिमा बनानी चाहिए॥३१-३५॥

हलधर की प्रतिमा का स्वरूप कथन

बलदेवो हलपाणिर्मदविभ्रमलोचनश्च कर्तव्यः ।
बिभ्रत् कुण्डलमेकं शङ्खेन्दुमृणालगौरतनुः ॥३६॥

भाषा—बलदेव की प्रतिमा के एक हाथ में हल धारण कराने के साथ-साथ मद से पूर्ण नेत्र प्रकट कराना चाहिए। एक कान में कुण्डल धारण करावें और शंख, चन्द्र या मृणाल के सदृश श्वेत वर्ण का शरीर करना चाहिए॥३६॥

एकनंशा देवी प्रतिमा लक्षण कथन

एकानंशा कार्या देवी बलदेवकृष्णयोर्मध्ये।
कटिसंस्थितवामकरा सरोजमितरेण चोद्वहती ॥३७॥
कार्या चतुर्भुजा या वामकराभ्यां सपुस्तकं कमलम्।
द्वाभ्यां दक्षिणपार्श्वे वरमर्थिष्वक्षसूत्रं च ॥३८॥
वामेऽथाष्टभुजायाः कमण्डलुश्चापमम्बुजं शास्त्रम्।
वरशरदर्पणयुक्ताः सव्यभुजाः साक्षसूत्राश्च ॥३९॥

भाषा—बलदेव और श्रीकृष्ण की प्रतिमा के बीच में एकानंशा नामक देवी की प्रतिमा बनानी चाहिए। उस प्रतिमा के वाम हाथ कमर पर और दाहिने हाथ में कमल धारण करावें।

चतुर्भुजा एकनंशा देवी के वाम भाग एक हाथ में पुस्तक और दूसरे में कमल तथा दाहिने भाग के हाथ में वरदान देने की मुद्रा और दूसरे हाथ में माला धारण कराना चाहिए।

अष्टभुजा एकानंशा देवी की प्रतिमा दाहिने भाग के एक हाथ में वर देने की मुद्रा, दूसरे हाथ में बाण, तीसरे हाथ में दर्पण और चौथे हाथ में अक्षसूत्र तथा वामभाग के एक हाथ में कमण्डलु, दूसरे हाथ में धनुष, तीसरे में कमल और चौथे हाथ में पुस्तक धारण कराना चाहिए॥३७-३९॥

शाम्ब व प्रद्युम्न प्रतिमा का लक्षण कथन

शाम्बश्च गदाहस्तः प्रद्युम्नश्चापभृत् सुरूपश्च।
अनयोः स्त्रियौ च कार्ये खेटकनिस्त्रिंशधारिण्यौ ॥४०॥

भाषा—शाम्ब देव की प्रतिमा के हाथ में गदा और प्रद्युम्न की प्रतिमा के हाथ में धुनष धारण कराना चाहिए। इनके प्रतिमाओं को द्विभुज ही बनाना चाहिए तथा इनके पत्नियों की प्रतिमा भी द्विभुज बनाये, जिनमें एक के हाथ में खेटक और दूसरी स्त्री प्रतिमा के हाथ में खड्ग धारण कराना चाहिए॥४०॥

ब्रह्मा और कुमार कार्त्तिकेय प्रतिमा का लक्षण कथन

ब्रह्मा कमण्डलुकरश्चतुर्मुखः पङ्कजासनस्थश्च।
स्कन्दः कुमाररूपः शक्तिधरो बर्हिकेतुश्च ॥४१॥

भाषा—ब्रह्मा की प्रतिमा में चार मुख बनाया जाता है और उसके हाथ में

कमण्डलु धारण कराया जाता है। उस प्रतिमा को कमल पुष्प के आसन पर विराजित किया जाता है।

कार्तिकेय की प्रतिमा उनके बाल स्वरूप को अभिव्यक्त करने वाला बनाना चाहिए। उनके एक हाथ में शक्ति और दूसरे हाथ में मयूरध्वजा धारण कराना चाहिए।।४१।।

इन्द्र प्रतिमा लक्षण कथन

शुक्लश्चतुर्विषाणो द्विपो महेन्द्रस्य वज्रपाणित्वम् ।
तिर्यग् ललाटसंस्थं तृतीयमपि लोचनं चिह्नम् ।।४२।।

माया—इन्द्र के ऐरावत हाथी की प्रतिमा श्वेत वर्ण और चार दाँतों वाला बनाना चाहिए। उसकी प्रतिमा के हाथ में वज्र धारण कराने के साथ उसके ललाट मध्य में तिर्यक् तृतीय नेत्र बनाना चाहिए।।४२।।

महेश्वर प्रतिमा लक्षण कथन

शम्भोः शिरसीन्दुकला वृषध्वजोऽक्षि च तृतीयमपि चोर्ध्वम् ।
शूलं धनुः पिनाकं वामार्धे वा गिरिसुतार्धम् ।।४३।।

माया—महेश्वर की प्रतिमा के शिरोभाग में चन्द्रकला बनाने के साथ ध्वजा में वृषभ का चिह्न भी बनाना चाहिए। उस प्रतिमा के ललाट में ऊर्ध्वमुख तृतीय नेत्र भी बनाने चाहिए। उसके एक हाथ में त्रिशूल और दूसरे में पिनाक नाम का धनुष धारण कराना चाहिए अथवा उस प्रतिमा के बाईं ओर भवानी की प्रतिमा बनानी चाहिए।।४३।।

बुद्ध प्रतिमा लक्षण कथन

पद्माङ्कितकरचरणः प्रसन्नमूर्तिः सुनीचकेशश्च ।
पद्मासनोपविष्टः पितेव जगतो भवति बुद्धः ।।४४।।

माया—बुद्ध प्रतिमा के हाथ पैर में कमल चिह्न, उसके मुख में प्रसन्नता, उसके शिर पर अल्प और छोटे केश बनाने चाहिए। उस प्रतिमा को पद्मासनस्थ मुद्रा युक्त बनाना चाहिए। विश्वपिता के रूप में बुद्ध की प्रतिमा दीखने वाला होना चाहिए।।४४।।

अर्हन् देव (जिन) प्रतिमा लक्षण कथन

आजानुलम्बबाहुः श्रीवत्साङ्कः प्रशान्तमूर्तिश्च ।
दिग्वासास्तरुणो रूपवांश्च कार्योऽर्हतां देवः ।।४५।।

माया—जिन देव की प्रतिमा में जानु तक लम्बी भुजायें होनी चाहिए तथा श्रीवत्स चिह्न से शोभायमान, शान्त स्वरूप, दिगम्बर, युवा और सुन्दर प्रतिमा बनानी चाहिए।।४५।।

भगवान् भास्कर प्रतिमा लक्षण कथन

नासाललाटजङ्घोरुगण्डवक्षांसि चोन्नतानि रवेः ।
कुर्यादुदीच्यवेषं गूढं पादादुरो यावत् ।।४६।।
बिभ्राणः स्वकररुहे बाहुभ्यां पङ्कजे मुकुटधारी ।
कुण्डलभूषितवदनः प्रलम्बहारो वियद्गवृतः ।।४७।।
कमलोदरद्युतिमुखः कञ्चुकगुप्तः स्मितप्रसन्नमुखः ।
रत्नोज्ज्वलप्रभामण्डलश्च कर्तुः शुभकरोऽर्कः ।।४८।।

भाया—भगवान् भास्कर की प्रतिमा की नासिका, ललाट, जंघा, ऊरु, कपोल, वक्षःस्थल आदि को उन्नत बनाने चाहिए। उत्तर दिशा में स्थित जनगणों की तरह वेषभूषा भी देनी चाहिए। पैरों से लेकर छाती पर्यन्त चोलक से ढ़का हुआ, दोनों भुजाओं में नखरूप कमलों से सम्पन्न, शिर पर मुकुट, कर्ण में कुण्डल, गले में वियद्ग वृत्त रूप सम्पन्न हार, कमल के उदर की तरह मुखकान्ति, कञ्चुक से व्याप्त शरीर, मन्द मुस्कान युक्त मुख और रत्नों से देदीप्यमान कान्ति युक्त प्रतिमा का निर्माण करना चाहिए। इस प्रकार से भगवान् भास्कर की प्रतिमा बनाने वाले का सदा शुभ ही होता है।।४६-४८।।

सूर्य लक्षित सभी प्रतिमाओं का शुभाशुभ कथन

सौम्या तु हस्तमात्रा वसुदा हस्तद्वयोच्छ्रिता प्रतिमा ।
क्षेमसुभिक्षाय भवेत् त्रिचतुर्हस्तप्रमाणा या ।।४९।।
नृपभयमव्यङ्गायां हीनाङ्गायामकल्यता कर्तुः ।
शातोदर्यां क्षुद्भयमर्थविनाशः कृशाङ्गायाम् ।।५०।।
मरणं तु सक्षतायां शस्त्रनिपातेन निर्दिशेत् कर्तुः ।
वामावनता पत्नीं दक्षिणविनता हिनस्त्यायुः ।।५१।।
अन्धत्वमूर्ध्वदृष्ट्या करोति चिन्तामधोमुखी दृष्टिः ।
सर्वप्रतिमास्वेयं शुभाशुभं भास्करोक्तसमम् ।।५२।।

भाया—सूर्य की प्रतिमा एक हाथ ऊँची होने से शुभदा, दो हाथ ऊँची धनदा, तीन हाथ ऊँची क्षेम और सुभिक्ष करने वाली होती है।

अधिकाङ्ग प्रतिमा राजभयदा, हीनाङ्ग प्रतिमा निर्माता के लिए रोगदा, कृशोदर प्रतिमा क्षुधा का भय करने वाली और कृशाङ्ग प्रतिमा धन हानि करने वाली होती है।

क्षत प्रतिमा निर्माता का शस्त्र से मरण, बायीं ओर से झुकी प्रतिमा निर्माता की पत्नि का नाश करने वाली और दायीं ओर झुकी प्रतिमा आयु नाश करने वाली होती है।

प्रतिमा की ऊर्ध्व दृष्टि होने पर निर्माता को अन्धा, अधोदृष्टि होने पर निर्माता को चिन्ता युक्त करती है।

इस प्रकार ऊपरोक्त शुभाशुभ फल सूर्य प्रतिमा के प्रसङ्ग में कही गई है, लेकिन इसे अन्य प्रतिमाओं के प्रसङ्ग में भी समान रूप से जानना चाहिए।।४९-५२।।

शिवलिङ्ग का लक्षण व स्थापन प्रकार कथन

लिङ्गस्य वृत्तपरिधिं दैर्घ्येणासूत्र्य तत्त्रिधा विभजेत् ।
मूले तच्चतुरस्रं मध्ये त्वष्टाश्रिं वृत्तमतः ।।५३।।
चतुरस्रमवनिखाते मध्यं कार्यं तु पिण्डिकाश्वभ्रे ।
दृश्योच्छ्रायेण समा समन्ततः पिण्डिका श्वभ्रात् ।।५४।।

माया—लिङ्गस्थ वृत्त की परिधि की लम्बाई ज्ञान के लिए सूत्र से नाप कर उस सूत्र का समान तीन भाग करना चाहिए। फिर उन तीन भागों के समान लिङ्ग का भी तीन भाग करना चाहिए। तत्पश्चात् लिङ्ग के मध्य भाग के तृतीयांश को अष्टास्त्र और ऊपरी भाग के तृतीयांश को गोल तथा अधःस्थ तृतीयांश को चतुरस्त्र बनाना चाहिए।।

लिङ्ग के चतुस्त्र भाग को भूमि में गाड़ना चाहिए। मध्य के अष्टास्त्र भाग को पिण्डिका या जलधरी या जलहरी रूप गड्ढे में रखना चाहिए। तथा तृतीयांश गोलाकार ऊपरी भाग को ऊपर रखना चाहिए। इस प्रकार ऊपर के दृश्य गोलाकार भाग की ऊँचाई के समतुल्य उस गड्ढे के चारों ओर पिण्डिका बनानी चाहिए। शिवलिङ्ग पत्थर, मणि या लकड़ी का बनाया जा सकता है।।५३-५४।।

शिवलिङ्ग का विशेष लक्षण और फल कथन

कृशदीर्घं देशघ्नं पार्श्वविहीनं पुरस्य नाशाय ।
यस्य क्षतं भवेद् मस्तके विनाशाय तल्लिङ्गम् ।।५५।।

माया—उपरोक्त शिवलिङ्ग पतला अथवा लम्बा होने से देश का नाश, दोनों छोर से खण्डित होने पर नगर की हानि तथा क्षत-विक्षत मस्तक वाला होने पर स्थापना करने या बनाने वाले का नाश करने वाला होता है।।५५।।

मातृगण प्रतिमाओं का लक्षण कथन

मातृगणः कर्तव्यः स्वनामदेवानुरूपकृतचिह्नः ।
रेवन्तोऽश्वारूढो मृगयाक्रीडादिपरिवारः ।।५६।।

माया—मातृगणों की प्रतिमा उनके अपने नाम से जो देवता प्रकट हों, उनके समान ही बनाना चाहिए। जैसे—ब्रह्मा के समान ब्रह्माणी की, इन्द्र के समान इन्द्राणी की, शिव के समान शिवा की आदि और भी जानना चाहिए। लेकिन इन मातृगणों की प्रतिमाओं में स्तन शोभा, मध्य में कृश और पृथु नितम्ब भी बनाना चाहिए,

जिससे कि स्त्री जैसी सौन्दर्य उन प्रतिमाओं में भी आ जाय तथा घोड़े पर सवारी करती हुई और मृगया रूप क्रीड़ा में संलग्न परिवार वाली रेवन्त अर्थात् सूर्य के एक पुत्र की प्रतिमा भी बनानी चाहिए।।५६।।

यम, वरुण और कुबेर प्रतिमा का लक्षण कथन

दण्डी यमो महिषगो हंसारूढश्च पाशभृद्वरुणः ।
नरवाहनः कुबेरो वामकिरीटी बृहत्कुक्षिः ।।५७।।

माया—यम की प्रतिमा के हाथ में दण्ड धारण कराकर भैंस पर सवारी करते दिखाना चाहिए। वरुण की प्रतिमा हंस पर सवारी और पाश धारण की हुई दिखाया जाना चाहिए। तथा मनुष्य पर सवारी और बायीं ओर मुकुट धारण किए हुए बड़े उदर वाले कुबेर की प्रतिमा बनानी चाहिए।।५७।।

गणपति प्रतिमा लक्षण कथन

प्रमथाधिपो गजमुखः प्रलम्बजठरः कुठारघाती स्यात् ।
एकविषाणो बिभ्रन्मूलककन्दं सुनीलदलकन्दम् ।।५८।।

माया—श्रीगणपति की प्रतिमा का मुख हाथी के समान, लम्बा उदर, कुठार धारण की हुई, एक दन्त वाली, मूलककन्द और सुनीलदलकन्द धारण की हुई बनानी चाहिए।।५८।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां प्रतिमालक्षणनामाऽष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।।५८।।

□□□

अथैकोनषष्टितमोऽध्यायः-५९

वनसम्प्रवेशनविचारः

सर्वप्रथम कर्त्तव्य निश्चयार्थ कथन

कर्तुरनुकूलदिवसे दैवज्ञविशोधिते शुभनिमित्ते ।
मङ्गलशकुनैः प्रास्थानिकैश्च वनसम्प्रवेशः स्यात् ।।१।।

भाषा—प्रतिमा निर्माता के अनुकूल दिन में, ज्योतिष (दैवज्ञ) के बताये मुहूर्त में, यात्रा विहित शुभ शकुनों को जानकर प्रतिमा निर्माण करने के लिए लकड़ी लाने वन में प्रवेश करना चाहिए।।१।।

वर्जनीय वृक्षों का कथन

पितृवनमार्गसुरालयवल्मीकोद्यानतापसाश्रमजाः ।
चैत्यसरित्सङ्गमसम्भवाश्च घटतोयसिक्ताश्च ।।२।।
कुब्जानुजातवल्लीनिपीडिता वज्रमारुतोपहताः ।
स्वपतितहस्तिनिपीडितशुष्काग्निप्लुष्टमधुनिलयाः ।।३।।
तरवो वर्जयितव्याः शुभदाः स्युः स्निग्धपत्रकुसुमफलाः ।
अभिमतवृक्षं गत्वा कुर्यात् पूजां सबलिपुष्पाम् ।।४।।

भाषा—श्मशान, मार्ग, देवालय, वल्मीक, उपवन, तपोवन आदि स्थानों में उत्पन्न वृक्ष; चैत्य प्रधान वृक्ष; नदियों के संगम स्थल में उत्पन्न वृक्ष; घड़ों के जल से सिञ्चित वृक्ष, क्योंकि उसको स्वयं सम्बन्धित मनुष्य द्वारा आरोपित होने से आदि वृक्षों का त्याग करना चाहिए।

तथा कुबड़े अर्थात् अस्पष्ट स्वरूप वाले अन्य अनुजात वृक्ष के संयोग से पीड़ित; वल्ली या लताओं से पीड़ित; बिजली, वायु आदि के कारण भग्न हुए; स्वयं गिरे हुए; हाथियों से गिराये हुए; सूखे हुए, आग से जले हुए और मधुमक्खियों के छत्तों से युक्त; इन वृक्षों का भी त्याग करना चाहिए।

परन्तु अन्य स्निग्ध पत्र, पुष्प, फल आदि से युक्त वृक्ष शुभ कहे गए हैं। इस प्रकार अभीष्ट वृक्ष के समीप जाकर बलि, पुष्पों आदि से उसकी प्रथम पूजन करना चाहिए।।२-४।।

ब्राह्मण आदि के वर्ण से शुभवृक्ष कथन

सुरदारुचन्दनशमीमधूकतरवः शुभा द्विजातीनाम् ।
क्षत्रस्यारिष्टाश्वत्थखदिरबिल्वा विवृद्धिकराः ।।५।।

वैश्यानां जीवकखदिरसिन्धुकस्यन्दनाश्च शुभफलदाः ।
तिन्दुककेसरसर्जार्जुनाम्रशालाश्च शूद्राणाम् ॥६॥

भाषा—देवदारु, चन्दन, शमी, महुआ आदि वृक्ष ब्राह्मणों के लिए; नीम्ब, पीपल, खैर, बेल आदि वृक्ष क्षत्रियों के लिए; जीवक, खैर, सिन्धुक, स्यन्दन आदि वृक्ष वैश्यों के लिए तथा तिन्दु, नागकेसर, सर्ज, अर्जुन, साल आदि वृक्ष शूद्रों के लिए शुभप्रदायक कहे गए हैं॥५-६॥

यहाँ अन्य विशेष कथन

लिङ्गं वा प्रतिमा वा द्रुमवत् स्थाप्या यथा दिशं यस्मात् ।
तस्माच्चिह्नयितव्या दिशो द्रुमस्योर्ध्वमथवाधः ॥७॥

भाषा—लिङ्ग अथवा प्रतिमा को वृक्ष की दिशाओं के अनुसार स्थापित करना चाहिए। वृक्ष के ऊपर का भाग और प्रतिमा का ऊपर का भाग तथा वृक्ष के नीचे का भाग और प्रतिमा का नीचे का भाग बनाना चाहिए। इस कारण वृक्ष को काटने के पूर्व ही उसमें सभी दिशाओं से सम्बन्धित चिह्न कर देना उचित है॥७॥

वृक्ष को काटने का विधान कथन

परमान्नमोदकौदनदधिपललोल्लोपिकादिभिर्भक्ष्यैः ।
मद्यैः कुसुमैर्धूपैर्गन्धैश्च तरुं समभ्यर्च्य ॥८॥
सुरपितृपिशाचराक्षसभुजगासुरगणविनायकाद्यानाम् ।
कृत्वा रात्रौ पूजां वृक्षं संस्पृश्य च ब्रूयात् ॥९॥

भाषा—पायस, लड्डू, भात (चावल), दही, मांस, उल्लोपिका (विशेष खाद्य सामग्री) आदि भक्ष्य पदार्थ; मद्य, पुष्प, सुगन्धित द्रव्य आदिकों से वृक्ष का पूजन करना चाहिए। रात्रि के समय देवता, पितर, पिशाच, राक्षस, नाग, सुरगण, गणेश इत्यादि का पूजन कर उस वृक्ष को स्पर्श करते हुए अग्रलिखित मन्त्रों का उच्चारण करना चाहिए॥८-९॥

उपरोक्त प्रयोजनार्थ मन्त्र कथन

अर्चार्थममुकस्य त्वं देवस्य परिकल्पितः ।
नमस्ते वृक्ष पूजेयं विधिवत् सम्प्रगृह्यताम् ॥१०॥
यानीह भूतानि वसन्ति तानि बलिं गृहीत्वा विधिवत् प्रयुक्तम् ।
अन्यत्र वासं परिकल्पयन्तु क्षमन्तु तान्यद्य नमोऽस्तु तेभ्यः ॥११॥

भाषा—हे वृक्ष ! आपको अमुक देवता के पूजनार्थ संकल्पित करता हुआ नमस्कार करता हूँ। अतः आप विधिपूर्वक इस पूजन को स्वीकार करें और भी इस (वृक्ष) पर जितने प्राणिजन आश्रय पा रहे हैं, वे प्राणिजन भी विधिपूर्वक हमारी इस

प्रार्थना को स्वीकार करते हुए अन्य स्थल पर अपना आश्रय हेतु संकल्पना करें। अत: आज वे सभी प्राणिजन हमें क्षमा करें, उन सबकों भी नमस्कार है॥१०-११॥

पुनः वृक्ष काटने का विधान कथन

वृक्षं प्रभाते सलिलेन सिक्त्वा पूर्वोत्तरस्यां दिशि सन्निकृत्य।
मध्वाज्यदिग्धेन कुठारकेण प्रदक्षिणं शेषमतो निहन्यात् ॥१२॥

माया—तदनन्तर उस वृक्ष को प्रभात काल में सिचिंत करें तथा मधु, घृत आदि के लेपन के संतृप्त कुठार से प्रथम ईशान कोण में काटते हुए प्रदक्षिणक्रम से काटने का काम करना चाहिए॥१२॥

गिरे वृक्ष से शुभाशुभ कथन

पूर्वेण पूर्वोत्तरतोऽथवोदक् पतेयदा वृद्धिकरस्तदा स्यात्।
आग्नेयकोणात् क्रमशोऽग्निदाहरुग्रागरोगास्तुरगक्षयश्च ॥१३॥

माया—वृक्ष यदि काटने के बाद पूर्व, ईशान, उत्तर आदि दिशा में गिरता है, तो अभिवृद्धि होती है। शेष अग्नि कोण आदि पाँच दिशाओं में से किसी दिशा में गिरता है, तो क्रम से अग्निदाह, रोग, रोग, रोग और अश्व की हानि होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि अग्नि कोण में गिरने से अग्निदाह, दक्षिण दिशा में रोग, नैर्ऋत्य में भी रोग, पश्चिम में भी रोग और वायव्य कोण में वृक्ष के गिरने से अश्व की हानि होती है॥१३॥

ग्रन्थकार का विशेष कथन

यन्नोक्तमस्मिन् वनसम्प्रवेशे निपातविच्छेदनवृक्षगर्भाः।
इन्द्रध्वजे वास्तुनि च प्रदिष्टाः पूर्वं मया तेऽत्र तथैव योज्याः ॥१४॥

माया—इस वनसम्प्रवेश संज्ञक अध्याय में मैं (ग्रन्थकार) ने वृक्षनिपात, वृक्षविच्छेदन, वृक्षगर्भ आदि को प्रस्तुत नहीं किया है, उसे जानने के लिए पूर्वोक्त इन्द्रध्वजाध्याय और वास्तु विद्याध्याय का ही अनुसरण करना श्रेयस्कर है; क्योंकि वे सब प्रसंग समान ही है॥१४॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां वनसम्प्रवेशनिरूपणं नामैकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥५९॥

□□□

अथ षष्टितमोऽध्यायः-६०

प्रतिमाप्रतिष्ठापनविचारः

सर्वप्रथम अधिवासन में मण्डप कथन

दिशि याम्यायां कुर्यादधिवासनमण्डपं बुधः प्राग्वा ।
तोरणचतुष्टययुतं शस्तद्रुमपल्लवच्छन्नम् ।।१।।
पूर्वे भागे चित्राः स्रजः पताकाश्च मण्डपस्योक्ताः ।
आग्नेय्यां दिशि रक्ताः कृष्णाः स्युर्याम्यनैर्ऋत्योः ।।२।।
श्वेता दिश्यपरस्यां वायव्यायां तु पाण्डुरा एव ।
चित्राश्चोत्तरपार्श्वे पीताः पूर्वोत्तरे कार्याः ।।३।।

भाषा—प्रतिष्ठापक विद्वानों के द्वारा दक्षिण (मतान्तर से उत्तर) दिशा अथवा पूर्व दिशा में चार तोरणों से युक्त और शुभदायक वृक्षों के पत्रों से आच्छादित प्रतिमा के अधिवासन अर्थात् संस्कार विशेष का मण्डप बनाया जाना चाहिए।

उपरोक्त मण्डप के पूर्व दिशा के भाग को अनेक वर्ण के पुष्प मालाओं और पताकाओं से; अग्नि कोण को लाल; दक्षिण व नैर्ऋत्य कोण को काली; पश्चिम दिशा को सफेद, वायव्य कोण को पाण्डुर (पीत+सफेद); उत्तर दिशा को अनेक वर्ण तथा ईशानकोण को पीतवर्ण के पुष्प मालाओं और ध्वजाओं से सजाया जाना चाहिए।।१-३।।

काष्ठ आदि निर्मित प्रतिमाओं का फल कथन

आयुःश्रीबलजयदा दारुमयी मृण्मयी तथा प्रतिमा ।
लोकहिताय मणिमयी सौवर्णी पुष्टिदा भवति ।।४।।
रजतमयी कीर्तिकरी प्रजाविवृद्धिं करोति ताम्रमयी ।
भूलाभं तु महान्तं शैली प्रतिमाथवा लिङ्गम् ।।५।।

भाषा—काष्ठ और मिट्टी से बनी प्रतिमा आयु, लक्ष्मी, बल और विजय प्रदान करती हैं। मणि की निर्मित प्रतिमा जनगणों के हित को साधने वाली होती है। स्वर्णमयी प्रतिमा जनगणों को पुष्टि प्रदान करती है। चाँदी की बनी प्रतिमा यशःकरी होती है। ताम्र प्रतिमा सन्तानों की अभिवृद्धि करने वाली होती है। शिला की प्रतिमा अथवा शिवलिङ्ग अत्यन्त भूमि का लाभ कराने वाली होती हैं।।४-५।।

प्रतिमाओं के फलों में विशेष कथन

शङ्कूपहता प्रतिमा प्रधानपुरुषं कुलं च घातयति ।
श्वभ्रोपहता रोगानुपद्रवांश्च क्षयं कुरुते ।।६।।

भाषा—यदि कोई प्रतिमा किसी प्रकार के कील से उपहत या पीड़ित हो, तो वह प्रधान पुरुष के साथ उसके कुल का नाश करने वाली होती है। यदि प्रतिमा गर्तो अथवा गड्ढों से युक्त हो, तो वह रोग, उपद्रव और मृत्यु देती है।।६।।

अधिवासन के लक्षणों का कथन

मण्डपमध्ये स्थण्डिलमुपलिप्यास्तीर्य सिकतयाथ कुशैः।
भद्रासनकृतशीर्षोपधानपादां न्यसेत् प्रतिमाम् ।।७।।

भाषा—अधिवासन मण्डप के बीच बनाये गए स्थण्डिल या भू-भाग को लीप व पोत कर वहाँ बालु को फैलाकर उस पर कुशा बिछा कर उसके ऊपर प्रतिमा को लिटा देना चाहिए। प्रतिमा का शिर राजा के आसन पर और पैरों को उपधान अर्थात् तकिया पर रखना चाहिए।।७।।

प्रतिमा पूजन-प्रकार कथन

प्लक्षाश्वत्थोदुम्बरशिरीषवटसम्भवैः कषायजलैः।
मङ्गल्यसंज्ञिताभिः सर्वौषधिभिः कुशाद्याभिः ।।८।।
द्विपवृषभोद्धतपर्वतवल्मीकसरित्समागमतटेषु।
पद्मसरःसु च मृद्भिः सपञ्चगव्यैश्च तीर्थजलैः ।।९।।
पूर्वशिरस्कां स्नातां सुवर्णरत्नाम्बुभिश्च ससुगन्धैः।
नानातूर्यनिनादैः पुण्याहैर्वेदनिर्घोषैः ।।१०।।

भाषा—पाकर, पीपल, गूलर, सिरस, बड आदि वृक्षों के पत्तों के बने क्वाथ काढ़े से; माङ्गलिक सर्वौषधियों जैसे जया, जयन्ती, जीवन्ती, जीवपुत्री, पुनर्नवा, विष्णु क्रान्ता और लक्ष्मणा से; हाथियों, घोड़ों आदि के पैरों से उखाड़ी गई, पर्वत, बल्मीक, नदियों के संगमस्थल, कमल से युक्त सरोवर आदिकों की मिट्टियों से; पञ्चगव्य के साथ तीर्थों के जल से तथा स्वर्ण और रत्नों के जल से पूर्व दिशा में स्थित शिर वाली प्रतिमा को स्नान कराने के पश्चात् उसका सुगन्धि द्रव्य, अनेक प्रकार के वाद्यों की ध्वनि, पुण्याहवाचन तथा वेदध्वनियों से पूजन करना चाहिए।।८-१०।।

तत्पश्चात् के कर्त्तव्य कथन

ऐन्द्र्यां दिशीन्द्रलिङ्गा मन्त्राः प्राग्दक्षिणेऽग्निलिङ्गाश्च।
वक्तव्या द्विजमुख्यैः पूज्यास्ते दक्षिणाभिश्च ।।११।।

भाषा—ब्राह्मणों के द्वारा पूर्वदिशा में इन्द्रदेव और अग्निकोण में अग्नि देव के मन्त्रों का जप कराने चाहिए। तत्पश्चात् यजमान को उन ब्राह्मणों का दान-दक्षिणा आदि से पूजन करना चाहिए।।११।।

उसके बाद के कर्त्तव्य का कथन

यो देवः संस्थाप्यस्तन्मन्त्रैश्चानलं द्विजो जुहुयात्।
अग्निनिमित्तानि मया प्रोक्तानीन्द्रध्वजोत्थाने ॥१२॥
धूमाकुलोऽपसव्यो मुहुर्मुहुर्विस्फुलिङ्गकृन्न शुभः।
होतुः स्मृतिलोपो वा प्रसर्पणं चाशुभं प्रोक्तम् ॥१३॥

माया—जिस देवता की प्रतिष्ठापन की जा रही हो, उन्हीं देवता के मन्त्रों से ब्राह्मणों द्वारा हवन आदि कार्य कराने चाहिए। पूर्वोक्त इन्द्रध्वज प्रकरण में हवनाग्नि का शुभाशुभ फल कथन जैसा किया गया है, उसी के अनुसार हवनाग्नि धूम सहित दीखने पर अथवा हवनाग्नि की ज्वाला वामावर्तक्रम से भ्रमण करने पर अथवा हवनाग्नि के बारम्बार शब्द करने पर अथवा हवनाग्नि से चिनगारियों के उड़ने पर अशुभ होता है। हवन करने वालों की स्मृति लुप्त होने पर अथवा हवन कर्ता के प्रसर्पण करने अर्थात् स्थानान्तरण करने पर भी शुभ नहीं होता है॥१२-१३॥

इसके बाद का कर्त्तव्य कथन

स्नातामभुक्तवस्त्रां स्वलङ्कृतां पूजितां कुसुमगन्धैः।
प्रतिमां स्वास्तीर्णायां शय्यायां स्थापकः कुर्यात् ॥१४॥

माया—प्रतिमा को स्नान कराने के बाद उसे नववस्त्र, आभूषण आदि से सुशोभित करते हुए प्रतिष्ठापक पुष्प, सुगन्धि द्रव्य आदि से उसका पूजनकर्म सम्पन्न करे; उसके बाद अच्छी तरह बिछाई गई शय्या के ऊपर प्रतिमा का स्थापन करें॥४॥

इसके बाद का कर्त्तव्य कथन

सुप्तां सगीतनृत्यैर्जागरणैः सम्यगेवमधिवास्य।
दैवज्ञसम्प्रदिष्टे काले संस्थापनं कुर्यात् ॥१५॥

माया—सुलाकर रखी गई प्रतिमा को नृत्य, गीत और जागरण से अधिवासन कर ज्योतिष (दैवज्ञ) के बताये हुए मुहूर्त्त में उसकी स्थापना करनी चाहिए॥१५॥

प्रतिमा प्रतिष्ठापन विधान कथन

अभ्यर्च्य कुसुमवस्त्रानुलेपनैः शङ्खतूर्यनिर्घोषैः।
प्रादक्षिण्येन नयेदायतनस्य प्रयत्नेन ॥१६॥
कृत्वा बलिं प्रभूतं सम्पूज्य ब्राह्मणांश्च सभ्यांश्च।
दत्त्वा हिरण्यशकलं विनिक्षिपेत् पिण्डिकाश्वभ्रे ॥१७॥
स्थापकदैवज्ञद्विजसभ्यस्थपतीन् विशेषतोऽभ्यर्च्य।
कल्याणानां भागी भवतीह परत्र च स्वर्गी ॥१८॥

भाषा—एतदनन्तर उस प्रतिमा का पुष्प, वस्त्र, चन्दन, सुगन्धि द्रव्य आदिकों से पूजन करने के पश्चात् शंख, घण्टा, तुरही आदि के ध्वनियों के सहित उसे अधिवासन मण्डप में से प्रदक्षिण क्रम से प्रासाद के अन्दर गर्भगृह में प्रवेश कराना चाहिए। फिर वहाँ पर अनेक प्रकार से बलि देकर वस्त्र, दक्षिणा आदि से ब्राह्मणों, सभ्यजनों आदि का भी पूजन करें। तत्पश्चात् पिण्डिका (पीठिका) के गड्ढे में सोने का टुकड़ा रखकर उस पर प्रतिमा का स्थापन करना चाहिए। इस अवसर पर प्रतिष्ठापक अर्थात् प्रतिमा की प्रतिष्ठा कराने वाला व्यक्ति ज्योतिष, सभ्यजनों, राजमिस्त्रियों आदि जनों का विशेष प्रकार से सम्मान करें। इस तरह प्रतिष्ठापक जन इहलोक में कल्याण, सुख-शांति को प्राप्त करता हुआ परलोक में भी स्वर्ग का भागी होता है॥६-१८॥

प्रतिमा प्रतिष्ठापन करने के अधिकारियों का कथन

विष्णोर्भागवतान् मगांश्च सवितुः शम्भोः सभस्मद्विजान्
मातृणामपि मण्डलक्रमविदो विप्रान् विदुर्ब्रह्मणः।
शाक्यान् सर्वहितस्य शान्तमनसो नग्नान् जिनानां विदु-
र्ये यं देवमुपाश्रिताः स्वविधिना तैस्तस्य कार्या क्रिया॥१९॥

भाषा—भगवान् विष्णु की प्रतिष्ठा भागवतजन अर्थात् वैष्णव; सूर्य की प्रतिष्ठा मग (शाकद्वीपीय) ब्राह्मण; शिव की प्रतिष्ठा भस्म रमाये ब्राह्मण; मातृकाओं की प्रतिष्ठा मण्डलक्रम के ज्ञाता ब्राह्मण; ब्रह्मा की प्रतिष्ठा ब्राह्मण, सर्वहित अर्थात् बुद्ध प्रतिमा की प्रतिष्ठा शान्त चित्त वाले शाक्य अर्थात् रक्तपटधारण करने वाले तथा जिन की प्रतिष्ठा दिगम्बर क्षपणक को करना चाहिए। इस प्रकार जो मनुष्य जिस देवता के अत्यन्त उपासक (भक्त) हों, वे उस देवता की प्रतिष्ठा आदि सभी कर्म अपने कल्पित विधान से करें॥१९॥

प्रतिमा प्रतिष्ठा का काल निर्णयार्थ कथन

उदगयने सितपक्षे शिशिरगभस्तौ च जीववर्गस्थे।
लग्ने स्थिरे स्थिरांशे सौम्यैर्धीधर्मकेन्द्रगतैः॥२०॥
पापैरुपचयसंस्थैर्ध्रुवमृदुहरितिष्यवायुदेवेषु।
विकुजे दिनेऽनुकूले देवानां स्थापनं शस्तम्॥२१॥

भाषा—देव प्रतिमा प्रतिष्ठा के लिए उत्तरायण; शुक्लपक्ष; चन्द्र का गुरु के षड्वर्ग में होना; स्थिर लग्न; स्थिर नवांश; शुभग्रह का पंचम, नवम, लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम आदि भाव में होना; पापग्रहों का तृतीय, षष्ठ, दशम, एकादश आदि भाव में होना; तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, श्रवण, पुष्य,

स्वाती आदि नक्षत्रों में से कोई नक्षत्र; मंगलवार को छोड़ अन्य सभी दिन तथा प्रतिष्ठापक के शुभ समय आदि आवश्यक हैं। उक्त समय में प्रतिमा की स्थापना शुभदायक होता है॥२०-२१॥

ग्रन्थकार का अध्यायोपसंहार कथन

सामान्यमिदं समासतो लोकानां हितदं मया कृतम्।
अधिवासनसन्निवेशने सावित्रे पृथगेव विस्तरात्॥२२॥

माया—इस प्रकार सारांश में सामान्य प्रतिमा का प्रतिष्ठा सम्बन्धी विधि को मैंने (ग्रन्थकार) प्रस्तुत किया है। सूर्य प्रतिमा का अधिवासन और प्रतिष्ठा विधि सूर्य सम्बन्धित शास्त्र में पृथक् रूप से कहा गया है॥२२॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां प्रतिमाप्रतिष्ठापनविचारो नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥६०॥

□□□

अथैकषष्टितमोऽध्यायः-६१

गोलक्षणविचारः

सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन

पराशरः प्राह बृहद्रथाय गोलक्षणं यत् क्रियते ततोऽयम्।
मया समासः शुभलक्षणास्ताः सर्वास्तथाऽप्यागमतोऽभिधास्ये ॥१॥

भाषा—पराशर मुनि ने अपने शिष्य बृहद्रथ से जिन गो लक्षणों को व्यक्त किया था, उसी को मैं (ग्रन्थकार) संक्षेप में यहाँ प्रस्तुत किया है। वैसे तो सभी गायें शुभकारिणी होती हैं; फिर भी महर्षि प्रोक्त शास्त्र से उनके शुभाशुभ लक्षणों को यहाँ प्रस्तुत करता हूँ॥१॥

गौओं के अशुभ लक्षण कथन

सास्राविलरूक्षाक्ष्यो मूषकनयनाश्च न शुभदा गावः।
प्रचलच्चिपिटविषाणाः करटाः खरसदृशवर्णाश्च ॥२॥
दशसप्तचतुर्दन्त्यः प्रलम्बमुण्डानना विनतपृष्ठ्यः।
ह्रस्वस्थूलग्रीवा यवमध्या दारितखुराश्च ॥३॥
श्यावातिदीर्घजिह्वा गुल्फैरतितनुभिरतिबृहद्भिर्वा।
अतिककुदाः कृशदेहा नेष्टा हीनाधिकाङ्ग्यश्च ॥४॥

भाषा—जिन गौओं की आँखे, आँसुओं से भरी, गँदली, रूखी आदि हों, वे गौऐं भी शुभकारिणी नहीं होती है। कृष्ण वर्णा, लोहित (रक्त) वर्णा, गधा की तरह वर्णयुक्ता गौऐं भी शुभदायिनी नहीं होती हैं॥२-४॥

वृषभ के अशुभ लक्षण कथन

वृषभोऽप्येवं स्थूलातिलम्बवृषणः शिराततक्रोडः।
स्थूलशिराचितगण्डस्त्रिस्थानं मेहते यश्च ॥५॥
मार्जाराक्षः कपिलः करटो वा न शुभदो द्विजस्यैव।
कृष्णोष्ठतालुजिह्वः श्वसनो यूथस्य घातकरः ॥६॥
स्थूलशकृन्मणिशृङ्गः सितोदरः कृष्णसारवर्णश्च।
गृहजातोऽपि त्याज्यो यूथविनाशावहो वृषभः ॥७॥

भाषा—इसी प्रकार पूर्वोक्त लक्षण युक्त बैल भी शुभदायक नहीं होता है। वैसे ऐसे बैल, जिनके अण्डकोष मोटे और लम्बे, पूर्वपाद शिराओं से आच्छन्न, कपोल भी मोटी शिराओं से आच्छन्न, तीन स्थानों से मेहन युक्त अर्थात् नेत्रों में आँसु, शिश्न

से मूत्र और पुरीष गिरता हो, नेत्र बिल्ली के समान, शरीर पीत वर्ण या रक्तवर्ण का हो, तो वे बैल ब्राह्मणों के लिए भी शुभकर नहीं होता, तो अन्य वर्णों के लिए कैसे? तथा ओष्ठ, तालु अथवा जिह्वा काले और हाँफने वाला बैल भी अपने समूह की हानि करने वाला होता है॥५-७॥

बैल के और भी अशुभ लक्षण कथन

श्यामकपुष्पचिताङ्गो भस्मारुणसन्निभो बिडालाक्षः।
विप्राणामपि न शुभं करोति वृषभः परिगृहीतः॥८॥

माया—ऐसे बैल, जिसके शरीर पर श्याम वर्ण के पुष्प सदृश लक्ष्म दृष्ट हो, उसके शरीर का श्वेत व लाल मिला हुआ वर्ण तथा नेत्र बिल्ली सदृश हो, तो उसे ग्रहण करने पर वह ब्राह्मणों का भी शुभ करने वाला नहीं होता है॥८॥

बैल के और भी अशुभ लक्षण कथन

ये चोद्धरन्ति पादान् पङ्कादिव योजिताः कृशग्रीवाः।
कातरनयना हीनाश्च पृष्ठतस्ते न भारसहाः॥९॥

माया—ठेला या गाड़ी के रूप में भार में जुड़ा हुआ बैल, इस प्रकार पैर उठाने, जैसे कि पैर पंक (कीचड़ या दलदल) में फँसे हो, ग्रीवा दुर्बल हो, नेत्र कातर हो और पीठ छोटी या दबी हुई हो, वह बैल निश्चय ही भार उठाने में समर्थ नहीं होता है॥९॥

बैल के शुभ लक्षण कथन

मृदुसंहतताम्रोष्ठास्तनुस्फिजस्ताम्रतालुजिह्वाश्च।
ह्रस्वतनूच्चश्रवणाः सुकुक्षयः स्पृष्टजङ्घाश्च॥१०॥
आताम्रसंहतखुरा व्यूढोरस्का बृहत्ककुदयुक्ताः।
स्निग्धश्लक्ष्णतनुत्वग्रोमाणस्ताम्रतनुशृङ्गाः॥११॥
तनुभूस्पृग्वालधयो रक्तान्तविलोचना महोच्छ्वासाः।
सिंहस्कन्धास्तन्वल्पकम्बलाः पूजिताः सुगमाः॥१२॥

माया—जिस किसी बैल का ओष्ठ कोमल, मिले हुए और ताम्रवर्ण के सदृश हो; छोटी कटिस्थ मांस पिण्ड हो; ताम्रवर्ण के तालु और जीभ हो; छोटे, पतले और ऊँचे कर्ण हों, शोभायुक्त पेट हो; लम्बवत् जंघाऐं हों; ताम्रवर्ण के जुड़े हुए खुर हों; मजबूत छाती हो; बड़ा ककुद अर्थात् थूही हो; चिकने, कोमल और पतले त्वचा हो तथा वह रोआँ युक्त हों, ताम्रवर्ण के समान और पतले सींग हों पतली और भूमि को स्पर्श करने वाली पूँछ हो; लाल नेत्र प्रान्त हो, अत्यधिक तेज श्वास; सिंह सदृश

कन्धा हो; पतला और छोटा गलकम्बल हो तथा शोभनीय गति हो, ऐसे बैलों को शुभकारक जानना चाहिए।।१०-१२।।

बैलों का और भी शुभ लक्षण कथन

वामावर्तैर्वामे दक्षिणपार्श्वे च दक्षिणावर्तैः ।
शुभदा भवन्त्यनडुहो जङ्घाभिश्चैणकनिभाभिः ।।१३।।

माया—वाम भाग में वामावर्त और दक्षिण भाग में दक्षिणावर्त रोओं के होने और ऐनक या मृग के जंघा के समान जंघा वाला बैल भी शुभकारक होता है।।१३।।

बैलों का और भी शुभ लक्षण कथन

वैदूर्यमल्लिकाबुद्बुदेक्षणाः स्थूलनेत्रपक्ष्माणः ।
पार्ष्णिभिरस्फुटिताभिः शस्ताः सर्वे च भारसहाः ।।१४।।

माया—ऐसा बैल, जिसके वैदूर्यमणि, मल्लिका (बेला) पुष्प, जल में बनने वाले बुलबुले (बुदबुद) के सदृश नेत्र हो, स्थूल नेत्र और शरीर हो तथा खुर का पीछे का भाग फटे न हों, तो शुभकारक होने के साथ वह भार वहन करने में सक्षम होता है।।१४।।

बैलों का और भी शुभ लक्षण कथन

घ्राणोद्देशे सवलिर्मार्जारमुखः सितश्च दक्षिणतः ।
कमलोत्पललाक्षाभः सुवालधिर्वाजितुल्यजवः ।।१५।।
लम्बैर्वृषणैर्मेषोदरश्च संक्षिप्तवंक्षणक्रोडः ।
ज्ञेयो भाराध्वसहो जवेऽश्वतुल्यश्च शस्तफलः ।।१६।।

माया—नाक के पास बलि वाला, बिल्ली सदृश मुख वाला, श्वेत दक्षिण भाग वाला, कमल अथवा लाख सदृश कान्ति वाला, सुन्दर पूँछ वाला, अश्व सदृश गति वाला, लम्बा अण्डकोश वाला, भेड़ सदृश उदर वाला, पीछे के जंघाओं और अण्डकोश के मध्य भाग तथा अग्रभागस्थ जंघाओं का मध्य स्थान सिकुड़ा हो, तो ऐसा बैल शुभकारक होने के साथ, गमन करने और भार उठाने में सक्षम तो होता ही है, अश्वगति वाला बैल शुभफलद होता है।।१५-१६।।

हंस संज्ञक बैल का लक्षण कथन

सितवर्णः पिङ्गाक्षस्ताम्रविषाणेक्षणो महावक्त्रः ।
हंसो नाम शुभफलो यूथस्य विवर्धनः प्रोक्तः ।।१७।।

माया—श्वेत वर्ण शरीर, ताम्र वर्ण सींग और नेत्र तथा लम्बा मुख, जिस बैल का हो, वह बैल हंस संज्ञक होता है। वह बैल शुभफल देने के साथ समूह वृद्धि करने में सक्षम होता है।।१७।।

और भी वृद्धिकर बैल लक्षण कथन

भूस्पृग्वालधिराताम्रविषाणो रक्तदृक् ककुद्मांश्च ।
कल्माषश्च स्वामिनमचिरात् कुरुते पतिं लक्ष्म्याः ।।१८।।

माया—भूमि को स्पर्श करने वाली पूँछ, ताम्रवर्ण के समान सींग, लाल आँखें, थूही वाला तथा कल्माष अर्थात् लाल, श्वेत और पीत मिला हुआ वर्ण वाला बैल जल्दी ही अपने स्वामी को धनवान् बनाने वाला होता है।।१८।।

बैलों के सामान्य शुभ लक्षण कथन

यो वा सितैकचरणैर्यथेष्टवर्णश्च सोऽपि शुभफलकृत् ।
मिश्रफलोऽपि ग्राह्यो यदि नैकान्तप्रशस्तोऽस्ति ।।१९।।

माया—चाहे किसी भी वर्ण का बैल हो, लेकिन उसके चारों पैर यदि श्वेत वर्ण के हों, तो वह शुभकारक है। पूर्ण रूप से शुभलक्षण सम्पन्न बैल की प्राप्ति नहीं होने पर मिला-जुला लक्षण युक्त बैल ऐसा ग्रहण करना चाहिए, जिसमें फिर भी शुभ लक्षण अधिक हों।।१९।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां गोलक्षणनामैकषष्टितमोऽध्यायः ।।६१।।

□□□

अथ द्विषष्टितमोऽध्यायः-६२

श्वलक्षणविचारः

सर्वप्रथम कुत्तों का लक्षण कथन

पादाः पञ्चनखास्त्रयोऽग्रचरणः षड्भिर्नखैर्दक्षिण-
स्ताम्रौष्ठाग्रनसो मृगेश्वरगतिर्जिघ्रन् भुवं याति च।
लाङ्गूलं ससटं दृगृक्षसदृशी कर्णौ च लम्बौ मृदू
यस्य स्यात् स करोति पोष्टुरचिरात्पुष्टां श्रियं श्वा गृहे ।।१।।

माया—अपने तीन पैरों में पाँच-पाँच नख वाला तथा आगे के दक्षिण भागस्थ शेष एक पैर में छः नख वाला, ताम्र वर्ण के समान ओष्ठ और नासाग्र भाग वाला, सिंह सदृश गति वाला, भूमि को सूँघते हुए चलने की आदत वाला, पूँछ सघन बालों वाला, भालू के सदृश नेत्र वाला तथा लम्बे और कोमल कान वाला; इन लक्षणों से सम्पन्न कुत्ता अपने स्वामी गृह को श्री या लक्ष्मी सम्पन्न करने वाला होता है॥१॥

कुक्कुरी (कुतिया) लक्षण कथन

पादे पादे पञ्च पञ्चाग्रपादे वामे यस्याः षण्नखा मल्लिकाक्ष्याः ।
वक्रं पुच्छं पिङ्गलालम्बकर्णा या सा राष्ट्रं कुक्कुरी पाति पुष्टा ।।२।।

माया—पीछे के दो पैरों और आगे का दक्षिण भागस्थ एक पैर अर्थात् तीन पैरों में पाँच-पाँच नखों और आगे के बायीं ओर के शेष एक पैर में छः नखों वाली, मल्लिका अर्थात् वेला फूल के सदृश नेत्र वाली, टेढ़ी-मेढ़ी पूँछ वाली, पीतवर्णा तथा लम्बे कान वाली; इन लक्षणों से युक्ता कुतिया अपने पालक के राज्य की रक्षा दक्षता से करती है॥२॥

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां श्वालक्षणनाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ।।६२।।

❏❏❏

अथ त्रिषष्टितमोऽध्यायः-६३

कुक्कुटलक्षणविचारः

सर्वप्रथम कुक्कुट (मुर्गी) का शुभ लक्षण कथन

कुक्कुटस्त्वृजुतनूरुहाङ्गुलिस्ताम्रवक्त्रनखचूलिकः सितः ।
रौति सुस्वरमुषात्यये च यो वृद्धिदः स नृपराष्ट्रवाजिनाम् ।।१।।

माया—जिनके पंख और अङ्गुली सीधी; मुख, नख और चोटी ताम्र वर्ण के समान; शरीर श्वेतवर्ण सदृश; रात्रि के अन्त में शोभनीय स्वर करने की आदत; इन लक्षणों से युक्त कुक्कुट (मुर्गा) राजा, उसके राज्य और घोड़ों की अभिवृद्धि करने वाला होता है।।१।।

कुक्कुट का शुभाशुभ लक्षण कथन

यवग्रीवो यो वा बदरसदृशो वापि विहगो
बृहन्मूर्धा वर्णैर्भवति बहुभिर्यश्च रुचिरः ।
स शस्तः संग्रामे मधुमधुपवर्णश्च जयकृद्
न शस्तो योऽतोऽन्यः कृशतनुरवः खञ्जचरणः ।।२।।

माया—जौ के समान कण्ठ वाला, पके बेर के समान वर्ण का शरीर वाला, बड़ा शिर वाला और श्वेत, पीत, लाल, काला आदि वर्णों से युक्त; इन लक्षणों से सम्पन्न मुर्गा युद्ध की दृष्टि से शुभकारी होता है तथा मधु या भ्रमर सदृश वर्ण का मुर्गा भी युद्ध में विजय प्रदान करने वाला होता है। इसके अतिरिक्त वर्णों का दुबला शरीर, धीमी शब्द करने की आदत तथा लंगड़ा आदि लक्षण युक्त मुर्गा सदा अशुभकारी होता है।।३।।

कुक्कुट का शुभ लक्षण कथन

कुक्कुटी च मृदुचारुभाषिणी स्निग्धमूर्तिरुचिराननेक्षणा ।
सा ददाति सुचिरं महीक्षितां श्रीयशोविजयवीर्यसम्पदः ।।३।।

माया—कोमल और सुन्दर शब्द करने की आदत वाली, चिकना शरीर वाला और सुन्दर दीखने वाली मुर्गी राजाजनों को दीर्घकाल तक श्री, यश, विजय, बल और सम्पत्ति प्रदान करने वाली होती है।।३।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां कुक्कुटलक्षणनाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ।।६३।।

अथ चतुःषष्टितमोऽध्यायः-६४

कूर्मलक्षणविचारः

सर्वप्रथम कछुओं का शुभ लक्षण कथन

स्फटिकरजतवर्णो नीलराजीविचित्रः
कलशसदृशमूर्तिश्चारुवंशश्च कूर्मः ।
अरुणसमवपुर्वा सर्षपाकारचित्रः
सकलनृपमहत्त्वं मन्दिरस्थः करोति ।।१।।

माया—स्फटिक अथवा चाँदी के सदृश श्वेत वर्ण से युक्त, नीलवर्णा रेखाओं से सम्पन्न, कलश के सदृश आकार वाला, पीठ में सुन्दर हड्डियों वाला, रक्त वर्ण अथवा सरसों के सदृश चिह्नों से शोभित आदि लक्षणों से सम्पन्न कछुआ राजा के महत्व को सम्वर्द्धित करने वाला होता है।।१।।

कछुओं का और भी शुभ लक्षण कथन

अञ्जनभृङ्गश्यामतनुर्वा बिन्दुविचित्रोऽव्यङ्गशरीरः ।
सर्पशिरा वा स्थूलगलो यः सोऽपि नृपाणां राष्ट्रविवृद्ध्यै ।।२।।

माया—अञ्जन अथवा भौंरा की तरह श्याम शरीर, बिन्दुओं से शोभित, सम्पूर्ण अङ्गों वाला तथा स्थूल गला से युक्त; इन लक्षणों से सम्पन्न कछुआ राजाजनों के राज्य की अभिवृद्धि करने वाला होता है।।२।।

कछुओं का और भी शुभ लक्षण कथन

वैदूर्यत्विट् स्थूलकण्ठस्त्रिकोणो गूढच्छिद्रश्चोरुवंशश्च शस्तः ।
क्रीडावाप्यां तोयपूर्णे मणौ वा कार्यः कूर्मो मङ्गलार्थं नरेन्द्रैः ।।३।।

माया—वैदूर्यमणि की तरह कान्ति सम्पन्न, मोटा कण्ठ वाला, त्रिभुज की तरह की आकृति वाला, आच्छादित छिद्रों वाला और सुन्दर पृष्टवंश युक्त कछुआ को राजाजनों मंगल की कामना से विहार करने योग्य वापी में अथवा बड़े मटके में अवश्य रखने का सार्थक प्रयाश करें।।३।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायांकूर्मलक्षणनाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ।।६४।।

□□□

अथ पञ्चषष्टितमोऽध्यायः-६५

छागलक्षण विचारः

सर्वप्रथम छाग (बकरा) शुभाशुभ लक्षण कथन

छागशुभाशुभलक्षणमभिधास्ये नवदशाष्टदन्तास्ते ।
धन्याः स्थाप्या वेश्मनि सन्त्याज्याः सप्तदन्ता ये ।।१।।

माया—यहाँ बकरों का शुभ अथवा अशुभ लक्षणों को कहते हैं। जिस छाग के मुख में नव, दश अथवा आठ दाँत होते हैं, वह शुभकारक होता है, लेकिन सात दाँतों से युक्त छाग अशुभकारी होता है। अतः ऐसे अशुभ लक्षण युक्त छाग का सर्वथा त्याग करना चाहिए।।१।।

छाग के शुभ लक्षण का कथन

दक्षिणपार्श्वे मण्डलमसितं शुक्लस्य शुभफलं भवति ।
ऋष्यनिभकृष्णलोहितवर्णानां श्वेतमतिशुभदम् ।।२।।

माया—जब श्वेत वर्ण के छाग के दायीं पार्श्व में कालावर्ण का मण्डल हो, तो शुभफलदायक होता हैं। जब छाग का वर्ण ऋष्य अथवा मृग की कान्ति की तरह नीला, काला अथवा लाल वर्ण का होकर उसके दायीं पार्श्व में सफेद वर्ण का मण्डल हो, तो भी अत्यन्त शुभफलद होता है।।२।।

छाग का और भी शुभफल कथन

स्तनवदवलम्बते यः कण्ठेऽजानां मणिः स विज्ञेयः ।
एकमणिः शुभफलकृद्धन्यतमा द्वित्रिमणयो ये ।।३।।

माया—प्रायः छागों के गले में स्तन की तरह लटकने वाले थैली को मणि कहा जाता है। जिस छाग में एक मणि हो, तो वह शुभ करने वाला होता है। दो मणि वाला छाग अत्यन्त शुभ करने वाला होता है।।३।।

छाग का और भी शुभफल कथन

मुण्डाः सर्वे शुभदाः सर्वसिताः सर्वकृष्णदेहाश्च ।
अर्धासिताः सितार्धा धन्याः कपिलार्धकृष्णाश्च ।।४।।

माया—विना सींग वाला अर्थात् मुण्डा सभी छाग शुभदायक होते हैं। जिस छाग का सम्पूर्ण शरीर श्वेत अथवा कृष्ण अथवा आधा काला और आधा श्वेत वर्ण अथवा आधा काला और आधा पीला वर्ण होता है, वे सभी छाग शुभप्रद होते हैं।।४।।

अब कुट्टक संज्ञक छाग का लक्षण कथन

विचरति यूथस्याग्रे प्रथमं चाम्भोऽवगाहते योऽजः।
स शुभः सितमूर्धा वा मूर्धनि वा कृत्तिका यस्य।।५।।

माया—जो छाग अपने समूह के आगे-आगे चलता हो, सबसे पहले जल में प्रवेश करता हो, सफेद वर्ण के शिर युक्त हो अथवा कृत्तिका नक्षत्र के समान छः विन्दुओं से युक्त मस्तक वाला हो, वे सभी छाग शुभदायक होते हैं। इस प्रकार के ही छाग को कुट्टक कहा गया है।।५।।

कुटिल छाग लक्षण कथन

सपृषतकण्ठशिरा वा तिलपिष्टनिभश्च ताम्रदृक् शस्तः।
कृष्णचरणः सितो वा कृष्णो वा श्वेतचरणो यः।।६।।

माया—जिस छाग के कण्ठ भाग और शिरों भाग में भिन्न विन्दु हों; तिलपिष्ठ के समान श्वेत और पीत वर्ण मिश्रित हो और ताम्रवर्ण सदृश नेत्र हो, तो वह छाग भी शुभदायक होता है। तथा श्वेत शरीर और काले पैरों वाले अथवा काला शरीर और श्वेत पैरों वाले छाग भी शुभ होते हैं। इन लक्षणों वाले छाग को कुटिल संज्ञक समझना चाहिए।।६।।

जटिल छाग लक्षण कथन

यः कृष्णाण्डः श्वेतो मध्ये कृष्णेन भवति पट्टेन।
यो वा चरति सशब्दं मन्दं च स शोभनश्छागः।।७।।

माया—जिस छाग का अण्डकोश काला हो,शरीर श्वेत वर्ण हो, उसके मध्य भाग में काला पट्टा-सा पड़ा हो, जो चरने के समय ध्वनि करता हो, मन्द गति से चरता हो, तो वह शुभ ही होते हैं। इस प्रकार का छाग 'जटिल' संज्ञक कहे गए हैं।।७।।

वामन छाग लक्षण कथन

ऋष्यशिरोरुहपादो यो वा प्राक् पाण्डुरोऽपरे नीलः।
स भवति शुभकृच्छागः श्लोकश्चाप्यत्र गर्गोक्तः।।८।।

माया—जिस छाग का शिर और पैर मृग के सदृश काला हो अथवा अगले भाग में पाण्डुर वर्ण और पीछले भाग में नीला वर्ण हो, तो वह भी शुभदायक होता है। इस प्रकार के छाग को 'वामन' कहा जाता है। इस प्रसङ्ग में गर्ग वचन आगे कहा गया है।।८।।

गर्ग के अनुसार कुट्टकादि छागों का फल कथन

कुट्टकः कुटिलश्चैव जटिलो वामनस्तथा।
ते चत्वारः श्रियः पुत्रा नालक्ष्मीके वसन्ति ते।।९।।

माया—कुट्टक, कुटिल, जटिल, वामन आदि चारों प्रकार के छाग लक्ष्मी जी के पुत्र कहे गए हैं तथा लक्ष्मीहीन देश में ये नहीं निवास करते हैं। अर्थात् ये चारों प्रकार के छाग जहाँ रहते हैं, वहाँ लक्ष्मीजी का निवास अवश्य होता है॥९॥

छाग का अशुभ लक्षण कथन

अथाप्रशस्ताः खरतुल्यनादाः प्रदीप्तपुच्छाः कुनखा विवर्णाः।
निकृत्तकर्णा द्विपमस्तकाश्च भवन्ति ये चासिततालुजिह्वाः ॥१०॥

माया—जो छाग गधा की तरह शब्द करने वाले हों, गर्म या टेढ़ी पूछ वाले हों, कुरूप नखों वाले हों, बुरा वर्ण वाले हों, फटे-से कान वाले हों, हाथी की तरह मस्तक वाले हों तथा काली तालु और जीभ वाले हों, तो छाग अशुभकर होते हैं॥१०॥

छाग के शुभलक्षण कथन

वर्णैः प्रशस्तैर्मणिभिः प्रयुक्ता मुण्डाश्च ये ताम्रविलोचनाश्च।
ते पूजिता वेश्मनि मानवानां सौख्यानि कुर्वन्ति यशः श्रियश्च ॥११॥

माया—प्रशस्त वर्ण, मणियों से युक्त गला वाला, विना सींग का मुण्डा, लाल नेत्र वाले आदि लक्षण युक्त छाग, जिन घरों या गृहों में रहते हैं, उन घरों के सुख, यश और श्री की अभिवृद्धि करने वाला होता है॥११॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां छागलक्षणनाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥६५॥

□□□

अथ षट्षष्टितमोऽध्यायः-६६

अश्वलक्षणविचारः

सर्वप्रथम अश्व का शुभ लक्षण कथन

दीर्घग्रीवाक्षिकूटस्त्रिकहृदयपृथुस्ताम्रताल्वोष्ठजिह्वः
सूक्ष्मत्वक्केशवालः सुशफगतिमुखो ह्रस्वकर्णोष्ठपुच्छः ।
जङ्घाजानूरुवृत्तः समसितदशनश्चारुसंस्थानरूपो
वाजी सर्वाङ्गशुद्धो भवति नरपतेः शत्रुनाशाय नित्यम् ॥१॥

माया—लम्बा ग्रीवा और नेत्र कोश युक्त; विस्तृत कटिप्रदेश और हृदय वाला; ताम्र वर्ण के तालु, ओष्ठ और जीभ युक्त; सूक्ष्म चर्म, शिर के बाल और पूँछ वाला; शोभनीय खुर, गति और मुख युक्त; छोटे-छोटे कान, ओष्ठ और पूँछ युक्त; गोलाकार जंघा, जानु और उरू; सम और श्वेत दन्त वाला तथा दर्शन योग्य आकृति वाला, शोभायमान शरीर वाला; इस प्रकार सर्वांग विशुद्ध अश्व सदा राजा के शत्रुओं की हानि करने वाला होता है॥१॥

अशुभ रोमावर्त्तों का लक्षण कथन

अश्रुपातहनुगण्डहृद्गलप्रोथशङ्खकटिबस्तिजानुनि ।
मुष्कनाभिककुदे तथा गुदे सव्यकुक्षिचरणे तथा शुभाः ॥२॥

माया—जिस अश्व के आँखों के नीचे का भाग, हनु, मुख, गण्ड (कपोल), हृदय, गल अर्थात् हृदय और कण्ठ की सन्धिस्थान, प्रोथ अर्थात् नासा छिद्र से नीचे का स्थान, शंख अर्थात् कान के समीप का स्थान, कटिप्रदेश, बस्ति अर्थात् नाभि और लिङ्ग का मध्य स्थान, जानु, अण्डकोश, नाभि, ककुद अर्थात् बाहु के पीछे के भाग में कृकाटिका के पास, गुदा, दायीं ओर का पेट, पैर आदि जिस किसी अङ्ग में रोम का आवर्त स्थित हो, तो उस घोड़ा को अशुभ समझना चाहिए॥२॥

शुभ रोमावर्त्तों का लक्षण कथन

ये प्रपाणगलकर्णसंस्थिताः पृष्ठमध्यनयनोपरि स्थिताः ।
ओष्ठसक्थिभुजकुक्षिपार्श्वगास्ते ललाटसहिताः सुशोभनाः ॥३॥

माया—जिस अश्व के प्रपाण अर्थात् ऊर्ध्वोष्ठ के नीचे का भाग, कण्ठ, कान, पीठ का मध्य भाग, नेत्रों का ऊपरी भाग, भौं के पास का स्थान, ओष्ठ सक्थि (ओठ का पीछे का स्थान), भुज (आगे का भाग), जानु, कुक्षि (बायीं ओर का पेट), पार्श्व,

ललाट आदि जिस-किसी अङ्ग में रोम का आवर्तन स्थित हो, उस घोड़ा को अतिशुभदायक समझना चाहिए।।३।।

अश्वों के दस ध्रुवावर्तों का कथन

तेषां प्रपाण एको ललाटकेशेषु च ध्रुवावर्ताः ।
रन्ध्रोपरन्ध्रमूर्धनि वक्षसि चेति स्मृतौ द्वौ द्वौ ।।४।।

माया—अश्व के शरीर में दस रोमावर्त अवश्य होते हैं, जिन्हें ध्रुवावर्त्त कहा जाता है। उन दस ध्रुवावर्त्तों में एक रोमावर्त्त प्रपाण अर्थात् ऊर्ध्व ओष्ठ के नीचे तल में और दूसरा मस्तक के केश भाग में तथा रन्ध्र (कुक्षि व नाभि का मध्य भाग), उपरन्ध्र अर्थात् रन्ध्र से ऊपर, मस्तक और छाती; इन चार स्थानों में दो-दो रोमावर्त्त होते हैं। इस तहर दस ध्रुवावर्त्त होते हैं।।४।।

अश्व की अवस्था के परिज्ञानार्थ कथन

षड्भिर्दन्तैः सिताभैर्भवति हयशिशुस्तैः कशायैर्द्विवर्षः
सन्दंशैर्मध्यमान्त्यैः पतितसमुदितैस्त्र्यब्धिपञ्चाब्दिकाश्वः ।
सन्दंशानुक्रमेण त्रिकपरिगणिताः कालिका पीतशुक्लाः
काचा मक्षीकशङ्खावटचलनमतो दन्तपातं च विद्धि ।।५।।

माया—अश्वों के अधस्थ दन्तपक्ति में दो दाढ़ों के मध्य छः दन्त प्रकट होते हैं। इस तरह दोनों दन्तपंक्तियों के आगे के छः दन्त श्वेत वर्ण होने पर अश्व की अवस्था एक वर्ष की और वे कृष्ण व रक्त वर्ण होने पर दो वर्ष की समझनी चाहिए।

इसी तरह दोनों दन्तपंक्तियों के मध्यवर्ती दो-दो दन्त 'सदंश' उसके पार्श्ववर्ती दो-दो दन्त 'मध्यम' और उसके भी पार्श्ववर्ती दो-दो दन्त 'अन्त्य' कहे जाते हैं।

जब उपरोक्त सदंश दन्त टूटकर नया उत्पन्न हुआ हो, तो अश्व की अवस्था तीन वर्ष की; मध्यम दन्त टूटकर नया उत्पन्न हुआ हो,. तो अश्व की अवस्था चार वर्ष की तथा अन्त्य दन्त टूटकर नया उत्पन्न हुआ हो, तो अश्व की अवस्था पाँच होती है।

जब उस सदंश दन्त के ऊपर काला विन्दु दीखे, तो अश्व की अवस्था छः वर्ष की; मध्यम के ऊपर काला बिन्दु दीखे, तो उसकी अवस्था सात वर्ष की तथा अन्त्य के ऊपर काला विन्दु दीखे, तो उसकी अवस्था आठ वर्ष की होती है।

जब उस सदंश दन्त के ऊपर पीला विन्दु हो, तो अश्व की अवस्था ग्यारह वर्ष की होती है।

जब उस सदंश के ऊपर श्वेत विन्दु दीखे, तो अश्व की अवस्था बारह वर्ष, मध्यम के ऊपर श्वेत विन्दु से तेरह वर्ष तथा अन्त्य पर श्वेत विन्दु के होने से अश्व की अवस्था चौदह वर्ष की होती है।

उपरोक्त की तरह सदंश दन्त के ऊपर काँच के समान सफेद बिन्दु होने से अश्व की अवस्था पन्द्रह वर्ष; मध्यम पर होने से सोलह वर्ष तथा अन्त्य पर काँच की तरह सफेद विन्दु के दीखने से अश्व की अवस्था सत्रह वर्ष की होती है।

पुनः सदंश के ऊपर मधु वर्ण के विन्दु होने पर अश्व की अवस्था अठारह वर्ष; मध्यम के ऊपर मधुवर्ण के विन्दु से उन्नीस वर्ष तथा अन्त्य के ऊपर मधुवर्ण के विन्दु से अश्व की अवस्था बीस वर्ष की होती है।

पुनः भी सदंश पर शंख के वर्ण का विन्दु दीखने से इक्कीस वर्ष; मध्यम पर वैसी ही विन्दु दीखने पर बाईस वर्ष तथा अन्त्य के ऊपर वैसी ही विन्दु के होने पर अश्व की अवस्था तेईस वर्ष की होती है।

और भी सदंश पर छिद्र से चौबीस वर्ष; मध्यम पर छिद्र से पच्चीस वर्ष तथा अन्त्य दन्त पर छिद्र होने से छब्बीस वर्ष अश्व की अवस्था होती है।

पुनः सदंश के हिलने से सत्ताईश वर्ष; मध्यम के हिलने से अट्ठाईस वर्ष तथा अन्त्य के हिलने से अश्व की अवस्था उनतीस वर्ष की होती है।

इसी तरह सदंश के गिर गए होने से तीस वर्ष; मध्यम के गिर गए होने से इक्कतीस वर्ष तथा अन्त्य के गिर गए होने से अश्व की अवस्था बत्तीस वर्ष की होती है॥५॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायामश्वलक्षण नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥६६॥

□□□

अथ सप्तषष्टितमोऽध्यायः-६७

हस्तिलक्षणविचारः

हस्ति (हाथी) की भद्र, मन्द, मृग और मिश्रः ये चार जातियाँ होती हैं। वहाँ सर्वप्रथम भद्र जाति हस्ति लक्षण का कथन

मध्वाभदन्ताः सुविभक्तदेहा न चोपदिग्धा न कृशाः क्षमाश्च।
गात्रैः समैश्चापसमानवंशा वराहतुल्यैर्जघनैश्च भद्राः ।।१।।

माया—जिन हाथियों के शहद वर्ण की तरह दाँत, शारीरिक अवयवों का सुन्दर विभाजन, न अति स्थूल और न अति दुर्बल, कार्य में सक्षम, समान अङ्गों से सम्पन्न, धनुषाकृति पृष्ठवंश (पृष्ठ की हड्डी) तथा सूअर के सदृश गोलाकार जानु और कमर हो, उसकी भद्रसंज्ञा कही गई है।।१।।

मन्द जाति हस्ति लक्षण कथन

वक्षोऽथ कक्षावलयः श्लथाश्च लम्बोदरस्त्वग्बृहती गलश्च।
स्थूला च कुक्षिः सह पेचकेन सैंही च दृग् मन्दमतङ्गजस्य ।।२।।

माया—जिन हाथियों के छाती और कक्षावलय (शरीर मध्य का गोलाकृति) ढीले, पेट लम्बा, स्थूल चमड़ा और कण्ठ तथा स्थूल कुक्षि और पेचक (पुच्छमूल), लेकिन सिंह के सदृश दृष्टि हो, उनकी मन्दसंज्ञा जाननी चाहिए।।२।।

मृग और मिश्र जातियों के हस्ति लक्षण कथन

मृगास्तु ह्रस्वाधरवालमेढ्रास्तन्वङ्घ्रिकण्ठद्विजहस्तकर्णाः।
स्थूलेक्षणाश्चेति यथोक्तचिह्नैः सङ्कीर्णनागा व्यतिमिश्रचिह्नाः ।।३।।

माया—निम्न ओष्ठ वाले; लघु पूँछ के बाल और लिङ्ग वाले; छोटे-छोटे पैर, कण्ठ, दन्त, सूँड़ और कान वाले तथा बड़ी-बड़ी आँखों वाले, इन लक्षणों से सम्पन्न हस्ति (हाथी) की मृग संज्ञा कही गई है। इस प्रकार उपरोक्त तीनों प्रकार की हस्तियों के लक्षण मिश्रित रूप में जिन हस्तियों में उपलब्ध हों, उन हस्तियों या हाथियों की मिश्र अथवा संकीर्ण संज्ञा कही गई।।३।।

उपरोक्त जातिगत हाथियों की लम्बाई, मोटाई और ऊँचाई कथन

पञ्चोन्नतिः सप्त मृगस्य दैर्घ्यमष्टौ च हस्ताः परिणाहमानम्।
एकद्विवृद्धावथ मन्दभद्रौ सङ्कीर्णनागोऽनियतप्रमाणः ।।४।।

माया—मृग जाति के हाथियों की पाँच हाथ ऊँचाई; पूँछ से कुम्भ पर्यन्त की सात हाथ लम्बाई तथा मध्य भाग की आठ हाथ मोटाई कही गई है। तदनुसार मृग

जाति के हाथियों की ऊँचाई, लम्बाई और मोटाई में एक-एक हाथ वृद्धि करने से मन्द जाति के हाथियों की तथा दो-दो हाथ वृद्धि करने से भद्र जाति के हाथियों की ऊँचाई, लम्बाई और मोटाई आदि हो जाती है। मिश्र जाति के हाथियों की ऊँचाई, लम्बाई और मोटाई आदि का माप अनिश्चित जानना चाहिए।।४।।

हस्तिमद का वर्ण लक्षण कथन

भद्रस्य वर्णो हरितो मदश्च मन्दस्य हारिद्रकसन्निकाशः।
कृष्णो मदश्चाभिहितो मृगस्य सङ्कीर्णनागस्य मदो विमिश्रः।।५।।

माया—भद्र जातिगत हाथियों का मद हरा, मन्द का हल्दि की तरह पीतवर्ण, मृग के मद का काला तथा मिश्र या संकीर्ण जातिगत हाथियों का मद भी मिश्रित वर्ण का समझना चाहिए।।५।।

हस्तियों के शुभ लक्षण कथन

ताम्रोष्ठतालुवदनाः कलविङ्कनेत्राः
स्निग्धोन्नताग्रदशनाः पृथुलायतास्याः।
चापोन्नतायतनिगूढनिमग्नवंशा-
स्तन्वेकरोमचितकूर्मसमानकुम्भाः ।।६।।
विस्तीर्णकर्णहनुनाभिललाटगुह्याः
कूर्मोन्नतद्विनवविंशतिभिर्नखैश्च ।
रेखात्रयोपचितवृत्तकराः सुवाला
धन्याः सुगन्धिमदपुष्करमारुताश्च।।७।।

माया—जिन हाथियों के ताम्र वर्ण के समान ओष्ठ, तालु और मुख; गृह निवासी पक्षियों के वर्ण समान नेत्र; दाँत का अग्रभाग चिकना और ऊँचा; मुख विस्तृत और बड़ा; धनुष की तरह ऊँचा और बड़ा निगूढ़ और निमग्न पृष्ठवंश; कछुआ के सदृश कुम्भों में प्रत्येक सूक्ष्म रोम; कान, हनु, नाभि, ललाट और लिङ्ग, ये सभी विस्तृत; कछुआ की तरह अट्ठारह या बीस नखें; तीन रेखाओं के सहित गोलाकार सूँड तथा सुगन्ध के साथ मदार्द्र सूँड-वायु हो, इस प्रकार के लक्षणों से सम्पन्न हस्ति शुभ करने वाला होता है।।६-७।।

हस्तियों के और भी शुभ लक्षण कथन

दीर्घाङ्गुलिरक्तपुष्कराः सजलाम्भोदनिनादबृंहिणः।
बृहदायतवृत्तकन्धरा धन्या भूमिपतेर्मतङ्गजाः।।८।।

माया—सूँड का अग्रभाग पुष्कर और पुष्कर का अग्रभाग अङ्गुली कहलाता है। जिन हाथियों की अङ्गुली दीर्घ, पुष्कर लाल वर्ण का, जल पूर्ण मेघ गर्जन सदृश

गल गर्जन तथा विस्तार युक्त, लम्बा, गोलाकर ग्रीवा हो, इस प्रकार के लक्षणों से सम्पन्न हाथी राजा के लिए अत्यन्त शुभकारक होता है॥८॥

हस्तियों के अशुभ लक्षण कथन

निमर्दाभ्यधिकहीननखाङ्गान् कुब्जवामनकमेषविषाणान्।
दृश्यकोशफलपुष्करहीनान् श्यावनीलशबलासितताललून् ॥९॥
स्वल्पवक्त्ररुहमत्कुणषण्ढान् हस्तिनीं च गजलक्षणयुक्ताम्।
गर्भिणीं च नृपतिः परदेशं प्रापयेदतिविरूपफलास्ते ॥१०॥

माया—यदि हाथी मदहीन; नख और अवयव न्यूनाधिक वाला; कुब्ज; मेढ़ों के सींगों की तरह दाँत वाला; जिनका अण्डकोश दीखेन वाला; पुष्कर रहित; मलिन; नील; बहुवर्ण या काला तालु वाला; लघु दन्त और मुखरोम वाला; दन्त रहित; षण्ढ; हाथी के लक्षण से युक्त गर्भिणी हथिनी हो, तो इस प्रकार के लक्षणों से सम्पन्न हाथियों को राजा अन्य देश में भेज दें; क्योंकि ये लक्षण अशुभफलकारक हाथियों के हैं॥९-१०॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां हस्तिलक्षणनाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥६७॥

□□□

अथाष्टषष्टितमोऽध्यायः-६८

पुरुषलक्षणविचारः

चिन्तनयोग्य कायगत लक्षण कथन

उन्मानमानगतिसंहतिसारवर्ण-
स्नेहस्वरप्रकृतिसत्त्वमनूकमादौ ।
क्षेत्रं मृजाञ्च विधिवत्कुशलोऽवलोक्य-
सामुद्रविद्वदति यातमनागतं वा ॥१॥

माया—सुदक्ष सामुद्रिक को पहले मनुष्य के शरीर की उच्चता, परिमाणता, गति, संहति, सार, वर्ण चिकनापन, स्वर, स्वभाव, पूर्वजन्मार्जित कर्म प्रभाव, सन्धिसमेत सत्त्व, क्षेत्र और लावण्यता को कुशलतापूर्वक देखकर गत अथवा अनागत शुभाशुभ को कहना चहिए ॥१॥

पादलक्षणानुसार फल कथन

अस्वेदनौ मृदुतलौ कमलोदराभौ
श्लिष्टाङ्गुली रुचिरताम्रनखौ सुपार्ष्णी ।
उष्णौ शिराविरहितौ सुनिगूढगुल्फौ
कूर्मोन्नतौ च चरणौ मनुजेश्वरस्य ॥२॥

माया—जिस पुरुष के चरण पसीना रहित, कोमल तलवे वाले हों, कमल के उदर की तरह जिनमें परस्पर अङ्गुलियाँ सटी हों, मनोहर लालवर्ण वाले नाखून हों और सुन्दर एड़ियाँ गरम तथा नसों रहित हों तथा गम्भीर गट्ठों वाले कछुए की तरह ऊँचे हों, तो वह मनुष्य नरेश होता है ॥२॥

शूर्पाकारविरूक्षपाण्डुरनखौ वक्रौ शिरासन्ततौ
संशुष्कौ विरलाङ्गुली च चरणौ दारिद्र्यदुःखप्रदौ ।
मार्गायोत्कटकौ कषायसदृशौ वंशस्य विच्छेददौ
ब्रह्मघ्नौ परिपक्वमृद्द्युतितलौ पीतावगम्यारतौ ॥३॥

माया—जिन पुरुषों के दोनों पैर सूप के समान (आगे बहुत चौड़े तथा पीछे कम चौड़े) तथा विशेष रुखे हों, जिनमें पीले नख हों, टेढ़े तथा नसों से व्याप्त हों, खूब सूखे हो, बिरली (अङ्गुलियों को सटाने पर रिक्तता रहती हो) अङ्गुलियों वाले हों, तो वह पुरुष दरिद्री और दुःखी होता है।

जिन पुरुषों के पैर बड़े हों, वह अत्यन्त दूर पथ में गमन करता है और जिनके पैर कषायवर्ण हों, उसके वंश का विनाश होता है।

जिनके पैर के तलवे का रङ्ग पकी मिट्टी के समान हो, तो वह ब्राह्मणघाती होता है तथा जिनके तलवे पीले हों, वह अगम्या रमणी में आसक्त होता है ॥३॥

पुरुष जङ्घ का फल कथन

प्रविरलतनुरोमवृत्तजङ्घा द्विरदकरप्रतिमैर्वरोरुभिश्च ।
उपचितसमजानवश्च भूपा धनरहिताः श्वसृगालतुल्यजङ्घाः ॥४॥

माया—जिन पुरुषों के जाँघों में रोयें विरल और सूक्ष्म हों तथा जाँघें गोलाकार हों तथा जिनके ऊरु (पतली जाँघें) हाथी की सूँड़ के समान हों और दोनों जानु (घुट्नू) मांसल और सम हों, वे राजा होते है एवं जिन पुरुषों की जाँघें कुत्ते या सियार के समान चौड़ी हों, वे दरिद्री होते हैं ॥४॥

पुरुष रोम लक्षण का फल कथन

रोमैकैकं कूपके पार्थिवानां द्वे द्वे ज्ञेये पण्डितश्रोत्रियाणाम् ।
त्र्याद्यैर्निःस्वा मानवा दुःखभाजः केशाश्चैवं निन्दिताः पूजिताश्च ॥५॥

माया—जिन पुरुषों के रोमकूप में एक-एक रोम हो, वे राजा होते हैं। जिन पुरुषों के रोमकूपों में दो-दो रोम हों, वे पण्डित वा वेदपाठी होते हैं।

जिन पुरुषों के रोमकूपों में तीन-तीन या चार-चार रोम हों, वे धनरहित और दुःखभागी होते हैं। इसी तरह केशों के भी शुभाशुभ लक्षण जानना चाहिए ॥५॥

पुरुष जानु लक्षण का फल कथन

निर्मांसजानुर्म्रियते प्रवासे सौभाग्यमल्पैर्विकटैर्दरिद्राः ।
स्त्रीनिर्जिताश्चैव भवन्ति निम्नै राज्यं समांसैश्च महद्भिरायुः ॥६॥

माया—जिनके घुटने मांस रहित हों, तो वे परदेश में मरते हैं। जिनके घुटने थोड़े मांस वाले हों, वह भाग्यशाली होता है। जिनके घुटने चौड़े हों, वे दरिद्री होते हैं।

जिन पुरुषों के घुटने गहरे हों, वे स्त्री के वश में रहते हैं। जिन पुरुषों के घुटने मांसल हों, वे राज्य पाते हैं और भारी घुटने दीर्घायु के द्योतक हैं ॥६॥

लिङ्ग लक्षणानुसार फल कथन

लिङ्गेऽल्पे धनवानपत्यरहितः स्थूलेऽपि हीनो धनै-
र्मेढ्रे वामनते सुतार्थरहितो वक्रेऽन्यथा पुत्रवान् ।
दारिद्र्यं विनते त्वधोऽल्पतनयो लिङ्गे शिरासन्तते
स्थूलग्रन्थियुते सुखी मृदु करोत्यन्तं प्रमेहादिभिः ॥७॥

माया—जिनका लिङ्ग छोटा हो, वे धनी होते हैं। जिनका लिङ्ग मोटा हो, वे

सन्तान रहित होते हैं। जिनका लिङ्ग बायीं ओर झुका हो, वे पुरुष दरिद्री होते हैं। जब लिङ्ग ढेढ़ा हो, तो सन्तान और धन का अभाव होता है।

जिनका लिङ्ग सीधा हो, वे पुत्रवान् होते हैं। जिनका लिङ्ग नीचे की ओर लचा हो, वे दरिद्री होते हैं। जिनका लिङ्ग नसों से घिरा हो, वे थोड़ी सन्तान वाले होते हैं।

जिनका लिङ्ग मोटी गाँठों वाला हो, वे सुखी होते हैं। जिनका लिङ्ग ढीला हो, तो प्रमेह, पथरी आदि घोर रोगों से उनकी मृत्यु होती है ॥७॥

पुनः लिङ्ग और वृषण के लक्षणानुसार फल कथन

कोशनिगूढैर्भूपा दीर्घैर्भग्नैश्च वित्तपरिहीनाः।
ऋजुवृत्तशेफसो लघुशिरालशिश्नाश्च धनवन्तः ॥८॥

माया—जिन पुरुषों के लिङ्ग और अण्डकोष छिपे हों, यानी मांस से घिरे हों, वे पृथ्वी पति होते हैं। जिन पुरुषों के कोष और लिङ्ग लम्बे तथा ढीलें हों, वे धनहीन रहते हैं।

जिन पुरुषों का लिङ्ग सीधा, गोलाकार अथवा छोटा-सा होकर नसों से व्याप्त हों, वे धनी होते हैं ॥८॥

जलमृत्युरेकवृषणो विषमैः स्त्रीचञ्चलः समैः क्षितिपः।
ह्रस्वायुश्चोद्बद्धैः प्रलम्बवृषणस्य शतमायुः ॥९॥

माया—जिनके एक ही अण्डकोष हो, वे जल में मौत पाते हैं। जिनके वृषण विषम होते हैं वे स्त्रियों के प्रति चञ्चल रहता है।

जिनके वृषण सम होते हैं वे राजा होते हैं। जिनके वृषण ऊपर को उठे हों, वे अल्पायु होते है। जिनके वृषण बड़े लम्बे होते हैं, वे सौ वर्ष की आयु पाते हैं ॥९॥

रक्तैराढ्या मणिभिर्निर्द्रव्याः पाण्डुरैश्च मलिनैश्च।
सुखिनः सशब्दमूत्रा निःस्वा निःशब्दधाराश्च ॥१०॥
द्वित्रिचतुर्धाराभिः प्रदक्षिणावर्तवलितमूत्राभिः।
पृथिवीपतयो ज्ञेया विकीर्णमूत्राश्च धनहीनाः ॥११॥

मूत्रधारा, मणि, बस्ति और शुक्रगन्ध के लक्षण का फल कथन

एकैव मूत्रधारा वलिता रूपप्रदा न सुतदात्री।
स्निग्धोन्नतसममणयो धनवनितारत्नभोक्तारः ॥१२॥
मणिभिश्च मध्यनिम्नैः कन्यापितरो भवन्ति निःस्वाश्च।
बहुपशुभाजो मध्योन्नतैश्च नात्युल्बणैर्धनिनः ॥१३॥

माया—जिनके लिङ्ग की मणियाँ लाल हों, वे धनवान् होते हैं। जिनके लिङ्ग की मणियाँ पीली वा मैली हों, वे दरिद्री होते हैं।

जिन पुरुषों के पेशाब करने में शब्द होता है, वे सुखी रहते हैं। जिन पुरुषों की मूत्र-धारा में शब्द न होता हो, वे दरिद्री होते हैं।

जिन पुरुषों के एक ही मूत्रधारा चलती है, वह उनको रूप की प्रधानता देती है; परन्तु पुत्र नहीं देती है। जिन पुरुषों के लिङ्ग का अग्रभाग चिकना, ऊँचा और सम हो, वे धन व स्त्रीरत्न को भोगने वाले होते हैं।

जिन पुरुषों की मणियाँ बीच में गहरी हों, वे कन्याओं के पिता और दरिद्री होते हैं। जिनकी मणियाँ बीच में ऊँची हों, वे पशुपालक होते हैं। जिन पुरुषों की मणियाँ बहुत ऊँची न हों, वे धनी होते हैं॥१०-१३॥

परिशुष्कबस्तिशीर्षैर्धनरहिता दुर्भगाश्च विज्ञेयाः।
कुसुमसमगन्धशुक्रा विज्ञातव्या महीपालाः॥१४॥

मधुगन्धे बहुवित्ता मत्स्यसगन्धे बहून्यपत्यानि।
तनुशुक्रः स्त्रीजनको मांससगन्धो महाभोगी॥१५॥

मदिरागन्धे यज्वा क्षारसगन्धे च रेतसि दरिद्रः।
शीघ्रं मैथुनगामी दीर्घायुरतोऽन्यथाऽल्पायुः॥१६॥

माया—जिनके पेडू व शिर सूखे हों, तो उनको विशेषता से दरिद्री जानना चाहिए। जिन पुरुषों के वीर्य में फूल-सी गन्ध आती हो, उन्हें राजा जानना चाहिए।

जिन पुरुषों के वीर्य में शहद-सी गन्ध आती हो, वे बड़े धनी होते हैं। जिनके शुक्र में मछली-सी गन्ध हो, वे बहुत-सी सन्तान पाते हैं। जिसे थोड़ा-सा वीर्य होता है, वह कन्या उपजाता है। जिस पुरुष के वीर्य में मांस-सी गन्ध हो, वह महाभोगी होता है।

जिस पुरुष के वीर्य में मदिरा-सी गन्ध आती हो, वह विधि से यज्ञ करने वाला होता है।

जिस पुरुष के वीर्य में क्षार-सी गन्ध आती हो, वह दरिद्री होता है। जिस पुरुष के मैथुन करने में शीघ्रता होती हो, तो वह पुरुष दीर्घायु पाता है।

जिस पुरुष के मैथुन करने में थोड़ी देर लगती हो, तो उसे थोड़ी आयु वाला जानना चाहिए॥१४-१६॥

स्फिक्लक्षण का फल कथन

निःस्वोऽतिस्थूलस्फिक् समांसलस्फिक् सुखान्वितो भवति।
व्याघ्रान्तोऽध्यर्धस्फिग् मण्डूकस्फिग् नराधिपतिः॥१७॥

भाषा—जिस पुरुष के कूल्हे बहुत मोटे हों, वह दरिद्री होता है। जिस पुरुष के कूल्हे मांसल हों, वह सुखी होता है।

जिसके कूल्हे मध्यम हों, वह रोगी होता है। जिस पुरुष के कूल्हे मेंढ़क के समान हों, वह नरपाल होता है ॥१७॥

कटि-उदर लक्षण का फल कथन

सिंहकटिर्मनुजेन्द्रः कपिकरभकटिर्धनैः परित्यक्तः ।
समजठरा भोगयुता घटपिठरनिभोदरा निःस्वाः ॥१८॥

भाषा—जिस पुरुष की कमर सिंह की तरह हो, वह राजा होता है। जिस पुरुष की कमर वानर व ऊँट के बच्चे के समान हो, वह दरिद्री होता है।

जिन पुरुषों के पेट समान हों, वे भोगी होते हैं। जिन पुरुषों का पेट घड़ा या बटलोही की तरह हो, वे दरिद्री होते हैं ॥१८॥

पार्श्व-कुक्ष-उदरलक्षणानुसार फल कथन

अविकलपार्श्वा धनिनो निम्नैर्वक्रैश्च भोगसन्त्यक्ताः ।
समकुक्षा भोगाढ्या निम्नाभिर्भोगपरिहीनाः ॥१९॥
उन्नतकुक्षाः क्षितिपाः कुटिलाः स्युर्मानवा विषमकुक्षाः ।
सर्पोदरा दरिद्रा भवन्ति बह्वाशिनश्चैव ॥२०॥

भाषा—जिन पुरुषों की पसलियाँ अविकल हों, वे धनी होते हैं। जिन पुरुषों की पसलियाँ गहरी व टेढ़ी हों, वे भोग-विहीन होते हैं।

जिनकी कोखें समान हों, वे भोगयुक्त होते हैं। जिन पुरुषों की कोखें गहरी हों, वे भोगहीन होते हैं।

जिनकी कोखें ऊँची हों, वे राजा होते हैं। जिन पुरुषों की कोखें विषम हों, वे कुटिल (टेढ़े) होते हैं।

जिनके पेट साँप के उदर के समान हों, वे दरिद्री तथा बहुत पेटू (अत्यधिक खाने वाले) होते हैं ॥१९-२०॥

नाभिलक्षणानुसार फल कथन

परिमण्डलोन्नताभिर्विस्तीर्णाभिश्च नाभिभिः सुखिनः ।
अल्पा त्वदृश्यनिम्ना नाभिः क्लेशावहा भवति ॥२१॥
वलिमध्यगता विषमा शूलाद् बाधां करोति नैःस्व्यं च ।
शाठ्यं वामावर्ता करोति मेधां प्रदक्षिणतः ॥२२॥
पार्श्वायता चिरायुषमुपरिष्टाच्चेश्वरं गवाढ्यमधः ।
शतपत्रकर्णिकाभा नाभिर्मनुजेश्वरं कुरुते ॥२३॥

माया—जिन पुरुषों की नाभि बड़ी व चारों ओर ऊँची हों, वे सुखी होते हैं। जिन पुरुषों की नाभि छोटी तथा अदृश्य होकर गहरी हो, वह उन्हें क्लेशदायक होती है।

जिन पुरुषों की नाभि बलियों के बीच प्राप्त होकर विषम हो, वह उन्हें शूलरोगी दरिद्री बनाती है।

जिनकी नाभि वामावर्त हो, वह शठता द्योतक है और जिनकी नाभि दक्षिणावर्त हो, वह बुद्धिदायी है, यानी वे पुरुष मेधावी होते हैं।

जिसकी नाभि दोनों ओर चौड़ी हो, तो वह उसे दीर्घजीवी बनाता है। जिसकी नाभि ऊपर के भाग में चौड़ी हो, वह उसे धनी करती है।

जिसकी नाभि नीचे की ओर चौड़ी हो, वह गायों से सम्पन्न करती है। जिसकी नाभि कमलकर्णिका के समान हो, वह उसे राजा बनाती है॥२१-२३॥

बलिलक्षण का फल कथन

शस्त्रान्तं स्त्रीभोगिनमाचार्यं बहुसुतं यथासंख्यम्।
एकद्वित्रिचतुर्भिर्वलिभिर्विन्द्याद् नृपं त्ववलिम्॥२४॥
विषमवलयो मनुष्या भवन्त्यगम्याभिगामिनः पापाः।
ऋजुवलयः सुखभाजः परदारद्वेषिणश्चैव॥२५॥

माया—जिस पुरुष के उदर में एक ही बलि हो, वह शस्त्राघात से मौत पाता है। जिसके उदर में दो बलि हों, वे उसे स्त्रीभोगी करती है।

जिसके उदर में तीन बलियाँ हों, वे आचार्य बनाती हैं। जिसके उदर में चार बलियाँ हो, वे उसे अनेक सन्तानों वाला करती हैं।

जिस पुरुष के उदर में एक भी बलि देख ही न पड़े तो उसे नरपाल जानना चाहिए।

जिनकी बलियाँ विषम हों, वे मनुष्य अगम्यास्त्रीगामी होकर पापी होते हैं। जिनकी बलियाँ सीधी हों, वे सुतभागी होकर परदाराओं से विरोध रखते हैं॥२४-२५॥

पार्श्वलक्षण का फल कथन

मांसलमृदुभिः पार्श्वैः प्रदक्षिणावर्तरोमभिर्भूपाः।
विपरीतैर्निर्द्रव्याः सुखपरिहीनाः परप्रेष्याः॥२६॥

माया—जिन पुरुषों के बाज़ू मांसल व कोमल प्रदक्षिणावर्त होकर रोमों से घिरे हों, वे राजा होते हैं। जिनके बाजू विपरीत हों, वे दरिद्री तथा सुखविहीन होकर दास होते हैं॥२६॥

चूचकलक्षणानुसार फल कथन

सुभगा भवन्त्यनुद्बद्धचूचुका निर्धना विषमदीर्घैः ।
पीनोपचितनिमग्नैः क्षितिपतयश्चूचुकैः सुखिनः ॥२७॥

भाषा—जिन पुरुषों के स्तनशिर ऊँचे न हों, तो वे लोग सौभाग्यशाली होते हैं। जिनके स्तनशिर विषम होकर बड़े हों, वे निर्धन होते हैं। जिनके स्तन शिर मोटे व ऊँचे हों, वे राजा होकर सुखी होते हैं ॥२७॥

हृदयलक्षणानुसार फल कथन

हृदयं समुन्नतं पृथु न वेपनं मांसलं च नृपतीनाम् ।
अधनानां विपरीतं खररोमचितं शिरालं च ॥२८॥

भाषा—जिस पुरुष का वक्षस्थल ऊँचा व चौड़ा होकर मांसल हो, वे राजा होते हैं। जिनका वक्षस्थल उपरोक्त के विपरीत लक्षणों से युक्त हो, अर्थात् निम्न, कृश, कम्पनयुक्त और कड़े बालों से युक्त हो, वे पुरुष नराधम होते हैं।

जिनका वक्षस्थल समान हो, वे धनी होते हैं। जिनका वक्षस्थल मोटा हो, वे प्राणी वीर होते हैं ॥२८॥

समवक्षसोऽर्थवन्तः पीनैः शूरा ह्यकिञ्चनास्तनुभिः ।
विषमं वक्षो येषां ते निःस्वाः शस्त्रनिधनाश्च ॥२९॥

भाषा—जिनका वक्षस्थल पतला हो, वे दरिद्री होते हैं। जिनका वक्षस्थल विषम हो, वे निर्धन होकर शस्त्राघात से मृत्यु पाते हैं ॥२९॥

विषमैर्विषमो जत्रुभिरर्थविहीनोऽस्थिसन्धिपरिणद्धैः ।
उन्नतजत्रुर्भोगी निम्नैर्निःस्वोऽर्थवान् पीनैः ॥३०॥

भाषा—जिसकी हँसली असमान हो, वह दुश्चरित्र वाला होता है। जिसकी हँसली अस्थिसन्धियों से बँधी हुई हो, वह धन हीन होता है।

जिसकी हँसली उँची हो, वह भोगी होता है। जिसकी हँसली निचली हो, वह दरिद्री होता है। जिसकी हँसली मोटी हो, वह धनवान् होता है ॥३०॥

ग्रीवा-पृष्ठ लक्षणानुसार फल कथन

चिपिटग्रीवो निःस्वः शुष्का सशिरा च यस्य वा ग्रीवा ।
महिषग्रीवः शूरः शस्त्रान्तो वृषसमग्रीवः ॥३१॥
कम्बुग्रीवो राजा प्रलम्बकण्ठः प्रभक्षणो भवति ।
पृष्ठमभग्नमरोमशमर्थवतामशुभदमतोऽन्यत् ॥३२॥

भाषा—जिस पुरुष की गर्दन चपटी या नसों से व्याप्त होकर सूखी हो, वह

निर्धन होता है। जिसकी गर्दन भैंसे के समान हो, वह सूरमा होता है। जिसकी गर्दन बैल के समान हो, उसकी शस्त्राघात से मौत होती है।

जिस पुरुष की गर्दन शङ्ख के समान (तीन रेखा से अङ्कित) हो, वह राजा होता है। जिसका कण्ठ लम्बा हो, वह बहुभोगी होता है।

जिनकी पीठ अभग्न होकर रोमहीन हो, वे अर्थशाली होते हैं। इससे विपरीत पीठ अशुभदायक होती है ॥३१-३२॥

कक्षालक्षणानुसार फल कथन

अस्वेदनपीनोन्नतसुगन्धसमरोमसङ्कुलाः कक्षाः।
विज्ञातव्या धनिनामतोऽन्यथार्थैर्विहीनानाम् ॥३३॥

भाषा—जिन पुरुष की कक्षायें पसीने से रहित, मोटी, ऊँची तथा सुगन्धित होकर समान रोमों से आवृत्त हों, उन्हें विशेषता से धनी जानना चाहिए। इसके विपरीत निर्धनियों की जानना चाहिए ॥३३॥

स्कन्धलक्षणानुसार फल कथन

निर्मांसौ रोमचितौ भग्नावल्पौ च निर्धनस्यांसौ।
विपुलावव्युच्छिन्नौ सुश्लिष्टौ सौख्यवीर्यवताम् ॥३४॥

भाषा—जिसके दोनों कन्धे मांस रहित, रोमों से व्याप्त व भग्न होकर छोटे हों, वह निर्धन होता है। जिनके कन्धे चौड़े व उँचे होकर भली भाँति भरे हों, वे पराक्रमी सुखी होते हैं ॥३४॥

बाहुलक्षणानुसार फल कथन

करिकरसदृशौ वृत्तावाजान्ववलम्बिनौ समौ पीनौ।
बाहू पृथिवीशानामधनानां रोमशौ ह्रस्वौ ॥३५॥

भाषा—जिन पुरुषों की दोनों भुजाएँ गोलाकार, हाथी की सूँड़ के समान, परस्पर बराबर और मोटी हों तथा घुटनों तक लम्बी हों, वे भूपाल होते हैं। जिनकी दोनों बाहें रोमसहित छोटी हों, वे निर्धन होते हैं ॥३५॥

हस्ताङ्गुलिलक्षणानुसार फल कथन

हस्ताङ्गुलयो दीर्घाश्चिरायुषामवलिताश्च सुभगानाम्।
मेधाविनां च सूक्ष्माश्चिपिटाः परकर्मनिरतानाम् ॥३६॥
स्थूलाभिर्धनरहिता बहिर्नताभिश्च शस्त्रनिर्याणाः।
कपिसदृशकरा धनिनो व्याघ्रोपमपाणयः पापाः ॥३७॥

भाषा—जिन पुरुषों के हाथ की अँगुलियाँ बड़ी हों, वे दीर्घजीवी होते हैं। जिनकी अँगुलियाँ बलियों से रहित हों, वे बड़े भाग्यशाली होते हैं।

जिनकी अँगुलियाँ पतली हों, वे बुद्धिमान् होते हैं। जिनकी अँगुलियाँ चपटी हों, वे दासकर्म करने वाले होते हैं।

जिनके हाथ की अँगुलियाँ मोटी हों, वे निर्धन होते हैं। जिनकी अँगुलियों का अग्रभाग लचा-सा हो, वे शस्त्राघात से मृत्यु पाते हैं।

जिनके हाथ वानर के हाथ की तरह हों, वे धनी होते हैं। जिनके हाथ बाघ के हाथ के समान हों, वे पापी होते हैं ॥३६-३७॥

मणिबन्धलक्षण का फल कथन

मणिबन्धनैर्निगूढैदृढैश्च सुश्लिष्टसन्धिभिर्भूपाः।
हीनैर्हस्तच्छेदः श्लथैः सशब्दैश्च निर्द्रव्याः ॥३८॥

भाषा—जिनके मणिबन्ध (कलाई) गम्भीर पुष्ट तथा सन्धियों से लिपटे हों, वे पृथ्वीपति होते हैं।

जिनके कब्जे छोटे तथा सन्धियों से ढीले हों, ऐसे पुरुषों का हाथ काटा जाता है। जिनके कब्जे शब्दसमेत, हों, वे धनरहित होते हैं ॥३८॥

करतललक्षणानुसार फल कथन

पितृवित्तेन विहीना भवन्ति निम्नेन करतलेन नराः।
संवृतनिम्नैर्धनिनः प्रोत्तानकराश्च दातारः ॥३९॥
विषमैर्विषमा निःस्वाश्च करतलैरीश्वरास्तु लाक्षाभैः।
पीतैरगम्यवनिताभिगामिनो निर्धना रूक्षैः ॥४०॥

भाषा—जिनके करतल गहरे हों, वे पैतृकधन नहीं पाते। जिनके करतल गोलाकार तथा गहरे हों, वे धनी होते हैं। जिनके करतल उन्नत हों, वे दाता होते हैं।

जिनके हाथ विषम (असमान) हों, वे पापी तथा निर्धन होते हैं। जिनके करतल लाख के समान लालवर्ण हों, वे धनवान् होते हैं।

जिनके करतल हल्दी के समान पीले हों, वे अगम्या रमणी से रमण करते हैं। जिनके करतल रूखे हों, वे धनरहित होते हैं ॥३९-४०॥

नखलक्षणानुसार फल कथन

तुषसदृशनखाः क्लीबाश्चिपिटैः स्फुटितैश्च वित्तसन्त्यक्ताः।
कुनखविवर्णैः परतर्कुकाश्च ताम्रैश्चमूपतयः ॥४१॥

भाषा—जिसके नख भूसी के समान हों, (लम्बे छोटे) वे हिजड़े होते हैं। जिनके नख चपटे व फूटे हों, वे धनहीन होते हैं ॥४१॥

अङ्गुष्ठयवैराढ्याः सुतवन्तोऽङ्गुष्ठमूलजैश्च यवैः।
दीर्घाङ्गुलिपर्वाणः सुभगा दीर्घायुषश्चैव ॥४२॥

जिनके नख कुत्सित तथा विवर्ण हों, वे कुदृष्टि से निहारने वाले होते हैं। जिनके नख ताम्रवर्ण व लाल हों, वे पृथ्वीपाल होते हैं ॥४२॥

अङ्गुष्ठाङ्गुलिलक्षणानुसार फल कथन

स्निग्धा निम्ना रेखा धनिनां तद्व्यत्ययेन निःस्वानाम्।
विरलाङ्गुलयो निःस्वा धनसञ्चयिनो घनाङ्गुलयः ॥४३॥

भाषा—जिनके अङ्गुष्ठ में यव चिह्न हो, वे धनी होते हैं। जिनके अङ्गुष्ठ की जड़ में यव का चिह्न हो, वे पुत्रवान् होते हैं।

जिनकी अंगूलियों की पोरें लम्बी हों, वे बड़े भाग्यशाली तथा दीर्घजीवी होते हैं।

जिनकी हथेली की रेखायें चिकनी व गहरी हों, वे धनी होते हैं । इसके विपरीत निर्धन होते हैं।

जिनकी अँगुलियाँ बिरली हों, वे धनहीन और घनी अँगुली वाले द्रव्य संग्रह करते हैं ॥४३॥

मणिबन्धगतरेखात्रय और मीन रेखाओं का फल कथन

तिस्रो रेखा मणिबन्धनोत्थिताः करतलोपगा नृपतेः।
मीनयुगाङ्कितपाणिर्नित्यं सत्रप्रदो भवति ॥४४॥

करतलस्थ वज्र-मीनपुच्छ-शङ्ख आदि चिह्न के फल कथन

वज्राकारा धनिनां विद्याभाजां च मीनपुच्छनिभाः।
शङ्खातपत्रशिविकागजाश्वपद्मोपमा नृपतेः ॥४५॥

कलश-मृणाल-पताका होने का फल कथन

कलशमृणालपताकाङ्कुशोपमाभिर्भवन्ति निधिपालाः।
दामनिभाभिश्चाढ्याः स्वस्तिकरूपाभिरैश्वर्यम् ॥४६॥

चक्र-तलवार आदि अनय चिह्न युक्त करतल का फल कथन

चक्रासिपरशुतोमरशक्तिधनुःकुन्तसन्निभा रेखाः।
कुर्वन्ति चमूनाथं यज्वानमुलूखलाकाराः ॥४७॥

करतलस्थ मकर-ध्वज आदि अन्य चिह्नों का फल कथन

मकरध्वजकोष्ठागारसन्निभाभिर्महाधनोपेताः ।
वेदीनिभेन चैवाग्निहोत्रिणो ब्रह्मतीर्थेन ॥४८॥

बावली-मन्दिर-त्रिकोण आदि चिह्न युक्त करतल का फल कथन

वापीदेवकुलाद्यैर्धर्मं कुर्वन्ति च त्रिकोणाभिः।
अङ्गुष्ठमूलरेखाः पुत्राः स्युर्दारिकाः सूक्ष्माः ॥४९॥

ऊर्ध्वरेखालक्षण का फल कथन

रेखाः प्रदेशिनिगताः शतायुषं कल्पनीयमूनाभिः ।
छिन्नाभिर्द्रुमपतनं बहुरेखारेखिणो निःस्वाः ।।५०।।

माया—जिसके मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुयी तीन रेखायें करतल के समीप पहुँच गई हों, वह राजा होता है। जिसका हाथ दो मीनरेखाओं से अङ्कित हो, तो वह सदैव अन्नदान करता है।

जिनके करतल में वज्र का चिह्न हो, वे धनी होते हैं। जिनके करतल में मछली की पूँछ का चिह्न हो, वे विद्यावान् होते हैं। जिसके करतल में शङ्ख, छाता, पालकी, हाथी, घोड़ा और पद्म का निशान हो, वह राजा होता है।

जिनके करतल में कलश, मृणाल (कमल की नाल), पताका और अङ्कुश का चिह्न हो, वे धनाधिपति होते हैं।

जिनके करतल में रस्सी या माला का चिह्न हो, वे धनी होते हैं। जिसके हाथ में स्वस्तिक का चिह्न हो, वे ऐश्वर्य पाते हैं।

जिनके करतल में चक्र, तलवार, कुठार, शक्ति, धनुष और माला के समान रेखायें हों, वे सेनापित होते हैं।

जिनके करतल में उखली के चिह्न हों, वे विधि से यज्ञ को करने वाले होते हैं।

जिनके करतल में मकर, ध्वजा, गोष्ठ और मन्दिर के आकार की रेखाऐं हों, वे धनसम्पन्न होते हैं।

जिनके ब्रह्मतीर्थ (अङ्गुष्ठ के मूल) में वेदी का चिह्न हो, वे अग्निहोत्री होते हैं।

जिनके करतल में बावली, देवमन्दिर तथा त्रिकोण का चिह्न दिखाई दे, वे धर्म शील होते हैं।

जिनके अङ्गुष्ठ के मूल में बड़ी-बड़ी जितनी रेखायें लक्षित हों, उतने ही पुत्र पैदा होते हैं।

जिनके अङ्गुष्ठ के मूल में छोटी-छोटी जितनी रेखायें हों, उतनी ही कन्यायें पैदा होती हैं।

जिनके करतल में ऊर्ध्वरेखा तर्जनीपर्यन्त गई हों, वे सौ बरस की आयु पाते हैं, इसके लिए चित्र संख्या–२ का क और ख को देखना चाहिए। यदि तर्जनी तक ऊर्ध्वरेखा नहीं गई हो, तो वे मनुष्य कम आयु पाते हैं।

यदि ऊर्ध्वरेखा छिन्न हो गई हो, तो वे वृक्ष से गिरते हैं। जिनके करतल में बहुत-सी रेखाऐं हों, अथवा रेखामात्र लक्षित हों, तो वे मनुष्य धन-रहित होते हैं ।।४४-५०।।

चिबुक-अधरलक्षण फल कथन

अतिकृशदीर्घैश्चिबुकैर्निर्द्रव्या मांसलैर्धनोपेताः ।
विम्बोपमैरवक्रैरधरैर्भूपास्तनुभिरस्वाः ॥५१॥

ओष्ठ-दशन-दन्ष्ट्रालक्षण लक्षणफल कथन

ओष्ठैः स्फुटितविखण्डितविवर्णरूक्षैश्च घनपरित्यक्ताः ।
स्निग्धा घनाश्च दशनाः सुतीक्ष्णदंष्ट्राः समाश्च शुभाः ॥५२॥

माया—जिनकी चिबुक (दाढ़ी) बहुत पतली या लम्बी हो, तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं। जिनकी चिबुक मांस से भरी हो, वे धनवान् होते हैं।

जिनके अधर कुँदरू के सदृश हों, तथा टेढ़े न हों, वे पृथ्वीपाल होते हैं। जिनके अधर पतले हों, वे निर्धनी होते हैं।

जिनके ओठ स्फुटित, विखण्डित, विवर्ण और रूखें हों, वे धनहीन होते हैं। बड़ी तीखी दाढ़ों वाले, चिकने, सघन व सम दाँत शुभसूचक होते हैं ॥५१-५२॥

जिह्वा-तालुलक्षण फल कथन

जिह्वा रक्ता दीर्घा श्लक्ष्णा सुसमा च भोगिनो ज्ञेया ।
श्वेता कृष्णा परुषा निर्द्रव्याणां तथा तालु ॥५३॥

माया—जिनकी जीभ लाल, लम्बी व पतली और सम हो, उन्हें भोगी जानना चाहिए। जिनकी जीभ सफेद या काली तथा कड़ी हो, वे प्राणी निर्धन होते हैं।

वैसे ही जिनका तालु लाल, लम्बा व कोमल होकर समान हो, वे प्राणी भोगी होते हैं। सफेद या काला तथा खरखरा तालू दरिद्रता का सूचक है ॥५३॥

मुखलक्षणानुसार फल कथन

वक्त्रं सौम्यं संवृतममलं श्लक्ष्णं समं च भूपानाम् ।
विपरीतं क्लेशभुजां महामुखं दुर्भगाणां च ॥५४॥

माया—जिन पुरुषों का मुख सुशोभन, गोल, अमल व कोमल तथा समानाकार हो, वे राजा होते हैं। जिनका मुख पूर्वोक्त लक्षणों के विपरीत हों, वे क्लेश भागी होते हैं। जिनका मुख बड़ा भारी हो, वे बुरे भाग्य वाले होते हैं ॥५४॥

स्त्रीमुखमनपत्यानां शाठ्यवतां मण्डलं परिज्ञेयम् ।
दीर्घं निर्द्रव्याणां भीरुमुखाः पापकर्माणः ॥५५॥
चतुरस्रं धूर्तानां निम्नं वक्रं च तनयरहितानाम् ।
कृपणानामतिह्रस्वं सम्पूर्णं भोगिनां कान्तम् ॥५६॥

माया—जिन पुरुषों का मुख स्त्रीमुख के समान हो, वे सन्तानरहित होते हैं।

मण्डलाकृति मुख शठता का द्योतक है। लम्बा मुख निर्धन का और भयावना होने-सा मुख पापकर्मकारी का होता है।

चौकोन मुख वाले धूर्त होते हैं। जिनका मुख नीचे की ओर झुका हो, वे पुरुष सन्तान रहित होते हैं। छोटे मुख वाले कृपण होते हैं। जिनका मुख सम्पूर्ण मनोरम हो, वे भोगी होते हैं ॥५५-५६॥

श्मश्रुलक्षणानुसार फल कथन

अस्फुटिताग्रं स्निग्धं श्मश्रु शुभं मृदु च सन्नतं चैव।
रक्तैः परुषैश्चौराः श्मश्रुभिरल्पैश्च विज्ञेयाः ॥५७॥

भाषा—जिन पुरुषों की दाढ़ी मूँछ अग्रभाग में विकसित न हो, अथवा चिकनी व कोमल होकर सन्नत हो, वे शुभसम्पन्न होते हैं। जिनकी दाढ़ी-मूछँ लाल व कड़ी तथा थोड़ी हो, उनको चोर जानना चाहिए ॥५७॥

कर्णलक्षणानुसार फल कथन

निर्मांसैः कर्णैः पापमृत्यवश्चर्पटैः सुबहुभोगाः।
कृपणाश्च ह्रस्वकर्णाः शङ्कुश्रवणाश्चमूपतयः ॥५८॥
रोमशकर्णा दीर्घायुषश्च धनभागिनो विपुलकर्णाः।
क्रूरा शिरावनद्धैर्व्यालम्बैर्मांसलैः सुखिनः ॥५९॥

भाषा—मांसरहित कान वाले पापकर्म से मौत पाते हैं। जिनके कान चपटे हों, वे बडे ही भोगशाली होते हैं। जिनके कान छोटे हों, वे कृपण होते हैं। जिनके कान शङ्कु के समान हों, वे पृथ्वीपालक होते हैं।

जिनके कान रोमों से व्याप्त हों, वे बड़ी आयु वाले होते हैं। जिनके कान बड़े हों, वे धनभागी होते हैं। जिनके कान नसों से युक्त तथा विशेषतः लम्बे हों, वे क्रूर होते हैं। मांस से भरे हुए लम्बे कान वाले सुखी होते हैं ॥५८-५९॥

गण्डनासिकालक्षणानुसार फल कथन

भोगी त्वनिम्नगण्डो मन्त्री सम्पूर्णमांसगण्डो यः।
सुखभाक् शुकसमनासश्चिरजीवी शुष्कनासश्च ॥६०॥
छिन्नानुरूपयागम्यगामिनो दीर्घया तु सौभाग्यम्।
आकुञ्चितया चौरः स्त्रीमृत्युः स्याच्चिपिटनासः ॥६१॥
धनिनोऽग्रवक्रनासा दक्षिणविनताः प्रभक्षणाः क्रूराः।
ऋज्वी स्वल्पच्छिद्रा सुपुटा नासा सभाग्यानाम् ॥६२॥

भाषा—नीचा गण्डस्थल भोगी का होता है। जिसका गण्डस्थल मांसविशिष्ट हो,

वह मन्त्री होता है। जिसकी नासिका शुक (तोता) की चोंच के समान हो, वह सुखभागी होता है। सूखी नासिका वाला चिरंजीवी होता है।

जिनकी नासिका (छिन्न) कटी-सी हो, वे अगम्या रमणी में गमन करते हैं। जिनकी नासिका दीर्घ हो, वे सौभाग्य को पाते हैं।

जिनकी नासिका टेढ़ी हो, वे चोर होते हैं। जिनकी नासिका चपटी हो, वे स्त्री से मृत्यु पाते हैं।

नासिका का अग्रभाग टेढ़ा होना धनी का लक्षण है। जिनकी नासिका दाहनी ओर टेढ़ी हो, वे मनुष्य बड़े खाने वाले तथा क्रूर होते हैं।

जिनकी नासिका सीधी, छोटे छेदों वाली तथा गोल पुटों वाली हो, वे पुरुष बड़े भाग्यशाली होते हैं ॥६०-६२॥

क्षुतलक्षण फल कथन

धनिनां क्षुतं सकृद् द्वित्रिपिण्डितं ह्लादि सानुनादं च।
दीर्घायुषां प्रमुक्तं विज्ञेयं संहतं चैव ॥६३॥

भाषा—जिनको छींक एक ही समय दो-तीन बार हों, व पीछे से उनका शब्द सुनने योग्य हो, तो वे धनी होते हैं। जिनकी निकली हई छींक गम्भीर हो, वे दीर्घायु होते हैं ॥६३॥

लोचनलक्षण फल कथन

पद्मदलाभैर्धनिनो रक्तान्तविलोचनाः श्रियो भाजः।
मधुपिङ्गलैर्महार्था मार्जारविलोचनैः पापाः ॥६४॥
हरिणाक्षा मण्डललोचनाश्च जिह्मैश्च लोचनैश्चौराः।
क्रूराः केकरनेत्रा गजसदृशविलोचनाश्चमूपतयः ॥६५॥
ऐश्वर्यं गम्भीरैर्नीलोत्पलकान्तिभिश्च विद्वांसः।
अतिकृष्णतारकाणामक्ष्णामुत्पाटनं भवति ॥६६॥
मन्त्रित्वं स्थूलदृशां श्यावाक्षाणां भवति सौभाग्यम्।
दीना दृग् निःस्वानां स्निग्धा विपुलार्थभोगवताम् ॥६७॥

भाषा—जिस पुरुष के दोनों नयन पद्मदल के समान हों, वे धनी होते हैं। लाल नेत्रों वाले लक्ष्मीसम्पन्न होते हैं।

बादामी अथवा पीले लोचन वाले बड़े अर्थशाली होते हैं। जिनके लोचन बिलार के समान हों, वे पापी होते हैं।

हरिण के समान या मण्डलाकार अथवा टेढ़े नेत्रों वाले चोर होते हैं। जिन पुरुषों

के लोचन कञ्जे हों, वे क्रूर होते हैं। जिनके लोचन हाथी के समान हों, वे पृथ्वीपाल होते हैं।

जिन पुरुषों के लोचन गम्भीर हों, वे ऐश्वर्य पाते हैं। श्याम कमल के समान नेत्र विद्वान् के होते हैं। जिनके लोचनों की तारकाएँ बहुत काली हों, उनकी आँखें उखाड़ी जाती हैं।

जिनके लोचन स्थूल हों, वे मन्त्री होते हैं। पीले नेत्र सौभाग्य देने वाले हैं। जिनके लोचन दीन हों, वे दरिद्र होते हैं। जिनके लोचन स्निग्ध (चिकने या प्यारे) हों, वे बड़े अर्थशाली व भोगी होते हैं ॥६४-६७॥

भ्रूकुटिलक्षण फल कथन

अभ्युन्नताभिरल्पायुषो विशालोन्नताभिरतिसुखिनः।
विषमभ्रुवो दरिद्रा बालेन्दुनतभ्रुवः सधनाः ॥६८॥
दीर्घासंसक्ताभिर्धनिनः खण्डाभिरर्थपरिहीनाः।
मध्यविनतभ्रुवो ये ते सक्ताः स्त्रीष्वगम्यासु ॥६९॥

माया—जिन पुरुषों की भौंहें ऊँची हों, वे अल्पायु होते हैं। जिनकी भौंहें विशाल तथा उन्नत हों, वे बड़े सुखी रहते हैं। जिनकी भौंहें विषम हों, वे दरिद्र होते हैं। जिन पुरुषों की भौंहें बालचन्द्रमा के संमान लचीले हों, वे धनी होते हैं।

जिनकी भौंहे बड़ी तथा परस्पर मिली अथवा अलग हों, वे धनवान् होते हैं। जिनकी भौंहें खण्डित हों, वे धनहीन होते हैं। जिनकी भौंहे बीच में लची हों, वे अगम्या रमणी में आसक्त होते हैं ॥६८-६९॥

ललाटलक्षण फल कथन

उन्नतविपुलैः शङ्खैर्धनिनो निम्नैः सुतार्थसन्त्यक्ताः।
विषमललाटा विधना धनवन्तोऽर्द्धेन्दुसदृशेन ॥७०॥
शुक्तिविशालैराचार्यता शिरासन्ततैरधर्मरताः।
उन्नतशिराभिराढ्याः स्वस्तिकवत् संस्थिताभिश्च ॥७१॥
निम्नललाटा वधबन्धभागिनः क्रूरकर्मनिरताश्च।
अभ्युन्नतैश्चमूपाः कृपणाः स्युः संवृतललाटाः ॥७२॥

माया—जिन पुरुषों के शङ्ख (ललाट के पार्श्वों की हड्डियाँ) उन्नत होकर विशाल हों, वे धन्य गिने जाते हैं। जिनके शङ्ख निचे हों, वे धन व पुत्रों से रहित होते हैं। जिन पुरुषों का ललाट विषम हो, वे दरिद्र होते हैं। जिनका ललाट अर्धचन्द्राकार हो, वे धनवान् होते हैं।

जिन पुरुषों के कपाल विशाल और सीप के समान हों, वे आचार्य पदवी पाते हैं। जिन पुरुषों के ललाट नसों से व्याप्त हों, वे अधर्म परायण होते हैं। जिनके कपाल की नसें ऊँची तथा त्रिकोणाकार प्रतीत हों, वे धनाढ्य होते हैं।

जिन पुरुषों के ललाट नीचे हों, वे वधबन्धभागी होते हैं अर्थात् वे मारे जाते हैं अथवा बँधुआ होकर दु:ख भोगते हैं। बुरे कामों में लगे रहते हैं।

जिन पुरुषों के ललाट ऊँचे हों, वे पृथ्वीपाल होते हैं। जिन पुरुषों के कपाल सङ्कीर्ण हों, वे कृपण होते हैं ॥७०-७२॥

रुदितलक्षणानुसार फल कथन

रुदितमदीनमनश्रु स्निग्धं च शुभावहं मनुष्याणाम्।
रूक्षं दीनं प्रचुराश्रु चैव न शुभप्रदं पुंसाम् ॥७३॥

माया—पुरुषों का दीनता रहित व अश्रुपातविहीन रोना अशुभ लक्षण है। रूक्षा व दीनता सूचक तथा बड़े आँसूओं वाला रोना शुभदायक नहीं होता है ॥७३॥

हसितं शुभदमकम्पं सनिमीलितलोचनं तु पापस्य।
दुष्टस्य हसितमसकृत् सोन्मादस्यासकृत् प्रान्ते ॥७४॥

माया—जिन पुरुषों के हँसने में शरीर न काँपे, तो उन्हें वह शुभदायक होता है। जिस पुरुष के हँसने में आँखें मूँद जाय, वह पापी होता है। जिसका हँसना बारम्बार हो, वह सुखी होता है। जो सारी कथा को सुनकर अन्त में बारम्बार हँसता है, वह पागल होता है ॥७४॥

ललाटरेखालक्षण फल कथन

तिस्रो रेखाः शतजीविनां ललाटायताः स्थिता यदि ताः।
चतसृभिरवनीशत्वं नवतिश्चायुः सपञ्चाब्दा ॥७५॥
विच्छिन्नाभिश्चागम्यगामिनो नवतिरप्यरेखेण।
केशान्तोपगताभी रेखाभिरशीतिवर्षायुः ॥७६॥
पञ्चभिरायुः सप्ततिरेकाग्रावस्थिताभिरपि षष्टिः।
बहुरेखेण शतार्धं चत्वारिंशच्च वक्राभिः ॥७७॥
भ्रूलग्नाभिस्त्रिंशद्विंशतिकश्चैव वामवक्राभिः।
क्षुद्राभिः स्वल्पायुर्न्यूनाभिश्चान्तरे कल्प्यम् ॥७८॥

माया—जिन पुरुषों के ललाट में तीन रेखाऐं हों, वे सौ वर्ष पर्यन्त जीते हैं। जिन पुरुषों के ललाट में चार रेखाऐं हों, वे राजपदवी पाकर पञ्चानवे वर्ष जीते हैं।

जिन पुरुषों के ललाट में छिन्न-भिन्न रेखाऐं हों, वे अगम्या रमणी में गमन करते

हैं। जिन पुरुषों के कपाल में रेखाऐं ही न हों, वे नब्बे वर्ष जीते हैं। जिन पुरुषों के कपाल में रेखाऐं बालों के समीप तक पहुँच गई हैं, वे अस्सी वर्ष पर्यन्त जीते हैं।

जिन पुरुषों के कपाल में पाँच रेखाऐं हों, वे सत्तर वर्ष जीते हैं। जिन पुरुषों के कपाल में रेखाऐं एकाग्रावस्थित हों, वे साठ वर्ष जीते हैं। जिन पुरुषों के कपाल में बहुत-सी रेखाऐं हों, वे पचास वर्ष जीते हैं। जिन पुरुषों के कपाल में रेखाऐं टेढ़ी हों, वे चालीस वर्ष की आयु पाते हैं।

जिन पुरुषों के ललाट में रेखाऐं भौंहों से मिली हों, वे प्राणी तीस वर्ष जीते हैं। जिन पुरुषों के लालाट में रेखाऐं बांयी ओर टेढ़ी हों, वे बीस वर्ष जीते हैं।

जिन पुरुषों के कपाल में रेखाऐं छोटी-छोटी हों, वे स्वल्पायु होते हैं। जिनके कपाल में रेखाऐं कम हों, उनकी अल्पायु की ही कल्पना करनी चाहिए ॥७५-७८॥

शिरोलक्षण फल कथन

परिमण्डलैर्गवाढ्याश्छत्राकारैः शिरोभिरवनीशाः।
चिपिटैः पितृमातृघ्नाः करोटिशिरसां चिरान्मृत्युः ॥७९॥
घटमूर्धाध्वानरुचिर्द्विमस्तकः पापकृद्धनैस्त्यक्तः।
निम्नं तु शिरो महतां बहुनिम्नमनर्थदं भवति ॥८०॥

भाषा—जिन पुरुषों के मस्तक गोल हों, वे गोधन-सम्पन्न होते हैं। जिन पुरुषों के शीश छत्राकार (छाते के समान) हों, वे पृथ्वीपाल होते हैं।

जिन पुरुषों के शीश चपटे हों, वे यौवनकाल में माता-पिता को मारने वाले होते हैं और जिनके शीश बड़े हों, वे दीर्घजीवी होते हैं।

जिसका शीश घड़े के समान हो, वह ध्यानपरायण होता है। जिसके दो शीश हों, वह पापी व निर्धन होता है।

जिनका शीश लचीला हो, वे महापुरुष होते हैं। बहुत ही गहरा शीश अनर्थदायक होता है ॥७९-८०॥

एकैकभवैः स्निग्धैः कृष्णैराकुञ्चितैरभिन्नाग्रैः।
मृदुभिर्न चातिबहुभिः केशैः सुखभाग् नरेन्द्रो वा ॥८१॥
बहुमूलविषमकपिलाः स्थूलस्फुटिताग्रपरुषह्रस्वाश्च।
अतिकुटिलाश्चातिघनाश्च मूर्धजा वित्तहीनानाम् ॥८२॥

भाषा—जिनके मस्तक के एक-एक रोमकूप में एक-एक बाल हो और यदि वे बाल चिकने काले व टेढ़े हों और उनका अग्रभाग भिन्न न हो तथा वे कोमल होकर बहुत से न हों, तो प्राणी सुखभागी या राजा होता है।

जिन पुरुषों के मस्तक के एक-एक रोमकूप में बहुत से बाल हों और वे यदि असमान हों तथा पीले हों, अग्रभाग में मोटे होकर टूटे हों, बड़े छोटे व बहुत-से टेढ़े होकर घने हों, तो वे प्राणी निर्धन होते हैं ॥८१-८२॥

गात्ररुक्षतालक्षण फल कथन

यद्यद्गात्रं रूक्षं मांसविहीनं शिरावनद्धं च।
तत्तदनिष्टं प्रोक्तं विपरीतमतः शुभं सर्वम् ॥८३॥

माया—शरीर में जो अंग रुखा, मांसहीन व नसों से व्याप्त हो, वह अनिष्टकर कहा गया है। इससे विपरीत शुभदायक होता है ॥८३॥

महापुरुष लक्षण कथन

त्रिषु विपुलो गम्भीरस्त्रिष्वेव षडुन्नतश्चतुर्ह्रस्वः।
सप्तसु रक्तो राजा पञ्चसु दीर्घश्च सूक्ष्मश्च ॥८४॥

माया—जिन लोों के तीन ङ्ग विस्तीर्ण, तीन गम्भीर, छः अंग उन्नत, चार ंग छोटे, सात लाल पाँच अङ्ग लम्बे और सूक्ष्म हों, तो वे लोग राजा होते हैं॥८४॥

नाभि आदि के लक्षणगत फल कथन

नाभी स्वरः सत्त्वमिति प्रशस्तं गम्भीरमेतत्त्रितयं नराणाम्।
उरो ललाटं वदनं च पुंसां विस्तीर्णमेतत्त्रितयं प्रशस्तम् ॥८५॥
वक्षोऽथ कक्षा नखनासिकास्यं कृकाटिका चेति षडुन्नतानि।
ह्रस्वानि चत्वारि च लिङ्गपृष्ठं ग्रीवा च जङ्घे च हितप्रदानि ॥७६॥

नेत्रान्तपादकरताल्वधरोष्ठजिह्वा
रक्ता नखाश्च खलु सप्त सुखावहानि।
सूक्ष्माणि पञ्चदशनाङ्गुलिपर्वकेशाः
साकं त्वचा कररुहा न च दुःखितानाम् ॥८७॥

हनुलोचनबाहुनासिकाः स्तनयोरन्तरमत्र पञ्चमम्।
इति दीर्घमिदं तु पञ्चकं न भवत्येव नृणामभूभृताम् ॥८८॥

माया—जिन पुरुषों की नाभि, स्वर और शक्ति; ये तीनों गम्भीर हों, वे भाग्यवान् पुरुष होते हैं। विस्तृत वक्षःस्थल, ललाट व मुख; ये तीनों शुभदायक होते हैं।

वक्षःस्थल, कक्षा (बगल), नख, नासिका, मुख और घाँटी ये छः ऊँचे (उठे) हों और लिङ्ग, पीठ, घींच, जङ्घा ये चार छोटे हों, तो हितकर है।

नेत्रकोण, पादतल, करतल, तालु, निचला ओष्ठ, जिह्वा और नख ये सातों लालवर्ण सुखदायक होते हैं। दाँत, अँगुलियों के पर्व, केश, खाल और नख ये पाँच छोटे दुखदायी होते हैं।

जिनकी ठुड्डी, लोचन, बाहु, नासिका और स्तनों का अन्तर ये पाँच स्थान दीर्घ हों, वे राजा होते हैं। राजाओं के सिवा किसी के उक्त पञ्च स्थान दीर्घ नहीं होते हैं ॥८५-८८॥

छाया की प्रशंसा व उसका फलज्ञान कथन

छायाशुभाशुभफलानि निवेदयन्ती
लक्ष्या मनुष्यपशुपक्षिषु लक्षणज्ञैः ।
तेजोगुणान् बहिरपि प्रविकाशयन्ती
दीपप्रभा स्फटिकरत्नघटस्थितेव ॥८९॥

भाषा—छाया (कान्ति) या शरीर की शोभा शुभाशुभ फलों को व्यक्त करती है। इसलिए लक्षणज्ञाता विद्वानों को मनुष्य, पशु-पक्षियों में उसको देखना चाहिए।

स्फटिक रत्न के बने घड़े में टिकी हुई दीपक की प्रभा की तरह कान्ति भी तेज तथा गुणों का द्योतक है ॥८९॥

पृथ्वीछायालक्षण गत फल कथन

स्निग्धद्विजत्वग्नखरोमकेशाश्छाया सुगन्धा च महीसमुत्था।
तुष्ट्यर्थलाभाभ्युदयान् करोति धर्मस्य चाहन्यहनि प्रवृत्तिम् ॥९०॥

भाषा—जब दाँत, चर्म, नख, रोम और केश; ये सभी चिकने तथा सुगन्धित हों, तब पृथ्वीतत्त्व से उत्पन्न छाया (शरीर की शोभा) जाननी चाहिए। यह प्राणियों के लिए सन्तोष, धनलाभ और ऐश्वर्यदायिनी है और धर्म में प्रवृत्ति कराती है; क्योंकि अस्थि, मांस, नख, चर्म और रोम; ये पृथ्वी के गुण हैं। सुगन्धित पुरुष होने से बुधकृत पृथ्वी की छाया माननी चाहिए ॥९०॥

जलच्छायालक्षणगत फल कथन

स्निग्धा सिताच्छहरिता नयनाभिरामा
सौभाग्यमार्दवसुखाभ्युदयान् करोति।
सर्वार्थसिद्धिजननी जननीव चाप्या
छाया फलं तनुभृतां शुभमादधाति ॥९१॥

भाषा—किसी के शरीर की शोभा चिकनी, सफेद, साफ व हरित तथा नयनाभिराम हो, उसे जल की छाया जाननी चाहिए। यह सौभाग्य, कोमलता, सुख व ऐश्वर्य और माता के समान समग्र अर्थों की सिद्धि देती है। कारण यह है कि शुक्र, शोणित, मज्जा, मल और मूत्र ये; पाँच जल के गुण हैं। यदि प्राणि मिष्टरसभोजी हो, तो चन्द्र-शुक्र-कृत जल की छाया माननी चाहिए ॥९१॥

अग्निच्छायालक्षणगत फल कथन

चण्डाधृष्या पद्महेमाग्निवर्णा
युक्ता तेजोविक्रमैः सप्रतापैः ।
आग्नेयीति प्राणिनां स्याज्जयाय
क्षिप्रं सिद्धिं वाञ्छितार्थस्य दत्ते ।।९२।।

माया—शरीर की शोभा प्रचण्ड, भयजनक, कमल, सुवर्ण अथवा अग्नि के समान प्रतापी हो, उसे अग्नि की छाया जाननी चाहिए। वह जयदात्री है। शीघ्र ही वाञ्छित अर्थ की सिद्धि देती है। निद्रा, क्षुधा, प्यास, क्लान्ति और आलस्य ये अग्नि के गुण हैं। जब पुरुष बहुत रूपवान् तथा सुकान्त हो, तब सूर्य-भौमाकृत आग्नेयी छाया जाननी चाहिए ।।९२।।

वाय्वाकाशच्छायालक्षणगत फल कथन

मलिनपरुषकृष्णा पापगन्धानिलोत्था
जनयति वधबन्धव्याध्यनर्थार्थनाशान् ।
स्फटिकसदृशरूपा भाग्ययुक्तात्युदारा
निधिरिव गगनोत्था श्रेयसां स्वच्छवर्णा ।।९३।।

माया—जब शरीर की शोभा मैली, कठोर, काली तथा दुर्गन्धित हो, तब उसे वायु की छाया जाननी चाहिए। यह वध, बन्ध, व्याधि, अनर्थ व अर्थनाश करती है। धावन, चालन, क्षेपण, सङ्कोचन व प्रसारण; ये पाँच वायु के गुण हैं। यदि पाँवों का स्पर्शन कोमल हो, तो शनैश्चरकृत वायवी छाया जाननी चाहिए। शरीर की शोभा स्फटिकसदृश निर्मल हो, तो आकाश की छाया जाननी चाहिए। यह भाग्यसूचक, औदार्यशाली तथा शुभदायक होती है। काम, क्रोध, लोभ, मोह व लज्जा ये पाँच आकाश के गुण हैं। यदि पुरुष के वचन कानों को सुखकारी हों, तो गुरुकृत नाभसी छाया माननी चाहिए ।।९३।।

छायादेवतालक्षणगत फल कथन

छायाः क्रमेण कुजलाग्न्यनिलाम्बरोत्थाः
केचिद्वदन्ति दश ताश्च यथानुपूर्व्या ।
सूर्याब्जनाभपुरुहूतयमोडुपानां
तुल्यास्तु लक्षणफलैरिति तत्समासः ।।९४।।

माया—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, इन तत्त्वों से उत्पन्न हुई क्रम से पाँच छाया हैं। उनको अनेक आचार्यों ने यथानुपूर्वी दश कहा है। सूर्य, विष्णु, इन्द्र, यमराज और चन्द्रमा ये पाँच पूर्वोक्त छायाओं के पाँच देवता हैं उन्हीं के तुल्य छाया

हैं। लक्षण व फलों से प्राणि उन्हीं के समान होते हैं। अर्थात् जिस प्राणि में जिस तत्त्व की छाया के लक्षण व फल घटित हों, उन्हीं के समान प्राणियों को लक्षण व फल बतलाना चाहिए ।।९४।।

स्वरलक्षणगत फल कथन

करिवृषरथौघभेरीमृदङ्गसिंहाभ्रनि:स्वना भूपा: ।
गर्दभजर्जररूक्षस्वराश्च धनसौख्यसन्त्यक्ता: ।।९५।।

माया—जिस प्राणि का शब्द हाथी, बैल, रथसमूह, भेरी, मृदङ्ग, सिंह और मेघ के समान हो, वह राजा होता है। जिसका शब्द (कण्ठध्वनि) गधे के समान व जर्जर तथा रुखा हो, वह धन व सुखों से रहित होता है ।।९५।।

सप्तसारलक्षणगत फल कथन

सप्त भवन्ति च सारा मेदोमज्जात्वगस्थिशुक्राणि ।
रुधिरं मांसं चेति प्राणभृतां तत्समासफलम् ।।९६।।

माया—मेदा, मज्जा, त्वचा, अस्थि, शुक्र, रुधिर और मांस ये सात प्राणियों के शरीर में सार पदार्थ हैं। उन्हीं के समान फल को कहना चाहिए ।।९६।।

रक्तसारलक्षणगत फल कथन

ताल्वोष्ठदन्तपालीजिह्वानेत्रान्तपायुकरचरणै: ।
रक्तै तु रक्तसारा बहुसुखवनितार्थपुत्रयुता: ।।९७।।

माया—जिनके तालु, ओठ, दाँत, कर्णरन्ध्र, जिह्वा, नेत्रप्रान्त, गुदा, हाथ और पैर ये लालवर्ण हों, तो उन में रक्ताधिक्य जानना चाहिए। वे प्राणि बहुसुखशाली, स्त्रीसमन्वित, धनी और पुत्रवान् होते हैं ।।९७।।

मज्जामेदस्सारलक्षणगत फल कथन

स्निग्धत्वक्का धनिनो मृदुभि: सुभगा विचक्षणास्तनुभि: ।
मज्जामेद:सारा: सुशरीरा: पुत्रवित्तयुता: ।।९८।।

माया—जिनकी चमड़ी चिकनी और शरीर कोमल हो, तो उनमें त्वचा का सार जानना चाहिए। वे मनुष्य धनी, सौभाग्यशाली तथा बड़े पण्डित होते हैं। जिनका शरीर अति सुशोभन हो, उनमें मज्जा और मेदा का सार जानना चाहिए। ऐसे लोग पुत्रवान् और धनवान् होते हैं ।।९८।।

अस्थिशुक्रसारलक्षणगत फल कथन

स्थूलास्थिरस्थिसारो बलवान् विद्यान्तग: सुरूपश्च ।
बहुगुरुशुक्रा: सुभगा विद्वांसो रूपवन्तश्च ।।९९।।

माया—जिसके शरीर की हड्डियाँ मोटी हों, उसमें अस्थि का सार जानना चाहिए। वह बली, विद्वान् और रूप वाला होता है। जिनके शरीर में शुक्र व गुरु अधिक हो, उनमें शुक्रसार जानना चाहिए। वे सौभाग्यशाली, विद्वान् तथा रूपवान् होते हैं ॥९९॥

सङ्घातलक्षणगत फल कथन

उपचितदेहो विद्वान् धनी सुरूपश्च मांससारो यः।
सङ्घात इति च सुश्लिष्टसन्धिता सुखभुजो ज्ञेया ॥१००॥

माया—जिसकी देह भलीभाँति पुष्ट हो, उसके शरीर में मांस का सार जानना चाहिए। वह विद्वान्, धनवान् और रूपवान् होता है। जिनकी देह में समस्त सन्धियाँ पुष्ट हों, उन्हें सुखभोगी जानना चाहिए ॥१००॥

स्निग्धलक्षणगत फल कथन

स्नेहः पञ्चसु लक्ष्यो वाग्जिह्वादन्तनेत्रनखसंस्थः।
सुतधनसौभाग्ययुताः स्निग्धैस्तैर्निर्धना रूक्षैः ॥१०१॥

माया—पाँच स्थानों मे स्निग्धता देखनी चाहिए। यथा—वाक्य, जिह्वा, दन्त, नेत्र और नख। जिनके पाँचों स्थानों में स्निग्धता प्रतीत हो, वे पुत्रवान्, धनवान् और भाग्यशाली होते हैं। जिनके पाँचों स्थान रूखे दिखें, वे निर्धन होते हैं ॥१०१॥

वर्ण लक्षणगत फल कथन

द्युतिमान् वर्णस्निग्धः क्षितिपानां मध्यमः सुतार्थवताम्।
रूक्षो धनहीनानां शुद्धः शुभदो न सङ्कीर्णः ॥१०२॥

माया—तेजस्वी और चिकने वर्णवाले पृथ्वीपाल होते हैं। जिन पुरुषों का वर्ण मध्यम हो, वे पुत्रवान् और धनवान् होते हैं। जिन पुरुषों का वर्ण रूखा हो, वे निर्धन होते हैं। शुद्ध वर्ण शुभदायक होता है। मिश्रितवर्ण वाले दीन होते हैं ॥१०२॥

मुखस्वभावलक्षणगत फल कथन

साध्यमनूकं वक्त्राद् गोवृषशार्दूलसिंहगरुडमुखाः।
अप्रतिहतप्रतापा जितरिपवो मानवेन्द्राश्च ॥१०३॥
वानरमहिषवराहाजतुल्यवदनाः श्रुतार्थसुखभाजः।
गर्दभकरभप्रतिमैर्मुखैः शरीरैश्च निःस्वसुखाः ॥१०४॥

माया—मुख से स्वभाव जानना चाहिए। जिनका मुख गौ, बैल, बाघ, सिंह और गरुड़ के समान हो, वे राजा होते हैं। इनका प्रताप स्थायी रहता है। ये युद्ध में वैरियों को पराजित करते हैं।

जिन पुरुषों के मुख वानर, भैंसा, शूकर और बकरे के समान हों, वे पुत्रवान्,

धनवान् और सुखभोगी होते हैं। जिनके मुख और शरीर गधे व ऊँट के समन हों, वे दुखी दरिद्र बने रहते हैं ॥१०३-१०४॥

शरीरांगुलप्रमाण के फल कथन

अष्टशतं षण्णवतिः परिमाणं चतुरशीतिरिति पुंसाम्।
उत्तमसमहीनानामङ्गुलसङ्ख्या स्वमानेन ॥१०५॥

माया—जिन पुरुषों का शरीर अपने अङ्गुल परिमाण से एक सौ आठ अंगुल ऊँचा हो, वे उत्तम होते हैं। जिनका शरीर छानवे अङ्गुल ऊँचा हो, वे मध्यम होते हैं। जिनका शरीर चौरासी अङ्गुल ऊँचा हो, वे अधम होते हैं ॥१०५॥

कायभार प्रमाण के फल कथन

भारार्धतनुः सुखभाक् तुलितोऽतो दुःखभाग्भवत्यूनः।
भारोऽतीवाढ्यानामध्यर्धः सर्वधरणीशः ॥१०६॥

माया—जिस पुरुष का शरीर तौलने में आधा भार यानी एकमन हो, वह सुखभागी होता है। जिसका शरीर तौलने में आधे भार से भी कम हो, वह दुःखभागी होता है। जिसका शरीर तौलने में एक भार यानी दो मन हो, वह धनाढ्य होता है। जिसका शरीर तौलने में डेढ़ भार यानी तीन मन हो, वह सारी पृथ्वी का स्वामी होता है ॥१०६॥

मानवर्षप्रमाण कथन

विंशतिवर्षा नारी पुरुषः खलु पञ्चविंशतिभिरब्दैः।
अर्हति मानोन्मानं जीवितभागे चतुर्थे वा ॥१०७॥

माया—जिस समय नारी बीस वर्ष और पुरुष पच्चीस वर्ष का हो, तो मान व उन्मान के योग्य होता है अर्थात् उच्चता व वजन का फल कहना चाहिए; अथवा आयु के चौथे भाग में उच्चता व वजन को जानकर फलादेश करना चाहिए ॥१०७॥

प्रकृति लक्षण कथन

भूजलशिख्यनिलाम्बरसुरनररक्षःपिशाचकतिरश्चाम्।
सत्त्वेन भवति पुरुषो लक्षणमेतद् भवति तेषाम् ॥१०८॥

माया—पुरुषों में भूमि, जल, ग्नि, वायु, आकाश, देवता, मनुष्य, राक्षस, पिशाच, तिर्यक चाल वाले आदि का सत्त्व स्वभाव होता है,जिनका ागे कहे अनुसार लक्षण होते हैं॥१०८॥

महीजलस्वभावलक्षणगत फल कथन

महीस्वभावः शुभपुष्पगन्धः
सम्भोगवान् सुश्वसनः स्थिरश्च।

तोयस्वभावो बहुतोयपायी
प्रियाभिभाषी रसभाजनश्च ।।१०९।।

माया—जिस पुरुष का स्वभाव पृथ्वी का-सा हो, तो उसके शरीर में उत्तम फूल के समान गन्ध आती है। वह बड़ा भोगवान् व अच्छी श्वास वाला होकर स्थिर रहता है। जिसका स्वभाव जल के समान हो, वह बहुत जल पीता व प्यारी की अभिलाषा करता हुआ रसों को ग्रहण करता है ।।१०९।।

अग्निवायुस्वभावलक्षणगत फल कथन

अग्निप्रकृत्या चपलोऽतितीक्ष्णश्चण्डः क्षुधालुर्बहुभोजनश्च ।
वायोः स्वभावेन चलः कुशश्च क्षिप्रश्च कोपस्य वशं प्रयाति ।।११०।।

माया—जिस पुरुष का स्वभाव अग्नि के समान हो, वह चपल, बड़ा तीखा, कोपी तथा क्षुधावान् और बहुत भोजन करने वाला होता है। जिसका स्वभाव वायु के समान हो, वह चञ्चल बुद्धि वाला और जल्द क्रोध में आने वाला होता है।११०।।

आकाशस्वभावलक्षणगत फल कथन

खप्रकृतिर्निपुणो विवृतास्यः
शब्दगतेः कुशलः सुशिराङ्गः ।
त्यागयुतः पुरुषो मृदुकोपः
स्नेहरतश्च भवेत् सुरसत्त्वः ।।१११।।

माया—आकाश के समान स्वभाव का पुरुष चौड़े मुख वाला, निपुण तथा शब्दशास्त्र कुशल होता है। जिसका स्वभाव देवता के समान हो, वह दानशील, अल्पक्रोधी और प्रेमी होता है ।।१११।।

मनुजसत्त्वलक्षणगत फल कथन

मर्त्यसत्त्वसंयुतो गीतभूषणप्रियः ।
संविभागशीलवान् नित्यमेव मानवः ।।११२।।

माया—जिसका स्वभाव मनुष्य के समान हो, वह गाने वाला, वस्त्र आभूषणों से प्रीति रखने वाला और शीलवान् होता है ।।११२।।

रक्षः पिशाचलक्षणगतफल कथन

तीक्ष्णप्रकोपः खलचेष्टितश्च
पापश्च सत्त्वेन निशाचराणाम् ।
पिशाचसत्त्वश्चपलो मलाक्तो
बहुप्रलापी च समुल्बणाङ्गः ।।११३।।

माया—राक्षसों के समान स्वभाव का पुरुष, तीखे कोप वाला व खलों के समान चेष्टा रखने वाला पापी होता है। जिसका स्वभाव पिशाच के समान हो, वह चपल, मैला, बकवादी तथा बड़े डील-डौल वाला होता है ॥११३॥

पशुसत्त्वलक्षणगत फल कथन

भीरुः क्षुधालुर्बहुभुक् च यः स्याद्
ज्ञेयश्च सत्त्वेन नरस्तिरश्चाम्।
एवं नराणां प्रकृतिः प्रदिष्टा
यल्लक्षणज्ञाः प्रवदन्ति सत्त्वम् ॥११४॥

माया—जिसका स्वभाव पशुओं के समान हो, उसको डरपोक, क्षधार्त व बहुभोजी जानना चाहिए। इस प्रकार पुरुषों के स्वभाव, स्वरूप सत्व आदि के लक्षण के अनुसार फल का वर्णन करना चाहिए ॥११४॥

गतिलक्षण कथन

शार्दूलहंससमदद्विपगोपतीनां
तुल्या भवन्ति गतिभिः शिखिनां च भूपाः।
येषां च शब्दरहितं स्तिमितं च यातं
तेऽपीश्वरा द्रुतपरिप्लुतगा दरिद्राः ॥११५॥

माया—जिनकी गति (चाल) बाघ, हंस, मतवाला हाथी, बैल और मोर के समान हो, वे राजा होते हैं। जिनका गमन शब्दरहित निश्चल हो, वे भी समर्थ होते हैं। शीघ्रगामी दरिद्र होते होते हैं ॥११५॥

श्रान्तस्य यानमशनं च बुभुक्षितस्य
पानं तृषापरिगतस्य भयेषु रक्षा।
एतानि यस्य पुरुषस्य भवन्ति काले
धन्यं वदन्ति खलु तं नरलक्षणज्ञाः ॥११६॥

माया—जिन पुरुषों को थकने पर सवारी, भूख लगने पर भोजन, प्यास के समय पानी और भय के समय रक्षक की प्राप्ति हो जाय, तो ऐसे पुरुषों को लक्षणज्ञ भाग्वान् कहते हैं॥११६॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां पुरुषलक्षणा विचारो नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥६८॥

□□□

अथैकोनसप्ततितमोऽध्यायः-६९

पञ्चमहापुरुषलक्षणविचारः

सर्वप्रथम उसका आरम्भ प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

ताराग्रहैर्बलयुतैः स्वक्षेत्रस्वोच्चगैश्चतुष्टयगैः ।
पञ्च पुरुषाः प्रशस्ता जायन्ते तानहं वक्ष्ये ।।१।।

माया—जब कुजादि पञ्चतारा ग्रह स्थान, दिक्, चेष्टा, कालबल आदि से सम्पन्न होकर स्वगृह अथवा अपनी उच्च राशि का केन्द्र अर्थात् लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम आदि स्थानों में से किसी एक स्थान में भी स्थित हों, तो उस समय उत्पन्न होने वाला जातक पञ्चमहापुरुष होता है, उसको मैं (ग्रन्थकार)यहाँ कहता हूँ॥१॥

पञ्चमहापुरुषों का योग विभाग कथन

जीवेन भवति हंसः सौरेण शशः कुजेन रुचकश्च ।
भद्रो बुधेन बलिना मालव्यो दैत्यपूज्येन ।।२।।

माया—जब स्वगृह अथवा अपनी उच्च राशि का होकर केन्द्र स्थान में उपरोक्त बल सम्पन्न बृहस्पति होने से हंस संज्ञक; शनि के स्थित होने से शश संज्ञक; मंगल के स्थित होने से रुचक संज्ञक; बुध के स्थित होने से भद्र संज्ञक तथा शुक्र के स्थित होने से मालव्य संज्ञक योग निष्पन्न होता है॥२॥

उपरोक्त योगों में सूर्य और चन्द्र के बलवश विशेषता कथन

सत्त्वमहीनं सूर्याच्छारीरं मानसं च चन्द्रबलात् ।
यद्राशिभेदयुक्तावेतौ तल्लक्षणः स पुमान् ।।३।।
तद्धातुमहाभूतप्रकृतिद्युतिवर्णसत्त्वरूपाद्यैः ।
अबलरवीन्दुयुतैस्तैः सङ्कीर्णा लक्षणैः पुरुषाः ।।४।।

माया—स्थानादि बल सम्पन्न सूर्य के होने से जातक सम्पूर्ण सत्त्व या गुणों से सम्पन्न तथा स्थानादि बल सम्पन्न चन्द्र के होने से शारीरिक व मानसिक बल सम्पन्न होता है तथा सूर्य और चन्द्र, जिस किसी राशि के वर्ग अर्थात् गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांश ,द्वादशांश, त्रिशांश आदि में स्थित हों, उस राशि के स्वामी के धातु, महाभूत, प्रकृति, कान्ति वर्ण, सत्त्व, रूप, आदि विशेषताओं से सम्पन्न जातक होता है।

अथवा सूर्य या चन्द्र में से जो एक बलवान् हो, वह जिस-किसी राशि वर्ग में स्थित हो, उसके स्वामी ग्रह के धातु आदि विशेषताओं से सम्पन्न जातक होता है।

अथवा दोनों बल रहित होकर जिस-जिस ग्रह के राशि वर्ग में बैठे हों, उस-उस ग्रह के विमिश्र विशेषताओं से सम्पन्न जातक होता है॥३-४॥

ग्रह से प्राप्तव्य गुण कथन

भौमात् सत्त्वं गुरुता बुधात् सुरेज्यात् स्वरः सितात् स्नेहः।
वर्णः सौरादेषां गुणदोषैः साध्वसाधुत्वम् ॥५॥

भाषा—मंगल से सत्त्व (बल); बुध से गुरुता (श्रेष्ठत्व), बृहस्पति से स्वर (वाणी), शुक्र से स्नेह (प्रेम, प्यार, लगाव) तथा शनि से कान्ति की प्राप्ति होती हैं। जब मंगल आदि पञ्चतारा ग्रह कुण्डली में बलवान् हो तो जातक सत्त्व आदि गुणों से युक्त होता है; उनके बल रहित होने से जातक सत्त्व आदि गुणों से हीन होता है॥५॥

संकीर्ण ग्रहों की विशेषता कथन

सङ्कीर्णाः स्युर्न नृपा दशासु तेषां भवन्ति सुखभाजः।
रिपुगृहनीचोच्चच्युतसत्पापनिरीक्षणैर्भेदाः ॥६॥

भाषा—संकीर्ण लक्षणों से युक्त जातक राजा नहीं होता; परन्तु उनके अर्थात् कुजादि ग्रहों की दशाकाल में सुख का अनुभव करने वाला होता है। यदि ग्रह शत्रुगृह, नीच या उच्चच्युत, शुभ या पाप दृष्टि आदि से युक्त हो, तो उनके फलों में भेद उत्पन्न हो जाता है; इन भेदों के कारण जातक में संकीर्णता आती है॥६॥

हंसादि योगोत्पन्न जातक का प्रमाण कथन

षण्णवतिरङ्गुलानां व्यायामो दीर्घता च हंसस्य।
शशरुचकभद्रमालव्यसंज्ञितास्त्र्यङ्गुलविवृद्ध्या ॥७॥

भाषा—हंस योगोत्पन्न जातक ९६ अङ्गुल ऊँचा और ९६ अङ्गुल व्यायाम अर्थात् दोनों हाथों को फैलाकर चौड़ाई वाला होता है। इन अङ्गुलों में तीन-तीन अङ्गुल वृद्धि करने पर क्रम से शश, रूचक, भद्र तथा मालव्य योगों में उत्पन्न जातक की ऊँचाई और व्यायाम होता है॥७॥

सत्वादि गुण युक्त जातक का लक्षण कथन

यः सात्त्विकस्तस्य दया स्थिरत्वं सत्त्वार्जवं ब्राह्मणदेवभक्तिः।
रजोऽधिकः काव्यकलाक्रतुस्त्रीसंसक्तचितः पुरुषोऽतिशूरः ॥८॥
तमोऽधिको वञ्चयिता परेषां मूर्खोऽलसः क्रोधपरोऽतिनिद्रः।
मिश्रैर्गुणैः सत्त्वरजस्तमोभिर्मिश्रास्तु ते सप्त सह प्रभेदैः ॥९॥

भाषा—सात्त्विक गुण वाला जातक दयावान् , स्थिरता पसन्द करने वाला,

जीवों के साथ सरल व्यवहार करने वाला तथा देवता और ब्राह्मण की भक्ति करने वाला होता है।

राजसिक गुण वाला जातक काव्य, कला क्रतु (यश) और स्त्रियों में आसक्त चित्त वाला तथा अतिशूर राजा होता है।

तामसिक गुण वाला जातक दूसरों से वञ्चना करने वाला अर्थात् औरों को ठगने वाला, मूर्ख, आलसी, क्रोधी और अत्यधिक सोने में रुचि रखने वाला होता है।

उपरोक्त सत्त्व, रज और तमो गुणों अर्थात् सत्त्व और रज, सत्त्व और तम; रज और तम तथा तम, रज और सत्त्व; इस प्रकार के गुणों के मिश्रण से कुल मिलाकर सात प्रकार के जातक हो सकते है॥८-९॥

मालव्य योगज जातक का लक्षण कथन

मालव्यो नागनासः समभुजयुगलो जानुसम्प्राप्तहस्तो
मांसैः पूर्णाङ्गसन्धिः समरुचिरतनुर्मध्यभागे कृशश्च।
पञ्चाष्टौ चोर्ध्वमास्यं श्रुतिविवरमपि त्र्यङ्गुलोनं च तिर्यग्
दीप्ताक्षं सत्कपोलं समसितदशनं नातिमांसाधरोष्ठम्॥१०॥

माया—मालव्य योग से सम्बन्धित जातक हाथी के समान नासिका वाला, समान भुजाओं वाला, जानु तक लम्बे हाथों वाला, मांसल और पूर्ण अङ्गों की सन्धियों वाला, समान और सुन्दर काया वाला, शरीर का कृश मध्य भाग वाला, ठोढ़ी से मस्तक तक १३ अङ्गुल मुख की लम्बाई वाला, ठोड़ी से तिर्यक् कर्ण-छिद्र पर्यन्त चौड़ाई दश अङ्गुल वाला, दीप्त मुख व नेत्रों वाला, सुन्दर कपोल वाला, समान व श्वेत दाँतों वाला तथा पतला अधरोष्ठ वाला राजा होता है॥१०॥

मालव्य योगज जातक का स्वभाव कथन

मालवान् स भरुकच्छसुराष्ट्रान् लाटसिन्धुविषयप्रभृतींश्च।
विक्रमार्जितधनोऽवति राजा पारियात्रनिलयान् कृतबुद्धिः॥११॥

माया—मालव्य योग में उत्पन्न जातक मालव, मरु, कच्छ, सुराष्ट्र, लाट, सिन्धु, पारियात्र पर्वत के निवासी जनों का पालन करने वाला, अपने पराक्रम से धन अर्जित करने वाला तथा सुष्ठु बुद्धि वाला राजा होता है॥११॥

मालव्य योगज जातक की आयु आदि कथन

सप्ततिवर्षो मालव्योऽयं त्यक्ष्यति सम्यक् प्राणांस्तीर्थे।
लक्षणमेतत् सम्यक् प्रोक्तं शेषनराणां चातो वक्ष्ये॥१२॥

माया—मालव्य योगज जातक ७० वर्ष की आयु वाला होता है, उसकी मृत्यु तीर्थस्थल में होती है। इस प्रकार मालव्य योगज जातक का लक्षण आदि विधिवद्

कहा गया है। आगे शेष हंस, भद्र, शश, रूचक आदि के लक्षणों को कहा जा रहा है॥१२॥

भद्र योगज जातक का लक्षण कथन

उपचितसमवृत्तलम्बवाहुर्भुजयुगलप्रमितः समुच्छ्रयोऽस्य ।
मृदुतनुघनरोमनद्धगण्डो भवति नरः खलु लक्षणेन भद्रः ॥१३॥

माया—पुष्ट, समान, गोलाकार और लम्बे वाहुओं वाला, भुजाओं को पसारने या फैलाने से जितनी चौड़ाई होती है, उतनी ही ऊँचाई वाला, तथा कोमल, सूक्ष्म और सघन केश राशि से युक्त कपोल वाला; इन लक्षणों से सम्पन्न वुध से बनने वाले भद्र योग में उत्पन्न जातक होता है॥१३॥

भद्र योगज जातक का और भी लक्षण कथन

त्वक्शुक्रसारः पृथुपीनवक्षाः सत्त्वाधिको व्याघ्रमुखः स्थिरश्च ।
क्षमान्वितो धर्मपरः कृतज्ञो गजेन्द्रगामी बहुशास्त्रवेत्ता ॥१४॥
प्राज्ञो वपुष्मान् सुललाटशङ्खः कलास्वभिज्ञो धृतिमान् सुकुक्षिः ।
सरोजगर्भद्युतिपाणिपादो योगी सुनासः समसंहतभ्रूः ॥१५॥

माया—सूक्ष्म या सुन्दर चर्म और अधिक भारी वीर्य वाला, विस्तीर्ण और सम्पुष्ट वक्षःस्थल वाला, अत्यन्त सात्त्विक गुणवाला, व्याघ्र के सृदश मुख वाला, स्थिर स्वभाव वाला, क्षमाशील, धार्मिक आचरण वाला, कृतज्ञ, हाथी सदृश चलने वाला, बहुशास्त्रज्ञ, बुद्धिमान् , सुन्दर शरीर वाला, सुन्दर ललाट और शंख (कनपटी) वाला, नृत्य और संगीत में प्रवीण, धैर्य्यवान् , सुन्दर उदर वाला, कमल गर्भ सदृश हाथों और पैरों की आभा वाला, योग जानने वाला, सुन्दर नासिका वाला तथा समान और मिले हुए भ्रुओं वाला भद्र योग में उत्पन्न जातक होता है॥१४-१५॥

भद्र योगज जातक का विशेष लक्षण कथन

नवाम्बुसिक्तावनिपत्रकुङ्कुमद्विपेन्द्रदानागुरुतुल्यगन्धता ।
शिरोरुहाश्चैकजकृष्णकुञ्चितास्तुरङ्गनागोपमगुह्यगूढता ॥१६॥

माया—जल से सिंचित नयी भूमि, गन्धपत्र, कुंकुम, हाथी के मद अथवा अगर सदृश गन्ध युक्त शरीर वाला; शिर के एक-एक रोम छिद्र में एक-एक काला रोम युक्त शिर वाला तथा हाथी और घोड़ा के सदृश गुप्त लिङ्ग वाला भद्र योग में उत्पन्न जातक होता है॥१६॥

भद्रयोगज जातक का हलादि रेखा चिह्न लक्षण कथन

हलमुशलगदासिशङ्खचक्र-
द्विपमकराब्जरथाङ्किताङ्घ्रिहस्तः ।

विभवमपि जनोऽस्य बोभुजीति
क्षमति हि न स्वजनं स्वतन्त्रबुद्धिः ॥१७॥

माया—भद्रयोग मे उत्पन्न जातक के हाथों और पैरों में हल, मूसल, गदा, खड्ग, शंख, चक्र, हाथी, मकर, कमल, रथ के सदृश रेखायें होती हैं। दूसरों के द्वारा इनके ऐश्वर्य सुखों को भोगा जाता है। अपने बन्धु, बान्धव व सुहृज्जनों को क्षमा नहीं करने वाला तथा स्वेच्छाचारी होता है॥१७॥

भद्रयोगज जातक का मान लक्षण कथन

अङ्गुलानि नवतिश्च षडूनान्युच्छ्रयेण तुलयापि हि भारः।
मध्यदेशनृपतिर्यदि पुष्टास्त्यादयोऽस्य सकलावनिनाथः ॥१८॥

माया—भद्र योगज जातक चौरासी अङ्गुल ऊँचाई वाला, एक तुला या दो हजार पल शारीरिक भार वाला तथा मध्यदेश का राजा होता है। ऐसे जातक का व्यायाम १०५ अङ्गुल होने पर वह सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी अर्थात् सम्राट होता है॥१८॥

भद्रयोगज जातक की अवस्था लक्षण कथन

भुक्त्वा सम्यग्वसुधां शौर्येणोपार्जितामशीत्यब्दः।
तीर्थे प्राणांस्त्यक्त्वा भद्रो देवालयं याति ॥१९॥

माया—भद्रयोगज जातक अपने पराक्रम से उपार्जित पृथ्वी का भोग करते हुए अस्सी वर्ष की अवस्था काल में तीर्थस्थली में अपना प्राण या शरीर त्याग कर स्वर्ग को जाता है॥१९॥

शश योगज जातक का लक्षण कथन

ईषद्दन्तुरकस्तनुद्विजनखः कोशेक्षणः शीघ्रगो
विद्याधातुवणिक्क्रियासु निरतः सम्पूर्णगण्डः शठः।
सेनानीः प्रियमैथुनः परजनस्त्रीसक्तचित्तश्चलः
शूरो मातृहितो वनाचलनदीदुर्गेषु सक्तः शशः ॥२०॥

माया—शनि से बने शश योग में उत्पन्न जातक कुछ-कुछ ऊँचे दाँत वाला, छोटे-छोटे दाँत और नख से युक्त; पुष्ट नेत्र कोश वाला, शीघ्र चलने वाला, विद्या (ज्ञान) और धातुओं का व्यापार करने में अभिरुचि रखने वाला, सम्पूर्ण कपोल वाला, नीचता करने वाला, सेनापति, मैथुन क्रिया को पसन्द करने वाला, दूसरी स्त्रियों में आसक्ति वाला, वीर, मातृभक्त तथा वन, पहाड़, नदी, दुर्ग आदि के प्रति लगाव रखने वाला होता है॥२०॥

शशयोगज जातक का मान लक्षण कथन

दीर्घोऽङ्गुलानां शतमष्टहीनं साशङ्कचेष्टः पररन्ध्रविच्च।
सारोऽस्य मज्जा निभृतप्रचारः शशो ह्यतो नातिगुरुः प्रदिष्टः ॥२१॥

भाषा—शश योग में उत्पन्न जातक की ऊँचाई ९२ अङ्गुल, प्रत्येक चेष्टा या व्यवहार में आशंका करने की प्रवृत्ति वाला, दूसरों के दोषों को बताने वाला, मज्जासार व स्थिर गति वाला तथा मध्य स्थूलता वाला होता है॥२१॥

शश योगज जातक का रेखा लक्षण कथन

मध्ये कृशः खेटकखड्गवीणा पर्यङ्कमालामुरजानुरूपाः ।
शूलोपमाश्चोर्ध्वगताश्च रेखाः शशस्य पादोपगताः करे वा ॥२२॥

भाषा—शश योगज जातक का शरीर मध्यभाग में कृश, उसके हाथों अथवा पैरों में ढ़ाल, तलवार, वीणा, पलङ्ग, माला, मृदङ्ग, त्रिशूल आदि के सदृश रेखा अथवा ऊर्ध्व रेखा होती है॥२२॥

शश योगज जातक की अवस्था लक्षण कथन

प्रात्यन्तिको माण्डलिकोऽथवायं स्फिक्स्त्रावशूलाभिभवार्तमूर्तिः ।
एवं शशः सप्ततिहायनोऽयं वैवस्वतस्यालयमभ्युपैति ॥२३॥

भाषा—शश योगज जातक म्लेच्छ जाति का अथवा माण्डलिक राजा होता है। उसका शरीर स्फिक् अर्थात् कूल्हे आदि अङ्गों के दर्द से पीड़ित होता है। इस प्रकार शश योगज जातक सत्तर वर्ष की अवस्था में मृत्यु को पाने वाला होता है॥२३॥

हंस योगज जातक का लक्षण कथन

रक्तं पीनकपोलमुन्नतनसं वक्त्रं सुवर्णोपमं
वृत्तं चास्य शिरोऽक्षिणी मधुनिभे सर्वे च रक्ता नखाः ।
स्रग्दामाङ्कुशशङ्खमत्स्ययुगलक्रत्वङ्गकुम्भाम्बुजै-
श्चिह्नैर्हंसकलस्वनः सुचरणो हंसः प्रसन्नेन्द्रियः ॥२४॥

भाषा—हंस योगज जातक रक्त वर्ण का मुख वाला, पुष्ट कपोलों वाला, समुन्नत नासिका वाला, स्वर्ण सदृश कान्ति वाला, गोलाकार शिर वाला, मधु वर्ण सदृश नेत्रों वाला, रक्त वर्ण सदृश नखों वाला होता है तथा उसके हाथ और पैरों में माला, रस्सी, अङ्कुश, शंख, मत्स्यद्वय, यज्ञ के अङ्ग अर्थात् वेदी, स्रुवा, आज्य आदि, कलश, कमल के सदृश रेखाऐं होती हैं तथा हंसक जातक हंस के सदृश मधुर स्वर वाला, सुन्दर पैरों वाला और मनोरम इन्द्रियों वाला होता है॥२४॥

हंस योगज जातक का मान लक्षण कथन

रतिरम्भसि शुक्रसारता द्विगुणा चाष्टशतैः पलैर्मितिः ।
परिमाणमथास्य षड्युता नवतिः सम्परिकीर्तिता बुधैः ॥२५॥

भाषा—हंस योग में उत्पन्न जातक को जल से प्रेम होता है और उसमें शुक्रसार होता है तथा उसकी ऊँचाई छियानवे अङ्गुल होती है॥२५॥

हंस योगज जातक की अवस्था लक्षण कथन

भुनक्ति हंसः खसशूरसेनान् गान्धारगङ्गायमुनान्तरालम् ।
शतं दशोनं शरदां नृपत्वं कृत्वा वनान्ते समुपैति मृत्युम् ।।२६।।

माया—हंस योग मे उत्पन्न हुआ जातक खश (नेपाल), शूरसेन, गान्धार, कन्धार, अन्तर्वेद अर्थात् गंगा और यमुना के मध्यस्थित देश आदि को राजा के रूप में भोग करने वाला तथा नब्बे वर्ष पर्यन्त राज्य सुख भोगने के बाद समीप के वन में मृत्यु को पाने वाला होता है।।२६।।

रूचक योगज जातक का लक्षण कथन

सुभ्रूकेशो रक्तश्यामः कम्बुग्रीवो व्यादीर्घास्यः ।
शूरः क्रूरः श्रेष्ठो मन्त्री चौरस्वामी व्यायामी च ।।२७।।

माया—रूचक योगज जातक शोभनीय भौं और केशराशि वाला, रक्त के साथ श्याम वर्ण का शरीर वाला, शंखाकार कण्ठ वाला, लम्बा मुख वाला, शूरवीर, क्रूर, श्रेष्ठ सचिव, चोरी करने वालों का अधिपति तथा अति परिश्रमी होता है।।२७।।

रूचक योगज जातक का मान लक्षण कथन

यन्मात्रमास्यं रुचकस्य दीर्घं मध्यप्रदेशे चतुरस्रता सा ।
तनुच्छविः शोणितमांससारो हन्ता द्विषां साहससिद्धकार्यः ।।२८।।

माया—रूचक योग में जन्म लेने वाला जातक मुख की लम्बाई के समान उदर मध्य की चौड़ाई वाला, कुछ कान्ति वाला, रक्त (रूधिर) और माँस सार वाला, शत्रुओं को परास्त करने (मारने) वाला तथा साहस के बल पर कार्यों की सिद्धि करने वाला होता है।।२८।।

रूचक योगज जातक का खट्वाङ्ग आदि चिह्न लक्षण कथन

खट्वाङ्गवीणावृषचापवज्रशक्तीन्द्रशूलाङ्कितपाणिपादः ।
भक्तो गुरुब्राह्मणदेवतानां शताङ्गुलः स्यात्तु सहस्रमानः ।।२९।।

माया—रूचक योगज जातक खट्वाङ्ग, वीणा, बैल, धनु, वज्र, बर्छी, चन्द्र अथवा त्रिशूल के समान रेखा चिह्न से युक्त हाथों और पैरों वाला, गुरु, ब्राह्मण और देवता के प्रति भक्ति भाव रखने वाला, ऊँचाई सौ अङ्गुल वाला तथा एक हजार शारीरिक भार वाला होता है।।२९।।

रूचक योगज जातक की अवस्था आदि कथन

मन्त्राभिचारकुशलः कृशजानुजङ्घो
विन्ध्यं ससह्यगिरिमुज्जयिनीं च भुक्त्वा ।

सम्प्राप्य सप्ततिसमा रुचको नरेन्द्रः
शस्त्रेण मृत्युमुपयात्यथवाऽनलेन ।।३०।।

माया—रूचक योगज जातक मन्त्र और मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, विद्वेषक आदि अभिचार कर्म में कुशल तथा कृश जानु और जंघा वाला होता है। वह विन्ध्याचल, सह्याद्रि, उज्जयिनी आदि देशों के राज्य सुख को भोगते हुए अपनी सत्तर वर्ष की अवस्था में शस्त्र अथवा अग्नि के आघात से मृत्यु को प्राप्त कर लेता है।।३०।।

पञ्च महापुरुष के अतिरिक्त पञ्चनृपानुचर लक्षण कथन

पञ्चापरे वामनको जघन्यः कुब्जोऽथवा मण्डलकोऽथ साची ।
पूर्वोक्तभूपानुचरा भवन्ति सङ्कीर्णसंज्ञः शृणु लक्षणैस्तान् ।।३१।।

माया—उपरोक्त पंच महापुरुष योगज जातक को छोड़कर पंच संकीर्ण संज्ञक नृपानुचर पुरुष भी होते हैं। उनके नाम वामनक, जघन्य, कुब्ज, मण्डलक, साचि आदि पुरुष हैं। ये पाँचों उपरोक्त पाँच प्रकार के राजाओं के क्रम से उनके अनुचर (सेवक) होते हैं, उनके लक्षणों को आगे कहा जाता है, सुनो।।३१।।

वामनक पुरुष लक्षण कथन

सम्पूर्णाङ्गो वामनो भग्नपृष्ठः किञ्चिच्चोरूमध्यकक्ष्यान्तरेषु ।
ख्यातो राज्ञां ह्येष भद्रानुजीवी स्फीतो राजा वासुदेवस्य भक्तः।।३२।।

माया—वामन संज्ञक पुरुष सभी अंगों से युक्त शरीर वाला, टूटी पीठ वाला, परन्तु ऊरू, शरीर का मध्यभाग और कक्ष्यान्तर में अपूर्णता वाला, प्रसिद्ध पंच राजाओं में से भद्र संज्ञक राजा का सेवक, स्फीत राजा श्री विष्णु का भक्त होता है।।३२।।

जघन्य संज्ञक पुरुष लक्षण कथन

मालव्यसेवी तु जघन्यनामा
खण्डेन्दुतुल्यश्रवणः सुसन्धिः ।
शुक्रेण सारः पिशुनः कविश्च
रूक्षच्छविः स्थूलकराङ्गुलीकः ।।३३।।
क्रूरो धनी स्थूलमतिः प्रतीत-
स्ताम्रच्छविः स्यात् परिहासशीलः ।
उरोऽङ्घ्रिहस्तेष्वसिशक्तिपाश-
परश्वधाङ्कः स जघन्यनामा ।।३४।।

माया—जघन संज्ञक पुरुष मालव्य योग वाले राजा का सेवक, अर्द्धचन्द्राकार

कर्ण वाला, शोभनीय अङ्ग सन्धि वाला, शुक्रसार वाला, पिशुन (सूचक), पण्डित, रूखी शरीर की आभा वाला, स्थूल हाथ की अङ्गुलियों वाला आदि होता है।

वह क्रूर, धनवान्, स्थूल बुद्धिवाला, प्रसिद्धि वाला, ताम्रवर्ण सदृश कान्ति वाला, हास्यप्रिय आदि भी होता है। ऐसे जातक के वक्षःस्थल, हाथ और पैरों में तलवार, बर्छी, पाश, परशु आदि के सदृश रेखाऐं भी होती हैं।।३३-३४।।

कुब्ज संज्ञक पुरुष लक्षण कथन

कुब्जो नाम्ना यः स शुद्धो ह्यधस्तात्
क्षीणः किञ्चित् पूर्वकाये नतश्च ।
हंसासेवी नास्तिकोऽर्थैरुपेतो
विद्वान् शूरः सूचकः स्यात् कृतज्ञः ।।३५।।
कलास्वभिज्ञः कलहप्रियश्च
प्रभूतभृत्यः प्रमदाजितश्च ।
सम्पूज्य लोकं प्रजहात्यकस्मात्
कुब्जोऽयमुक्तः सततोद्यतश्च ।।३६।।

भाषा—कुब्ज संज्ञक पुरुष नाभि से अधोभाग में सम्पूर्णाङ्गों वाला और उससे ऊर्ध्वभाग हीन और झुके अङ्गों वाला, हंस योगज राजा का सेवना करने वाला, नास्तिक, धनवान् , विद्वान् , क्रूर, पिशुन, कृतज्ञ आदि होता है।

वह पुरुष कलाओं को जानने वाला, कलह करने वाला, बहुत-सा सेवकों वाला, स्त्रीजित, जनों का सम्मान कर उसका त्याग करने वाला तथा सदैव अत्यधिक उद्यम करने वाला होता है।।३५-३६।।

मण्डलक संज्ञक पुरुष लक्षण कथन

मण्डलकलक्षणमतो रुचकानुचरोऽभिचारवित् कुशलः ।
कृत्यावेतालादिषु कर्मसु विद्यासु चानुरतः ।।३७।।
वृद्धाकारः खरपरुषमूर्धजश्च शत्रुनाशने कुशलः ।
द्विजदेवयज्ञयोगप्रसक्तधीः स्त्रीजितो मतिमान् ।।३८।।

भाषा—मण्डलक संज्ञक पुरुष रूचक योगज राजा का सेवादार, अभिचार कर्म (मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, विद्वेषण) को जानने वाला, कुशल, कृत्या अर्थात् अभिचार कर्म के अन्तर्गत शत्रुवधार्थ अग्नि मध्य से उत्पन्न स्त्री, वेताल अर्थात् मरा हुआ व्यक्ति को चला देना आदि गुप्त विद्याओं को जानने वाला, वृद्धों की तरह शारीरिक रूप से दीखने वाला, रूखा और कठोर केशों वाला, शत्रुनाश में प्रवीण,

ब्राह्मण, देवता, यज्ञकर्म, योग आदि के प्रति लगाव रखने वाला तथा स्त्रीजित व बुद्धिमान् होता है।।३७-३८।।

साचि संज्ञक पुरुष लक्षण कथन

साचीति यः सोऽतिविरूपदेहः शशानुगामी खलु दुर्भगश्च ।
दाता महारम्भसमाप्तकार्यो गुणैः शशस्यैव भवेत् समानः ।।३९।।

माया—साचि संज्ञक पुरुष विरूप शरीर अर्थात् अदर्शनीय, शश योगज राजा का सेवक, अभाग्य वाला, दाता, महद् कार्यों को आरम्भ कर समाप्त करने वाला तथा शश योग के अन्य गुणों से भी युक्त होता है।।३९।।

पुरुष लक्षण का प्रभाव कथन

पुरुषलक्षणमुक्तमिदं मया मुनिमतानि निरीक्ष्य समासतः।
इदमधीत्य नरो नृपसम्मतो भवति सर्वजनस्य च वल्लभः ।।४०।।

माया—अनेक मुनियों के मतों का अवलोकन कर मैं (वराहमिहिर) ने यह पंचमहापुरुष लक्षण को कहा है। इस ज्ञान को जानने से व्यक्ति राजाओं का मित्र और अन्य लोगों का भी प्रिय हो जाता है।।४०।।

।।इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरभा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां पञ्चमहापुरुषलक्षण विचारो नामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः ।।६९।।

□□□

अथ सप्ततितमोऽध्यायः-७०

स्त्रीलक्षणविचारः

सर्वप्रथम स्त्रियों के नखपादादिलक्षणानुसार फल कथन

स्निग्धोन्नताग्रतनुताम्रनखौ कुमार्याः
पादौ समोपचितचारुनिगूढगुल्फौ ।
श्लिष्टाङ्गुली कमलकान्तितलौ च यस्या-
स्तामुद्वहेद् यदि भुवोऽधिपतित्वमिच्छेत् ।।१।।

माया—जिस कन्या के नख चिकने और ऊँचे हों, जिनका अग्रभाग पतला व तांबे के वर्ण वाला हो, दोनों पैर समान व कुछ मोटे तथा मनोरम हों, जिनमें गण्ठे (टखने) छिपे हों, अंगुलियाँ परस्पर मिली हों, तलवे कमल के सदृश शोभा वाले हों, ऐसी कन्या सुलक्षणा जाननी चाहिए। यदि कोई पुरुष पृथ्वीपति होने की इच्छा करता हो, तो उसे ऐसी कन्या से अवश्य अपना विवाह करना चाहिए।।१।।

मत्स्यादि चिह्नयुतपादजङ्घादिलक्षणानुसार फल कथन

मत्स्याङ्कुशाब्जयववज्रहलासिचिह्ना-
वस्वेदनौ मृदुतलौ चरणौ प्रशस्तौ ।
जङ्घे च रोमरहिते विशिरे सुवृत्ते
जानुद्वयं सममनुल्बणसन्धिदेशम् ।।२।।
ऊरू घनौ करिकरप्रतिमावरोमा-
वश्वत्थपत्रसदृशं विपुलं च गुह्यम् ।
श्रोणीललाटमुरुकूर्मसमुन्नतं च
गूढो मणिश्च विपुलां श्रियमादधाति ।।३।।

माया—कोमल व पसीना रहित चरणतल, जिनमें मछली, अंकुश, कमल, यव, वज्र, हल और तलवार के चिह्न हों, नारी के ऐसे चरण प्रशस्त होते हैं। जङ्घाएँ रोमरहित, नस विहीन और गोलाकार हों। दोनों घुटने समान होकर सन्धिदेश में मांसल हों। दोनों ऊरू घने व हाथी की सूँड़ के समान हों, तथा रोम रहित हों। गुह्याङ्ग पीपलपत्र के समान विस्तीर्ण हो, कमर तथा ललाट चौड़े कछुए के समान ऊँचे हों। मणि छिपी हो, वह नारी बड़ी सम्पत्तिशालिनी होती है।।२-३।।

नितम्बनाभिलक्षणगत फल कथन

विस्तीर्णमांसोपचितो नितम्बः गुरुश्च धत्ते रशनाकलापम् ।
नाभिर्गभीरा विपुलाङ्गनानां प्रदक्षिणावर्तगता च शस्ता ।।४।।

भाषा—यदि स्त्रियों का नितम्ब (कटिपश्चाद्भाग) चौड़ा, मांसल और बड़ा हो, तो वह करधनी-सा शोभित होता है। यदि नारियों की नाभि गम्भीर, विपुल और प्रदक्षिणावर्त हो, तो वह प्रशस्त होती है ॥४॥

कट्यादिलक्षणगत फल कथन

मध्यं स्त्रियास्त्रिवलिनाथमरोमशं च
वृत्तौ घनावविषमौ कठिनावुरस्यौ ।
रोमप्रवर्जितमुरो मृदु चाङ्गनानां
ग्रीवा च कम्बुनिचितार्थसुखानि दत्ते ॥५॥

भाषा—जिन नारियों के मध्य भाग त्रिबलीयुक्त व रोम रहित हों; दोनों स्तन घने, समान तथा कड़े हों; वक्षःस्थल कोमल तथा रोम रहित हो तथा ग्रीवा शङ्ख के समान हों, तो वह धनवती व सुखी होती हैं॥५॥

अधरलक्षणगत फल कथन

बन्धुजीवकुसुमोपमोऽधरो मांसलो रुचिरबिम्बरूपभृत् ।
कुन्दकुड्मलनिभाः समा द्विजा योषितां पतिसुखामितार्थदाः ॥६॥

भाषा—जिन स्त्रियों का अधर बन्धुजीव पुष्प की तरह खिले हुए फूल के समान और मांसल हो अथवा पके कुन्दरू के फल के समान हो और दाँत कुन्दकली के समान आभायुक्त हों, वे स्त्रियाँ पति को सुखी करती हैं और अमित धन देती हैं ॥६॥

चित्तादिलक्षणगत फल कथन

दाक्षिण्ययुक्तमशठं परपुष्टहंस-
वल्गु प्रभाषितमदीनमनल्पसौख्यम् ।
नासा समा समपुटा रुचिरा प्रशस्ता
दृङ्नीलनीरजदलद्युतिहारिणी च ॥७॥

भाषा—सौभाग्यवती स्त्रियों का चित्त दयाशील, कपटहीन और शब्द कोकिला या हंस-ध्वनि के समान होता है। नासिका सम व समान पुटवाली होकर सुन्दर हो, तो प्रशस्त जानना चाहिए। नील कमलदल के समान नेत्र अच्छे माने जाते हैं ॥७॥

भ्रूललाटलक्षणगत फल कथन

नो सङ्गते नातिपृथू न लम्बे शस्ते भ्रुवौ बालशशाङ्कवक्रे ।
अर्धेन्दुसंस्थानमरोमशं च शस्तं ललाटं न नतं न तुङ्गम् ॥८॥

भाषा—स्त्रियों की दोनों भौंहें यदि असंलग्न, पतली, छोटी, बाल चन्द्रमा के समान टेढ़ी हो, तो प्रशस्त होती हैं। जिनका ललाट अर्धचन्द्राकार, रोमरहित और सम हो, तो प्रशस्त जानना चाहिए ॥८॥

कर्णकेशलक्षणगत फल कथन

कर्णयुग्ममपि युक्तमांसलं शस्यते मृदु समाहितं समम्।
स्निग्धनीलमृदुकुञ्चितैकजा मूर्धजाः सुखकराः समं शिरः ॥९॥

भाषा—स्त्रियों के दोनों कान मांसल, कोमल व समान तथा अचल हों, तो प्रशस्त होते हैं। केश चिकने, काले, कोमल और टेढ़े तथा रोमकूपों में एक-एक निकले हों, तो सुखकारी होते हैं। यदि शिर समान हो, तो सुखदायक होता है ॥९॥

रमणियों के लक्षण कथन

भृङ्गारासनवाजिकुञ्जररथश्रीवृक्षयूपेषुभि-
र्मालाकुण्डलचामराङ्कुशयवैः शैलैर्ध्वजैस्तोरणैः।
मत्स्यस्वस्तिकवेदिकाव्यजनकैः शङ्खातपत्राम्बुजैः
पादे पाणितलेऽथवा युवतयो गच्छन्ति राज्ञीपदम् ॥१०॥

भाषा—जिनके करतल व पादतल में झारी, आसन, घोड़ा, हाथी, रथ, श्रीफलवृक्ष, यूप, बाण, माला, कुण्डल, चामर, अङ्कुश, यव, पर्वत, ध्वजा, तोरण, मछली, त्रिकोण, वेदिका, पंखा, शङ्ख, छाता और कमल के चिह्न हों, तो स्त्रियाँ रानी पद होती हैं ॥१०॥

मणिबन्धादिलक्षणानुसार फल कथन

निगूढमणिबन्धनौ तरुणपद्मगर्भोपमौ
करौ नृपतियोषितस्तनुविकृष्टपर्वाङ्गुली।
न निम्नमति नोन्नतं करतलं सुरेखान्वितं
करोत्यविधवां चिरं सुतसुखार्थसम्भोगिनीम् ॥११॥

भाषा—जिन स्त्रियों के हाथ गम्भीर मणिबन्ध वाले हों, नवीन कमलगर्भ के समान हों, जिनमें सारी अंगुलियाँ पतली तथा बिरली हों, वे स्त्रियाँ राजपत्नी होती हैं। जिन स्त्रियों का करतल गहरा व ऊँचा न हो तथा सुरेखाओं से संयुत हो, तो उन स्त्रियों को सौभाग्यवती, पुत्रवती, सुखवती और धनवती तथा सम्भोगिनी बनाता है ॥११॥

ऊर्ध्व रेखा लक्षणानुसार फल कथन

मध्याङ्गुलिं या मणिबन्धनोत्था
रेखा गता पाणितलेऽङ्गनायाः।
ऊर्ध्वस्थिता पादतलेऽथवा या
पुंसोऽथवा राज्यसुखाय सा स्यात् ॥१२॥

भाषा—जिस स्त्री के करतल में मणिबन्ध से उठी ऊर्ध्वरेखा मध्यमा के मूल

तक गई हो, वह स्त्री रानी होती है। इसी भाँति पादतल में ऊर्ध्वरेखा हो, तो भी रानी होती है। वह अपने पति को राज्यसुखदात्री होती हैं। जिस पुरुष के करतल या पादतल में ऊर्ध्वरेखा उपस्थित हो, वह भी राजा होता है ॥१२॥

परमायुकथन लक्षण

कनिष्ठिकामूलभवा गता या प्रदेशिनीमध्यमिकान्तरालम्।
करोति रेखा परमायुषः सा प्रमाणमूना तु तदूनमायुः ॥१३॥

भाषा—जिस स्त्री के करतल में कनिष्ठा अङ्गुलि के मूल से निकली रेखा तर्जनी व मध्यमा के बीच तक हो, तो वह परमायु पाती है और जो उस रेखा के प्रमाण से कम हो, तो कम आयु को पाती है ॥१३॥

सन्तति रेखा परिज्ञानार्थ कथन

अङ्गुष्ठमूले प्रसवस्य रेखाः पुत्रा बृहत्यः प्रमदास्तु तन्व्यः।
अच्छिन्नमध्या बृहदायुषस्ताः स्वल्पायुषां छिन्नलघुप्रमाणाः ॥१४॥

भाषा—स्त्रियों के अङ्गुष्ठ के मूल में सन्तान की रेखायें होती हैं। उनमें जो बड़ी हों, वे पुत्र की रेखा जाननी चाहिए। यदि छोटी हों, वे कन्याओं की जाननी चाहिए। यदि रेखाऐं साफ और बड़ी हों, वे दीर्घायु द्योतक हैं। जो छिन्न-भिन्न तथा छोटी रेखा प्रतीत हों, वे अल्पायु वालों की होती हैं ॥१४॥

एतदनन्तर स्त्रियों शुभ लक्षण परिज्ञानार्थ कथन

इतीदमुक्तं शुभमङ्गनानामतो विपर्यस्तमनिष्टमुक्तम्।
विशेषतोऽनिष्टफलानि यानि समासतस्तान्यनुकीर्तयामि ॥१५॥

भाषा—इस प्रकार उपरोक्त की तरह स्त्रियों के शुभ लक्षणों को कहा गया है। इसके विपरीत और सभी अशुभ लक्षण ही होते हैं। अतः अब मैं (ग्रन्थकार) उन अशुभ लक्षणों को कहता हूँ॥१५॥

पादाङ्गुलिलक्षणानुसार फल कथन

कनिष्ठिका वा तदनन्तरा वा
महीं न यस्याः स्पृशति स्त्रियाः स्यात्।
गताथवाऽङ्गुष्ठमतीत्य यस्याः
प्रदेशिनी सा कुलटाऽतिपापा ॥१६॥

भाषा—जिस स्त्री के चलने में पैर की कनिष्ठा व अनामिका अंगुली पृथ्वी का स्पर्श न करे अथवा जिस स्त्री के पैर की तर्जनी अङ्गुली अङ्गुष्ठ से लम्बी हो, वह स्त्री व्यभिचारिणी होती है ॥१६॥

पिण्डिकोदरलक्षणगत फल कथन

उद्बद्धाभ्यां पिण्डिकाभ्यां शिराले शुष्के जङ्घे लोमशे चातिमांसे।
वामावर्तं निम्नमल्पं च गुह्यं कुम्भाकारं चोदरं दुःखितानाम् ॥१७॥

माया—जिन स्त्रियों की पिण्डुरियाँ ऊँची हों, जङ्घायें रोमों वाली, अतिमांसल या सूखी अथवा नसों से व्याप्त हों, अर्थात् नसें दिखती हों, जिनका गुह्यदेश वामावर्त, गहरा व छोटा-सा प्रतीत हो और उदर घड़ा-सा हो, वे स्त्रियाँ दुःखभागिनी होती हैं ॥१७॥

ग्रीवालक्षणगत फल कथन

ह्रस्वयातिनिःस्वता दीर्घया कुलक्षयः।
ग्रीवया पृथूत्थया योषितः प्रचण्डता ॥१८॥

माया—जिन स्त्रियों की ग्रीवा (घींव) बहुत छोटी हो, वे दरिद्रिणी होती हैं। जिनकी ग्रीवा लम्बी हो, वें वंश विनाशती हैं। जिनकी ग्रीवा चौड़ी और ऊँची हो, वे क्रोधी होती हैं ॥१८॥

नेत्रगण्डकूपलक्षणगत फल कथन

नेत्रे यस्याः केकरे पिङ्गले वा
सा दुःशीला श्यावलोलेक्षणा च।
कूपौ यस्या गण्डयोश्च स्मितेषु
निःसन्दिग्धं बन्धकीं तां वदन्ति ॥१९॥

माया—जिस स्त्री के दोनों नेत्र कञ्जे हों, वह दुश्चरित्रा होती है। जिस स्त्री के नेत्र पिङ्गलवर्ण हों, चञ्चल चितवन हो, वह भी दुश्चरित्रा होती है। जिस स्त्री के हँसने के समय गालों मे गड्ढे पड़ जाते हों, उस स्त्री को मुनियों ने निःसन्देह वञ्चकी (असती) कहा है ॥१९॥

ललाटलक्षणगत फल कथन

प्रविलम्बिनि देवरं ललाटे श्वशुरं हन्त्युदरे स्फिजोः पतिं च।
अतिरोमचयान्वितोत्तरोष्ठी न शुभा भर्तुरतीव या च दीर्घा ॥२०॥

माया—जिस स्त्री का ललाट बहुत लम्बा हो, वह स्त्री देवर का विनाश करती है। जिसका पेट लम्बा हो, वह ससुर का नाश करती है। जिस स्त्री के कूल्हे लम्बे हों, वह पतिघातक होती है। जिसकी मूछें-सी निकल आई हों, वह स्त्री स्वामी को शुभदायक नहीं होती है। जो स्त्री पति की अपेक्षा लम्बी हो, वह स्वामी को अतीव दुःखदायक होती है ॥२०॥

स्तनकर्णदन्तलक्षणगत फल कथन

स्तनौ सरोमौ मलिनोल्बणौ च
क्लेशं दधाते विषमौ च कर्णौ।

स्थूला: कराला विषमाश्च दन्ता:
क्लेशाय चौर्याय च कृष्णमांसा: ।।२१।।

भाषा—जिस स्त्री के स्तन (दूध) रोमों समेत मैले और बड़े हों, कान विषम (छोटे-बड़े) हों, तो उन्हें वे क्लेशकारक होते हैं। जिन स्त्रियों के दाँत मोटे, कराल तथा विषम हों, तो वे दु:खदायक होते हैं। जिनके मसूढ़ों के मांस काले हों, वे स्त्रियाँ चोरी करती हैं ।।२१।।

करतल में क्रव्यादिरेखा का फल कथन

क्रव्यादरूपैर्वृककाककङ्कसरीसृपोलूकसमानचिह्नै: ।
शुष्कै: शिरालैर्विषमैश्च हस्तैर्भवन्ति नार्य: सुखवित्तहीना: ।।२२।।

भाषा—जिन स्त्रियों के हाथों में मांसभक्षी बाज आदि पक्षी, भेड़िया, कौवा, ऊजली, चील और घुग्घू के समान चिह्न हों, जिन स्त्रियों के हाथ सूखी नसों से व्याप्त हों, जिनके हाथ विषम हों, तो वे स्त्रियाँ सुख व धन से रहित होती हैं ।।२२।।

ओष्ठकेशलक्षणगत फल

या तूत्तरोष्ठेन समुन्नतेन रूक्षाग्रकेशी कलहप्रिया सा।
प्रायो विरूपासु भवन्ति दोषा यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति ।।२३।।

भाषा—जिन स्त्रियों का ऊपर का ओष्ठ ऊँचा हो, केशों का अग्रभाग रूखा हो, वे लड़ाई करने में प्रेम रखती हैं। प्राय: विरूप स्त्रियों में दोष होते हैं। जिन का अच्छा रूप होता है, वे गुणी होती हैं ।।२३।।

आयुप्रमाण ज्ञानार्थ शरीर के अङ्गों का विभाग कथन

पादौ सगुल्फौ प्रथमं प्रदिष्टौ जङ्घे द्वितीयं तु सजानुचक्रे।
मेढ्रोरुमुष्कं च ततस्तृतीयं नाभि: कटिश्चैव चतुर्थमाहु: ।।२४।।
उदरं कथयन्ति पञ्चमं हृदयं षष्ठमतस्तनान्वितम्।
अथ सप्तममंसजत्रुणी कथयन्त्यष्टममोष्ठकन्धरे ।।२५।।
नवमं नयने च सभ्रुणी सललाटं दशमं शिरस्तथा।
अशुभेष्वशुभं दशाफलं चरणाद्येषु शुभेषु शोभनम् ।।२६।।

भाषा—स्त्री अवस्थागत शुभाशुभ फल ज्ञान के हुतु शरीराङ्गों के दस विभाग किया गया है—सगुल्फ पैर प्रथम विभाग; जानुचक्र के साथ जङ्घा द्वितीय विभाग; लिङ्ग, ऊरु और अण्डकोश तृतीय विभाग; नाभि और कमर पर्यन्त चतुर्थ विभाग; पेट पञ्चम विभा; स्तन के साथ हृदय षष्ठम विभाग, सन्धियों सहित कन्धे सप्तम विभाग; ओष्ठ और ग्रीवा अष्टम विभाग; सभ्रूनेत्र नवम विभाग तथा ललाट के साथ सिर दश विभाग होता है। इस प्रकार परमायु लक्षण के भी दश विभाग करते हुए प्रत्येक अङ्ग

विभाग उन्हें सन्निवेशित कर शुभाशुभ लक्षण से फल ज्ञान करना चाहिए। इस तरह शरीर का प्रथम विभाग शुभ लक्षणों वाला होने पर स्त्री के प्रथम आयु विभाग में शुभ अशुभ लक्षणों वाला होने पर शुभ फल होता है। इसी प्रकार शरीर के द्वितीयादि विभाग में स्थित शुभाशुभ लक्षणों के अनुसार उस-उस आयु गत विभाग में भी शुभाशुभ फलों की कल्पना करते हुए फल कहना चाहिए॥२४-२६॥

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां स्त्रीलक्षणविचारो नाम सप्ततितमोऽध्यायः ।।७०।।

□□□

अथैकसप्ततितमोऽध्यायः-७१

वस्त्रच्छेदलक्षणविचारः

सर्वप्रथम अश्विनी आदि नक्षत्रों में नववस्त्र धारण फल कथन

प्रभूतवस्त्रदाश्विनी भरण्यथापहारिणी ।
प्रदह्यतेऽग्निदैवते प्रजेश्वरेऽर्थसिद्धयः ।।१।।

मृगे तु मूषकाद्भयं व्यसुत्वमेव शाङ्करे ।
पुनर्वसौ शुभागमस्तदग्रभे धनैर्युतिः ।।२।।

भुजङ्गभे विलुप्यते मघासु मृत्युमादिशेत् ।
भगाह्वये नृपाद्भयं धनागमाय चोत्तरा ।।३।।

करेण कर्मसिद्धयः शुभागमस्तु चित्रया ।
शुभं च भोज्यमानिले द्विदैवते जनप्रियः ।।४।।

सुहृद्युतिश्च मित्रभे तदग्रभेऽम्बरक्षयः ।
जलप्लुतिश्च नैर्ऋते रुजो जलाधिदैवते ।।५।।

मिष्टमन्नमपि वैश्वदैवते वैष्णवे भवति नेत्ररोगता ।
धान्यलब्धिरपि वासवे विदुर्वारुणे विषकृतं महद्भयम् ।।६।।

भद्रपदासु भयं सलिलोत्थं तत्परतश्च भवेत् सुतलब्धिः ।
रत्नयुतिं कथयन्ति च पौष्णे योऽभिनवाम्बरमिच्छति भोक्तुम् ।।७।।

माया—अशविनी नक्षत्र में नवीन वस्त्र का उपभोग करने से अति वस्त्र लाभ; भरणी में नवीन वस्त्र का उपभोग करने से वस्त्रों की हानि; कृत्तिका में नवीन वस्त्र का उपभोग करने से वस्त्र का जलना; इसी तरह रोहिणी में धन लाभ; मृगशिरा में वस्त्र को चूहे से भय; आर्द्रा में मृत्युभय; पुनर्वसु में शुभलाभ; पुष्य में धनलाभ; श्लेषा में वस्त्र हानि; मघा में भी मृत्यु; पूर्वाफाल्गुनी में राजा से भय; उत्तराफाल्गुनी में धनलाभ; हस्त में कर्मसिद्धि; चित्रा में शुभलाभ; स्वाती में अच्छा भोजन की प्राप्ति; विशाखा में जनप्रियता का लाभ; अनुराधा में मित्रों से मिलन; ज्येष्ठा में वस्त्रक्षय; मूल में जल में डूब जाने का भय पूर्वाषाढ़ा में रोगभय; उत्तराषाढ़ा में मिष्ठान्न का लाभ; श्रवण में नेत्ररोग, धनिष्ठा में अन्न का लाभ, शतभिषा में विष के कारण अतिभय, पूर्वाभाद्रपद में जल का भय; उत्तराभाद्रपद में पुत्र का लाभ तथा रेवती में नवीन वस्त्र के उपभोग करने से रत्नों की प्राप्ति होती है।।१-७।।

नवीन वस्त्र धारण में विशेष कथन

भोक्तुं नवाम्बरं शस्तमृक्षेऽपि गुणवर्जिते ।
विवाहे राजसम्माने ब्राह्मणानां च सम्मते ।।८।।

माया—विवाह के समय, राजसम्मान के अवसर पर और ब्राह्मणों की आज्ञा मिलने पर अविहित नक्षत्र में भी नवीन वस्त्र का उपभोग करने से कल्याण ही होता है।।८।।

वस्त्रों के नौ भागों में देवादि स्थिति से शुभाशुभ फल कथन

वस्त्रस्य कोणेषु वसन्ति देवा नराश्च पाशान्तदशान्तमध्ये ।
शेषास्त्रयश्चात्र निशाचरांशास्तथैव शय्यासनपादुकासु ।।९।।

माया—किसी भी वस्त्र का नौ विभाग कर उसके चारों कोणीय भागों में देवता; पाशान्तमध्य अर्थात् वस्त्र के मूल और दशान्त भाग अर्थात् वस्त्र के आगे के भाग में मनुष्य तथा मध्य के ऊपर से नीचे तक स्थित तीन भागों में राक्षस की स्थिति की परिकल्पना करनी चाहिए। इसी प्रकार शय्या, आसन, पादुका आदि में भी चिन्तन करना कर्त्तव्य है।।९।।

वस्त्र के नौ भाग करने का प्रयोजन कथन

लिप्ते मषीगोमयकर्दमाद्यैश्छिन्ने प्रदग्धे स्फुटिते च विन्द्यात् ।
पुष्टं नवेऽल्पाल्पतरं च भुक्ते पापं शुभं चाधिकमुत्तरीये ।।१०।।

माया—चूँकि नवीन वस्त्र के ऊपर स्याही, गोबर, कीचड़ आदि लग जाना अथवा वह जल अथवा फट जाय, तो शुभ अथवा अशुभ फल का विचार किया जाता है। इस स्थिति में वस्त्र यदि न अधिक नया अथवा अधिक पुराना हो, तो थोड़ा फल; यदि वस्त्र अधिक पुराना हो, तो और अल्प फल जानना चाहिए। परन्तु उत्तरीय वस्त्र अर्थात् ओढ़ने वाला चादर आदि के होने पर अति शुभाशुभ फल होता है।।१०।।

वस्त्र के उक्त नौ भागों की विकृति का फल कथन

रुग्राक्षसांशेष्वथवाऽपि मृत्युः पुञ्जन्म तेजश्च मनुष्यभागे ।
भागेऽमराणामथ भागवृद्धिः प्रान्तेषु सर्वत्र वदन्त्यनिष्टम् ।।११।।

माया—वस्त्र के राक्षस सम्बन्धी भागों में उपरोक्त प्रकार की विकृति अर्थात् स्याही, गोबर, कीचड़ आदि लगने या जल जाने या फट जाने से होने वाली विकृति से उपभोगकर्ता को रोग या उसकी मृत्यु होती है। मनुष्य या नर भागों में होने से पुत्र और तेज की प्राप्ति, देव भागों में होने से भोग वृद्धि तथा सभी भागों में अनिष्ठ फलकारी होता है, ऐसा मुनिजनों ने कहा है।।११।।

वस्त्रोक्त भागों की विकृति के फलो में विशेषता कथन

कङ्कप्लवोलूककपोतकाकक्रव्यादगोमायुखरोष्ट्रसर्पैः ।
छेदाकृतिर्दैवतभागगापि पुंसां भयं मृत्युसमं करोति ।।१२।।

माया—वस्त्र में स्थित देवताओं से सम्वन्धित भागों में भी यदि कङ्क, मेढ़क, उल्लू, कबूतर, कौआ, मांसाहारी (गिद्ध , चील, बाज आदि) पक्षियों, सियार, गदहा, ऊँट अथवा सर्प सदृश आकृति का छिद्र आदि हो, तो मृत्यु की तरह भयप्रद होता है।।१२।।

और भी वस्त्रोक्त भागों की विकृति फलों में विशेषता कथन

छत्रध्वजस्वस्तिकवर्धमानश्रीवृक्षकुम्भाम्वुजतोरणाद्यैः ।
छेदाकृतिर्नैर्ऋतभागगाऽपि पुंसां विधत्ते नचिरेण लक्ष्मीम् ।।१३।।

माया—इसी तरह वस्त्र में स्थित राक्षस भागों में भी छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, वर्धमान, विल्व वृक्ष, कलश, कमल, तोरण आदि अन्य प्रकार की शुभ आकृति वाला छिद्र आदि के होने से शीघ्र ही अत्यधिक लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।।१३।।

और भी विशेष कथन

(विप्रमतादथ भूपतिदत्तं यच्च विवाहविधावभिलब्ध्यम् ।
तेषु गुणै रहितेष्वपि भोक्तुं नूतनमम्वरमिष्टफलं स्यात् ।।१४।।

माया—अविहित नक्षत्रों के रहने पर भी ब्राह्मण के आदेश से, राजा प्रदत्त वस्त्र अथवा विवाह के अवसर पर प्राप्त वस्त्र का किसी समय भी अर्थात् विना विचार का उपभोग कर लेना चाहिए, इससे भी शुभ ही होता है।।१४।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां वृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां वस्त्रच्छेदलक्षणविचारो नामैकसप्ततितमोऽध्यायः ।।७१।।

□□□

अथ द्विसप्ततितमोऽध्यायः-७२

चामरलक्षणविचारः

सर्वप्रथम चामर प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

देवैश्चमर्यः किल वालहेतोः सृष्टा हिमक्ष्माधरकन्दरेषु ।
आपीतवर्णाश्च भवन्ति तासां कृष्णाश्च लाङ्गूलभवाः सिताश्च ।।१।।

माया—देवताओं के द्वारा हिमालय की गुफाओं-कन्दराओं में चामर के बालों के लिए चमरी नाम की पशु की उत्पत्ति की गई है, उस पशु के पूँछ के बाल पीले, काले और श्वेत होते हैं।।१।।

उपरोक्त बालों की विशेषता कथन

स्नेहो मृदुत्वं बहुवालता वा वैशद्यमल्पास्थिनिबन्धनत्वम् ।
शौक्ल्यं च तासां गुणसम्पदुक्ता विद्धाल्पलुप्तानि न शोभनानि ।।२।।

माया—चिकना, कोमल, सघन, निर्मल, आपस में विना जुड़े हुए, बीच की छोटी हड्डी से युक्त, श्वेत वर्ण आदि लक्षण बालों की गुणरूपी सम्पत्ति है अर्थात् ऐसे लक्षणों वाले बाल शुभकारी होते हैं; लेकिन टूटे, फटे, कटे, छोटे, और उखड़े हुए चामर के बाल शुभदायी नहीं होते हैं।।२।।

चामर दण्ड के लक्षणों का कथन

अध्यर्धहस्तप्रमितोऽस्य दण्डो हस्तोऽथवाऽरत्निसमोऽथवाऽन्यः ।
काष्ठाच्छुभात् काञ्चनरूप्यगुप्ताद् रत्नैश्च सर्वैश्च हिताय राज्ञाम् ।।३।।

माया—ऐसे चामरों में दण्ड डेढ़ हाथ, एक हाथ अथवा अरत्नि अर्थात् मुट्ठी बँधा हाथ के समान लम्बा बनाना चाहिए। उत्तम काष्ठ का दण्ड बनाना चाहिए, जिसमें स्वर्ण, चाँदी आदि धातु का आवरण मढ़वा कर उस पर रत्नों को जड़ना चाहिए, ऐसा दण्ड राजजनों का हित साधन करने वाला होता है।।३।।

ब्राह्मणादि वर्ण क्रम से दण्ड का वर्ण कथन

यष्ट्यातपत्राङ्कुशवेत्रचापवितानकुन्तध्वजचामराणाम् ।
व्यापीततन्त्रीमधुकृष्णवर्णा वर्णक्रमेणैव हिताय दण्डाः ।।४।।

माया—यष्टि अर्थात् लाठी, छत्र, अङ्कुश, वेत्र अर्थात् घड़ी, धनुष, वितान अर्थात् चन्दोरवा, माला, ध्वज, चामर आदि के दण्ड का वर्ण ब्राह्मणों के लिए पीला, क्षत्रियों के लिए पीला और रक्त , वैश्यों के लिए मधुवर्ण तथा शूद्रों के लिए काला करना चाहिए। इस प्रकार यष्टि आदि सभी के लिए हित साधक होते हैं।।४।।

दण्ड आदि में सम पर्व का फल कथन

मातृभूधनकुलक्षयावहा रोगमृत्युजननाश्च पर्वभिः ।
द्व्यादिभिर्द्विकविवर्धितैः क्रमात् द्वादशान्तविरतैः समैः फलम् ।।५।।

माया—ऊपरोक्त यष्टि, छत्र आदि के दण्ड में दो पर्व से आरम्भ कर दो-दो पर्व बढ़ाते जाने से बारह पर्व पर्यन्त का क्रमशः फल इस प्रकार जानना चाहिए दो पर्व दण्ड में होने से मातृनाश; चार पर्व दण्ड में होने से भूमिहानि; छः पर्व होने से धनहानि, आठ पर्व होने से कुलहानि, दस पर्व से रोग तथा बारह पर्व दण्ड में होने से मृत्यु होती है।।५।।

दण्ड आदि में विषम पर्व का फल कथन

यात्राप्रसिद्धिर्द्विषतां विनाशो लाभाः प्रभूता वसुधागमश्च ।
वृद्धिः पशूनामभिवाञ्छिताप्तिस्त्र्याद्येष्वयुग्मेषु तदीश्वराणाम् ।।६।।

माया—तीन पर्व से युक्त दण्ड के होने से वह अपने स्वामी को यात्रा में विजय दिलाने वाला; पाँच पर्व होने से शत्रुओं की हानि; सात पर्व से अतिलाभ; नौ पर्व से भूमिलाभ; ग्यारह पर्व से पशुवृद्धि तथा तेरह पर्व दण्ड में होने से वह अपने स्वामी को अभीष्ट सिद्धि देने वाला होता है।।६।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां चामरलक्षणविचारो नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ।।७२।।

□□□

अथ त्रिसप्ततितमोऽध्यायः-७३

छत्रलक्षणविचारः

सर्वप्रथम छत्र प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

निचितं तु हंसपक्षैः कृकवाकुमयूरसारसानां वा।
दौकूल्येन नवेन तु समन्ततश्छादितं शुक्लम् ।।१।।
मुक्ताफलैरुपचितं प्रलम्बमालाविलं स्फटिकमूलम्।
षड्ढस्तशुद्धहैमं नवपर्वनगैकदण्डं तु ।।२।।
दण्डार्धविस्तृतं तत् समावृतं रत्नभूषितमुदग्रम्।
नृपतेस्तदातपत्रं कल्याणपरं विजयदं च ।।३।।

माया—हंस, मुर्गा, मयूर, सारस आदि पक्षियों के पंखों से बना हुआ; नये दुकूल (दुपट्टों) से आच्छादित; श्वेतवर्ण; लटकती-सी मोतियों की मालाओं वाला तथा स्फटिक के सहित मूल अर्थात् मूठ युक्त छत्र बनाना चाहिए। एवं छः हाथ लम्बा, सोने से मढ़ा हुआ एक काष्ठ का दण्ड नौ अथवा सात पर्वों वाला उस छत्र में लगाना चाहिए। उस दण्ड के आधे के समान छत्र का व्यास रखते हुए, उसे चारों ओर से आवृत्त और रत्नों से सुशोभित करना चाहिए। इसी प्रकार बना राजा का श्रेष्ठ छत्र कल्याण और विजय प्रदान करने वाला होता है।।१-३।।

युवराज आदि के छत्र के दण्ड का प्रमाण कथन

युवराजनृपतिपत्न्योः सेनापतिदण्डनायकानां च।
दण्डोऽर्धपञ्चहस्तः समपञ्चकृतोऽर्धविस्तारः ।।४।।

माया—वैसे युवराज, रानी, सेनापति और दण्डनायक के छत्रों का दण्ड प्रमाण साढ़े चार हाथ और व्यास ढ़ाई हाथ का बनाना चाहिए।।४।।

अन्य राजपुत्रों के छत्रों का लक्षण कथन

अन्येषामुष्णघ्नं प्रसादपट्टैर्विभूषितशिरस्कम्।
व्यालम्बिरत्नमालं छत्रं कार्यं तु मायूरम् ।।५।।

माया—युवराज आदि राजपुरुषों के अतिरिक्त राजपुरुषों या राजपुत्रों का छत्र मयूर पक्षी के पंखों से बना हुआ, प्रासाद पट्टों से शोभयमान शिर युक्त और उसमें लटकती रत्नों की मालाऐं धूप आदि से रक्षा के लिए बनानी चाहिए।।५।।

राजपुरुषों के अतिरिक्त जनों का छत्र लक्षण कथन

अन्येषां तु नराणां शीतातपवारणं तु चतुरस्त्रम् ।
समवृत्तदण्डयुक्तं छत्रं कार्यं तु विप्राणाम् ।।६।।

माया—राजपुरुषों को छोड़कर अन्य मनुष्य के लिए धूप आदि से रक्षा के लिए चतुर्भुजाकृति-सा छत्र तथा ब्राह्मण के लिए गोलदण्ड वाला छत्र बनाना श्रेयस्कर है।।६।।

।। इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां वृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां छत्रलक्षणाविचारो नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ।।७३।।

□□□

अथ चतुःसप्ततितमोऽध्यायः-७४

स्त्रीप्रशंसा कथनम्

सर्वप्रथम आगम प्रदर्शनार्थ कथन

जये धरित्र्याः पुरमेव सारं पुरे गृहं सद्मनि चैकदेशः।
तत्रापि शय्या शयने वरा स्त्री रत्नोज्ज्वला राज्यसुखस्य सारः ॥१॥

भाषा—सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत लेने के बाद भी उसमें राजा की राजधानी मात्र सार है, उस राजधानी में भी मात्र अपना महल, अपने उस महल में भी मात्र अपना निवास स्थान, अपने निवास स्थान में भी मात्र अपनी शय्या स्थान तथा उस शय्या स्थान में भी शय्या पर रत्नों से सुशोभित स्त्री मात्र राज्य सुख का सार है, शेष सभी वस्तुऐं सारहीन हैं॥१॥

स्त्री प्रशंसा के लिए कथन

रत्नानि विभूषयन्ति योषा भूष्यन्ते वनिता न रत्नकान्त्या।
चेतो वनिता हरन्त्यरत्ना नो रत्नानि विनाङ्गनाङ्गसङ्गम् ॥२॥

भाषा—स्त्रियाँ रत्नों को विभूषित करती हैं, लेकिन रत्न कान्ति से स्त्रियाँ विभूषित नहीं होती; क्योंकि रत्न रहित स्त्रियाँ भी चित्त का हरण करती हैं अर्थात् आभूषण के विना भी स्त्रियाँ चित्त को आकृष्ट करती हैं। परन्तु स्त्रियों के अङ्ग संग के विना रत्न चित्त का हरण नहीं करता॥२॥

स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन

आकारं विनिगूहतां रिपुबलं जेतुं समुत्तिष्ठतां
तन्त्रं चिन्तयतां कृताकृतशतव्यापारशाखाकुलम्।
मन्त्रिप्रोक्तनिषेविणां क्षितिभुजामाशङ्किनां सर्वतो
दुःखाम्भोनिधिवर्तिनां सुखलवः कान्तासमालिङ्गनम् ॥३॥

भाषा—सुख, भय, हर्ष आदि विकार रूप आकार को गुप्त रखता हुआ, शत्रु सेना को जीतने का प्रयत्न करता हुआ, कृताकृत सैकड़ों व्यापार रूप कर्मों की शाखाओं से आकुल तंत्रों को विचारता हुआ, मन्त्री समर्थित नीतियों का अनुसरण करता हुआ, अपने पुत्र स्त्री भ्राता आदि से भी शंका ग्रस्त होता हुआ आदि प्रकार के दुःख रूपी समुद्र में उतराता राजा के लिए किसी युवति स्त्री से किया गया आलिङ्गन किञ्चित् सुख का अनुभव कराने वाला होता है॥३॥

स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन

श्रुतं दृष्टं स्पृष्टं स्मृतमपि नृणां ह्लादजननं
न रत्नं स्त्रीभ्योऽन्यत् क्वचिदपि कृतं लोकपतिना।

तदर्थं वर्मार्थौ सुतविषयसौख्यानि च ततो
गृहे लक्ष्म्यो मान्याः सततमबला मानविभवैः ।।४।।

भाषा—ब्रह्माजी ने स्त्रियों को छोड़कर और कहीं कोई अन्य ऐसा रत्न नहीं बनाया या रचा है, जिसे सुनने, छूने, देखने अथवा स्मरण करने से ही चित्त को आनन्द या आह्लाद की प्राप्ति हो, मनुष्य स्त्री के लिए ही धर्म और अर्थ का सेवन करता है, पुत्र सुख और विषय सुख की प्राप्ति भी स्त्री से ही होता है तथा स्त्री गृहलक्ष्मी होती है, अतः सन्मान और विभव (या ऐश्वर्य) से प्रत्येक समय स्त्रियों का सम्यक् आदर करना चाहिए।।४।।

स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन

येऽप्यङ्गनानां प्रवदन्ति दोषान् वैराग्यमार्गेण गुणान् विहाय।
ते दुर्जना मे मनसो वितर्कः सद्भाववाक्यानि न तानि तेषाम् ।।५।।

भाषा—ग्रन्थकार (वराहमिहिर) कहते हैं कि मेरा मानना है कि जो जन स्त्रियों के गुणों और विशेषताओं को छोड़कर वैराग्य मार्ग से उसके दोषों का वर्णन करते हैं, वे जन दुष्ट हैं। अतः ऐसे दुष्ट जनों की वाणी कथमपि प्रमाणिक नहीं हो सकते हैं।।५।।

स्त्री प्रशंसा के लिए और भी कथन

प्रब्रूत सत्यं कतरोऽङ्गनानां दोषोऽस्ति यो नाचरितो मनुष्यैः ।
धार्ष्ट्येन पुम्भिः प्रमदा निरस्ता गुणाधिकास्ता मनुनात्र चोक्तम् ।।६।।

भाषा—ठीक है, आप वीतरागी हैं, तो आप यह सत्य-सत्य बतायें कि स्त्रियों में वह कौन-सा दोष है, जिसे पहले ही पुरुष ने नहीं किया है अर्थात् वे सब दोषयुक्त कर्म पहले पुरुषों ने किया, फिर उनसे स्त्रियों ने सीखा। पुरुषों ने अपनी धृष्टता के बल से स्त्रियों को अपने वश में किया, क्योंकि पुरुषों से अधिक गुण स्त्रियों में है। इस प्रसङ्ग में मनु महाराज ने भी इस प्रकार कहा है।।६।।

मनु द्वारा किया गया स्त्री प्रशंसा कथन

सोमस्तासामदाच्छौचं गन्धर्वः शिक्षितां गिरम् ।
अग्निश्च सर्वभक्षित्वं तस्मान्निष्कसमाः स्त्रियः ।।७।।

भाषा—स्त्रियों को चन्द्रमा ने पवित्रता या शुद्धता; गन्धर्वों ने शिक्षित वचन तथा अग्नि ने सर्वभक्षित्व प्रदान किया है, इसी कारण स्त्रियाँ स्वर्ण के समान दिव्य है।।७।।

स्त्रियों की पवित्रता प्रदर्शनार्थ कथन

ब्राह्मणाः पादतो मेध्या गावो मेध्याश्च पृष्ठतः ।
अजाश्वा मुखतो मेध्याः स्त्रियो मेध्यास्तु सर्वतः ।।८।।

भाषा—ब्राह्मण अपने पैरों से, गायें अपने पृष्ठ (पीठ) से तथा बकरा और घोड़ा अपने मुख से पवित्र होता है, परन्तु स्त्रियाँ अपने समस्त अङ्गों से पवित्र होती हैं।।८।।

स्त्रियों की पवित्रता सार्वकालिक कथन

स्त्रियः पवित्रमतुलं नैता दुष्यन्ति कर्हिचित्।
मासि मासि रजो ह्यासां दुष्कृतान्यपकर्षति ।।९।।

माया—स्त्रियों के समान अन्य कोई दूसरा पदार्थ पवित्र नहीं; कभी भी स्त्रियाँ दोषावह नहीं होती; क्योंकि प्रत्येक मास उनका रज:स्राव होने से उनका पाप भी नष्ट हो जाता है।।९।।

अनादृत स्त्री का प्रभाव कथन

जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रतिपूजिताः।
तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ।।१०।।

माया—अनादृत कुलस्त्रियाँ जिन गृहों को शापित करती हैं, वे गृह कृत्या से आहत होकर चारों ओर से नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं।।१०।।

स्त्रियों के विविध स्वरूप के महत्त्व का कथन

जाया वा स्याज्जनित्री वा सम्भवः स्त्रीकृतो नृणाम्।
हे कृतघ्नास्तयोर्निन्दां कुर्वतां वः कुतः शुभम् ।।११।।

माया—भार्या हो या माता हो, सभी पुरुषों की भी उत्पत्ति स्त्रियों से ही होती है अर्थात् भार्या से पुत्र रूप में और माता से साक्षात् स्वयं उत्पन्न होने वाले कृतघ्न पुरुषो! स्त्रीरूप भार्या और माता की निन्दा करने से तुम्हारा कल्याण कैसे सम्भव है?।।११।।

पुरुषों से स्त्रियों की श्रेष्ठता का कथन

दम्पत्योर्व्युत्क्रमे दोषः समः शास्त्रे प्रतिष्ठितः।
नरा न तमवेक्षन्ते तेनात्र वरमङ्गनाः ।।१२।।

माया—पति-पत्नि दोनों को व्युत्क्रम में अर्थात् परस्त्री गमन में पतिरूप पुरुष को तथा पर पुरुष गमन में पत्नि रूप स्त्री को धर्मशास्त्र में समान रूप से दोषयुक्त कहा गया है, लेकिन पुरुष अपने उस दोष को नहीं देखता तथा स्त्री उस दोष को देखती है। अतएव स्त्रियाँ पुरुष की तुलना में श्रेष्ठतम हैं।।१२।।

परस्त्री गमन दोष निवृत्ति के प्रायश्चित कथन

बहिर्लोम्ना तु षण्मासान् वेष्टितः खरचर्मणा।
दारातिक्रमणे भिक्षां देहीत्युक्त्वा विशुध्यति ।।१३।।

माया—जो पुरुष अपनी पत्नि को त्याग कर अन्यस्त्री का गमन करने वाला होता है, वे पुरुष बाहर की ओर से रोम वाले गर्दभ चर्म से अपने शरीर को आच्छादित कर छः मास पर्यन्त 'भिक्षान्देहि' कहते हुए, भीख माँगने से परिशुद्ध हो जाता है।।१३।।

धैर्ययुक्ता स्त्री का प्रशंसा कथन

न शतेनापि वर्षाणामपैति मदनाशयः ।
तत्र शक्त्या निवर्तन्ते नरा धैर्येण योषितः ।।१४।।

माया—सौ वर्ष की आयु व्यतीत होने पर भी पुरुषों की काम की इच्छा नष्ट नहीं होती; परन्तु शारीरिक शक्ति क्षीण हो जाने पर ही पुरुष उससे निवृत्त हो पाता है, परन्तु स्त्रियाँ उससे अपने धैर्य बल से निवृत्त होती हैं।।१४।।

स्त्रियों की निन्दा करने वालों की निन्दा कथन

अहो धार्ष्ट्यमसाधूनां निन्दतामनघाः स्त्रियः ।
मुष्णतामिव चौराणां तिष्ठ चौरेति जल्पताम् ।।१५।।

माया—सुनो ! अनघा (पवित्र, शुद्ध) स्त्रियों की निन्दा करने वाले,उन निन्दकों की धृष्टता उस प्रकार की है, जिस प्रकार चोरी करते हुए चोर द्वारा किसी अन्य जन के लिए कहा जाना कि 'ओ चोर खड़ा रह !' ।।१५।।

स्त्रियों की समर्पण भावना की प्रशंसा कथन

पुरुषश्चटुलानि कामिनीनां कुरुते यानि रहो न तानि पश्चात् ।
सुकृतज्ञतयाऽङ्गना गतासूनवगूह्य प्रविशन्ति सप्तजिह्वम् ।।१६।।

माया—कामासक्त जन एकान्त स्थान में स्त्रियों को जैसे नम्र और बहलाने वाली वाणी बोलता है, वैसी भावना युक्त वाणी हृदय में अथवा परोक्ष में नहीं बोलता; परन्तु वहीं वह स्त्री कृतज्ञतावश अपने उस मृतपति को आलिङ्गन करती हुई अग्नि में प्रवेश कर 'सती' हो जाती हैं।।१६।।

राज्य सुख का सारा रूप स्त्री का कथन

स्त्रीरत्नभोगोऽस्ति नरस्य यस्य
निःस्वोऽपि साम्प्रत्यवनीश्वरोऽसौ ।
राज्यस्य सारोऽशनमङ्गनाश्च
तृष्णानलोद्दीपनदारु शेषम् ।।१७।।

माया—श्रेष्ठ या उत्तम स्त्री का भोग करने वाला निर्धन या दरिद्र जन भी राजा के समान है; क्योंकि राज्य सुख का सार भोजन और उत्तम स्त्री, ये दो ही पदार्थ हैं, शेष सभी धन, हाथी, घोड़ा, रत्न, स्वर्ण आदि पदार्थ तृष्णा रूप अग्नि को मात्र प्रज्वलित करने वाले काष्ठ हैं।।१७।।

स्त्री सुख का महत्त्व स्थापनार्थ कथन

कामिनीं प्रथमयौवनान्वितां मन्दवल्गुमृदुपीडितस्वनाम् ।
उत्स्तनीं समवलम्ब्य या रतिः सा न धातृभवनेऽस्ति मे मतिः ।।१८।।

माया—मन्द, सुन्दर, कोमल और स्तब्ध करने वाला शब्द करती हुई, समुन्नत स्तनों वाली नवयुवति स्त्री को आङ्गिन करने से जिस प्रकार के सुख की अनुभूति होती है, वह ब्रह्मलोक में भी नहीं मिल सकता; ऐसा मेरा (ग्रन्थकार का) मानना है॥१८॥

स्त्री सुख का और भी महत्त्व स्थापनार्थ कथन

तत्र देवमुनिसिद्धचारणैर्मान्यमानपितृसेव्यसेवनात्।
ब्रूत धातृभवनेऽस्ति किं सुखं यद्रहः समवलम्ब्य न स्त्रियम्॥१९॥

माया—ब्रह्मलोक में देवता, मुनि, सिद्ध, चारण आदि से मान्य, मान, ब्रह्मा, सेव्य आदि की उपासना को छोड़कर उससे बड़ा सुख और कौन-सा है, जो सुख एक़ान्त प्रान्त में स्त्री को आलिङ्गन करने से नहीं प्राप्त हो जाता॥१९॥

स्त्री की महिमा कथन

आब्रह्मकीटान्तमिदं निबद्धं
पुंस्त्रीप्रयोगेण जगत् समस्तम्।
व्रीडाऽत्र का यत्र चतुर्मुखत्व-
मीशोऽपि लोभाद् गमितो युवत्याः॥२०॥

माया—ब्रह्मा से लेकर कीट-पतङ्गों तक समस्त संसार स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध प्रयोग से जुड़ा है, फिर इसमें क्या लज्जा? जहाँ जगत् पिता महादेव जी भी युवति रूप तिलोत्तमा के दर्शन के लोभ से एक से चार मुख वाले हो गए॥२०॥

विशेष—पौराणिक उपाख्यान है कि एक समय कैलाश में शिवजी पार्वती जी को अङ्क में लिए हुए शोभायमान हो रहे थे, उसी समय तिलात्तमा नाम की एक अप्सरा उनकी प्रदक्षिणा करने लगी। उस काल में श्री शिवजी ने उसे देखने के लिए पार्वती जी के भय से अपने एक मुख को प्रदक्षिणारत तिलात्तमा की ओर न घूमाकर चारों दिशाओं में मुख उत्पन्न कर चतुर्मुख हो गए।

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां स्त्रीप्रशंसाकथनं नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः॥७४॥

□□□

अथ पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः-७५

सौभाग्यकरणनिरूपणम्

सुभग पुरुष के प्रसङ्ग में विशेषता कथन

जात्यं मनोभवसुखं सुभगस्य सर्व-
माभासमात्रमितरस्य मनोवियोगात्।
चित्तेन भावयति दूरगताऽपि यं स्त्री
गर्भं बिभर्ति सदृशं पुरुषस्य तस्य ॥१॥

भाषा—सुभग पुरुष का कामदेव सम्बन्धी समस्त सुख ही श्रेष्ठ होता है। स्त्री के मनोवियोग की स्थिति में दुर्भग पुरुष का रति सम्बन्धी सुख आभास मात्र समझना चाहिए; क्योंकि रति करती स्त्री दूर स्थित जिस भी पुरुष का ध्यान करती है, उसी पुरुष के समान गर्भ धारण करती है॥१॥

स्त्रियों में पुरुष की आत्मा की स्थिति और उत्पत्ति कथन

भङ्क्त्वा काण्डं पादपस्योप्तमुर्व्यां
बीजं वास्यां नान्यतामेति यद्वत्।
एवं ह्यात्मा जायते स्त्रीषु भूयः
कश्चित्तस्मिन् क्षेत्रयोगाद्विशेषः ॥२॥

भाषा—जैसे जिस वृक्ष का कलम या बीज भूमि में लगाया जाय, वह ही वृक्ष उत्पन्न होता है, अन्य वृक्ष नहीं। वैसे ही स्त्री में स्थित पुरुष की आत्मा सन्तान के रूप में उसी आत्मा को ही उत्पन्न करती है। मात्र क्षेत्र के योग के अनुसार उसमें कुछ विशेषता होती है। जिस प्रकार क्षेत्र के भेद होने से वृक्ष में साधारण अन्तर आ जाता है, वैसे ही स्त्रियों के भी प्रसङ्ग में समझना चाहिए॥२॥

दूर में स्थित की काम सम्भावना का कथन

आत्मा सहैति मनसा मन इन्द्रियेण
स्वार्थेन चेन्द्रियमिति क्रम एष शीघ्रः।
योगोऽयमेव मनसः किमगम्यमस्ति
यस्मिन् मनो व्रजति तत्र गतोऽयमात्मा ॥३॥

भाषा—मन के साथ आत्मा, इन्द्रिय के साथ मन और अपने विषयों के साथ इन्द्रिय गमन करती है। ऐसा आत्मा के गमन की शीघ्रता का क्रम और योग अर्थात् सम्बन्ध कहा गया है। मन का कौन-सा अगम्य स्थान होता है अर्थात् कोई नहीं। अतः जहाँ भी मन गमन करता है, वहाँ आत्मा भी चली जाती है॥३॥

दूर स्थित की काम सम्भावना में विशेषता कथन

आत्मायमात्मनि गतो हृदयेऽतिसूक्ष्मो
ग्राह्योऽचलेन मनसा सतताभियोगात्।
यो यं विचिन्तयति याति स तन्मयत्वं
यस्मादतः सुभगमेव गता युवत्यः ॥४॥

माया—इस अति सूक्ष्म जीवात्मा के हृदय मध्य में परमात्मा स्थित होता है। जीव को अपने चित्त की स्थिरता और नियमित अभ्यास के बल से उस परमात्मा का साक्षात्कार करना चाहिए। जो जिसका निरन्तर चिन्तन करता है, वह तन्मय हो जाता है; अतएव स्त्रियाँ भी सुभग पुरुष का ही चिन्तन कर उसे प्राप्त करने में सफल हो जाती हैं॥४॥

सुभग और दुर्भग पुरुष लक्षण कथन

दाक्षिण्यमेकं सुभगत्वहेतुर्विद्वेषणं तद्विपरीतचेष्टा।
मन्त्रौषधाद्यैः कुहकप्रयोगैर्भवन्ति दोषा बहवो न शर्म ॥५॥

माया—स्त्रियों के चित्त के अनुकूल कर्म का साधन करना पुरुष के सुभगत्व का मुख्य आधार होता है तथा उसके चित्त के प्रतिकूल कर्म करने से विद्वेषण उत्पन्न होना पुरुष के दुर्भगत्व का मुख्य आधार होता है। स्त्री को वश में करने के लिए मन्त्र, औषधि, इन्द्रजाल आदि कुहक आदि का प्रयोग दोषों को उत्पन्न करने वाला ही होता है अर्थात् स्त्री को वश में करने के लिए अपनी दाक्षिण्य बुद्धि अर्थात् स्त्री के अनुकूल आचरण करना ही श्रेष्ठ है॥५॥

सुभग पुरुष की प्रशंसा कथन

वाल्लभ्यमायाति विहाय मानं दौर्भाग्यमापादयतेऽभिमानः।
कृच्छ्रेण संसाधयतेऽभिमानी कार्याण्ययत्नेन वदन् प्रियाणि ॥६॥

माया—मान और अपमान की भावना का त्याग कर पुरुष सर्वप्रिय हो जाता है और अहंकारी पुरुष दुर्भगता को प्राप्त करता है तथा वह अत्यन्त कठिनाई से ही अपने कार्यों की सिद्धि भी कर पाता है परन्तु सुभग पुरुष मीठी वाणी के द्वारा अत्यन्त सहजता से अपने कार्यों को सिद्ध कर लेता है॥६॥

सुभग पुरुष की और भी प्रशंसा कथन

तेजो न तद्यत् प्रियसाहसत्वं वाक्यं न चानिष्टमसत्प्रणीतम्।
कार्यस्य गत्वान्तमनुद्धता ये तेजस्विनस्ते न विकत्थना ये ॥७॥

माया—अनियोजित कार्यों का साधन करने में प्रीति करने से तेज अर्थात् शोभा नहीं होती तथा दुष्टजनों के कथित दुर्वचन भी शोभनीय नहीं होता। इस प्रकार वह

मनुष्य, जो कार्य साधन करके भी निरभिमान रहता है, तेजस्वी होता है, आत्म प्रशंसा करने वाला नहीं।।७।।

सबके प्रिय बनने के उपाय कथन

य: सार्वजन्यं सुभगत्वमिच्छेद् गुणान् स सर्वस्य वदेत् परोक्षम् ।
प्राप्नोति दोषानसतोऽप्यनेकान् परस्य यो दोषकथां करोति ।।८।।

माया—सर्वजनों का प्रिय बनने की आकांक्षा रखने वाले पुरुषों को चाहिए कि परोक्ष में वह सब जनों की प्रशंसा मात्र ही करें। लेकिन जो पुरुष अन्य जनों की निन्दा करने में आसक्त रहता है, उसे निष्कारण ही कलङ्क का शिकार भी होना पड़ता है, अर्थात् अकारण दोषी भी सिद्ध कर दिया जाता है।।८।।

उपकारी पुरुष की प्रशंसा कथन

सर्वोपकारानुगतस्य लोक: सर्वोपकारानुगतो नरस्य ।
कृत्वोपकारं द्विषतां विपत्सु या कीर्तिरल्पेन न सा शुभेन ।।९।।

माया—जो पुरुष सब का उपकार करने में तत्पर रहता है, उसका हित सभी जन करते दीखते हैं। शत्रुओं का भी विपत्ति के समय उपकार कर देने से जैसे यश-कीर्ति की प्राप्ति होती है, उसे कम पुण्य का फल नहीं जानना चाहिए।।९।।

दुर्जन पुरुष के हित में उपदेशात्मक कथन

तृणैरिवाग्नि: सुतरां विवृद्धिमाच्छाद्यमानोऽपि गुणोऽभ्युपैति ।
स केवलं दुर्जनभावमेति हन्तुं गुणान् वाञ्छति य: परस्य ।।१०।।

माया—तृणों से आच्छादित अग्नि के समान छिपा दिया गुण भी संवृद्ध हो जाता है। जो पुरुष अन्य पुरुषों के गुणों को नाश करने की चेष्ट करना चाहता है, वह निश्चय ही केवल दुर्जन ही सिद्ध होता है। गुण कथमपि नाश करने से नष्ट नहीं होता है।।१०।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां सौभाग्यकरनिरूपणं नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्याय: ।।७५।।

□□□

अथ षट्सप्ततितमोऽध्यायः-७६

कान्दर्पिकविचारः

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

रक्तेऽधिके स्त्री पुरुषस्तु शुक्रे नपुंसकं शोणितशुक्रसाम्ये।
यस्मादतः शुक्रविवृद्धिदानि निषेवितव्यानि रसायनानि ।।१।।

माया—गर्भधारण के समय रक्त अधिक होने से कन्या और शुक्र अधिक होने से पुत्र तथा दोनों (रक्त व वीर्य) तुल्य होने पर नपुंसक उत्पन्न होते हैं। अत: पुत्र की आकांक्षा करने वालों को अपेक्षानुसार वीर्यवर्द्धक रसायन का सेवन करना चाहिए।।१।।

कामबन्धन के लिए रस्सियों का कथन

हर्म्यपृष्ठमुडुनाथरश्मयः सोत्पलं मधु मदालसा प्रिया।
वल्लकी स्मरकथा रहः स्रजो वर्ग एष मदनस्य वागुरा ।।२।।

माया—प्रासादपृष्ठ, चन्द्र रश्मियाँ, नीलोत्पल, मद्य, मदालका प्रिया, वीणा, काम रस युक्त कथा, एकान्त या निर्जन स्थल, माला आदि सभी काम देव की बन्धन रज्जु हैं या कामदेव को बाँधने की रस्सियाँ हैं अथवा कामदेव को जागृत करने के उत्तम साधन हैं।।२।।

शुक्रवर्द्धन योग का कथन

माक्षीकधातुमधुपारदलोहचूर्ण-
पथ्याशिलाजतुघृतानि समानि योऽद्यात्।
सैकानि विंशतिरहानि जरान्वितोऽपि
सोऽशीतिकोऽपि रमयत्यबलां युवेव ।।३।।

माया—सोनामक्खी, शहद, पारा, लौहचूर्ण, हर्र, शिलाजीत, वायविडङ्ग और घृत; इनके तुल्य अंश लेकर चूर्ण बनाकर शहद अथवा घृत के साथ इक्कीस दिन पर्यन्त खा लेने से अस्सी वर्ष का वृद्ध पुरुष भी (युवा) के समान पत्नि रमण करने में सक्षम होता है।।३।।

शुक्र वर्द्धन योग का और भी कथन

क्षीरं शृतं यः कपिकच्छुमूलैः पिबेत् क्षयं स्त्रीषु न सोऽभ्युपैति।
माषान् पयःसर्पिषि वा विपक्वान् षड्ग्रासमात्रांश्च पयोऽनुपानम् ।।४।।

माया—कपिकच्छु अथवा आत्मगुप्ता के जड़ को दूध के साथ उबाल-औंट कर उस क्वाथ रूप दूध को पीने वाला पुरुष स्त्री-सम्भोग करने में शक्तिक्षीणता का अनुभव नहीं करता। उस दूध के निकले घृत में उड़द को पकाकर उसका छः ग्रास खाने के बाद दूध पीने से स्त्री संग करने में शक्ति क्षीणता का अनुभव नहीं होता॥४॥

वहुस्त्री संग शुक्रवर्द्धक योग कथन

विदारिकायाः स्वरसेन चूर्णं मुहुर्मुहुर्भावितशोषितं च।
शृतेन दुग्धेन सशर्करेण पिवेत् स यस्य प्रमदाः प्रभूताः ॥५॥

माया—जिनके पास बहुत-सी स्त्रियाँ होती हैं, उन पुरुषों को बिदारी कन्द के चूर्ण में बिदारीकन्द के रस की बार-बार भावना देकर सुखाना चाहिए, फिर उस चूर्ण को खाकर उबाले दूध के साथ मिश्री मिलाकर पीने से अपार शक्ति का अनुभव होता है॥५॥

वहुस्त्री संग योग्य शुक्र वर्द्धक और योग कथन

धात्रीफलानां स्वरसेन चूर्णं
सुभावितं क्षौद्रसिताज्ययुक्तम्।
लीढ्वानु पीत्वा च पयोऽग्निशक्त्या
कामं निकामं पुरुषो निषेवेत् ॥६॥

माया—धात्रीफल के चूर्ण को उसी के रस से बारम्बार भावना देते हुए सूखाना चाहिए। इसके बाद उस धात्री चूर्ण में मधु अथवा मिश्री मिलाकर चाटने और यथा शक्ति उपलबध दूध पीने से पुरुष में स्त्री संग करने की अत्यधिक शक्ति आ जाती है॥६॥

बहुस्त्री संग योग्य शुक्रवर्द्धक और भी योग कथन

क्षीरेण बस्ताण्डयुजा शृतेन
सम्प्लाव्य कामी बहुशस्तिलान् यः।
सुशोषितानत्ति पयः पिबेच्च
तस्याग्रतः किं चटकः करोति ॥७॥

माया—छाग के अण्ड को दूध में डालकर औंटाना चाहिए, फिर उस दूध से तिलों में भावना देकर सुखाना चाहिए। तत्पश्चात् उन्हें खाकर बाद में दूध पीने वाले के सामने चटक पुरुष भी क्या कर सकता है? अर्थात् पुरुष अत्यधिक कामशक्ति सम्पन्न हो जाता है॥७॥

कामदेव संग शयन सुख प्राप्ति कथन

माषसूपसहितेन सर्पिषा षष्टिकौदनमदन्ति ये नराः ।
क्षीरमप्यनु पिबन्ति तासु ते शर्वरीषु मदनेन शेरते ।।८।।

माया—जिन रात्रियों में घृत से युक्त उड़द की दाल के साथ साठी के चावलों को उबाल कर खाने के बाद दूध-पीने वाला पुरुष उन रातों में साक्षात् कामदेव के साथ शयन सुख प्राप्त करता है।।८।।

अति शुक्रकारक योग कथन

तिलाश्वगन्धाकपिकच्छुमूलैर्विदारिकाषष्टिकपिष्टयोगः ।
आजेन पिष्टः पयसा घृतेन पक्वं भवेच्छष्कुलिकातिवृष्या ।।९।।

माया—तिल, असगन्ध, कपिकच्छु (कवाछु) मूल और बिदारी कन्द; इनको तुल्य मात्रा में लेकर चूर्ण बनाकर, उतने मात्रा में साठी के चावलों का आटा उसमें मिलाकर , फिर उसमें बकरी का दूध डाल गिलाकर उस गिले मिश्रण का बकरी दूध के घृत में पूड़ी पकाकर खाने से वह अत्यधिक शुक्रकारक होता है।।९।।

शक्तिक्षीणता दूर करने के उपाय कथन

क्षीरेण वा गोक्षुरकोपयोगं विदारिकाकन्दकभक्षणं वा ।
कुर्वन्न सीदेद् यदि जीर्यतेऽस्य मन्दाग्निता चेदिदमत्र चूर्णम् ।।१०।।

माया—गोक्षुरक अर्थात् गोखरू या विदारी कन्द का चूर्ण खाने के पश्चात् दूध पीने से स्त्री-सम्भोग में हीनता की अनुभूति नहीं होती है। वैसे इस चूर्ण का सेवन तभी करना चाहिए जब वह सरलता से पच जाय, अन्यथा मन्दाग्नि के कारण नहीं पचने पर आगे बताए हुए चूर्ण का पहले सेवन कर लेना चाहिए।।१०।।

जठराग्नि का उद्दीप्त करने के उपाय कथन

साजमोदलवणा हरीतकी शृङ्गवेरसहिता च पिप्पली ।
मद्यतक्रतरलोष्णवारिभिश्चूर्णपानमुदराग्निदीपनम् ।।११।।

माया—अजवाईन, नमक, हर्रे, सोंठ, पीपल आदि का समान भाग मिलाकर चूर्ण बनाना चाहिए, फिर उस चूर्ण को मद्य, तक्र, कांजी या उष्ण जल के साथ सेवन करने से जठराग्नि उद्दीप्त हो जाती है।।११।।

शुक्रक्षय योग का कथन

अत्यम्लतिक्तलवणानि कटूनि वाऽत्ति
यः क्षारशाकबहुलानि च भोजनानि ।

दृक्शुक्रवीर्यरहित: स करोत्यनेकान्
व्याजान् जरन्निव युवाऽप्यबलामवाप्य ।।१२।।

माया—जो पुरुष अत्यधिक खट्टा अत्यधिक तीता, अत्यधिक नमकीन, अत्यधिक कड़ुआ, अत्यधिक क्षार (खारा) अथवा अत्यधिक शाक (साग युक्त आहार (भोजन) करने वाला होता है, वह पुरुष यदि युवा भी हो, तो उसकी दृष्टि, वीर्य, बल आदि की हानि होती है और वह पुरुष वृद्ध के समान स्त्री प्रसङ्ग काल में अनेक प्रकार से अन्यान्य बहाने बनाने वाला हो जाता है।।१२।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां वृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां कान्दर्पिकविचारो नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः।।७६।।

□□□

अथ सप्तसप्ततितमोऽध्यायः-७७

गन्धयुक्ति विचारः

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

स्रग्गन्धधूपाम्बरभूषणाद्यं न शोभते शुक्लशिरोरुहस्य।
यस्मादतो मूर्धजरागसेवां कुर्याद् यथैवाञ्जनभूषणानाम् ॥१॥

माया—जिन पुरुषों के शिर के बाल श्वेत, शुक्ल या सफेद हों, उन्हें माला, गन्ध अर्थात् अतर, सेन्ट आदि, धूप, वस्त्र, आभूषण आदि शोभा नहीं देता है। अतः ऐसे पुरुषों को नेत्राञ्जन, आभूषण धारण आदि की तरह प्रयत्न पूर्वक अपने शिर के बालों को भी काला करना चाहिए॥१॥

बाल काला करने का प्रयोग कथन

लौहे पात्रे तण्डुलान् कोद्रवाणां
शुक्ले पक्वांल्लोहचूर्णेन साकम्।
पिष्टान् सूक्ष्मं मूर्ध्नि शुक्लाम्लकेशे
दत्वा तिष्ठेद् वेष्टयित्वार्द्रपत्रैः ॥२॥
याते द्वितीये प्रहरे विहाय
दद्याच्छिरस्यामलकप्रलेपम्।
सञ्छाद्य पत्रैः प्रहरद्वयेन
प्रक्षालितं कार्ष्ण्यमुपैति शीर्षम् ॥३॥

माया—लोहे के पात्र में सिरका लेकर उसमें कोदो चावल को उबालना चाहिए। तत्पश्चात् उसमें लौह चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह उसे पीसा जाना चाहिए। फिर शिर के बालों को सिरका से खट्टा कर उसमें पीसे हुए लौहचूर्ण युक्त चावल से लेप करने के बाद हर्रे के पत्तों से शिर को ढ़क कर दो प्रहर काल तक सूखने देना चाहिए, फिर लेपित शिर को धोकर उस पर आँवला (धात्रीफल) का भी लेपन कर पुनः हर्रे पत्तों से ढ़ककर सूखने दे और उसे भी मध्याह्न के समय धो देने पर केश काले हो जाते हैं॥२-३॥

तत्पश्चात् स्नान आदि कर्त्तव्य कथन

पश्चाच्छिरःस्नानसुगन्धतैलैर्लोहाम्लगन्धं शिरसोऽपनीय।
हृद्यैश्च गन्धैर्विविधैश्च धूपैरन्तःपुरे राज्यसुखं निषेवेत् ॥४॥

माया—शिर के बालों का काला हो जाने के पश्चात् शिर से विधिवद् स्नान कर

सुगन्धित तेलों से लौहचूर्ण और सिरके के दुर्गन्ध को दूर करने का प्रयत्न करते हुए सुगन्ध युक्त द्रव्य और धूपों को लगा कर राजा को अपने अन्तः पुर में जाकर राज्यसुख का सेवन करना चाहिए।।४।।

शिरः स्नान की विधि का कथन

त्वक्कुष्ठरेणुनलिकास्पृक्कारसतगरबालकैस्तुल्यैः ।
केसरपत्रविमिश्रैर्नरपतियोग्यं शिरःस्नानम् ।।५।।

भाषा—दालचीनी, कूठ, रेणुका, नलिका, स्पृक्का, बोल, तगर, नेत्रवाला, नागकेसर, गन्धपत्र आदि को समान मात्रा में लेकर पीसना चाहिए। तत्पश्चात् उसे शिर में लेपन कर स्नान करना चाहिए, इस प्रकार से राजा के अनुकूल शिरःस्नान होता है।।५।।

सुगन्धित तेल निर्माण की विधि का कथन

मञ्जिष्ठया व्याघ्रनखेन शुक्त्या त्वचा सकुष्ठेन रसेन चूर्णः ।
तैलेन युक्तोऽर्कमयूखतप्तः करोति तच्चम्पकगन्धि तैलम् ।।६।।

भाषा—मंजीठ, व्याघ्रनख, शुक्ति, दालचीनी, कूठ, बोल आदि सभी समान मात्रा में लेकर चूर्ण बनाना चाहिए, तत्पश्चात् उस चूर्ण को तिल के तेल में मिलाकर धूप में तपाने से उस तेल में चम्पा पुष्प के तेल की-सी सुगन्ध आने लगती है।।६।।

गन्धचतुष्टय निर्माण करने की विधि का कथन

तुल्यैः पत्रतुरुष्कबालतगरैर्गन्धः स्मरोद्दीपनः
सव्यामो बकुलोऽयमेव कटुकाहिङ्गुप्रधूपान्वितः ।
कुष्ठेनोत्पलगन्धिकः समलयः पूर्वो भवेच्चम्पको
जातीत्वक्सहितोऽतिमुक्तक इति ज्ञेयः सकुस्तुम्बुरुः ।।७।।

भाषा—गन्धपत्र, सिहलक, नेत्रवाला, तगर आदि को समान रूप में लेकर मिलाने से कामदेव को भी उद्दीप्त करने वाला सुगन्ध बन जाता है। इस सुगन्धित द्रव्य में व्यामक अर्थात् गन्धद्रव्य विशेष मिला कर और फिर उसमें कटुका अर्थात् गुग्गुल और हिङ्गु का धूप देना चाहिए, इस प्रकार वह मौलसरी पुष्प जैसी सुगन्धित द्रव्य तैयार हो जाता है। उसमें कूठ मिलाने से नीलकमल, सफेद, चन्दन मिश्रित करने से चम्पा पुष्प तथा जायफल, दालचीनी और धनियाँ का मिश्रण मिलाने से अतिमुक्तक पुष्प आदि की तरह सुगन्ध द्रव्य हो जाता है।।७।।

गन्ध द्रव्य बनाने की अन्य विधि का कथन

शतपुष्पाकुन्दुरुकौ पादेनार्धेन नखतुरुष्कौ च ।
मलयप्रियङ्गुभागौ गन्धो धूप्यो गुडनखेन ।।८।।

माया—सौंफ और कुन्दरक (देवदारु वृक्ष का निर्यास) का एक चतुर्थांश, नख (शंख से प्राप्त चर्म) और सिहलक का दो चतुर्थांश, श्वेत चन्दन और प्रियङ्गु का एक चतुर्थांश आदि सभी को उनकी मात्राओं में लेकर और मिलाकर गन्ध द्रव्य बनाना चाहिए, उस पर गुण्ड और नख का धूप देना चाहिए।।८।।

धूप निर्माण करने की विधि का कथन

गुग्गुलुबालकलाक्षामुस्तानखशर्कराः क्रमाद् धूपः ।
अन्यो मांसीबालकतुरुष्कनखचन्दनैः पिण्डः ।।९।।

माया—गुग्गुल, नेत्रवाला, लाख, मोथा, नख और खाँड़ की समान मात्रा के मिश्रण से धूप बनाना चाहिए तथा बालछड़, नेत्रवाला, सिह्लक, नख और चन्दन की भी समान मात्रा से अलग दूसरा धूप बनाना चाहिए।।९।।

धून निर्माण करने की और भी विधि कथन

हरीतकीशङ्खघनद्रवाम्बुभिर्गुडोत्पलैः शैलकमुस्तकान्वितैः ।
नवान्तपादादिविवर्धितैः क्रमाद् भवन्ति धूपा बहवो मनोहराः ।।१०।।

माया—हर्रे, शंख, नख, द्रव (बोल), नेत्रवाला, गुड़, कूठ, शैलक, मोथा आदि नौ पदार्थों को क्रमशः एक से नौ पाद तक लेकर धूप बनाना चाहिए, यहाँ कहने का अभिप्राय यह है कि हर्रे एक पाद, शंख दो पाद, नख तीन पाद, बोल चार पाद, नेत्रवाला पाँच पाद, गुड़ छः पाद, कूठ सात पाद, शैलक आठ पाद और मोथा नौ पाद लेकर एक प्रकार का धूप हुआ। इसी में गुड़, कूठ, शैलक और मोथा इस चारों में क्रम से एक पाद से चार पाद पर्यन्त लेने दूसरा प्रकार का धूप बनता है। शैलक और मोथा को क्रमशः एक से दो पाद पर्यन्त लेने से तीसरा प्रकार का धूप बन जाता है। हर्रे एक पाद में शंख पाद मिलाने से चौथा धूप और इसमें नख का तीन पाद मिला देने पर पाँचवाँ धूप बन जाता है। इस प्रकार अनेक प्रकार का सुगन्धित मनोहर धूप बनाना चाहिए।।१०।।

कोपच्छ धूप निर्माण विधि कथन

भागैश्चतुर्भिः सितशैलमुस्ताः श्रीसर्जभागौ नखगुग्गुलू च ।
कर्पूरबोधो मधुपिण्डितोऽयं कोपच्छदो नाम नरेन्द्रधूपः ।।११।।

माया—खाँड़, शैलय और मोथा; इनका चार भाग; श्रीवास, सर्प (राल) आदि का दो भाग तथा नख और गुग्गुल का दो भाग आदि सभी को मिला कर और पीसकर कर्पूर का बोध अर्थात् कर्पूर चूर्ण का सुगन्ध देना चाहिए। तत्पश्चात् उसका मधु के सहयोग से गोला या पिण्ड बनाकर रख लेना चाहिए। यह कोपच्छद नाम का धूप, राजाजनों के प्रिय सुगन्ध द्रव्य है।।११।।

पुटवास (वस्त्र-सुगन्ध) धूप बनाने की विधि कथन

त्वगुशीरपत्रभागैः सूक्ष्मैलार्धेन संयुतैश्चूर्णः ।
पुटवासः प्रवरोऽयं मृगकर्पूरप्रबोधेन ।।१२।।

माया—दालचीनी, खस, गन्धपत्र आदि के तीन भाग और प्रत्येक के आधा के हिसाब से छोटी इलायची डेढ़ भाग मिला कर और चूर्ण बनाकर कस्तूरी या कर्पूर से उसे बोध करना चाहिए। इस प्रकार वस्त्र सुगन्धित करने योग्य उत्तम पुटवास चूर्ण बनता है।।१२।।

गन्धार्णव निर्माण की विधि का कथन

घनबालकशैलेयककर्पूरोशीरनागपुष्पाणि ।
व्याघ्रनखस्पृक्कागुरुदमनकनखतगरधान्यानि ।।१३।।
कर्पूरचोलमलयैः स्वेच्छापरिवर्तितैश्चतुर्भिरतः ।
एकद्वित्रिचतुर्भिर्भागैर्गन्धार्णवो भवति ।।१४।।

माया—मोथा, नेत्रवाला, शैलेयक, कचूर, खस, नागकेसर का पुष्प, व्याघ्रनख, स्पृक्का, अगरु, दमनक, नख, तगर, धनियाँ, कर्पूर, चोरक, श्वेत चन्दन आदि १६ गन्ध द्रव्य हैं, इन गन्ध द्रव्यों में से इच्छा या अपेक्षा के अनुसार किन्हीं चार गन्ध द्रव्यों को लेकर क्रम से उनके एक,. दो तीन और चार भाग अदल-बदल कर चूर्ण बनाने से गन्धार्णव संज्ञक छियानवे प्रकार के सुगन्ध द्रव्य निर्मित होते हैं।।१३-१४।।

गन्धार्णव में विशेष कथन

अत्युल्बणगन्धत्वादेकांशो नित्यमेव धान्यानाम् ।
कर्पूरस्य तदूनो नैतौ द्वित्र्यादिभिर्देयौ ।।१५।।

माया—धनियाँ और कर्पूर अत्यन्त उत्कट गन्ध वाले पदार्थ हैं, अतः इनके प्रयोग में ध्यान देना चाहिए कि धनियाँ का एक भाग और कर्पूर का एक भाग से भी कम भाग गन्ध द्रव्य निर्माण के निमित्त उपयोग किया जाय, इन दोनों का दो या तीन भाग कथमपि भी प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसका कारण यह है कि इन दोनों गन्ध द्रव्यों में उत्कट गन्ध होने से वे दूसरे-दूसरे द्रव्यों के गन्ध का पूर्णतया नाश कर देते हैं।।१५।।

उपरोक्त धूपों का बोधन रीति कथन

श्रीसर्जगुडनखैस्ते धूपयितव्याः क्रमान्न पिण्डस्थैः ।
बोधः कस्तूरिकया देयः कर्पूरसंयुतया ।।१६।।

माया—उपरोक्त समस्त गन्ध द्रव्यों को श्रीवास, राल, गुड़, नख आदि चारों द्रव्यों का अलग-अलग धूप देना चाहिए, एक साथ कथमपि नहीं देना चाहिए। तत्पश्चात् कर्पूर और कस्तूरी का बोध देना उचित है।।१६।।

उपरोक्त गन्ध द्रव्यों की संख्या कथन

अत्र सहस्रचतुष्टयमन्यानि च सप्ततिसहस्राणि।
लक्षं शतानि सप्त विंशतियुक्तानि गन्धानाम् ॥१७॥

माया—इस प्रकार उपरोक्त गन्ध द्रव्यों के भेद से एक लाख चौहत्तर हजार सात सौ बीस प्रकार के गन्ध निर्मित होते हैं॥१७॥

प्रत्येक द्रव्य से छः गन्ध द्रव्य कथन

एकैकमेकभागं द्वित्रिचतुर्भागिकैर्युतं द्रव्यैः।
षड्गन्धकरं तद्वद्द्वित्रिचतुर्भागिकं कुरुते ॥१८॥

माया—प्रत्येक गन्ध द्रव्य का एक-एक भाग और अन्य द्रव्यों के दो, तीन और चार भाग लेने पर छः प्रकार के गन्ध होते हैं। इसी तरह उस द्रव्य के क्रम से दो, तीन और चार भाग के साथ अन्य द्रव्यों के आरम्भ के दो भाग मिलाने से छः गन्ध होते हैं॥१८॥

समस्त गन्ध द्रव्यों की संख्या कथन

द्रव्यचतुष्टययोगाद् गन्धचतुर्विंशतिर्यथैकस्य।
एवं शेषाणामपि षण्णवतिः सर्वपिण्डोऽत्र ॥१९॥

माया—इस प्रकार प्रत्येक द्रव्य के योग से छः प्रकार, चार द्रव्यों के योग से चौबीस प्रकार तथा शेष अन्य तीन स्थलों में स्थित चार-चार के बहत्तर प्रकार, कुल मिलाकर छियानवे प्रकार हो जाते हैं॥१९॥

चार विकल्प से विविध मानों का संख्या कथन

षोडशके द्रव्यगणे चतुर्विकल्पेन भिद्यमानानाम्।
अष्टादश जायन्ते शतानि सहितानि विंशत्या ॥२०॥

माया—उपरोक्त जो १६ प्रकार के गन्ध द्रव्य हैं, उनके चार-चार द्रव्यों के विकल्प से १८२० प्रकार के गन्ध सिद्ध हो जाते हैं॥२०॥

समस्त गन्धों की संख्या प्रमाण कथन

षण्णवतिभेदभिन्नश्चतुर्विकल्पो गणो यतस्तस्मात्।
षण्णवतिगुणः कार्यः सा सङ्ख्या भवति गन्धानाम् ॥२१॥

माया—उपरोक्त चार द्रव्य के गन्ध से छियानवें प्रकार के गन्ध होते हैं, तथा चार-चार द्रव्यों को मिलाने से एक हजार आठ सौ बीस प्रकार भी कहे गये हैं। इन दोनों संख्याओं ९६ × १८२० का गुणनफल १७४७२० उपरोक्त गन्धों की संख्या सिद्ध हो जाती है॥२१॥

गन्ध प्रकार संख्या ज्ञानार्थ लोष्टक प्रस्तार कथन

पूर्वेण पूर्वेण गतेन युक्तं स्थानं विनान्त्यं प्रवदन्ति सङ्ख्याम् ।
इच्छाविकल्पैः क्रमशोऽभिनीय नीते निवृत्तिः पुनरन्यनीतिः ॥२२॥

माया—गन्धों के प्रकार ज्ञान के लिए गणित प्रकार और प्रस्तार को इस प्रकार प्रदर्शित किया जा रहा है—एक से अधिक जितने द्रव्य हों, उतनी संख्या तक नीचे से लेकर ऊपर को गई हुई पंक्ति में अङ्कों को लिखा जाना चाहिए। वहाँ पर पूर्व-पूर्व गताङ्क में ऊपर के अङ्कों का योग करते जाना चाहिए। यहाँ अन्तिम स्थान को छोड़कर संख्या होती है। इस प्रकार अभीष्ट विकल्पों से चरलोष्टक को अन्यत्र ले जाकर उसको वहीं पर छोड़कर पुनः अन्य चरलोष्टक को भी अन्यत्र ले जाना चाहिए।।२२।।

अन्यान्य गन्ध योगों का कथन

द्वित्रीन्द्रियाष्टभागैरगुरुः पत्रं तुरुष्कशैलेयौ ।
विषयाष्टपक्षदहनाः प्रियङ्गुमुस्तारसाः केशः ॥२३॥
स्पृक्कात्वक्तगराणां मांस्याश्च कृतैकसप्तषड्भागाः ।
सप्तर्तुवेदचन्द्रैर्मलयनखश्रीककुन्दुरुकाः ॥२४॥

माया—षोडश कोष्ठ का पुनः एक चक्र निर्मित कर उस कोष्ठ के प्रथम पंक्ति में अगर, गन्धपत्र, तुरुष्क (सिहलक), शैलेय आदि चारों का क्रम से दो भाग, तीन भाग, पाँच भाग और आठ भाग; दूसरी पंक्ति में प्रियंगु , मोथा (मुस्ता) बोल, शालीजातक (हीवेर) आदि चारों का क्रम से पाँच भाग, दो भाग, आठ भाग, और तीन भाग; तीसरी पक्ति में स्पृक्का, त्वक्, तगर और मांसी, इन चारों का क्रम से चार भाग, एक भाग, सात भाग और छः भाग तथा चौथे पंक्ति में चन्दन, नख, श्रीवास और कुन्दरु; इन चारों का क्रम से सात भाग, छः भाग, चार भाग और एक भाग प्रदर्शित करना चाहिए।।२३-२४।।

अन्यान्य गन्ध योग स्पष्टार्थ चक्र

अ २	ग ३	सि ५	श ८
प्रि ५	मु ८	बो २	शा ३
स्पृ ४	ख १	त ६	मां ६
च ७	न ६	श्री ४	कु १

उपरोक्त गन्ध द्रव्यों के योग का चक्र न्यास प्रयोजनार्थ कथन

षोडशके कच्छपुटे यथा तथा मिश्रिते चतुर्द्रव्ये।
येऽत्राष्टादश भागास्तेऽस्मिन् गन्धादयो योगाः ।।२५।।
नखतगरतुरुष्कयुता जातीकर्पूरमृगकृतोद्बोधाः।
गुडनखधूप्या गन्धाः कर्तव्याः सर्वतोभद्राः ।।२६।।

माया—सोलह द्रव्यों के कच्छपुट में जिन-जिन चार द्रव्यों के भागों का योग अठारह होता है, उन-उन चार द्रव्यों के उतने -उतने भाग लेकर अनेक प्रकार का गन्ध योग बनते हैं। फिर उन गन्धों को नख, तगर, सिह्लक का समान भाग लेकर मिलाना चाहिए, फिर जातीफल (जायफल), कर्पूर, कस्तूरी आदि से उनका बोधन करना चाहिए तथा गुड़, नख आदि से धूप देना चाहिए। कच्छपुट में प्रत्येक दिशा से जोड़ने पर योग अठारह ही होते हैं। अतएव इन गन्धों को सर्वतोभद्र कहा जाता है।।२५-२६।।

मुखवास पारिजात निर्माण का विधि कथन

जातीफलमृगकर्पूरबोधितैः ससहकारमधुसिक्तैः।
बहवोऽत्र पारिजाताश्चतुर्भिरिच्छापरिगृहीतैः ।।२७।।

माया—उपरोक्त कोष्ठ के कच्छपुट से अपनी इच्छा से जो कोई चार द्रव्य लेकर जायफल, कस्तूरी और कर्पूर से सुवासित कर और आम्ररस से युक्त मधु से सिक्त करने से पारिजात पुष्प के समान गन्ध वाले अनेक प्रकार से मुखवास तैयार हो जाते हैं।।२७।।

स्नानार्थ चूर्ण निर्माण रीति कथन

सर्जरसश्रीवासकसमन्विता येऽत्र सर्वधूपास्तैः।
श्रीसर्जरसवियुक्तैः स्नानानि सबालकत्वग्भिः ।।२८।।

माया—उपरोक्त कच्छपुट में जितने प्रकार के गन्ध सर्जरस (राल) और श्रीवास से संयुक्त बताये गए हैं, उनमें श्रीवास और सर्जरस को न मिला कर नेत्रवला, और दालचीनी मिला देने से बहुत प्रकार के स्नानार्थ चूर्ण तैयार हो जाते हैं।।२८।।

केसर गन्ध के ८४ प्रकार निर्माण विधि कथन

रोध्रोशीरनतागुरुमुस्तापत्रप्रियङ्गुवनपथ्याः।
नवकोष्ठात् कच्छपुटाद् द्रव्यत्रितयं समुद्धृत्य ।।२९।।
चन्दनतुरुष्कभागौ शुक्त्यर्धं पादिका तु शतपुष्पा।
कटुहिङ्गुलगुडधूप्याः केसरगन्धाश्चतुरशीतिः ।।३०।।

माया—लोध, खस, तगर, अगरु, मोथा, गन्धपत्र, प्रियंगु, वन (पेरिपेलव),

हरीतकी आदि नौ द्रव्यों से उपरोक्त विधि के अनुसार बनाया गया नवकोष्ठ के कच्छपुट से क्रम से तीन-तीन द्रव्य से गन्ध बनाने हेतु उनमें एक भाग चन्दन, एक भाग सिह्लक, आधा भाग शुक्ति और एक भाग का चतुर्थांश सौंफ मिलाकर कटुका, गुग्गुल व गुड का धूप देना चाहिए। इस प्रकार बकुल पुष्प के सदृश गन्ध युक्त चौरासी ८४ गन्ध द्रव्य तैयार होते हैं।।२९-३०।।

दन्तकाष्ठ निर्माण विधान कथन

सप्ताहं गोमूत्रे हरीतकीचूर्णसंयुते क्षिप्त्वा ।
गन्धोदके च भूयो विनिक्षिपेद् दन्तकाष्ठानि ।।३१।।
एलात्वक्पत्राञ्जनमधुमरिचैर्नागपुष्पकुष्ठैश्च ।
गन्धाम्भः कर्तव्यं कश्चित् कालं स्थितान्यस्मिन् ।।३२।।
जातीफलपत्रैलाकर्पूरैः कृतयमैकशिखिभागैः ।
अवचूर्णितानि भानोर्मरीचिभिः शोषणीयानि ।।३३।।

माया—हरीतकी (हरड़े) के चूर्ण युक्त गोमूत्र में सात दिन पर्यन्त दन्तकाष्ठ (दातुन) को भिगो देना चाहिए। तत्पश्चात् उसमें से निकाल कर उस दातुन को वक्ष्यमाण गन्धोदक में डालना चाहिए। गन्धोदक निर्माण करने के लिए इलायची, दालचीनी, गन्धपत्र, सौवीर, मधु, कालीमिर्च, नागकेसर, कूठ आदि सभी को समान रूप में जल में डालकर गन्धोदक बनाना चाहिए, उसमें उस दातुन को कुछ समय तक भिंगने दें। फिर चार भाग जायफल, दो भाग गन्धपत्र, एक भाग इलायची और तीन भाग कर्पूर को एक जगह मिलाकर महीन चूर्ण बनाकर, उस चूर्ण में दातुनों से मसल-मसल कर फिर उन्हें धूप में सूखाकर रखना चाहिए।।३१-३३।।

उपरोक्त दातुन के सेवन की विशेषता कथन

वर्णप्रसादं वदनस्य कान्तिं वैशद्यमास्यस्य सुगन्धितां च ।
संसेवितुः श्रोत्रसुखां च वाचं कुर्वन्ति काष्ठान्यसकृद्भवानाम् ।।३४।।

माया—उपरोक्त विधि से सिद्ध दातुनों या दन्त काष्ठों के सेवन करने पर मनुष्य के शारीरिक वर्ण उत्तम, उसकी मुख की कान्ति भी उत्तम, उसका मुख भीतर से निर्मल और सुगन्ध युक्त होता है तथा ऐसे मनुष्य की वाणी में भी मधुरता आ जाती है। जिस वाणी के सूनने पर सुख की अनुभूति ही होती है।।३४।।

ताम्बूल की विशेषताओं का कथन

कामं प्रदीपयति रूपमभिव्यनक्ति
सौभाग्यमावहति वक्त्रसुगन्धितां च ।
ऊर्जं करोति कफजांश्च निहन्ति रोगां-
स्ताम्बूलमेवमपरांश्च गुणान् करोति ।।३५।।

माया—ताम्बूल (पान) काम भावना को उद्दीप्त करने वाला, शारीरिक सौन्दर्य में श्रीवृद्धि करने वाला, सौभाग्यवान् बनाने वाला, मुख को भी सुगन्धियुक्त करने वाला, बलवृद्धि करने वाला, कफोत्पन्न रोगों का नाशक तथा अन्यान्य और भी बहुत गुणों वाला होता है॥३५॥

ताम्बूल में चूना, सुपारी आदि की मात्रा कथन

युक्तेन चूर्णेन करोति रागं रागक्षयं पूगफलातिरिक्तम्।
चूर्णाधिकं वक्त्रविगन्धकारि पत्राधिकं साधु करोति गन्धम्॥३६॥

माया—ताम्बूल के अन्दर चूना की मात्रा संतुलित अर्थात् न कम, न अधिक होनी चाहिए। ऐसा पान राग उत्पन्न करने वाला होता है। लेकिन ताम्बूल में अधिक सुपारी के होने से राग की हानि होती है। अधिक चूना युक्त ताम्बूल मुख को दुगन्धि युक्त करने वाला होता है। लेकिन पान के पत्ते अधिक होने पर मुख को सुगन्धियुक्त करने वाला होता है॥३६॥

दिन रात्रि भेद से ताम्बुल भक्षण में विशेषता कथन

पत्राधिकं निशि हितं सफलं दिवा च
प्रोक्तान्यथाकरणमस्य विडम्बनैव।
कक्कोलपूगलवलीफलपारिजातै-
रामोदितं मदमुदा मुदितं करोति॥३७॥

माया—रात्रि के समय ताम्बूल में पत्ता और दिन के समय सुपारी अधिक डालकर भक्षण करना उत्तम है। इसके विपरीत ताम्बूल भक्षण से पुरुष उपहास के पात्र मात्र होता है। कक्कोल, सुपारी, लवलीफल अर्थात् लौंग, जातीफल अर्थात् जायफल से सम्पन्न ताम्बुल भक्षण करने से पुरुष को मदयुक्त करता हुआ हर्षित करता है॥३७॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां गन्धयुक्तिविचारो नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः॥७७॥

□□□

अथाष्टसप्ततितमोऽध्यायः-७८

स्त्रीपुँससमायोगविचारः

सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

शस्त्रेण वेणीविनिगूहितेन विदूरथं स्वा महिषी जघान।
विषप्रदिग्धेन च नूपुरेण देवी विरक्ता किल काशिराजम् ।।१।।
एवं विरक्ता जनयन्ति दोषान् प्राणच्छिदोऽन्यैरनुकीर्तितैः किम्।
रक्ताविरक्ताः पुरुषैरतोऽर्थात् परीक्षितव्याः प्रमदाः प्रयत्नात् ।।२।।

माया—विदूरथ नाम के राजा की अपनी धर्मपत्नि ने वेणी में छिपाकर रखे गए शस्त्र से अपने पतिदेव विदूरथ को ही तथा काशीराज की विरक्त अपनी धर्म पत्नि ने विष से प्रदग्ध अपने नूपुर से अपने पतिदेव काशीराज को ही यमलोक पहुँचाया।

इस प्रकार विरक्ता स्त्रियों के द्वारा प्राणान्त करने वाले अनेक प्रकार के दोषों को व्यक्त किया जाता है, उनके अन्य दोषों को यहाँ व्यक्त करने की आवश्यकता ही क्या? अतएव पुरुषों के द्वारा प्रयत्नपूर्वक अनुरक्ता अथवा विरक्ता स्त्रियों का परीक्षण किया जाना चाहिए।।१-२।।

अनुरक्ता स्त्रियों के लक्षणों का कथन

स्नेहं मनोभवकृतं कथयन्ति भावा
नाभीभुजस्तनविभूषणदर्शनानि ।
वस्त्राभिसंयमनकेशविमोक्षणानि
भ्रूक्षेपकम्पितकटाक्षनिरीक्षणानि ।।३।।

माया—अनुरक्ता स्त्रियाँ अपने प्रत्येक मनोभावों अर्थात् अङ्गों का कम्पित होना, मुख का सूखना या पीला हो जाना आदि-आदि द्वारा कामदेव प्रेरित प्रेम को अभिव्यक्त करती हैं। उनके द्वारा अपनी नाभि, भुज, स्तन, आभूषण आदि को प्रदर्शित किया जाना तथा वस्त्र पहिरना, बालों को सँवारना व उन्हें खोल देना, अपने भ्रू ढेढ़ी कर कम्पन युक्त कटाक्ष से पुरुष की ओर देखना आदि सभी लक्षण अनुरक्ता स्त्रियाँ स्वाभाविक रूप से प्रदर्शित करती हैं।।३।।

अनुरक्ता स्त्रियों की और अन्य चेष्टाओं का कथन

उच्चैः ष्ठीवनमुत्कटप्रहसितं शय्यासनोत्सर्पणं
गात्रास्फोटनजृम्भणानि सुलभद्रव्याल्पसम्प्रार्थना।
बालालिङ्गनचुम्बनान्यभिमुखे सख्याः समालोकनं
दृक्पातश्च पराङ्मुखे गुणकथा कर्णस्य कण्डूयनम् ।।४।।

इमां च विन्द्यादनुरक्तचेष्टां प्रियाणि वक्ति स्वधनं ददाति।
विलोक्य संहृष्यति वीतरोषा प्रमार्ष्टि दोषान् गुणकीर्तनेन ।।५।।
तन्मित्रपूजा तदरिद्विषत्वं कृतस्मृतिः प्रोषितदौर्मनस्यम्।
स्तनौष्ठदानान्युपगूहनं च स्वेदोऽथ चुम्बाप्रथमाभियोगः ।।६।।

माया—अतिस्वर के साथ जोर-जोर से खखारना, ठहाका मारकर हँसना, अपने प्रियतम के शय्या और आसन के पास जाना, अपने अङ्गों से शब्द कराना, जँभाई करना, सुलभ वस्तु पति से माँगना, पति के सामने बालकों को आलिङ्गन के साथ चूमना, पति के सामने सखियों को देखना, सखियों से दृष्टि चूरा कर पति को देखना, पति के गुणों का बखान करना, कान खुजलाना आदि-आदि चेष्टायें स्वाभाविक रूप से अनुरक्ता स्त्रियाँ समयानुसार करती हैं।।

वह अनुरक्ता स्त्रियाँ प्रियवाणी बोलने वाली, पति को स्वधन अर्पण करने वाली, पति को देखकर प्रसन्न होने वाली तथा क्रोधहीन रहकर पति के गुणों को बोलने वाली और दोषों को छिपाने वाली, पति के मित्रों का आदर करने वाली और शत्रुओं से द्वेष-ईर्ष्या करने वाली, पति से अपने किये कार्यों व्यवहारों को कहने वाली, पति के परदेश जाने पर दु:खी होने वाली होती है। वे पति को स्तनस्पर्श, अधरपान, आलिङ्गन व चुम्बन सहजभाव में करने देती हैं। इस प्रकार की चेष्टायें स्वभावतः अनुरक्ता स्त्रियाँ करती रहती हैं।।४-६।।

विरक्ता स्त्रियों के लक्षणों का कथन

विरक्तचेष्टा भ्रुकुटीमुखत्वं पराङ्मुखत्वं कृतविस्मृतिश्च।
असम्भ्रमो दुष्परितोषता च तद्द्विष्टमैत्री परुषं च वाक्यम् ।।७।।
स्पृष्ट्वाऽथवालोक्य धुनोति गात्रं करोति गर्वं न रुणद्धि यान्तम्।
चुम्बाविरामे वदनं प्रमार्ष्टि पश्चात्समुत्तिष्ठति पूर्वसुप्ता ।।८।।

माया—भ्रुकुटी चढ़ाये रहना, पति की ओर से मुख फेर लेना, पतिकृत कार्यों को भूल जाना, पति का अनादर अपमान सहजभाव में ही कर देना, असंतुष्ट रहना, पति के शत्रु के साथ मित्रता करना, कठोर वचन बोलना, पति के स्पर्श अथवा दर्शन होने पर अपने शरीर को निरर्थक कँपाना, अभिमान करना, जांते पति को कथमपि नहीं रोकना, पति के चूम लेने पर अपने मुँह को अवश्य पोछ लेना, पति के पहले सोना और पति के बाद तक भी सोते रहना आदि-आदि सभी चेष्टायें विरक्ता स्त्रियों के द्वारा की जाती हैं।।७-८।।

स्त्रियों के परपुरुषगमिनी बनने में सहायक दूतियों का कथन

भिक्षुणिका प्रव्रजिता दासी धात्री कुमारिका रजिका।
मालाकारी दुष्टाङ्गना सखी नापिती दूत्यः ।।९।।
कुलजनविनाशहेतुर्दूत्यो यस्मादतः प्रयत्नेन।
ताभ्यः स्त्रियोऽभिरक्ष्या वंशयशोमानवृद्ध्यर्थम् ।।१०।।

माया—स्त्रियों के पति से भिन्न पुरुषों के सम्पर्क में लाने वाली भिक्षुणी, सन्यासिनी, दासी, धाई, धोबिन, मालिन, दुष्टास्त्री, सखी, नाईन आदि 'दूती' कहलाती हैं। इन दूतियों के कारण पुरुष के कुल का नाश होता है। अतः प्रयत्नपूर्वक अपने वंश, यश और मान रक्षणार्थ तथा सम्वर्द्धनार्थ उन दूतियों से स्त्रियों की रक्षा करनी चाहिए॥९-१०॥

स्त्रियों के विनष्ट होने के संकेत हेतु कथन

रात्रीविहारजागररोगव्यपदेशपरगृहेक्षणिकाः।
व्यसनोत्सवाश्च सङ्केतहेतवस्तेषु रक्ष्याश्च ॥११॥

माया—अकेले घर से निकल रात्रि के समय बाहर को जाना, जागने हेतु रोग का बहाना करना, दूसरों के घर जाना, दूसरों की विपत्ति तथा विवाह आदि उत्सवों में शामिल होने जाना आदि घटना सभी स्त्रियों के संकेत हेतु हैं। अतः ऐसी घटना अथवा ऐसे अवसरों से सदा स्त्रियों की रक्षा करनी चाहिए॥११॥

स्त्रीगुण और काम लक्षणों का कथन

आदौ नेच्छति नोज्झति स्मरकथां व्रीडाविमिश्रालसा
मध्ये ह्रीपरिवर्जिताभ्युपरमे लज्जाविनम्रानना।
भावैर्नैकविधैः करोत्यभिनयं भूयश्च या सादरा
बुद्ध्वा पुम्प्रकृतिं च यानुचरति ग्लानेतरैश्चेष्टितैः ॥१२॥

माया—प्रारम्भ में काम की इच्छा का अभाव, परन्तु काम कथा का त्याग भी न करने वाली, लज्जाशील आलस्य वाली कामक्रिया के बीच में लज्जाहीन; परन्तु उसके पश्चात् लज्जा करने वाली फिर नत मस्तक होने वाली, सादर, बारम्बार विविध प्रकार के मनोभावों को व्यक्त करने वाले व्यवहार के साथ काम क्रिया करने वाली तथा पुरुष के अपेक्षित भावों को समझकर सुख अथवा दुख के रूप में सम्यक् व्यवहार करने वाली आदि चेष्टाओं वाली स्त्रियों के साथ अवश्य ही पुरुषों को काम क्रीड़ा करने में मन लगाना चाहिए॥१२॥

स्त्री पुरुष के लिए रत्न अथवा व्याधि का कथन

स्त्रीणां गुणा यौवनरूपवेषदाक्षिण्यविज्ञानविलासपूर्वाः।
स्त्री रत्नसंज्ञा च गुणान्वितासु स्त्रीव्याधयोऽन्याश्चतुरस्य पुंसः ॥१३॥

माया—स्त्रियों के यौवन, रूप, वेष, चातुर्य, कामविज्ञान के कलाओं में निपुणता, विलास अर्थात् मीठी बोली, नेत्रकटाक्ष, वाक्कटाक्ष आदि-आदि गुण कहे गए हैं। इस प्रकार के गुणों से युक्ता स्त्री पुरुष के लिए रत्न के समान तथा इन गुणों से हीन रहने पर व्याधि के समान होती हैं॥१३॥

वर्ज्य लक्षणों वाली स्त्री कथन

न ग्राम्यवर्णैर्मलदिग्धकाया निन्द्याङ्गसम्बन्धिकथां च कुर्यात्।
न चान्यकार्यस्मरणं रहःस्था मनो हि मूलं हरदग्धमूर्तेः ॥१४॥

माया—गँवारी बोली बोलने वाली तथा अङ्गों को मलिन रखने वाली स्त्रियों से निन्द्य अङ्गों के प्रसङ्ग अर्थात् काम क्रीड़ा, रतिकार्य आदि सम्बन्धी वार्त्ता कथमपि नहीं करनी चाहिए। एकान्त वास कर रही किसी स्त्री से जो किसी अन्य के बार में चिन्तनशील हो, काम या रति सम्बन्धी किसी प्रकार की चर्चा नहीं करनी चाहिए, क्योंकि कामदेव का निवास मन में या चित्त में ही होता है? अत: मन के अन्य विषयों में लगा रहने से रति सुख की अनुभूति नहीं होती है॥१४॥

स्त्रियों की विशेषताओं का कथन

श्वासं मनुष्येण समं त्यजन्ती बाहूपधानस्तनदानदक्षा।
सुगन्धकेशा सुसमीपरागा सुप्तेऽनुसुप्ता प्रथमं विबुद्धा॥१५॥

माया—जो स्त्रियाँ पति के साथ साँस लेती हों, अपने बाहुरूप तकिये पर अपने पति का शिर रखकर पति के सीने से अपने स्तनों को लगाकर आनन्द अनुभूति करती हो, अपने केश राशि को सुगन्धित रखती हो, अपने पति के सो जाने पर ही सोती हो और पति के पहले ही जाग जाती हों, ऐसा गुणवती स्त्रियों के लक्षण विद्वानों ने अपने अनुभव से कहे हैं॥१५॥

त्याज्य स्त्रियों का लक्षण कथन

दुष्टस्वभावा: परिवर्जनीया विमर्दकालेषु च न क्षमा या:।
यासामसृग्वासितनीलपीतमाताम्रवर्णं च न ता: प्रशस्ता:॥१६॥
या स्वप्नशीला बहुरक्तपित्ता प्रवाहिनी वातकफातिरक्ता।
महाशना स्वेदयुताङ्गदुष्टा या ह्रस्वकेशी पलितान्विता वा॥१७॥
मांसानि यस्याश्च चलन्ति नार्या
महोदरा ख़िक्खिमिनी च या स्यात्।
स्त्रीलक्षणे या: कथिताश्च पापा-
स्ताभिर्न कुर्यात् सह कामधर्मम्॥१८॥

माया—जो स्त्रियाँ विमर्द अर्थात् रतिकाल की पीड़ा को सहन करने में असमर्थ हो, ऐसी दुष्ट स्वभाव वाली स्त्रियों का त्याग करना ही श्रेयस्कर है।

जिन स्त्रियों के ऋतुकाल में रक्त का वर्ण काला, नीला, पीला अथवा ताम्रवर्ण का हो , वे स्त्रियाँ भी त्याज्य होती हैं।

जो स्त्रियाँ अत्यधिक सोने वाली हो, बहुत रक्त और पित्त वाली हो, जिनके शरीर में वात और कफ की मात्रा अधिक हो, प्रवाहिनी अर्थात् ऋतु के समय अत्यधिक रक्तस्राव होता हो, अधिक भोजन करने में रुचि रखने वाली हो, अधिकतर शरीर पसीना से युक्त रहता हो, छोटे-छोटे बालों वाली हो, सफेद केश वाली हो, ढीले-ढ़ाले माँसल शरीर हो, बड़ा उदर वाली हो, शब्द का उच्चारण भी अस्पष्ट रूप से करने वाली हो, इस ग्रन्थ के

स्त्री लक्षणाध्याय में कहे गए और अशुभ लक्षणों से भी युक्त हो, ऐसी स्त्रियों के साथ भूलकर भी रति क्रिया नहीं करनी चाहिए॥१६-१८॥

रजस्वला स्त्री के शोणित लक्षण का कथन

शशशोणितसङ्काशं लाक्षारससन्निकाशमथवा यत्।
प्रक्षालितं विरज्यति यच्चासृक् तद्भवेच्छुद्धम् ॥१९॥
यच्छब्दवेदनावर्जितं त्र्यहात् सन्निवर्तते रक्तम्।
तत्पुरुषसम्प्रयोगादविचारं गर्भतां याति ॥२०॥

भाषा—जिन स्त्रियों में ऋतुकालिक रक्त खरहा के रक्त अथवा लाख के सदृश वर्ण वाला हो और जिसका दाग धोने से छूट जाय, वह शुद्ध रक्त होता है।

जिन स्त्रियों के रुधिर (रक्त) शब्द और पीड़ा से रहित होकर तीन दिन बाद बन्द हो जाय, उस स्थिति में पुरुष संयोग होने पर स्त्री गर्भ को धारण कर लेती है॥१९-२०॥

रजस्वला धर्म का कथन

न दिनत्रयं निषेव्यं स्नानं माल्यानुलेपनं स्त्रीभिः।
स्नायाच्चतुर्थदिवसे शास्त्रोक्तेनोपदेशेन ॥२१॥
पुष्यस्नानौषधयो याः कथितास्ताभिरम्बुमिश्राभिः।
स्नायात्तथात्र मन्त्रः स एव यस्तत्र निर्दिष्टः ॥२२॥

भाषा—रजस्वला स्त्रियों को तीन दिन तक स्नान, माला, अनुलेपन आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। चौथे दिन शास्त्रोपदेशानुसार उसे स्नान करना चाहिए। पुष्य स्नान के प्रसङ्ग में जिन औषधियों की चर्चा हुई है, उनको लेकर जल में डालकर उस जल से तथा वहाँ पर जिन मन्त्रों का उल्लेख हुआ है, उस मन्त्र का उच्चारण करते हुए स्नान करना चाहिए॥२१-२२॥

स्त्री और पुरुष संयोग में तीन विभाग कथन

युग्मासु किल मनुष्या निशासु नार्यो भवन्ति विषमासु।
दीर्घायुषः सुरूपाः सुखिनश्च विकृष्टयुग्मासु ॥२३॥

भाषा—ऋतुकाल में समरात्रियों में पुरुष और विषम रात्रियों में स्त्री उत्पन्न होती है। दूर स्थित समरात्रियों जैसे छठी, आठवीं आदि में दीर्घायु, सुन्दर, व सुखी पुरुष शिशु उत्पन्न होता है॥२३॥

पुरुष, स्त्री और नपुंसक विभाग कथन

दक्षिणपार्श्वे पुरुषो वामे नारी यमावुभयसंस्थौ।
यदुदरमध्योपगतं नपुंसकं तन्निबोद्धव्यम् ॥२४॥

माया—स्त्रियों के गर्भस्थ शिशु उनके उदर के दक्षिण पार्श्व में होने पर पुरुष, वाम पार्श्व में होने पर स्त्री और दोनों ओर स्थित होने पर यमल तथा उदरमध्य में स्थित होने पर नपुंसक होता है॥२४॥

गर्भाधान मुहूर्त्त का कथन

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभस्थितेषु लग्ने शशाङ्के च शुभैः समेते।
पापैस्त्रिलाभारिगतैश्च यायात् पुंजन्मयोगेषु च सम्प्रयोगम् ॥२५॥

माया—जब केन्द्र (१, ४, ७, १०) और त्रिकोण (९, ५) भावों में शुभग्रह स्थित हों, लग्न व चन्द्र दोनों भाव शुभग्रहों से युक्त हों तथा तृतीय, एकादश और षष्ठभाव में सभी पापग्रह स्थित हों, तो उस समय तथा जातकशास्त्रोक्त पुंजन्म योग के काल में अपनी पत्नि से संगम करें, तो पुत्र प्राप्ति होती है॥२५॥

ऋतुकाल के नियम प्रसङ्ग में विशेष कथन

न नखदशनविक्षतानि कुर्या-
दृतुसमये पुरुषः स्त्रियाः कथञ्चित्।
ऋतुरपि दश षट् च वासराणि
प्रथमनिशात्रितयं न तत्र गम्यम् ॥२६॥

माया—पुरुष ध्यान रखें कि ऋतुकाल में स्त्री के अङ्गों को नखों अथवा दाँतों से क्षत न करे तथा सोलह दिन पर्यन्त के ऋतुकाल में से प्रथम तीन रात्रि पर्यन्त उस स्त्री से सम्भोग नहीं करना चाहिए॥२६॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां स्त्रीपुंससमायोगविचारो नामाष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥७८॥

□□□

अथैकोनाशीतितमोऽध्यायः-७९

शय्यासनलक्षणविचारः

सर्वप्रथम इसका आरम्भ का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

सर्वस्य सर्वकालं यस्मादुपयोगमेति शास्त्रमिदम्।
राज्ञां विशेषतोऽतः शयनासनलक्षणं वक्ष्ये ।।१।।

भाषा—प्रत्येक समय प्रत्येक मनुष्य के उपयोग में यह शास्त्र आता रहा है। लेकिन राजाओं के उपयोग में विशेष रूप से आया है। अत: इस शास्त्र को अर्थात् शय्या और आसन का लक्षण यहाँ मैं (वराहमिहिर) कहता हूँ।।१।।

राजाजनों के शय्या और आसन के शुभ वृक्ष कथन

असनस्पन्दनचन्दनहरिद्रसुरदारुतिन्दुकीशाला: ।
काश्मर्यञ्जनपद्मकशाका वा शिंशपा च शुभा: ।।२।।

भाषा—आसन, स्पन्दन, हरिद्रा, देवदारु, तिन्दुकी, शाल, काश्मरी, अञ्जन, पद्मक, शाक, शिंशपा आदि वृक्ष की लकड़ी राजा के शय्या व आसन के हेतु शुभकारक होती है।।२।।

शय्या व आसन के लिए अशुभकारी वृक्ष कथन

अशनिजलानिलहस्तिप्रपातिता मधुविहङ्गकृतनिलया: ।
चैत्यश्मशानपथिजोर्ध्वशुष्कवल्लीनिबद्धाश्च ।।३।।

भाषा—जो वृक्ष बिजली, जल, वायु अथवा हाथी से गिराये गए हों, जिन वृक्षों पर मधुमक्खियों के छत्ते या पक्षियों के घोंसले हों, चैत्य (प्रधानवृक्ष) अथवा श्मशान अथवा मार्ग के किनारे में स्थित हों और वे वृक्ष जिन पर सूखी हुई लताऐं व्याप्त हों आदि वृक्ष शय्या और आसन के लिए अशुभकारक होते हैं।।३।।

शय्या व आसन के लिए और भी अशुभकारी वृक्ष कथन

कण्टकिनो ये च स्युर्महानदीसङ्गमोद्भवा ये च।
सुरभवनजाश्च न शुभा ये चापरयाम्यदिक्पतिता: ।।४।।

भाषा—वे वृक्ष, जिनमें काँटे हों, जो महानदी के संगम स्थान देवालय आदि के परिसर में उत्पन्न हों, जो वृक्ष काटने पर दक्षिण अथवा पश्चिम दिशा की ओर गिरे हों आदि प्रकार के वृक्ष की शय्या और आसन के लिए अनुपयोगी माने गए हैं।।४।।

अशुभ वृक्ष से निर्मित शय्या व आसन का फलकथन

प्रतिषिद्धवृक्षनिर्मितशयनासनसेवनात् कुलविनाशः ।
व्याधिभयव्ययकलहा भवन्त्यनर्था अनेकविधाः ॥५॥

माया—त्यक्त वृक्ष के बने शय्या व आसन के उपयोग से उपयोग करने वालों के कुल का नाश, रोग, भय, धनहानि, कलह और भी अन्यान्य अनर्थ होते हैं॥५॥

शय्या व आसन बनाने के विचार से पूर्व कटे वृक्ष का फल कथन

पूर्वच्छिन्नं यदि वा दारु भवेत्तत्परीक्ष्यमारम्भे ।
यद्यारोहेत्तस्मिन् कुमारकः पुत्रपशुदं तत् ॥६॥

माया—शय्या अथवा आसन बनाने के पूर्व ही काटे गए वृक्ष के शुभाशुभ का परीक्षण करना चाहिए। परीक्षण का विचार करते ही उस कटे वृक्ष पर अचानक कोई कुमार चढ़ जाय, तो उस वृक्ष के शय्यासन बनाकर उपयोग करने से निश्चय कर पुत्र और पशु प्रदान करने वाला होता है॥६॥

शय्यासन निर्माण काल का शुभ शकुन कथन

सितकुसुममत्तवारणदध्यक्षतपूर्णकुम्भरत्नानि ।
मङ्गल्यान्यन्यानि च दृष्ट्वारम्भे शुभं ज्ञेयम् ॥७॥

माया—शय्या व आसन को बनाते समय यदि श्वेत पुष्प, मदमस्त हाथी, दही, अक्षत, जल भरा कलश, रत्न या अन्यान्य मांगलिक पदार्थों का दर्शन होना, शुभकारी होता है॥७॥

राजाजनों के शय्या का प्रमाण कथन

कर्माङ्गुलं यवाष्टकमुदरासक्तं तुषैः परित्यक्तम् ।
अङ्गुलशतं नृपाणां महती शय्या जयाय कृता ॥८॥

माया—भूसी रहित आठ जौ का पेट मिलाकर एक समान रूप से रखने पर एकाङ्गुल नाम का कर्माङ्गुल होता है। इस प्रकार के सौ कर्माङ्गुल के समान लम्बाई की शय्या राजाजनों के लिए जयप्रद कहा गया है॥८॥

राजपुत्र आदि की शय्या का प्रमाण कथन

नवतिः सैव षडूना द्वादशहीना त्रिषट्कहीना च ।
नृपपुत्रमन्त्रिबलपतिपुरोधसां स्युर्यथासङ्ख्यम् ॥९॥

माया—राजपुत्र, सचिव, सेनापति, पुरोहित आदि की शय्या का प्रमाण नब्बे, चौरासी, अठत्तर, बहत्तर आदि अङ्गुल लम्बा क्रम से जानना चाहिए अर्थात् राजपुत्र की शय्या नब्बे, सचिव की चौरासी, सेनापति की अठत्तर तथा पुरोहित की शय्या बहत्तर अङ्गुल लम्बी बनानी चाहिए॥९॥

शय्या की चौड़ाई और पापोच्छ्राय का प्रमाण कथन

अर्धमतोऽष्टांशोनं विष्कम्भो विश्वकर्मणा प्रोक्तः ।
आयामत्र्यंशसमः पादोच्छ्रायः सकुक्ष्यशिराः ।।१०।।

माया—शय्या की लम्बाई के आधे में से उसका अष्टमांश अर्थात् आधे का आठवाँ भाग कम कर शय्या की चौड़ाई करनी चाहिए। चौड़ाई का तीसरे भाग के समान शय्या की कुक्षि और शिर के साथ पाये की ऊँचाई भी बनानी चाहिए। ऐसा विश्वकर्मा ने कहा है।।१०।।

अब वृक्षों के विशेष फल कथन

यः सर्वः श्रीपर्ण्या पर्यङ्को निर्मितः स धनदाता ।
असनकृतो रोगहरस्तिन्दुकसारेण वित्तकरः ।।११।।
यः केवलशिंशपया विनिर्मितो बहुविधं स वृद्धिकरः ।
चन्दनमयो रिपुघ्नो धर्मयशोदीर्घजीवितकृत् ।।१२।।
यः पद्मकपर्यङ्कः स दीर्घमायुः श्रियं श्रुतं वित्तम् ।
कुरुते शालेन कृतः कल्याणं शाकरचितश्च ।।१३।।
केवलचन्दनरचितं काञ्चनगुप्तं विचित्ररत्नयुतम् ।
अध्यासन् पर्यङ्कं विबुधैरपि पूज्यते नृपतिः ।।१४।।

माया—श्रीपर्णी वृक्ष से निर्मित शय्या धनदा होती है। असन या विजयसार वृक्ष से निर्मित की गई शय्या रोगहरण करती है। तिन्दुक सार वृक्ष से निर्मित शय्या भी धनलाभ कराती है। एकमात्र शिंशप वृक्ष से निर्मित शय्या अनेक प्रकार से संवृद्ध करती है। चन्दन वृक्ष की शय्या शत्रुनाश, कीर्ति तथा दीर्घायु भी प्रदान करती है। पद्मक वृक्ष की शय्या दीर्घायु, श्री, ज्ञान और धन प्रदान करती है। शालवृक्ष की शय्या कल्याण करने वाली होती है। एकमात्र चन्दन वृक्ष से निर्मित, स्वर्ण से मढ़ी हुई तथा बहुत प्रकार से रत्नों से आच्छादित शय्या पर शयन करने वाले राजाजन को देवता लोग भी पूजते हैं।।११-१४।।

मिश्रवृक्ष से निर्मित शय्या का शुभाशुभ फल कथन

अन्येन समायुक्ता न तिन्दुकी शिंशपा च शुभफलदा ।
न श्रीपर्णेन च देवदारुवृक्षो न चाप्यसनः ।।१५।।
शुभदौ तु शालशाकौ परस्परं संयुतौ पृथक् चैव ।
तद्वत् पृथक् प्रशस्तौ सहितौ च हरिद्रककदम्बौ ।।१६।।
सर्वः स्पन्दनरचितो न शुभः प्राणान् हिनस्ति चाम्बकृतः ।
असनोऽन्यदारुसहितः क्षिप्रं दोषान् करोति बहून् ।।१७।।

अम्बस्पन्दनचन्दनवृक्षाणां स्पन्दनाच्छुभा: पादा: ।
फलतरुणा शयनासनमिष्टफलं भवति सर्वेण ॥१८॥

माया—तिन्दुकी, शिंशपा, श्रीपर्णी, देवदास और असन वृक्ष के साथ अन्य वृक्ष के योग से बना शय्या (पलङ्ग, चौकी) अशुभदायक होता है। परन्तु इन वृक्षों की शय्या में किसी अन्य वृक्ष का योग न हो, तो शुभ होता है।

शाल और शाक; इन दोनों वृक्षों का काष्ठ मिश्रित कर अथवा अलग-अलग और कदम्ब के काष्ठ का मिश्रित अथवा पृथक्-पृथक् बनी शय्या शुभदायी होती है केवल स्पन्दन वृक्ष के काष्ठ से बनी शय्या अथवा आसन शुभदायी नहीं होती है। अम्ब वृक्ष के काष्ठ से निर्मित शय्या या आसन प्राणघातक होते हैं। असन वृक्ष के काष्ठ में अन्य वृक्ष के काष्ठ को मिश्रित कर बनी शय्या आदि शीघ्र बहुत-से दोष उत्पन्न करने वाली होती है॥

अम्ब, स्पन्दन और चन्दन वृक्षों की शय्या आदि में स्पन्दन वृक्ष के बनाने से शुभ होता है, इस प्रकार सभी खाल वाले वृक्षों के काष्ठ से विनिर्मित शय्या, आसन आदि सदा अभीष्ट फल प्रदान करने वाले होते हैं॥१५-१८॥

सभी वृक्षों के काष्ठ के साथ गजदन्त के योग का कथन

गजदन्त: सर्वेषां प्रोक्ततरूणां प्रशस्यते योगे ।
कार्योऽलङ्कारविधिर्गजदन्तेन प्रशस्तेन ॥१९॥

माया—उपरोक्त समस्त वृक्षों के काष्ठ के साथ गजदन्त को मिला कर शय्या और आसन को विभूषित करना शुभकारक है। अत: शुभ लक्षणों से सम्पन्न गजदन्त का चयन कर किसी भी काष्ठ से बने पलंग, चौकी, आसन आदि को सजाना श्रेष्ठ है॥१९॥

गजदन्त (हाथी दाँत) का लक्षण कथन

दन्तस्य मूलपरिधिं द्विरायतं प्रोह्य कल्पयेच्छेषम् ।
अधिकमनूपचराणां न्यूनं गिरिचारिणां किञ्चित् ॥२०॥

माया—गजदन्त के मूल में जितनी अङ्गुल प्रमाण परिधि हो, उससे दूने अङ्गुल मूल की ओर से छोड़कर शेष भाग से शेष रचना कार्य करना चाहिए। परन्तु अनूपचर (जलप्राय देशचर) हाथियों के लिए कुछ अधिक तथा पर्वताचारी हाथियों के विषय में कुछ कम छोड़कर शेष कल्पित रचनाऐं करनी चाहिए॥२०॥

गजदन्त के लक्षणों का शुभाशुभ फल कथन

श्रीवृक्षवर्धमानच्छत्रध्वजचामरानुरूपेषु ।
छेदे दृष्टेष्वारोग्यविजयधनवृद्धिसौख्यानि ॥२१॥

प्रहरणसदृशेषु जयो नन्द्यावर्ते प्रनष्टदेशाप्तिः ।
लोष्ठे तु लब्धपूर्वस्य भवति देशस्य सम्प्राप्तिः ।।२२।।
स्त्रीरूपे धननाशो भृङ्गारेऽभ्युत्थिते सुतोत्पत्तिः ।
कुम्भेन निधिप्राप्तिर्यात्राविघ्नं च दण्डेन ।।२३।।
कृकलासकपिभुजङ्गेष्वसुभिक्षव्याधयो रिपुवशित्वम् ।
गृध्रोलूकध्वाङ्क्षश्येनाकारेषु जनमरकः ।।२४।।
पाशेऽथवा कबन्धे नृपमृत्युर्जनविपत् स्रुते रक्ते ।
कृष्णे श्यावे रूक्षे दुर्गन्धे चाशुभं भवति ।।२५।।

माया—गजदन्त को काटने के पूर्व उस पर विल्ववृक्ष, वर्धमान, छत्र,ध्वज या चामर के समान चिह्न दीखने से वह आरोग्य, धनवृद्धि और सुख दाता होता है। उस पर शस्त्रानुकृति से जय; नदी का आवर्त या जलभ्रम तुल्य चिह्न से खोये हुए देश या स्थानकी प्राप्ति; ढेलों की तरह चिह्न दीखने से पूर्व में प्राप्त देश की पुनः प्राप्ति; स्त्री की तरह चिह्न से धनहानि; भृङ्गार की तरह चिह्न से पुत्र की प्राप्ति; घड़े सदृश चिह्न दीखने पर निधि या कोश की प्राप्ति; दण्डाकृति पर यात्रा बाधित; गिरगिट, वानर या सर्प के समान चिह्न दीखने पर दुर्भिक्ष, व्याधि और शत्रु के वश में रहना; इसी तरह गिद्ध, उल्लू, काक या बाज़ जैसी हिंसक पक्षी की आकृति से महामारी; पाश अथवा कबन्ध अर्थात् विना सिर का धड़ दीखने से राजा का मरण; गजदन्त को काटने से रक्त निकलने से मनुष्य मात्र पर विपत्ति तथा काला, पीला, रूखा या दुर्गन्धि होने से अशुभ होता है।।२१-२५।।

आसन सदृश शय्या का फल कथन

शुक्लः समः सुगन्धिः स्निग्धश्च शुभावहो भवेच्छेदः ।
अशुभशुभच्छेदा ये शयनेष्वपि ते तथा फलदाः ।।२६।।

माया—आसन में गजदन्त लगाते समय और उसे काटने से पूर्व उसमें सफेद छिद्र, सुगन्धि या निर्मल अनुभव होने से शुभ ही होता है। ये आसन के फल कहे गए हैं तथा इसी तरह उपरोक्त लक्षणों के अनुसार शय्या के शुभाशुभ फल भी कहना चाहिए।।२६।।

वृक्षों के विनियोग की विधि का कथन

ईषायोगे दारु प्रदक्षिणाग्रं प्रशस्तमाचार्यैः ।
अपसव्यैकदिगग्रे भवति भयं भूतसञ्जनितम् ।।२७।।

माया—पलङ्ग या चौकी में पाये से लगाने वाली दो-दो लम्बी व चौड़ी पट्टी को 'ईषा' कहा गया है। ईषाओं का संयोग प्रदक्षिण क्रम से अर्थात् शिर की ओर

के काष्ठ के अग्र भाग में दक्षिण की ओर के काष्ठ के मूल को दक्षिण ओर के काष्ठ के आगे के भाग में पैर की ओर के काष्ठ के मूल को, पैर की ओर के काष्ठ के आगे के भाग में उत्तर दिशा की ओर के काष्ठ मूल को तथा उत्तर दिशा की ओर के काष्ठ के आगे के भाग में शिर की ओर के काष्ठ मूल को जोड़ना शुभदायक होता है। ऐसा आश्चर्य लोगों द्वारा कहा गया है। इस प्रकार अपसव्य अर्थात् उपरोक्त के विपरीत काष्ठों का संयोग भूतों का भय देने वाला होता है॥२७॥

पायों (पादों) का लक्षण कथन

एकेनावाक्शिरसा भवति हि पादेन पादवैकल्यम्।
द्वाभ्यां न जीर्यतेऽन्नं त्रिचतुर्भिः क्लेशवधबन्धाः ॥२८॥

माया—शय्या अथवा आसन का एक पाया अधोमुख हो अर्थात् काष्ठमूल की ओर पाये का अग्रभाग और काष्ठ के अग्रभाग की ओर पाये का मूल होने पर उस शय्या पर शयन करने वाले के पैरों में पीड़ा; इसी तरह दो पाये अधोमुख होने से किये गये भोजन से अन्न अजीर्ण और तीन पाये अधोमुख होने से अथवा चार पाये अधोमुख होने से क्लेश, वध अथवा बन्धन होना कहा गया है॥२८॥

पाये के ग्रन्थि युक्त होने का लक्षण कथन

सुषिरेऽथवा विवर्णे ग्रन्थौ पादस्य शीर्षगे व्याधिः।
पादे कुम्भो यश्च ग्रन्थौ तस्मिन्नुदररोगः ॥२९॥
कुम्भाधस्ताज्जङ्घा तत्र कृतो जङ्घयोः करोति भयम्।
तस्याश्चाधारोऽधः क्षयकृद्द्रव्यस्य तत्र कृतः ॥३०॥
खुरदेशे यो ग्रन्थिः खुरिणां पीडाकरः स निर्दिष्टः।
ईषाशीर्षण्योश्च त्रिभागसंस्थो भवेन्न शुभः ॥३१॥

माया—पायों का शिर भाग छिद्र, विवर्ण या ग्रन्थि युक्त होने पर उस शय्या पर शयन करने वाले रोगग्रस्त हो जाता है। पाये के कुम्भ भाग में गाँठ हो, तो उदररोग; जंघा अर्थात् पाये के कुम्भ के नीचे भाग में गाँठ होने पर जंघाओं के रोग भय तथा जंघा के नीचे का भाग अर्थात् पाये के आधार भाग में गाँठ होने से धन की हानि; नाखून प्रदेश में गाँठ दीखने से खुर वाले पशुओं को पीड़ा; तथा ईषा और शीर्षणी अर्थात् शिर की ओर के काष्ठ के तृतीयांश पर गाँठ होने पर शुभफल नहीं ही होता है॥२९-३१॥

छिद्रों के नाम कथन

निष्कुटमथ कोलाक्षं सूकरनयनं च वत्सनाभं च।
कालकमन्यद्धुन्धुकमिति कथितश्छिद्रसंक्षेपः ॥३२॥

भाषा—निष्कुट, कोलाक्ष, शूकर नयन, वत्सनाम, कालक, छुन्छुक आदि संक्षिप्त रूप से छिद्रों की संज्ञा बतायी गई है॥३२॥

छिद्रों का लक्षण कथन

घटवत् सुषिरं मध्ये सङ्कटमास्ये च निष्कुटं छिद्रम्।
निष्पावमाषमात्रं नीलं छिद्रं च कोलाक्षम्॥३३॥
सूकरनयनं विषमं विवर्णमध्यर्धपर्वदीर्घं च।
वामावर्तं भिन्नं पर्वमितं वत्सनाभाख्यम्॥३४॥
कालकसंज्ञं कृष्णं धुन्धुकमिति यद्भवेद्विनिर्भिन्नम्।
दारुसवर्णं छिद्रं न तथा पापं समुद्दिष्टम्॥३५॥

भाषा—पायों की छिद्र के मध्य की आकृति घड़ा के सदृश चौड़ाई वाला और ऊपर सँकरा मुखाकृति दीखने पर निष्कुट संज्ञक छिद्र होता है। शालिधान्य अथवा उड़द के समान नीलवर्ण का छिद्र दीखने पर कोलाक्ष संज्ञक छिद्र होता हैं विषम, विवर्ण और डेढ़ पर्व का लम्बा छिद्र दीखने पर सूकरनयन संज्ञक छिद्र होता है। एक पर्व लम्बा वामावर्त्त छिद्र वत्सनाम संज्ञक; काले वर्ण का छिद्र कालकसंज्ञक, दोनों तरफ दीखने वाला काला छिद्र धुन्धुक संज्ञक होता है। यहाँ काष्ठ के समान वर्ण का छिद्र अशुभकारी नहीं होते हैं॥३३-३५॥

निष्कुट आदि छिद्रों का फल कथन

निष्कुटसंज्ञे द्रव्यक्षयस्तु कोलेक्षणे कुलध्वंसः।
शस्त्रभयं सूकरके रोगभयं वत्सनाभाख्ये॥३६॥
कालकधुन्धुकसंज्ञं कीटैर्विद्धं च न शुभदं छिद्रम्।
सर्वं ग्रन्थिप्रचुरं सर्वत्र न शोभनं दारु॥३७॥

भाषा—पायों में निष्कुट संज्ञक छिद्र के होने से धननाश; कोलाक्ष संज्ञक से कुलहानि; सूकरनयन संज्ञक छिद्र से शस्त्रभय; वत्सनाम संज्ञक छिद्र होने से रोगभय होता है। कालक और धुन्धुक नामक छिद्र कीटों से युक्त हो, तो शुभदायक नहीं होता है। अनेक गाँठों से युक्त सभी प्रकार के काष्ठ प्रत्येक जगह शुभदायक नहीं होते हैं अर्थात् अनेक गाँठ वाली कोई भी लकड़ी किसी भी जगह शुभकारक नहीं होती है॥३६-३७॥

मिश्र काष्ठ रचित शय्या का फल कथन

एकद्रुमेण धन्यं वृक्षद्वयनिर्मितं च धन्यतरम्।
त्रिभिरात्मजवृद्धिकरं चतुर्भिरर्थं यशश्चाग्र्यम्॥३८॥

पञ्चवनस्पतिरचिते पञ्चत्वं याति तत्र यः शेते।
षट्सप्ताष्टतरूणां काष्ठैर्घटिते कुलविनाशः ।।३९।।

माया—एक वृक्ष के काष्ठ से निर्मित शय्या धन्यकारक; दो वृक्षों के काष्ठों से निर्मित होने सभी धन्यतरकारक, तीन वृक्षों के काष्ठों से निर्मित शय्या पुत्रवर्द्धक; चार वृक्षों के काष्ठों से निर्मित शय्या उत्तम धन और यशकारक होती है; लेकिन पाँच वृक्षों के काष्ठों से निर्मित शय्या, शयनकर्ता का मरण करती है और छः सात, आठ आदि वृक्षों के काष्ठ से निर्मित शय्या कुलनाशक होती हैं।।३८-३९।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शय्यासनलक्षणविचारो नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः ।।७९।।

□□□

अथाशीतितमोऽध्यायः-८०

रत्नपरीक्षानिरूपणम्

सर्वप्रथम रत्न परीक्षा का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

रत्नेन शुभेन शुभं भवति नृपाणामनिष्टमशुभेन।
यस्मादतः परीक्ष्यं दैवं रत्नाश्रितं तज्ज्ञैः ॥१॥

भाषा—शुभ रत्न धारण करने से राजाजनों का शुभ तथा अशुभ रत्न धारण करने से उनका अशुभ होना कहा गया है। अतः रत्न लक्षण के विशेषज्ञ ज्योतिषजन को रत्न पर आश्रित दैव अर्थात् भविष्यगत शुभाशुभ का परीक्षण कर अवश्य उसका विचार करना चाहिए॥१॥

रत्न परीक्षा के क्रम में पाषाण रत्न का अधिकार कथन

द्विपहयवनितादीनां स्वगुणविशेषेण रत्नशब्दोऽस्ति।
इह तूपलरत्नानामधिकारो वज्रपूर्वाणाम् ॥२॥

भाषा—अपने-अपने गुणों की विशेषताओं में हाथी, घोड़ा, स्त्री आदि के लिए भी रत्न शब्द अर्थात् गजरत्न, अश्वरत्न, स्त्रीरत्न आदि का प्रयोग होते देखा जाता है। परन्तु यहाँ वज्र (हीरा) आदि पाषाण रत्नों से सम्बन्धित अधिकार को कहा जा रहा है॥२॥

रत्नोत्पत्ति प्रदर्शनार्थ आचार्यों के मत भेदों का कथन

रत्नानि बलाद्दैत्याद्दधीचितोऽन्ये वदन्ति जातानि।
केचिद् भुवः स्वभावाद् वैचित्र्यं प्राहुरुपलानाम् ॥३॥

भाषा—किसी ने 'बल' नामक दैत्य से रत्न की उत्पत्ति होना कहा है, तो किसी ने दधीचि मुनि के अस्थि से रत्नोत्पत्ति कहा है। किसी ने पृथ्वी के स्वभाव से उपलों की विचित्रता को रत्न हो जाना कहा है॥३॥

रत्नों के नामों का कथन

वज्रेन्द्रनीलमरकतकर्केतरपद्मरागरुधिराख्याः।
वैदूर्यपुलकविमलकराजमणिस्फटिकशशिकान्ताः ॥४॥
सौगन्धिकगोमेदकशङ्खमहानीलपुष्परागाख्याः।
ब्रह्ममणिज्योतीरससस्यकमुक्ताप्रवालानि ॥५॥

भाषा—वज्र, इन्द्रनील, मरकत, कर्केतर, पद्मराग, रुधिर, वैदूर्य्य, पुलक, विमलक, राजमणि, स्फटिक, चन्द्रकान्त, सौगन्धिक, गोमेद, शंख, महानील, पुष्पराज, ब्रह्ममणि, ज्योतिरस, सस्यक, मुक्ता, मूँगा, आदि सभी रत्न कहलाते हैं॥४-५॥

वज्रमणि (हीरा रत्न) के सात आकर स्थान कथन

वेणातटे विशुद्धं शिरीषकुसुमप्रभं च कौशलकम्।
सौराष्ट्रकमाताम्रं कृष्णं सौर्पारकं वज्रम् ॥६॥
ईषत्ताम्रं हिमवति मतङ्गजं वल्लपुष्पसङ्काशम्।
आपीतं च कलिङ्गे श्यामं पौण्ड्रेषु सम्भूतम् ॥७॥

भाषा—विशुद्ध हीरा वेणा नदी के तीर पर; शिरीष पुष्प के सदृश आभा युक्त हीरा कोशल देश में ; कुछ-कुछ लाल वर्ण का हीरा सौराष्ट्र देश में ; काला हीरा सुरपारक देश में; कुछ लाल वर्ण का हीरा हिमवान् पर्वत पर; बल्ल पुष्प की आभा सदृश हीरा मतङ्ग देश में, पीत वर्ण का हीरा कलिङ्ग देश में तथा श्याम वर्ण का हीरा पौण्ड्र देश में पाया जाता है; क्योंकि वे स्थान इन हीरों की उत्पत्ति स्थान भी हैं॥६-७॥

'हीरा' रत्न का देवता कथन

ऐन्द्रं षडश्रि शुक्लं याम्यं सर्पास्यरूपमसितं च।
कदलीकाण्डनिकाशं वैष्णवमिति सर्वसंस्थानम् ॥८॥
वारुणमबलागुह्योपमं भवेत् कर्णिकारपुष्पनिभम्।
शृङ्गाटकसंस्थानं व्याघ्राक्षिनिभं च हौतभुजम् ॥९॥
वायव्यं च यवोपममशोककुसुमप्रभं समुद्दिष्टम्।
स्रोतः खनिः प्रकीर्णकमित्याकरसम्भवस्त्रिविधः ॥१०॥

भाषा—षड्कोणाकार सफेद हीरों का इन्द्र; सर्प के समान मुखवाले काले हीरों का यम; कदली काण्ड सदृश नीले व पीले वर्ण वाले हीरों का विष्णु तथा साधारणतः सभी प्रकार के हीरों का विष्णु देवता कहे गए हैं। स्त्री के भग सदृश आकार के हीरों का वरुण, कर्णिकार पुष्प की आभा के सदृश, सिंघाड़े की तरह त्रिकोणाकर अथवा व्याघ्रनेत्र के सदृश हीरों का अग्नि तथा अशोक पुष्प सदृश आभा युक्त अथवा जौ के समान हीरों का वायव्य देवता जानना चाहिए। नदी आदि का प्रवाह, खान और प्रकीर्णक अर्थात् जिस भूमि में मणि उत्पन्न होती या बिखरी मिलती है; ये तीनों प्रकार के स्थान हीरों की उत्पत्ति रूप 'आकर' कहलाते है॥८-१०॥

ब्राह्मण आदि चातुर्वर्णों के लिए उपयुक्त हीरा कथन

रक्तं पीतं च शुभं राजन्यानां सितं द्विजातीनाम्।
शैरीषं वैश्यानां शूद्राणां शस्यतेऽसिनिभम् ॥११॥

भाषा—क्षत्रियों के लिए लाल और पीला हीरा; ब्राह्मणों के लिए सफेद हीरा; वैश्यों के लिए शिरीषपुष्प सदृश वर्ण का हीरा तथा शूद्रों के लिए नीला हीरा शुभदायक होता है॥११॥

वज्र (हीरा) का मूल्य परिज्ञानार्थ कथन

सितसर्षपाष्टकं तण्डुलो भवेत्तण्डुलैस्तु विंशत्या ।
तुलितस्य द्वे लक्षे मूल्यं द्विद्वयूनिते चैतत् ।।१२।।
पादत्र्यंशार्धोनं त्रिभागपञ्चांशषोडशांशाश्च ।
भागश्च पञ्चविंशः शतिकस्साहस्रिकश्चेति ।।१३।।

भाषा—श्वेत सरसों के आठ दानों के समान एक चावल होता है। इस प्रकार के २० चावल तुल्य हीरा का मूल्य दो लाख कार्षपण होता है। कार्षपण के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा गया है—

विंशतिःश्वेतिकाःप्रोक्ताःकाकिण्येकाविचक्षणैः ।
तच्चतुष्कंपणइतिचतुर्थंतच्चतुष्टयम् ।
चतुर्थकचतुष्कंतुपुराणइतिकथ्यते ।
कार्षपणःसएवोक्तःक्वचित्तुपणविंशतिः ।।

इस प्रकार हीरे की मात्रा में दो-दो चावल कम करने से उपरोक्त मूल्य का क्रम से पाद, तृतीयांश, आधा, तृतीयांशयुक्त, पञ्चमांश, षोडशांश, पञ्चविंशत्यंश, शतांश और सहस्रांश कम मूल्य का हीरा होता है।।१२-१३।।

शुभ हीरों का लक्षण कथन

सर्वद्रव्याभेद्यं लघ्वम्भसि तरति रश्मिवत् स्निग्धम् ।
तडिदनलशक्रचापोपमं च वज्रं हितायोक्तम् ।।१४।।

भाषा—किसी वस्तु से न टूटने वाला साधारण जल में भी किरण के समान तैरने वाला, निर्मल (स्वच्छ) और बिजली, अग्नि अथवा इन्द्रधनुष के सदृश वर्ण वाला हीरा शुभदायक होता है।।१४।।

अशुभ हीरों का लक्षण कथन

काकपदमक्षिकाकेशधातुयुक्तानि शर्करैर्विद्धम् ।
द्विगुणाश्रि दग्धकलुषत्रस्तविशीर्णानि न शुभानि ।।१५।।

भाषा—कौए के पैर के समान चिह्न युक्त, मक्खी के सदृश चिह्न युक्त, केश सदृश महीन रेखा युक्त, धातुओं से युक्त, कंकड़ से विद्ध, कथित लक्षण से द्विगुणित कोण वाला, आग से जला, मलिन, कान्तिहीन, जर्जर आदि लक्षणों वाले हीरा शुभदायी नहीं होता है।।१५।।

हीरों के अशुभ लक्षण कथन

यानि च बुद्बुददलिताग्रचिपिटवासीफलप्रदीर्घाणि ।
सर्वेषां चैतेषां मूल्याद् भागोऽष्टमो हानिः ।।१६।।

माया—जल के बुलबुले की तरह अग्रभाग से फटा, चिपटा और वासी फल के समान लम्बाई वाला हीरा शुभदायक नहीं होता है॥१६॥

हीरा धारण करने में विशेषता कथन

वज्रं न किञ्चिदपि धारयितव्यमेके
पुत्रार्थिनीभिरबलाभिरुशन्ति तज्ज्ञाः।
शृङ्गाटकत्रिपुटधान्यकवत् स्थितं यत्
श्रोणीनिभं च शुभदं तनयार्थिनीनाम्॥१७॥

माया—हीरा लक्षण शास्त्री विद्वानों का कथन है कि उन स्त्रियों को, जो पुत्र की कामना कर रही हैं, किसी भी प्रकार से हीरा धारण नहीं करना चाहिए। सिंघाड़े की आकृति वाला, तीन पुटों वाला, धान्य फल के तुल्य अथवा श्रोणी तुल्य हीरे को धारण करना पुत्र की कामना वाली स्त्रियों के लिए शुभदायक है॥१७॥

शुभाशुभ हीरा धारण फल कथन

स्वजनविभवजीवितक्षयं जनयति वज्रमनिष्टलक्षणम्।
अशनिविषभयारिनाशनं शुभमुपभोगकरं च भूभृताम्॥१८॥

माया—अशुभ लक्षणों वाले हीरों को धारण करने वाले राजाजनों के बन्धु, धन और प्राण का हरण होता है, तथा शुभ लक्षणों वाले हीरों को धारण करने से वज्रभय, विषभय, शत्रुभय आदि भयों की हानि और धारणकर्त्ता के सुखभोग की अभिवृद्धि होती है॥१८॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां रत्नपरीक्षानिरूपणं नामाशीतितमोऽध्यायः ॥८०॥

□□□

अथैकाशीतितमोऽध्यायः-८१

मुक्तालक्षणनिरूपणम्

सर्वप्रथम मोतियों के उत्पत्ति स्थान कथन

द्विपभुजगशुक्तिशङ्खाभ्रवेणुतिमिसूकरप्रसूतानि ।
मुक्ताफलानि तेषां बहुसाधु च शुक्तिजं भवति ॥१॥

भाषा—हाथी, सर्प, सीपी, शंख, मेघ, बाँस, मछली और सूअर से मोती उत्पन्न होती है। उनमें से सबसे श्रेष्ठ सीपी से प्राप्त होने वाली मोती होती है॥१॥

मोतियों के आठ उत्पत्ति (आकर) स्थानों का कथन

सिंहलकपारलौकिकसौराष्ट्रिकताम्रपर्णिपारशवाः ।
कौबेरपाण्ड्यवाटकहैमा इत्याकरास्त्वष्टौ ॥२॥

भाषा—सिंहलक, पारलौकिक, सौराष्ट्रक, ताम्रपर्णि, पारशव, कौबेर, पाण्ड्यवाटक और हैम; ये सभी आठ स्थान मोतियों के आकर हैं॥२॥

विविध आकरों से प्राप्त मोतियों के लक्षण कथन

बहुसंस्थानाः स्निग्धाः हंसाभाः सिंहलाकराः स्थूलाः ।
ईषत्ताम्राः श्वेतास्तमोवियुक्ताश्च ताम्राख्याः ॥३॥
कृष्णाः श्वेताः पीताः सशर्कराः पारलौकिका विषमाः ।
न स्थूला नात्यल्पा नवनीतनिभाश्च सौराष्ट्राः ॥४॥
ज्योतिष्मत्यः शुभ्रा गुरवोऽतिमहागुणाश्च पारशवाः ।
लघु जर्जरं दधिनिभं बृहद् द्विसंस्थानमपि हैमम् ॥५॥
विषमं कृष्णश्वेतं लघु कौबेरं प्रमाणतेजोवत् ।
निम्बफलत्रिपुटधान्यकचूर्णाः स्युः पाण्ड्यवाटभवाः ॥६॥

भाषा—अनेक आकार-प्रकार वाले कोमल, हंस के सदृश श्वेत और स्थूल मोती सिंहलक देश में; कुछ लाल, श्वेत, और निर्मल मोती ताम्रपर्णी नदी में; कृष्ण, श्वेत, पीत, कंकड़ युक्त और विषम मोती परलोक देश में; न बहुत मोटे और न बहुत छोटे और मक्खन के सदृश आभा वाले मोती सौराष्ट्र देश में; तेजस्वी, श्वेत, भारयुक्त और महागुणवान् मोती पारशव देश में; छोटे-छोटे, जर्जर, दधि के सदृश आभा युक्त, बड़े और उत्तम आकार वाले मोती हिम देश में; विषम, कृष्ण, श्वेत, भारहीन और अत्यन्त तेजोमय मोती कौबेर देश में तथा निम्ब फल के समान, तीन पुटों वाले, धान्याक चूर्ण के सदृश और अत्यन्त सूक्ष्म मोती पाण्ड्यवाटव देश में पाये जाते हैं॥३-६॥

मोतियों की विशेषताओं का कथन

अतसीकुसुमश्यामं वैष्णवमैन्द्रं शशाङ्कसङ्काशम् ।
हरितालनिभं वारुणमसितं यमदैवतं भवति ।।७।।
परिणतदाडिमगुलिकागुञ्जाताम्रं च वायुदैवत्यम् ।
निर्धूमानलकमलप्रभं च विज्ञेयमाग्नेयम् ।।८।।

भाषा—अलसी पुष्प के सदृश श्यामवर्ण के मोतियों का देवता विष्णु; चन्द्र-सी आभा युक्त मोतियों का देवता इन्द्र; हरिताल के सदृश मोतियों का देवता वरुण; कृष्ण वर्ण के मोतियों का देवता यम; परिपक्व अनार बीज अथवा चोंटली के सदृश लालवर्ण युक्त मोतियों का देवता वायु तथा धूआँ रहित अग्नि अथवा कमल के सदृश आभा युक्त मोतियों का देवता अग्नि को जानना चाहिए।।७-८।।

मोतियों के मूल्य परिज्ञानार्थ कथन

माषकचतुष्टयधृतस्यैकस्य शताहता त्रिपञ्चाशत् ।
कार्षापणा निगदिता मूल्यं तेजोगुणयुतस्य ।।९।।
माषकदलहान्यातो द्वात्रिंशद्विंशतिस्त्रयोदश च ।
अष्टौ च शतानि शतत्रयं त्रिपञ्चाशता सहितम् ।।१०।।
पञ्चत्रिंशं शतमिति चत्वारः कृष्णला नवतिमूल्याः ।
सार्धास्तिस्रो गुञ्जाः सप्ततिमूल्यं धृतं रूपम् ।।११।।
गुञ्जात्रयस्य मूल्यं पञ्चाशद्रूपका गुणयुतस्य ।
रूपकपञ्चत्रिंशत्त्रयस्य गुञ्जार्धहीनस्य ।।१२।।

भाषा—तेजस्वी और गुणयुक्त चारमासे की एक मोती का मूल्य ५३०० कार्षापण कहा गया है। तथा चार मासे प्रमाण की मोती में आधा-आधा कमतर करने से क्रम से ३२००, २०००, १३००, ८००, ३५३ कार्षापण के समान मूल्य हो जाता है। इस प्रकार सार्ध तीन मासे के एक मोती का मूल्य ३२००, तीन मासे के एक मोती का मूल्य २०००, सार्ध दो मासे के एक मोती का मूल्य १३०० कार्षापण होते हैं। इस आधार पर एक मासे मोती का मूल्य १३५; पञ्च कृष्णला के समान मोती का मूल्य ९०, सार्ध तीन गुञ्जा के समान मोती का मूल्य ७०, तीन गुञ्जा मोती का मूल्य ५०, सार्ध दो गुञ्जा के समान मोती का मूल्य ३५ कार्षापण कहे गए हैं।।९-१२।।

अन्य प्रकार से मोतियों का मूल्यांकनार्थ कथन

पलदशभागो धरणं तद्यदि मुक्तास्त्रयोदश सुरूपाः ।
त्रिशती सपञ्चविंशा रूपकसङ्ख्या कृतं मूल्यम् ।।१३।।

षोडशकस्य द्विशती विंशतिरूपस्य सप्ततिः सशता।
यत्पञ्चविंशतिधृतं तस्य शतं त्रिंशता सहितम् ॥१४॥
त्रिंशत्सप्ततिमूल्यं चत्वारिंशच्छतार्धमूल्यं च।
षष्टिः पञ्चोना वा धरणं पञ्चाष्टकं मूल्यम् ॥१५॥
मुक्ताशीत्या त्रिंशच्छतस्य सा पञ्चरूपकविहीना।
द्वित्रिचतुःपञ्चशता द्वादशषट्पञ्चकत्रितयम् ॥१६॥

भाषा—पल का दशमांश एक धरण होता है। जब एक धरण तौल में तेरह सुन्दर रूप रूपवान् मोती चढ़ते हैं, तो उनका मूल्य ३२५ रूपये; जब एक धरण में सोलह मोती चढ़ते हों तो उनका मूल्य २०० रूपये; जब एक धरण पर बीस मोती चढ़ते हों, तो उनका मूल्य १७० रूपये; इसी प्रकार पच्चीस मोती चढ़ने पर मूल्य १३० रूपये; तीस मोती से ७० रूपये; चालीस मोतियों के चढ़ने पर ५० रूपये; पैंतालिस मोतियों के चढ़ने पर मूल्य ४० रूपये; अस्सी मोतियों के मूल्य ३० रूपये; सौ मातियों के मूल्य २५ रूपये, दो सौ मोतियों के मूल्य १२ रूपये, तीन सौ मोतियों के ६ रूपये, चार सौ मोतियों के मूल्य ५ रूपये तथा जब एक धरण तौल में पाँच सौ मोतियाँ चढ़ते हों, तो उनका मूल्य ३ रूपये मात्र जानना चाहिए॥१३-१६॥

नोट—यहाँ पर ५ रत्ती का एक माषा; सोलह माषे का एक कर्ष और चार कर्ष का एक पल तथा एक पल का दशवाँ भाग एक धरण माना जाता है॥१३-१६॥

एक धरणगत १३ आदि मोतियों की पिक्का आदि संज्ञा कथन

पिक्कापिच्चार्घार्घा रवकः सिक्थं त्रयोदशाद्यानाम्।
संज्ञाः परतो निगराश्चूर्णाश्चाशीतिपूर्वाणाम् ॥१७॥

भाषा—एक धरण गत १३ मोतियों के चढ़ने से उसकी पिक्का संज्ञा; मोतियों के चढ़ने से पिच्चा संज्ञा; पच्चीस मोतियों के चढ़ने से अर्धसंज्ञा; तीस मोतियों के चढ़ने से खक संज्ञा; चालीस मोतियों के चढ़ने से सिक्थ और एक धरण में पचपन मोतियों के चढ़ने से निगर संज्ञा तथा एक धरण में अस्सी से अधिक मोतियों के चढ़ने पर उनकी चूर्ण संज्ञा पूर्वाचार्यों ने कही है॥१७॥

मोतियों के उपरोक्त मूल्यांकन की समीक्षार्थ कथन

एतद्गुणयुक्तानां धरणधृतानां प्रकीर्तितं मूल्यम्।
परिकल्प्यमन्तराले हीनगुणानां क्षयः कार्यः ॥१८॥
कृष्णश्वेतकपीतकताम्राणामीषदपि च विषमाणाम्।
त्र्यंशोनं विषमकपीतयोश्च षड्भागदलहीनम् ॥१९॥

माया—इस प्रकार यहाँ तेजगुण युक्त एक धरण मोतियों के मूल्यों का वर्णन किया गया है। यदि इसके बीच का परिमाण और मूल्य ज्ञात करना हो, तो उसे त्रैराशिक से हानि-वृद्धि कर ज्ञात कर लेनी चाहिए। यहाँ गुण रहित मोतियों के मूल्य में वक्ष्यमाण विधि से कमी को ज्ञात कर लेनी चाहिए।

कुछ कृष्ण, कुछ श्वेत, कुछ पीत, कुछ रक्त और कुछ विषम मोतियों का तीसरा भाग कम कर उपरोक्त मूल्य के समान मूल्य समझना चाहिए। वहीं विषम और पीत वर्ण मोतियों का छठा भाग कम कर उपरोक्त मूल्य के समान मूल्य जानना चाहिए॥१८-१९॥

गजमुक्ता फल के लक्षणों का कथन

ऐरावतकुलजानां पुष्यश्रवणेन्दुसूर्यदिवसेषु।
ये चोत्तरायणभवा ग्रहणेऽर्केन्द्वोश्च भद्रेभाः ॥२०॥
तेषां किल जायन्ते मुक्ताः कुम्भेषु सरदकोशेषु।
बहवो बृहत्प्रमाणा बहुसंस्थानाः प्रभायुक्ताः ॥२१॥
नैषामर्घः कार्यो न च वेधोऽतीव ते प्रभायुक्ताः।
सुतविजयारोग्यकरा महापवित्रा धृता राज्ञाम् ॥२२॥

माया—ऐरावत कुलोत्पन्न भद्रसंज्ञक जिन हाथियों ने पुष्य या श्रवण नक्षत्र में सोम या रविवार में, सूर्य के उत्तरायण काल में तथा सूर्य अथवा चन्द्र के ग्रहण के समय में जन्म लिया हो, उन हाथियों के दन्तकोषों और कुम्भों में बड़े-बड़े, विविध प्रकार के और कान्ति सम्पन्न बहुत-सारे मोतियों की प्राप्ति होती है। वे अमूल्य हैं। अत: न उनका मूल्य करना चाहिए और न किसी प्रकार से इनमें छिद्र करने की कोई चेष्टा करनी चाहिए। उन कान्ति सम्पन्न और महापवित्र मोतियों को धारण करने वाले राजजनों को पुत्र, विजय और आरोग्य का सुख लाभ होता रहता है॥२०-२२॥

वराह और मत्स्य से उत्पन्न मोती लक्षण कथन

दंष्ट्रामूले शशिकान्तिसप्रभं बहुगुणं च वाराहम्।
तिमिजं मत्स्याक्षिनिभं बृहत् पवित्रं बहुगुणं च ॥२३॥

माया—वराह के दन्तमूल में चन्द्र कान्ति के समान प्रभायुक्त, बहुत-से गुणों से युक्त वराहजमुक्मा फल (मोती) स्थित होता है। यहाँ से उसे प्राप्ति करते हैं तथा मकर या मत्स्य से मत्स्य नेत्र की तरह द्युतिमान् , बहुत-से गुणों से युक्त, स्थूल और पवित्र मत्स्यजमुक्ता (मोती) प्राप्त होता है॥२३॥

मेघोत्पन्न मुक्ताफल का लक्षण कथन

वर्षोपलवज्जातं वायुस्कन्धाच्च सप्तमाद् भ्रष्टम्।
ह्रियते किल खाद् दिव्यैस्तडित्प्रभं मेघसम्भूतम् ॥२४॥

भाषा—वर्षाकाल में उपल (ओला) के समान, मेघ से उत्पन्न, विद्युत् की तरह चमकदार और सप्तम वायु स्कन्ध से गिरा हुआ तथा आकाश से गिर रहे मोती आकाशस्थ, देवयोनिगत जनों के द्वारा आकाश में ही हरण कर लिया जाता है॥२४॥

नागज मुक्ताफल (मोती) का लक्षण और पहचान विधि कथन

तक्षकवासुकिकुलजाः कामगमा ये च पन्नगास्तेषाम् ।
स्निग्धा नीलद्युतयो भवन्ति मुक्ताः फणस्यान्ते ॥२५॥
शस्तेऽवनिप्रदेशे रजतमये भाजने स्थिते च यदि ।
वर्षति देवोऽकस्मात् तज्ज्ञेयं नागसम्भूतम् ॥२६॥

भाषा—तक्षक और वासुकि नाग के कुल में उत्पन्न हुए स्वेच्छाचारी जो सूर्य हैं, उनके फणों के अग्रभाग में नीली द्युति और निर्मल मोती स्थित होता है। उसे वहीं से प्राप्त किया जा सकता है।नागज मुक्ताफल को श्रेष्ठ-पवित्र भूमि पर चाँदी के पात्र में रख देने से अकस्मात् वर्षा होने लगती है, तो इस प्रकार नागज मोती की पहचान हो जाती है॥२५-२६॥

नागज मुक्ताफल का विशेषताओं का कथन

अपहरति विषमलक्ष्मीं क्षपयति शत्रून् यशो विकाशयति ।
भौजङ्गं नृपतीनां धृतमकृतार्घं विजयदं च ॥२७॥

भाषा—नागजमुक्ता फल (मोती) को विना मोल-तोल का हासिल कर धारण करने से राजाजनों के विष और अलक्ष्मी का हरण करता हुआ शत्रुओं में भय उत्पन्न करता है तथा उसके (धारण करने वाले राजाजनों) के यश का विस्तार करता हुआ उसे विजय भी दिलाता है॥२७॥

वेणु (बाँस) और शङ्ख से उत्पन्न मुक्ताफल का लक्षण कथन

कर्पूरस्फटिकनिभं चिपिटं विषमं च वेणुजं ज्ञेयम् ।
शङ्खोद्भवं शशिनिभं वृत्तं भ्राजिष्णु रुचिरं च ॥२८॥

भाषा—बाँस से प्राप्त होने वाले मोती कर्पूर अथवा स्फटिक की तरह कान्ति सम्पन्न, चिपटा और विषम होते हैं तथा शंख से उत्पन्न मोती चन्द्र कान्ति के समान कान्ति वाले गोलाकार, चमकदार और मनोहर होता है॥२८॥

मुक्ताफलों की अमूल्यता प्रदर्शनार्थ कथन

शङ्खतिमिवेणुवारणवराहभुजगाभ्रजान्यवेध्यानि ।
अमितगुणत्वाच्चैषामर्घः शास्त्रे न निर्दिष्टः ॥२९॥

भाषा—शङ्ख, मत्स्य, वेण, गज, वराह, नाग, मेघ आदि से उत्पन्न और प्राप्त मुक्ताफलों (मोतियों) में छिद्र करना सम्भव नहीं होता है तथा इनके अमित विशेषताओं

के कारण शास्त्रों में भी इनका मूल्यांकन नहीं किया गया है, क्योंकि वे अमूल्य सम्पदा हैं।।२९।।

मुक्ताफल धारण के लाभ परिज्ञानार्थ कथन

एतानि सर्वाणि महागुणानि सुतार्थसौभाग्ययशस्कराणि ।
रुक्शोकहन्तृणि च पार्थिवानां मुक्ताफलानीप्सितकामदानि ।।३०।।

माया—वे सभी मुक्ताफल महागुण सम्पन्न होने से ही राजाओं के पुत्र, धन, सौभाग्य और यश को बढ़ाने वाले तथा रोग और शोक का हरण करने वाले और मनोभिलषित कामों को पूर्ण करने वाले होते हैं।।३०।।

मुक्ता निर्मित आभूषणों की संज्ञा परिज्ञानार्थ कथन

सुरभूषणं लतानां सहस्रमष्टोत्तरं वतुर्हस्तम् ।
इन्दुच्छन्दो नाम्ना विजयच्छन्दस्तदर्धेन ।।३१।।
शतमष्टयुतं हारो देवच्छन्दो ह्यशीतिरेकयुता ।
अष्टाष्टकोऽर्धहारो रश्मिकलापश्च नवषट्कः ।।३२।।
द्वात्रिंशता तु गुच्छो विंशत्या कीर्तितोऽर्धगुच्छाख्यः ।
षोडशभिर्माणवको द्वादशभिश्चार्धमाणवकः ।।३३।।
मन्दरसंज्ञोऽष्टाभिः पञ्चलता हारफलकमित्युक्तम् ।
सप्ताविंशतिमुक्ता हस्तो नक्षत्रमालेति ।।३४।।
अन्तरमणिसंयुक्ता मणिसोपानं सुवर्णगुलिकैर्वा ।
तरलकमणिमध्यं तद्विज्ञेयं चाटुकारमिति ।।३५।।
एकावली नाम यथेष्टसङ्ख्या हस्तप्रमाणा मणिविप्रयुक्ता ।
संयोजिता या मणिना तु मध्ये यष्टीति सा भूषणविद्भिरुक्ता ।।३६।।

माया—एक हज़ार आठ लड़ी युक्ता माला की लम्बाई चार हाथ होने से उसका नाम इन्दुच्छन्द है, यह देवी-देवताओं के आभूषण के रूप में ही प्रयुक्त होता है। पाँच सौ चार लड़ी युक्ता माला की लम्बाई दो हाथ होने पर उसका नाम विजयच्छन्द; एक सौ आठ लड़ी युक्ता माला देवच्छन्द हार होता है। चौसठ लड़ी की माला का नाम अर्धहार है। चौवन लड़ी की माला का नाम रश्मिकलाप है। ३२ लड़ी वाली माला का नाम गुच्छ है। २० लड़ी की माला अर्द्धगुच्छ कहलाती है। १६ लड़ी वाली माणवक, १२ लड़ी वाली अर्द्धमाणवक हार, ८ लड़ी की माला का नाम मन्दा, ५ लड़ी का माला की नाम फलक है। सत्ताईस मोतियों की माला की लम्बाई एक हाथ

होने पर वह नक्षत्र माला कहलाती है। उपरोक्त एक हाथ लम्बी माला के बीच में मणि या स्वर्ण की गुलिका लगाई गई हो, तो उसको मणि सोपान तथा हेम निबद्ध मणि लगाई गई हो, तो उसे चाटुकार कहा जाता है। यथेष्ठ मोतियों से युक्त एक हाथ लम्बी मध्यमणि रहित माला एकावली और मध्यमणि युक्त माला को यष्टि नाम आभूषण लक्षणज्ञों ने दिया है॥३१-३६॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां मुक्तालक्षणनिरूपणं नामैकाशीतितमोऽध्यायः ॥८१॥

□□□

अथ द्व्यशीतितमोऽध्यायः-८२

पद्मरागलक्षणनिरूपणम्

सर्वप्रथम पद्मरागों की उत्पत्ति लक्षण कथन

सौगन्धिककुरुविन्दस्फटिकेभ्यः पद्मरागसम्भूतिः ।
सौगन्धिकजा भ्रमराञ्जनाब्जजम्बूरसद्युतयः ॥१॥

कुरुविन्दभवाः शबला मन्दद्युतयश्च धातुभिर्विद्धाः ।
स्फटिकभवा द्युतिमन्तो नानावर्णा विशुद्धाश्च ॥२॥

भाषा—सौगन्धिक, कुरुविन्द और स्फटिक; इन्हीं तीन प्रकार के पाषाणों से पद्मराग (लाल) उत्पन्न होता है। सौगन्धिक पाषाणों से उत्पन्न पद्मराग भ्रमर, अञ्जन, मेघ अथवा जामुन के रस की तरह कान्ति सम्पन्न होते हैं। कुरुविन्द पाषाणों से उत्पन्न पद्मराग विविध वर्ण युक्त, मन्द कान्ति सम्पन्न और धातुओं से विद्ध होते हैं। स्फटिक पाषाणों से उत्पन्न पद्मराग कान्ति सम्पन्न, विविध वर्ण युक्त और परिशुद्ध होते हैं॥१-२॥

पद्मराग के गुणों के परिज्ञानार्थ कथन

स्निग्धः प्रभानुलेपी स्वच्छोऽर्चिष्मान् गुरुः सुसंस्थानः ।
अन्तःप्रभोऽतिरागो मणिरत्नगुणाः समस्तानाम् ॥३॥

भाषा—निर्मल, स्वप्रभा से प्रदीप्त, स्वच्छ, कान्ति सम्पन्न, भारयुक्त, सुन्दर आकृति वाले, मध्यमभाग कान्ति सम्पन्न, विविध वर्णों से युक्त तथा समस्त पद्मराग मणियों में श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न होता है॥३॥

पद्मराग के दोषों के परिज्ञानार्थ कथन

कलुषा मन्दद्युतयो लेखाकीर्णाः सधातवः खण्डाः ।
दुर्विद्धा न मनोज्ञाः सशर्कराश्चेति मणिदोषाः ॥४॥

भाषा—कलुष अर्थात् मलिन कान्ति युक्त, रेखाओं से आच्छादित, मृत्तिका आदि धातुओं से युक्त, खण्डित, छिद्रों वाले, असुन्दर, कंकरों से युक्त आदि होना इनके दोष कहे हैं॥४॥

सर्प (नाग) मणि लक्षण परिज्ञानार्थ कथन

भ्रमरशिखिकण्ठवर्णो दीपशिखासप्रभो भुजङ्गानाम् ।
भवति मणिः किल मूर्धनि योऽनर्घेयः स विज्ञेयः ॥५॥

भाषा—भ्रमर अथवा मयूर कण्ठ की तरह वर्ण युक्त, दीपशिखा की तरह दीप्तिमान् अमूल्य मणि सर्पों के मस्तक से उत्पन्न होता है॥५॥

मणियों के प्रभाव परिज्ञानार्थ कथन

यस्तं बिभर्ति मनुजाधिपतिर्न तस्य
दोषा भवन्ति विषरोगकृताः कदाचित् ।

राष्ट्रे च नित्यमभिवर्षति तस्य देवः
शत्रूंश्च नाशयति तस्य मणेः प्रभावात् ।।६।।

माया—जो भी राजा उस अमूल्य मणि को धारण करता है, उसको कथमपि विष अथवा रोग से होने वाले दोष नहीं होते हैं। उसके राज्य में सदैव इन्द्र वर्षा करते रहते हैं तथा वह राजा मणि प्रभाव से शत्रुओं को विनष्ट भी करता रहता है।।६।।

पद्मराग मणि का मूल्य निर्धारणार्थ कथन

षड्विंशतिः सहस्राण्येकस्य मणेः पलप्रमाणस्य ।
कर्षत्रयस्य विंशतिरुपदिष्टा पद्मरागस्य ।।७।।

अर्धपलस्य द्वादश कर्षस्यैकस्य षट्सहस्राणि ।
यच्चाष्टमाषकधृतं तस्य सहस्त्रत्रयं मूल्यम् ।।८।।

माषकचतुष्टयं दशशतक्रयं द्वौ तु पञ्चशतमूल्यौ ।
परिकल्प्यमन्तराले मूल्यं हीनाधिकगुणानाम् ।।९।।

वर्णन्यूनस्यार्द्धं तेजोहीनस्य मूल्यमष्टांशम् ।
अल्पगुणो बहुदोषो मूल्यात् प्राप्नोति विंशांशम् ।।१०।।

आधूम्रं व्रणबहुलं स्वल्पगुणं चाप्नुयाद् द्विशतभागम् ।
इति पद्मरागमूल्यं पूर्वाचार्यैः समुद्दिष्टम् ।।११।।

माया—एक पल के समान पद्मराग का मूल्य २६००० रूपये, तीन कर्ष के समान पद्मराग का मूल्य २०००० रूपये कहा गया है। आधा पल के समान पद्मराग का मूल्य १२००० रूपये, एक कर्ष के समान पद्मराग का मूल्य ६००० रूपये, आठ माषे पद्मराग का मूल्य ३००० रूपये चार माषे पद्मराग का मूल्य १००० रूपये और दो माषे पद्मराग का मूल्य ५०० रूपये कहे गए हैं। अकल्पित परिमाण या बीच में पद्मराग के गुणों की न्यूनाधिकता का विचार करते हुए मूल्य की कल्पना कर लेनी चाहिए। अल्पवर्ण के पद्मराग का मूल्य उपरोक्त का आधा, तेजहीन पद्मराग का मूल्य अष्टमांश, अल्पगुणयुक्त, अतिदोष युक्त आदि पद्मराग का मूल्य बीसवाँ भाग और कुछ-कुछ धूम्रवर्ण युक्त, अति छिद्र वाले और अल्प गुणों वाले पद्मराग का मूल्य दो सौ भाग आचार्यों ने कहा है। इस प्रकार से पूर्वाचार्यों ने पद्मराग सम्बन्धी मूल्य का विधिवद् वर्णन किया है।।७-११।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-
ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां
पद्मरागलक्षणनिरूपणं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ।।८२।।

□□□

अथ त्र्यशीतितमोऽध्यायः-८३

मरकतलक्षणनिरूपणम्

मरकत का प्रयोजन और लक्षण परिज्ञानार्थ कथन

शुकवंशपत्रकदलीशिरीषकुसुमप्रभं गुणोपेतम् ।
सुरपितृकार्ये मरकतमतीव शुभदं नृणां विहितम् ।।१।।

माया—तोता, बाँस का पत्ता, केला अथवा शिरीष के पुष्प की तरह कान्ति सम्पन्न मरकत (पन्ना) को देवता अथवा पितर के कार्यों के अवसरों पर धारण करने से अत्यधिक शुभफल की प्राप्ति होती है।।१।।

**।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थ-
सहरसामण्डलदोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा
संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां
मरकतलक्षणनिरूपणं नाम
त्र्यशीतितमोऽध्यायः ।।८३।।**

□□□

अथ चतुरशीतितमोऽध्यायः-८४

दीपलक्षणविचारः

सर्वप्रथम दीपक के अशुभ लक्षण और उसका फल कथन

वामावर्तो मलिनकिरणः सस्फुलिङ्गोऽल्पमूर्तिः
क्षिप्रं नाशं व्रजति विमलस्नेहवर्त्यन्वितोऽपि।
दीपः पापं कथयति फलं शब्दवान् वेपनश्च
व्याकीर्णार्चिर्विशलभमरुद्यश्च नाशं प्रयाति ॥१॥

माया—जिस-किसी दीपक की शिखा वामावर्त्त क्रम से घूमता हो, मलिन किरणों वाली हो, जिनमें चिनगारियाँ निकलती हो, छोटी शिखा (लौ) हो, निर्मल तेल और बर्त्ति से सम्पन्न होकर भी शीघ्र बुझ जाती हो, शब्द करती हो, कम्पन करती हो, बिखरे-सी किरणों वाली हो, विना किसी प्रकार के शलभ (कीट-पतङ्गों) के गिरे अथवा विना वायु के चले ही बुझ जाती हो आदि लक्षणों से युक्त दीपक अशुभ फल दायक होता है॥१॥

अब दीपक के शुभ लक्षण और उसका फल कथन

दीपः संहतमूर्तिरायततनुर्निर्वेपनो दीप्तिमान्
निःशब्दो रुचिरः प्रदक्षिणगतिर्वैदूर्यहेमद्युतिः।
लक्ष्मीं क्षिप्रमभिव्यनक्ति सुचिरं यश्चोद्यतं दीप्यते
शेषं लक्षणमग्निलक्षणसमं योज्यं यथायुक्तितः ॥२॥

माया—जुड़ी हुई शिखा वाली, दीर्घ मूर्त्ति वाला, कम्पन हीन शिखा वाली, कान्ति सम्पन्न, शब्दों से हीन, दक्षिणावर्त्त क्रम से घूमती शिखा वाला, वैदूर्य मणि अथवा स्वर्ण के सदृश ज्योति वाला, अधिक देर तक निरन्तर प्रज्वलित रहने वाला दीपक शीघ्रतर बहुत-सी लक्ष्मी (धन) के आगमन को अधिसूचित करता है। अन्यान्य लक्षण अग्निलक्षण के सदृश यहाँ विचारना चाहिए॥२॥

॥ इति वाराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां दीपलक्षणविचारोनाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥८४॥

□□□

अथ पञ्चाशीतितमोऽध्यायः-८५

दन्तकाष्ठलक्षणविचारः

सर्वप्रथम दन्तकाष्ठ का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

वल्लीलतागुल्मतरुप्रभेदैः स्युर्दन्तकाष्ठानि सहस्रशो यैः ।
फलानि वाच्यान्यथ तत्प्रसङ्गो मा भूदतो वच्म्यथ कामिकानि ।।१।।

माया—वल्ली, लता, गुल्म और वृक्षों के भेद से हजारों प्रकार के दन्तवन (दाँतुन) होते हैं, उनसे सम्भव फल कथन को अधिक न विस्तारित कर मात्र अभीष्ट फलदायक दन्तवन को कहा जा रहा है।।१।।

त्याज्य दन्तवन परिज्ञानार्थ कथन

अज्ञातपूर्वाणि न दन्तकाष्ठान्यद्यात्र पत्रैश्च समन्वितानि ।
न युग्मपर्वाणि न पाटितानि न चोर्ध्वशुष्काणि विना त्वचा च ।।२।।

माया—परिचय रहित, पत्तों से सम्पन्न, युग्म पर्व युक्त, फटा-फटा-सा, वृक्ष पर ही सूख गया हो और त्वचा से हीन; इन लक्षणों वाले दन्त काष्ठों का दन्तधावन के लिए उपयोग नहीं करना चाहिए।।२।।

विविध वृक्षों के दन्तवन का फल कथन

वैकङ्कतश्रीफलकाश्मरीषु ब्राह्मी द्युतिः क्षेमतरौ सुदाराः ।
वृद्धिर्वटेऽर्के प्रचुरं च तेजः पुत्रा मधूके सगुणाः प्रियत्वम् ।।३।।

माया—वैकङ्कत, नारियल और काश्मरी वृक्ष के दन्तकाष्ठ से ब्राह्मी द्युति की प्राप्ति होती है। क्षेमवृक्ष का दन्तवन करने से श्रेष्ठ स्त्रीलाभ, वह वृक्ष का दन्तवन करने से संवृद्धि, आक वृक्ष का दन्तवन से अतितेज प्राप्ति, महुआ वृक्ष के दन्तवन से पुत्रप्राप्ति तथा अर्जुन वृक्ष के दन्तवन करने से जनप्रियता मिलती है।।३।।

शिरीष आदि वृक्षों के दन्तवन का फल कथन

लक्ष्मीः शिरीषे च तथा करञ्जे
प्लक्षेऽर्थसिद्धिः समभीप्सिता स्यात् ।
मान्यत्वमायाति जनस्य जात्यां
प्राधान्यमश्वत्थतरौ वदन्ति ।।४।।

माया—शिरीष और करञ्जक वृक्ष के दन्तकाष्ठ का दातुन के रूप में उपयोग करने से लक्ष्मी की प्राप्ति, प्लक्ष (पाकड़) वृक्ष के दातुन उपयोग करने से अभिलषित धन प्राप्ति के योग की सिद्धि, जाति (चमेली) पुष्प के वृक्ष का दातुन करने से मामा

की प्राप्ति तथा पीपल वृक्ष का दन्त धावन करने से समाज या समूह में प्रधानता की प्राप्ति होती है।।४।।

वदरी (वेद) आदि वृक्ष के दातुन प्रयोग का फल कथन

आरोग्यमायुर्बदरीबृहत्योरैश्वर्यवृद्धिः खदिरे सबिल्वे।
द्रव्याणि चेष्टान्यतिमुक्तके स्युः प्राप्नोति तान्येव पुनः कदम्बे ।।५।।

माया—बेर और कटेरी के दन्तकाष्ठ प्रयोग से आरोग्य और आयु; बेल और खदिर (खैर) वृक्ष के दन्तकाष्ठ प्रयोग से ऐश्वर्य की अभिवृद्धि, अतिमुक्तक (तेन्दुआ) वृक्ष के दातुन प्रयोग से सम्पूर्ण अभीष्ट द्रव्य लाभ तथा कदम्ब वृक्ष के दातुन करने से भी सम्पूर्ण अभीष्ट द्रव्य लाभ होता है।।५।।

नीम आदि वृक्ष के दातुन प्रयोग का फल कथन

नीपेऽर्थाप्तिः करवीरेऽन्नलब्धिर्भाण्डीरे स्यादन्नमेवं प्रभूतम्।
शम्यां शत्रूनपहन्त्यर्जुने च श्यामायां च द्विषतामेव नाशः ।।६।।

माया—नीम के दातुन प्रयोग करने से धनलाभ, करवीर (कनेर) के दातुन से अन्नप्राप्ति, भाण्डीर वृक्ष का दन्त धावन प्रयोग से पूर्ववत् अधिक अन्न प्राप्ति; शमीवृक्ष के दातुन से शत्रुनाश करने वाला, अर्जुन वृक्ष के दातुन प्रयोग से भी शत्रुओं का नाशक तथा श्याम वृक्ष का दन्तवन प्रयोग से शत्रुओं को परास्त करने वाला होता है।।६।।

शाल आदि वृक्षों के दातुन का फल कथन

शालेऽश्वकर्णे च वदन्ति गौरवं सभद्रदारावपि चाटरूषके।
वाल्लभ्यमायाति जनस्य सर्वतः प्रियङ्ग्वपामार्गसजम्बुदाडिमैः ।।७।।

माया—शाल और अश्वकर्ण का दातुन करने से आत्म सम्मान में वृद्धि करने वाला; देवदारु और वासिका (बाँस) का दातुन प्रयोग से सन्मान वृद्धि करने वाला तथा प्रियंगु, अपामार्ग, जामुन और दाडिम वृक्ष के दन्तवन करने से चारों ओर से जनप्रियता की प्राप्ति होती है।।७।।

दातुन प्रयोग करने के विधान कथन

उदङ्मुखः प्राङ्मुख एव वाब्दं कामं यथेष्टं हृदये निवेश्य।
अद्यादनिन्दन् च सुखोपविष्टः प्रक्षाल्य जह्याच्च शुचिप्रदेशे ।।८।।

माया—उत्तर या पूर्व दिशा की ओर मुखकर के सुखासन में बैठकर वार्षिक अभिलाषा को हृदय में स्मरण करते हुए तदनुसार विहित या अपेक्षित काष्ठ का दातुन करना चाहिए। उसके बाद दातुन को धोकर स्वच्छ या पवित्र स्थान में छोड़ देना चाहिए।।८।।

प्रयुक्त दातुन से शुभाशुभ फल कथन

अभिमुखपतितं प्रशान्तदिक्स्थं शुभमतिशोभनमूर्ध्वसंस्थितं यत् ।
अशुभकरमतोऽन्यथा प्रदिष्टं स्थितपतितं च करोति मृष्टमन्नम् ।।९।।

माया—जिस ओर से दातुन को मुख में लिया गया था, उसी ओर से फेंकने के बाद प्रशान्त दिशा में जाकर गिरता हो, तो शुभ, वह यदि खड़ा हो जाय, तो अति शुभ और उल्टा होकर गिरे, तो अशुभ और खड़ा होकर गिर जाय, तो मिष्ठान्न लाभ होता है।।९।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां दन्तकाष्ठलक्षणविचारो नाम पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ।।८५।।

□□□

अथ षडशीतितमोऽध्यायः-८६

शाकुने-मिश्रफलविचारः

सर्वप्रथम शाकुन का आगम प्रदर्शनार्थ कथन

यच्छक्रशुक्रवागीशकपिष्ठलगरुत्मताम् ।
मतेभ्यः प्राह ऋषभो भागुरेर्देवलस्य च ॥१॥
भारद्वाजमतं दृष्ट्वा यच्च श्रीद्रव्यवर्धनः ।
आवन्तिकः प्राह नृपो महाराजाधिराजकः ॥२॥
सप्तर्षीणां मतं यच्च संस्कृतं प्राकृतञ्च यत् ।
यानि चोक्तानि गर्गाद्यैर्यात्राकारैश्च भूरिभिः ॥३॥
तानि दृष्ट्वा चकारेमं सर्वशाकुनसंग्रहम् ।
वराहमिहिरः प्रीत्या शिष्याणां ज्ञानमुत्तमम् ॥४॥

भाषा—इन्द्र, शुक्र, बृहस्पति, मुनि कपिष्ठल, गरुड़, भागुरि, देवल आदि के प्रतिपादित मतों का अवलोकन कर आचार्य ऋषभ ने और भारद्वाज मुनि के मत का अवलोकन कर उज्जयिनी के महाराजाधिराज आचार्य द्रव्यवर्द्धन ने जैसा कुछ कहा उसको तथा संस्कृत व प्राकृत भाषा में सप्तर्षियों का जैसा मत है, उसको और गर्ग आदि यात्राकारियों ने भी जैसा कहा है, उसको; इन समस्त मतों और कथनों का अध्ययन कर वराहमिहिर ने शिष्यजनों के हित साधन की कामना से श्रेष्ठतर ज्ञान से सम्पन्न सार-संक्षेप रूप शकुन सम्बन्धि विषयों का संकलन किया है॥१-४॥

शाकुन का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

अन्यजन्मान्तरकृतं कर्म पुंसां शुभाशुभम् ।
यत्तस्य शकुनः पाकं निवेदयति गच्छताम् ॥५॥

भाषा—मनुष्यों द्वारा जन्म-जन्मान्तरों से सम्पादित शुभाशुभ कर्म के फल स्वरूप शुभाशुभ फल का गमन समय से सम्बन्धित शाकुन को प्रकट करता है॥५॥

शाकुनों के भेद प्रदर्शनार्थ कथन

ग्रामारण्याम्बुभूव्योमद्युनिशोभयचारिणः ।
रुतयातेक्षितोक्तेषु ग्राह्याः पुंस्त्रीनपुंसकाः ॥६॥

भाषा—ग्रामवासी, वनचर, जलचर, भूचर, खेचर, दिनचर, रात्रिचर उभयचर आदि प्राणियों के शब्द, गति, दृष्टि, उक्ति आदि से पुरुष, स्त्री और नपुंसक को लेना चाहिए॥६॥

शाकुन कारकों का साधारण लक्षण कथन

पृथग् जात्यनवस्थानादेषां व्यक्तिर्न लक्ष्यते ।
सामान्यलक्षणोद्देशे श्लोकावृषिकृताविमौ ॥७॥

माया—अलग जाति और अनवस्था के कारण इन प्राणियों में व्यक्तिगत पुरुष, स्त्री, नपुंसक आदि भेद होने का स्पष्ट युक्ति का अभाव परिलक्षित होता है। अतएव ऋषि मुनियों ने दो श्लोकों में आगे इसके परिज्ञानार्थ साधारण लक्षणों को बताये हैं॥७॥

प्राणियों के पुरुषादि संज्ञार्थ लक्षण कथन

पीनोन्नतविकृष्टांसाः पृथुग्रीवाः सुवक्षसः ।
स्वल्पगम्भीरविरुताः पुमांसः स्थिरविक्रमाः ॥८॥
तनूरस्कशिरोग्रीवाः सूक्ष्मास्यपदविक्रमाः ।
प्रसक्तमृदुभाषिण्यः स्त्रियोऽतोऽन्यत्रपुंसकम् ॥९॥

माया—स्थूल, उन्नत और विस्तीर्ण कंधो वाले, विशाल गर्दन वाले, सुन्दर छाती वाले, कुछ-कुछ गम्भीर स्वर वाले और स्थिर पराक्रम वाले प्राणि पुरुष संज्ञक शकुन हैं।

दुर्बल छाती, मस्तक और गर्दन वाले, छोटे मुख, पैर और विक्रम वाले तथा सदा मधुर स्वर करने वाले प्राणि स्त्री संज्ञक शकुन हैं।

तथा पुरुष व स्त्री संज्ञक प्राणियों के लक्षण अन्य मिश्रित जिस-किसी प्राणि में परिलक्षित हों, उन्हें नपुंसक संज्ञक शकुन समझना चाहिए॥८-९॥

शेष अन्य के लक्षणों को लोकव्यवहारतः संज्ञानार्थ कथन

ग्रामारण्यप्रचाराद्यं लोकादेवोपलक्षयेत् ।
सञ्चिक्षिप्सुरहं वच्मि यात्रामात्रप्रयोजनम् ॥१०॥

माया—उपरोक्त शाकुनों में से ग्रामवासी, वनवासी और उभयस्थान वासी शाकुनों को लोकव्यवहार के द्वारा ही समझना चाहिए। सार-संक्षेप में इसे व्यक्त करने की इच्छा से मैं (ग्रन्थकार) यात्रा काल में प्रयोजनशील शाकुन मात्र को कहने के लिए उद्यत हुआ हूँ॥१०॥

शाकुनफल घटित स्थलों का कथन

पथ्यात्मानं नृपं सैन्ये पुरे चोद्दिश्य देवताम् ।
सार्थे प्रधानं साम्ये स्याज्जातिविद्यावयोऽधिकम् ॥११॥

माया—मार्ग में यात्रा करने वाले व्यक्ति पर, सैन्यबलों में राजा पर, पुर में

देवता अर्थात् नगरस्वामी पर; जनसमूह के बीच मे प्रधान व्यक्ति पर, प्रधानों की साम्यता में जाति पर, जातियों की साम्यता में ज्ञान पर और ज्ञान की साम्यता में वयोधिक जन पर शाकुन फल घटित होता है।।११।।

दिशाओं के लक्षणों के नियमों का कथन

मुक्तप्राप्तैष्यदर्कासु फलं दिक्षु तथाविधम्।
अङ्गारदीप्तधूमिन्यस्ताश्च शान्तास्ततोऽपराः ।।१२।।

माया—सूर्योदय से एक प्रहर दिन निकलने तक ईशान कोण की संज्ञा मुक्तसूर्या, पूर्वदिशा प्राप्त सूर्या और आग्नेय कोण एष्यत् सूर्या होती है। दो प्रहर दिन निकल जाने पर पूर्वदिशा मुक्तसूर्या, आग्नेयीप्राप्त सूर्या और दक्षिण दिशा एष्यत् सूर्या होती है। तीन प्रहर दिन निकल जाने पर आग्नेयी मुक्त सूर्या, दक्षिणा प्राप्त सूर्या और नैर्ऋत्य एष्यत् सूर्या होती है। इसी प्रकार अन्यान्य दिशाओं के प्रसङ्ग में भी जानना चाहिए। अतएव मुक्तसूर्या दिशा अङ्गारिणी, प्राप्तसूर्या दीप्ता, एष्यत् सूर्या धूमिनी तथा शेष अन्य पाँच दिशाओं की शान्ता संज्ञा-विशेष कही गई हैं।।१२।।

दिशाओं में फलदान नियम कथन

तत्पञ्चमदिशां तुल्यं शुभं त्रैकाल्यमादिशेत्।
परिशेषदिशोर्वाच्यं यथासन्नं शुभाशुभम् ।।१३।।

माया—अङ्गारिणी दिशा से पाँचवीं शान्तदिशा में देखा गया शुभाशुभ शकुन का सम्पूर्ण फल भूत, दीप्ता दिशा से पाँचवीं शान्तदिशा में देखा गया शुभाशुभ शकुन का फल सम्पूर्ण वर्तमान और धूमिनी दिशा में पाँचवीं शान्तदिशा में देखा गया शुभाशुभ शकुन का सम्पूर्ण फल भविष्यत् काल में होता है। अवशिष्ट अन्य अङ्गारिणी से शान्त दिशा के पास की दिशाओं मे़ं और धूमिनी से शान्त दिशा के पास की दिशाओं में देखा हुआ शुभाशुभ शकुन का फल क्रमशः भूत और भविष्य काल में समझना चाहिए।।१३।।

और भी फल नियमार्थ कथन

शीघ्रमासन्ननिम्नस्थैश्चिरादुन्नतदूरगैः।
स्थानवृद्ध्युपघाताच्च तद्वद् ब्रूयात् फलं पुनः ।।१४।।

माया—आसन्न और अधःस्थ शाकुन का फल जल्दी तथा दूर और ऊर्ध्वस्थ शकुन का फल विलम्ब से होता है। वर्द्धनशील स्थान पर देखा गया शुभाशुभ शकुन का फल भी वृद्धि करने वाला और क्षरणशील स्थान पर देखा गया शुभाशुभ शकुन का फल भी क्षयित होने वाला होता है।।१४।।

दश प्रकार के दीप्त शकुन का लक्षण कथन

क्षणतिथ्युडुवातार्कैर्देवदीप्तो यथोत्तरम् ।
क्रियादीप्तो गतिस्थानभावस्वरविचेष्टितैः ।।१५।।

माया—क्षण, तिथि, नक्षत्र, वायु, सूर्य आदि के क्रम से उत्तरोत्तर दीप्त होने से ये देवदीप्त शकुन कहलाते हैं अर्थात् क्षण अर्थात् दारुण और उग्र नाम के नक्षत्र मुहूर्त्त में देखा जाने वाला शकुन क्षणदीप्त; तिथियों अर्थात् चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी आदि में देखा जाने वाला शकुन तिथि दीप्त; नक्षत्रों अर्थात् मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, श्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, मघा आदि में देखा जाने वाला शकुन नक्षत्रदीप्त, वात अर्थात् भयंकर, खर, कठोर, प्रतिलोम आदि वायु में देखा जाने वाला शकुन वायुदीप्त तथा सूर्याभिमुखस्थ शकुन सूर्यदीप्त हैं; इन पाँचों को देवदीप्त कहा गया है और ये सभी दीप्त अपनी स्थिति के क्रम से उत्तरोत्तर अधिक दीप्त होते हैं अर्थात् क्षणदीप्त से तिथिगत, तिथिदीप्त से नक्षत्रदीप्त, नक्षत्रदीप्त से वायुदीप्त और वायुदीप्त से सूर्यदीप्त अधिक दीप्त होता है तथा गति, स्थान, भाव, स्वर, चेष्टा आदि के क्रम से उत्तरोत्तर दीप्त होने से ये क्रिया दीप्त कहलाते हैं। इस प्रकार दीप्त शकुन के दश प्रकार हो जाते हैं।।१५।।

दशदीप्त शकुन के स्पष्टार्थ विशेष कथन

दशधैवं प्रशान्तोऽपि सौम्यस्तृणफलाशनः ।
मांसामेध्याशने रौद्रो विमिश्रोऽन्नाशनः स्मृतः ।।१६।।

माया—उपरोक्त क्षण आदि दश प्रकार के दीप्त शान्त शकुन हैं। इन शकुनों में तृण और फल का भक्षण करने वाला सौम्य शकुन; मांस और विष्ठा जैसी त्याज्य वस्तु का भक्षण करने वाला रौद्र शकुन तथा अन्न भक्षण करने वाला मिश्र अर्थात् न सौम्य और न रौद्र माने गए हैं।।१६।।

शुभस्थानस्थ शकुन का शुभ फल कथन

हर्म्यप्रासादमङ्गल्यमनोज्ञस्थानसंस्थिताः ।
श्रेष्ठा मधुरसक्षीरफलपुष्पद्रुमेषु च ।।१७।।

माया—राजप्रासाद, देवमन्दिर, शुभस्थान अर्थात् देवता, ब्राह्मण और गौओं से अध्यासित, मनोरम स्थान अर्थात् हरी घास और शीतल वृक्ष की छाया तथा मीठे फल वाले, दूध वाले, पुष्प वाले आदि वृक्ष; इन सभी स्थानों से दीखने वाले शकुन शुभ फल करने वाले होते हैं।।१७।।

शकुनों का उत्तरोत्तर बल कथन

स्वकाले गिरितोयस्था बलिनो द्युनिशाचराः ।
क्लीबस्त्रीपुरुषा ज्ञेया बलिनः स्युर्यथोत्तरम् ।।१८।।

भाषा—अपने काल में अर्थात् दिन में दिनचर शकुन, पर्वत के ऊपर स्थित शकुन, जल में जलचर शकुन, रात्रि में रात्रिचर शकुन, जल प्राय देश में स्थित हों, तो बलवान् होते हैं तथा नपुंसक से स्त्री और स्त्री से पुरुष जाति का शकुन बलवान् होते हैं॥१८॥

सबल और निर्बल शकुन कथन

जवजातिबलस्थानहर्षसत्त्वस्वरान्विताः ।
स्वभूमावनुलोमाश्च तदूनाः स्युर्विवर्जिताः ॥१९॥

भाषा—गति, जाति, बल, स्थान, हर्ष, सत्त्व, स्वर आदि से सम्पन्न शकुन अपनी भूमि में अनुलोम होने पर बलवान् होता है तथा इसके विपरीत गति आदि से हीन प्रतिलोम होने पर बलहीन होता है। अर्थात् जब भी दो या इससे अधिक शकुनों को देखा गया हो, तो गति, जाति, बल, स्थान, हर्ष, सत्त्व, स्वर; इनमें से जो भी बलवान् हो, उसके अनुसार ही शुभाशुभ फल जानना चाहिए। यहाँ पर अपने स्थान से अनुलोम गति वाले शकुन भी बलवान् होता है। इससे विपरीत होने पर निर्बल माने जाते हैं॥१९॥

जाति विभागवश पूर्वदिशा में बलवान् शकुन कथन

कुक्कुटेभपिरिल्यश्च शिखिवञ्जुलछिक्कराः ।
बलिनः सिंहनादश्च कूटपूरी च पूर्वतः ॥२०॥

भाषा—मुर्गा, गज, पिरिली अर्थात् पक्षी विशेष का नाम, मोर, वंजुल अर्थात् खदिरचञ्चु, छिक्कर, सिंहनाद (पक्षी) करायिका आदि सभी शकुन पूर्वदिशा में बलवान् होते हैं॥२०॥

जातिविभागवश दक्षिण दिशा में बलवान् शकुन कथन

क्रोष्टुकोलूकहारीतकाककोकर्क्षपिङ्गलाः ।
कपोतरुदिताक्रन्दक्रूरशब्दाश्च याम्यतः ॥२१॥

भाषा—क्रोष्टु (शृङ्गाल), उल्लू, हारीत (तोता), काग, चक्रवाक (चकवा-चकवी), भालू, पिङ्गला (पक्षी विशेष), कबूतर आदि और रोना, चिल्लाना, कठोर शब्द आदि सभी दक्षिण दिशा में बलवान् होते हैं॥२१॥

जाति विभागवश पश्चिम दिशा में बलवान् शकुन

गोशशक्रौञ्चलोमाशहंसोत्क्रोशकपिञ्जलाः ।
विडालोत्सववादित्रगीतहासाश्च वारुणाः ॥२२॥

माया—गौ, खरगोश, क्रौञ्चपक्षी, लोमड़ी, हंस, कुरब पक्षी, कपिञ्जल पक्षी, मार्जार आदि और विवाह आदि मङ्गलोत्सव, बाजे, गीत, हास्य आदि सभी पश्चिम दिशा में बलवान् होते हैं॥२२॥

जातिविभागवश उत्तर दिशा में बलवान् शकुन

शतपत्रकुरङ्गाखुमृगैकशफकोकिलाः ।
चाषशल्यकपुण्याहघण्टाशङ्खरवा उदक् ॥२३॥

माया—शतपत्र (दर्वाघाट पक्षी), हिरण, चूहा, मृग, अश्व, गधा, कोयल, चाष (नीलकंठ), बिलों में वास करने वाले जीव आदि और पुण्याह वाचन की ध्वनि, घण्टा, शंख आदि सभी उत्तर दिशा में बलवान् होते हैं॥२३॥

शकुनों का प्रतिवभागों का कथन

न ग्राम्योऽरण्यगो ग्राह्यो नारण्यो ग्राम्यसंस्थितः ।
दिवाचरो न शर्वर्यां न च नक्तञ्चरो दिवा ॥२४॥

माया—अरण्य (वन) में गाँव का शकुन, गाँव में वन का शकुन, रात्रि में दिन का शकुन और दिन में रात्रि का शकुन आदि जैसे शकुन ग्राह्य नहीं हैं॥२४॥

पुनः भी अग्राह्य शकुनों का कथन

द्वन्द्वरोगार्दितत्रस्ताः कलहामिषकाङ्क्षिणः ।
आपगान्तरिता मत्ता न ग्राह्याः शकुनाः क्वचित् ॥२५॥

माया—द्वन्द्व (भिन्न नर मादा का जोड़ा), रोग पीड़ित, भयभीत, कलहकारी, मांसाहारी, नदी के अन्य किनारे पर स्थित तथा ऋतुकाल में वशीभूत सदर्प शकुन कथमपि ग्राह्य नहीं है॥२५॥

शकुनों का ऋतुकालवश निष्फलत्व कथन

रोहिताश्वाजवालेयाः कुरङ्गोष्ट्रमृगाः शशः ।
निष्फलाः शिशिरे ज्ञेया वसन्ते काककोकिलौ ॥२६॥

माया—रोहित, मृग, बकरा, गधा, घोड़ा, हिरण, ऊँट, खरगोश से सम्बन्धित शकुन शिशिर ऋतु के काल में तथा कौआ, कोयल आदि सम्बन्धी शकुन को भी निष्फल जानना चाहिए॥२६॥

ऋतुवश अग्राह्य शकुनों के परिज्ञानार्थ कथन

न तु भाद्रपदे ग्राह्याः सूकरश्ववृकादयः ।
शारद्याब्जादगोक्रौञ्चाः श्रावणे हस्तिचातकौ ॥२७॥

भाषा—भाद्रपद मास में वराह, कुत्ता, भेड़िया, मृग आदि बिल में रहने वाला जन्तु, शरद् ऋतु में जल के आश्रय करने वाले पक्षी बगुला आदि, गाय, क्रौञ्च पक्षी आदि तथा श्रावण मास में हाथी और चातक का शकुन ग्राह्य नहीं है॥२७॥

हेमन्त काल में अग्राह्य शकुन कथन

व्याघ्रर्क्षवानरद्वीपिमहिषाः सबिलेशयाः ।
हेमन्ते निष्फला ज्ञेया बालाः सर्वे विमानुषाः ॥२८॥

भाषा—व्याघ्र, भालू, बन्दर, चीता, भैंसा, सर्प, बालक, सभी विकृत मनुष्य आदि शकुन हेमन्त ऋतु के समय निष्फल होता है॥२८॥

द्विर्त्रिशद् विभागात्मक दिग्भागों में पूर्वादि दिग्भागों का कथन

ऐन्द्रानलदिशोर्मध्ये त्रिभागेषु व्यवस्थिताः ।
कोशाध्यक्षानलाजीवितपोयुक्ताः प्रदक्षिणम् ॥२९॥

भाषा—पूर्वदिशा और अग्निकोण के मध्य के विभागों में प्रदक्षिण क्रम से कोशाध्यक्ष, अग्निजीवी, तपस्वी आदि तीनों स्थित माने गये हैं॥२९॥

अग्निकोणादि दिशाओं के मध्यस्थ त्रिभागों का कथन

शिल्पी भिक्षुविवस्त्रा स्त्री याम्यानलदिगन्तरे ।
परतश्चापि मातङ्गगोपधर्मसमाश्रयाः ॥३०॥

भाषा—अग्निकोण और दक्षिण दिशा के मध्य स्थित त्रिभाग में क्रम से राजमिस्त्री, भिक्षुक, नग्ना स्त्री आदि तीन स्थित हैं। दक्षिण दिशा और नैर्ऋत्य कोण के मध्यस्थित त्रिभाग में क्रम से गज, गोपालक, धर्म का आश्रयण करने वाले जन स्थित हैं॥३०॥

नैर्ऋत्यकोणादि दिशाओं के मध्यस्थ त्रिभागों का कथन

नैर्ऋतीवारुणीमध्ये प्रमदासूतितस्कराः ।
शौण्डिकः शाकुनी हिंस्रो वायव्यापश्चिमान्तरे ॥३१॥

भाषा—नैर्ऋत्य कोण और पश्चिम दिशा के मध्य में स्थित त्रिभागों में क्रम से सामान्य स्त्री, प्रसूता स्त्री, चोर आदि तीन स्थित माने गये हैं। पश्चिम दिशा और वायव्य कोण के मध्य में स्थित त्रिभागों में कलाल, चिड़िमार अर्थात् पक्षियों को मारने वाला, हिंसा करने वाले आदि तीन प्रकार के मनुष्य स्थित कहे जाते हैं॥३१॥

वायव्यादि दिशाओं के मध्य स्थित त्रिभागों का कथन

विषघातकगोस्वामिकुहकज्ञास्ततः परम् ।
धनवानीक्षणीकश्च मालाकारः परं ततः ॥३२॥

भाषा—वायव्य कोण और उत्तरदिशा के बीच स्थित त्रिभागों में क्रम से विष को

नाश करने वाले, गोस्वामी, इन्द्रजालिक जन आदि तीन प्रकार के मनुष्य स्थित हैं। उत्तर दिशा और ईशान कोण के अन्दर प्राप्त त्रिभागों में क्रम से धनवान, ज्योतिष, माली आदि तीन प्रकार के मनुष्य विराजमान हैं॥३२॥

ईशान आदि दिशाओं में मध्य स्थित त्रिभागों का कथन

वैष्णवश्चरकश्चैव वाजिनां रक्षणे रतः।
द्वात्रिंशदेवं भेदाः स्युः पूर्वदिग्भिः सहोदिताः ॥३३॥

माया—ईशान कोण और पूर्व दिशा के मध्य भाग में वैष्णव, चटक अर्थात् एक प्रकार के बौद्ध भिक्षुक, अश्वों का रक्षण करने में तत्परजन आदि मनुष्य आते हैं, इस प्रकार पूर्व दिशा आदि आठ दिशाओं के ये बत्तीस प्रकार कहे गए हैं॥३३॥

आठ दिशाओं के स्वामी कथन

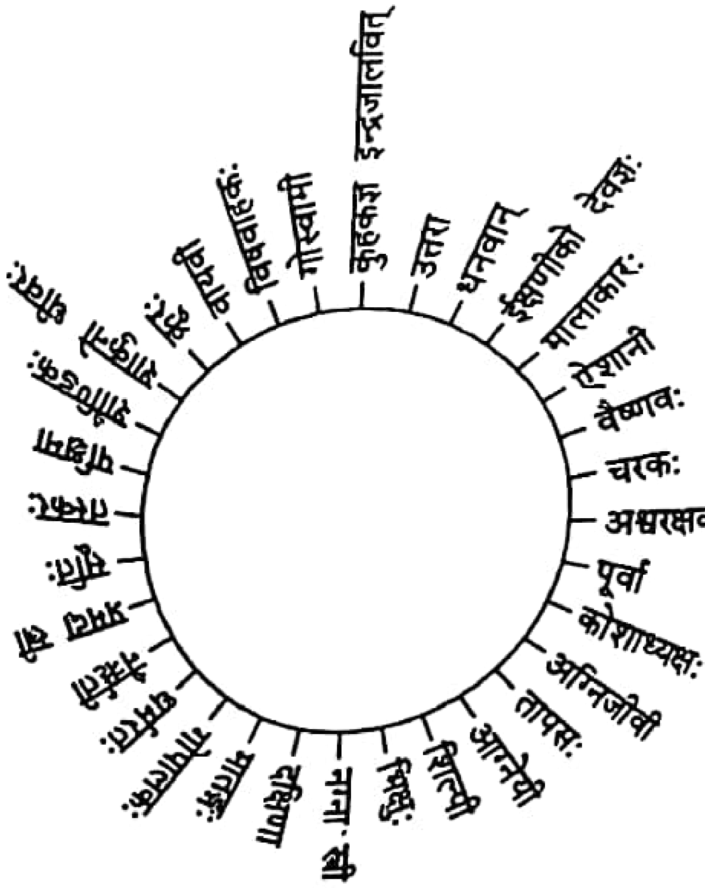
राजा कुमारो नेता च दूतः श्रेष्ठी चरो द्विजः।
राजाध्यक्षश्च पूर्वाद्याः क्षत्रियाद्याश्चतुर्दिशम् ॥३४॥

माया—पूर्व आदि आठ दिशाओं का प्रदक्षिण क्रम से राजा, कुमार, सेनापति, दूत, सेठ, गुप्तचर, ब्राह्मण, गणाध्यक्ष आदि आठ अधिपति हैं। जैसे—पूर्वदिशा के राजा, अग्नि कोण का कुमार, दक्षिण दिशा का सेनापति, नैर्ऋत्य कोण का दूत, पश्चिम दिशा का सेठ, वायव्य कोण का गुप्तचर, उत्तर दिशा का ब्राह्मण और ईशान कोण का गजाध्यक्ष अधिपति हैं। इसी प्रकार पूर्वादि चार दिशाओं के क्रम से क्षत्रियादि चतुर्वर्ण अधिपति होते हैं। जैसे—पूर्वदिशा का अधिपति क्षत्रिय, दक्षिण दिशा का अधिपति वैश्य, पश्चिम दिशा का अधिपति शूद्र और उत्तर दिशा का अधिपति ब्राह्मण को कहा गया है॥३४॥

यात्रा आदि कालिक शकुनों का फल कथन

गच्छतस्तिष्ठतो वापि दिशि यस्यां व्यवस्थितः।
विरौति शकुनो वाच्यस्तद्दिग्जेन समागमः ॥३५॥

माया—यात्रा करने के लक्ष्य से जाते हुए अथवा स्थानविशेष पर स्थित होते ही जिस किसी दिशा में स्थित शकुन की ध्वनि सूनाई दे, तो उस दिशा से सम्बन्धित जीव के साथ उसका समागम कहना चाहिए। उदाहरण स्वरूप ईशान कोण और पूर्व दिशा के प्रथम त्रिभाग में शकुन होने पर कहना चाहिए कि आपका वैष्णवों से समागम होगा। द्वितीय त्रिभाग में शकुन होने पर कहना चाहिए कि आपका समागम 'चरक' संज्ञक भिक्षुक से होगा। इसी तरह तृतीय त्रिभाग में शकुन होने पर आपका अश्वरक्षक से समागम होगा आदि-आदि॥३५॥



स्वरों से शुभाशुभ परिज्ञानार्थ कथन

भिन्नभैरवदीनार्तपरुषक्षामजर्जराः ।
स्वना नेष्टाः शुभाः शान्तहृष्टप्रकृतिपूरिताः ।।३६।।

भाषा—भिन्न, भयंकर, पीन, आर्त, कठोर, क्षाम, जर्जर आदि प्रकार के स्वर का होना शुभ नहीं होता है। परन्तु यहाँ यह अवश्य जानना चाहिए कि सूर्याभिमुख अर्थात् सूर्य के सामने रहते हुए मधुर स्वर और हर्ष के साथ सभी स्वर शुभ होते हैं।।३६।।

यात्री के वामदिशा में स्थित शुभ शकुन का कथन

शिवा श्यामा रला छुच्छुः पिङ्गला गृहगोधिका ।
सूकरी परपुष्टा च पुन्नामानश्च वामतः ।।३७।।

भाषा—शृगाल, पोतकी, कलहकारिका, छछुन्दर, उलुकचेष्टिका, पल्ली, सूअर, कोयल पुरुष संज्ञक जन्तु आदि सभी यात्रा करने वाले के वाम भाग में दीखने पर शुभदायक होता है।।३७।।

यात्री के दक्षिण भाग में स्थित शुभ शकुन कथन

स्त्रीसंज्ञा भासभषककपिश्रीकर्णधिक्कराः ।
शिखिश्रीकण्ठपिप्पीकरुरुश्येनाश्च दक्षिणाः ।।३८।।

माया—भासपक्षी, भषक, बन्दर, श्रीकर्णपक्षी, धिक्कर (छिक्कमृग), मुर्गा, श्रीकंठ, पिप्पीक, रूरूमृग, बाज आदि स्त्रीसंज्ञक प्राणी; ये सभी यात्रा करने वाले की दायीं ओर स्थित होने या दीखने पर शुभदायक होता है॥३८॥

बायीं व दायीं भाग में स्थित शुभाशुभ शकुन का फल कथन

क्ष्वेडास्फोटितपुण्याहगीतशङ्खाम्बुनिःस्वनाः ।
सतूर्याध्ययनाः पुंवत् स्त्रीवदन्या गिरः शुभाः ॥३९॥

माया—क्ष्वेत (मुख स्वर), आस्फोट (हस्त स्वर), पुण्याह वाचन, शंख ध्वनि, जल का स्वर, तुरही की ध्वनि, वेदध्वनि आदि सभी पुरुष की तरह बायीं ओर स्थित होने से शुभदायक होते हैं। तथा अन्य माङ्गलिक स्वरों का स्त्रियों की तरह दायीं ओर स्थित होना शुभकारक होता है॥३९॥

ग्राम स्वरों का शुभाशुभ ज्ञानार्थ कथन

ग्रामौ मध्यमषड्जौ तु गान्धारश्चेति शोभनाः ।
षड्जमध्यमगान्धारा ऋषभश्च स्वरा हिताः ॥४०॥

माया—यात्रा के प्रसङ्ग में मध्यम, षडज, गान्धार आदि तीनों स्वर शुभ तथा षडज, मध्यम, गान्धार, ऋषभ आदि चार स्वर हित करने वाले होते हैं॥४०॥

अन्यान्य शुभाशुभ शकुनों का कथन

रुतकीर्तनदृष्टेषु भारद्वाजाजबर्हिणः ।
धन्या नकुलचाषौ च सरटः पापदोऽग्रतः ॥४१॥

माया—भरद्वाज, बकरा, मोर आदि का स्वर, नाम का आवर्तन और दर्शन, ये तीनों यात्रा के समय आगे में होना धन्य है तथा नेवला, नीलकण्ठ और सरट (गिरगिट), ये तीनों का यात्रा के समय आगे में दीखना पापप्रद कहा गया है॥४१॥

यात्रा समय के शुभाशुभ शकुन कथन

जाहकाहिशशक्रोडगोधानां कीर्तनं शुभम् ।
रुतं सन्दर्शनं नेष्टं प्रतीपं वानरर्क्षयोः ॥४२॥

माया—जाहक, सर्प, शशक, वराह, गोह आदि का नाम यात्रा के समय लेना शुभप्रद है। परञ्च उस समय इनका रोना या दर्शन इष्टप्रद नहीं होता, ठीक इसके विधिवत् वहाँ पर वब्र, रीछ आदि के नाम का उच्चारण यात्रा के समय करना अशुभप्रद है; परन्तु इन दोनों का यात्रा समय रोना, चिल्लाना, दर्शन आदि इष्टप्रद होता है॥४२॥

यात्रा समय के शुभाशुभ शकुन कथन

ओजाः प्रदक्षिणं शस्ता मृगाः सनकुलाण्डजाः ।
चाषः सनकुलो वामो भृगुराहापराह्णतः ।।४३।।

भाषा—अपराह्ण काल में विषम संख्यक मृग, नेवला और अण्डज जीव प्रदक्षिण क्रम से अर्थात् बायीं पार्श्व से दायीं पार्श्व में आगे से होकर यात्रा के समय आ जाय तथा नकुल के साथ नीलकण्ठ पक्षी दायीं पार्श्व से आगे से होकर बायीं पार्श्व में यात्रा के समय आ जाय, तो शुभ होता है, ऐसा पूर्वाह्ण में होने पर अशुभ होता है। यह कथन भृगु जी का है।।४३।।

यात्रा के समय शुभाशुभ और भी शकुन कथन

छिक्करः कूटपूरी च पिरिली चाह्नि दक्षिणाः ।
अपसव्याः सदा शस्ता दंष्ट्रिणः सबिलेशयाः ।।४४।।

भाषा—छिक्कर अर्थात् शृगालकूटपूरी अर्थात् करायिका, पिरिली पक्षी आदि दिन की यात्रा के समय में दक्षिण भाग में और दंष्ट्री अर्थात् दाढ़ वाले जीव, सर्प आदि अर्थात् बिल में वास करने वाले जीव आदि वाम भाग में कल्याण करने वाले होते हैं।।४४।।

दिशावश शकुनों का शुभफल कथन

श्रेष्ठे हयसिते प्राच्यां शवमांसे च दक्षिणे ।
कन्यकादधिनी पश्चादुदग्गोविप्रसाधवः ।।४५।।

भाषा—यात्राकाल में पूर्वदिशा में घोड़ा और श्वेत पदार्थ; दक्षिण दिशा में शव और मांस; पश्चिम में कन्या और दही तथा उत्तर दिशा में गौ, ब्राह्मण और सज्जन पुरुष शुभदायक होते हैं।।४५।।

दिशावश शकुनों का अशुभफल कथन

जालश्वचरणौ नेष्टौ प्राग्याम्यौ शस्त्रघातकौ ।
पश्चादासवषण्ढौ च खलासनहलान्युदक् ।।४६।।

भाषा—यात्रा के समय पूर्व दिशा में अपने साथ जाल होकर चलने वाले और कुत्ते के साथ चलने वाले; दक्षिण दिशा में शस्त्र और बधिक; पश्चिम में आसव और नपुंसक तथा उत्तर दिशा में आसन और हल का दर्शन अशुभ कहा गया है।।४६।।

कर्म साधन आदि में शकुनों में विशेषता कथन

कर्मसङ्गमयुद्धेषु प्रवेशे नष्टमार्गणे ।
यानव्यस्तगता ग्राह्या विशेषश्चात्र वक्ष्यते ।।४७।।

माया—कर्म का साधन, संगम अर्थात् मैथुनादि, युद्ध, प्रवेश अर्थात् गृह आदि में प्रवेश और नष्ट द्रव्य अर्थात् धनादि चोरी या खो जाने की पड़ताल करने आदि में यात्राकालिक पूर्वोक्त शकुन के विपरीत शकुन हो, तो वह शुभदायक होता है अर्थात् यात्रा करने में जो दक्षिण भाग में शुभ है, वह इनमें वाम भाग में होने पर शुभ होगा। इसी तरह यात्रा में जो वाम भाग में शुभ, वह इनमें दक्षिण भाग में शुभ जानना चाहिए। यात्रा में जो आगे में स्थित होने पर शुभ है, वह इनमें पीछे स्थित होने पर शुभ और जो यात्रा में पीछे शुभ है, वह इनमें आगे में शुभ होता है। यात्रा के जो पूर्व दिशा में शुभ, वह इनमें पश्चिम में शुभ; यात्रा में जो पश्चिम में शुभ, वह इनमें पूर्व में शुभ; जो दक्षिण में शुभ वह इनमें उत्तर में शुभ; यात्रा में जो उत्तर में शुभ, इनमें वह दक्षिण में शुभ होता है।।४७।।

और भी शकुनों की विशेषता कथन

दिवा प्रस्थानवद्ग्राह्याः कुरङ्गरुरुवानराः ।
अह्नश्च प्रथमे भागे चाषवञ्जुलकुक्कुटाः ।।४८।।
पश्चिमे शर्वरीभागे नप्तृकोलूकपिङ्गलाः ।
सर्व एव विपर्यस्ता ग्राह्याः सार्थेषु योषिताम् ।।४९।।

माया—उपरोक्त कर्म साधन आदि करने में कुरङ्ग (हिरण), रूरू (मृग जाति विशेष), बन्दर आदि यात्रा के शकुन विधि के समान ही दिन भाग में शुभ होता है तथा पूर्वाह्नकाल में नीलकण्ठ, वञ्जुल और कुक्कुट यात्रा विधि के समान ही ग्रहण करना चाहिए। रात्रि के उत्तरार्द्ध भाग में नप्तृक, उल्लू और पिङ्गला को यात्रा के समान मानना चाहिए। परन्तु उपरोक्त सभी शकुन स्त्रियों के लिए विपरीत (उलटा) ग्रहण करना चाहिए।।४८-४९।।

और भी शकुनों की विशेषता कथन

नृपसन्दर्शने ग्राह्यः प्रवेशेऽपि प्रयाणवत् ।
गिर्यरण्यप्रवेशेषु नदीनां चावगाहने ।।५०।।
वामदक्षिणगौ शस्तौ यौ तु तावग्रपृष्ठगौ ।

माया—यात्रा काल में जो शकुन बायीं और दायीं ओर शुभ हैं, वे सभी शकुन राजदर्शन, गृहप्रवेश, गिरिप्रवेश, वनप्रवेश, नदी को पार करने आदि में क्रमशः अग्रभाग और पृष्ठभाग में शुभ जानना चाहिए। अर्थात् यात्रा काल में जो शकुन बायीं ओर वे इनके समय में अग्रभाग में तथा यात्रा में जो शकुन दायीं ओर वे इनके समय में पृष्ठभाग में होने पर कल्याणप्रद होते हैं।।५०।।

परिघ नामक आदि शकुन का फल कथन

क्रियादीप्तौ विनाशाय यातुः परिघसंज्ञितौ ॥५१॥
तावेव तु यथाभागं प्रशान्तरुतचेष्टितौ ।
शकुनौ शकुनद्वारसंज्ञितावर्थसिद्धये ॥५२॥

माया—यात्रा समय क्रिया दीप्ति में यात्रा करने वाले के दोनों तरफ शकुन के दीखने पर परिघ संज्ञक शकुन कहा जाता है। इस (परिधसंज्ञक) शकुन में यात्रा करने से यात्री की हानि होती है। लेकिन वे दोनों शकुन अपने-अपने भाग अर्थात् दायीं ओर वाला दायें और वायीं ओर वाला वायें भाग में अवस्थित हो, शान्तभाव से स्वर करें, तो द्वार नामक शकुन होता है। इसमें यात्रा करने वाले की अभीष्ट सिद्धि होती है॥५१-५२॥

द्वार नामक शकुन के अन्य मत से लक्षण कथन

केचित्तु शकुनद्वारमिच्छन्त्युभयतः स्थितैः ।
शकुनैरेकजातीयैः शान्तचेष्टाविराविभिः ॥५३॥

माया—कोई कहते हैं कि समान जाति वाले, शान्तभाव से स्वर करने वाले, दोनों भागों में स्थित शकुनों से शकुन द्वार नामक शकुन उत्पन्न हो जाता है॥५३॥

विरोध नामक के शकुन का लक्षण कथन

विसर्जयति यद्येक एकश्च प्रतिषेधति ।
स विरोधोऽशुभो यातुर्ग्राह्यो यो बलवत्तरः ॥५४॥

माया—यात्रा करते समय एक अनुकूल और दूसरा प्रतिकूल शकुन के होने पर 'विरोध' नामक शकुन अशुभ प्रद होता है अथवा उन शकुनों में अधिकतर बलवान् शकुन के अनुकूल व्यवहार करना चाहिए॥५४॥

विरोधी नामक शकुन का फल कथन

पूर्वं प्रावेशिको भूत्वा पुनः प्रास्थानिको भवेत् ।
सुखेन सिद्धिमाचष्टे प्रवेशे तद्विपर्ययात् ॥५५॥

माया—यात्रा के समय प्रवेश के समय का शकुन पहले और यात्रा विहित शकुन पश्चात् होने पर यात्री की यात्रा सुखपूर्वक और कार्य भी सिद्ध होते है। इसी तरह गृहादिप्रवेश के समय इसका विपरीत अर्थात् यात्रा विहित शकुन पूर्व में और प्रवेश विहित शकुन पश्चात् में होने पर भी सुख शांति के साथ कार्य सिद्ध होता है॥५५॥

मृत्यु, कलह, रोगप्रद शकुनों का कथन

विसर्ज्य शकुनः पूर्वं स एव निरुणद्धि चेत् ।
प्राह यातुररेर्मृत्युं डमरं रोगमेव वा ॥५६॥

माया—शुभदायक शकुन की चेष्टा के पश्चात् यात्रा निषेधक शकुन की चेष्टा होने से यात्री का शत्रु के कारण मरण, शस्त्रकलह अथवा रोग संसूचित होती है॥५६॥

भय करने वाले शकुनों का कथन

अपसव्यास्तु शकुना दीप्ता भयनिवेदिनः ।
आरम्भे शकुनो दीप्तो वर्षान्तस्तद्भयङ्करः ॥५७॥

माया—दीप्त दिशा में स्थित जन के वामभाग में शकुन के होने से भय प्राप्ति की सूचना मिलती है। प्रयोजन साधनारम्भ में ही दीप्त शकुन के दीखने पर वर्ष पर्यन्त उस प्रयोजन के साधन में भय उत्पन्न होता रहता है॥५७॥

चेष्टा दीप्त का लक्षण और उसका फल कथन

तिथिवाय्वर्कभस्थानचेष्टादीप्ता यथाक्रमम् ।
धनसैन्यबलाङ्गेष्टकर्मणां स्युर्भयङ्कराः ॥५८॥

माया—तिथि, वायु, सूर्य, नक्षत्र, स्थान, चेष्टा आदि दीप्त होने पर क्रम से धन, सैन्य, अङ्ग, बल, इष्ट, कर्म आदि के लिए भय देने वाले होते हैं॥५८॥

मेघ शब्द आदि से दीप्त शकुन के फलों का कथन

जीमूतध्वनिदीप्तेषु भयं भवति मारुतात् ।
उभयोः सन्ध्ययोर्दीप्ताः शस्त्रोद्भवभयङ्कराः ॥५९॥

माया—जो शकुन बादल (मेघ) की ध्वनि (शब्द) से दीप्त हो, तो वायु भय और दोनों सन्ध्याओं में दीप्त शकुन शस्त्र से भय उत्पन्न करने वाले होते हैं॥५९॥

चिता आदि स्थित शकुनों का फल कथन

चितिकेशकपालेषु मृत्युबन्धवधप्रदाः ।
कण्टकीकाष्ठभस्मस्थाः कलहायासदुःखदाः ॥६०॥
अप्रसिद्धिं भयं वापि निःसाराश्मव्यवस्थिताः ।
कुर्वन्ति शकुना दीप्ताः शान्ता याप्यफलास्तु ते ॥६१॥

माया—शकुन चिता, केश, कपाल आदि पर स्थित हो, तो मृत्यु, बन्धन, वध आदि करने वाला होता है। कँटीले पेड़, काष्ठ, अथवा राख पर स्थित शकुन क्लेश, श्रम या दुःख देने वाला होता है। निस्सार पदार्थ पर स्थित उपरोक्त शकुन प्रसिद्धि को नष्ट करने वाला और पाषाण पर स्थित होने पर भय उत्पन्न करने वाला होता है। इस प्रकार के फल दीप्त शकुन के कहे गए हैं; परन्तु शान्त शकुन सभी अत्यल्प फल करते हैं॥६०-६१॥

विष्ठा आदि करण शकुन का फल कथन

असिद्धिसिद्धिदौ ज्ञेयौ निर्हाराहारकारिणौ ।
स्थानाद्द्रुवन् व्रजेद्यात्रां शंसते त्वन्यथागमम् ॥६२॥

माया—विष्ठा करने वाले और आहार (भोजन) करने वाले शकुन क्रम से कार्य में असिद्धि और सिद्धि प्रदान करने वाले होते हैं। शकुन का शब्द करते हुए चला जाना यात्रा करना सूचित करता है और उसके पुनर्वापस पूर्वस्थान पर स्थित होने से किसी के आगमन को संसूचित करता है॥६२॥

स्वर आदि दीप्त शकुन के फलों का कथन

कलहः स्वरदीप्तेषु स्थानदीप्तेषु विग्रहः।
उच्चमादौ स्वरं कृत्वा नीचं पश्चाच्च दोषकृत् ॥६३॥

माया—स्वर दीप्त शकुन के होने से कलह, स्थान दीप्त होने से आपस में विग्रह तथा पूर्व में उच्च और बाद में मन्द ध्वनि करने पर दोष उत्पन्न करने वाले होते हैं॥६३॥

सप्तदिनादि पर्यन्त शब्दकारी शकुन के फलों का कथन

एकस्थाने रुवन् दीप्तः सप्ताहाद् ग्रामघातकः।
पुरदेशनरेन्द्राणामृत्वर्धायनवत्सरात् ॥६४॥

माया—शकुन दीप्तावस्था में एक ही स्थान पर स्थित रहकर सात दिन पर्यन्त ध्वनि करता रहे, तो ग्राम घात; एक ऋतु पर्यन्त ध्वनि करता रहे, तो नगर, घात; एक अयन पर्यन्त ध्वनि करता रहे, तो देश घात तथा एक वर्ष पर्यन्त करता रहे, तो राजा का घात करने वाला होता है॥६४॥

दुर्भिक्षकारक शकुनों का कथन

सर्वे दुर्भिक्षकर्त्तारः स्वजातिपिशिताशिनः।
सर्पमूषकमार्जारपृथुलोमविवर्जिताः ॥६५॥

माया—सर्प, चूहा, विलाड़ और मत्स्य को छोड़कर अन्य कोई भी शकुन अपनी जाति का ही मांस भक्षण करने लगे, तो वह दुर्भिक्षकारक होता है॥६५॥

विषम जाति मैथुन के फलों का कथन

परयोनिषु गच्छन्तो मैथुनं देशनाशनाः।
अन्यत्र वेसरोत्पत्तेर्नृणां चाजातिमैथुनात् ॥६६॥

माया—भिन्न योनि से खच्चर की उत्पत्ति अर्थात् घोड़ी के साथ गधा के मैथुन करने से खच्चर की उत्पत्ति होना तथा मनुष्यों के भी अजाति मैथुन के अतिरिक्त कोई भी अन्य शकुन के दूसरे जाति के साथ मैथुन करने पर देशनाश करने वाला होता है॥६६॥

पाद, ऊरू आदि का शकुन द्वारा अतिक्रमण करने का फल कथन

बन्धघातभयानि स्युः पादोरूमस्तकान्तिगैः ।
शष्पापःपिशितान्नादैर्दोषवर्षक्षयग्रहाः ॥६७॥

माया—पाद, ऊरू और मस्तक का अतिक्रमण कर शकुन के जाने पर क्रम से बन्धन, घात और भय प्रदान करने वाला होता है। जलपीता शकुन दीखने पर वृष्टि; घास चरते दीखने पर चोरी कराने वाला; मांस भक्षण करता दीखने पर शरीरघात करने वाला तथा अन्न भक्षण करता शकुन अपने किसी बन्धु से मिलाने वाला होता है॥६७॥

शकुन द्वारा आगन्तुक लक्षण परिज्ञानार्थ कथन

क्रूरोग्रदोषदुष्टैश्च प्रधाननृपवृत्तकैः ।
चिरकालेन दीप्ताद्यास्वागमो दिक्षु तन्नृणाम् ॥६८॥

माया—दीप्त आदि आठ दिशाअं में स्थित शकुन में क्रूर, उग्र, दोष और दुष्ट लक्षणों से युक्त मनुष्य का आगमन होना है। अर्थात् दीप्त दिशा में स्थित शकुन में क्रूर मनुष्य युक्त किसी मनुष्य का आगमन; धूमित दिशा में स्थित शकुन में उग्र मनुष्य युक्त किसी मनुष्य का आगमन: शान्त दिशा में स्थित शकुन में दोष युक्त मनुष्य के साथ किसी मनुष्य का आगमन; तत्पश्चात् दुष्ट पुरुष सहित; तत्पश्चात् प्रधान पुरुष के सहित; तत्पश्चात् राजा के सहित; तत्पश्चात् श्रावक के सहित और तत्पश्चात् अङ्गारिणी दिशा में स्थित शकुन चिरकाल पश्चात् किसी मनुष्य के आगमन को संसूचिम करता है॥६८॥

द्रव्य युक्त आगन्तुक शकुनों का कथन

सद्रव्यो बलवांश्च स्यात् सद्रव्यस्यागमो भवेत् ।
द्युतिमान् विनतप्रेक्षी सौम्यो दारुणवृत्तकृत् ॥६९॥

माया—जिस समय किसी द्रव्य युक्त और बलवान् शकुन दीखे, उस समय द्रव्य युक्त मनुष्य का आगमन होता है। दीप्ति युक्त और अधोमुख दृष्टि वाला शुभ शकुन के दीखने पर वह दारुण या दुखद वृत्तान्त को संसूचित करता है॥६९॥

विदिक्स्थित शकुन का फल कथन

विदिक्स्थः शकुनो दीप्तो वामस्थेनानुवाशितः ।
स्त्रियाः संग्रहणं प्राह तद्दिगाख्यातयोनितः ॥७०॥

माया—विदिशा में स्थित दीप्त शकुन बायीं ओर स्थित किसी शकुन से अनुवाशित अर्थात् शब्दायमान हो, तो उस दिशा में प्रख्यात मनुष्य से स्त्री का समागम संसूचित होता है॥७०॥

शान्त और दीप्त दिशा के शकुनवश फल कथन

शान्तः पञ्चमदीप्तेन विरुतो विजयावहः ।
दिग्नरागमकारी वा दोषकृत् तद्विपर्यये ।।७१।।

भाषा—जिस-किसी दिशा में स्थित शान्त शकुन अपने से पाँचवीं दीप्त दिशा में स्थित दीप्त शकुन से शब्दायमान हो, तो वह विजयप्रद होता है। ठीक इसके विपरीत अर्थात् जिस-किसी दिशा में स्थित दीप्त शकुन अपने से पाँचवीं शान्त दिशा में स्थित शान्त शकुन से श्ब्दायमान हो, तो दोषद होता है।।७१।।

मध्यस्थित शकुन से फलों का कथन

वामसव्यगतो मध्यः प्राह स्वपरयोर्भयम् ।
मरणं कथयन्त्येते सर्वे समविराविणः ।।७२।।

भाषा—वाम पार्श्वगत अथवा दक्षिण पार्श्वगत शकुन से शब्दायमान मध्य भाग स्थित शकुन के होने पर क्रम से स्वजनों अथवा पराये जनों से भय उत्पन्न करने वाला होता है। अथवा वे सभी निरन्तर शब्दायमान हों, तो मनुष्य का मरण संसूचित करने वाला होता है।।७२।।

वृक्ष के अग्र-मध्य-मूल आदिस्थ शकुनों का फल कथन

वृक्षाग्रमध्यमूलेषु गजाश्वरथिकागमः ।
दीर्घाब्जमुषिताग्रेषु नरनौशिबिकागमः ।।७३।।

भाषा—वृक्ष के अग्रभागस्थ शकुन से गज पर आसीन मनुष्य, उसी के (वृक्ष) मध्य भागस्थ शकुन से अश्व पर आसीन मनुष्य और उस (वृक्ष) के मूलस्थ शकुन से रथ पर आसीन मनुष्य के आगमन संसूचित होता है। लम्बी वस्तु या कमल पुष्प या छिन्नाग्र पर आसीन शकुन से क्रमशः नरासीन मनुष्य या नौकासीन या शिविका (पालकी) आसीन मनुष्य का आगमन संसूचित होता है।।७३।।

उन्नत (पर्वत) आदि प्रदेशस्थ शकुन फल कथन

शकटेनोन्नतस्थे वा छायास्थे छत्रसंयुते ।
एकत्रिपञ्चसप्ताहात् पूर्वाद्यास्वन्तरासु च ।।७४।।

भाषा—उन्नत अर्थात् पर्वत आदि पर शकुन के आसीन रहने से बैलगाड़ी पर आरूढ़ मनुष्य का और छाया गत स्थान पर स्थित शकुन से छत्रधारी मनुष्य का आगमन जानना चाहिए। एवं पूर्व आदि चार दिशाओं अथवा चार विदिशाओं में उपरोक्त शकुन स्थित हों, तो क्रम से एक दिन, तीन दिन, पाँच दिन और सात दिन में मनुष्य को शुभाशुभ फल देने वाले होते हैं अर्थात् पूर्व दिशा अथवा अग्निकोण में स्थित शकुन एक दिन में; दक्षिण दिशा अथवा नैर्ऋत्य कोण में स्थित शकुन तीन

दिन में; पश्चिम दिशा अथवा वायव्य कोण में स्थित शकुन पाँच दिन में और उत्तर दिशा अथवा ईशान कोण में स्थित शकुन सात दिन में अपना शुभाशुभ फल प्रदान करने वाले होते हैं।।७४।

दिशा स्वामी और पुरुष-स्त्री संज्ञा कथन

सुरपतिहुतवहयमनिर्ऋतिवरुणपवनेन्दुशङ्कराः क्रमशः ।
प्राच्याद्यानां पतयो दिशः पुमांसोऽङ्गना विदिशः ।।७५।।

माया—इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, पवन, चन्द्रमा और शिव; ये क्रम से पूर्वादि आठ दिशाओं के स्वामी होते हैं अर्थात् पूर्वदिशा का स्वामी इन्द्र, अग्निकोण का अग्नि, दक्षिण दिशा का यम, नैर्ऋत्य कोण का निर्ऋति, पश्चिम दिशा का वरुण, वायव्य कोण का पवन, उत्तर दिशा का चन्द्रमा और ईशान कोण का स्वामी शिव कहे गए हैं। इनमें पूर्वादि चार दिशाओं पुरुष संज्ञक तथा अग्निकोण आदि चार विदिशाऐं स्त्री संज्ञक होती है।।७५।।

लेख परिज्ञानार्थ कथन

तरुतालीविदलाम्बरसलिलजशरचर्मपहलेखाः स्युः ।
द्वात्रिंशत्प्रविभक्ते दिक्चक्रे तेषु कार्याणि ।।७६।।

माया—पूर्व में ही "ऐन्द्रानलदिशोर्मध्ये त्रिभागेषु व्यवस्थिता' शाकुनाध्याय-श्लोक आठ में इससे दिशा चक्र के बत्तीस भाग करते हुए जिन शकुनों को कहा गया है और जो भी आगे कहे जाऐंगे, उन सभी शकुनों का फल उनके अपने-अपने लोक में ही प्राप्त होते हैं। तथा शाकुन-अन्तरचक्राध्याय के श्लोक आठ में नैर्ऋत्यां स्त्रीलाभस्तुरगालंकारपूतलेखाप्तिः" इसमें लेख प्राप्ति' कहा गया है, इस लेख की प्राप्ति किस प्रकार की वस्तु पर अंकित होना सम्भव है, इसी बात को इस प्रकार ग्रन्थकार स्पष्टता से कहते हैं—पूर्व दिशा में स्थित शकुन होने से वृक्ष की त्वचा या पत्रों पर; अग्निकोण में स्थित शकुन से ताल (ताड़) वृक्ष के पत्तों पर ; दक्षिण दिशा में शकुन होने से खण्डित पत्तों पर इसी प्रकार नैर्ऋत्य कोण में वस्त्र पर; पश्चिम दिशा में कमल के पत्तों; वायव्य कोण में काण्ड पर; उत्तर दिशा में चर्म पर और ईशान कोण में स्थित शकुन के होने पर पट्टस्थ लेख की उपलब्धि होती है।।७६।।

पूर्वादिस्थ शकुन फल प्राप्ति तथा उसका वर्ण परिज्ञानार्थ कथन

व्यायामशिखिनिकूजितकलहाम्भोनिगडमन्त्रगोशब्दाः ।
वर्णास्तु रक्तपीतककृष्णसिताः कोणगा मिश्राः ।।७७।।

माया—पूर्व आदि आठ दिशाओं में स्थित शकुन सम्बन्धी शुभ अथवा अशुभ फल की प्राप्ति इस प्रकार होते हैं—पूर्वदिशा में स्थित शकुन फल युद्धकाल में;

अग्नि कोण गत शकुन का फल अग्नि स्थान में; दक्षिण दिशा में शकुन के होने पर उसका फल शब्दायमान स्थान में; इसी तरह नैर्ऋत्य कोण का फल युद्ध के मैदान में; उत्तर दिशा में स्थित शकुन का फल वेदमन्त्रोचारण युक्त स्थान में तथा ईशान कोण में स्थित शकुन का फल गौ शब्दों से युक्त पूर्ण स्थान में प्राप्त होना कहा गया है। पूर्वादि चारों दिशाओं और विदिशाओं के वर्ण इस प्रकार से कहे गये हैं—पूर्व का लाल, दक्षिण का पीला, पश्चिम का काला और उत्तर दिशा का श्वेत वर्ण होता है। इसी तरह अग्निकोण का रक्त + पीत; नैर्ऋत्य कोण का पीत कृष्ण; वायव्य कोण का कृष्ण + सित तथा ईशान कोण का सित + रक्त के रूप में मिश्रित वर्ण समझना चाहिए।।७७।।

अन्य शुभ शकुन में स्थान संकेतार्थ कथन

चिह्नं ध्वजो दग्धमथ श्मशानं दरी जलं पर्वतयज्ञघोषाः ।
एतेषु संयोगभयानि विन्द्यादन्यानि वा स्थानविकल्पितानि ।।७८।।

भाषा—पूर्व दिशागत शकुन का फल ध्वज चिह्न युक्त स्थान में, अग्नि कोण गत शकुन का फल अग्नि से जले स्थान में; दक्षिण दिशा गत शकुन का फल श्मशान में; नैर्ऋत्य कोण गत शकुन का फल गुहा स्थान में; पश्चिम दिशा गत शकुन का फल जलीय प्रदेश में; वायव्यकोण गत शकुन का फल पर्वत स्थान में; उत्तर दिशा गत शकुन का फल यज्ञ स्थान में तथा ईशान कोणगत शकुन का फल गह्वर स्थान में संयोग और भय होता है, अर्थात् शुभ शकुन में संयोग और अशुभ शकुन में भय निर्देशित करना चाहिए।।७८।।

दिशागत शकुन से स्त्री स्वरूपादि निर्देशनार्थ कथन

स्त्रीणां विकल्पा बृहती कुमारी
व्यङ्गा विगन्धा त्वथ नीलवस्त्रा ।
कुस्त्री प्रदीर्घा विधवा च ताश्च
संयोगचिन्तापरिवेदिकाः स्युः ।।७९।।

भाषा—पूर्व दिशा में स्थूला, अग्निकोण में कुमारी, दक्षिण में अङ्गहीना, नैर्ऋत्य में दुर्गन्धा, पश्चिम में नीलवस्त्रा; वायव्य में निन्दनीया; उत्तर में लम्बी तथा ईशान कोण में रण्डास्त्री का निवास कहा गया है। यहाँ विदिशा को स्त्री संज्ञक होने के कारण किसी ने उपरोक्त को इस प्रकार व्याख्यायित किया है—ईशान कोण में लम्बी कुमारी; अग्नि कोण में अङ्गहीन-दुर्गन्ध युक्ता; नैर्ऋत्य कोण में नीलवस्त्रा-निन्दनीया और वायव्य कोण में लम्बी रण्डा (विधवा) स्त्री निवास करती है। यह कहने का प्रयोजन यह है कि पूर्व आदि दिशाओं में शुभ संयोग या समागम से उन स्त्रियों की

चिन्ता कराती है, तथा किसी चोरी आदि होने की स्थिति में चोर ऐसी ही स्त्री को जानना चाहिए॥७९॥

प्रश्न के समय शकुन विचार के परिज्ञानार्थ कथन

पृच्छासु रूप्यकनकातुरभामिनीनां
मेषाव्ययानमखगोकुलसंश्रयासु ।
न्यग्रोधरक्ततरुरोध्रककीचकाख्या-
श्चूतद्रुमाः खदिरबिल्वनगार्जुनाश्च ॥८०॥

माया—प्रश्न के समय शकुन अथवा पृच्छक के पूर्व दिशा में होने से चाँदी; अग्नि कोण में होने से स्वर्ण; दक्षिण में आतुर; नैर्ऋत्य में स्त्री; पश्चिम में भेड़; वायव्य में अश्व आदि वाहन अथवा गमन, उत्तर में यज्ञ और ईशान कोण में पृच्छक या शकुन के होने पर गोकुल सम्बन्धी प्रश्न जानना चाहिए। पूर्व दिशा में बड़, अग्निकोण में लाल वृक्ष, दक्षिण में लोध; नैर्ऋत्य कोण में छिद्र सहित बाँस; पश्चिम में आम; वायव्य कोण में खैर; उत्तर में बिल्व तथा ईशान कोण में अर्जुन वृक्ष अष्ट दिशाओं के वृक्ष कहे गए हैं। यहाँ इनका कहने का प्रयोजन यह है कि पूर्व आदि अष्ट दिशाओं में शुभ शकुन के स्थित होने पर उपरोक्त स्थानों में चाँदी आदि का लाभ और अशुभ शकुन में हानि की कल्पना करनी चाहिए॥८०॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-मिश्रफलविचारो नाम षडशीतितमोऽध्यायः ॥८६॥

□□□

अथ सप्ताशीतितमोऽध्यायः-८७

शाकुने-अन्तरचक्रविचारः

सर्वप्रथम पूर्वोक्त वत्तीस भागात्मक दिक्चक्र में शान्त दिशा गत प्रथम भागस्थ शकुन फल कथन

ऐन्द्र्यां दिशि शान्तायां विरुवन्नृपसंश्रितागमं वक्ति ।
शकुनः पूजालाभं मणिरत्नद्रव्यसम्प्राप्तिम् ।।१।।

माया—शान्ता पूर्व दिशा गत शकुन शब्द करता हो, तो वह राज्याश्रित मनुष्य के आगमन, सम्मान लाथ, मणि और रत्न आदि के लाभ को संसूचित करता है। ऐसा उस शकुन के शुभ होने पर होता है; मध्यम होने पर मिलाजुला और अशुभ होने पर अल्पतर शुभ फल करने वाला होता है।।१।।

दूसरे और तीसरे भागस्थ शकुनों का फल कथन

तदनन्तरदिशि कनकागमो भवेद्वाञ्छितार्थसिद्धिश्च ।
आयुधधनपूगफलागमस्तृतीये भवेद् भागे ।।२।।

माया—पूर्वदिशा के पश्चात् प्रदक्षिण क्रम में दूसरे भाग में शकुन शब्द करता हो, तो स्वर्ण का लाभ और अभिलाषा की पूर्त्ति होती है। उसके तीसरे भागस्थ शकुन शब्द करता हो, तो आयुध (शस्त्र), धन और पूँगीफल (सुपारी) का लाभ होता है।।२।।

चतुर्थभाग और अग्निकोणस्थ शकुन का फल कथन

स्निग्धद्विजस्य सन्दर्शनं चतुर्थे तथाहिताग्नेश्च ।
कोणेऽनुजीविभिक्षुप्रदर्शनं कनकलोहाप्तिः ।।३।।

माया—चतुर्थ भागस्थ शकुन के शब्द करने पर निर्मल ब्राह्मण और अग्नि होत्री जन का दर्शन प्राप्त होता है। अग्निकोणस्थ शकुन के शब्द करने से स्वर्ण और लौह तत्त्व की प्राप्ति के साथ भिक्षुकों का दर्शन भी होता है।।३।।

दक्षिण दिशा के प्रथम और द्वितीय भागस्थ शकुन फल कथन

याम्येनाद्ये नृपपुत्रदर्शनं सिद्धिरभिमतस्याप्तिः ।
परतः स्त्रीधर्माप्तिः सर्षपयवलब्धिरप्युक्ता ।।४।।

माया—दक्षिण दिशागत प्रथम भाग में शकुन के शब्दायमान होने से युवराज का दर्शन और अभिलषित वस्तु की प्राप्ति होती है। द्वितीय भाग में शकुन के चिल्लाने से स्त्री और धर्म का लाभ तथा सरसों, जौं आदि की प्राप्ति भी होती है।।४।।

अग्निकोण से चौथे भागस्थ शकुन का फल कथन

कोणाच्चतुर्थखण्डे लब्धिर्द्रव्यस्य पूर्वनष्टस्य।
यद्वा तद्वा फलमपि यात्रायां प्राप्नुयाद्याता ॥५॥

माया—अग्नि कोण से चौथे भाग में शकुन के स्थित होकर शब्दायमान होने से पूर्व में खोये हुए द्रव्य की प्राप्ति होती है। यात्रा के समय उक्त शकुन होने से यात्री उसके फल को जैसे-तैसे भी प्राप्त करता है॥५॥

दक्षिण भाग और उससे दूसरे भागस्थ शकुन फल कथन

यात्रासिद्धिः समदक्षिणेन शिखिमहिषकुक्कुटाप्तिश्च।
याम्याद् द्वितीयभागे चारणसङ्गः शुभं प्रीतिः ॥६॥

माया—दक्षिण दिशा के सम भाग में दिन के समय शकुन शब्द करता हो, तो यात्रा की सिद्धि तथा मोर, महिषी, कुक्कुट का लाभ होता है। दक्षिण से दूसरे भाग में स्थित शकुन के शब्द करने से चारण के साथ संयोग, शुभ की प्राप्ति और प्रेम का लाभ होता है॥६॥

तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन

ऊर्ध्वं सिद्धिः कैवर्तसङ्गमो मीनतित्तिराद्याप्तिः।
प्रव्रजितदर्शनं तत्परे च पक्वान्नफललब्धिः ॥७॥

माया—तृतीय भागस्थ शकुन शब्द करता है, तो कर्मसिद्धि, कैवर्त्त का संयोग तथा मत्स्य और तित्तिर का लाभ भी होता है। चतुर्थ भाग में बैठा हुआ शकुन शब्द करता है, तो सन्यासीजन का दर्शन, पका हुआ अन्न और फ़ल की प्राप्ति होती है॥७॥

नैर्ऋत्यकोण और उससे दूसरे भागस्थ शकुन फल कथन

नैर्ऋत्यां स्त्रीलाभस्तुरगालङ्कारदूतलेखाप्तिः।
परतोऽस्य चर्मतच्छिल्पिदर्शनं चर्ममयलब्धिः ॥८॥

माया—नैर्ऋत्य कोण में बैठा हुआ शकुन शब्द करे, तो स्त्री लाभ, घोड़ा, अलंकार दूत और लेख पट्ट की प्राप्ति होती है। नैर्ऋत्य कोण से दूसरे भागस्थ शकुन शब्द करता हो, तो चर्म शिल्पी का दर्शन और चर्म का बना बर्तन आदि का लाभ कहना चाहिए॥८॥

नैर्ऋत्य कोण से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन

वानरभिक्षुश्रवणावलोकनं नैर्ऋतात् तृतीयांशे।
फलकुसुमदन्तघटितागमश्च कोणाच्चतुर्थांशे ॥९॥

माया—नैर्ऋत्य कोण से तीसरे भागस्थ शकुन के शब्द करने से बन्दर, भिक्षुक

और श्रमण का दर्शन होता है। नैर्ऋत्य कोण से चतुर्थ भागस्थ शकुन के शब्द करने पर फल, पुष्प और दन्तनिर्मित वस्तुओं का लाभ होता है॥९॥

पश्चिम दिशा और उससे दूसरे भागस्थ शकुन फल कथन

वारुण्यामर्णवजातरत्नवैदूर्यमणिमयप्राप्तिः ।
परतोऽतः शवरव्याधचौरसङ्गः पिशितलब्धिः ॥१०॥

भाषा—पश्चिम दिशा में बैठे शकुन के शब्द करने से समुद्रोत्पन्न रत्न, वैदूर्यमणि, मणि से बने बर्तन की प्राप्ति होती है। पश्चिम दिशा से द्वितीय भागस्थ शकुन के शब्द करने से भील, व्याधा और चोरों का साथ तथा मांस की प्राप्ति होती है॥१०॥

पश्चिम दिशा से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन

परतोऽपि दर्शनं वातरोगिणां चन्दनागुरुप्राप्तिः ।
आयुधपुस्तकलब्धिस्तृद्वृत्तिसमागमश्चोर्ध्वम् ॥११॥

भाषा—पश्चिम दिशा से तृतीय भाग में बैठे शकुन के शब्द करने से वातरोगियों का दर्शन तथा चन्द्र और अगर का लाभ भी होता है। उसके चतुर्थ भागस्थ शकुन के शब्द करने से शस्त्र और पुस्तक का लाभ तथा इनके विक्रेता से भी भेंट होती है॥११॥

वायव्य कोण और उससे द्वितीय भावस्थ शकुन का फल कथन

वायव्ये फेनकचामरौर्णिकाप्तिः समेति कायस्थः ।
मृन्मयलाभोऽन्यस्मिन् वैतालिकडिण्डिभाण्डानाम् ॥१२॥

भाषा—वायव्यकोण में स्थित शकुन के शब्द करने से समुद्रफेन, चामर और ऊनी वस्त्र का लाभ तथा कायस्थजन से मिलन होता है। वायव्य कोण से द्वितीय भागस्थ शकुन शब्द करे, तो मृत्भाण्ड का लाभ, वैतालिक से मिलन और डिण्डिभाण्ड का लाभ होता है॥१२॥

वायव्य कोण से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन का फल कथन

वायव्याच्च तृतीये मित्रेण समागमो धनप्राप्तिः ।
वस्त्राश्वाप्तिरतः परमिष्टसुहृत्सम्प्रयोगश्च ॥१३॥

भाषा—वायव्य कोण से तृतीय भागस्थ शकुन के शब्द करने से मित्रों का मिलन, धनप्राप्ति आदि सम्भव होता है। उससे चतुर्थ भागस्थ शकुन के शब्द करने से वस्त्र, अश्व आदि का लाभ तथा परम मित्रों का समागम होता है॥१३॥

उत्तर दिशा और उससे दूसरे भागस्थ शकुन का फल कथन

दधितण्डुललाजानां लब्धिरुदग् दर्शनं च विप्रस्य ।
अर्थावाप्तिरनन्तरमुपगच्छति सार्थवाहश्च ॥१४॥

माया—उत्तर दिशा में स्थित शकुन के शब्द करने से दही, चावल और लाजा का लाभ तथा ब्राह्मणों का दर्शन होता है। उत्तर दिशा से द्वितीय भागस्थ शकुन शब्द करता हो, तो धन का लाभ और धन-व्यापारियों के साथ मिलन होता है।।१४।।

उत्तर दिशा से तीसरे और चौथे भागस्थ शकुन फल कथन

वेश्यावटुदाससमागमः परे शुक्लपुष्पफललब्धिः ।
अत ऊर्ध्वं चित्रकरस्य दर्शनं चित्रवस्त्राप्तिः ।।१५।।

माया—उत्तर दिशा से तृतीय भागस्थ शकुन शब्द करे, तो नेवला, ब्राह्मण, भृत्य आदि का मिलन और श्वेत पुष्प का लाभ होता है। उससे चतुर्थ भागस्थ शकुन के शब्द करने से चित्र बनाने वाले का दर्शन तथा चित्रयुक्त वस्त्रों का लाभ होता है।।१५।।

ईशान कोण और उससे द्वितीय भागस्थ शकुन फल कथन

ऐशान्यां देवलकोपसङ्गमो धान्यरत्नपशुलब्धिः ।
प्राक् प्रथमे वस्त्राप्तिः समागमश्चापि बन्धक्या ।।१६।।

माया—ईशान कोणस्थ शकुन के शब्द करने से देवलक अर्थात् पूजा करने वाले जन से मिलन और धान्य, रत्न, पशुओं आदि का लाभ होता है। उससे द्वितीय भाग अर्थात् पूर्व दिशा का प्रथम भागस्थ शकुन के शब्द करने से वस्त्र लाभ और वेश्या मिलन होता है।।१६।।

ईशान कोण से तृतीय और चतुर्थ भागस्थ शकुन का फल कथन

रजकेन समायोगो जलजद्रव्यागमश्च परतोऽतः ।
हस्त्युपजीविसमाजश्चास्माद् धनहस्तिलब्धिश्च ।।१७।।

माया—ईशान कोण से तृतीय भाग में बैठे शकुन के शब्द करने से धोबी से मिलन, जलोत्पन्न वस्तुओं का लाभ होता है। ईशान कोण से चतुर्थ भागस्थ शकुन के शब्द करने से हाथी से उपजीविका चलाने वाले जन से मुलाकात तथा उससे धन और हाथी का लाभ होता है।।१७।।

बत्तीस विभागात्मक दिशा चक्र के प्रसङ्ग में विशेष कथन

द्वात्रिंशत्प्रविभक्तं दिक्चक्रं वास्तुवत्सनेम्युक्तम् ।
अरनाभिस्थैरन्तः फलानि नवधा विकल्प्यानि ।।१८।।

माया—वास्तु बन्धन के समान विधिवद् इस दिशा चक्र के बत्तीस भागों में स्थित शकुन का फल कहा गया है। उस चक्र का मध्यवर्त्ति भाग अर्थात् अर और उसका मध्य भाग नाभि में स्थित शकुन से नौ प्रकार के फलों का विचार करना चाहिए।।१८।।

नाभि और पूर्वभागस्थ अरस्थ शकुन का फल कथन

नाभिस्थे बन्धुसुहृत्समागमस्तुष्टिरुत्तमा भवति।
प्राग्रक्तपट्टवस्त्रागमस्त्वरे नृपतिसंयोगः ॥१९॥

माया—दिशा चक्र के नाभि स्थान में शकुन के स्थित होने से बन्धुओं और मित्रों से मिलन तथा आत्मसंतुष्टि का लाभ होता है। उसके पूर्वदिशा स्थित अर पर शकुन हो, तो रक्त वस्त्र की प्राप्ति तथा राजा से भेंट होती है॥१९॥

अग्निकोणस्थ अर में शकुन का फल कथन

आग्नेये कौलिकतक्षपारिकर्माश्वसूतसंयोगः।
लब्धिश्च तत्कृतानां द्रव्याणामश्वलब्धिर्वा ॥२०॥

माया—उसके अग्निकोण में स्थित अर पर शकुन हो, तो जुलाहा, बढ़ई, राजमिस्त्री अथवा गणित के परिकर्मों में पारङ्गत, घोड़ा या गज वाहन के साथ मिलन तथा इनकी वस्तुओं और अश्वादि का लाभ होता है॥२०॥

दक्षिण दिशा के शकुन का फल कथन

नेमीभागं बुद्ध्वा नाभीभागश्च दक्षिणे योऽरः।
धार्मिकजनसंयोगस्तत्र भवेद् धर्मलाभश्च ॥२१॥

माया—चक्रप्रान्त और नाभि का परिज्ञान करने के पश्चात् दक्षिण भाग में स्थित अर पर शकुन के होने पर धर्मपालक मनुष्यों से मिलन और धर्म का लाभ होता है॥२१॥

नैर्ऋत्य कोणस्थ शकुन का फल कथन

उस्राक्रीडककापालिकागमो नैर्ऋते समुद्दिष्टः।
वृषभस्य चात्र लब्धिर्माषकुलत्थाद्यमशनं च ॥२२॥

माया—नैर्ऋत्य कोण में स्थित अर पर शकुन बैठे होने से गौ, खिलाड़ी, कापालिक आदि से मिलन, बैल की प्राप्ति तथा उड़द, कुलथी आदि पदार्थ का लाभ होता है॥२२॥

पश्चिम दिशा के शकुन का फल कथन

अपरस्यां दिशि योऽरस्तत्रासक्तिः कृषीवलैर्भवति।
सामुद्रद्रव्यसुसारकाचफलमद्यलब्धिश्च ॥२३॥

माया—पश्चिम दिशा में स्थित अर पर शकुन के बैठने से कृषकों से मिलन तथा समुद्रोत्पन्न पदार्थ, काँच, फल और मद्य की प्राप्ति होती है॥२३॥

वायव्य कोण के शकुन का फल कथन

भारवहतक्षभिक्षुकसन्दर्शनमपि च वायुदिक्संस्थे।
तिलककुसुमस्य लब्धि: सनागपुन्नागकुसुमस्य ।।२४।।

माया—वायव्य कोणस्थ अर पर शकुन के स्थित होने से भारवाहक, बढ़ई, भिक्षुक आदि का दर्शन तथा तिलक, नाग, पुन्नाग के फूलों की प्राप्ति होती है।।२४।।

उत्तर दिशा के शकुन का फल कथन

कौबेर्यां दिशि योऽरस्तत्रस्थो वित्तलाभमाख्याति।
भागवतेन समागमनमाचष्टे पीतवस्त्रैश्च ।।२५।।

माया—उत्तर दिशा में स्थित अर के ऊपर शकुन हो, तो धंन प्राप्ति, वैष्णव और पीतवस्त्रधारी ब्राह्मण से मिलन होता है।।२५।।

ईशान कोण के शकुन का फल कथन

ऐशाने व्रतयुक्ता वनिता सन्दर्शनं समुपयाति।
लब्धिश्च परिज्ञेया कृष्णाय:शस्त्रघण्टानाम् ।।२६।।

माया—ईशान कोणस्थ अर के ऊपर शकुन स्थित होने से व्रती स्त्री का दर्शन और कृष्ण लोहा, शस्त्र, घण्टों की प्राप्ति भी होती है।।२६।।

उपरोक्त पूर्वादि दिशा में स्थित शकुन में विशेष कथन

याम्येऽष्टांशे पश्चाद् द्विषट्त्रिसप्ताष्टमेषु मध्यफला।
सौम्येन च द्वितीये शेषेष्वतिशोभना यात्रा ।।२७।।
अभ्यन्तरे तु नाभ्यां शुभफलदा भवति षट्सु चारेषु।
वायव्यानैर्ऋतयोररयो: क्लेशावहा यात्रा ।।२८।।

माया—दक्षिण दिशा के अष्टम और पश्चिम दिशा के द्वितीय, षष्ठम, तृतीय, सप्तम और अष्टम तथा उत्तर दिशा के द्वितीय अष्टमांश में शान्त दिशा का शकुन स्थित होने से मध्यम फलदा यात्रा होती है। शेष अन्य पञ्चविंशति अष्टमांशों में शकुन का शुभफल ही यात्रा में मिलते हैं। वायव्य और नैर्ऋत्य कोण को छोड़कर नाभि के मध्यस्थ शेष अरों में शकुन के होने पर शुभफल की प्राप्ति होती है। लेकिन वायव्य और नैर्ऋत्य कोणस्थ अरों पर शकुन के होने से क्लेशकारी यात्रा सम्भव होती है।।२७-२८।।

पूर्वदीप्त दिशा के शकुन का फल कथन

शान्तासु दिक्षु फलमिदमुक्तं दीप्तास्वतोऽभिधास्यामि।
ऐन्द्र्यां भयं नरेन्द्रात् समागमश्चैव शत्रूणाम् ।।२९।।

माया—अब तक सभी फल शान्त दिशओं का कहा गया है। यहाँ से पूर्वादि दीप्त दिशाओं का फल कहा जा रहा है। पूर्वदिशा दीप्त हो, तो उसमें स्थित शकुन राजभय तथा शत्रु से मिलन कराने वाला होता है।।२९।।

पूर्व दिशा के दूसरा और तीसरा भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन

तदनन्तरदिशि नाशः कनकस्य भयं सुवर्णकाराणाम्।
अर्थक्षयस्तृतीये कलहः शस्त्रप्रकोपश्च ।।३०।।

माया—पूर्व दिशा के द्वितीय भागस्थ दीप्त शकुन सोने की हानि और सोनार को भी भय देने वाला होता है। उसके तृतीय भावस्थ दीप्त शकुन धनहानि, कलह और शस्त्र प्रकोप कराने वाला होता है।।३०।।

पूर्वदिशा के चौथे भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन

अग्निभयं च चतुर्थे भयमाग्नेये च भवति चौरेभ्यः।
कोणादपि द्वितीये धनक्षयो नृपसुतविनाशः ।।३१।।

माया—पूर्वदिशा के चतुर्थ भाग (अग्नि कोण)स्थ दीप्त शकुन अग्नि और चोर का भय उत्पन्न करने वाला होता है। अग्नि कोण के द्वितीय भागस्थ दीप्त शकुन धनहानि और राजपुत्र का क्षय कराने वाला होता है।।३१।।

अग्निकोण से तीसरा व चौथा भाग दीप्त शकुन का फल कथन

प्रमदागर्भविनाशस्तृतीयभागे भवेच्चतुर्थे च।
हैरण्यककारुकयोः प्रध्वंसः शस्त्रकोपश्च ।।३२।।

माया—अग्निकोण के तीसरे भाग का दीप्त शकुन स्त्रीगर्भक्षय कराने वाला होता है। अग्निकोण के चतुर्थ भाग का दीप्त शकुन सोनार और चित्रकार की हानि कराने वाला तथा शस्त्रकोप का कारण होता है।।३२।।

अग्निकोण से पाँचवें और छठवें भाग के दीप्त शकुन का फल कथन

अथ पञ्चमे नृपभयं मारीमृतदर्शनं च वक्तव्यम्।
षष्ठे तु भयं ज्ञेयं गन्धर्वाणां सडोम्बानाम् ।।३३।।

माया—अग्निकोण से पाँचवें भाग में दीप्त शकुन के स्थित होने से राजभय, महामारी और मरे जनों का दर्शन होता है। अग्निकोण से छठे भाग में दीप्त शकुन स्थित होकर डोम और गन्धर्वों से भय उत्पन्न करने वाला होता है।।३३।।

अग्निकोण से सातवें और आठवें भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन

धीवरशाकुनिकानां सप्तमभागाद् भयं भवति दीप्ते।
भोजनविघात उक्तो निर्ग्रन्थभयं च तत्परतः ।।३४।।

माया—अग्निकोण से सातवें भाग में दीप्त शकुन के होने से धीबर और चिड़िमार को भय उत्पन्न होता है। उससे आठवें भागस्थ दीप्त शकुन भोजन का नुकसान तथा बैतालिक संन्यासी का भय उत्पन्न करने वाला होता है॥३४॥

नैर्ऋत्य कोण और पश्चिम दिशा के पहिले भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन

कलहो नैर्ऋतभागे रक्तस्रावोऽथ शस्त्रकोपश्च।
अपराद्ये चर्मकृतं विनश्यते चर्मकारभयम् ॥३५॥

माया—नैर्ऋत्य कोण में स्थित दीप्त शकुन रक्तस्राव और अग्निकोप कराने वाला होता है। पश्चिम दिशा के पहिले भागस्थ दीप्त शकुन चमड़े से निर्मित जूते, वस्त्र आदि की हानि और चर्मकार को भय देने वाला होता है॥३५॥

पश्चिम दिशा के दूसरे से पाँचवें भाग तक में स्थित दीप्त शकुन का फल कथन

तदनन्तरे परिव्राट् श्रवणभयं तत्परे त्वनशनभयम्।
वृष्टिभयं वारुण्ये श्वतस्कराणां भयं परतः ॥३६॥

माया—दीप्त शकुन पश्चिम दिशा के दूसरे भाग में हो, तो तपस्वी और श्रमणों का भय; तीसरे भाग में हो, तो उपवास का भय; ठीक पश्चिम में स्थित हो, तो वृष्टि का भय तथा पाँचवें भाग में स्थित हो, तो कुत्ता और चोरों का भय उत्पन्न होता है॥३६॥

पश्चिम दिशा के छठे और सातवें तथा वायव्य कोणीय दीप्त शकुन का फल कथन

वायुग्रस्तविनाशः परे परे शस्त्रपुस्तवार्तानाम्।
कोणे पुस्तकनाशः परे विषस्तेनवायुभयम् ॥३७॥

माया—दीप्त शकुन पश्चिम दिशा के छठे भाग में होने से वात रोगियों की हानि करने वाला तथा उससे सातवें भाग में होने से शस्त्र और पुस्तक जीवी जनों की हानि करने वाला; वायव्य कोण में होने से शस्त्र की हानि करने वाला तथा उससे दूसरे भाग में होने से विष, चोर, वायु आदि का भय उत्पन्न करने वाला होता है॥३७॥

वायव्य कोणीय तीसरे व चौथे भागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन

परतो वित्तविनाशो मित्रैः सह विग्रहश्च विज्ञेयः।
तस्यासन्नेऽश्ववधो भयमपि च पुरोधसः प्रोक्तम् ॥३८॥

माया—वायव्य कोणीय तीसरे भाग के दीप्त शकुन से धन की हानि तथा मित्रों से कलह होता है। उससे चौथे भाग में दीप्त शकुन के स्थित होने से अश्व मरण और पुरोहित को भय होता है॥३८॥

उत्तर दिशा और उससे दूसरे-तीसरे भाग स्थित दीप्त शकुन का फल कथन

गोहरणशस्त्रघातावुदक् परे सार्थघातघननाशौ ।
आसन्ने च श्वभयं व्रात्यद्विजदासगणिकानाम् ॥३९॥

माया—दीप्त शकुन के उत्तर दिशा में स्थित होने से गौ की चोरी, शस्त्र की हानि आदि होती है; उससे दूसरे भाग में स्थित होने से व्यापारियों का क्षय और धनहानि करने वाला होता है तथा उससे तीसरे भाग में स्थित होने से व्रात्यद्विज (जिसका आठ से सोलह वर्ष के अन्दर यज्ञोपवीत संस्कार हुआ), भृत्य और वेश्या, इन सबों को भय प्राप्त होता है॥३९॥

उत्तर दिशा के चौथे और ईशान कोणस्थ दीप्त शकुन फल कथन

ऐशानस्यासन्ने चित्राम्बरचित्रकृद्भयं प्रोक्तम् ।
ऐशाने त्वग्निभयं दूषणमप्युत्तमस्त्रीणाम् ॥४०॥

माया—दीप्त शकुन के ईशान कोण के आसन्न अर्थात् उत्तर दिशा के चौथे भाग में होने से विविध वर्णों के वस्त्र की हानि और चित्रकार से भय उत्पन्न होता है। ईशान कोण में उसकी स्थिति होने से अग्निभय और श्रेष्ठ स्त्रियों में भी दोष उत्पन्न होता है॥४०॥

ईशान कोणीय दूसरे व तीसरे भाग स्थित शकुन फल कथन

प्रोक्तस्यैवासन्ने दुःखोत्पत्तिः स्त्रिया विनाशश्च ।
भयमूर्ध्वं रजकानां विज्ञेयं काच्छिकानां च ॥४१॥

माया—उपरोक्त के समीप अर्थात् ईशान कोण के दूसरे भाग में दीप्त शकुन के स्थित होने से दुःख उत्पन्न होता है और स्त्रियों की हानि भी होती है। उससे तीसरे भाग में दीप्त शकुन की स्थिति से धोबी और गन्धर्वों से भय उत्पन्न होता है॥४१॥

दिक् चक्रान्तिम भाग और पूर्वभागस्थ दीप्त शकुन का फल कथन

हस्त्यारोहभयं स्याद् द्विरदविनाशश्च मण्डलसमाप्तौ ।
अभ्यन्तरे तु दीप्ते पत्नीमरणं ध्रुवं पूर्वे ॥४२॥

माया—दिशा चक्र के अन्तिम भाग अर्थात् ईशान कोण से चौथे भाग में दीप्त शकुन की स्थिति से हाथी की सवारी करने वालों से भय और हाथी की मृत्यु भी होती है। पूर्व दिशा मध्य स्थित अर में दीप्त शकुन के होने से निश्चय ही स्त्री का मरण होता है॥४२॥

अग्निकोण आदि दिशा के दीप्त शकुन का फल कथन

शस्त्रानलप्रकोपावाग्नेये वाजिमरणशिल्पिभयम् ।
याम्ये धर्मविनाशोऽपरेऽन्यवस्कन्दचोक्षवधाः ॥४३॥

अपरे तु कर्मिणां भयमथ कोणे चानिले खरोष्ट्रवधः।
अत्रैव मनुष्याणां विसूचिकाविषभयं भवति ॥४४॥
उदगर्थविप्रपीडा दिश्यैशान्यां तु चित्तसन्तापः।
ग्रामीणगोपपीडा च तत्र नाभ्यां तथात्मवधः ॥४५॥

माया—आग्नेय कोण के मध्य स्थित अर मे दीप्त शकुन अवस्थित हो, तो शस्त्र और अग्नि का प्रकोप; अश्वहानि तथा शिल्पियों से भय उत्पन्न होता है। दक्षिण दिशा के अरस्थ दीप्त शकुन धर्म की हानि करने वाला होता है। नैर्ऋत्य कोणस्थ उरं में दीप्त शकुन के होने से अग्नि, अवस्कन्द और धूर्त से मृत्युभय मिलता है। पश्चिम दिशा मध्यस्थ अर में दीप्त अशकुन हो, तो राजमिस्त्रियों को भय; वायव्य कोणस्थ अर में दीप्त शकुन होने पर गधे और ऊँटों की हानि, मनुष्यों के विसूचिका रोग तथा विष का भय होता है। उत्तर दिशा स्थित अर में दीप्त शकुन के रहने पर धन हानि और ब्राह्मणों को पीड़ा होती है। ईशान कोणस्थ अर में दीप्त शकुन होने से मानसिक सन्ताप, ग्रामीणों से पीड़ा और गोपालकों से भय होता है। नाभि पर स्थित दीप्त शकुन हो, तो ग्रामीणों और गोपालकों को पीड़ा तथा यात्रियों की मृत्यु कहनी चाहिए॥४३-४५॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-अन्तरचक्रविचारो नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥८७॥

□□□

अथाष्टाशीतितमोऽध्यायः-८८

शाकुने-विरुतनिरूपणम्

सर्वप्रथम दिनचर प्राणियों के नाम परिज्ञानार्थ कथन

श्यामाश्येनशशघ्नवञ्जुलशिखिश्रीकर्णचक्राह्वया-
श्चापाण्डीरकखञ्जरीटकशुकध्वाङ्क्षाः कपोतास्त्रयः ।
भारद्वाजकुलालकुक्कुटखरा हारीतगृध्रौ कपिः
फेण्टः कुक्कुटपूर्णकूटचटकाः प्रोक्ता दिवासञ्चराः ।।१।।

भाषा—श्यामा, बाज, शशघ्न, वञ्जुल, मोर, श्रीकर्ण, चकवा, नीलकण्ठ, अण्डरीक, खञ्जन, तोता, काग, तीन प्रकार के कबूतर, भारद्वाज, कुलाल, कुक्कुट आदि पक्षीगण, गधा, हारियल, गिद्ध, वानर, फेण्ट पक्षी, मुर्गा, करायिका, चटका आदि पक्षियों और जन्तुओं को दिनचर कहा गया है।।१।।

रात्रिचर प्राणियों के नाम परिज्ञानार्थ कथन

लोमाशिका पिङ्गलछिप्पिकाख्यौ वल्गुल्युलूकौ शशकश्च रात्रौ ।
सर्वे स्वकालोत्क्रमचारिणः स्युर्देशस्य नाशाय नृपान्तदा वा ।।२।।

भाषा—शृगाल, पिङ्गल (उलूक चेटी), छिप्पिका पक्षी, बागल, उल्लू, खरगोश आदि सभी रात्रिचर हैं। उपरोक्त प्राणी जब अपने नियमित समय को छोड़कर अन्य समय में अर्थात् रात्रि में और रात्रिचर दिन में भ्रमण करें, तो वह देश के नाश या राजाजनों के मरण का संकेत होता है।।२।।

उभयचर प्राणियों के नाम परिज्ञानार्थ कथन

हयनरभुजगोष्ट्रद्वीपिसिंहर्क्षगोधा
वृकनकुलकुरङ्गश्वाजगोव्याघ्रहंसाः ।
पृषतमृगशृगालश्वाविदाख्यान्यपुष्टा
द्युनिशमपि बिडालः सारसः सूकरश्च ।।३।।

भाषा—अश्व, मनुष्य, सर्प, ऊँट, चीता, सिंह, रीछ, गोह, भेड़िया, नेवला, हरिण, कुत्ता, बकरा, गाय, व्याघ्र, हंस, पृषत् मृग जाति विशेष, मृग, गीदड़, सेही (सियार), बिल में वास करने वाले जीव, कोकिल, विडाल, सारस, पक्षी, सूअर आदि सभी दिन और रात्रि दोनों काल में विचरण करने वाले हैं।।३।।

उपरोक्तों का व्यवहार के लिए संज्ञा कथन

भषकूटपूरिकुरबककरायिकाः पूर्णकूटसंज्ञाः स्युः ।
नामान्युलूकचेट्याः पिङ्गलिका पेचिका हक्का ।।४।।

कपोतकी च श्यामा वञ्जुलकः कीर्त्यते खदिरचञ्चुः।
छुच्छुन्दरी नृपसुता वालेयो गर्दभः प्रोक्तः ॥५॥
स्रोतस्तडागभेद्यैकपुत्रकः कलहकारिका च रला।
भृङ्गारवच्च विरुवति निशि भूमौ द्व्यङ्गुलशरीरा ॥६॥
दुर्बलिको भाण्डीकः प्राच्यानां दक्षिणः प्रशस्तोऽसौ।
धिक्कारो मृगजातिः कृकवाकुः कुक्कुटः प्रोक्तः ॥७॥
गर्ताकुक्कुटकस्य प्रथितं तु कुलालकुक्कुटो नाम।
गृहगोधिकेति संज्ञा विज्ञेया कुड्यमत्स्यस्य ॥८॥
दिव्यो धन्वन उक्तः क्रोडः स्यात् सूकरोऽथ गौरुस्रा।
श्वा सारमेय उक्तो जात्या चटिका च सूकरिका ॥९॥

माया—पूर्णकूट की भष, कूटपूरि, कुरबक, करायिका आदि संज्ञा है। उलुक चेटी की पिङ्गलिका, पेचिका, हक्का आदि संज्ञा है। पोतकी की कपोतकी, श्यामा आदि संज्ञा है। वञ्जुलपक्षी, यह खदिरचञ्चु की संज्ञा है। छुच्छुन्दरी नृपसुता की और बालेय, गर्दभ आदि गधा की संज्ञा है। एकपुत्रक की स्रोतोभेद्य, तडागभेद्य आदि संज्ञा है तथा इला की कलहकारिका संज्ञा है। यह 'इला' दो अङ्गुल की होती है और रात्रि में पृथ्वी पर भृङ्गार के समान शब्द करती है। भाण्डरीक को दुर्बलिक कहते हैं; यह भाण्डरीक पूर्वदेश के निवासीजनों के दक्षिण भाग में और अन्य देशवासियों के वामभाग में आने से शुभ होता है। मृगजाति की धिक्कार और कृकवाकु की कुक्कुट संज्ञा है। गर्त कुक्कुट की कुलाल कुक्कुट और कुड्य मत्स्य की गृह गोधिका संज्ञा है। क्रोड, दिव्य, धन्वन आदि सूअर की संज्ञा है और उस्रा गौ की संज्ञा है। श्वा, सारमेय आदि कुत्ता की संज्ञा और चटक जाति की सूकरिका संज्ञा है॥४-९॥

प्रसङ्गवश ग्रन्थकार का उपदेशार्थ कथन

एवं देशे देशे तद्विद्भ्यः समुपलभ्य नामानि।
शकुनरुतज्ञानार्थं शास्त्रे सञ्चिन्त्य योज्यानि ॥१०॥

माया—इस प्रकार सभी देशों में शकुन शास्त्र के शकुन के नामों को जानकर शकुन के शब्दों को जानने के लिए विधिवद् सोच-विचार और चिन्तन कर इस शास्त्र से मिलान करना चाहिए॥१०॥

वञ्जुल, बाज, तोता, गिद्ध आदि शब्द लक्षण ज्ञानार्थ कथन

वञ्जुलकरुतं तित्तिडिति दीप्तमथ किल्किलीति तत्पूर्णम्।
श्येनशुकगृध्रकङ्काः प्रकृतेरन्यस्वरा दीप्ताः ॥११॥

माया—वञ्जुल का दीप्त स्वर 'तित्तिक' तथा पूर्ण स्वर 'किल्किली' है। बाज तोता, गिद्ध, कङ्क आदि का स्वर स्वभाव से विपरीत होने पर दीप्त होता है॥११॥

कपोत (कबूतर) की चेष्टा का फल कथन

यानासनशय्यानिलयनं कपोतस्य सद्मविशनं वा।
अशुभप्रदं नराणां जातिविभेदेन कालोऽन्यः ॥१२॥
आपाण्डुरस्य वर्षाच्चित्रकपोतस्य चैव षण्मासात्।
कुङ्कुमधूम्रस्य फलं सद्यः पाकं कपोतस्य ॥१३॥

भाषा—कबूतर का वाहन, आसन, शय्या (विस्तर), गृह आदि पर बैठना अथवा गृह में प्रवेश करना भी मनुष्यों के लिए अशुभदायक होता है। जाति के भेद से उनके फलदान का समय भी भिन्न होता है। उसकाल का ज्ञान इस प्रकार होता है—श्वेत वर्ण का कबूतर एक वर्ष में; बहुरंगा कबूतर का छः मास में तथा कुङ्कुम और धूम्रवर्ण की तरह के कबूतर का तत्काल फल होता है॥१२-१३॥

श्यामा पक्षी का शब्द अथवा स्वर ज्ञानार्थ कथन

चिचिदिति शब्दः पूर्णः श्यामायाः शूलिशूलिति च धन्यः।
चच्चेति च दीप्तः स्यात् स्वप्रियलाभाय चिक्चिगिति ॥१४॥

भाषा—श्यामा का 'चिचित् ' स्वर पूर्ण; 'शूलिशूल' स्वर धन्य (शुभ); 'चच्च' स्वर दीप्त और 'चिकचिक' स्वर अपने प्रियलाभ के लिए होता है॥१४॥

हारीत और भारद्वाज पक्षी का स्वर (शब्द) ज्ञानार्थ कथन

हारीतस्य तु शब्दो गुग्गुः पूर्णोऽपरे प्रदीप्ताः स्युः।
स्वरवैचित्र्यं सर्वं भारद्वाज्याः शुभं प्रोक्तम् ॥१५॥

भाषा—हारीत का 'गुग्गु' स्वर पूर्ण और अन्य स्वर दीप्त होते हैं; परन्तु भारद्वाज पक्षी का सभी प्रकार के विचित्रस्वर शुभ अथवा कल्याण करने वाला होता है॥१५॥

करायिका पक्षी का स्वर (शब्द) ज्ञानार्थ कथन

किष्किषिशब्दः पूर्णः करायिकायाः शुभः कहकहेति।
क्षेमाय केवलं करकरेति न त्वर्थसिद्धिकरः ॥१६॥

कोटुक्लीति क्षेम्यः स्वरः कटुक्लीति वृष्टये तस्याः।
अफलः कोटिकिलीति च दीप्तः खलु गुं कृतः शब्दः ॥१७॥

भाषा—करायिका पक्षी का 'किषकिष' स्वर पूर्ण; 'कहकह' स्वर शुभ और 'करकर' स्वर कल्याण मात्र करने वाला होता है, लेकिन अर्थ सिद्ध अर्थात् धनलाभ कराने वाला नहीं होता है। तथा उसी का 'कोटुक्ली स्वर क्षेमकरी, कटुक्ली स्वर वृष्टिकर और कोटिकिली स्वर निष्फल तथा 'गुकृत् ' स्वर दीप्त होता है॥१६-१७॥

दिव्यक पक्षी की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

शस्त्रं वामे दर्शनं दिव्यकस्य सिद्धिर्ज्ञेया हस्तमात्रोच्छ्रितस्य।
तस्मिन्नेव प्रोन्नतस्थे शरीराद् धात्री वश्यं सागरान्ताभ्युपैति ।।१८।।

माया—जिस-किसी यात्री के यात्रा के समय उसकी बायीं ओर दिव्यक (धन्वन्) पक्षी का दर्शन शुभ कारक होता है। उस यात्री से ही बायीं ओर भूमि से एक हाथ ऊँचे स्थान पर धन्वन पक्षी का दर्शन अभीष्ट कार्य की सिद्धि कराने वाला होता है। उसी स्थिति में पर्याप्त ऊँचे स्थान पर वह स्थित हो, तो वह यात्री समुद्र पर्यन्त भूमि को वश में करने वाला होता है।।१८।।

सर्प चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

फणिनोऽभिमुखागमोऽरिसङ्गं कथयति बन्धुवधात्ययं च यातुः ।
अथवा समुपैति सव्यभागात्र स सिद्ध्यै कुशलो गमागमे च ।।१९।।

माया—यात्रा के समय यात्री के सामने सर्प के आ जाने से उससे शत्रुओं से मिलन, बन्धुओं की हानि और विनाश संसूचित होता है। यात्रा के समय यात्री के दायीं ओर से बायीं ओर सर्प के आ जाने से कार्य सिद्धि नहीं होती; जानना चाहिए।।१९।।

खञ्जन पक्षी की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

अब्जेषु मूर्धसु च वाजिगजोरगाणां
राज्यप्रदः कुशलकृच्छुचिशाद्वलेषु।
भस्मास्थिकाष्ठतुषकेशतृणेषु दुःखं
दृष्टः करोति खलु खञ्जनकोऽब्दमेकम् ।।२०।।

माया—यात्रा के समय खञ्जन पक्षी कमल, अश्व, हाथी या सर्प के मस्तक पर दीखने से वह राज्यप्रद; पवित्र स्थान या हरी घास पर दीखने से मंगलकारक तथा भस्म, हड्डी, काष्ठ, तुष की ढ़ेर, बाल या तृण पर दीखने से वर्ष पर्यन्त दुःखप्रद होता है।।२०।।

तित्तिर और खरहा की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

किलिकिल्किलि तित्तिरस्वनः शान्तः शस्तफलोऽन्यथापरः।
शशको निशि वामपार्श्वगो वाशन् शस्तफलो निगद्यते ।।२१।।

माया—तित्तिर पक्षी का 'किलिकिल्किली' शान्त स्वर कल्याण कारक और इससे भिन्न स्वर हानिकारक होता है। खरहा द्वारा बायीं ओर स्थित होकर रात्रि के समय स्वर करना शुभदायक होता है।।२१।।

वानर और कुलाल कुक्कुट का स्वर ज्ञानार्थ कथन

किलिकिलिविरुतं कपेः प्रदीप्तं न शुभफलप्रदमुद्दिशन्ति यातुः।
शुभमपि कथयन्ति चुग्लुशब्दं कपिसदृशं च कुलालकुक्कुटस्य ।।२२।।

भाषा—वानर का 'किलिकिलि' शब्द दीप्त है, जो यात्रा करने वाले के लिए शुभप्रद नहीं होता। लेकिन उसका 'चुग्लु' स्वर शुभदायक होता है। इसी प्रकार वानर की तरह ही शुभाशुभ फलप्रद स्वर कुलालकुक्कुट का भी कहा गया है॥२२॥

चाष (नीलकण्ठ) के स्वर और चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

पूर्णाननः कृमिपतङ्गपिपीलकाद्यै-
श्चाषः प्रदक्षिणमुपैति नरस्य यस्य।
खे स्वस्तिकं यदि करोत्यथवा यियासो-
स्तस्यार्थलाभमचिरात् सुमहत् करोति ॥२३॥

भाषा—कीड़ा-पतङ्ग अथवा चींटी आदि से पूर्णतया भरा हुआ मुख (चोंच) वाला नीलकण्ठ पक्षी, जिस-किसी मनुष्य की प्रदक्षिणा करता हुआ चला जाय अथवा जिस यात्रा करने वाले मनुष्य के ऊपर आकाश में स्वस्तिक के समान चिह्न बनाता चला जाय, ऐसे मनुष्य को शीघ्र अत्यधिक धन की प्राप्ति होती है॥२३॥

काक और नीलकण्ठ की झगड़ा से फल ज्ञानार्थ कथन

चाषस्य काकेन विरुध्यतश्चेत् पराजयो दक्षिणभागगस्य।
वधः प्रयातस्य तदा नरस्य विपर्यये तस्य जयः प्रदिष्टः ॥२४॥

भाषा—काक से झगड़ा करता हुआ नीलकण्ठ पक्षी दक्षिण भाग में जाकर पराजित हो, तो ऐसे में यात्रा करने वाले पुरुष का वध होना प्रकट होता है; इसके विपरीत अर्थात् झगड़ा करता हुआ नीलकण्ठ पक्षी उत्तर भाग में जाकर विजयी हो, तो ऐसे में यात्री का भी जय समझना चाहिए॥२४॥

नीलकण्ठ का और स्वर ज्ञानार्थ कथन

केकेति पूर्णकुटवद्यदि वामपार्श्वे
चाषः करोति विरुतं जयकृत्तदा स्यात्।
क्रेक्रेति तस्य विरुतं न शिवाय दीप्तं
सन्दर्शनं शुभदमस्य सदैव यातुः ॥२५॥

भाषा—जब नीलकण्ठ बायीं ओर स्थित रहकर पूर्णकूट (करायिका) के समान "के का" इस प्रकार स्वर करता हो, तो जयप्रद होता है। परन्तु उसका 'क्र क्र' दीप्त स्वर मंगलकारक नहीं होता, फिर भी उसका दर्शन मात्र ही सदैव यात्रा करने वालों के लिए कल्याणप्रद होता है॥२५॥

अण्डीरक और फेण्ट पक्षी की चेष्टा कथन

अण्डीरकष्टीति रुतेन पूर्णष्टिट्टिट्टिशब्देन तु दीप्त उक्तः।
फेण्टः शुभो दक्षिणभागसंस्थो न वाशिते तस्य कृतो विशेषः ॥२६॥

माया—अण्डीरक का 'टी' स्वर पूर्ण और 'टिट्टिट्टि' दीप्त स्वर है तथा फेण्ट पक्षी यात्रा करने वाले की दाहिनी ओर स्थित हो, तो शुभदायक होता है, इस पक्षी के स्वर में और अन्य कोई वैशिष्ट्य नहीं कहा गया है॥२६॥

श्रीकर्ण पक्षी का स्वर ज्ञानार्थ कथन

श्रीकर्णरुतं तु दक्षिणे क्वक्वक्वेति शुभं प्रकीर्तितम्।
मध्यं खलु चिक्चिकीति यच्छेषं सर्वमुशन्ति निष्फलम्॥२७॥

माया—यात्रा करने वालों के दक्षिण भाग में श्रीकर्ण पक्षी का 'क्व क्व क्व' स्वर करना शुभदायक माना गया है। उसका 'चिक्चिकि' स्वर मध्यम फलदायक तथा अन्य सभी स्वर निष्फल कहा गया है॥२७॥

दुर्बलि पक्षी का स्वर ज्ञानार्थ कथन

दुर्बलेरपि चिरिल्विरिल्विति प्रोक्तमिष्टफलदं हि वामतः।
वामतश्च यदि दक्षिणं व्रजेत् कार्यसिद्धिमचिरेण यच्छति॥२८॥

माया—यात्रा करने वाले मनुष्य की बायीं ओर में स्थित दुर्बलि (भाण्डीक) पक्षी का 'चिरिल्विरिलु' स्वर करना शुभदायक होता है, ऐसे में उसका बायें से दायें भाग में आ जाना, 'शीघ्र कर्मसिद्धि' होने को सूचित करता है॥२८॥

दुर्बलि पक्षी का विशिष्ट स्वर ज्ञानार्थ कथन

चिक्चिकिवाशितमेव तु कृत्वा दक्षिणभागमुपैति तु वामात्।
क्षेमकृदेव न साधयतेऽर्थान् व्यत्ययगो वधबन्धभयाय॥२९॥

माया—दुर्बलि (भाण्डीक) पक्षी द्वारा चिक्चिकि स्वर निकालता हुआ यात्रा करने वालों के बायें भाग से दायें भाग में आ जाने से क्षेम या कल्याण होता है; परन्तु अभीष्ट की सिद्धि करने वाला नहीं होता है। इसके विपरीत अर्थात् दायें भाग से बायें भाग में आ जाने पर यात्री के लिए वध, बन्धन और भय का कारण होता है॥२९॥

सारिका (मैना) का स्वर ज्ञानार्थ कथन

क्रक्रेति च सारिका द्रुतं त्रेत्रे वाप्यभया विरौति या।
सा वक्ति यियासतोऽचिराद् गात्रेभ्यः क्षतजस्य विस्रुतिम्॥३०॥

माया—जो सारिका (मैना) जोड़ से 'क्र क्र' स्वर अथवा निर्भय होकर 'त्रे त्रे' स्वर करती हो, वह यात्रा करने वालों के शरीर से शीघ्र रक्त स्राव होने को संसूचित करती है॥३०॥

फेण्टक का स्वर ज्ञानार्थ कथन

फेण्टकस्य वामतश्चिरिल्विरिल्विति स्वनः।
शोभनो निगद्यते प्रदीप्त उच्यतेऽपरः॥३१॥

माया—यात्रा करने वालों के बायें भाग में फेण्टक द्वारा 'चिरिल्विरिलु' स्वर करने से शुभदायक होता है। फेण्टक का इसके अतिरिक्त अन्य सभी स्वर दीप्त होते हैं॥३१॥

गर्दभ (गधा) का स्वर ज्ञानार्थ कथन

श्रेष्ठं खरं स्थास्नुमुशन्ति वाममोङ्कारशब्देन हितं च यातुः।
अतोऽपरं गर्दभनादितं यत् सर्वाश्रयं तत् प्रवदन्ति दीप्तम्॥३२॥

माया—बायें भाग में स्थित गर्दभ यात्रा करने वालों के लिए श्रेष्ठ है, उसका ओङ्कार स्वर यात्रा करने वालों के लिए हित साधक होता है। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार के गर्दभ स्वर दीप्त कहा गया है॥३२॥

कुरङ्ग, मृग और पृषत के स्वर ज्ञानार्थ कथन

आकाररावी समृगः कुरङ्ग
ओकाररावी पृषतश्च पूर्णः।
येऽन्ये स्वरास्ते कथिताः प्रदीप्ताः
पूर्णाः शुभाः पापफलाः प्रदीप्ताः॥३३॥

माया—'आकार' स्वर निकालने वाला कुरङ्ग और मृग तथा ओंकार स्वर निकालने वाला पृषत पूर्ण होता है। शेष सभी स्वर दीप्त हैं। सभी शकुनों के प्रसङ्ग में जानना चाहिए कि उनके पूर्ण स्वर शुभदायक और दीप्त स्वर अशुभदायक होते हैं॥३३॥

मुर्गा का स्वर ज्ञानार्थ कथन

भीता रुवन्ति कुकुकुक्विति ताम्रचूडा-
स्त्यक्त्वा रुतानि भयदान्यपराणि रात्रौ।
स्वस्थैः स्वभावविरुतानि निशावसाने
ताराणि राष्ट्रपुरपार्थिववृद्धिदानि॥३४॥

माया—मुर्गा का भयभीत होकर 'कु कु कु कु' स्वर करने के अतिरिक्त शेष अन्य सभी प्रकार के स्वर भयदायक होते हैं। तथा उसका स्वस्थावस्था में रात्रि के अन्त प्रहर में 'तार' स्वर करने पर राज्य, पुर, राजा आदि की अभिवृद्धि करने वाला होता है॥३४॥

छिप्पिका और विडाल (मार्जार) के स्वर ज्ञानार्थ कथन

नानाविधानि विरुतानि हि छिप्पिकाया-
स्तस्याः शुभाः कुलुकुलुर्न शुभास्तु शेषाः।
यातुर्बिडालविरुतं न शुभं सदैव
गोस्तु क्षुतं मरणमेव करोति यातुः॥३५॥

माया—छिप्पिका के विविध प्रकार के स्वर कहे गए हैं, उनमें से 'कु लु कु लु' स्वर शुभप्रद नहीं है, शेष अन्य सभी स्वर शुभ माने गए हैं और विडाल का स्वर सदैव यात्रा करने वालों के लिए अशुभप्रद है तथा गो जाति की छींक यात्री की मृत्यु का संकेतक है॥३५॥

उलुक स्वर ज्ञानार्थ कथन

हुंहुंगुग्लुगिति प्रियामभिलषन् क्रोशत्युलूको मुदा
पूर्णः स्याद् गुरुलु प्रदीप्तमपि च ज्ञेयं सदा किस्किसि।
विज्ञेयः कलहो यदा बलबलं तस्यासकृद्वाशितं
दोषायैव टटट्टेति न शुभाः शेषास्तु दीप्तस्वराः ॥३६॥

माया—उल्लू अपनी प्रिया की अभिलाषा से आनन्द पूर्वक 'हुँ हुँ गुग्लुक्' स्वर करता है। इसका 'गुरुलु' स्वर पूर्ण और 'किस्किसि' स्वर सदैव प्रदीप्त माना गया है। उसका बार-बार 'बलबल' स्वर सूनाई देना कलह का और 'टटट्ट' स्वर दोष उत्पन्न करने का संकेतक है। शेष अन्य सभी प्रकार का उसका स्वर दीप्त होने से शुभदायक भी नहीं है॥३६॥

सारस का स्वर ज्ञानार्थ कथन

सारसकूजितमिष्टफलं तद्यद्युगपद्विरुतं मिथुनस्य।
एकरुतं न शुभं यदि वा स्यादेकरुते प्रविरौति चिरेण ॥३७॥

माया—सारस का जोड़ा एक साथ शब्दायमान हो, तो वह अभीष्ट फलप्रदायक होता है। एक का स्वर अशुभ होता है। जब एक के स्वर के बाद दूसरे का विलम्ब से प्रतिस्वर हो, तो भी अशुभदायक ही होता है॥३७॥

पिङ्गला का स्वर ज्ञानार्थ कथन

चिरिल्विरिल्विति स्वरैः शुभं करोति पिङ्गलाः।
अतोऽपरे तु ये स्वराः प्रदीप्तसंज्ञितास्तु ते ॥३८॥

माया—पिङ्गला 'चिरिलु-इरिलु' स्वर करती है, तो शुभदायक है। शेष अन्य सभी प्रकार के उसका स्वर दीप्त होने से अशुभदायक होते हैं॥३८॥

पिङ्गला का और भी स्वर ज्ञानार्थ कथन

इशिविरुतं गमनप्रतिषेधि कुशुकुशु चेत् कलहं प्रकरोति।
अभिमतकार्यगतिं च यथा सा कथयति तच्च विधिं कथयामि ॥३९॥

माया—पिङ्गला का 'इशि' स्वर यात्रा करने वालों की यात्रा का प्रतिषेधक है और उसका 'कु शु कु शु' स्वर क्लेशकारक होता है। अब इस पिङ्गला के द्वारा

अभीष्ट सिद्धि जिस विधि से सूचित होती है, उस विधि को कहता हूँ।।३९।।

अभी सिद्ध्यर्थ विधि ज्ञानार्थ कथन

दिनान्तसन्ध्यासमये निवासमागम्य तस्याः प्रयतश्च वृक्षम्।
देवान् समभ्यर्च्य पितामहादीन्नवाम्बरस्तं च तरुं सुगन्धैः ।।४०।।
एको निशीथेऽनलदिक्स्थितश्च दिव्येतरैस्तां शपथैर्नियोज्य।
पृच्छेद्यथाचिन्तितमर्थमेवमनेन मन्त्रेण यथाशृणोति ।।४१।।

माया—दिन के व्यतीत होने पर सन्ध्या वेला में पवित्रावस्था में नवीन वस्त्रादि धारण कर उस पिङ्गला के निवास वृक्ष के समीप पहुँच कर नवीन सुगन्धि द्रव्यों अर्थात् चन्दन, कुङ्कुम, कस्तूरी, अगुरु आदि से उस वृक्ष के सहित ब्रह्मा, विष्णु और महेश रूपी त्रिगुणी देवताओं की पूजा करनी चाहिए। तत्पश्चात् अर्द्धरात्रि के समय अकेले उस वृक्ष से अग्नि कोण में खड़े होकर दिव्य और लौकिक शपथों से सम्बोधित करते हुए जिस भी विधि से वह सुन सके, उस प्रकार अग्रलिखित मन्त्रों के द्वारा अपने पूर्व मनश्चिन्तित अर्थ की सिद्धि के प्रसङ्ग में पूछना चाहिए।।४०-४१।।

पिङ्गला सिद्धि मन्त्र ज्ञानार्थ कथन

विद्धि भद्रे मया यत् त्वमिममर्थं प्रचोदिता।
कल्याणि सर्ववचसां वेदित्री त्वं प्रकीर्त्यसे ।।४२।।
आपृच्छेऽद्य गमिष्यामि वेदितश्च पुनस्त्वहम्।
प्रातरागम्य पृच्छे त्वामाग्नेयीं दिशमाश्रितः ।।४३।।
प्रचोदयाम्यहं यत्त्वां तन्मे व्याख्यातुमर्हसि।
स्वचेष्टितेन कल्याणि यथा वेद्मि निराकुलम् ।।४४।।

माया—हे भद्रे ! मैंने जो इस अर्थ को जानने हेतु प्रयत्न किया है, उसको भी तुम जानती ही हो ! हे कल्याणि ! तुम सभी वाक्यों और अर्थों को जानने वाली मानी जाती हो। आज जानकर मैं जाऊँगा; पुनः प्रातःकाल मैं जानने वाला आकर अग्नि कोण में खड़े होर प्रश्न करूँगा। तुम भी जो मैं प्रश्न करता हूँ उसको हे कल्याणि ! अपनी चेष्टा के द्वारा जिस भी प्रकार मैं निःसंशय होकर जान सकूँ, उस प्रकार बताने हेतु सक्षम हो।।४२-४४।।

पिङ्गला की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

इत्येवमुक्ते तरुमूर्धगायाश्चिरिल्विरिल्वीति रुतेऽर्थसिद्धिः।
अत्याकुलत्वं दिशिकारशब्दे कुचाकुचेत्येवमुदाहृते वा ।।४५।।
अवाक्प्रदानेऽपि हितार्थसिद्धिः पूर्वोक्तदिक्चक्रफलैरतोऽन्यत्।
वाच्यं फलं चोत्तममध्यनीचशाखास्थितायां वरमध्यनीचम् ।।४६।।

माया—इस तरह से सम्प्रार्थित वृक्ष पर अवस्थित पिङ्गला चिरिलु-इरिलु स्वर निकालने लगे, तो कार्य की सिद्धि; 'दिशिकार' या 'कुचाकुचा' स्वरोच्चारित करने लगे, तो अत्यन्त आकूलता तथा चुप ही रह जाय, तो इष्टार्थ सिद्धि समझनी चाहिए। इसके अतिरिक्त उपरोक्त दिशा चक्र फल से भी इसका फल जानना चाहिए। पिङ्गला ऊर्ध्व शाखा पर स्थित हो, तो श्रेष्ठ; मध्यम शाखा पर स्थित हो, तो मध्यम तथा अध:स्थ शाखा पर हो, तो अल्पफल प्रदायिका होती है॥४५-४६॥

गृहगोधिका (छिपकली) का फल कथन

दिङ्मण्डलेऽभ्यन्तरबाह्यभागे फलानि विन्द्याद् गृहगोधिकाया: ।
छुच्छुन्दरी चिच्चिडिति प्रदीप्ता पूर्णा तु सा तित्तिडिति स्वनेन ॥४७॥

माया—बत्तीस भागात्मक दिशा चक्र के नाभि और नाभि से बाह्य भाग में अवस्थित छिपकली अर्थात् गिरगिट का फल जानना चाहिए। यहाँ यह भी ध्यानस्थ कर लेना चाहिए कि छुछुन्दर को चिच्चिड स्वर से दीप्त तथा तित्तिड़ स्वर से पूर्ण समझना चाहिए॥४७॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमाग्राम-वास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-विरुतानिरूपणं नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥८८॥

□□□

अथैकोननवतितमोऽध्यायः-८९

शाकुने-श्वचक्रनिरूपणम्

सर्वप्रथम कुत्ता की चेष्टा ज्ञानार्थ कथन

नृतुरगकरिकुम्भपर्याणसक्षीरवृक्षेष्टकासञ्चयच्छत्रशय्यासनोलू-खलानि
ध्वजं चामरं शाद्वलं पुष्पितं वा प्रदेशं यदा श्वावमूत्र्याग्रतो याति यातुस्तदा
कार्यसिद्धिर्भवेदार्द्रके गोमये मिष्टभोज्या-गमः शुष्कसम्मूत्रणे शुष्कमन्नं
गुडो मोदकावाप्तिरेवाथवा ॥

माया—जब मनुष्य, घोड़ा, हाथी, घड़ा, पर्याण, दूध वाले वृक्ष, ईंट का ढेर, छत्र, शय्या, आसन, ऊखल, ध्वज, चामर, दूब या पुष्प युक्त स्थल पर मूत्र त्याग कर कुत्ता यात्रा करने वाले के अग्रभागस्थ होकर चले, तब कार्य की सिद्धि समझनी चाहिए और आर्द्र गोबर पर मूत्रत्याग कर कुत्ता अग्रस्थ होकर चले, तब भी मिष्टान्न भोजन की प्राप्ति; शुष्क वस्तु आदि पर मूत्र त्याग कर यात्रा करने वाले के अग्रस्थ होकर कुत्ता चले, तब शुष्क अन्न, गुड़, मोदक लड्डू आदि की प्राप्ति कहनी चाहिए॥

कुत्ता की चेष्टा ज्ञानार्थ और भी कथन

अथ विषतरुकण्टकीकाष्ठपाषाणशुष्कद्रुमास्थिश्मशानानि मूत्र्यावहत्याथवा
यायिनोऽग्रेसरोऽनिष्टमाख्याति शय्या-कुलालादिभाण्डान्यभुक्तान्यभिन्नानि
वा मूत्रयन् कन्यकादोष-कृद्भुज्यमानानि चेद् दुष्टतां तद्गृहिण्यास्तथा
स्यादुपानत्फलं गोस्तु सम्मूत्रणेऽवर्णजः सङ्करः ॥

माया—अथवा विषवृक्ष, कँटीले वृक्ष, काष्ठ, पाषाण, सूखा वृक्ष, हड्डी, श्मशान स्थान आदि पर मूत्रत्याग कर कुत्ता द्वारा उस स्थान को पैर से खुरचता हुआ यात्रा करने वाले के आगे स्थित होकर चलने से यात्री के लिए अशुभ फल संसूचित होती है। शय्या अथवा कुम्हार निर्मित नये भाण्ड पर मूत्र त्यागने से कन्याओं में दोष उत्पन्न करने वाला होता है। व्यवहार किया पुराने भाण्ड पर मूत्रत्याग करने से यात्री की गृहिणी में दोष उत्पन्न करने वाला होता है। इसी तरह खडाऊँ (जूतों) पर भी मूत्रत्याग का फल होता है अर्थात् नये जूते आदि पर मूत्रत्याग से कन्या में दोष और पुराने प्रयुक्त जूते पर मूत्र त्यागने से यात्री के गृहिणी में दोष उत्पन्न करने वाला होता है। कुत्ता गो जाति पर मूत्र त्याग कर यात्रा करने वाले के आगे-आगे चलने से उस यात्री के घर में क्षुद्रजाति से वर्णसंकर उत्पन्न होता है।

कुत्तों द्वारा मुख से जूते आदि ग्रहण करने के फल ज्ञानार्थ कथन

गमनमुखमुपानहं सम्प्रगृह्योपतिष्ठेद्यदा स्यात्तदा सिद्धये
मांसपूर्णाननेऽर्थाप्तिरार्द्रेण चास्थ्ना शुभं साग्न्यलातेन शुष्केण चास्थ्ना

गृहीतेन मृत्युः प्रशान्तोल्मुकेनाभिघातोऽथ पुंसः शिरोहस्तपादादिवक्त्रे
भुवोऽभ्यागमो वस्त्रचीरादिभिर्व्यापदः केचिदाहुः सवस्त्रे शुभम् ।
प्रविशति तु गृहं सशुष्कास्थिवक्त्रे प्रधानस्य तस्मिन् वधः
शृङ्खलाशीर्णवल्लीवरत्रादि वा बन्धनं चोपगृह्योपतिष्ठेद्यदा स्यात् तदा
बन्धनं लेढि पादौ विधुन्वन् स्वकर्णावुपर्याक्रमंश्चापि विघ्नाय यातुर्विरोधे
विरोधस्तथा स्वाङ्गकण्डूयने स्यात् स्वपंश्चोर्ध्वपादः सदा दोषकृत् ।।१।।

माया—जब कुत्ता अपने मुख से जूते को पकड़कर यात्रा करने वाले के पास पहुँच जाता है, तो यात्री की कार्य सिद्धि होती है। मांस मुख में लेकर यात्री के समक्ष पहुँचे, तो धन प्राप्ति होती है। आर्द्र हड्डी मुख में पकड़ कर यात्री के सम्मुख आ जाय, तो यात्री के लिए शुभदायक होता है। जब कुत्ता जलती लकड़ी अथवा सूखी हड्डी लेकर सामने आ पहुँचता है, तो यात्री की मृत्यु होती है। अग्नि रहित अधजला-सा काष्ठ मुख में लेकर कुत्ता के यात्री के समक्ष आ जाने से उपद्रव होता है। जब कुत्ता मृत् व्यक्ति के शिर, हाथ, पैर आदि मुख में पकड़ कर यात्री के सामने आ पहुँचे, तो यात्री को भूमि लाभ होता है; परन्तु वस्त्र, वल्कल आदि पकड़ कर उपस्थित हो, तो यात्री की मृत्यु होती है। किसी ने वस्त्र के साथ कुत्ते के आने को शुभकारक कहा है।

कुत्ता द्वारा सूखी हुई हड्डी के साथ गृह में प्रवेश करना गृहपति की मृत्यु को संसूचित करता है। कुत्ता द्वारा जञ्जीर, पुरानी लता, चमड़े की रस्सी आदि के साथ यात्री के समक्ष आ जाने से यात्री को बन्धन होता है।

कुत्ता द्वारा यात्रा करने वाले के पैरों को चाटना अथवा अपने ही कानों को पटपटाना अथवा यात्री के ऊपर चढ़ने का प्रयास करना, यात्रा में विघ्न आने की सूचना है। कुत्ता द्वारा यात्री के मार्ग चलने का विरोध करना अथवा अपने ही अङ्गों को खुजलाना आदि यात्री का मार्ग में विरोध होने को व्यक्त करता है। किसी यात्री या स्थान विशेष पर स्थित मनुष्य के समक्ष पैरों को ऊपर कर ले जाना सदा दोष कारक होता है।।१।।

कुत्तों द्वारा शब्द करने का फल ज्ञानार्थ कथन

सूर्योदयेऽर्काभिमुखो विरौति ग्रामस्य मध्ये यदि सारमेयः ।
एको यदा वा बहवः समेताः शंसन्ति देशाधिपमन्यमाशु ।।२।।

माया—एक या अनेक कुत्ता सूर्योदय काल में गाँव के बीच में एकत्रित होकर सूर्याभिमुख होकर शब्द करते हों, तो शीघ्र उस देश में सत्तापरिवर्तन होता है अर्थात् उस देश का पुनः दूसरा अधिपति होता है।।२।।

अग्निकोण आदि में कुत्ता के शब्द का फल कथन

सूर्योन्मुखः श्वानलदिक्स्थितश्च चौरानलत्रासकरोऽचिरेण ।
मध्याह्नकालेऽनलमृत्युशंसी सशोणितः स्यात् कलहोऽपराह्ने ।।३।।

माया—कुत्ता द्वारा अग्निकोण में सूर्याभिमुख स्थित होकर शब्द करने से शीघ्र ही चोर और अग्नि भय उत्पन्न करने वाला होता है। कुत्ता द्वारा मध्याह्न काल में सूर्य की ओर मुख करके शब्द करने से अग्नि भय के साथ मुत्यु करने वाला होता है। कुत्ता द्वारा अपराह्न काल में सूर्याभिमुख स्थित होकर शब्द या स्वर करने से रक्तस्राव के सहित युद्ध का होना संसूचित होता है।।३।।

सूर्यास्त आदि काल में कुत्ते के स्वर का फल कथन

रुवन् दिनेशाभिमुखोऽस्तकाले कृषीवलानां भयमाशु दत्ते ।
प्रदोषकालेऽनिलदिङ्मुखश्च दत्ते भयं मारुततस्करोत्थम् ।।४।।

माया—कुत्ता द्वारा सूर्यास्त काल में सूर्याभिमुख शब्द करने से किसानों को शीघ्र भय देने वाला होता है तथा प्रदोष काल में वायव्य कोणस्थ होकर कुत्तों के शब्द करने से वायु और चोरों का भय उत्पन्न करने वाला होता है।।४।।

मध्यरात्रि आदि काल में कुत्तों के शब्द का फल कथन

उदङ्मुखश्चापि निशार्धकाले विप्रव्यथां गोहरणं च शास्ति ।
निशावसाने शिवदिङ्मुखश्च कन्याभिदूषानलगर्भपातान् ।।५।।

माया—कुत्तों द्वारा मध्यरात्रि के समय उत्तर दिशा की ओर मुख करके शब्द करने पर ब्राह्मणों को पीड़ित करने वाला और गौ की चोरी होने की सूचना देने वाला होता है।

कुत्तों द्वारा रात्रि के अवसान के समय ईशान कोण की ओर मुख कर शब्द करने से कन्याओं को दूषित होने, अग्निभय और स्त्रियों के गर्भपात होने की संसूचना देने वाला होता है।।५।।

वर्षा ऋतु के समय कुत्तों के शब्द का फल कथन

उच्चैः स्वराः स्युस्तृणकूटसंस्थाः प्रासादवेश्मोत्तमसंस्थिता वा ।
वर्षासु वृष्टिं कथयन्ति तीव्रामन्यत्र मृत्युं दहनं रुजश्च ।।६।।

माया—वर्षा ऋतु के समय घास-फूस से बने घर, प्रासाद या श्रेष्ठ गृहस्थ कुत्ता ऊँची आवाज से शब्द करता है, तो अत्यधिक वृष्टि होने को संसूचित करने वाला होता है। उपरोक्त गृहस्थान में स्थित कुत्ता अन्य ऋतुओं में शब्द करता हो, तो मृत्यु, अग्निभय, रोगभय आदि की संसूचनाकारक होता है।।६।।

कुत्ता की चेष्टा से वृष्टि और ज्ञानार्थ कथन

प्रावृट्कालेऽवग्रहेऽम्भोऽवगाह्य प्रत्यावर्तै रेचकैश्चाप्यभीक्ष्णम् ।
आधुन्वन्तो वा पिबन्तश्च तोयं वृष्टिं कुर्वन्त्यन्तरे द्वादशाहात् ।।७।।

माया—वर्षा ऋतु के समय अनावृष्टि होने पर कुत्ता द्वारा जल में स्नान करके वारम्बार भूमि में अगल-बगल पलटता हुआ रेचन करना या काँपता हुआ जलपान करना बारह दिन के पश्चात् वृष्टि होना संसूचित होता है॥७॥

कुत्ता की चेष्टा से स्त्री वेश्या योग कथन

द्वारे शिरो न्यस्य बहिः शरीरं रोरूयते श्वा गृहिणीं विलोक्य।
रोगप्रदः स्यादथ मन्दिरान्तर्बहिर्मुखो वक्ति च बन्धकीं ताम् ॥८॥

माया—कुत्ता गृह के द्वार पर अपना शिर और बाहर की ओर धड़ रखकर गृहपति की पत्नि की ओर देखकर बारम्बार शब्द करें, तो उस गृहिणी के वेश्या होने की सूचना होता है॥८॥

कुत्तों द्वारा दीवार खोदने का फल कथन

कुड्यमुत्किरति वेश्मनो यदा तत्र खानकभयं भवेत्तदा।
गोष्ठमुत्किरति गोग्रहं वदेद्धान्यलब्धिमपि धान्यभूमिषु ॥९॥

माया—कुत्ता द्वारा घर की दीवार की खोदाई करने पर उस घर की सन्धिभेद का भय उत्पन्न होता है। कुत्ता द्वारा गोष्ठ स्थान को खोदने पर गायों का हरण तथा धान्य युक्त भूमि को खोदने से धान्य का लाभ होता है॥९॥

अश्रुपूरित आदि कुत्ते के आँखों का फल कथन

एकेनाक्ष्णा साश्रुणा दीनदृष्टिर्मन्दाहारो दुःखकृत्तद्गृहस्य।
गोभिः साकं क्रीडमाणः सुभिक्षं क्षेमारोग्यं चाभिधत्ते मुदश्च ॥१०॥

माया—कुत्ते की एक आँख अश्रुपूरित और मन्द दृष्टि वाली हो तथा वह अल्प भोजन करने वाला हो, तो वह गृह के दुःख का कारण होता है। कुत्तों का गोओं के साथ खेलना सुभिक्ष, क्षेम, आरोग्य और हर्ष प्रदान करने वाला होता है॥१०॥

कुत्तों के सूँघने का फल ज्ञानार्थ कथन

वामं जिघ्रेज्जानु वित्तागमाय स्त्रीभिः साकं विग्रहो दक्षिणश्चेत्।
ऊरुं वामं चेन्द्रियार्थोपभोगः सव्यं जिघ्रेदिष्टमित्रैर्विरोधः ॥११॥

माया—कुत्ते के द्वारा यात्री के वाम जाँघ सूघने से धन लाभ; दायें जाँघ को सूँघने पर स्त्रियों से कलह; वाम ऊरु को सूँघने पर बुद्धि-इन्द्रियों के विषयों का उपयोग और दक्षिण ऊरु को सूँघने पर मित्र विरोध होता है॥११॥

कुत्तों के सूँघने का और भी फल ज्ञानार्थ कथन

पादौ जिघ्रेद्यायिनश्चेदयात्रां प्राहार्थाप्तिं वाञ्छितां निश्चलस्य।
स्थानस्थस्योपानहौ चेद्विजिघ्रेत्क्षिप्रं यात्रां सारमेयः करोति ॥१२॥

माया—कुत्तों द्वारा यात्रा करने वाले के दोनों पैरों को सूँघे जाने पर यात्रा का प्रतिषेध को सूचित करती है। उसी जगह पर यात्री का निर्भीकता पूर्वक खड़े हो जाने पर अभीष्ट सिद्धि होती है। किसी स्थान विशेष पर यात्री के स्थित जूते को सूँघे जाने पर शीघ्र यात्रा करने की ओर संकेत करना होता है॥१२॥

कुत्ते के अन्य चेष्टाओं के फल कथन

उभयोरपि जिघ्रणे हि बाह्वोर्विज्ञेयो रिपुचौरसम्प्रयोगः ।
अथ भस्मनि गोपयीत भक्षान् मांसास्थीनि च शीघ्रमग्निकोपः ॥१३॥

माया—यात्री के दोनों भुजाओं को कुत्ता द्वारा सूँघने पर शत्रु और चोर का भय होता है। कुत्ता से भस्म में अपना भोजन की वस्तु माँस या हड्डी को छिपाना शीघ्र अग्नि प्रकोप की सूचना, जानना चाहिए॥१३॥

कुत्ते का गाँव से श्मशान एक शब्द करने का फल कथन

ग्रामे भषित्वा च बहिः श्मशाने भषन्ति चेदुत्तमपुंविनाशः ।
यियासतश्चाभिमुखो विरौति यदा तदा श्वा निरुणद्धि यात्राम् ॥१४॥

माया—कुत्ता द्वारा ग्राम से शब्द करता हुआ श्मशान में भी जाकर शब्द करने से उस ग्राम के श्रेष्ठ पुरुष की मृत्यु सूचित होती है। यात्री के सम्मुख आकर कुत्ता शब्द करने गे, तो वह यात्रा को रोकने का संकेत है॥१४॥

उकार आदि वर्ण से कुत्ते का शब्द करने का फलकथन

उकारवर्णे विरुतेऽर्थसिद्धिरोकारवर्णेन च वामपार्श्वे ।
व्याक्षेपमौकाररुतेन विन्द्यान्निषेधकृत्सर्वरुतैश्च पश्चात् ॥१५॥

माया—उकार वर्ण से अथवा यात्री के बायीं भाग में स्थित होकर ओकार वर्ण से कुत्ता द्वारा शब्द किये जाने का तात्पर्य अर्थ सिद्धि और औकार वर्ण से शब्द करने का तात्पर्य आकूलता होती है तथा यात्री के पृष्ठ भागस्थ होकर किसी भी वर्ण का उच्चारण करने से शब्द करने का तात्पर्य यात्रा का निषेध करना होता है॥१५॥

कुत्ते के खंख शब्द करने का फल कथन

खंखेति चोच्चैश्च मुहुर्मुहुर्ये रुवन्ति दण्डैरिव ताड्यमानाः ।
श्वानोऽभिधावन्ति च मण्डलेन ते शून्यतां मृत्युभयञ्च कुर्युः ॥१६॥

माया—दण्डा से ताडित होने वाले के समान कुत्ता उच्च स्वर करता हुआ खंख शब्द करता हो अथवा कई कुत्ते एकत्रित होकर एक साथ दोड़ लगायें, इसका तात्पर्य नगर की शून्यता और मृत्यु भय की ओर संकेत करना है॥१६॥

अपनी जिह्वा से अपने मुख को कुत्ता द्वारा चाटने का फल कथन

प्रकाश्य दन्तान् यदि लेढि सृक्विणी
तदाशनं मृष्टमुशन्ति तद्विदः ।

यदाननं लेढि पुनर्न सृक्विणी
प्रवृत्तभोज्येऽपि तदात्रविघ्नकृत् ।।१७।।

माया—अपने दाँतों को बाहर निकाल कर कुत्ता अपने ओष्ठान्त को चाटता हो, तो कुत्ते की चेष्टा को जानने वाले पण्डित मिष्टान्न की प्राप्ति होना कहते हैं। अपने मुख को चाटते हुए कुत्ता अपने ओष्ठान्त को यदि नहीं चाटता हो, तो इसका तात्पर्य भोजन के लिए प्रस्तुत पुरुष के भोजन में विघ्न पड़ने का संकेत करना है।।१७।।

कुत्तों के समूह में शब्द करने का फल कथन

ग्रामस्य मध्ये यदि वा पुरस्य भषन्ति संहत्य मुहुर्मुहुर्ये।
ते क्लेशमाख्यान्ति तदीश्वरस्य श्वारण्यसंस्थो मृगवद्विचिन्त्यः ।।१८।।

माया—ग्राम या नगर के बीचोबीच कुत्तों के द्वारा समूह में मिलकर वारम्वार शब्द करने का तात्पर्य ग्राम या नगर के स्वामी को कष्ट की सूचना देना है। इस प्रकार वनैले कुत्तों के फलों का विचार मृग के समान "ओजा: प्रदक्षिणं शस्ता मृगाः सनकुलाण्डजा:" इत्यादि से करनी चाहिए।।१८।।

कुत्ते के शब्दों का सामान्य फल ज्ञानार्थ कथन

वृक्षोपगे क्रोशति तोयपातः स्यादिन्द्रकीले सचिवस्य पीडा।
वायोर्गृहे सस्यभयं गृहान्तः पीडा पुरस्यैव च गोपुरस्थे ।।१९।।
भयं च शय्यासु तदीश्वराणां याने भषन्तो भयदाश्च पश्चात्।
अथापसव्या जनसन्निवेशे भयं भषन्तः कथयन्त्यरीणाम् ।।२०।।

माया—किसी वृक्ष के पास में स्थित होकर कुत्ता के शब्द करने से वृष्टि की सूचना मिलती है। इन्द्रकील के पास में शब्द करने से मन्त्री को पीड़ा मिलने की सूचना मिलती है। गृह मध्य या वायव्य कोणस्थ होकर शब्द करने पर धान्य भय तथा नगर के द्वार में स्थित होकर शब्द करने से नगरवासियों को पीड़ा की सूचना मिलती है। शय्या पर स्थित होकर शब्द करे, तो उस पर शयन करने वाले को भय उत्पन्न होता है। यात्री के पीछे रहकर शब्द करे, तो उस यात्री को भय होता है। तथा किसी अन्य पुरुष के पास में बायीं ओर स्थित होकर शब्द करें, तो शत्रुओं का भय करने वाला होता है।।१९-२०।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-श्वचक्रनिरूपणं नामैकोननवतितमोऽध्यायः ।।८९।।

□□□

अथ नवतितमोऽध्यायः-९०

शाकुने-शिवारुतनिरूपणम्

सर्वप्रथम कुत्ता के समान सियार के फलागम प्रदर्शनार्थ कथन

श्वभिः श्रृगालाः सदृशाः फलेन विशेष एषां शिशिरे मदाप्तिः ।
हूहू रुतान्ते परतश्च टाटा पूर्णः स्वरोऽन्ये कथिताः प्रदीप्ताः ।।१।।

माया—श्रृगाल (सियार) का फल भी कुत्तों की तरह ही समझना चाहिए। इसमें विशेषता यह है कि सियार को शिशिर ऋतु के समय मद का लाभ होता है, जिससे उस काल में इसके शुभाशुभ फल का विचार नहीं होता है।

सियार के बोलने के अन्त में 'हू हू' और फिर 'टा टा' ध्वनि इनका पूर्ण स्वर तथा इनको छोड़कर शेष अन्य स्वर दीप्त होते हैं।।१।।

लोमाशिका की चेष्टा परिज्ञानार्थ कथन

लोमाशिकायाः खलुः कक्कशब्दः
पूर्णः स्वभावप्रभवः स तस्याः ।
येऽन्ये स्वरास्ते प्रकृतेरपेताः
सर्वे च दीप्ता इति सम्प्रदिष्टाः ।।२।।

माया—लोमाशिका अर्थात् श्रृगाली या लोमड़ी का 'कक्क' शब्द पूर्ण है, यह स्वभाविक रूप से उत्पन्न उसका स्वर है। इससे भिन्न इसका जो भी स्वर हैं, वे सभी स्वभाव विरुद्ध और दीप्त होते हैं।।२।।

श्रृगाली की चेष्टा में और भी कथन

पूर्वोदीच्योः शिवा शस्ता शान्ता सर्वत्र पूजिता ।
धूमिताभिमुखी हन्ति स्वरदीप्ता दिगीश्वरान् ।।३।।

माया—पूर्व और उत्तर दिशा में स्थित श्रृगाली शुभ करने वाली होती है। शान्त दिशा में भी सर्वत्र स्थित होकर श्रेष्ठ मानी गई है तथा धूमिनी दिशा की ओर मुख कर दीप्त स्वर करने पर उस दिशा के अधिपतियों का नाश करती है।।३।।

दिशा स्वामी या अधिपति परिज्ञानार्थ कथन

राजा कुमारो नेता च दूतः श्रेष्ठी चरो द्विजः ।
गजाध्यक्षश्च पूर्वाद्याः क्षत्रियाद्याश्चतुर्दिशम् ।।४।।

माया—राजा, युवराज, सेनापति, दूत, श्रेष्ठी, गुप्तचर, ब्राह्मण, गजाध्यक्ष आदि सभी प्रदक्षिण क्रम से पूर्व आदि आठ दिशाओं के स्वामी कहे गए हैं। विशेष यह

कि पूर्वादि चार दिशाओं के स्वामी क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र को कहा गया है॥४॥

शिवा के दीप्त स्वर का अशुभ फल परिज्ञानार्थ कथन

सर्वदिक्ष्वशुभा दीप्ता विशेषेणाह्न्यशोभना।
पुरे सैन्येऽपसव्या च कष्टा सूर्योन्मुखी शिवा॥५॥

माया—सभी दिशाओं में दीप्त स्वर अशुभकारक माने गए हैं, परन्तु दिन भाग में दीप्तस्वर विशेष रूप से अशुभदायक होते हैं। नगर अथवा सेना के दक्षिण भागस्थ सूर्योन्मुखी शिवा कष्टदायिनी होती है॥५॥

शिवा के 'याहि' व 'टा टा' स्वरों के फल ज्ञानार्थ कथन

याहीत्यग्निभयं शास्ति टाटेति मृतवेदिका।
धिग्धिग्दुष्कृतिमाचष्टे सज्वाला देशनाशिनी॥६॥

माया—शिवा द्वारा 'या हि' स्वर निकालने से अग्नि भय और 'टा टा' स्वर से मृत्यु तथा 'धिक् धिक्' स्वर से अत्यन्त कष्ट और अपने मुख से अग्नि की ज्वाला निकालने वाली शिवा देश की हानि होने की सूचना देती है॥६॥

शिवा के शब्द विशेष के फल में मतान्तर कथन

नैव दारुणतामके सज्वालायाः प्रचक्षते।
अर्काद्यनलवत्तस्या वक्त्रं लालास्वभावतः॥७॥

माया—कोई कहते हैं कि मुख से ज्वाला निकालने वाली शिवा भयंकर नहीं है। चूँकि मुख से लाला अर्थात् लार के स्वभाव से सूर्य किरणों की ज्वाला के समान उसका मुख ज्वाला सम्पन्न प्रतीत होता है॥७॥

शिवा द्वारा प्रतिशब्द करने का फल कथन

अन्यप्रतिरुता याम्या सोद्बन्धमृतशंसिनी।
वारुण्यनुरुता सैव शंसते सलिले मृतम्॥८॥

माया—अन्यत्र स्थित शिवा के सहित दक्षिण दिशा में स्थित शिवा भी स्वर निकालती हो, तो फाँसी से मृत्यु संसूचित होती है। अन्यत्र स्थित शिवा के सहित पश्चिम दिशा में स्थित शिवा भी शब्द करती हो, तो जल से मरण संसूचित होती है॥८॥

शिवा के स्वरवश फल ज्ञानार्थ कथन

अक्षोभः श्रवणं चेष्टं धनप्राप्तिः प्रियागमः।
क्षोभः प्रधानभेदश्च वाहनानां च सम्पदः॥९॥

फलमासप्तमादेतदग्राह्यं परतो रुतम्।
याम्यायां तद्विपर्यस्तं फलं षट्पञ्चमादृते ॥१०॥

माया—दक्षिण दिशा को छोड़कर अन्य किसी भी दिशा में स्थित शिवा द्वारा एक बार स्वर करके चुप हो जाने से अक्षोभ; दो बार स्वर करके चुप हो जाने से इष्टश्रवण; तीन बार स्वर करे चुप हो जाने से अर्थप्राप्ति; चार बार स्वर करके चुप हो जाने से प्रियागम; पाँच बार स्वर करके चुप हो जाने से क्षोभ; छः बार स्वर करे चुप हो जानेसे प्रधान भेद और सात बार स्वर करके चुप हो जाने से सम्पत्ति वृद्धि आदि होती है। सात बार से अधिक स्वर करने का फल अग्राह्य है। पाँच और छः बार के स्वर करने के फलों को छोड़कर दक्षिण दिशा में स्थित शिवा के शेष अन्य फल उपरोक्त के विपरीत जानना चाहिए अर्थात् एक बार स्वर करने से क्षोभ; दो बार स्वर करने से अनिष्ट श्रवण; तीन बार स्वर करने से धनक्षय; चार बार स्वर करने से प्रियावियोग, पाँच बार स्वर करने से क्षोभ, छः बार स्वर करने से प्रधान पुरुषों में मतभेद उत्पन्न और सात बार शिवा के स्वर करने से सम्पत्ति का क्षय होना संसूचित होती है॥९-१०॥

अशुभकारिणी शिवा लक्षण कथन

या रोमाञ्चं मनुष्याणां शकृन्मूत्रं च वाजिनाम्।
रावात् त्रासं च जनयेत् सा शिवा न शिवप्रदा ॥११॥

माया—अपने स्वरों या आवाजों से मनुष्यों को रोमाञ्चित करने वाली, अश्वों को मल-मूत्र त्याग कराने वाली तथा जनों को भयभीत करने वाली शिवा कथमपि कल्याण करने वाली नहीं होती है॥११॥

शुभकारिणी शिवा लक्षण कथन

मौनं गता प्रतिरुते नरद्विरदवाजिभिः।
या शिवा सा शिवं सैन्ये पुरे वा सम्प्रयच्छति ॥१२॥

माया—मनुष्य, हाथी, घोड़ा आदि के प्रतिस्वर से स्वर निकालती शिवा मौन लगा जाय, वह शिवा सेना, नगर आदि के लिए मङ्गलकारिणी होती है॥१२॥

शिव के स्वर प्रकार से प्रकार कथन

भेभेति शिवा भयङ्करी भोभो व्यापदमादिशेच्च सा।
मृतिबन्धनिवेदिनी फिफे हूहू चात्महिता शिवा स्वरे ॥१३॥

माया—'भेभा' स्वर निकालने वाली शिवा भयदा; 'भोभो' स्वर निकालने वाली शिवा मृत्यु और बन्धन देने वाली तथा 'हू हू' स्वर निकालने वाली शिवा सूनने वालों का कल्याण करने वाली होती है॥१३॥

शिवा का शुभ स्वर परिज्ञानार्थ कथन

शान्ता त्ववर्णात् परमारुवन्ती टाटामुदीर्णामिति वाश्यमाना।
टेटे च पूर्वं परतश्च थेथे तस्याः स्वतुष्टिप्रभवं रुतं तत्॥१४॥

माया—शान्त दिशा में स्थित होकर पहले अवर्ण का फिर आ आदि वर्णों का उच्चारण करने वाली अथवा 'टा टा' स्वर निकालने वाली अथवा प्रथम 'टे टे' स्वर करके 'थे थे' स्वर करने वाली शिवा का ये स्वर उसकी प्रसन्नता के द्योतक हैं। अतः ऐसी शिवा कल्याण करने वाली होती हैं॥१४॥

कल्याणिनी शिवा कथन

उच्चैर्घोरं वर्णमुच्चार्य पूर्वं पश्चात् क्रोशेत् क्रोष्टुकस्यानुरूपम्।
या सा क्षेमं प्राह वित्तस्य चाप्तिं संयोगं वा प्रोषितेन प्रियेण॥१५॥

माया—अति तेजी से क्रूर वर्ण का प्रथम उच्चारण करती हुई फिर सियार की तरह स्वर करने वाली शिवा क्षेम, धन प्राप्ति तथा प्रियासमागम को संसूचित करने वाली होती है॥१५॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां
मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा
संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-शिवारुत-
निरूपणं नाम नवतितमोऽध्यायः॥९०॥

□□□

अथैकनवतितमोऽध्यायः-९१

शाकुने-मृगचेष्टानिरूपणम्

सर्वप्रथम मृगों की चेष्टा का प्रदर्शनार्थ कथन

सीमागता वन्यमृगा रुवन्तः स्थिता व्रजन्तोऽथ समापतन्तः ।
सम्प्रत्यतीतैष्यभयानि दीप्ताः कुर्वन्ति शून्यं परितो भ्रमन्तः ॥१॥

माया—वनचर मृग द्वारा ग्राम की सीमा में आकर दीप्त स्वर निकालते हुए स्थित रहने से तात्कालिक; ग्राम की सीमा से बाहर निकल जाने से भूतकालिक तथा फिर ग्राम सीमा की ओर ही वापस आने से भविष्यत् कालिक भय संसूचित होता है। उसी तरह स्वर निकालते हुए उस ग्राम के चारों ओर चक्रमण करने से उस ग्राम को वे शून्य करते हैं॥१॥

वनचर मृग के दीप्त स्वर में अन्य पशुओं के स्वर मेल से फल कथन

ते ग्राम्यसत्त्वैरनुवाश्यमाना भयाय रोधाय भवन्ति वन्यैः ।
द्वाभ्यामपि प्रत्यनुवाशितास्ते वन्दिग्रहायै च मृगा रुवन्ति ॥२॥

माया—ग्रामसीमा प्रविष्ट हुए वनचर मृग के द्वारा दीप्त स्वर निकालते समय ही ग्रामीण पशुओं द्वारा भी शब्द किये जाने से भयप्रद; वनवासी अन्य प्राणी द्वारा भी स्वर निकालने से रोधन; तथा वनचर और ग्रामीण दोनों प्राणी द्वारा समवेत स्वर में स्वर करने से बलात् स्त्रियों का हरण आदि की संसूचना उस मृग द्वारा प्रदान करना जानना चाहिए॥२॥

वनचर प्राणियों से सम्बन्धित और फल कथन

वये सत्त्वे द्वारसंस्थे पुरस्य रोधो वाच्यः सम्प्रविष्टे विनाशः ।
सूते मृत्युः स्याद्भयं संस्थिते च गेहं याते बन्धनं सम्प्रदिष्टम् ॥३॥

माया—वनवासी प्राणी द्वारा नगर के द्वार पर स्थित होने से शत्रुओं से नगर का रोध; गृहों के अन्दर प्रविष्ट करने से पुर का नाश; गृह में प्रसव करने से मृत्यु; गृह में वास करने से भय तथा गृह में प्रविष्ट करने से गृह स्वामी को बन्धन भी करने वाला होता है॥३॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-मृगचेष्टा निरूपणं नामैकनवतितमोऽध्यायः ॥९१॥

□□□

अथ द्विनवतितमोऽध्यायः-९२

शाकुने-गवेङ्गितनिरूपणम्

सर्वप्रथम गायों की चेष्टा प्रदर्शनार्थ कथन

गावो दीनाः पार्थिवस्याशिवाय पादैर्भूमिं कुट्टयन्त्यश्च रोगान्।
मृत्युं कुर्वन्त्यश्रुपूर्णायताक्ष्यः पत्युर्भीतास्तस्करानारुवन्त्यः ।।१।।

माया—दीन गायें राजा के लिए अमङ्गलकारी होती हैं। अपने पैरों से भूमि को कूटने या कुरेदने वाली गायें रोगकारिणी होती हैं। अश्रुपूरित नेत्रों वाली गायें अपने स्वामी (मालिक) की मृत्युकारिणी होती है तथा भयभीत होकर अत्यन्त उच्च स्वर में शब्द करने वाली गायें चोरों का भय उत्पन्न कराने वाली होती हैं।।१।।

गायों के शब्दों आदि से शुभाशुभ फल ज्ञानार्थ कथन

अकारणे क्रोशति चेदनर्थो भयाय रात्रौ वृषभः शिवाय।
भृशं निरुद्धा यदि मक्षिकाभिस्तदाशु वृष्टिं सरमात्मजैर्वा ।।२।।

माया—विना किसी कारण विशेष के ही गायें स्वर निकालने लगती हो, तो अनर्थ और रात्रि के समय भी स्वर निकाले, तो भय उत्पन्न करती हैं। रात्रि के समय बैलों का शब्द या स्वर करना मंगलप्रद होता है। गायें जब बहुत-सी मक्खियों अथवा कुत्तों के बच्चों (पिल्लों) से घिर जाती हैं, तो जानना चाहिए कि शीघ्र वृष्टि होगी।।२।।

गाय और महिष के शुभ चेष्टा का फल कथन

आगच्छन्त्यो वेश्मबम्भारवेण
संसेवन्त्यो गोष्ठवृद्ध्यै गवां गाः।
आर्द्राङ्ग्यो वा हृष्टरोम्ण्यः प्रहृष्टा
धन्या गावः स्युर्महिष्योऽपि चैवम् ।।३।।

माया—बाहर से आती हुई और 'रम्भा' शब्द करती हुई गायें एक साथ आयें, तो उस गोष्ठ की अभिवृद्धि होती है। गायों के शरीराङ्ग सभी भींगे हों अथवा वे रोमाञ्चित हो रही हों, तो गाये शुभकारिणी और धन्य मानी गई हैं, इसी प्रकार भैंस की चेष्टा आदि का फल जानना चाहिए।।३।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमाग्राम-वास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-गवेङ्गितनिरूपणं नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ।।९२।।

❑❑❑

अथ त्रिनवतितमोऽध्यायः-९३

शाकुने-अश्वेङ्गितनिरूपणम्

सर्वप्रथम अश्व की चेष्ट परिज्ञानार्थ कथन

उत्सर्गात्र शुभदमासनात् परस्थ
वामे च ज्वलनमतोऽपरं प्रशस्तम् ।
सर्वाङ्गज्वलनमवृद्धिदं हयानां
द्वे वर्षे दहनकणाश्च धूपनं वा ॥१॥

माया—अश्वों के उत्सर्ग (विष्ठा) या गोबर या लींदी को उसके आसन के पश्चिम और वाम भाग में जलाने से उत्पन्न ज्वलन अशुभकारक होता है। इनसे भिन्न भाग अर्थात् पूर्व या दक्षिण में उत्सर्ग का ज्वलन शुभदायक होता है। अश्वों के सभी अङ्गों में ज्वलन पैदा होना, उसके अवृद्धि का कारण होता है; क्योंकि अश्वों के अङ्गों में ज्वलन उत्पातवश ही सम्भव होता है। जिन अश्वों के शरीर से अग्निकण अथवा धुआँ दो वर्ष पर्यन्त निकलता हो, वे अश्व भी अवृद्धिकारी होता है॥१॥

अश्व के लिङ्ग आदि अङ्गों के प्रदीपन का फल कथन

अन्तःपुरं नाशमुपैति मेढ्रे कोशः क्षयं यात्युदरे प्रदीप्ते ।
पायौ च पुच्छे च पराजयः स्याद्वक्त्रोत्तमाङ्गज्वलने जयश्च ॥२॥

माया—अश्वों का लिङ्ग प्रदीप्त होने से राजा के अन्तःपुर का नाश जानना चाहिए। उनके पेट प्रदीप्त होने से राजा के खजाने (कोष) का नाश होता है। अश्वों के गुदा और पूँछ प्रदीप होने से राजा की पराजय होती है तथा अश्व का मुख और शिरोभाग प्रदीप्त होने से राजा की जय समझनी चाहिए॥२॥

अश्वों के स्कन्ध आदि प्रदीपन का फल कथन

स्कन्धासनांसज्वलनं जयाय बन्धाय पादज्वलनं प्रदिष्टम् ।
ललाटवक्षोऽक्षिभुजे च धूमः पराभवाय ज्वलनं जयाय ॥३॥

माया—अश्व का स्कन्ध, असन और ग्रीवा का पार्श्वभाग प्रदीप्त होने अर्थात् उनमें ज्वलनशीलता के होने से भी राजा को जय प्राप्त होती है। अश्व के पैर प्रदीप्त होने से उस अश्व के स्वामी की मृत्यु होती है। अश्व का ललाट, छाती, आँखें और भुजायें धूमयुक्त होने से राजा का पराजय और उनके प्रदीप्त होने से जय होता है॥३॥

अश्वों के नासापुट आदि प्रदीप्त होने का फल कथन

नासापुटप्रोथशिरोऽश्रुपातनेत्रे च रात्रौ ज्वलनं जयाय ।
पलाशताम्रासितकर्बुराणां नित्यं शुकाभस्य सितस्य चेष्टम् ॥४॥

माया—रात में अश्व के नासापुट, प्रोथ (नासा का मध्य भाग), शिर, अश्रुपात (गण्ड का ऊर्ध्वभाग) और आँखें, ये सभी प्रदीप्त होने से राजा के लिए जयकारक होता है। पलाश के सदृश रक्त, कृष्ण, शुक्लकृष्ण, कबूतर के सदृश या तोता के सदृश आभा या श्वेत वर्ण वाले अश्वों के एक, दो या विविध अङ्गों में ज्वलन उत्पन्न होने से शुभदायक होता है॥४॥

अश्व की अशुभ चेष्टाओं के प्रदर्शनार्थ कथन

प्रद्वेषो यवसाम्भसां प्रपतनं स्वेदो निमित्ताद्विना
कम्पो वा वदनाच्च रक्तपतनं धूमस्य वा सम्भवः।
अस्वप्नश्च विरोधिनां निशि दिवा निद्रालसध्यानता
सादोऽधोमुखता विचेष्टितमिदं नेष्टं स्मृतं वाजिनाम्॥५॥

माया—विना किसी कारण के घास और पानी से दूरी रखना, गिर जाना, पसीना छूटना, काँपना, मुख से रक्तस्राव होना, किसी से द्वेषवश रात्रि में जागना, दिन में सोना, आलस्य, चिन्तित लगना, सुस्ती होना, अधोमुख रहना, ऊर्ध्व दृष्टि करना आदि सभी अश्वों की अशुभ चेष्टायें कही गई हैं॥५॥

अशुभकारी अश्व दशा परिज्ञानार्थ कथन

आरोहणमन्यवाजिनां पर्याणादियुतस्य वाजिनः।
उपवाह्यतुरङ्गमस्य वा कल्पस्यैव विपन्नशोभना॥६॥

माया—कसे हुए सवार युक्त अश्व के ऊपर दूसरे अश्व का चढ़ना, निरोग और उपबाह्य अर्थात् सवार युक्त चलते चलते कुछ भी खाने से परहेज करने वाला अश्वों को विपत्ति में आना शुभदायक नहीं होता है॥६॥

अश्व शब्द का फल परिज्ञानार्थ कथन

क्रौञ्चवद्रिपुवधाय ह्रेषितं ग्रीवया त्वचलया च सोन्मुखम्।
स्निग्धमुच्चमनुनादि हृष्टवद्ग्रासरुद्धवदनैश्च वाजिभिः॥७॥

माया—क्रौञ्च पक्षी के समान ध्वनि करना, ग्रीवा को स्थिर और मुख को ऊपर कर शब्द करना, उच्च ध्वनि से बार-बार मीठा स्वर निकालना, घास आदि ग्रास से मुख बन्द रहने पर भी प्रसन्नतादायक शब्द करना आदि अश्व की चेष्टायें शत्रुवध के लिए समझना चाहिए॥७॥

हिनहिनाते हुए अश्व के पास शुभ द्रव्य का फल कथन

पूर्णपात्रदधिविप्रदेवतागन्धपुष्पफलकाञ्चनादि वा।
द्रव्यमिष्टमथवा परं भवेद्ध्रेषतां यदि समीपतो जयः॥८॥

माया—यदि ध्वनि कर रहे अश्व के समीप किसी भी प्रकार के शुभ द्रव्य से

भरा हुआ पात्र, दही, ब्राह्मण, देवता, सुगन्धि द्रव्य, पुष्प, फल, सोना आदि धातुओं अथवा अन्य प्रकार के शुभ पदार्थ आ जाय, तो राजा की जय समझना चाहिए॥८॥

अश्व की अन्यान्य चेष्टाओं का प्रदर्शनार्थ कथन

भक्ष्यपानखलिनाभिनन्दिनः पत्युरौपयिकनन्दिनोऽथवा।
सव्यपार्श्वगतदृष्टयोऽथवा वाञ्छितार्थफलदास्तुरङ्गमाः ॥९॥

माया—भोज्य सामग्री, पानी और लगाम को प्रसन्नता से स्वीकार करने वाले, अपने मालिक की इच्छानुसार व्यवहार करने वाले तथा अपने दक्षिण भाग में दृष्टि रखने वाले अश्व अभीष्ट फल को प्रदान करने वाले होते हैं॥९॥

अश्व की अशुभ चेष्टाओं के परिज्ञानार्थ कथन

वामैश्च पादैरभिताडयन्तो महीं प्रवासाय भवन्ति भर्तुः।
सन्ध्यासु दीप्तामवलोकयन्तो ह्रेषन्ति चेद् बन्धपराजयाय ॥१०॥

माया—अपने वाम भाग के पैर से भूमि को ताड़ित करने वाला अश्व अपने मालिक के विदेश जाने का कारण बनते हैं। इसी प्रकार चारों सन्ध्याओं अर्थात् प्रातः, मध्याह्न, सूर्यास्त और अर्द्धरात्रि में सदा दीप्त दिशा में देखता हुआ शब्द करने वाला अश्व अपने मालिक के बन्धन और पराजय का कारण बनते हैं, ऐसा जानना चाहिए॥१०॥

अश्व की अन्यान्य अशुभ चेष्टाओं का कथन

अतीव ह्रेषन्ति किरन्ति वालान् निद्रारताश्च प्रवदन्ति यात्राम्।
रोमत्यजो दीनखरस्वराश्च पांशून् ग्रसन्तश्च भयाय दृष्टाः ॥११॥

माया—अत्यधिक शब्द करने वाला, पूँछ के बालों को सदा फैलाये रखने वाला, सोने वाला अश्व यात्रा करने को संसूचित करने वाला होता है। यदि अश्व अपने बालों को गिराने वाला दीनहीन गधे की तरह शब्द करने वाला, धूलि (रज) खाने वाला आदि हों, तो वह भय प्रदान करने के लिए होता है, ऐसा विद्वानों ने कहा है॥११॥

अश्व की शुभ चेष्टा कथन

समुद्गवद्दक्षिणपार्श्वशायिनः पदं समुत्क्षिप्य च दक्षिणं स्थिताः।
जयाय शेषेष्वपि वाहनेष्विदं फलं यथासम्भवमादिशेद् बुधः ॥१२॥

माया—समुद्ग (विशेष प्रकार का पात्र) के समान जानुओं को मोड़ कर दाहिने पार्श्व से सोने वाला और दक्षिण पैर को उठाकर भूमि पर खड़ा होने वाला अश्व मालिक के जय के लिए ही होता है। इसी प्रकार अन्य प्रकार के वाहन जैसे—ऊँट,

हाथी आदि के प्रसङ्ग में भी यथा सम्भव धूम, अग्नि कण आदि के सहयोग से फल का उपदेश करना चाहिए।।१२।।

श्रीवृद्धिप्रद अश्व लक्षण कथन

आरोहति क्षितिपतौ विनयोपपन्नो
यात्रानुगोऽन्यतुरगं प्रतिहेषते च।
वक्त्रेण वा स्पृशति दक्षिणमात्मपार्श्वं
योऽश्वः स भर्तुरचिरात् प्रचिनोति लक्ष्मीम् ।।१३।।

माया—राजा के आरोहण करने के बाद यदि अश्व विनयपूर्वक इष्ट दिशा में जिस-किसी दिशा में राजा को जाना हो, उस दिशा में चलने लगे, अन्य अश्वों के ध्वनि करने पर ध्वनि करे अथवा अपने मुख से अपने दक्षिण पार्श्व का स्पर्श भी करे, तो ऐसा अश्व निश्चय ही स्वामी की श्रीवृद्धि करने वाला होता है।।१३।।

अश्व की अशुभ चेष्टाओं का कथन

मुहुर्मुहुर्मूत्रशकृत् करोति न ताड्यमानोऽप्यनुलोमयायी।
अकार्यभीतोऽश्रुविलोचनश्च शिवं न भर्तुस्तुरगोऽभिधत्ते ।।१४।।

माया—वारम्वार मूत्र और उत्सर्ग करने वाला, ताडित करने पर भी अभीष्ट गन्तव्य दिशा में नहीं चलने वाला, अकारण डरने वाला, अश्रुपूरित नेत्र वाला अश्व अपने स्वामी के लिए अमङ्गलकारक होता है।।१४।।

अध्यायोपसंहार

उक्तमिदं हयचेष्टितमत ऊर्ध्वं दन्तिनां प्रवक्ष्यामि।
तेषां तु दन्तकल्पनभङ्गम्लानादिचेष्टाभिः ।।१५।।

माया—यहाँ पर अश्वों की चेष्टाओं का वर्णन किया गया है। इसके अनन्तर हाथियों की चेष्टाओं को कहता हूँ। हाथियों के दाँतों का किटकिटाना काँपना, टूटना, मलिन होना आदि चेष्टाओं से फल कहे गए हैं।।१५।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-अश्वेङ्गित्त निरूपणं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः ।।९३।।

□□□

अथ चतुर्नवतितमोऽध्यायः-९४

शाकुने-हस्तीङ्गितनिरूपणम्

गजदन्त लक्षण कथन

दन्तस्य मूलपरिधिं द्विरायतं प्रोह्य कल्पयेच्छेषम्।
अधिकमनूपचराणां न्यूनं गिरिचारिणां किञ्चित् ॥१॥

माया—हाथी दाँत (गजदन्त) के मूल में जितनी अङ्गुलप्रमाणात्मक परिधि हो, उससे दूने अङ्गुल मूल की ओर से छोड़कर शेष भाग से शेष रचना कार्य करना चाहिए। परन्तु अनूपचर (जलप्रदेश) हाथियों के लिए कुछ अधिक तथा पर्वतचारी हाथियों के विषय में कुछ कम छोड़कर शेष भाग में कल्पनानुसार रचना करनी चाहिए॥१॥

परिकल्पित गजदन्त के श्रीवत्स आदि लक्षण और फल कथन

श्रीवत्सवर्धमानच्छत्रध्वजचामरानुरूपेषु ।
छेदे दृष्टेष्वारोग्यविजयधनवृद्धिसौख्यानि ॥२॥

माया—काट-छाँट करते समय गजदन्त में श्रीवत्स, वर्द्धमान, छत्र, ध्वज या चामर के समान चिह्न दीखने पर आरोग्य, विजयश्री, धनवृद्धि और सौख्य की प्राप्ति होती है॥२॥

गजदन्त के शास्त्रादि चिह्न का फल कथन

प्रहरणसदृशेषु जयो नन्द्यावर्ते प्रनष्टदेशाप्तिः।
लोष्टे तु लब्धपूर्वस्य भवति देशस्य सम्प्राप्तिः ॥३॥

माया—गजदन्त में शस्त्र के सदृश चिह्न दीखने से जय; नदी के आवर्त (जल-भ्रम) सदृश मतान्तर से नन्द्यावर्त प्रसाद जैसी चिह्न दीखने से नष्टदेश की प्राप्ति और मृत् खण्ड (डेला) जैसी आकृति दीखने से पूर्व प्राप्त देश की पुनः प्राप्ति होती है॥३॥

गजदन्त की स्त्री आदि चिह्न का फल कथन

स्त्रीरूपेऽस्वविनाशो भृङ्गारेऽभ्युत्थिते सुतोत्पत्तिः।
कुम्भेन निधिप्राप्तिर्यात्राविघ्नश्च दण्डेन ॥४॥

माया—गजदन्त में स्त्री सदृश चिह्न दीखने पर धनहानि; भृङ्गार (झाड़ी) सदृश चिह्न दीखने से पुत्र प्राप्ति; घड़े के दीखने से निधि; दण्डसदृश चिह्न दीखने से यात्रा में बाधा होती है॥४॥

छिपकली आदि जैसी आकृति का फल कथन

कृकलासकपिभुजङ्गेष्वसुभिक्षव्याधयो रिपुवशित्वम्।
गृध्रोलूकध्वांक्षश्येनाकारेषु जनमरकः ॥५॥

माया—गजदन्त में छिपकली (गिरगिट), वानर अथवा सर्प सदृश आकृति दीखने से दुर्भिक्ष और व्याधि से पीड़ा तथा शत्रुओं के अधीन रहना होता है। वहीं गिद्ध, उल्लू, कौआ या बाज आदि जैसी आकृति दीखने पर महामारी फैलती है॥५॥

गजदन्तस्थ पाश आदि चिह्न फल कथन

पाशेऽथवा कवन्धे नृपमृत्युर्जनविपत् स्रुते रक्ते।
कृष्णे श्यावे रूक्षे दुर्गन्धे चाशुभं भवति ॥६॥

माया—गजदन्त के काटने पर पाश (फाँसी) या कबन्ध (धड़ं भाग मात्र पुरुष) की आकृति दीखने पर राजा की मृत्यु होती है। गजदन्त को काटने पर रक्त स्राव हो, तो मनुष्यों के ऊपर आपत्ति आती है। गजदन्त के काटने पर काला, पीला अथवा रूखा या दुर्गन्धि का अनुभव हो, तो भी अशुभ कहना चाहिए॥६॥

श्यावपूतिमलरक्तदर्शनं सर्पसत्त्वसदृशं च पापदम्॥ इति॥६॥

छेदादि लक्षण युक्त गजदन्त का फल कथन

शुक्लः समः सुगन्धिः स्निग्धश्च शुभावहो भवेच्छेदः।
गलनम्लानफलानि च दन्तस्य समानि भङ्गेन ॥७॥

माया—गजदन्त में छेद समान हो, श्वेत, सुगन्धि युक्त या निर्मल हो, तो शुभदायक होता है। गजदन्त गल जाय या मलिन हो जाय तो इसका फल दाँत फूटने-टूटने के समान जानना चाहिए॥७॥

गजदन्त के अन्य शुभाशुभ फल कथन

मूलमध्यदशनाग्रसंस्थिता देवदैत्यमनुजाः क्रमात् ततः।
स्फीतमध्यपरिपेलवं फलं शीघ्रमध्यचिरकालसम्भवम् ॥८॥

माया—गजदन्त के मूलभाग, मध्यभाग और अग्रभाग में क्रमशः देवता, दैत्य और मनुष्य की अवस्थिति मानी गई है अर्थात् गजदन्त के मूल में देवता, मध्य भाग में दैत्य और अग्रभाग में मनुष्य का वास होता है। वहाँ मूल में अग्रोक्त फल परिपुष्ट होता है। मध्यभाग में मध्यम अर्थात् न कम और न अधिक फल होता है। तथा अग्रभाग में फल अल्प होता है। इसी प्रकार मूल भाग में अग्रोक्त फल शीघ्र, मध्य में और औसत काल में अग्रभाग में विलम्ब से होता है॥८॥

गजदन्त के भङ्ग होने पर शुभाशुभ फल कथन

दन्तभङ्गफलमत्र दक्षिणे भूपदेशबलविद्रवप्रदम्।
वामतः सुतपुरोहितेभयान् हन्ति साटविकदारनायकान्॥९॥

भाषा—देवता, दैत्य और मनुष्य भाग से गजदन्त के दायें भाग से टूटने पर राजा, देश और सेना के भागने का भय उत्पन्न होता है अर्थात् गजदन्त के मूल के दाहिना भाग टूटने पर राजा के भागने का भय; मध्य के दाहिना भाग टूटने पर देश से भागने का भय तथा अग्रभाग के दाहिना भाग टूटने पर सेना के भागने का भय होता है। इसी तरह गजदन्त के मूल, मध्य या अग्रभाग अपने बायें भाग से टूट जाय, तो क्रम से राजपुत्र, पुरोहित और साधन पति के साथ सेना, स्त्री और प्रधान पुरुष का नाश होता है॥९॥

दोनों गजदन्त के टूटने का शुभाशुभ फल कथन

आदिशेदुभयभङ्गदर्शनात् पार्थिवस्य सकलं कुलक्षयम्।
सौम्यलग्नतिथिभादिभिः शुभं वर्धतेऽशुभमतोऽन्यथा वदेत्॥१०॥

भाषा—दोनों गजदन्त टूटने से राजा के समस्त कुल का नाश होता है। शुभग्रह के लग्न अर्थात् वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धनु, मीन, लग्न, शुभ (रिक्ता को छोड़कर) तिथि, शुभ (दारुण संज्ञक नक्षत्र को छोड़कर) नक्षत्र आदि में उत्पन्न हाथी के होने से शुभ फलों में वृद्धि और इसके उल्टा होने पर पाप फलों में वृद्धि होती है॥१०॥

गजदन्त भङ्ग में विशेषता से फल कथन

क्षीरमृष्टफलपुष्पपादपेष्वापगातटविघट्टितेन वा।
वाममध्यरदभङ्गखण्डने शत्रुनाशकृदतोऽन्यथा परम्॥११॥

भाषा—हाथी द्वारा दूध वाले, फल, पुष्प वाले वृक्षों से घर्षित होने से अथवा नदी किनारे को मर्दित करने पर बायें भाग के गजदन्त मध्य भाग से भग्न हो जाय, तो शत्रुओं का नाश करने वाला होता है। इसके उलट अर्थात् अशुभ वृक्षों के विदारण से वायें दाँत का मूल या अग्र भाग के टूटने से शत्रुओं की अभिवृद्धि जाननी चाहिए॥११॥

हाथियों की अशुभ चेष्टाओं का फल कथन

स्खलितगतिरकस्मात् त्रस्तकर्णोऽतिदीनः
श्वसिति मृदु सुदीर्घं न्यस्तहस्तः पृथिव्याम्।
द्रुतमुकुलितदृष्टिः स्वप्नशीलो विलोमो
भयकृदहितभक्षी नैकशोऽसृक्शकृत्कृत्॥१२॥

माया—गमनशील हाथियों की गति अकस्मात् बाधित होने पर, कानों का हिलना बन्द होने पर, अतिहीनतापूर्ण व्यवहार से सूण्ड को भूमिस्थ कर श्नैः श्नैः लम्बी साँस लेकर अचम्भित और अधोदृष्टि होने पर, अत्यधिक विलम्ब तक शयन करने से उलटा चलने जैसे घटना से अभक्ष्य भक्षण करने से और कई रक्त युक्त उपसर्ग करने से भय उत्पन्न होता है॥१२॥

हाथियों की शुभ चेष्टाओं का फल कथन

वल्मीकस्थाणुगुल्मक्षुपतरुमथनस्वेच्छया हृष्टदृष्टि-
र्यायाद्यात्रानुलोमं त्वरितपदगतिर्वक्त्रमुन्नाम्य चोच्चैः।
कक्ष्यासन्नाहकाले जनयति च मुहुः शीकरं बृंहितं वा
तत्काले वा मदाप्तिर्जयकृदथ रदं वेष्टयन् दक्षिणं च॥१३॥

माया—हाथी का स्वेच्छा से वल्मीक, स्थाणु अर्थात् शाखाओं से हीन पेड़ों, गुल्म, घास, अथवा अन्यान्य पेड़ों का लत मर्दन करता हुआ प्रसन्नतापूर्वक अर्थात् उत्साहित होकर अपनी दृष्टियों को और अपने मुख को उन्नत कर आशु गति से यात्रा के अनुकूल व्यवहारपूर्वक चलना और उस पर हौदा चढ़ाते समय भी जल बिन्दुओं की फुहार उड़ाना, गर्जन करना, मदयुक्त होना तथा अपने सूण्ड से दाहिने भाग के दाँत को लपेटना आदि हाथियों की चेष्ट जय प्रदायक कहा गया है॥१३॥

हाथियों को अन्यान्य और भी चेष्टाओं का कथन

प्रवेशनं वारिणि वारणस्य ग्राहेण नाशाय भवेन्नृपस्य।
ग्राहं गृहीत्वोत्तरणं नृपस्य तोयात् स्थलं वृत्तिकरं नृभर्तुः॥१४॥

माया—हाथी को पकड़े ग्राह के जल में प्रविष्ट कर जाने से राजा की हानि होती है तथा ग्राह सहित हाथी का जल से बाहर निर्गत हो जाने पर राजा की अभिवृद्धि होती है॥१४॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-
ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां
शाकुने-हस्तीङ्गितनिरूपणं नाम चतुर्नवतितमोऽध्यायः॥९४॥

□□□

अथ पञ्चनवतितमोऽध्यायः-९५

शाकुने-वायसविरुतनिरूपणम्

सर्वप्रथम प्रविभाग प्रदर्शनार्थ कथन

प्राच्यानां दक्षिणतः शुभदाः काकाः करायिका वामाः ।
विपरीतमन्यदेशेष्ववधिर्लोकप्रसिद्ध्यैव ॥१॥

माया—पूर्व दिशा में स्थित देशों के जनगणों के लिए दाहिने भाग में स्थित कौआ और वायें भाग में स्थित करायिका तथा अन्य देशों के जनगणों के लिए बायें भाग में कौआ और दाहिने भाग में करायिका शुभदायक होता है। पूर्व आदि देशों का लोक व्यवहार से परिज्ञान करना चाहिए॥१॥

कौआ की चेष्टाओं का फल कथन

वैशाखे निरुपहते वृक्षे नीडः सुभिक्षशिवदाता ।
निन्दितकण्टकिशुष्केष्वसुभिक्षभयानि तद्देशे ॥२॥

माया—वैशाख मास में उपद्रवहीन वृक्ष के ऊपर कौआ द्वारा घोंसला बनाना सुभिक्ष और कल्याण का संसूचक है तथा कँटीले, निन्दा योग्य अथवा सूखे हुए पेड़ों पर घोंसला बनाना, उस देश में दुर्भिक्ष का भय उत्पन्न होने की संसूचना समझनी चाहिए॥२॥

घोसलों के द्वारा वृष्टि आदि फल ज्ञानार्थ कथन

नीडे प्राक्शाखायां शरदि भवेत्प्रथमवृष्टिरपरस्याम् ।
याम्योत्तरयोर्मध्यात् प्रधानवृष्टिस्तरोरुपरि ॥३॥
शिखिदिशि मण्डलवृष्टिर्नैर्ऋत्यां शारदस्य निष्पत्तिः ।
परिशेषयोः सुभिक्षं मूषकसम्पच्च वायव्ये ॥४॥

माया—कौआ द्वारा शरद् ऋतु के समय पूर्व दिशागत वृक्ष के शाखा पर घोंसला बनाने से सर्वप्रथम पश्चिम दिशा में वृष्टि होने की सूचना जाननी चाहिए। कौआ द्वारा वृक्ष के दक्षिण अथवा उत्तर दिशागत शाखा पर घोंसला बनाने से उस वृक्ष प्रदेश में प्रधान वृष्टि होने की सम्भावना प्रबल होती है। अग्नि कोण की शाखा पर घोंसला बनाने से मण्डलवृष्टि अर्थात् खण्ड वृष्टि होती है। उस वृक्ष के नैर्ऋत्य कोणस्थ शाखा पर घोंसला बनाने से शारद धान्यों की अच्छी पैदावार होती है। शेष अन्य अर्थात् वायव्य और ईशान कोणीय वृक्ष की शाखा पर कौआ द्वारा घोंसला बनाने से सुभिक्ष होता है तथा वायव्य कोणीय शाखा पर घोंसला होने से चूहों की अभिवृद्धि भी होती है॥३-४॥

चोर, रोग, अनावृष्टि कारक काग चेष्टाओं कथन

शरदर्भगुल्मवल्लीधान्यप्रासादगेहनिम्नेषु ।
शून्यो भवति स देशश्चौरानावृष्टिरोगार्तः ।।५।।

माया—जिस-किसी देश में कौआ द्वारा शर (शरकण्डा), कुशा, गुल्म, लता, धान्य, प्रासाद, गृह, भूमि पर नीचे आदि में घोंसला बनाये जाने से वह देश विशेष चोर, अनावृष्टि और रोग से पीड़ित होकर जनाभाव का शिकार हो जाता है।।५।।

कौए के दो, तीन आदि अण्डे देने का फल परिज्ञानार्थ कथन

द्वित्रिचतुःशावत्वं सुभिक्षदं पञ्चभिर्नृपान्यत्वम् ।
अण्डावकिरणमेकाण्डताप्रसूतिश्च न शिवाय ।।६।।

माया—कौआ द्वारा दो, तीन अथवा चार बच्चे देने पर सुभिक्ष; उसके पाँच बच्चे होने से अन्य राजा का अधिकार तथा बच्चों के नष्ट होने या एक बच्चा देने से अकल्याण को संसूचित करने वाला होता है।।६।।

कौए के बच्चों से फल की विशेषता कथन

चौरकवर्णैश्चौराश्चित्रैर्मृत्युः सितैस्तु वह्निभयम् ।
विकलैर्दुर्भिक्षभयं काकानां निर्दिशेच्छिशुभिः ।।७।।

माया—कौआ के बच्चों का वर्ण गन्धद्रव्य के सदृश होने पर चोरों की अभिवृद्धि, अनेकवर्ण का होने पर मृत्यु, श्वेत वर्ण होने पर अग्निभय तथा उसका कोई बच्चा अङ्गहीन हो जाय, तो दुर्भिक्ष का भय उत्पन्न होने को संसूचित करने वाला होता है।।७।।

कौए की चेष्टा से दुर्भिक्ष आदि ज्ञानार्थ कथन

अनिमित्तसंहतैर्ग्राममध्यगैः क्षुद्भयं प्रविरुवद्भिः ।
रोधश्चक्राकारैरभिघातो वर्गवर्गस्थैः ।।८।।

माया—अकारण कौए द्वारा ग्राम-मध्य में स्थित होकर अति शब्द करने से दुर्भिक्ष का भय; कौओं द्वारा चक्र बना कर एकत्रित होकर स्थित होने से उस नगर का रोध तथा कई वर्ग में कौए स्थित हों, तो उपद्रव होने को संसूचित करते हैं।।८।।

शत्रुवृद्धि और जनहानिकारक कागचेष्टा कथन

अभयाश्च तुण्डपक्षश्चरणविघातैर्जनानभिभवन्तः ।
कुर्वन्ति शत्रुवृद्धिं निशि विचरन्तो जनविनाशम् ।।९।।

माया—कौए भयहीन होकर चोंच, पंख और पंजों से जनगण को मारते हों, तो शत्रुवृद्धि होने की तथा कौए का रात्रि विचरण करने से जनगण की क्षति का संकेत करने वाला होता है।।९।।

कौए की अन्य चेष्टाओं का फल कथन

सव्येन खे भ्रमद्भिः स्वभयं विपरीतमण्डलैश्च परात्।
अत्याकुलं भ्रमद्भिर्वातोद्भ्रामो भवति काकैः ॥१०॥

भाषा—आकाश में स्थित होकर प्रदक्षिण क्रम से कौआ चक्रमण करता हो, तो आत्मीय जनों से तथा अपसव्य क्रम से चक्रमण करता हो, तो शत्रुओं से भय होने का संकेत समझना चाहिए। वह कौआ आकुलतापूर्वक चक्रमण कर रहा हो, तो दर्शन करने वालों की अनवस्थिति को सूचित करता है॥१०॥

कौए की और भी अन्य चेष्टाओं का फल कथन

ऊर्ध्वमुखाश्चलपक्षाः पथि भयदाः क्षुद्भयाय धान्यमुषः।
सेनाङ्गस्था युद्धं परिमोषं चान्यभृतपक्षाः ॥११॥

भाषा—कौआ का ऊपर की ओर मुख कर पंखों को चलाने से मार्ग में भय; धान्यों को चुराने से दुर्भिक्ष का भय; सेना के अङ्गों पर बैठने से युद्ध और कोयल के सदृश काले पंख वाले कौए हों, तो चोरभय को दर्शाने वाला होता है॥११॥

कौए की चेष्टाओं में शय्या से विशेषता कथन

भस्मास्थिकेशपत्राणि विन्यसन् पतिवधाय शय्यायाम्।
मणिकुसुमाद्यवहनने सुतस्य जन्माप्यथाङ्गनायाश्च ॥१२॥

भाषा—कौआ द्वारा शय्या (बिस्तर) के ऊपर भस्म, अस्थि, केश, पत्र आदि वस्तुओं को फेंक या रख दिये जाने से उस शय्या स्वामी के वध का संकेत समझना चाहिए और मणि, पुष्प, फल आदि वस्तुओं को छोड़ने से उस शय्या स्वामी को पुत्र प्राप्ति की सूचना समझना चाहिए तथा शय्या पर तृण, काष्ठ आदि छोड़ने को शय्यास्वामी को कन्या रत्न की प्राप्ति को दर्शाना है॥१२॥

धन और भयदायक कौए की चेष्टाओं का कथन

पूर्णाननेऽर्थलाभः सिकताधान्यार्द्रमृत्कुसुमपूर्वैः।
भयदो जनसंवासाद्यदि भाण्डान्यपनयेत् काकः ॥१३॥

भाषा—कौआ द्वारा बालू, धान्य, भिंगी हुई मिट्टी, पुष्प, फल आदि में से कोई वस्तु मुख में भर अपने स्थान (घोंसला) में आ जाने को धनलाभ कराने का संकेत जानना चाहिए तथा जलाश्रय के नजदीक से कोई बर्तन लेकर भाग जाना भय देने के लिए है, कहना चाहिए॥१३॥

कौए की कुछ अन्य चेष्टाओं का फल कथन

वाहनशस्त्रोपानच्छत्रच्छायाङ्गकुट्टने मरणम्।
तत्पूजायां पूजा विष्ठाकरणेऽन्नसम्प्राप्तिः ॥१४॥

माया—वाहन, शस्त्र, जूते, छत्र आदि की छाया को कौआ द्वारा थूरा या कूटा जाना, उस वस्तु के स्वामी के मरण का सूचक है, उन वाहनादि की पुष्प, फल आदि से पूजा करना, उसके स्वामी को सम्मान प्राप्ति की सूचना है तथा उन वाहनादि पर कौआ द्वारा वीट करना, उनके स्वामी को भोजन लाभ होने की सूचना देना है॥१४॥

वस्तु निर्दिष्ट चेष्टाओं का फल कथन

यद्द्रव्यमुपनयेत्तस्य लब्धिरपहरति चेत् प्रणाशः स्यात्।
पीतद्रव्यैः कनकं वस्त्रं कार्पासिकैः सितै रूप्यम्॥१५॥

माया—कौआ द्वारा जिन द्रव्यों को कहीं से उठाकर लाया गया हो, उन द्रव्यों का लाभ और जिन द्रव्यों को ले जाया गया हो उन द्रव्यों की हानि होती है। यहाँ पीले द्रव्य से स्वर्ण, कपास आदि सम्बन्धित वस्तु से वस्त्र तथा श्वेत वस्तु में चाँदी का लाभ अथवा हानि की कल्पना करनी चाहिए॥१५॥

वृष्टि और दुर्भिक्षकारी कौए की चेष्टाओं का कथन

सक्षीरार्जुनवञ्जुलकूलद्वयपुलिनगा रुवन्तश्च।
प्रावृषि वृष्टिं दुर्दिनमनृतौ स्नाताश्च पांशुजलैः॥१६॥

माया—दुधारु, अर्जुन, वञ्जुल आदि वृक्ष अथवा नदी के दोनों किनारों पर स्थित होकर कौओं के द्वारा शब्द करने से अथवा धूलि (रज:कण) अथवा जल से नहाने पर वर्षा ऋतु के समय वृष्टि और दूसरे ऋतुओं के समय दुर्भिक्ष होने को बताता है॥१६॥

कौए की भयकारक शब्द का फल कथन

दारुणनादस्तरुकोटरोपगो वायसो महाभयदः।
सलिलमवलोक्य विरुवन् वृष्टिकरोऽब्दानुरावी च॥१७॥

माया—वृक्षकोटरगत कौआ दारुण या भयप्रद शब्द करता हो, तो महाभय उत्पन्न करने वाला होता है। जल का अवलोकन कर अथवा बादल गर्जने के पश्चात् शब्द करता हो, तो वृष्टि करने वाला होता है॥१७॥

सूर्याभिमुख काग चेष्टा फलों का कथन

दीप्तोद्विग्नो विटपे विकुट्टयन् वह्निकृद्विधुतपक्षः।
रक्तद्रव्यं दग्धं तृणकाष्ठं वा गृहे विदधत्॥१८॥

माया—सूर्याभिमुख कौआ वृक्ष के सघन डालियों पर स्थित उद्विग्न मन होकर अपने ही अङ्गों को चञ्चु आदि से अपने शरीर को कूटता हो, पंखों को फड़फड़ाता

हो तथा रक्त द्रव्यों अथवा दूध, तृण अथवा लकड़ियां को गृह के अन्दर ले आता हो, तो निचश्य ही अग्नि भय उत्पन्न करने वाला संकेत इसे समझना चाहिए॥१८॥

कौए की चेष्टाओ का दीप्त दिशाओं के अनुसार फल कथन

ऐन्द्र्यादिदिगवलोकी सूर्याभिमुखो रुवन् गृहे गृहिणः।
राजभयचोरबन्धनकलहाः स्युः पशुभयं चेति ॥१९॥

माया—गृहस्थ के घरों पर पूर्व आदि दिशाओं का अवलोकन करता हुआ सूर्याभिमुख होकर कौआ शब्द करता हो, तो गृहस्वामी को राजभय, चोरभय, बन्धन, कलह, पशुजन्य भय आदि उत्पन्न होता है। यहाँ सूर्याभिमुख से दीप्त दिशा की ओर मुख करना अर्थ करने पर उपरोक्त श्लोक का तात्पर्य इस प्रकार भी लगाना चाहिए गृहस्थों के घर पर अवस्थित होकर पूर्व आदि दीप्त दिशा की तरफ मुख कर कौआ के शब्द करने से क्रम से राजभय, चोरभय, बन्धन भय, कलहभय आदि होता है तथा दीप्त विदिशाओं की ओर मुखकर कौआ शब्द करे, तो पशुओं को भय करने वाला होता है॥१९॥

शान्तपूर्व दिशा से काक शब्द फल कथन

शान्तामैन्द्रीमवलोकयन् रुयाद्राजपुरुषमित्राप्तिः।
भवति च सुवर्णलब्धिः शाल्यन्नगुडाशनाप्तिश्च ॥२०॥

माया—कौआ शान्त पूर्व दिशा का अवलोकन करता हुआ शब्द करता हो, तो राजपुरुष और मित्र से मिलन, स्वर्ण प्राप्ति और शालिधान्य व गुड़ मिश्रित भोजन की प्राप्ति भी होती है॥२०॥

शान्त आग्नेय और दक्षिण दिशा से काक शब्द फल कथन

आग्नेय्यामनलाजीविकयुवतिप्रवरधातुलाभश्च।
याम्ये माषकुलूत्थाभोज्यं गान्धर्विकैर्योगः ॥२१॥

माया—शान्त आग्नेय कोण का अवलोकन करता हुआ कौआ द्वारा शब्द करने पर अग्नि से उपजीविका वाले जन और युवति स्त्री से मिलन तथा श्रेष्ठ धातु का लाभ भी होता है।

शान्त दक्षिण दिशा का अवलोकन करता हुआ कौआ द्वारा शब्द करने पर उड़द और कुलथी का भोजन तथा गीत-संगीत के जानकारों से भेंट होती है॥२१॥

शान्त नैर्ऋत्यकोण और पश्चिम दिशा से का शब्द फल कथन

नैर्ऋत्यां दूताश्वोपकरणदधितैलपललभोज्याप्तिः।
वारुण्यां मांससुरासवधान्यसमुद्ररत्नाप्तिः ॥२२॥

माया—शान्त नैर्ऋत्य कोण का अवलोकरन करता हुआ कौआ द्वारा शब्द करने पर दूत, अश्वोपकरण, दही, तेल, मांस और भोजन द्रव्यों की प्राप्ति होती है।

शान्ता पश्चिम दिशा का अवलोकन करता हुआ कौआ द्वारा शब्द करने पर मांस, मद्य, आसव, धान्य और समुद्रोत्पन्न रत्नों की प्राप्ति कहनी चाहिए॥२२॥

शान्त वायव्य कोण और उत्तर दिशा से काक शब्द फल कथन

मारुत्यां शस्त्रायुधसरोजवल्लीफलाशनाप्तिश्च।
सौम्यायां परमान्नाशनं तुरङ्गाम्बरप्राप्तिः॥२३॥

माया—शान्त वायव्य कोण का अवलोकन करता हुआ कौआ द्वारा शब्द करने पर शस्त्र, लोह, आयुध, कमल, लता, फल, भोजन आदि की प्राप्ति होती है।

शान्ता उत्तर दिशा का अवलोकन करता हुआ कौआ द्वारा शब्द करने पर पायस भोजन, घोड़ा, वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है॥२३॥

शान्त ईशान कोण से काक शब्द फल कथन

ऐशान्यां सम्प्राप्तिर्घृतपूर्णानां भवेदनडुहश्च।
एवं फलं गृहपतेर्गृहपृष्ठसमाश्रिते भवति॥२४॥

माया—शान्त ईशान कोण की ओर मुख कर कौआ द्वारा शब्द करने पर घी से युक्त भोज्य सामग्री, बैल आदि की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार से गृह के पृष्ठ भाग में स्थित कौआ का भी गृहस्वामी को फल प्राप्ति कहनी चाहिए॥२४॥

कर्ण समकक्ष काग के उड़ने का फल कथन

गमने कर्णसमश्चेत् क्षेमाय न कार्यसिद्धये भवति।
अभिमुखमुपैति यातुर्विरुवन् विनिवर्तयेद्यात्राम्॥२५॥

माया—यात्रा करते समय यात्री के कर्ण के तुल्य ऊँचाई से होकर कौआ उड़ता हो, तो यात्री का मंगल होता है, परन्तु कार्य में विघ्न पड़ता है अर्थात् लक्ष्य की सिद्धि नहीं होती है। कौआ यात्री के समक्ष शब्द करता प्रकट होता हो, तो निश्चय यात्रा में विघ्न पड़ता है॥२५॥

दायें व बायें भागस्थ काक शब्द फल कथन

वामे वाशित्वादौ दक्षिणपार्श्वेऽनुवाशते यातुः।
अर्थापहारकारी तद्विपरीतोऽर्थसिद्धिकरः॥२६॥

माया—सर्वप्रथम कौआ यात्री के बायें भाग में शब्द करता हुआ फिर दायें भाग में भी शब्द करता हो, तो यात्री के धन की चोरी हो जाती है। इसके विपरीत होने पर अर्थात् दक्षिण भाग में शब्द करने के पश्चात् वाम भाग में भी कौआ शब्द करता हो, तो यात्री को धन की प्राप्ति होती है॥२६॥

पुनः दायें व बायें भागस्थ काक शब्द फल कथन

यदि वाम एव विरुवन् मुहुर्मुहुर्यायिनोऽनुलोमगतिः।
अर्थस्य भवति सिद्ध्यै प्राच्यानां दक्षिणश्चैवम् ॥२७॥

भाषा—यात्री के बायें भागस्थ कौआ पीछे की ओर जाकर वारम्वार शब्द करने लगे, तो यात्री को अर्थ की प्राप्ति होती है। इस प्रकार का काक और उसकी चेष्टाओं का फल पूर्वदेश के जनगणों के दक्षिण भाग में स्थित काग से सम्बन्धित कहा गया है। अर्थात् गमन करने के समय में पूर्व देश के जनगणों के दायें भाग में स्थित कौआ पीछे जाकर शब्द करें, तो धन लाभ होता है॥२७॥

यात्री को यात्रा का लाभ गृह स्थिति में कराने वाला फल कथन

वामः प्रतिलोमगतिर्विरुवन् गमनस्य विघ्नकृद्भवति।
तत्रस्थस्यैव फलं कथयति तद्वाञ्छितं गमने ॥२८॥

भाषा—यात्री के बायें भाग में स्थित कौआ प्रतिलोम गमन करता अर्थात् समक्ष आता हुआ शब्द करता हो, तो यात्री की यात्रा में निश्चय विघ्न पड़ता है; परन्तु यात्रा से वाञ्छित फल, वह गृह में रहकर ही प्राप्त कर लेता है॥२८॥

दायें व बायें भागवश कौए का फल कथन

दक्षिणविरुतं कृत्वा वामे विरुयाद्यथेप्सितावाप्तिः।
प्रतिवाश्य पुरो यायाद् द्रुतमत्यर्थागमो भवति ॥२९॥

भाषा—यात्री के दायें भाग में शब्द करता हुआ फिर बायें भाग में भी कौआ शब्द करता हो, तो यात्री को मनवांछित धन प्राप्त होता है। वह कौआ शब्द करता हुआ ही आगे भी निकल जाय, तो यात्री को अधिकतर धन की प्राप्ति होती है॥२९॥

रक्तस्राव कारक काक शब्द फल कथन

प्रतिवाश्य पृष्ठतो दक्षिणेन यायाद् द्रुतं क्षतजकारी।
एकचरणोऽर्कमीक्षन् विरुवंश्च पुरो रुधिरहेतुः ॥३०॥

भाषा—पीछे की ओर शब्द करता हुआ कौआ दायें भाग से होकर निकल जाय, तो यात्री के शरीर से किसी न किसी कारण खून बहता है। एक पैर पर स्थित होकर कौआ सूर्य का अवलोकन करता हुआ शब्द करे, तो यात्री को यात्रा के बीच में आगे खून बहने का कारण प्राप्त होता है॥३०॥

कौए से प्रधान पुरुष वध परिज्ञान कथन

दृष्ट्वार्कमेकपादस्तुण्डेन लिखेद्यदा स्वपिच्छानि।
पुरतो जनस्य महतो वधमभिधत्ते तदा बलिभुक् ॥३१॥

माया—कौआ द्वारा एक पैर पर स्थित होकर सूर्य का अवलोकन करते-करते अपनी चोंच से अपने ही पंखों को खुजलाने से यह भविष्य में किसी प्रधान पुरुष का वध होने को संसूचित करता है॥३१।

धान्य के साथ भूमि प्राप्ति और कष्ट परिज्ञानार्थ कथन

सस्योपेते क्षेत्रे विरुवति शान्ते ससस्यभूलब्धिः।
आकुलचेष्टो विरुवन् सीमान्ते क्लेशकृद्यातुः॥३२॥

माया—धान्ययुक्त खेत की शान्त दिशा में बैठकर कौआ शब्द करता हो, तो धान्य के साथ भूमि की प्राप्ति होती है। कौआ ग्राम के सीमान्त भाग में बैठकर आकुलतापूर्वक शब्द करता हो, तो यात्री को क्लेश प्राप्त होता है॥३२॥

सुकोमल पत्रों आदि पर स्थित काग का फल कथन

सुस्निग्धपत्रपल्लवकुसुमफलानम्रसुरभिमधुरेषु।
सक्षीराव्रणसंस्थितमनोज्ञवृक्षेषु चार्थसिद्धिकरः॥३३॥

माया—सुकोमल पत्रों, नवनीत पल्लवों, पुष्पों, फलों आदि झुके सुगन्धि युक्त, मधुर, दुग्ध युक्त व्रण वाले, मनोहारी आदि वृक्ष पर स्थित काग अर्थ सिद्धि प्रदान करने वाला होता है॥३३॥

धन प्राप्तिकारक काक शब्द परिज्ञानार्थ कथन

निष्पन्नसस्यशाद्वलभवनप्रासादहर्म्यहरितेषु।
धन्योच्छ्रयमङ्गल्येषु चैव विरुवन् धनागमदः॥३४॥

माया—परिपक्व धान्य युक्त क्षेत्र, दूब युक्त गृह, देवगृह, प्रासाद, हरियाली युक्त स्थान, शुभ भूमि, उन्नत स्थान, माङ्गलिक स्थान आदि स्थान स्थित कौआ शब्द करे, तो धन का लाभ होता है॥३४॥

सर्प दर्शन, ज्वर आदि कारक काक शब्द का कथन

गोपुच्छस्थे वल्मीकगेऽथवा दर्शनं भुजङ्गस्य।
सद्यो ज्वरो महिषगे विरुवति गुल्मे फलं स्वल्पम्॥३५॥

माया—गाय की पूँछ अथवा वल्मीक पर स्थित होकर कौआ शब्द करता हो, तो सर्प का दर्शन, महिष के ऊपर स्थित होकर कौआ शब्द करता है तो शीघ्र ज्वर तथा गुल्म पर स्थित हुआ कौआ शब्द करता हो, तो अल्प शुभाशुभ फल प्राप्त होता है॥३५॥

कार्यविनाशक और वधकारक काक शब्द कथन

कार्यस्य व्याघातस्तृणकूटे वामगेऽम्बुसंस्थे वा।
ऊर्ध्वाऽग्निप्लुष्टेऽशनिहते च काके वधो भवति॥३६॥

माया—तिनकों के ढ़ेर पर अथवा बायें भाग में स्थित जल में स्थित होकर कौआ शब्द करता हो, तो कार्य की हानि का संकेतक होता है। ऊर्ध्व भाग अग्नि से जला अथवा बिजली से आहत वृक्ष पर स्थित कौआ बोलता हो, तो वधकारक होता है॥३६॥

कार्य-सिद्धि और बन्धन योग कारक काक स्थिति कथन

कण्टकिमिश्रे सौम्ये सिद्धिः कार्यस्य भवति कलहश्च।
कण्टकिनि भवति कलहो वल्लीपरिवेष्टिते बन्धः ॥३७॥

माया—कँटीले शुभ वृक्ष पर स्थित कौआ कार्य की सिद्धि के साथ-साथ कलह कारक भी होता है। कँटीले साधारण वृक्ष पर स्थित कौआ कलहकारक होता है तथा लताओं परिवेष्टित वृक्ष पर स्थित कौआ बन्धनकारक होता है॥३७॥

शीर्ष रहित वृक्ष आदि पर स्थित काग का फल कथन

छिन्नाग्रेऽङ्गच्छेदः कलहः शुष्कद्रुमस्थिते ध्वांक्षे।
पुरतश्च पृष्ठतो वा गोमयसंस्थे धनप्राप्तिः ॥३८॥

माया—शीर्ष रहित अर्थात् ऊपरी भाग से हीन वृक्ष पर स्थित काग अङ्गच्छेद कारक होता है। सूखे हुए वृक्ष पर स्थित होने से कलहकारी तथा आगे अथवा पीछे गोबर पर स्थित होने से धन की प्राप्ति कराता है॥२८॥

मृतपुरुष आदि के अङ्गस्थ कागफल कथन

मृतपुरुषाङ्गावयवस्थितोऽभिविरुवन् करोति मृत्युभयम्।
भञ्जन्नस्थि च चञ्च्वा यदि विरुवत्यस्थिभङ्गाय ॥३९॥

माया—किसी मृतक पुरुष के अङ्ग अथवा शरीर पर यात्रा करने वाले के सामने स्थित होकर शब्द करता हो, तो मृत्यु का भय उत्पन्न होता है तथा कौआ अपने चोंच से हड्डी को तोड़ता हुआ शब्द भी करता हो, तो हड्डी टूटने का कारण उत्पन्न होता है॥३९॥

सर्प, रोग आदि का भय उत्पन्न करने वाला काग चेष्टाओं का कथन

रज्ज्वस्थिकाष्ठकण्टकिनिःसारशिरोरुहानने रुवति।
भुजगगददंष्ट्रितस्करशस्त्राग्निभयान्यनुक्रमशः ॥४०॥

माया—जब कौआ रस्सी, हड्डी, काष्ठ, कांटायुक्त वस्तु, निःसार वस्तु, केश आदि को अपने मुख में फँसा कर शब्द करता हो, तो क्रम से सर्प, रोग, दंष्ट्री अर्थात् दाँतुल जानवर, चोर, शस्त्र, अग्नि आदि का भय उत्पन्न करने वाला होता है॥४०॥

अर्थ सिद्धि और यात्रा बाधाकारक काग शब्द का कथन

सितकुसुमाशुचिमांसाननेऽर्थसिद्धिर्यथेप्सिता यातुः ।
पक्षौ धुन्वन्नूर्ध्वानने च विघ्नं मुहुः क्वणति ।।४१।।

माया—जब कौआ श्वेत पुष्प, अशुचि वस्तु, मांस का टुकड़ा आदि को मुख में फँसाकर शब्द करता हो, तो यात्री के अभीष्टार्थ को सिद्ध करने वाला होता है। कौआ अपने पंखों को फड़फड़ाता हुआ अर्ध्व मुखकर वारम्वार शब्द करता हो, तो यात्रा बाधित करने वाला होता है।।४१।।

बन्धन आदिकारक काग शब्द कथन

यदि शृङ्खलां वरत्रां वल्लीं वाऽऽदाय वाशते बन्धः ।
पाषाणस्थे च भयं क्लिष्टापूर्वाध्विकयुतिश्च ।।४२।।

माया—जब कौआ लौह जंजीर, वरत्रा (चर्म-रस्सी), लता आदि को मुख में फँसाकर शब्द करता हो, तो बन्धन का कारण उत्पन्न करता है। पत्थर पर स्थित हुआ कौआ अपरिचित मनुष्य से मार्ग में मिलन का कारण होता है।।४२।।

परमसंतुष्टि और स्त्री लाभकारक काग चेष्टा कथन

अन्योऽन्यभक्षसंक्रामितानने तुष्टिरुत्तमा भवति ।
विज्ञेयः स्त्रीलाभो दम्पत्योर्विरुवतोर्युगपत् ।।४३।।

माया—जब दो कौए आपस में एक-दूसरे के मुख में आहार का आदान प्रदान करते हों, तो यात्री को उत्तम संतुष्टि प्रदान करने वाला होता है। नर व मादा कौए दोनों साथ-साथ शब्द करते हों, तो स्त्री की प्राप्ति कराने वाला होता है।।४३।।

स्त्री लाभ, पुत्रमरण, भोजनलाभ आदि कारक काग चेष्टा कथन

प्रमदाशिरउपगतपूर्णकुम्भसंस्थेऽङ्गनार्थसम्प्राप्तिः ।
घटकुट्टने सुतविपद्घटोपहदनेऽन्नसम्प्राप्तिः ।।४४।।

माया—किसी भी स्त्री के शिर पर स्थित जलपूर्ण घड़ा पर समवस्थित कौआ स्त्रीलाभ कारक होता है। घड़े को ताड़ित करता हो, तो पुत्रमरण का संकेत करता है तथा उस घड़े पर बीट कर दिया हो, तो भोजन प्राप्ति कराने वाला होता है।।४४।।

काग के अन्य चेष्टाओं का निहितार्थ कथन

स्कन्धावारादीनां निवेशसमये रुवंश्चलत्पक्षः ।
सूचयतेऽन्यत्स्थानं निश्चलपक्षस्तु भयमात्रम् ।।४५।।

माया—यात्रा के मध्य में राजा के स्कन्धवार अर्थात् छावनी बनाते समय कौआ अपने पंखों को फड़फड़ाता हुआ शब्द करता हो, तो इसका निहितार्थ है, इस स्थान

को छोड़कर अन्य स्थान पर छावनी बनाने चाहिए। कौआ उस समय अपने पंखों को स्थिर रखता हुआ शब्द करता हो, तो मात्र भयभीत करने वाला होता है, स्थानान्तर कराने वाला नहीं होता है।।४५।।

सन्धि और युद्धकारक काग चेष्टा कथन

प्रविशद्भिः सैन्यादीन् सगृध्रकङ्कैर्विनामिषं ध्वांक्षैः ।
अविरुद्धैस्तैः प्रीतिर्द्विषतां युद्धं विरुद्धैश्च ।।४६।।

माया—यदि गिद्ध, कंक आदि पक्षियों के सहित कौए मांस रहित होकर सेना या नगर या ग्राम में आपसी मैत्रीभाव के साथ प्रवेश करते हों, तो शत्रुओं से सन्धि या शत्रुओं से मित्रवत् व्यवहार स्थापित होता है; परन्तु आपस में कलह करते हुए कौए प्रवेश करते हों, तो युद्ध अथवा झगड़ा कराने वाला होता है।।।४६।।

कागचेष्टा का विविध फल कथन

बन्धः सूकरसंस्थे पङ्काक्ते सूकरे द्विकेऽर्थाप्तिः ।
क्षेमं खरोष्ट्रसंस्थे केचित् प्राहुर्वधं तु खरे ।।४७।।

माया—यदि सूअर के ऊपर कौआ स्थित हो, तो बन्धनकारक; कीचड़ से युक्त सूअर पर कौआ स्थित हो, तो धन प्राप्तिकारक तथा गधे और ऊँट पर स्थित कौआ कल्याणकारक होता है। यहाँ पर किसी ने गधे पर स्थित कौआ वधकारक होता है, कहा है।।४७।।

काग की अन्यान्य और चेष्टाओं का कथन

वाहनलाभोऽश्वगते विरुवत्यनुयायिनि क्षतजपातः ।
अन्येऽप्यनुव्रजन्तो यातारं काकवद्विहगाः ।।४८।।

माया—अश्व पर स्थित हुआ कौआ शब्द करता हो, तो वाहन की प्राप्ति कराने वाला होता है। तथा यात्री के पृष्ठभाग में गमन करता हुआ कौआ शब्द करता हो, तो रक्त स्राव कराता है। इस तरह कौआ के अतिरिक्त अन्य पक्षियों के द्वारा भी पीछे गमन करता हुआ शब्द करने पर उपरोक्त फल का ही वाचन करना चाहिए।।४८।।

काग चेष्टाओं के फलों में विशेषता कथन

द्वात्रिंशत्प्रविभक्ते दिक्चक्रे यद्यथा समुद्दिष्टम् ।
तत्तत्तथा विधेयं गुणदोषफलं यियासूनाम् ।।४९।।

माया—द्वात्रिंश विभागात्मक दिशा चक्र में जहाँ जैसा फल कहा गया है, तदनुसार यात्रा करने वालों को भी शुभाशुभ फल कहा जाना चाहिए। जैसे कि शान्ता

पूर्व दिशागत शकुन का फल शुभ, अशुभ शकुन का फल मध्यम और दीप्ता पूर्वदिशा गत क्रूरचेष्टा युक्त शकुन में राजा आदि से भय आदि फल कथन करना चाहिए।।४९।।

काग के 'का' 'कव' 'क' आदि शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन

का इति काकस्य रुतं स्वनिलयसंस्थस्य निष्फलं प्रोक्तम्।
कव इति चात्मप्रीत्यै केति रुते स्निग्धमित्राप्तिः।।५०।।
करेति कलहं कुरुकुरु च हर्षमथ कटकटेति दधिभक्तम्।
केके विरुतं कुकु वा धनलाभं यायिन प्राह।।५१।।

माया—अपने घोंसलों में स्थित कौए का 'का' शब्दोच्चारण निष्फल होता है, 'कव' शब्द आत्मीय प्रीति को प्रकट करने के लिए तथा 'क' शब्द प्रियमित्र की प्राप्ति के लिए होता है। ऐसे ही कौए का 'कर' शब्द कलहकारी, 'कुरुकुरु' शब्द आनन्द के भाव को प्रकट करने के लिए 'कट कट' शब्द दही भोजन प्राप्ति के भाव को तथा 'के के' शब्द यात्रा करने वालों को धन प्राप्ति के भावों को प्रकट करने वाला होता है।।५०-५१।।

काग के और शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन

खरेखरे पथिकागममाह कखाखेति यायिनो मृत्युम्।
गमनप्रतिषेधिकमा कखला सद्योऽभिवर्षाय।।५२।।

माया—कौए का 'खरे खरे' शब्द पथिक का आगमन; 'क खा खा' शब्द यात्रा करने वालों की मृत्यु को संसूचित करने वाला; 'आ' शब्द यात्रा में बाधा डालने वाला तथा 'वखला' शब्द तात्कालिक वृष्टि होने का द्योतक होता है।।५२।।

काग के और भी शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन

काकेति विघातः काकटीति चाहारदूषणं प्राह।
पीत्यास्पदं कवकवेति बन्धमेवं कगाकुरिति।।५३।।

माया—कौए का 'काक' शब्द विनाश बोधक; 'काकटि' भोजन में स्थित विष को और 'कव-कव' शब्द प्रीति को प्रकट करने वाला तथा 'कगाकु' शब्द बन्धन होने को संसूचित करने वाला होता है।।५३।।

काग के और भी शब्दों का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन

करगौ विरुते वर्षं गुडवत् त्रासाय वडिति वस्त्राप्तिः।
कलयेति च संयोगः शूद्रस्य ब्राह्मणैः साकम्।।५४।।

माया—कौए का 'करगौ' शब्द वृष्टि होने का संकेतक है, 'गुड' शब्द

भयवाचक, 'वड' शब्द वस्त्र दिलाने वाला और 'कलय' शब्द ब्राह्मणों से शूद्र का समागम अभिव्यक्त करने वाला होता है॥५४॥

काग के और भी शब्दो का प्रयोग परिज्ञानार्थ कथन

कडिति फलाप्तिः फलदाहिदर्शनं टड्डिति प्रहाराः स्युः ।
स्त्रीलाभः स्त्रीति रुते गडिति गवां पुडिति पुष्पाणाम् ॥५५॥

भाषा—कौए का 'कड' शब्द अर्भाष्ट सिद्धि वाचक और शुभकारक सर्प का दर्शन कराने वाला होता है, तथा 'टड्ड' शब्द घात, 'स्त्री' शब्द स्त्री लाभ; 'गड्' शब्द गायों का लाभ और 'पुड्' शब्द फूलों की प्राप्ति को बताने वाला होता है॥५५॥

काग का 'टावु टाकु'; 'गुहु' आदि शब्दों के प्रयोगार्थ कथन

युद्धाय टाकुटाक्विति गुहु वह्निभयं कटेकटे कलहः ।
टाकुलि चिण्टिचि केकेकेति पुरं चेति दोषाय ॥५६॥

भाषा—कौए का 'टाकुटाकु' शब्द युद्ध बोधक; 'गुहु' शब्द अग्निभय-वाचक, 'कटे कटे' कलह संकेतक, 'टाकुलि' चिण्टिचि' और 'के के का' शब्द दोषों को दर्शाने वाला होता है॥५६॥

काग के शब्द आदि द्वारा फल ज्ञान में विशेष कथन

काकद्वयस्यापि समानमेतत् फलं यदुक्तं रुतचेष्टिताद्यैः ।
पतत्रिणोऽन्येऽपि यथैव काको वन्याः श्ववच्चोपरिदंष्ट्रिणो ये ॥५७॥

भाषा—शब्द, चेष्टा आदि के द्वारा कौआ का जिस प्रकार फल कहा गया है, उसी प्रकार दो, तीन आदि कौए का भी कल्पना करनी चाहिए। ऐसे ही अन्य पक्षियों के प्रसङ्ग में भी फल परिकल्पना करनी चाहिए। इसी प्रकार वनैले और दाँतुल प्राणियों का फल भी पूर्वोक्त कुत्ते के फल की तरह समझना चाहिए॥५७॥

अन्यान्य जन्तुओं की चेष्टा परिज्ञानार्थ कथन

स्थलसलिलचराणां व्यत्ययो मेघकाले
प्रचुरसलिलवृष्ट्यै शेषकाले भयाय ।
मधु भवननिलीनं तत्करोत्याशु शून्यं
मरणमपि न नीला मक्षिका मूर्ध्नि लीना ॥५८॥

भाषा—वर्षा ऋतु के समय में यदि स्थलचारी जीव जल में और जलचारी जीव स्थल पर आने लगते हैं, तो इससे यह ज्ञात होता है कि "बहुत वृष्टि होगी"; परन्तु यह स्थिति अन्य ऋतुकाल में उत्पन्न होने पर भय उत्पन्न करने वाला होता है।

मधुमक्खियाँ जिस गृह के अन्दर अपना छत्ता लगावें, उस गृह को शीघ्र जनशून्य करती हैं। नील वर्ण की मक्खी जिसके शिर के ऊपर बैठ जाय, तो यह उसकी मृत्यु को सूचित करती है॥५८॥

चीटियों की चेष्टाओ का परिज्ञानार्थ कथन

विनिक्षिपन्त्यः सलिलेऽण्डकानि पिपीलिका वृष्टिनिरोधमाहुः।
तरुं स्थलं वापि नयन्ति निम्नाद्यदा तदा ताः कथयन्ति वृष्टिम् ॥५९॥

माया—जब चीटियाँ अपने अण्डों को जल में डालने लगती हैं तो अनावृष्टि-सा वातावरण उत्पन्न हो जाता है। यदि चीटियाँ अपने अण्डों को जमीन पर से वृक्ष के ऊपर ले जाने लगती हो, तो समझना चाहिए कि शीघ्र वृष्टि होगी॥५९॥

शाकुन दर्शन आदि का फल निश्चयार्थ कथन

कार्यं तु मूलशकुनेऽन्तरजे तदह्नि
विन्द्यात् फलं नियतमेवमिमे विचिन्त्याः।
प्रारम्भयानसमयेषु तथा प्रवेशे
ग्राह्यं क्षुतं न शुभदं क्वचिदप्युशन्ति ॥६०॥

माया—किसी भी कार्य के आरम्भ के समय, जिस भी प्रकार का शकुन देखा गया हो, उसी के अनुसार उस कार्य के अन्त तक शुभाशुभ फल होता है। कार्य के मध्य में दीखने वाले शकुन का फल तत्काल या उसी दिन प्राप्त होता है।

इस प्रकार इस अध्याय में जो भी शकुन कहे गए हैं, उनका हर काल में विचार करना उचित है। सभी कार्यों के आरम्भकाल में, यात्रा करने के समय में, गृहप्रवेश के समय में आदि कार्यों के समय में उपरोक्त सभी शकुनों का विचार अवश्य करना चाहिए। हाँ ! यह कि किसी भी कार्य में छींक शुभ नहीं माना गया है॥६०॥

इन शकुनों की प्रशंसा कथन

शुभं दशापाकमविघ्नसिद्धिं मूलाभिरक्षामथवा सहायान्।
दुष्टस्य संसिद्धिमनामयत्वं वदन्ति ते मानयितुर्नृपस्य ॥६१॥

माया—उपरोक्त शकुनों के शुभाशुभ चेष्टाओं के द्वारा माननीय राजाओं के शुभ दशा का फल, निर्विघ्नतापूर्वक कार्यों की सिद्धि, मूलस्थानकी रक्षा, मार्ग में सहयोग करने वाले, दुष्ट शत्रुओं का वशीकरण, आरोग्य प्राप्ति आदि सभी पदार्थों को संसूचित करने वाला होता है॥६१॥

अशुभ शकुन काल में कर्त्तव्य ज्ञानार्थ कथन

क्रोशादूर्ध्वं शकुनविरुतं निष्फलं प्राहुरेके
तत्रानिष्टे प्रथमशकुने मानयेत् पञ्च षट् च।

प्रामायामान्नृपतिरशुभे षोडशैव द्वितीये
प्रत्यागच्छेत् स्वभवनमतो यद्यनिष्टस्तृतीयः ।।६२।।

माया—किसी ने कहा है कि एक कोश चलने के बाद शकुन शब्द निष्फल होता है। वैसे यात्रा के समय प्रथम शकुन अशुभ होने पर ग्यारह बार प्राणायाम तथा द्वितीय अवसर भी अशुभ शकुन होने पर सोलह बार प्राणायाम करना चाहिए, ऐसे में तृतीय अवसर में भी शकुन अशुभ हो जाने पर यात्रा स्थगित कर देनी चाहिए और घर वापस आकर आराम करना चाहिए। प्रसङ्गवश प्राणायाम विधि कहते हैं—सात व्याहृति जैसे—ॐ भूः, ॐ भुवः, ॐ स्वः, ॐ महः, ॐ जनः, ॐ तपः, ॐ सत्यम् + ॐ(प्रणव) आपोज्योती रसोऽमृतम् + गायत्रीमंत्र तत्सवितुवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ आदि मन्त्र का उच्चारण करते हुए बायें पूरा से श्वास लेते हुए पूरक प्राणायाम होता है। उसके बाद पुनः मन्त्रोच्चार पूर्वक श्वास को अन्दर रोकते हुए कुम्भक नाम का प्राणायाम हो जाता है। अन्त में दाहिने पूरा से मन्त्रोच्चारण पूर्वक श्वास को श्नैः श्नैः छोड़ने से रेचक नाम का प्राणायाम हो जाता है। इस प्रकार तीन या सात या ग्यारह बार करना चाहिए। इस प्रकार शकुनादि दोष को कम करने का प्रयत्न करना चाहिए।।६२।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुने-वायसविरुतनिरूपणं नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः ।।९५।।

□□□

अथ षण्णवतितमोऽध्यायः-९६

शाकुनोत्तरविचारः

सर्वप्रथम शाकुनफलवाचनार्थ ग्रन्थकार का उपदेश कथन

दिग्देशचेष्टास्वरवासरर्क्षमुहूर्तहोराकरणोदयांशान् ।
चरस्थिरोन्मिश्रबलाबलं च बुद्ध्वा फलानि प्रवदेद्रुतज्ञः ॥१॥

माया—दिक्, देश, चेष्टा, स्वर, दिन, नक्षत्र, मुहूर्त्त, होरा, करण, लग्न, अंश, चर, स्थिर, द्विस्वभाव आदि सभी शकुनों और राशियों का बलावल विचार कर शाकुन-स्वर को जानने वालों को फल कथन करना चाहिए॥१॥

उनके भेदों के प्रदर्शनार्थ कथन

द्विविधं कथयन्ति संस्थितानामागामिस्थिरसंज्ञितश्च कार्यम् ।
नृपदूतचरान्यदेशजातान्यभिघातः स्वजनादि चागमाख्यम् ॥२॥

माया—किसी भी देश के निवासी जनों के कार्यों के दो प्रकार कहते हैं— एक आने वाले भविष्यत् कालिक तथा अन्य स्थिरसंज्ञक वर्तमान और भूतकालिक। उनमें राजा, दूत, गुप्तचर और अन्य देश से उत्पन्न कार्य; ये सभी स्थिर संज्ञक हैं, तथा उपद्रव और स्वजन अर्थात् बन्धु-बान्धवों इष्ट मित्र आदि का आगमन; ये सभी भविष्यत्कालिक हैं॥२॥

स्थिर, चर आदि के ज्ञानार्थ कथन

उद्बद्धसंग्रहणभोजनचौरवह्नि-
वर्षोत्सवात्मजवधाः कलहो भयं च ।
वर्गः स्थिरोऽयमुदयेन्दुयुते स्थिरर्क्षे
विद्यात् स्थिरं चरगृहे च चरं यदुक्तम् ॥३॥

माया—संलग्न, संग्रहण, भोजन, चोर, अग्नि, वर्ष, उत्सव आत्मज, वध, कलह, भय आदि सभी स्थिर वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। इनके स्थिर स्थान में जायमान और स्थिर स्थान के शकुन से उद्बोधित होने से ये चर संज्ञक कहलाते हैं। अब स्थिर वर्ग के होने के साथ उदयकालिक लग्न और चन्द्र भी स्थिर राशि में स्थित हो, तो उन संलग्नादि कार्य को उसी दिन होना चाहिए अथवा हो चुका है, जानना चाहिए तथा लग्न और चन्द्र दोनों चर राशिगत हों और चर स्थान में शकुन स्थित हो, तो उन संलग्नादि कार्य को आने वाले काल में होगा, कहना चाहिए॥३॥

स्थिर और चर का लक्षण कथन

स्थिरप्रदेशोपलमन्दिरेषु सुरालये भूजलसन्निधौ च।
स्थिराणि कार्याणि चराणि यानि चलप्रदेशादिषु चागमाय ।।४।।

भाषा—निश्चल स्थल, पाषाण, गृह, देवालय, भूमि पर, जल के निकट आदि स्थानों में शकुन के स्थित होने से स्थिर कार्य का तथा शकुन के चर प्रदेश या स्थान में होने से चर कार्य का शुभाशुभ फल होता है।।४।।

अव वृष्टि ज्ञानार्थ कथन

आप्योदयर्क्षक्षणदिग्जलेषु पक्षावसानेषु च ये प्रदीप्ताः।
सर्वेऽपि ते वृष्टिकरा रुवन्तः शान्तोऽपि वृष्टिं कुरुतेऽम्बुचारी ।।५।।

भाषा—जलचर लग्न, जलसंज्ञक नक्षत्र, जलसंज्ञक मुहूर्त्त, पश्चिम दिशा, जलस्थान आदि तथा पक्ष के अवसान काल (पूर्णिमा-अमावास्या) में दीप्त शकुन के स्थित होकर शब्द करने पर सभी वृष्टि कारक ही सिद्ध होते हैं। जलचर जन्तुओं का शान्त शब्द भी वृष्टि करने वाला होता है।।५।।

आग्नेय भय-दोष ज्ञानार्थ कथन

आग्नेयदिग्लग्नमुहूर्त्तदेशेष्वर्कप्रदीप्तोऽग्निभयाय रौति।
विष्ट्यां यमर्क्षोदयकण्टकेषु निष्पत्रवल्लीषु च दोषकृत् स्यात् ।।६।।

भाषा—आग्नेय अर्थात् पूर्व-दक्षिण दिशा, आग्नेय अर्थात् क्रूरसंज्ञक राशि का लग्न, अग्नि संज्ञक मुहूर्त्त, आग्नेय (कृत्तिका) नक्षत्र, आग्नेय देश अर्थात् अग्नि युक्त स्थान आदि स्थानों में सूर्य से प्रदीप्त होकर शकुन के शब्द करने पर अग्निभय कहना चाहिए तथा विष्टि अर्थात् भद्राकरण, शनि की मकर और कुम्भ राशि के लग्नों और कँटीले वृक्ष या पत्र विहीन लता पर सूर्य से प्रदीप्त शकुन के स्थित होने से दोष उत्पन्न होता है।।६।।

कलह-परिज्ञानार्थ कथन

ग्राम्यः प्रदीप्तः स्वरचेष्टिताभ्यामुग्रो रुवन् कण्टकिनि स्थितश्च।
भौमर्क्षलग्ने यदि नैर्ऋर्तीं च स्थितोऽभितश्चेत् कलहाय दृष्टः ।।७।।

भाषा—ग्राम्य शकुन स्वर और चेष्टा से प्रदीप्त होकर उग्र शब्द करता हुआ कँटीले वृक्ष पर बैठा हुआ हो तथा मंगल की मेष और वृश्चिक राशि के लग्न में, नैर्ऋत्य कोण में होकर किसी भी भाग में दीखने पर कलह कराने वाला होता है।।७।।

स्त्री संग्रहण योग परिज्ञानार्थ कथन

लग्नेऽथवेन्दोर्भृगुभांशसंस्थे विदिक्स्थितोऽधोवदनश्च रौति।
दीप्तः स चेत्संग्रहणं करोति योन्या तया या विदिशि प्रदिष्टा ।।८।।

माया—कर्क लग्न में अथवा लग्न में शुक्र की वृष या तुला राशि का नवमांश हो, उसमें विदिशा में स्थित होकर दीप्त शकुन अधोमुख हो कर शब्द करता हो, तो उस दिशा में जिस स्त्री की उत्पत्ति को पूर्व में 'स्त्रीणां विकल्पे बृहती कुमारी' आदि से कहा गया है, वैसी स्त्री के साथ संगम होता है॥८॥

पुरुष का नपुंसक से संगम परिज्ञानार्थ कथन

पुंराशिलग्ने विषमे तिथौ च दिक्स्थ: प्रदीप्त: शकुनो नराख्य: ।
वाच्यं तदा संग्रहणं नराणां मिश्रे भवेत् पण्डकसम्प्रयोग: ॥९॥

माया—जब पुरुष राशि के लग्न में, विषम संख्यक तिथियों में पूर्वादि चार दिशाओं में पुरुष संज्ञक प्रदीप्त शकुन स्थित हो, तो पुरुष का पुरुष के साथ समलैङ्गिक मैथुन होता है, परन्तु मिश्रित स्थित अर्थात् पुरुष संज्ञक लग्न, समतिथि अथवा समलग्न और विषम तिथि और विदिशा अथवा दिशा में पुरुषसंज्ञक प्रदीप्त शकुन स्थित हो, तो ऐसी स्थिति में नपुंसक के साथ समागम सम्भव होता है॥९॥

प्रधान पुरुष का आगमन परिज्ञानार्थ कथन

एवं रवे: क्षेत्रनवांशलग्ने लग्ने स्थिते वा स्वयमेव सूर्ये ।
दीप्तोऽभिधत्ते शकुनो विरौति पुंस: प्रधानस्य हि कारणं तत् ॥१०॥

माया—इस तरह सूर्य की राशि सिंह का लग्न और नवांश भी सिंह राशि का हो, अथवा लग्न में स्वयं सूर्य स्थित हो, ऐसी स्थिति में शकुन के शब्द करने पर प्रधान पुरुष के आगमन होने का कारण उत्पन्न होता है॥१०॥

प्रकारान्तर से कर्म विधान परिज्ञानार्थ कथन

प्रारम्भमाणेषु च सर्वकार्येष्वर्कान्विताद्द्राद्गणयेद्विलग्नम् ।
सम्पद्विपच्चेति यथा क्रमेण सम्पद्विपच्चेति तथैव वाच्या ॥११॥

माया—प्रत्येक कार्य के शुभारम्भ समय में सूर्य स्थित राशि से लग्न राशि पर्यन्त गणना करनी चाहिए। इस प्रकार जिस-किसी राशि में सूर्य अवस्थित हो, उसे सम्पत् उससे दूसरी राशि को विपत् उससे तीसरी राशि सम्पत् , चौथी राशि विपत् , पाँचवीं राशि सम्पत् आदि-आदि क्रम से लग्न पर्यन्त गणना किया जाता है। इस तरह सम्पत् राशि में कार्य की सम्पत्ति तथा विपत् राशि में कार्य की विपत्ति कहनी चाहिए॥११॥

आगत की आकृति परिज्ञानार्थ कथन

काणेनाक्ष्णा दक्षिणेनैति सूर्ये चन्द्रे लग्नाद् द्वादशे चेतरेण ।
लग्नस्थेऽर्के पापदृष्टेऽन्ध एव कुब्ज: स्वर्क्षे श्रोत्रहीनो जडो वा ॥१२॥

क्रूरः षष्ठे क्रूरदृष्टो विलग्नाद् यस्मिन् राशौ तद्गृहाङ्गे व्रणोऽस्य ।
एवं प्रोक्तं यन्मया जन्मकाले चिह्नं रूपं तत्तदस्मिन् विचिन्त्यम् ।।१३।।

माया—जिस समय लग्न से द्वादश स्थानगत सूर्य हो, दायीं आँख से काण; चन्द्र हो, तो वायीं आँख से काण और सूर्य लग्न में होकर पापग्रह मंगल व शनि से देखा जाता हो, तो अन्धा; सूर्य सिंह लग्न में स्थित हो, तो कुबड़ा, बहरा अथवा मूर्ख तथा जिस-किसी लग्न से षष्ठ स्थान में स्थित पापग्रह सूर्य, मंगल व शनि, पापग्रह से ही दृष्ट हो, तो उस राशि कथित अङ्ग अर्थात् कालाङ्गानि वराङ्ग आदि श्लोकोक्त अङ्ग में व्रण और उस व्रण युक्त पुरुष का आगमन कहना चाहिए। ग्रन्थकार का अभिमत है कि जातक ग्रन्थों में मैंने जैसा कहा है, उन विषयों का भी यहाँ सविधि विचार करना चाहिए।।१२-१३।।

वाल पाठकों के हितार्थ बोधियात्रा नामक ग्रन्थ से यवनेश्वरकृत अक्षरकोश का व्याख्यान पूर्व उसमें सर्वप्रथम प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

अतः परं लोकनिरूपितानि द्रव्येषु नानाक्षरसंग्रहाणि ।
इष्टप्रणीतानि विभाजितानि नामानि केन्द्रक्रमशः प्रवक्ष्ये ।।१।।

माया—अतः प्रश्नज्ञान के अनन्तर द्रव्यों (धातु, मूल और जीव) में लोकप्रसिद्ध, अनेक अक्षरों से संगृहीत, इष्ट (नारायण, अर्क, वसिष्ठ, पराशर, मय आदि) से निर्मित, विभागीकृत नामों को केन्द्र के क्रम से कहा जा रहा है।।१।।

अक्षरों और ग्रहों का क्रम ज्ञानार्थ कथन

लग्नाम्बुसंस्थास्तनभः स्थितेषु क्षेत्रेषु ये लग्नगता गृहांशाः ।
तेभ्योऽक्षराण्यात्मगृहाश्रयाणि विन्द्याद् ग्रहाणां स्वगणक्रमेण ।।२।।

माया—लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावों के रूप लग्न में जिस राशि का नवमांश हो, उन पर से स्व-स्व राशि के आश्रित अक्षरों और ग्रहों के अपने गण के क्रम से इन अक्षरों को समझना चाहिये।।२।।

ग्रहों का वर्ग कथन

कवर्गपूर्वान् कुजशुक्रचान्द्रिजीवार्कजानां प्रवदन्ति वर्गान् ।
यकारपूर्वाः शशिनो निरुक्ता वर्णास्त्वकारप्रभवा रवेः स्युः ।।३।।

माया—क ख ग घ ङ अर्थात् कवर्ग मंगल के, च छ ज झ ञ अर्थात् चवर्ग शुक्र के, ट ठ ड ढ ण अर्थात् टवर्ग बुध के, त थ द ध न अर्थात् तवर्ग बृहस्पति के, प फ ब भ म अर्थात् पवर्ग शनि के, य र ल व श ष स ह अर्थात् यवर्ग चन्द्र के और अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः अर्थात् अवर्ग सूर्य के वर्ग हैं।।३।।

राशि और द्रेष्काण के अनुसार नामाक्षर संख्या कथन

द्रेष्काणवृद्ध्या प्रवदन्ति नाम त्रिपञ्चसप्ताक्षरमोजराशौ।
युग्मे तु विन्द्याद् द्विचतुष्कषट्कं नामाक्षराणि ग्रहदृष्टिवृद्ध्या ॥४॥

माया—द्रेष्काण की वृद्धि से नाम कहते हैं। जैसेकि विषम राशि के प्रथम द्रेष्काण में तीन अक्षरों का, द्वितीय द्रेष्काण में पाँच अक्षरों का और तृतीय द्रेष्काण में सात अक्षरों का नाम समझना चाहिये। एवं सम राशि के प्रथम द्रेष्काण में दो अक्षरों का, द्वितीय द्रेष्काण में चार अक्षरों का और तृतीय द्रेष्काण में छः अक्षरों का नाम समझना चाहिये। ग्रहदृष्टि की वृद्धि से नामाक्षर होते हैं। यहाँ पर दो प्रकार से नामाक्षर लाते हैं—प्रथम स्थितिवश और द्वितीय दृष्टिवश। उस समय दृष्टिवश नामाक्षर लाने में दृष्टिबल के ज्ञान को महत्त्व देना चाहिये॥४॥

नवमांश के अनुसार नामाक्षरसंख्या कथन

वर्गोत्तमे द्व्यक्षरकं चरांशे स्थिरर्क्षभागे चतुरक्षरं तत्।
ओजेषु चैभ्यो विषमाक्षराणि स्युर्द्विस्वभावेषु तु राशिवच्च ॥५॥

माया—चर राशि में पहला नवमांश, स्थिर राशि में पाँचवाँ नवमांश और द्विस्वभाव राशि में नौवाँ नवमांश की वर्गोत्तम संज्ञा होती है। यदि सम राशियों में चर राशि का वर्गोत्तम नवमांश हो, तो दो अक्षरों का, स्थिर राशि का वर्गोत्तम नवमांश हो तो चार अक्षरों का तथा विषम राशियों में चर राशि का वर्गोत्तम नवमांश हो तो तीन अक्षरों का और स्थिर राशि का वर्गोत्तम नवमांश हो तो पाँच अक्षरों का नाम होता है एवं द्विस्वभाव राशियों में राशि के समान नामाक्षरों की भी संख्या होती है। जैसेकि द्विस्वभाव राशियों में विषम राशि (मिथुन या धनु) वर्गोत्तम नवमांश हो तो तीन या सात अक्षरों का तथा सम राशि (कन्या अथवा मीन) का नवमांश हो तो चार अथवा छः अक्षरों का नाम होता है॥५॥

इस प्रसङ्ग में विशेषार्थ कथन

द्विमूर्तिसंज्ञे तु वदेद् द्विनाम सौम्येक्षिते द्विप्रकृतौ च राशौ।
यावान् गणः स्वोदयगोऽशकानां तावान् ग्रहः संग्रहकेऽक्षराणाम् ॥६॥

माया—द्विस्वभाव राशि अथवा सौम्य (बुध) से दृष्ट द्विस्वभाव राशि में दो नाम तथा लग्नराशि में जितने नवमांशों की संख्या व्यतीत हो गई हो, उतनी नामाक्षरों की संख्या जाननी चाहिये॥६॥

भट्टोत्पलविवृत्तिः– अत्रैव विशेषमाह—

द्विमूर्तिसंज्ञे द्विस्वभावे राशौ द्विनाम वदेद् ब्रूयात्। द्वे नामनी यस्य। तथा द्विप्रकृतौ द्विस्वभावराशौ सौम्येक्षिते बुधसन्दृष्टे, चशब्दाद् द्विनाम वदेत्। यत्परिमाणस्य यावान्

अंशकानां नवभागानां गणः समूहः स्वोदयगः प्रश्नसमयेऽतिक्रान्तस्तावानेव गणः समूहोऽक्षराणां वर्णानां संग्रहके नाम्नि भवति।।६।।

संयुक्ताक्षर परिज्ञानार्थ कथन

संयोगमादौ बहुलेषु विन्द्यात् कूटेषु संयोगपरं वदन्ति।
स्वोच्चांशके द्विष्कृतमृक्षयोगाद् गुर्वक्षरं तद्भवनांशके स्यात् ।।७।।

भाषा—बहुल (विषम राशियों) में नाम के आदि का संयुक्ताक्षर पहचानना चाहिये। जैसेकि श्रीधर, क्षीर, स्मर आदि। कूट (सम) राशियों में नाम के अन्त में संयुक्ताक्षर कहते हैं। जैसेकि पद्म, धर्म, वत्स आदि। अपने उच्चांश में राशि के योग से एक अक्षर दो बार आता है। जैसेकि विषम राशि में अपना उच्चांश हो तो प्रथम आदि विषम अक्षर दो बार आता है। जैसेकि दरद, दामोदर आदि। यदि सम राशि में अपना उच्चांश हो तो द्वितीय आदि समस्थानस्थ अक्षर दो बार आता है; जैसेकि देवदत्त, धराधर आदि। लग्नस्थित नवमांश राशि में गुरु अक्षर होता है, तो ऐसे में लग्नस्थित नवमांश विषम राशि में हो तो नाम का विषम स्थानस्थ अक्षर संयुक्त होता है; जैसेकि कपित्थ, अश्वत्थ आदि और सम राशि में हो तो सम स्थानस्थ अक्षर संयुक्त होता है, जैसेकि घग्घ, शुद्ध, शुद्धोदन आदि।।७।।

इस प्रसङ्ग में विशेषार्थ कथन

मात्रादियुक् स्याद् ग्रहयुक्त्रिकोणे द्रेष्काणपर्यायवदक्षरेषु।
नभोबलेषूर्ध्वमधोऽम्बुजेषु ज्ञेयो विसर्गोऽस्तबलान्वितेषु ।।८।।

भाषा—लग्न से पञ्चम या नवम स्थान सूर्यादि ग्रहों से युत हो तो नाम के आदि का अक्षर मात्रा युक्त होता है तथा द्रेष्काण के पर्याय तुल्य अक्षर मात्रा से युक्त होता है। जैसेकि शिव आदि। सम राशि का द्रेष्काण हो तो सम अक्षर मात्रा युक्त होता है। जैसेकि ईश्वर आदि। विषम राशि का द्रेष्काण हो तो विषम अक्षर मात्रा युक्त होता है, जैसेकि श्रीधर आदि।

यदि लग्न से दशम स्थान बलवान् हो तो ऊर्ध्व मात्रा से युक्त नाम का आदि का अक्षर होने पर श्रीधर, वासुदेव, वैश्रवण, शौण्ड आदि तथा चतुर्थ स्थान बलवान् हो तो अधो मात्रा युत नाम का आदि का अक्षर (सुहिरण्य, शूरवर्मा आदि) और सप्तम स्थान बलवान् हो तो विसर्गयुत नाम का आदि का अक्षर होता है।।८।।

शीर्षोदयेषूर्ध्वमुशन्ति मात्रामधश्च पृष्ठोदयशब्दितेषु।
तीर्यक्च विन्द्यादुभयोदये तां दीर्घेषु दीर्घामितरेषु चान्याम् ।।९।।

भाषा—शीर्षोदय राशि लग्न में हो तो ऊर्ध्व मात्रा (ओ, औ), पृष्ठोदय राशि लग्न में हो तो अधो मात्रा (उ, ऊ), उभयोदय राशि लग्न में हो तो तिर्यक् मात्रा

(ए, ऐ) और दीर्घ राशि (सिंह, कन्या, तुला और वृश्चिक) लग्न में हो तो दीर्घ मात्रा (आ, ई, ऊ, ऐ, ओ, औ) होती हैं। अन्य राशि (मध्य = मिथुन, कर्क, धनु और मकर, ह्रस्व = मेष, वृष, कुम्भ और मीन) राशि लग्न में हो तो अन्य मात्रा (अ, इ और उ) होती हैं॥९॥

नामाक्षर संग्रह और उसकी हानि कथन

प्राग्लग्नतोयास्तनभःस्थितेषु भेष्वंशकेभ्योऽक्षरसंग्रहः स्यात्।
क्रूरोऽक्षरं हन्ति चतुष्टयस्थो दृष्ट्यापि मात्राञ्च त्रिकोणगो वा ॥१०॥

माया—लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थानस्थ नवमांशों से नामाक्षरों का संग्रह होता है तथा पाप ग्रह केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो तो अथवा पाप ग्रह की दृष्टि से भी अक्षर का नाश होता है॥१०॥

अक्षर संख्या ज्ञानार्थ कथन

माया—अत्यन्त वीर्यशाली या बलवान् शुभ ग्रह जिस राशि के जितने संख्यक नवमांश पर स्थित हो, तो उसके समान अक्षरों को देता है। वही अत्यन्त बलशाली शुभ ग्रह केन्द्र, त्रिकोण, अपने उच्च या अपने नवमांश में स्थित होकर देखा जाता हो तो दो अक्षर देता है॥११॥

अक्षर और मात्रा संयोग कथन

क्षेत्रेश्वरे क्षीणबलेंऽशके च मात्राक्षरं नाशमुपैति तज्जम्।
असम्भवेऽप्युद्भवमेति तस्मिन् वर्गाद्यमुच्चांशयुजीशदृष्टे ॥१२॥

माया—लग्न का स्वामी और नवमांश बलहीन हो तो उस उत्पन्न मात्राक्षर का नाश होता है। यदि वही लग्नस्वामी और नवमांश असम्भव (बलहीन का असम्भव अर्थात् बलवान्) हो और उच्चस्थित नवमांशस्वामी से देखा जाता हो तो मात्राक्षर की उत्पत्ति होती है॥१२॥

अक्षरों का क्रम ज्ञानार्थ कथन

केन्द्रे यथास्थानबलप्रकर्षं क्षेत्रस्य तत्क्षेत्रपतेश्च बुद्ध्वा।
कार्योऽक्षराणामनुपूर्वयोगो मात्रादिसंयोगविकल्पना च ॥१३॥

माया—केन्द्र स्थान तथा राशि और राशिपति का स्थान और बल की उत्कृष्टता को जान कर अक्षरों का आनुपूर्विक संयोग करना चाहिये एवं मात्रा आदि के संयोग की भी कल्पना करनी चाहिये॥१३॥

नवमांश क्रमवश राशिगत अक्षर कथन

तत्रादिराश्यादिचतुर्विलग्नमाद्यंशकादिक्रमपर्ययेण ।
ग्रहांशकेभ्यः स्वगणाक्षराणामन्वर्थने प्राप्तिरियं विधार्या ॥१४॥

माया—अत: प्रथम लग्नराशि तथा उससे चौथी राशि आदि के पहला नवमांश आदि क्रम से नवमांश स्वामी ग्रहों के अपने-अपने वर्गाक्षरों के संयोजन में इस प्रकार निष्पत्ति करनी चाहिये। अग्रिमोक्ति पद्य से इसका अर्थ स्पष्ट होता है॥१४॥

उदाहरण द्वारा राश्यादि क्रम से अक्षर ज्ञानार्थ कथन

मेषे ककारो हिबुके यकारस्तुले चकारो मकरे पकारः ।
मेषे छकारो हिबुकेऽप्यकारस्तुले खकारो मकरे फकारः ॥१५॥

माया—यथा—लग्न भावस्थ मेष राशि और पहला नवमांश हो तो उससे चतुर्थ-चौथी राशि के क्रम से मेष, कर्क, तुला और मकर राशियाँ हुईं। मेषस्थ पहला नवमांश का स्वामी मंगल होता है और उसके वर्ग का प्रथम अक्षर ककार आता है। चौथी राशि (कर्क) का पहला नवमांश स्वामी चन्द्र है और उसके वर्ग का प्रथम अक्षर यकार आता है। सातवीं राशि (तुला) का स्वामी शुक्र है और उसके वर्ग का प्रथम अक्षर चकार आता है तथा दशवीं राशि (मकर) का स्वामी शनि है और उसके वर्ग का प्रथम अक्षर पकार आता है। यदि मेष राशि के लग्न में दूसरा नवमांश स्थित हो, तो मेष राशिस्थ दूसरा नवमांश स्वामी शुक्र वर्ग का दूसरा अक्षर छकार, चौथी राशि (कर्क) गत दूसरा नवमांश स्वामी सूर्य वर्ग का प्रथम अक्षर अकार, सातवीं राशि तुला में स्थित दूसरा नवमांश स्वामी मंगल वर्ग का दूसरा अक्षर खकार और दशवीं राशि (मकर) में दूसरा नवमांश स्वामी शनि वर्ग का दूसरा अक्षर फकार आता है॥१५॥

मेष लग्न से तीसरे और चौथे नवमांश में वर्ण-विन्यास क्रम कथन

मेषे टकारो हिबुके ठकारस्तुले तकारो मकरे थकारः ।
मेषे तु रेफो हिबुके जकारस्तुले बकारो मकरे गकारः ॥१६॥

माया—यदि मेष लग्न में तीसरा नवमांश हो तो मेष राशि में तीसरे नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का प्रथम अक्षर टकार, चौथी राशि (कर्क) में तीसरे नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का दूसरा अक्षर ठकार, सातवीं राशि (तुला) में तीसरे नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का प्रथम अक्षर तकार और दशवीं राशि (मकर) में तीसरे नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का दूसरा अक्षर थकार आता है।

मेष राशि के लग्न में चतुर्थ नवमांश हो तो मेष राशि में चौथा नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का दूसरा अक्षर रकार, चौथी राशि (कर्क) में चौथा नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का तीसरा अक्षर जकार, सातवीं राशि (तुला) में चौथा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का तीसरा अक्षर वकार, दशवीं राशि (मकर) में चौथा नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का तीसरा अक्षर गकार आता है॥१६॥

मेष लग्न से पञ्चम और षष्ठ नवमांश वर्ण विन्यास क्रम कथन

आकारमाद्येऽम्बुगते घकारमस्ते भकारं मकरे झकारम्।
लग्ने डकारं हिबुके दकारमस्ते धकारं मकरे ढकारम्॥१७॥

माया—मेष लग्न में पाँचवाँ नवमांश हो तो मेष में पाँचवा नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का दूसरा अक्षर आकार, चौथी राशि (कर्क) में पाँचवा नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का चौथा अक्षर घकार, सातवीं राशि (तुला) में पाँचवा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का चौथा अक्षर मकार और दशवीं राशि (मकर) में पाँचवा नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का चौथा अक्षर झकार आता है। मेष लग्न में छठा नवमांश हो तो मेष में छठा नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का तीसरा अक्षर डकार, चौथी राशि (कर्क) में छठा नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का तीसरा अक्षर दकार, सातवीं राशि (तुला) में छठा नवमांश स्वामी के वर्ग का चौथा अक्षर धकार और दशवीं राशि (मकर) में छठा नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का चौथा अक्षर ढकार आता है॥१७॥

मेष लग्न से सातवाँ और आठवाँ नवमांश वर्ण विन्यास क्रम कथन

लग्ने ञकारो हिबुको मकारस्तुले ङकारो मकरे लकार:।
लग्ने ककारो हिबुके पकारस्तुले चकारो मकरे इकार:॥१८॥

माया—मेष लग्न में सातवाँ नवमांश हो तो मेष में सातवाँ नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का पाँचवा अक्षर ञकार, चौथी राशि (कर्क) में सातवाँ नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का पाँचवा अक्षर मकार, सातवीं राशि (तुला) में सातवाँ नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का पाँचवा अक्षर ङकार और दशवीं राशि (मकार) में सातवाँ नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का तीसरा अक्षर लकार आता है। मेष लग्न में आठवाँ नवमांश हो तो मेष में आठवाँ नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का प्रथम अक्षर ककार, चौथी राशि (कर्क) में आठवाँ नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का प्रथम अक्षर पकार, सातवीं राशि (तुला) में आठवाँ नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का प्रथम अक्षर चकार और दशवीं राशि (मकर) में आठवाँ नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का तीसरा अक्षर इकार आता है॥१८॥

मेष लग्न से नौवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

लग्ने नकारो हिबुके तकारस्तुले णकारो मकरे टकार:।
इत्येतदुक्तं चरसंज्ञकस्य वक्ष्ये स्थिराख्यस्य चतुष्टयस्य॥१९॥

माया—मेष लग्न में नौवाँ नवमांश हो तो मेष में नौवाँ नवमांश स्वामी गुरु के वर्ग का पाँचवा अक्षर नकार, चौथी राशि (कर्क) में नौवाँ नवमांश स्वामी गुरु के वर्ग का प्रथम अक्षर तकार, सातवीं राशि (तुला) में नौवाँ नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का पाँचवा अक्षर णकार और दशवीं राशि (मकर) में नौवाँ नवमांश स्वामी बुध

के वर्ग का प्रथम अक्षर टकार आता है। इस प्रकार चरसंज्ञक चार राशियों के लिये कहा गया है। आगे के पद्यों में स्थिर संज्ञक चार राशि सम्बन्धी विषयों को कहता हूँ॥१९॥

वृष लग्नस्थ पहला नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

वृषे फकारो हिबुके खकार: कीटे वकारो नृघटे छकार: ।
आद्यांशकेभ्यो मतिमान् विदध्यादनुक्रमेण स्थिरसंज्ञकेषु ॥२०॥

माया—वृष लग्न में पहला नवमांश हो तो वृष में पहला नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का दूसरा अक्षर फकार, चौथी राशि (सिंह) में पहला नवमांश स्वामी मङ्गल के वर्ग का दूसरा अक्षर खकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में पहला नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का चौथा अक्षर वकार, दशवीं राशि (कुम्भ) में पहला नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का दूसरा अक्षर छकार आता है। इस तरह स्थिरसंज्ञक राशियों के पहला नवमांश में वर्णों का विन्यास करना चाहिये॥२०॥

वृष लग्न के दूसरा और तीसरा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

लग्ने बकारो हिबुके जकार ईकारमस्तेऽम्बरगे गकार: ।
वृषे थकारो हिबुके टकार: कीटे डकारो नृघटे दकार: ॥२१॥

माया—वृष लग्न में दूसरा नवमांश हो तो वृष में दूसरा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का तीसरा अक्षर वकार, चौथी राशि (सिंह) में दूसरे नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का तीसरा अक्षर जकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में दूसरे नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का चौथा अक्षर ईकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में दूसरे नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का तीसरा अक्षर गकार आता है। वृष लग्न में तीसरा नवमांश हो तो वृष में तृतीय नवमांशा-धिपति गुरु के वर्ग का दूसरा अक्षर थकार, चौथी राशि (सिंह) में तीसरे नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का प्रथम अक्षर टकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में तीसरे नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का प्रथम अक्षर डकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में तीसरे नवमांश स्वामी गुरु के वर्ग का तीसरा अक्षर दकार आता है॥२१॥

वृष लग्न के चौथा और पाँचवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

वृषे घकारो हिबुके शकार: कीटे झकारो नृघटे भकार: ।
लग्ने जकारो हिबुके उकार: कीटे ङकारो नृघटे मकार: ॥२२॥

माया—वृष लग्न में चतुर्थ नवमांश हो तो वृष में चौथा नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का चौथा अक्षर घकार, चौथी राशि (सिंह) में चौथा नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का पाँचवा अक्षर शकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में चौथा नवमांश स्वामी

शुक्र के वर्ग का चौथा अक्षर झकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में पाँचवा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का चौथा अक्षर भकार आता है। वृष लग्न में पाँचवाँ नवमांश हो तो वृष में पाँचवा नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का पाँचवा अक्षर जकार, चौथी राशि (सिंह) में पाँचवा नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का पाँचवा अक्षर उकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में पाँचवा नवमांश स्वामी मङ्गल के वर्ग का पाँचवा अक्षर ङकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में पाँचवा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का पाँचवा अक्षर मकार आता है॥२२॥

वृष लग्न के छठा और सातवाँ नवमांश वर्ण विन्यास क्रम कथन

लग्ने ढकारोऽथ जले णकारश्चास्ते धकारोऽम्बरगे नकारः।
वृषे षकारो हिबुके चकारः कीटे पकारो नृघटे ककारः॥२३॥

माया—वृष लग्न में छठा नवमांश हो तो वृष में छठा नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का चौथा अक्षर ढकार, चौथी राशि (सिंह) में छठा नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का पाँचवा अक्षर णकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में छठा नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का चौथा अक्षर धकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में छठा नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का पाँचवा अक्षर नकार आता है। वृष लग्न में सातवाँ नवमांश हो तो वृष में सातवाँ नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का षष्ठ अक्षर षकार, चौथी राशि (सिंह) में सातवाँ नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का प्रथम अक्षर चकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में सातवाँ नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का प्रथम अक्षर पकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में सातवाँ नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का प्रथम अक्षर ककार आता है॥२३॥

वृष लग्न के आठवाँ और नौवा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

ऊकारमाहुर्वृषभे जले खमस्ते फकारो नृघटे छकारः।
अन्त्ये वृषे टं तमुशन्ति सिंहे थं सप्तगे ठं प्रवदन्ति कुम्भे॥२४॥

माया—स्थिर राशि वृष लग्न में आठवाँ नवमांश हो तो वृष में आठवाँ नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का छठा अक्षर ऊकार, चौथी राशि (सिंह) में आठवाँ नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का दूसरा अक्षर खकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में आठवाँ नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का दूसरा अक्षर फकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में आठवाँ नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का दूसरा अक्षर छकार आता है। वृष लग्न में नौवाँ नवमांश हो तो वृष में नौवाँ नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का प्रथम अक्षर टकार, सातवीं राशि (वृश्चिक) में नौवाँ नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का दूसरा अक्षर थकार और दशवीं राशि (कुम्भ) में नौवाँ नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का दूसरा अक्षर ठकार आता है॥२४॥

मिथुन लग्न के पहिला नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

द्विमूर्तिसंज्ञे मिथुने जकारः षष्ठे बकारः प्रथमांशके स्यात् ।
धनुर्धरेऽस्तोपगते गकारो मीनद्वये चाम्बरगे सकारः ॥२५॥

माया—द्विस्वभाव राशि मिथुन लग्न में पहला नवमांश हो तो मिथुन में पहला नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का तीसरा अक्षर जकार, चौथी राशि (कन्या) में पहला नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का तीसरा अक्षर बकार, सातवीं राशि (धनु) में पहला नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का तीसरा अक्षर गकार और दशवीं राशि (मीन) में पहला नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का सप्तम अक्षर सकार आता है॥२५॥

मिथुन लग्नस्थ दूसरा और तीसरा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

लग्ने घकारो हिबुके भकारश्चास्ते झकारोऽम्बरमध्यगे ई ।
लग्ने दकारो हिबुके धकारमस्ते डकारं विदुरम्बरे ढम् ॥२६॥

माया—मिथुन लग्न में दूसरा नवमांश हो तो मिथुन में दूसरे नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का चौथा अक्षर घकार, चौथी राशि (कन्या) में दूसरे नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का चौथा अक्षर भकार, सातवीं राशि (धनु) में दूसरे नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का चौथा अक्षर झकार और दशवीं राशि (मीन) में दूसरे नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का चौथा अक्षर ईकार आता है। मिथुन लग्न में तीसरा नवमांश हो तो मिथुन में तीसरे नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का तीसरा अक्षर दकार, चौथी राशि (कन्या) में तीसरे नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का चौथा अक्षर धकार, सातवीं राशि (धनु) में तीसरे नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का तीसरा अक्षर डकार और दशवीं राशि (मीन) में तीसरे नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का चौथा अक्षर ढकार आता है॥२६॥

मिथुन लग्नस्थ चौथा और पाँचवा नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

लग्ने मकारो हिबुके ङकारश्चास्ते हकारोऽम्बरगे ञकारः ।
लग्ने पकारो जलगे चकार ऐकारमस्तेऽम्बरगे ककारः ॥२७॥

माया—मिथुन लग्न में चतुर्थ नवमांश हो तो मिथुन में चौथा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का पाँचवा अक्षर मकार, चौथी राशि (कन्या) में चौथा नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का पाँचवा अक्षर ङकार, सातवीं राशि (धनु) में चौथा नवमांश स्वामी चन्द्र के वर्ग का अष्टम अक्षर हकार और दशवीं राशि (मीन) में चौथा नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का पाँचवा अक्षर ञकार आता है। मिथुन लग्न में पाँचवाँ नवमांश हो तो मिथुन में पाँचवा नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का प्रथम अक्षर पकार, चौथी राशि (कन्या) में पाँचवा नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का प्रथम अक्षर चकार, सातवीं राशि (धनु) में पाँचवा नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का अष्टम अक्षर ऐकार और दशवीं

राशि (मीन) में पाँचवा नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का प्रथम अक्षर ककार आता है॥२७॥

मिथुन लग्न के छठा और सातवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

प्राग्लग्नगे नं जलगे णमाहुरस्तं गते टं नभसि स्थिते तम्।
प्राग्लग्नगे खं जलगे यमाहुरस्तं गते छं नभसि स्थिते फम् ॥२८॥

माया—मिथुन लग्न में छठा नवमांश हो तो मिथुन में छठा नवमांश स्वामी बृहस्पति के वर्ग का पाँचवा अक्षर नकार, चौथी राशि (कन्या) में छठा नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का पाँचवा अक्षर णकार, सातवीं राशि (धनु) में छठा नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का प्रथम अक्षर टकार और दमश राशि (मीन) में छठा नवमांश स्वामी के वर्ग का प्रथम अक्षर तकार आता है। मिथुन लग्न में सातवाँ नवमांश हो तो मिथुन में सातवाँ नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का दूसरा अक्षर खकार, चौथी राशि (कन्या) में सातवाँ नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का दूसरा अक्षर छकार और दशवीं राशि (मीन) में सातवाँ नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का दूसरा अक्षर फकार आता है॥२८॥

मिथुन लग्न के आठवाँ और नौवाँ नवमांश वर्णविन्यास क्रम कथन

लग्ने जमोकारमथाम्बुसंस्थे गमस्तसंस्थे विदुरम्बरे बम्।
ठं लग्नगेऽन्त्ये हिबुकाश्रिते डं थमस्तगे दं नभसि स्थिते वै ॥२९॥

माया—मिथुन लग्न में आठवाँ नवमांश हो तो मिथुन में आठवाँ नवमांश स्वामी शुक्र के वर्ग का तीसरा अक्षर जकार, चौथी राशि (कन्या) में आठवाँ नवमांश स्वामी सूर्य के वर्ग का नवम अक्षर ओकार, सातवीं राशि (धनु) में आठवाँ नवमांश स्वामी मंगल के वर्ग का तीसरा अक्षर गकार और दशवीं राशि (मीन) में आठवाँ नवमांश स्वामी शनि के वर्ग का तीसरा अक्षर बकार आता है। मिथुन लग्न में नौवाँ नवमांश हो तो मिथुन में नौवाँ नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का दूसरा अक्षर ठकार, चौथी राशि (कन्या) में नौवाँ नवमांश स्वामी बुध के वर्ग का तीसरा अक्षर डकार, सातवीं राशि (धनु) में नौवाँ नवमांश स्वामी गुरु के वर्ग का दूसरा अक्षर थकार और दशवीं राशि (मीन) में नौवाँ नवमांश स्वामी गुरु के वर्ग का तीसरा अक्षर दकार आता है॥२९॥

तदनन्तर विभाग प्रदर्शनार्थ कथन

एवं विकल्पोऽक्षरसंग्रहोऽयं नाम्नां निरुद्दिष्टविधान उक्तः।
सर्वेषु लग्नेषु च केचिदेवमिच्छन्ति पूर्वोक्तविधानवत्तु ॥३०॥

भाषा—इस प्रकार यह नामाक्षरों के संग्रहण की निर्विशेष विधि कही गई है। कोई-कोई आचार्य मेष आदि सभी लग्नों में पूर्वोक्त विधि को करने के लिये कहते हैं।।३०।।

नाम आनयन करने हेतु अन्य प्रकार कथन

केन्द्राणि वा केन्द्रगतांशकैः स्वैः
पृथक्पृथक् सङ्गुणितानि कृत्वा ।
त्रिकृद्विभक्तं विदुरक्षरं तत्
क्षेत्रेश्वरस्यांशपरिक्रमस्वम् ।।३१।।

भाषा—केन्द्रगत मेषादि राशि के नवमांशसंख्या से केन्द्रगत राशि के अक्षरों को गुणा करके नौ का भाग देने से जो शेष बचे तत्तुल्य नवमांश स्वामी क्रम से अक्षर समझना चाहिये। यहाँ पर आचार्य का अभिप्राय यह है कि चर आदि तीनों केन्द्रों में मंगल आदि पाँच ग्रहों के छः-छः नवमांश होते हैं तथा नौ नवमांश में नौ अक्षर होते हैं; अतः यहाँ पर 'नौ नवमांश में नौ अक्षर तो छः नवमांश में क्या' इस त्रैराशिक से छः अक्षर आते हैं। अतः चर राशि के पहला नवमांश में अपने वर्ग का पहला अक्षर, दूसरा में दूसरा, तीसरा में तीसरा, चौथा में चौथा, पाँचवाँ में पाँचवाँ, छठा में पहला; फिर स्थिर राशि के पहला नवमांश में अपने वर्ग का दूसरा अक्षर, दूसरा में तीसरा, तीसरा में चौथा, चौथा में पाँचवाँ, पाँचवाँ में पहला, छठा में दूसरा; फिर द्विस्वभाव राशि के पहला नवमांश में अपने वर्ग का तीसरा, दूसरा में चौथा, तीसरा में पाँचवाँ, चौथा में पहला, पाँचवाँ में दूसरा और छठा नवमांश में अपने वर्ग का तीसरा अक्षर जानना चाहिये। सूर्य और चन्द्र के चर आदि तीनों केन्द्रों में तीन-तीन नवमांश होते हैं, अतः चर राशि के पहला नवमांश में अपने वर्ग का पहला अक्षर, दूसरा में दूसरा, तीसरा में तीसरा; फिर स्थिर राशि के पहला नवमांश में अपने वर्ग का चौथा अक्षर इत्यादि क्रम से जानना चाहिये।।३१।।

अब विषय व्याप्ति प्रदर्शनार्थ कथन

सञ्चिन्तितप्रार्थितनिर्गतेषु नष्टक्षतस्त्रीरतिभोजनेषु ।
स्वप्नर्क्षचिन्तापुरुषादिवर्गेष्वेतेषु नामान्युपलक्षयेत ।।३२।।

भाषा—सुचिन्तित (मन से चिन्तित) कार्यों की परिकल्पना, प्रार्थित (वाणी से युक्त), निर्गत (निर्गमन), नष्ट वस्तु, क्षत, स्त्री, रति (स्त्री के साथ रमण), भोजन (आहारविशेष मांस आदि), स्वप्न, नक्षत्र, चिन्ता और पुरुष आदियों के नामों को समझना चाहिये। यहाँ पर चारो केन्द्रों के प्रस्तुत रहने के कारण लग्न आदि के क्रम से सञ्चिन्तित आदि के नामों को समझना चाहिये। जैसेकि लग्न से सञ्चिन्तित, चौथा

से प्रार्थित, सातवाँ से निर्गत, दशम से नष्ट वस्तु; फिर लग्न से क्षत, चौथा से स्त्री, सातवाँ से रति, दशम से भोजन; फिर लग्न से स्वप्न, चौथा से नक्षत्र, सातवाँ से चिन्ता और दशम से पुरुषादि के नामों को समझना चाहिये। इस प्रकार से यवनेश्वरकृत अक्षरकोश को कहा गया है।।३२।।

गत अक्षर कोश में आये हुए नाम का साधनार्थ कथन

द्व्यक्षरं चरगृहांशकोदये नाम चास्य चतुरक्षरं स्थिरे।
नामयुग्ममपि च द्विमूर्तिषु त्र्यक्षरं भवति चास्य पञ्चभिः ।।१४।।

माया—चरलग्न और चर नवांश होने पर आगन्तुक अथवा पृच्छक के दो अक्षर का तथा स्थिर लग्न और स्थिर नवांश होने पर चार अक्षर का नाम कहना चाहिए। इसी तरह द्विस्वभाव राशि के लग्न और नवांश होने पर आगन्तुक या पृच्छक के दो नाम होते हैं। उन दोनों नामों में एक नाम तीन अक्षर वाला और दूसरा पाँच अक्षर वाला जानना चाहिए।।१४।।

नामवर्ण आनयन परिज्ञानार्थ कथन

काद्यास्तु वर्गाः कुजशुक्रसौम्यजीवार्कजानां क्रमशः प्रदिष्टाः।
वर्णाष्टकं यादि च शीतरश्मेरवेरकारात् क्रमशः स्वराः स्युः ।।१५।।
नामानि चाग्न्यम्बुकुमारविष्णुशक्रेन्द्रपत्नीचतुराननानाम्।
तुल्यानि सूर्यात् क्रमशो विचिन्त्य द्वित्र्यादिवर्णैर्घटयेत् स्वबुद्ध्या ।।१६।।

माया—कवर्ग आदि पाँच वर्गों को क्रम से मंगल, शुक्र, बुध, गुरु और शनि का कहा गया है अर्थात् कवर्ग मङ्गल का च वर्ग शुक्र का, ट वर्ग बुध का, तवर्ग गुरु का और पवर्ग शनि का होता है। फिर चन्द्र का यकारादि आठ अर्थात् य, र, ल, व श, ष, स, ह वर्ण और सूर्य के अकारादि बारह स्वर वर्ण होते हैं। इसे कहने का प्रयोजन यह है कि—चारों केन्द्र प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम स्थानों में जिस नवांशाधिपतियों के अक्षर विद्यमान हो, उन सबों को क्रम से स्थापित कर नाम की रचना करनी चाहिए। यहाँ पर जो ग्रह वर्गोत्तम, स्वक्षेत्री, अपनी द्रेष्काण राशि या अपनी नवांश राशि या अपनी उच्च राशि में होकर बलवान् हो, तो वह अपने वर्ण को दोगुना और तिगुना करता है। इन वर्गोत्तम आदि से वञ्चित रहने पर वह अपने वर्ण की हानि भी करता है। जब लग्न या नवांश स्वामी सूर्य हो, तो अग्नि पर्याय, चन्द्र होने से अम्बु पर्याय, बुध से विष्णु पर्याय, बृहस्पति से इन्द्रपर्याय, शुक्र से इन्द्रणी पर्याय, शनि से ब्रह्म पर्याय आदि के नाम को कहा गया है। सूर्य आदि ग्रहों के ही क्रम से दो, तीन आदि वर्णों के नामों की अपनी बुद्धि अनुसार विचार कर कल्पना करनी चाहिए।।१५-१६।।

उपरोक्त नाम के व्यक्ति का अवस्था परिज्ञानार्थ कथन

वयांसि तेषां स्तनपानबाल्यव्रतस्थिता यौवनमध्यवृद्धाः ।
अतीववृद्धा इति चन्द्रभौमज्ञशुक्रजीवार्कशनैश्चराणाम् ॥१७॥

माया—उपरोक्त नाम के वर्णों से सम्बन्धित ग्रहों में चन्द्र बलवान् होने से दूध पीता शिशु, मंगल के होने से बालक, बुध से ब्रह्मचारी, शुक्र से युवा, गुरु से मध्यवयस्क, सूर्य से वृद्ध और शनि से अत्यन्त वृद्ध का ग्रहण किया जाता है॥१७॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शाकुनोत्तरविचारो नाम षण्णवतितमोऽध्यायः ॥९६॥

□□□

अथ सप्तनवतितमोऽध्यायः-९७

पाकविचारः

सर्वप्रथम ग्रहो के चार सम्बन्धी फलों का पाक काल ज्ञानार्थ कथन

पक्षाद्भानोः सोमस्य मासिकोऽङ्गारकस्य वक्त्रोक्तः।
आदर्शनाच्च पाको बुधस्य जीवस्य वर्षेण ॥१॥
षड्भिः सितस्य मासैरब्देन शनेः सुरद्विषोऽब्दार्घात्।
वर्षात् सूर्यग्रहणे सद्यः स्यात् त्वाष्ट्रकीलकयोः ॥२॥
त्रिभिरेव धूमकेतोर्मासैः श्वेतस्य सप्तरात्रान्ते।
सप्ताहात् परिवेषेन्द्रचापसन्ध्याभ्रसूचीनाम् ॥३॥

माया—सूर्य का फल एक पक्ष में, चन्द्रमा का एक मास में, मंगल का फल उसके व वक्रता के समान काल में अर्थात् भौमचाराध्यायोक्तानुसार, बुध का उसके उदित रहने के समय तक, बृहस्पति का फल एक वर्ष में, शुक्र का छः मास में, शनि का फल एक वर्ष में, चन्द्र ग्रहण होने पर राहु का छः मास में, सूर्य ग्रहण का एक वर्ष में और त्वष्टा संज्ञक ग्रह, तामस, कीलक आदि का तत्काल फल प्राप्त होता है। तथा धूमकेतु का तीन मास में, श्वेत केतु का सात रात्रि में और सूर्य-चन्द्र का परिवेष, इन्द्रधनुष, सन्ध्या, अभ्रसूची आदि का फल एक सप्ताह में मिलता है॥१-३॥

विरोधाभासी शीतता और उष्णता आदि का फल परिज्ञानार्थ कथन

शीतोष्णविपर्यासः फलपुष्पमकालजं दिशां दाहः।
स्थिरचरयोरन्यत्वं प्रसूतिविकृतिश्च षण्मासात् ॥४॥

माया—विरोधाभासी शीतला और उष्णता अर्थात् उष्णकाल में शीतलता और शीत काल में उष्णता का अनुभव होने का फल; ऋतु भिन्नकाल में फलों और फूलों का; दिग्दाह का; स्थिर वस्तु में चरता और चर वस्तु में स्थिरता का तथा प्रसूति विकृति का फल छः मास में होता है॥४॥

अक्रियमाण कर्म का सम्पादन आदि का फल ज्ञानार्थ कथन

अक्रियमाणककरणं भूकम्पोऽनुत्सवो दुरिष्टं च।
शोषश्चाशोष्याणां स्रोतोऽन्यत्वं च वर्षार्धात् ॥५॥

माया—अक्रियमाण कर्म अर्थात् जो कभी नहीं किया, उसको करना अथवा अनिच्छा या हठ वश करना अथवा आचार विहीन कर्म को करना आदि, भूकम्प, अनुत्सव अर्थात् प्राप्त उत्सव को नहीं करना, अनिष्ट का होना अर्थात् अशुभ और

असम्मत कर्म का होना, कभी नहीं सूखने योग्य सरोवर, नदी आदि का सूख जाना, नदी आदि में स्वभाव के विरुद्ध प्रवाहों का बहना आदि-आदि का फल भी छः मासों में होता है॥५॥

स्तम्भ (खम्भा) आदि का सम्वाद आदि का फल ज्ञानार्थ कथन

स्तम्भकुसूलार्चानां जल्पितरुदितप्रकम्पितस्वेदाः ।
मासत्रयेण कलहेन्द्रचापनिर्घातपाकाश्च ॥६॥

माया—खम्भा, मृत्तिका आदि से बने अन्न संग्राहक प्रकोष्ठ या कोठी, देव प्रतिमा आदि द्वारा वार्तालाप करना, रोना, काँपना, अश्रुपात करना, पसीने का आना अथवा कलह करना, इन्द्रधुनष, निर्घात आदि-आदि का फल तीन मास में होता है॥६॥

कीड़ा-चूहा आदि से सम्वन्धित फल काल ज्ञानार्थ कथन

कीटाखुमक्षिकोरगबाहुल्यं मृगविहङ्गविरुतं च ।
लोष्टस्य चाप्सु तरणं त्रिभिरेव विपच्यते मासैः ॥७॥

माया—कीट, चूहा, मक्खी, सर्प आदि की बाहुल्यता, मृग और पक्षियों के स्वर, जल में ढेलों का तैरना आदि-आदि का फल भी तीन मास में होता है॥७॥

वन में कुत्तों का प्रसव आदि के फलों का काल कथन

प्रसवः शुनामरण्ये वन्यानां ग्रामसम्प्रवेशश्च ।
मधुनिलयतोरणेन्द्रध्वजाश्च वर्षात् समधिकाद्वा ॥८॥

माया—वन में कुत्तों का प्रसव करना, वनचर प्राणियों का ग्राम प्रवेश करना, मधुमक्खियों का छत्ता लगाना, तोरण और इन्द्रध्वज सम्बन्धि उत्पात आदि-आदि का फल एक वर्ष अथवा उससे कुछ अधिक समय में होता है॥८॥

शृगाल, गिद्ध आदि के फलों के काल ज्ञानार्थ कथन

गोमायुगृध्रसङ्घा दशाहिकाः सद्य एव तूर्यरवः ।
आक्रुष्टं पक्षफलं वल्मीको विदरणं च भुवः ॥९॥

माया—शृगाल और गिद्ध के समूहों का फल दस दिन में, विना बजाये तुरही के बजने का सद्यःफल मिलता हैं तथा शाप, वल्मीक, भूमि का फटना आदि का फल एक पक्ष में होता है॥९॥

अग्नि अभाव में ज्वाला आदि का फल काल ज्ञानार्थ कथन

अहुताशप्रज्वलनं घृततैलवसादिवर्षणं चापि ।
सद्यः परिपच्यन्ते मासेऽध्यर्धे च जनवादः ॥१०॥

भाषा—अग्नि के अभाव स्थल पर भी ज्वाला का होना तथा घी, तेल, चर्बी आदि की वृष्टि का फल भी तत्काल होता है, लेकिन जनापवाद का फल डेढ़ मास में सम्भव होता है॥१०॥

छत्र आदि की विकृति का फल काल ज्ञानार्थ कथन

छत्रचितियूपहुतवहवीजानां सप्तभिर्भवति पक्षैः।
छत्रस्य तोरणस्य च केचिन्मासात् फलं प्राहुः॥११॥

भाषा—छत्र, यज्ञचिति, याज्ञिकयूप, अग्नि, बीज आदि के विकृत होने का फल सात पक्ष में फलता है। किसी-किसी आचार्य ने छत्र और तोरण सम्बन्धित फल एक मास में कहा है॥११॥

परस्पर शत्रु जीवों में प्रेम आदि का फल ज्ञानार्थ कथन

अत्यन्तविरुद्धानां स्नेहः शब्दश्च वियति भूतानाम्।
मार्जारनकुलयोर्मूषकेण सङ्गश्च मासेन॥१२॥

भाषा—अत्यन्त शत्रुभाव रखने वाले प्राणियों में आपस में स्नेह भाव रखना, अन्तरिक्ष में प्राणियों का शब्द गूँजना, बिल्ली और नेवला का चूहों के साथ मेल-मिलाप आदि का फल एक मास में सम्भव होता है॥१२॥

गन्धर्व नगर आदि का फल काल ज्ञानार्थ कथन

गन्धर्वपुरं मासाद्रसवैकृत्यं हिरण्यविकृतिश्च।
ध्वजवेश्मपांशुधूमाकुला दिशश्चापि मासफलाः॥१३॥

भाषा—गन्धर्व नगर का दीखना, मधुर आदि रसों और स्वर्ण में विकार आना आदि का फल एक मास में सम्भव होता है। ध्वज, महल आदि का भङ्ग होना, रज:कण युक्त सम्पूर्ण दिशाओं आदि का फल भी एक मास में सम्भव होता है॥१३॥

अश्विनी आदि नक्षत्रों का फल काल ज्ञानार्थ कथन

नवकैकाष्टदशकैकषट्त्रिकत्रिकसङ्ख्यमासपाकानि।
नक्षत्राण्यश्विनिपूर्वकाणि सद्यः फलाश्लेषा॥१४॥

भाषा—अश्विनी से लेकर पुष्य पर्यन्त आठ नक्षत्रों के योग ताराओं में उपद्रव होने पर क्रम से नौ, एक, अठारह, एक, एक, छः, तीन और तीन मासों में तथा श्लेषा नक्षत्र के योग तारा में उपद्रव होने का सद्यःफल मिलता है॥१४॥

मघा आदि नक्षत्रों का फलकाल ज्ञानार्थ कथन

पित्र्यान्मासः षट् षट् त्रयोऽर्द्धमष्टौ च त्रिषडेकैकाः।
मासचतुष्केऽषाढे सद्यः पाकाभिजित्तारा॥१५॥

माया—मघा से लेकर मूल पर्यन्त दस नक्षत्रों के योग ताराओं में उत्पात के होने पर क्रम से एक, छः, छः, तीन, आधा, आठ, तीन, छः, एक और एक मासों में तथा पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा के उपद्रव का फल चार मासों में तथा अभिजित् नक्षत्र का सद्यः फल मिलता है।।१५।।

श्रवण आदि नक्षत्रों के उपद्रव का फल काल ज्ञानार्थ कथन

सप्ताष्टावध्यर्द्धं त्रयस्त्रयः पञ्च चैव मासाः स्युः ।
श्रवणादीनां पाको नक्षत्राणां यथासङ्ख्यम् ।।१६।।

माया—श्रवण से लेकर रेवती पर्यन्त के छः नक्षत्रों के योगताराओं में उपद्रव होने से सात, आठ, डेढ़, तीन, तीन और पाँच मासों में फलित होता है।।१६।।

अध्यायोपसंहार

निगदितसमये न दृश्यते चेदधिकतरं द्विगुणे प्रपच्यते तत् ।
यदि नं कनकरत्नगोप्रदानैरुपशमितं विधिवद् द्विजैश्च शान्त्या ।।१७।।

माया—उपरोक्त पाककाल में फल घटित नहीं होने पर वह उन कालों के दुगुना काल में फल दान करने वाला होता है। यहाँ पर विशेष यह है कि यदि ब्राह्मण से स्वर्ण, रत्न, गोदान आदि शान्ति कर्म कराने पर भी शान्ति नहीं होने पर ही उपरोक्त का द्विगुणित काल में फल मिलता है।।१७।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां वृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डल-दोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां पाकविचारो नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः ।।९७।।

□□□

अथाष्टनवतितमोऽध्यायः-९८

नक्षत्रकर्मगुणविचारः

सर्वप्रथम अश्विन्यादि नक्षत्रों का तारा और उसकी संख्या कथन

शिखिगुणरसेन्द्रियानलशशिविषयगुणर्तुपञ्चवसुपक्षाः ।
विषयैकचन्द्रभूतार्णवाग्निरुद्राश्विवसुदहनाः ॥१॥
भूतशतपक्षवसवो द्वात्रिंशच्चेति तारकामानम् ।
क्रमशोऽश्विन्यादीनां कालस्ताराप्रमाणेन ॥२॥
नक्षत्रजमुद्वाहे फलमब्दैस्तारकामितैः सदसत् ।
दिवसैर्ज्वरस्य नाशो व्याधेरन्यस्य वा वाच्यः ॥३॥

भाषा—अश्विनी आदि २७ नक्षत्रों के योगताराएं शिखि (३) आदि क्रम से कही गई हैं, जो इस प्रकार हैं—

अश्विनि-शिखि ३	पुष्य-गुण ३	स्वाती-चन्द्र १	अभिजित् -तीन ३
भरणी-गुण ३	श्लेषा ऋतु-६	विशाखा-भूत ५	श्रवण-दहन ३
कृत्तिका-रस ६	मघा पञ्च-५	अनुराधा-अर्णव ४	धनिष्ठा-भूत ५
रोहिणी-इन्द्रिय ५	पूर्वाफाल्गुनी-वसु ८	ज्येष्ठा-अग्नि—३	शतभिषा शत १००
मृगशिरा-अनल ३	उत्तराफाल्गुनी-पक्ष २	मूल-रुद्र ११	पूर्वाभाद्रपदा पक्ष २
आर्द्रा-शशी-१	हस्त-विष ५	पूर्वाषाढ़ा-अश्वि-२	उत्तराभाद्रपदा-वसु-८
पुनर्वसु-विषय-५	चित्रा-एक-१	उत्तराषाढ़ा-वसु ८	रेवती-द्वात्रिंशत ३२

ऊपर चक्राङ्कित अभिजित् नक्षत्र की तारायें ग्रन्थान्तर से दी गई हैं। उपरोक्त श्लोक में पाठान्तर 'भूतशरपक्ष वसव' को स्वीकारने से शतभिषा की पाँच योगतारायें सिद्ध होती हैं। इस प्रकार से अश्विनी आदि नक्षत्र की योगताराओं का मान कहा गया है और इन नक्षत्रों के क्रम से उनका परम्परया योगतारा प्रमाण तुल्य संख्या से काल का ज्ञान होता है। अर्थात् योगताराओं के प्रमाण से नक्षत्र जनित फलों की प्राप्ति काल होता है। जिस तरह विवाह में नक्षत्रों से सम्बन्धित शुभाशुभ फल उस नक्षत्र की तारा संख्या के समान वर्षों में और ज्वर आदि अन्यान्य व्याधियों की उत्पत्ति, जिस नक्षत्र में हो, उस नक्षत्र की तारा संख्या के समान दिनों में उन ज्वरादि व्याधियों का शमन होना, कहा जाता है॥१-३॥

अश्विनी आदि नक्षत्रों के स्वामी परिज्ञानार्थ कथन

अश्वियमदहनकमलजशशिशूलभृददितिजीवफणिपितरः ।
योन्यर्यमदिनकृत्त्वष्टृपवनशक्राग्निमित्राश्च ॥४॥

शक्रो निर्ऋतिस्तोयं विश्वे ब्रह्मा हरिर्वसुर्वरुणः ।
अजपादोऽहिर्बुध्न्यः पूषा चेतीश्वरा भानाम् ॥५॥

भाषा—अश्विनी आदि २८ नक्षत्रों का स्वामी अथवा देवता इस प्रकार से कहे गए हैं—

१. अश्विनी	—	अश्विनी कुमार
२. भरणी	—	यम
३. कृत्तिका	—	अग्नि
४. रोहिणी	—	ब्रह्मा
५. मृगशिरा	—	चन्द्र
६. आर्द्रा	—	शिव
७. पुनर्वसु	—	अदिति
८. पुष्य	—	गुरु
९. श्लेषा	—	सर्प
१०. मघा	—	पितर
११. पूर्वाफाल्गुनी	—	भग
१२. उत्तराफाल्गुनी	—	अर्यमा
१३. हस्त	—	आदित्यः
१४. चित्रा	—	त्वष्टा
१५. स्वाती	—	वायु
१६. विशाखा	—	शक्राग्नि
१७. अनुराधा	—	मित्र
१८. ज्येष्ठा	—	इन्द्र
१९. मूल	—	निर्ऋति
२०. पू. षा	—	जल
२१. उ. षा	—	विश्वेदेव
२२. अभिजित्	—	धाता
२३. श्रवण	—	विष्णु
२४. धनिष्ठा	—	वसु
२५. शतभिषा	—	वरुण
२६. पूर्वाभा..	—	अजैकपाद
२७. उत्तरा भा.	—	अहिर्बुध्न्य
२८. रेवती	—	पूषा.

उपरोक्त प्रकार ग्रन्थकार ने नक्षत्रों के स्वामियों को कहा है।।४-५।।

ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र और उसके विहितकर्म कथन

त्रीण्युत्तराणि तेभ्यो रोहिण्यश्च ध्रुवाणि तैः कुर्यात्।
अभिषेकशान्तितरुनगरधर्मबीजध्रुवारम्भान् ।।६।।

माया—उपरोक्त अश्विनी आदि नक्षत्रों में से तीनों उत्तरा अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तराभाद्रपदा तथा रोहिणी, ये चार नक्षत्र ध्रुव या स्थिर संज्ञक कहा गया है। इन नक्षत्रों में अभिषेक, शान्तिकर्म, वृक्षारोपण, नगर प्रतिष्ठा, धर्मक्रिया, बीजवपन और स्थिर सभी प्रकार के कार्यों का शुभारम्भ करना चाहिए।।६।।

तीक्ष्णसंज्ञक नक्षत्र और उसके विहित कर्म कथन

मूलशिवशक्रभुजगाधिपानि तीक्ष्णानि तेषु सिद्ध्यन्ति।
अभिघातमन्त्रवेतालबन्धवधभेदसम्बन्धाः ।।७।।

माया—यहाँ मूल, आर्द्रा, ज्येष्ठा, श्लेषा आदि चारों नक्षत्रों की तीक्ष्ण संज्ञा है। इन नक्षत्रों में अभिघात, मन्त्र, वेताल आदि कर्म; बन्धन, वध, भेद और सम्बन्ध की सिद्धि करनी चाहिए।।७।।

उग्रसंज्ञक नक्षत्र और उसमें विहित कर्म कथन

उग्राणि पूर्वभरणीपित्र्याण्युत्सादनाशशाठ्येषु।
योज्यानि बन्धविषदहनशस्त्रघातादिषु च सिद्ध्यै ।।८।।

माया—तथा तीनों पूर्वा अर्थात् पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपदा; भरणी, मघा आदि पाँच नक्षत्रों की 'उग्रसंज्ञा' है। इन नक्षत्रों में उत्सादन, नाश करना, शठता करना, बन्धन, विष शस्त्राघात आदि कार्य की सिद्धि करनी चाहिए।।८।।

लघुसंज्ञक नक्षत्र और उसके विहित कर्म कथन

लघु हस्ताश्विनपुष्याः पण्यरतिज्ञानभूषणकलासु।
शिल्पौषधयानादिषु सिद्धिकराणि प्रदिष्टानि ।।९।।

माया—उपरोक्त नक्षत्रों में से हस्त, अश्विनी, पुष्य आदि तीन नक्षत्रों की लघु संज्ञा है। इसमें पण्य, रति, ज्ञान, आभूषण, कला अर्थात् संगीत, चित्र सभी प्रकार के कला, शिल्पकार्य, औषध, यान अर्थात् यात्रा और वाहन आदि कार्यों की सिद्धि करनी चाहिए।।९।।

मृदुसंज्ञक नक्षत्र और उसमें विहित कर्म कथन

मृदुवर्गोऽनूराधाचित्रापौष्णैन्दवानि मित्रार्थे।
सुरतविधिवस्त्रभूषणमङ्गलगीतेषु च हितानि ।।१०।।

माया—तथा अनुराधा, चित्रा, रेवती, मृगशिरा आदि नक्षत्र की मृदुसंज्ञा कहते हैं।

इन नक्षत्रों में मित्र, सुरत, विधि, वस्त्र, भूषण, मङ्गलकार्य तथा गीतसंगीत आदि की साधन करना श्रेयस्कर है॥१०॥

मृदुतीक्ष्ण और चरसंज्ञा वाले नक्षत्र और उनका कर्म कथन

हौतभुजं सविशाखं मृदुतीक्ष्णं तद्विमिश्रफलकारि।
श्रवणत्रयमादित्यानिले च चरकर्मणि हितानि ॥११॥

माया—कृत्तिका, विशाखा आदि दो नक्षत्र मृदुतीक्ष्ण संज्ञा वाले नक्षत्र कहे गए हैं। प्राय: इन नक्षत्रों में मिला-जुला फल प्राप्त होता है अर्थात् ये नक्षत्र मृदु व दारुण दोनों प्रकार के कर्मों को सिद्ध करने वाले हैं। तथा श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती ये सभी पाँच नक्षत्र चर संज्ञा वाले हैं। ये चर कर्मों को सिद्ध करने के लिए श्रेष्ठ है॥११॥

क्षौर कर्म करने योग्य नक्षत्रों का कथन

हस्तत्रयं मृगशिरा: श्रवणत्रयं च
पूषाश्विशक्रगुरुभानि पुनर्वसुश्च।
क्षौरे तु कर्मणि हितान्युदये क्षणे वा
युक्तानि चोडुपतिना शुभतारया च ॥१२॥

माया—हस्त, चित्र, स्वाती, मृगशिरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु आदि नक्षत्रों में अथवा इन नक्षत्रों के उदित होने पर अथवा इन नक्षत्रों के स्वामी की मुहूर्त के उदयकाल में चन्द्र व तारा अनुकूल रहने पर क्षौरकर्म करना शुभदायक होता है॥१२॥

क्षौरकर्म वर्जित काल का कथन

न स्नातमात्रगमनोन्मुखभूषिताना-
मभ्यक्तभुक्तरणकालनिरासनानाम्।
सन्ध्यानिशाशनिकुजार्कतिथौ च रिक्ते
क्षौरं हितं न नवमेऽह्नि न चापि विष्ट्याम् ॥१३॥

माया—स्नान के पश्चात्; कहीं जाने की इच्छा करने के बाद; तैल आदि लगा लेने के बाद; युद्धकाल में; विना आसन पर स्थित हुए; सन्ध्या के समय; रात्रि में भी; शनि, मङ्गल और रविवार के दिन, रिक्ता तिथि में, नौवें दिन, भद्राकरण में क्षौरकर्म निषिद्ध है॥१३॥

क्षौरकर्म में विशेषता कथन

नृपाज्ञया ब्राह्मणसम्मते च विवाहकाले मृतसूतके च।
बद्धस्य मोक्षे क्रतुदीक्षणासु सर्वेषु शस्तं क्षुरकर्म भेषु ॥१४॥

माया—राजा की आज्ञा से, ब्राह्मणों के निर्देश पर, विवाह के समय, मरणाशौच से निवृत्ति में, जननाशौच में भी, कैदी के जेल से मुक्त होने पर तथा यज्ञ-दीक्षा काल में किसी नक्षत्र के रहने पर भी क्षौरकर्म करना कल्याणकारक है॥१४॥

पुरुष संज्ञक नक्षत्र और उसमे विहित पुरुष संज्ञक कार्य सम्पादन कथन

(हस्तो मूलं श्रवणा पुनर्वसुर्मृगशिरस्तथा पुष्यः ।
पुंसञ्ज्ञितेषु कार्येष्वेतानि शुभानि धिष्ण्यानि ॥१५॥

संस्कार विहित नक्षत्रों का परिज्ञानार्थ कथन

सावित्रपौष्णानिलमैत्रतिष्यत्वाष्ट्रे तथा चोडुगणाधिपर्क्षे ।
संस्कारदीक्षाव्रतमेखलादि कुर्याद् गुरौ शुक्रबुधेन्दुयुक्ते ॥१६॥

माया—हस्त, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, मृगशिरा, पुष्य आदि नक्षत्रों की पुरुष संज्ञा होती है। इन नक्षत्रों में ऐसे कार्य, जो पुरुषवाचक हों, उसका साधन करना चाहिए।

हस्त, रेवती, स्वाती, अनुराधा, पुष्य, चित्रा, मृगशिरा आदि नक्षत्रों में और शुक्र, बुध, चन्द्र, गुरु आदि वारों में संस्कार जैसे नामकरण, दीक्षा, उपनयन, मौञ्जी, क्षौरकर्म भी और विद्या ग्रहण आदि करना श्रेष्ठ है॥१५-१६॥

समस्त कर्मों की लग्न शुद्धि कथन

शुद्धैर्द्वादशकेन्द्रनैधनगृहैः पापैस्त्रिषष्ठायगै-
र्लग्ने केन्द्रगतेऽथवा सुरगुरौ दैत्येन्द्रपूज्येऽपि वा ।
सर्वारम्भफलप्रसिद्धिरुदये राशौ च कर्तुः शुभे
सग्राम्यस्थिरभोदये च भवनं कार्यं प्रवेशोऽपि वा ॥१७॥

माया—कार्य साधन के समय के लग्न से द्वादशभाव, केन्द्रभाव और अष्टमभाव में शुभग्रह की अवस्थिति; तृतीय भाव, षष्ठभाव और एकादश भाव में पाप ग्रह की स्थिति तथा लग्न अथवा केन्द्रभाव में गुरु अथवा शुक्र स्थित होने से ऐसे समय में किसी भी कार्यों को करने से उन समस्त कार्यों की सिद्धि होती है। एवं कार्यकर्ता की जन्म राशि, ग्राम्य राशि या स्थिर राशि पूर्वोक्त लग्न में स्थित होने से गृहारम्भ, गृहप्रवेश आदि करना श्रेष्ठ है॥१७॥

**॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां
मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा
संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां नक्षत्रकर्म-
गुणाविचारो नामाष्टनवतितमोऽध्यायः ॥९८॥**

□□□

अथ नवनवतितमोऽध्यायः-९९

तिथिकर्मगुण विचारः

तिथि, तिथिस्वामी, तिथियों के प्रकार आदि परिज्ञानार्थ कथन

कमलजविधातृहरियमशशाङ्कषड्वक्त्रशक्रवसुभुजगाः ।
धर्मेशसवितृमन्मथकलयो विश्वे च तिथिपतयः ।।१।।
पितरोऽमावस्यायां संज्ञासदृशाश्च तैः क्रियाः कार्याः ।
नन्दा भद्रा विजया रिक्ता पूर्णा च तास्त्रिविधाः ।।२।।
यत् कार्यं नक्षत्रे तद्दैवत्यासु तिथिषु तत् कार्यम् ।
करणमुहूर्तेष्वपि तत् सिद्धिकरं देवतासदृशम् ।।३।।

भाषा—अब प्रतिपद् से १५ तिथियों के नाम और उनके स्वामियों को कहा जा रहा है; वे इस प्रकार हैं—

प्रतिपदा—ब्रह्मा	द्वितीया—विधाता
तृतीया—विष्णु	चतुर्थी—यम
पंचमी—इन्द्र	षष्ठी—कार्त्तिकेय
सप्तमी—इन्द्र	अष्टमी—वसु
नवमी—सर्प	दशमी—धर्म
एकादशी—शिव	द्वादशी—सूर्य
त्रयोदशी—कामदेव	चतुर्दशी—कलि
पूर्णिमा—विश्वेदेव	अमावास्या—पितर

इन तिथियों के स्वामी शुक्लपक्ष और कृष्ण पक्ष में समान ही कहे गए हैं, मात्र पूर्णिमा और अमावास्या का क्रम से विश्वेदेव और पितर स्वामी कहे गये हैं।

इन तिथियों में उनके स्वामियों के नाम सदृश कर्म को करना चाहिए। अर्थात् प्रतिपदा तिथि में, उसके स्वामी ब्रह्मा को लक्ष्य कर ब्रह्मकर्म अर्थात् विवाह आदि; द्वितीया में गृहनिर्माण आदि; तृतीया तिथि में चौलकर्म, दमन आदि; चतुर्थी में मारण आदि; पञ्चमी में विरेचन, औषधि, पौष्टिक आदि कर्म; षष्ठी में मित्र संग्रह अभिषेक आदि इसी तरह से अन्य तिथियों के कर्म वक्ष्यमाण 'भट्टोत्पल विवृति' में स्पष्टता से कहा गया है, उसे वहीं देखना चाहिए।

उपरोक्त तिथियों की नन्दा, भद्रा, विजया, रिक्ता और पूर्णा संज्ञा कही गई हैं। इन नन्दा आदि में तीन-तीन तिथियाँ इस प्रकार परिगणित होती हैं अर्थात् नन्दा में

प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी; भद्रा में द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी; विजया में तृतीया, सप्तमी और त्रयोदशी; रिक्ता में चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी तथा पूर्णा में पञ्चमी, दशमी और पञ्चदशी (पूर्णिमा या अमावास्या) तिथियाँ आती हैं।

जिन कार्यों को अश्विनी आदि नक्षत्रों में करने के लिए कहा गया है, उन कार्यों को उन नक्षत्रों के स्वामियों की तिथियों में भी करना चाहिए। इसका तात्पर्य यह हुआ कि रोहिणी नक्षत्र में जो कार्य-विहित है, उस कार्य को उसके देवता (स्वामी) ब्रह्मा की तिथि 'प्रतिपदा' में भी करना चाहिए। इसी तरह अन्यत्र भी समझना चाहिए।

इसी तरह जिन कार्यों को नक्षत्रों में कहा गया है, उन कार्यों को उस नक्षत्र के स्वामी के करण और मुहूर्त्त में भी करना श्रयेस्कर है। अर्थात् ज्येष्ठा नक्षत्र विहित कार्य को उसके स्वामी इन्द्र के करण बव में, रोहिणी विहित कार्य को बालव में; अनुराधा विहित कार्य को कौलव में और अन्य नक्षत्रों के कर्म दूसरे-दूसरे सम्बन्धित करणों में करना चाहिए।

इसी तरह जिन कार्यों को नक्षत्रों में करने के लिए कहा गया है, उन कार्यों को उन नक्षत्रों के स्वामी के मुहूर्तों में भी करना चाहिए अर्थात् आर्द्रा नक्षत्र विहित कार्य को शिवसंज्ञक मुहूर्त्त में; श्लेषा नक्षत्र विहित कार्य को भुजग संज्ञक मुहूर्त्त में; अनुराधा के कार्य को मित्रसंज्ञक मुहूर्त्त में और अन्य नक्षत्रों के कर्म को उससे सम्बन्धित मुहूर्त्त में भी करनें चाहिए। इसे विशेष रूप से जानने हेतु वक्ष्यमाण भट्टोत्पल विवृति का अध्ययन करना चाहिए।।१-३।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाऽञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां मायानाम्निहिन्दीव्याख्यायां तिथिकर्मगुणाविचारो नाम नवनवतितमोऽध्यायः ।।९९।।

□□□

अथ शततमोऽध्यायः-१००

करणकर्मगुणविचारः

सर्वप्रथम सात चर करणों के नाम और स्वामी परिज्ञानार्थ कथन

ववबालवकौलवतैतिलाख्यगरवणिजविष्टिसंज्ञानाम् ।
पतयः स्युरिन्द्रकमलजमित्रार्यमभूश्रियः सयमाः ।।१।।

माया—तिथि का आधा करण कहलाता है। उसमें सात चर या चल करण होते हैं, जिनके नाम और देवता वक्ष्यमाण प्रकार से कहे गए हैं—बव और उसका स्वामी या देवता इन्द्र; बालव और उसका स्वामी ब्रह्मा; कौलव और उसका स्वामी मित्र; तैतिल और उसका स्वामी अर्यमा; गर और उसका स्वामी भूमि; वणिज् और उसका स्वामी श्री तथा विष्टि और उसका स्वामी यम है।।१।।

चार स्थिर करणों के नाम और स्वामी परिज्ञानार्थ कथन

कृष्णचतुर्दश्यर्धाद् ध्रुवाणि शकुनिश्चतुष्पदं नागम् ।
किंस्तुघ्नमिति च तेषां कलिवृषफणिमारुताः पतयः ।।२।।

माया—कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध में शकुनि करण; जिसका स्वामी कलि को कहा गया है। अमावास्या के पूर्वार्द्ध में नाग करण, जिसका स्वामी वृष और उसके उत्तरार्द्ध में चतुष्पद् करण, जिसका स्वामी सर्प को कहा गया है। तथा शुक्ल पक्ष प्रतिपदा के पूर्वार्द्ध में किंस्तुघ्न करण जिसका स्वामी वायु होता है । इस प्रकार दोनों पक्षों के अवशिष्ट तिथियों में एकान्तर क्रम से उपरोक्त सात चर करण भी आवर्तित होकर स्थित होते हैं।।२।।

चर करणों के विहित कर्म और उसके फलों का कथन

कुर्याद्बवे शुभचरस्थिरपौष्टिकानि
धर्मक्रियाद्विजहितानि च बालवाख्ये ।
सम्प्रीतिमित्रवरणानि च कौलवे स्युः
सौभाग्यसंश्रयगृहाणि च तैतिलाख्ये ।।३।।

कृषिबीजगृहाश्रयजानि गरे वणिजि ध्रुवकार्यवणिग्युतयः ।
न हि विष्टिकृतं विदधाति शुभं परघातविषादिषु सिद्धिकरम् ।।४।।

माया—अब बव आदि सात करणों में किन कार्यों को करना चाहिए, उसे कहते हैं—बव करण में शुभ अथवा प्रशस्त धर्म आदि के कार्यों को, चरकर्म अर्थात्

स्वल्पकाल में सुसम्पन्न होने वाले कर्म को, स्थिर कर्म अर्थात् अधिकतर काल तक स्थायी रहने वाले कर्म को तथा पौष्टिक कर्म अर्थात् धर्म के समान करणीय कार्यों को तथा द्विजहित के कर्म अर्थात् ब्राह्मणों (यहां द्विज शब्द से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, तीनों का ग्रहण करने चाहिए या नहीं; विचार-योग्य है) के अनुकूल कर्म को करना चाहिए।

कौलव करण में प्रीति कार्य अर्थात् किसी से स्नेह करना या प्यार करना या सन्धि करना आदि कार्य, मित्र बनाने योग्य व्यक्ति के चयन का कार्य और कन्या का वरण करना श्रेष्ठ है।

तैतिल करण में सौभाग्य कर्म अर्थात् ऐसा कर्म जिससे सभी का ऐश्वर्य वृद्धि हो; संश्रय वर्ग अर्थात् विशेष व्यक्ति से जुड़ने का कार्य तथा गृह विषयक समस्त कार्यों को करना कल्याणकारक होता है।

गर करण में कृषि और बीज सम्बन्धी कर्म तथा घर-परिवार सम्बन्धी समस्त कर्मों का सम्पादन करना शुभदायक होता है।

वणिज् करण में स्थिर कार्यों को, वाणिज्यसम्बन्धित कर्मों को तथा किसी से जुड़ने का कार्य आदि करना श्रेष्ठ है।

विष्टि करण में किया जाने वाला कोई भी कर्म शुभदायक नहीं ही होता है। फिर भी शत्रुओं की हानि करने सम्बन्धित कर्म, विष देना, अग्नि दाह आदि करना शुभ होता है।।३-४।।

स्थिर करणों का विहित कर्म और फल परिज्ञानार्थ कथन

कार्यं पौष्टिकमौषधादि शकुनौ मूलानि मन्त्रास्तथा
गोकार्याणि चतुष्पदे द्विजपितृनुद्दिश्य राज्यानि च।
नागे स्थावरदारुणानि हरणं दौर्भाग्यकर्माण्यतः
किंस्तुघ्ने शुभमिष्टिपुष्टिकरणं मङ्गल्यसिद्धिक्रियाः ।।५।।

माया—शकुनि करण में पौष्टिक कर्म, औषधि सेवन, मूल सम्बन्धि कर्म अर्थात् जड़ को लाना, रोपना या सेवन करना आदि कर्म तथा मन्त्र साधन आदि से सम्बन्धित कर्म सिद्ध होते हैं।

चतुष्पद् करण में गायों से सम्बन्धित सभी कार्य, ब्राह्मण, पितर सम्बन्धि समस्त कर्म तथा राज्य विषयक समस्त कर्म करना शुभवाचक होता है।

नागकरण में स्थावर, दारुण, हरण और दौर्भाग्य सम्बन्धित कार्य अर्थात् जिसके साधन से शत्रुता में वृद्धि हो, ऐसे कार्यों को करने से शुभ होता है।

किंस्तुघ्न करण में धर्म, इष्टि अर्थात् पुत्रादि काम्य कर्म, पुष्टि अर्थात् शरीर की पुष्टि के निमित्त किया जाने वाला कर्म, विवाहादि माङ्गलिक संस्कार से सम्बन्धित कर्म तथा सिद्धि क्रिया, जिस क्रिया के करने से कार्य की लक्ष्य की सिद्धि हो, ऐसे कर्म का साधन करना श्री वृद्धि के लिए होता है॥५॥

कर्णवेध मुहूर्त परिज्ञानार्थ कथन

लाभे तृतीये च शुभैः समेते पापैर्विहीने शुभराशिलग्ने।
वेध्यौ च कर्णावमरेज्यलग्ने पुष्येन्दुचित्राहरिपौष्णभेषु ॥६॥

माया—कर्णवेध कालिक लग्न से एकादश भाव और तृतीय भाव में शुभ ग्रहस्थित हों, लग्न में शुभग्रह की राशि वृष, मिथुन, कन्या, तुला, धनु और मीन में से कोई एक स्थित हो, वह लग्न पापग्रह शनि, मंगल, सूर्य आदि से रहित और गुरु से युक्त हो तथा पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, श्रवण और रेवती नक्षत्रों में कर्णवेध कल्याणकारक होता है॥६॥

सारांश में विवाह पटल परिज्ञानार्थ कथन

रोहिण्युत्तररेवतीमृगशिरोमूलानुराधामघा-
हस्तस्वातिषु षष्ठतौलिमिथुनेषूद्यत्सु पाणिग्रहः।
सप्ताष्टान्त्यबहिःशुभैरुडुपतावेकादशद्वित्रिगे
क्रूरैस्त्र्यायषडष्टगैर्न तु भृगौ षष्ठे कुजे चाष्टमे ॥७॥
दम्पत्योर्द्विनवाष्टराशिरहिते चारानुकूले रवौ
चन्द्रे चार्ककुजार्किशुक्रवियुते मध्येऽथवा पापयोः।
त्यक्त्वा च व्यतिपातवैधृतिदिनं विष्टिं च रिक्तां तिथिं
क्रूराहायनपौषचैत्रविरहे लग्नांशके मानुषे ॥८॥

माया—रोहिणी; तीनों उत्तरा अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तराभाद्रपदा; रेवती; मृगशिरा; मूल; अनुराधा; मघा, हस्त तथा स्वाती नक्षत्रों में; कन्या, तुला और मिथुन लग्नों में; सप्तम भाव, अष्टम भाव और द्वादश भाव से इतर स्थानों में शुभ ग्रह स्थित हो; एकादशभाव, द्वितीय भाव या तृतीय भाव में चन्द्र की अवस्थिति हो; तृतीय भाव, षष्ठभाव और एकादश भाव में पापग्रह की स्थिति हो तथा षष्ठभाव में शुक्र और अष्टम भाव में मंगल की अवस्थिति नहीं हो, तो इस काल में विवाह करना श्रेष्ठ है। (वर और वधू में से किसी एक की राशि से दूसरे की राशि दूसरी, नौवीं या आठवीं नहीं होनी चाहिए अर्थात् द्विर्द्वादश, नवमपञ्चम अथवा षडष्टक योग

दम्पति के राशियों में नही होनी चाहिए। सूर्य चारानुकूल अर्थात् ३।६।१०।११ स्थान में स्थित हो; सूर्य, मङ्गल, शनि अथवा शुक्र से पृथक् या दो पापग्रहों के बीच में चन्द्र की स्थिति हो, एवं व्यतिपात और वैधृति योग, भद्राकरण, रिक्ता ४।९।१४ तिथि, पापवार, क्रूरायन अर्थात् दक्षिणायन, चैत्र और पौष मासों आदि को छोड़कर द्विपद संज्ञक मिथुन, कन्या और तुला लग्न मे विवाह करना श्रेयस्कर है॥७-८॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसा-
मण्डलदोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां
माया नाम्निहिन्दीव्याख्यायां करणकर्मगुण-
विचारो नाम शततमोऽध्यायः ॥१००॥

□□□

अथैकोत्तरशततमोऽध्यायः-१०१

नक्षत्रजातकविचारः

सर्वप्रथम अश्विनी और भरणी नक्षत्रोत्पन्न का फल कथन

प्रियभूषणः स्वरूपः सुभगो दक्षोऽश्विनीषु मतिमांश्च ।
कृतनिश्चयसत्यारुग्दक्षः सुखितश्च भरणीषु ॥१॥

माया—अश्विनी नक्षत्र में उत्पन्न जन अलंकरणों से प्रेम करने वाला, सुन्दर स्वरूप वाला, सर्वप्रिय, निपुण और बुद्धिमान् होता है। जो भरणी नक्षत्र में उत्पन्न होता है, वह मनुष्य जिस-किसी कार्य को निश्चयपूर्वक अन्त तक करने वाला, सत्यवक्ता, रोग रहित स्वास्थ्य वाला, प्रवीण, चतुर और सुखवान् होता है॥१॥

कृत्तिका और रोहिणी नक्षत्रजात फल ज्ञानार्थ कथन

बहुभुक् परदाररतस्तेजस्वी कृत्तिकासु विख्यातः ।
रोहिण्यां सत्यशुचिः प्रियंवदः स्थिरः स्वरूपश्च ॥२॥

माया—जो जातक कृत्तिका नक्षत्र में जन्म लिया हो, वह अत्यधिक खाने वाला, परायी स्त्रियों में आसक्ति रखने वाला, तेजस्वी और विख्यात होता है।

जो जातक रोहिणी नक्षत्र में जन्म लिया हो, वह सत्यवक्ता, पवित्रता पसन्द करने वाला, मधुर और अनुकूल बोलने वाला, स्थिर बुद्धि वाला, सुन्दर स्वरूप वाला होता है॥२॥

मृगशिरा और आर्द्रा नक्षत्र में उत्पन्न का फल कथन

चपलश्चतुरो भीरुः पटुरुत्साही धनी मृगे भोगी ।
शठगर्वितचण्डकृतघ्नहिंस्रपापश्च रौद्रर्क्षे ॥३॥

माया—मृगशिरा नक्षत्र जात मनुष्य चंचल, चतुर, भयभीत रहने वाला, प्रत्युत्पन्नमति, उत्साह सम्पन्न, धनवान् और भोग करने वाला होता है।

आर्द्रा नक्षत्र जात पुरुष शठता करने वाला, अहंकारी, कृतघ्न अर्थात् परोपकार को नहीं मानने वाला, हिंसक प्रकृति वाला और पाप करने वाला होता है॥३॥

पुनर्वसु नक्षत्रजात का फल ज्ञानार्थ कथन

दान्तः सुखी सुशीलो दुर्मेधा रोगभाक् पिपासुश्च ।
अल्पेन च सन्तुष्टः पुनर्वसौ जायते मनुजः ॥४॥

माया—पुनर्वसु नक्षत्र में जन्म लेने वाला मनुष्य अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित

रखने वाला, सुखवान् , सुन्दर प्रकृति वाला, दुर्बुद्धि से युक्त, रोगालु, प्यास से पीड़ित रहने वाला और थोड़े से सन्तुष्ट रहने वाला होता है।।४।।

पुष्य और श्लेषा नक्षत्र जात फल ज्ञानार्थ कथन

शान्तात्मा सुभग: पण्डितो धनी धर्मसंश्रित: पुष्ये।
शठसर्वभक्ष्यपाप: कृतघ्नधूर्तश्च भौजङ्गे।।५।।

भाषा—पुष्य नक्षत्रोत्पन्न जातक शान्त स्वभाव वाला, सौभाग्यवान् , पण्डित, धनवान् और धर्म सम्पन्न व्यक्ति होता है।

श्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला जातक शठ, सब कुछ समान रूप से खाने वाला, पापात्मा, कृतघ्न और धूर्त होता है।।५।।

मघा और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रजात का फल कथन

बहुभृत्यधनी भोगी सुरपितृभक्तो महोद्यम: पित्र्ये।
प्रियवाग् दाता द्युतिमानटनो नृपसेवको भाग्ये।।६।।

भाषा—मघा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक बहुत सेवकों वाला, धनवान् , भोगवान् , देवता और माता-पिता का भक्ति करने वाला तथा अत्यधिक परिश्रमी और उद्यमी होता है।

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला जातक प्रियवचन बोलने वाला, दाता, कान्तिमान्, भ्रमण करने वाला और राजाजनों का सेवा करने वाला होता है।।६।।

उत्तराफालगुनी और हस्त नक्षत्र जात का फल कथन

सुभगो विद्याप्तधनो भोगी सुखभाग् द्वितीयफल्गुन्याम्।
उत्साही धृष्ट: पानपोऽघृणी तस्करो हस्ते।।७।।

भाषा—उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में जन्म लेने वाला मनुष्य सौभाग्यवान्, विद्या या ज्ञान के बल से धन अर्जित करने वाला, भोगवान् और सुखवान् होता है।

हस्त नक्षत्र में जन्म लेने पर जातक उत्साह सम्पन्न, प्रतिभावान् , निर्लज्ज, मद्यपान करने वाला, अघृणी और चोर होता है।।७।।

चित्रा और स्वाती नक्षत्रजात का फल कथन

चित्राम्बरमाल्यधर: सुलोचनाङ्गश्च चित्रायाम्।
दान्तो वणिक् तृषालु: प्रियवाग्धर्माश्रित: स्वातौ।।८।।

भाषा—चित्रा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक विविध प्रकार वर्ण के वस्त्र और माला को धारण करने वाला, उसका नेत्र और शरीर सौन्दर्य सम्पन्न होता है।

स्वाती नक्षत्र में जन्मा जातक अपनी समस्त इन्द्रियों को नियंत्रण में रखने वाला,

व्यापार करने वाला, प्रियवक्ता तथा सदा धर्म का पालने करते रहने वाला होता है॥८॥

विशाखा और अनुराधा जात का फल कथन

ईर्षुर्लुब्धो द्युतिमान् वचनपटुः कलहकृद्विशाखासु।
आढ्यो विदेशवासी क्षुधालुरटनोऽनुराधासु॥९॥

माया—विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला जातक दूसरों की अच्छाई देख जलने वाला, लोभ करने वाला, कान्ति सम्पन्न, चतुर वक्ता और झगड़ालू होता है।

अनुराधा नक्षत्र में जन्मा व्यक्ति धन सम्पन्न, विदेश में रहने वाला, भूख से अधिक पीड़ित तथा घूमने वाला होता है॥९॥

ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र जात फल कथन

ज्येष्ठासु न बहुमित्रः सन्तुष्टो धर्मकृत् प्रचुरकोपः।
मूले मानी धनवान् सुखी न हिंस्रः स्थिरो भोगी॥१०॥

माया—ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हुआ व्यक्ति अल्प मित्र युक्त, संतुष्ट रहने वाला, धर्म करने वाला और अतिक्रोधी भी होता है।

मूल नक्षत्र जात व्यक्ति स्वाभिमानी, धनसम्पन्न सुखी, अहिंसा धर्म का पालक, स्थिर बुद्धि सम्पन्न और भोगवान् होता है॥१०॥

पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र जात का फल कथन

इष्टानन्दकलत्रो वीरो दृढसौहृदश्च जलदेवे।
वैश्वे विनीतधार्मिकबहुमित्रकृतज्ञसुभगश्च॥११॥

माया—पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में जन्म लेने वाला, अभिलषित आनन्द प्रदान करने वाली पत्नि से सम्पन्न, स्वाभिमानी तथा सद् मित्रों से सम्पन्न होता है।

उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में जन्मा मनुष्य अतिविनम्र स्वभाव युक्त, धर्म पूर्वक आचरण वाला, अति मित्रों से युक्त, दूसरों के उपकार को स्वीकार करते रहने वाला और सौभाग्यवान् होता है॥११॥

श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र जात का फल कथन

श्रीमान् श्रवणे श्रुतवानुदारदारो धनान्वितः ख्यातः।
दाताऽऽढ्यशूरगीतप्रियो धनिष्ठासु धनलुब्धः॥१२॥

माया—श्रवण नक्षत्र में उत्पन्न हुआ जातक श्रीमान् , पण्डित, उदास्त्री से सम्पन्न, धनवान् , और विख्यात भी होता है।

धनिष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला मनुष्य दान देने वाला, धन सम्पन्न, गीत-वाद्य आदि संगीत को पसन्द करने वाला तथा लाभ करने वाला होता है॥१२॥

शतभिषा और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र जात का फल कथन

स्फुटवाग्व्यसनी रिपुहा साहसिकः शतभिषक्सु दुर्ग्राह्यः ।
भद्रपदासूद्विग्नः स्त्रीजितधनपटुरदाता च ।।१३।।

माया—शतभिषा नक्षत्र में जन्मा जातक स्पष्ट बोलने वाला, व्यसन करने वाला, शत्रुओं को नाश करने वाला, साहस सम्पन्न तथा कठिनाई से ही किसी की अधीनता में आने वाला होता है।

पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र में जन्म लेने वाला जातक उलझन युक्त मानसिकता वाला, स्त्रियों के वशीभूत, धनवान् , पण्डित तथा कृपण भी होता है।।१३।।

उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र जात फल कथन

वक्ता सुखी प्रजावान् जितशत्रुर्धार्मिको द्वितीयासु ।
सम्पूर्णाङ्गः सुभगः शूरः शुचिरर्थवान् पौष्णे ।।१४।।

माया—उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र में जन्मा हुआ जातक बोलने वाला, सुख सम्पन्न, सन्तानों से सम्पन्न, शत्रुओं को जीतने वाला और धर्माचरण से सम्पन्न होता है।

रेवती नक्षत्र में उत्पन्न होने वाला जातक समस्त अङ्गों से सम्पन्न, सौभाग्यवान्, शूर, पवित्रता पसन्द करने वाला और धन सम्पन्न होता है।।१४।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां नक्षत्रजातकविचारौ नामैकोत्तरशततमोऽध्यायः ।।१०१।।

□□□

अथ द्व्यधिकशततमोऽध्यायः-१०२

राशिविभागविचारः

सर्वप्रथम मेष और वृष राशि गत नक्षत्र पाद परिज्ञानार्थ कथन

अश्विन्योऽथ भरण्यो बहुलापादश्च कीर्त्यते मेषः ।
वृषभो बहुलाशेषं रोहिण्योऽर्धं च मृगशिरसः ॥१॥

भाषा—अश्विनी नक्षत्र के चारों चरण, भरणी नक्षत्र के भी चारों चरण तथा कृत्तिका नक्षत्र का मात्र प्रथम चरण मिलाकर कुल नौ चरणों वाला मेष राशि तथा कृत्तिका के अवशिष्ट तीन चरण, रोहिणी के चारों चरण और मृगशिरा के आरम्भ से दो चरण मात्र वृष राशि कहा गया है॥१॥

मिथुन और कर्क राशियों में नक्षत्र पाद कथन

मृगशिरसोऽर्धं रौद्रं पुनर्वसोरंशकत्रयं मिथुनः ।
पादश्च पुनर्वसुतस्तिष्यः श्लेषा च कर्कटकः ॥२॥

भाषा—मृगशिरा के अन्तभाग के दो चरण, आर्द्रा के चारों चरण और पुनर्वसु नक्षत्र के आरम्भ से तीन चरण की मिथुन राशि तथा पुनर्वसु नक्षत्र के अन्त का एक चरण, पुष्य नक्षत्र के चारों चरण और श्लेषा नक्षत्र के भी चारों चरण को कर्क राशि माना जाता है॥२॥

सिंह और कन्या राशियों में नक्षत्रपाद कथन

सिंहोऽथ मघा पूर्वा च फल्गुनीपाद उत्तरायाश्च ।
तत्परिशेषं हस्तश्चित्राद्यर्धं च कन्याख्यः ॥३॥

भाषा—मघा नक्षत्र के चारों चरण, पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र के चारों चरण और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का प्रथम चरण मिलाकर सिंह राशि तथा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के द्वितीयादि तीन चरण, हस्त के चारों चरण और चित्रा नक्षत्र के आदि के दो चरण मिलाकर कन्या राशि कहा गया है॥३॥

तुला और वृश्चिक राशिगत नक्षत्रपाद कथन

तौलिनि चित्रान्त्यार्धं स्वातिः पादत्रयं विशाखायाः ।
अलिनि विशाखापादस्तथानुराधान्विता ज्येष्ठा ॥४॥

भाषा—चित्रा नक्षत्र के अन्त से दो चरण; स्वाती नक्षत्र के चारों चरण और विशाखा नक्षत्र के आरम्भ से तीन चरण मिलाकर तुला राशि तथा विशाखा नक्षत्र के मात्र चौथा चरण, अनुराधा के चारों चरण और ज्येष्ठा के भी चारों चरण मिलाकर वृश्चिक राशि है॥४॥

धनु और मकर राशिगत नक्षत्रपाद कथन

मूलमषाढा पूर्वा प्रथमश्चाप्युत्तरांशको धन्वी ।
मकरस्तत्परिशेषं श्रवण: पूर्वं धनिष्ठार्धम् ।।५।।

माया—मूल नक्षत्र के चारों चरण, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र के भी चारों चरण और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के मात्र प्रथम चरण मिलाकर कुल नौ चरणों वाली धनुराशि तथा उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के द्वितीयादि तीन चरण, श्रवण नक्षत्र के चारों चरण और धनिष्ठा नक्षत्र के आरम्भ से दो चरण मिलाकर मकर राशि है।।५।।

कुम्भ और मीन राशिगत नक्षत्र पाद कथन

कुम्भोऽन्त्यधनिष्ठार्धं शतभिषगंशत्रयं च पूर्वाया: ।
भद्रपदाया: शेषं तथोत्तरा रेवती च झष: ।।६।।

माया—धनिष्ठा नक्षत्र के अन्त के दो चरण, शतभिषा के चारों चरण और पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के प्रारम्भ से तीन चरण मिलाकर कुल नौ चरण कुम्भ राशि तथा पूर्वाभाद्रपदा की चतुर्थचरण, उत्तराभापदा नक्षत्र के चारों चरण और रेवती नक्षत्र के भी चारों चरण मिलाकर कुल नौ चरणों वाली मीन राशि होती है।।६।।

सारांश में राशियों में नक्षत्र पाद प्रदर्शनार्थ कथन

अश्विनीपित्र्यमूलाद्या मेषसिंहहयादय: ।
विषमर्क्षास्त्रिवर्तन्ते पादवृद्ध्या यथोत्तरम् ।।७।।

माया—अश्विनी, मघा और मूल नक्षत्र के प्रथमपाद से क्रम से मेष, सिंह और धनु राशि का प्रारम्भ कहा गया है; परन्तु ये विषम संख्यक नक्षत्र अर्थात् तीसरे-तीसरे नक्षत्र में पाद वृद्धि करते हुए सम्पूर्ण होती हैं।।७।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां राशिविभागाविचारो नाम द्व्युत्तरशततमोऽध्याय: ।।१०२।।

□□□

अथ त्र्यधिकशततमोऽध्यायः-१०३

विवाहपटलविचारः

ग्रहयोग से द्वादशभावगत फल प्रदर्शन क्रम में सर्वप्रथम
क्रम से लग्नस्थ ग्रहों का फल कथन

मूर्तौ करोति दिनकृद्विधवां कुजश्च
राहुर्विपन्नतनयां रविजो दरिद्राम्।
शुक्रः शशाङ्कतनयश्च गुरुश्च साध्वी-
मायुःक्षयं प्रकुरुतेऽथ विभावरीशः ॥१॥

भाषा—जिसके विवाहकालिक लग्न में सूर्य या मंगल स्थित हो, तो विधवा, राहु हो तो नष्ट सन्तान वाली, शनि हो तो दरिद्र, शुक्र, बुध या गुरु स्थित होने पर साध्वी और चन्द्र रहने पर नष्ट आयु वाली स्त्री होती है॥१॥

द्वितीय भावस्थ ग्रहों का फल कथन

कुर्वन्ति भास्करशनैश्चरराहुभौमा
दारिद्र्यदुःखमतुलं नियतं द्वितीये।
वित्तेश्वरीमविधवां गुरुशुक्रसौम्या
नारीं प्रभूततनयां कुरुते शशाङ्कः ॥२॥

भाषा—जिसके विवाहकालिक में लग्न से द्वितीय भाव में सूर्य, शनि, राहु या मंगल स्थित हो, तो सदा अतिशय दारिद्र्य-दुःख से युत तथा गुरु, शुक्र या बुध हो तो धनवती, वैधव्यरहित तथा चन्द्र हो तो अधिक सन्तान वाली स्त्री होती है॥२॥

तृतीय भावगत ग्रहों का फल कथन

सूर्येन्दुभौमगुरुशुक्रबुधास्तृतीये
कुर्युः सदा बहुसुतां धनभागिनीं च।
व्यक्तां दिवाकरसुतः सुभगां करोति
मृत्युं ददाति नियमात् खलु सैंहिकेयः ॥३॥

भाषा—जिसके वैवाहिक लग्न से तृतीय भाव में सूर्य, चन्द्र, मंगल, गुरु, शुक्र या बुध हो तो अधिक सन्तान वाली और धन से युत; शनि हो तो कीर्ति से युत और सुभगा तथा राहु हो तो निश्चय रूप से मृत्यु को प्राप्त करने वाली स्त्री होती है॥३॥

चतुर्थ भावगत ग्रहों का फल कथन

स्वल्पं पयः स्रवति सूर्यसुते चतुर्थे
दौर्भाग्यमुष्णकिरणः कुरुते शशी च।

राहुः सपत्नमपि च क्षितिजोऽल्पवित्तं
दद्याद्भृगुः सुरगुरुश्च बुधश्च सौख्यम् ।।४।।

भाषा—जिसके वैवाहिक लग्न से चतुर्थ स्थान में शनि हो, उसके स्तनों से बहुत थोड़ा दूध निकलता है। सूर्य या चन्द्र हो तो भाग्यरहित, राहु हो तो सौत (सौतिन) वाली, मंगल हो तो अल्प धन वाली तथा शुक्र, बृहस्पति या बुध हो तो सुख भोगने वाली स्त्री होती है।।४।।

पञ्चम भावस्थ ग्रहों का फल कथन

नष्टात्मजां रविकुजौ खलु पञ्चमस्थे
चन्द्रात्मजो बहुसुतां गुरुभार्गवौ च।
राहुर्ददाति मरणं शनिरुग्ररोगं
कन्याविनाशमचिरात् कुरुते शशाङ्कः ।।५।।

भाषा—जब विवाहकाल में लग्न से पञ्चम स्थान में रवि या मंगल हो तो उसकी सन्तान मर जाती है। बुध, गुरु और शुक्र हो तो बहुत सन्तान, राहु हो तो मृत्यु, शनि हो तो कठोर रोग तथा चन्द्र हो तो शीघ्र ही कन्या का नाश करने वाला होता है।।५।।

षष्ठ भावस्थ ग्रहों का फल कथन

षष्ठाश्रिताः शनिदिवाकरराहुजीवाः
कुर्युः कुजश्च सुभगां श्वशुरेषु भक्ताम्।
चन्द्रः करोति विधवामुशना दरिद्रा-
मृद्धां शशाङ्कतनयः कलहप्रियां च ।।६।।

भाषा—जिसके विवाहकाल में लग्न से षष्ठ भाव में शनि, सूर्य, राहु, गुरु या मंगल हो श्वशुर की सेवा करने वाली, चन्द्र हो तो विधवा, शुक्र हो तो निर्धन तथा बुध हो तो धन से युत और कलहकारिणी स्त्री होती है।।६।।

सप्तम भावस्थ ग्रहों का फल कथन

सौरारजीवबुधराहुरवीन्दुशुक्राः
कुर्युः प्रसह्य खलु सप्तमराशिसंस्थाः।
वैधव्यबन्धनवधक्षयमर्थनाश-
व्याधिप्रवासमरणानि यथाक्रमेण ।।७।।

भाषा—जिसके विवाहकाल में लग्न से सप्तम भाव में शनि, मंगल, गुरु, बुध, राहु, सूर्य, चन्द्र या शुक्र हो तो क्रम से विधवा, बन्धन, विनाश, धननाश, व्याधि,

प्रवास और मृत्यु करता है अर्थात् सप्तम में शनि हो तो विधवा, मंगल हो तो बन्धन इत्यादि करता है।।७।।

अष्टम भावस्थ ग्रहों का फल कथन

स्थानेऽष्टमे गुरुबुधौ नियतं वियोगं
मृत्युं शशी भृगुसुतश्च तथैव राहुः ।
सूर्यः करोत्यविधवां सरुजां महीजः
सूर्यात्मजो धनवतीं पतिवल्लभां च ।।८।।

माया—जब वैवाहिक लग्न से अष्टम भाव में गुरु या बुध हो तो स्त्री का पति से वियोग, चन्द्र, शुक्र या राहु हो तो मृत्यु, सूर्य हो तो सौभाग्यवती, मंगल हो तो रुग्णा तथा शनि हो तो धन से युत और पतिवल्लभा स्त्री होती है।।८।।

नवम भावस्थ ग्रहों का फल कथन

धर्मे स्थिता भृगुदिवाकरभूमिपुत्रा
जीवश्च धर्मनिरतां शशिजस्त्वरोगाम् ।
राहुश्च सूर्यतनयश्च करोति बन्ध्यां
कन्याप्रसूतिमटनां कुरुते शशाङ्कः ।।९।।

माया—जिसके विवाहकाल में लग्न से नवम स्थान में शुक्र, सूर्य, मंगल या गुरु हो तो स्त्री को धर्म करने वाली, बुध हो तो नीरोग, राहु और शनि हो तो वन्ध्या तथा चन्द्र हो तो कन्या उत्पन्न करने वाली और घूमने वाली. होती है।।९।।

दशम भावस्थ ग्रहों का फल कथन

राहुर्नभःस्थलगतो विधवां करोति
पापे रतां दिनकरश्च शनैश्चरश्च ।
मृत्युं कुजोऽर्थरहितां कुलटां च चन्द्रः
शेषा ग्रहा धनवतीं सुभगां च कुर्युः ।।१०।।

माया—जिसके विवाहकालिक लग्न से दशम भाव में राहु बैठा हो, तो विधवा, सूर्य या शनि हो तो पाप करने वाली, मंगल हो तो मृत्यु, चन्द्र हो तो निर्धन और कुलटा तथा शेष ग्रह (बुध, गुरु और शुक्र) हो तो स्त्री धनवती और सुभगा होती है।।१०।।

एकादश भावस्थ ग्रहों का फल कथन

आये रविर्बहुसुतां सधनां शशाङ्कः
पुत्रान्वितां क्षितिसुतो रविजो धनाढ्याम् ।

आयुष्मतीं सुरगुरुः शशिजः समृद्धां
राहुः करोत्यविधवां भृगुरर्थयुक्ताम् ।।११।।

माया—जिसके विवाहकालिक लग्न से एकादश भाव में रवि हो तो बहुत पुत्र वाली, चन्द्र हो तो धन से युत, मंगल हो तो पुत्र से युत, शनि हो तो धनाढ्य, बृहस्पति हो तो बहुत दिन तक जीवित रहने वाली, बुध हो तो धन से युत, राहु हो तो पतियुक्त और शुक्र हो तो धन से युत स्त्री होती है।।११।।

द्वादश भावस्थ ग्रहों का फल कथन

अन्ते गुरुर्धनवतीं दिनकृद्दरिद्रां
चन्द्रो धनव्ययकरीं कुलटां च राहुः ।
साध्वीं भृगुः शशिसुतो बहुपुत्रपौत्रां
पानप्रसक्तहृदयां रविजः कुजश्च ।।१२।।

माया—जिसके विवाहकालिक लग्न से द्वादश भाव में गुरु हो तो धनवती, सूर्य हो तो निर्धन, चन्द्र हो तो बहुत खर्च करने वाली, राहु हो तो कुलटा, शुक्र हो तो साध्वी, बुध हो तो बहुत पुत्र वाली और शनि या मंगल हो तो मद्य आदि पान करने वाली स्त्री होती है।।१२।।

गोधूलिकाल की प्रशंसार्थ कथन

गोपैर्यष्ट्याहतानां खुरपुटदलिता या तु धूलिर्दिनान्ते
सोद्वाहे सुन्दरीणां विपुलधनसुतारोग्यसौभाग्यकर्त्री ।
तस्मिन् काले न चर्क्षं न च तिथिकरणं नैव लग्नं न योगः
ख्यातः पुंसां सुखार्थं शमयति दुरितान्युत्थितं गोरजस्तु ।।१३।।

माया—दिनान्त (सायं सन्ध्या) में ग्वालों के द्वारा यष्टि से ताड़ित और गायों के खुरों से खण्डित धूलि सुन्दरियों (स्त्रियों) के विवाह में अत्यधिक धन, पुत्र, आरोग्य और सौभाग्य प्रदान करने वाली होती है। उस गोधूलि काल में नक्षत्र, तिथि, करण, लग्न और योग का कुछ भी विचार नहीं करना चाहिये। पुरुषों के सुख के लिये वह काल कहा गया है तथा इस प्रकार उत्पन्न यह गायों की धूलि समस्त दुष्कृतों का नाश करने वाली मानी गई है।।१३।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां विवाहपटलविचारो नाम त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ।।१०३।।

□□□

अथ चतुरधिकशततमोऽध्यायः-१०४

ग्रहगोचरविचारः

सर्वप्रथम प्रसङ्गवश वर्णच्छन्द मे गणस्वरूप कथन

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो भादिगुरुश्च तथादिलघुर्यः ।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ।।

माया—जिसके तीनों गुरु हों वह मगण, जिसके तीनों लघु हों वह नगण, जिसके आदि गुरु और दो लघु हों वह भगण, जिसके आदि लघु और दो गुरु हो वह यगण, जिसके मध्य गुरु और आदि तथा अन्त में लघु हो वह जगण, जिसके मध्य में लघु और आदि तथा अन्त्य में गुरु हो वह रगण, जिसके अन्त्य में गुरु और आदि तथा मध्य में लघु हो वह सगण एवं जिसके अन्त में लघु और आदि तथा मध्य में गुरु हो वह तगण है।

गुरु एवं लघु लिखने की विधि—वक्र रेखा गुरु का चिह्न और सीधी रेखा लघु का चिह्न है तथा एक गुरु से 'ग' संज्ञा और एक लघु से 'ल' संज्ञा होती है।

यहाँ छन्द का प्रयोजन प्रदर्शनार्थ कथन

प्रायेण सूत्रेण विनाकृतानि प्रकाशरन्ध्राणि चिरन्तनानि ।
रत्नानि शास्त्राणि च योजितानि नवैर्गुणैर्भूषयितुं क्षमाणि ।।१।।

माया—यथा धागों से वर्जित, प्रकटित छिद्र वाले पुरातन रत्न नवीन धागों से योजित करने से प्रायः भूषित करने में समर्थ होता है, तथा ही सूत्र (अक्षररचनारूप वृत्तबन्ध) से वर्जित, प्रकटित दोष वाले, पुरातन, नवीन गुणों (सुन्दर वस्तु द्रव्य, वृत्तबन्धों) से योजित शास्त्र भी भूषित करने में समर्थ होता है।।१।।

मुख चपला छन्द से गोचर के कारणों का कथन

प्रायेण गोचरो व्यवहार्योऽवस्तत्फलानि वक्ष्यामि ।
नानावृत्तैरार्या मुखचपलत्वं क्षमध्वं नः ।।२।।

माया—बहुधा इस संसार में ग्रहगोचर का व्यवहार किया जाता है। इसलिये अनेक छन्दों के द्वारा उसके फलों को कहता हूँ। आर्यगण हमारे मुख-चापल्यता को क्षमा करें। यह आर्यावृत्तों के अन्तर्गत मुखचपला वृत्त है।।२।।

जघनचपला छन्द से अपनी नम्रमा प्रदर्शनार्थ कथन

माण्डव्यगिरं श्रुत्वा न मदीया रोचतेऽथवा नैवम् ।
साध्वी तथा न पुंसां प्रिया यथा स्याज्जघनचपला ।।३।।

माया—जिन्होंने माण्डव्य ऋषि की वाणी सुनी है, उनको मेरी वाणी अच्छी नहीं लगेगी अथवा इस तरह कहना भी उचित नहीं है; क्योंकि अपनी साध्वी स्त्री उस प्रकार पुरुषों को प्रिय नहीं लगती, जिस प्रकार जघनचपला (असाध्वी = वेश्या) प्रिय होती है।।३।।

शार्दूलविक्रीड़ित छन्द से ग्रहो का गोचन फल कथन

सूर्यः षट्त्रिदशस्थितस्त्रिदशषट्सप्ताद्यगश्चन्द्रमा
जीवः सप्तनवद्विपञ्चमगतो वक्रार्कजौ षट्त्रिगौ।
सौम्यः षड्द्विचतुर्दशाष्टमगतः सूर्येऽप्युपान्ते शुभाः
शुक्रः सप्तमषड्दशर्क्षसहितः शार्दूलवत् त्रासकृत् ।।४।।

माया—जिसके जन्मराशि से छठी, तीसरी या दशवीं राशि में सूर्य; तीसरी, दशवीं, छठी, सातवीं या पहली राशि में चन्द्रमा; सातवीं, नवीं, दूसरी या पाँचवीं राशि में गुरु; छठी या तीसरी राशि में मंगल और शनि; छठी, दूसरी, चौथी, दशवीं या आठवीं राशि में बुध तथा ग्यारहवीं राशि में सभी ग्रह शुभ होते हैं। सातवीं, छठी और दशवीं राशि स्थित शुक्र सिंह की तरह भय करने वाला होता है। यह शार्दूलविक्रीडित छन्द द्वारा अभिव्यक्त हुआ है।।४।।

स्रग्धरा छन्द से जन्म राशि आदि में स्थित सूर्य फल कथन

जन्मन्यायासदोऽर्कः क्षपयति विभवान् कोष्ठरोगाध्वदाता
वित्तभ्रंशं द्वितीये दिशति च न सुखं वञ्चनां दृग्रुजं च।
स्थानप्राप्तिं तृतीये धननिचयमुदा कल्यकृच्चारिहर्ता
रोगान् दत्ते चतुर्थे जनयति च मुहुः स्रग्धराभोगविघ्नम् ।।५।।

माया—जिसके सूर्य जन्मराशि में हो तो उपद्रव, धन का नाश, पेट का रोग और मार्ग में भ्रमण; द्वितीय राशि में हो, तो धन का नाश, दुखी, समस्त कार्यों का नाश और नेत्ररोग; तृतीय राशि में हो तो स्थान लाभ, धन-समूह से युत, आनन्दसम्पन्न और शत्रु का नाश तथा चतुर्थ राशि में सूर्य हो तो रोग और माला को धारण करने वाली स्त्री के उपभोग में बार-बार विघ्न उत्पन्न करने वाला होता है। यह स्रग्धरा छन्द है।।५।।

सुवदना छन्द से पाँचवीं आदि राशियों में स्थित सूर्य का फल कथन

पीडाः स्युः पञ्चमस्थे सवितरि बहुशो रोगारिजनिताः
षष्ठेऽर्को हन्ति रोगान् क्षपयति च रिपून् शोकांश्च नुदति।
अध्वानं सप्तमस्थो जठरगदभयं दैन्यं च कुरुते
रुक्त्रासौ चाष्टमस्थे भवति सुवदना न स्वापि वनिता ।।६।।

माया—जिसके सूर्य जन्मराशि से पञ्चम राशि में हो तो रोग और शत्रु-जनित बहुत प्रकार की पीड़ा; षष्ठ में हो तो रोग, शत्रु और शोक का नाश; सप्तम में हो तो मार्ग में भ्रमण, पेट के रोग का भय और दु:खी तथा अष्टम में हो तो रोग और भय करने वाला होता है एवं अपनी स्त्री भी सुवदना (अच्छी तरह बात) नहीं करती है। यह सुवदना छन्द है।।६।।

सुवृत्त नामक छन्द से नौवीं आदि राशिगत सूर्यफल कथन

रवावापद्दैन्यं रुगिति नवमे वित्तचेष्टाविरोधो
जयं प्राप्नोत्युग्रं दशमगृहगे कर्मसिद्धिं क्रमेण।

जयस्थानं मानं विभवमपि चैकादशे रोगनाशं
सुवृत्तानां चेष्टा भवति सफला द्वादशे नेतरेषाम् ।।७।।

भाषा—जिसके सूर्य जन्मराशि से नवम राशि में हो तो आपत्ति, दीनता और धन के प्रयोग आदि से विघ्न; दशम में हो तो कठिन विजय और कार्य की सिद्धि; एकादश में हो तो विजय, स्थानलाभ, पूजा और रोग का नाश तथा द्वादश राशि में हो तो सुन्दर स्वभाव वालों की क्रिया फलवती होती है, दुर्जनों की नहीं। यह सुवृत्ता छन्द है।।७।।

शिखरिणी छन्द से जन्म आदि राशिगत चन्द्र का फल कथन

शशी जन्मन्यन्नप्रवरशयनाच्छादनकरो
द्वितीये मानार्थान् ग्लपयति सविघ्नश्च भवति ।
तृतीये वस्त्रस्त्रीधनविजयसौख्यानि लभते
चतुर्थेऽविश्वासः शिखरिणि भुजङ्गेन सदृशः ।।८।।

भाषा—जिसके चन्द्रमा जन्मराशि में हो तो अन्न, उत्तम शय्या और वस्त्रप्रद होता है। द्वितीय में हो तो पूजा और धन का नाश तथा विघ्न करता है। तृतीय में हो तो वस्त्र, धन, विजय और सुख का लाभ कराने वाला होता है तथा जिसके चतुर्थ राशि में चन्द्र हो, उसको शिखरी (पर्वत) पर सर्प की तरह सब पर अविश्वास रहता है। यह शिखरिणी छन्द है।।८।।

मन्दाक्रान्ता छन्द से पाँचवीं आदि राशिगत चन्द्र का फल कथन

दैन्यं व्याधिं शुचमपि शशी पञ्चमे मार्गविघ्नं
षष्ठे वित्तं जनयति सुखं शत्रुरोगक्षयं च ।
यानं मानं शयनमशनं सप्तमे वित्तलाभं
मन्दाक्रान्ते फणिनि हिमगौ चाष्टमे भीर्न कस्य ।।९।।

भाषा—जिसके चन्द्रमा जन्मराशि से पञ्चम राशि में हो तो दीनता, रोग, शोक और मार्ग में विघ्न करता है। षष्ठ में हो तो धन और सुख को उत्पन्न तथा शत्रु और रोग का नाश करता है। सप्तम में होकर वाहन, पूजा, शय्या, भोजन और धन प्रदान करता है। अष्टम राशि में होकर विना प्रयत्न ग्रहण किया हुआ सर्प किसको भय नहीं करता है? अर्थात् सबको भय करता है, अत: अष्टम राशि स्थित चन्द्र भी सबको भय करता है। यह मन्दाक्रान्ता छन्द है।।९।।

वृषभचरित छन्द से नौवीं आदि राशिगत चन्द्र का फल कथन

नवमगृहगो बन्धोद्वेगश्रमोदररोगकृद्
दशमभवने चाज्ञाकर्मप्रसिद्धिकरः शशी ।

उपचयसुहृत्संयोगार्थप्रमोदमुपान्त्यगो
वृषभचरितान् दोषानन्त्ये करोति च सव्ययान् ।।१०।।

माया—जिसके चन्द्रमा नवम राशि में स्थित हो तो बन्धन, उद्वेग, खेद और उदर रोग होता है। दशम में हो तो प्रभुता और कर्म की सिद्धि होती है। एकादश में हो तो धन की वृद्धि, मित्र के साथ समागम और धन का प्रमोद सम्भव होता है तथा द्वादश राशि में चन्द्र हो तो धन की क्षति और बैल के सींग, खुर आदि से पीड़ित होता है। यह वृषभचरित छन्द है।।१०।।

उपेन्द्रवज्रा छन्द से जन्मराशि और दूसरी राशिगत मङ्गल का फल

कुजेऽभिघात: प्रथमे द्वितीये नरेन्द्रपीडाकलहारिदोषै: ।
भृशं च पित्तानलचौररोगैरुपेन्द्रवज्रप्रतिमोऽपि य: स्यात् ।।११।।

माया—जिसके जन्मराशि में मंगल हो तो उपद्रव और द्वितीय में हो तो राजपीड़ा, कलहदोष, शत्रुदोष, धातुदोष, अग्नि, चोर, रोग आदि इन्द्रवज्र-सम कठोर मनुष्य को भी अतिशय उपघात करने वाला होता है। यह उपेन्द्रवज्रा छन्द है।।११।।

उपजाति छन्द से तृतीय राशिस्थ मङ्गल का फल कथन

तृतीयगश्चौरकुमारकेभ्यो भौम: सकाशात् फलमादधाति ।
प्रदीप्तिमाज्ञां धनमौर्णिकानि धात्वाकराख्यानि किलापराणि ।।१२।।

माया—मंगल तृतीय राशि में होकर चोर और कुमारों (अष्टवर्षीय बालकों) से फल, आदेश, धन, ऊनी वस्त्र, खान से उत्पन्न द्रव्य और अन्य द्रव्यों का भी लाभ प्रदान करने वाला होता है। यह उपजाति छन्द है।।१२।।

प्रसभ छन्द से चौथी राशिगत मङ्गल का फल कथन

भवति धरणिजे चतुर्थगे ज्वरजठरगदासृगुद्भव: ।
कुपुरुषजनिताच्च सङ्गमात् प्रसभमपि करोति चाशुभम् ।।१३।।

माया—मंगल चतुर्थ राशि में स्थित होकर ज्वर, उदररोग, रक्तविकार और निन्दित पुरुष के साथ समागम से दृढ़तापूर्वक अशुभ करने वाला होता है। यह प्रसभ छन्द है।।१३।।

मालती छन्द से पाँचवीं राशि में स्थित मंगल का फल कथन

रिपुगदकोपभयानि पञ्चमे तनयकृताश्च शुचो महीसुते ।
द्युतिरपि नास्य चिरं भवेत्स्थिरा शिरसि कपेरिव मालती यथा ।।१४।।

माया—जब मंगल जन्मराशि से पञ्चम राशि में स्थित हो तो शत्रु, रोग, क्रोध, भय और पुत्र के द्वारा शोक युक्त करने वाला होता है तथा जिस प्रकार बन्दर के

शिर पर मालती-पुष्प अधिक देर तक स्थिर नहीं रहता है, उसी प्रकार उस मनुष्य की कान्ति भी वहुत देर तक स्थिर नहीं रहती है। यह मालती छन्द है॥१४॥

अपरवक्त्रा छन्द से छठी राशिगत मङ्गल का फल कथन

रिपुभयकलहैर्विवर्जितः सकनकविद्रुमताम्रकामगः।
रिपुभवनगते महीसुते किमपरवक्त्रविकारमीक्षते ॥१५॥

माया—जिसकी जन्मराशि से षष्ठ स्थान में मंगल हो तो शत्रुभय और कलह से रहित, सुवर्ण, प्रवाल और ताम्बे का लाभ करने वाला होता है तथा उसको निश्चय ही दूसरे मनुष्य का मुखविकार कभी नहीं देखना पड़ता है। यह अपरवक्त्रा छन्द है॥१५॥

विलम्बितगति छन्द से सातवीं आदि राशिगत मङ्गल का फल कथन

कलत्रकलहाक्षिरुग्जठररोगकृत् सप्तमे
क्षरत्क्षतजरूक्षितः क्षपितवित्तमानोऽष्टमे।
कुजे नवमसंस्थिते परिभवार्थनाशादिभि-
र्विलम्बितगतिर्भवत्यवलदेहधातुक्लमैः ॥१६॥

माया—जिसकी जन्मराशि से सप्तम स्थान में मंगल हो तो उसे स्त्री के साथ विरोध, नेत्ररोग और उदररोग होता है। अष्टम में हो तो निकलते हुये रुधिर से विवर्ण शरीर, धन और मान का नाश करता है। जिसके नवम में मंगल हो, तो वह पराभव, अर्थनाश आदि से शरीर में निर्बलता और धातुओं के क्षय से मन्दगतिक हो जाता है। यह विलम्बितगति छन्द है॥१६॥

पुष्पिताग्र छन्द से दशम और एकादश राशिगत मङ्गल का फल कथन

दशमगृहगते समं महीजे विविधधनाप्तिरुपान्त्यगे जयश्च।
जनपदमुपरि स्थितश्च भुङ्क्ते वनमिव षट्चरणः सुपुष्पिताग्रम् ॥१७॥

माया—जिसकी जन्मराशि से दशम स्थान में मंगल हो तो मध्यम फल और एकादश में हो तो अनेक प्रकार के धन की प्राप्ति और जय होती है तथा पुष्पित अग्रभाग वाले वृक्षों से युत वन में भ्रमर की तरह लोगों में प्रधान होकर भोग करने वाला होता है। यह सुपुष्पिताग्र छन्द है॥१७॥

इन्द्रवंशा छन्द से द्वादश राशिगत मङ्गल का फल कथन

नानाव्ययैर्द्वादशगे महीसुते सन्ताप्यतेऽनर्थशतैश्च मानवः।
स्त्रीकोपपित्तैश्च सनेत्रवेदनैर्योऽपीन्द्रवंशाभिजनेन गर्वितः ॥१८॥

माया—यदि जन्मराशि से व्ययस्थान में मंगल हो, तो मनुष्य इन्द्र के वश में उत्पत्ति

के गर्व से युत होने पर भी अनेक प्रकार के खर्च, अनेक प्रकार के उपद्रव, स्त्री के ऊपर क्रोध, पित्त और नेत्ररोगों से पीड़ित होता है अर्थात् उच्च कुल में उत्पन्न मनुष्य भी अनेक प्रकार के खर्च आदि से संपीड़ित होता है। यह इन्द्रवंशा छन्द है॥१८॥

स्वागता छन्द से जन्म राशिगत बुध फल कथन

दुष्टवाक्यपिशुनाहितभेदैर्बन्धनैः सकलहैश्च हतस्वः ।
जन्मगे शशिसुते पथि गच्छन् स्वागतेऽपि कुशलं न शृणोति ॥१९॥

माया—यदि जन्मराशि में बुध हो, तो मनुष्य कठोर वाक्य, चुगलखोरी, शत्रुता और आपसी भेद से नष्ट धन वाला होता है तथा उसके शुभागमन में भी कुशलवार्त्ता कोई नहीं सुनता है। यह स्वागता छन्द है॥१९॥

द्रुतपद छन्द से द्वितीय और तृतीय राशिगत बुध का फल कथन

परिभवो धनगते धनलब्धिः सहजगे शशिसुते हृदयाप्तिः ।
नृपतिशत्रुभयशङ्कितचित्तो द्रुतपदं व्रजति दुश्चरितैः स्वैः ॥२०॥

माया—जिसकी जन्मराशि से द्वितीय में बुध हो तो अनादर की प्राप्ति और धन का लाभ तथा तृतीय राशि में हो, तो मित्र का लाभ, राजा और शत्रु के भय से शङ्कित होकर अपने दुश्चरित्रों के कारण भागने वाला होता है। यह द्रुतपद छन्द है॥२०॥

रुचिरा छन्द से चतुर्थ और पञ्चम राशिगत बुध का फल कथन

चतुर्थगे स्वजनकुटुम्बवृद्धयो धनागमो भवति च शीतरश्मिजे ।
सुतस्थिते तनयकलत्रविग्रहो निषेवते न च रुचिरामपि स्त्रियम् ॥२१॥

माया—जिसकी जन्मराशि से चतुर्थ में बुध हो तो अपने जन और बन्धुओं की वृद्धि एवं धन की प्राप्ति करने वाला होता है। पञ्चम में हो तो पुत्र और स्त्री के साथ कलह और अपने उद्वेग के कारण सुन्दरी स्त्री का भी उपभोग नहीं कर पाने वाला होता है। यह रुचिरा छन्द है॥२१॥

प्रहर्षिणी छन्द से छठी आदि राशिगत बुध का फल कथन

सौभाग्यं विजयमथोन्नतिं च षष्ठे वैवर्ण्यं कलहमतीव सप्तमे ज्ञः ।
मृत्युस्थे जयसुतवस्त्रवित्तलाभा नैपुण्यं भवति मतिप्रहर्षणीयम् ॥२२॥

माया—जिसकी जन्मराशि से छठी राशि में बुध हो तो सौभाग्य, विजय और उन्नति कराने वाला होता है। सातवीं राशिगत बुध हो तो विवर्णता और कलह कराने वाला होता है। आठवीं राशि में हो तो विजय, पुत्र, वस्त्र और धन का लाभ तथा हर्षित करने वाली निपुणता का लाभ कराने वाला होता है। यह प्रहर्षणी छन्द है॥२२॥

दोधक छन्द से नौवीं और दशवी राशिगत वुध का फल कथन

विघ्नकरो नवमः शशिपुत्रः कर्मगतो रिपुहा धनदश्च ।
सप्रमदं शयनं च विधत्ते तद्गृहदोऽथकथां स्तरणं च ।।२३।।

माया—जिसकी जन्म राशि से नौवीं राशि में बुध हो तो विघ्नकारक तथा दशवीं राशि में हो तो शत्रुनाशक, धन देने वाला तथा स्त्री, शय्या, स्त्री के सोने का सुन्दर गृह, ऐतिहासिक वार्त्ता और सुन्दर स्तरण (बिछौना) देता है। यह दोधक छन्द है।।२३।।

मालिनी छन्द से ग्यारहवीं और बारहवीं राशिगत बुध फल कथन

धनसुतसुखयोषिन्मित्रवाहाप्तितुष्टि-
स्तुहिनकिरणपुत्रे लाभगे मृष्टवाक्यः ।
रिपुपरिभवरोगैः पीडितो द्वादशस्थे
न सहति परिभोक्तुं मालिनीयोगसौख्यम् ।।२४।।

माया—जिसकी जन्मराशि से ग्यारहवीं राशि में बुध स्थित हो तो धन, पुत्र, सुख, स्त्री, मित्र तथा वाहन की प्राप्ति करने वाला, सन्तुष्ट और मधुर बोलने वाला होता है। जिसकी बारहवीं राशि में बुध हो तो शत्रु, अनादर और रोग से पीड़ित होता है तथा माला धारण करने वाली स्त्री के संगम का सुख भोगने के लिये समर्थ नहीं होता है। यह मालिनी छन्द है।।२४।।

भ्रमर विलासिता से जन्मराशि और दूसरी राशिगत गुरु फल कथन

जीवे जन्मन्यपगतधनधीः स्थानभ्रष्टो बहुकलहयुतः ।
प्राप्यार्थेऽर्थान् व्यरिरपि कुरुते कान्तास्याब्जे भ्रमरविलसितम् ।।२५।।

माया—जब जन्मराशि में बृहस्पति हो, तो उसके धन और बुद्धि का नाश, स्थान का नाश तथा अनेक प्रकार के विरोध से युत होता है। जिसके द्वितीय राशि में बृहस्पति हो, तो धनों को प्राप्त करके शत्रुरहित होकर स्त्री के मुखकमल पर भ्रमर की तरह विलास करने वाला होता है। यह भ्रमरविलसिता छन्द है।।२५।।

मत्तमयूर छन्द से तीसरी और चौथी राशिगत गुरु फल कथन

स्थानभ्रंशात् कार्यविघाताच्च तृतीयेऽ-
नेकैः क्लेशैर्बन्धुजनोत्थैश्च चतुर्थे ।
जीवे शान्तिं पीडितचित्तश्च स विन्देद्
नैव ग्रामे नापि वने मत्तमयूरे ।।२६।।

माया—जब जन्मराशि से तीसरे स्थान में गुरु स्थित हो, तो मनुष्य स्थान की हानि और कार्यों को क्षति से सम्पीडित धनवान् होता है तथा चौथी राशि में होने से

अनेक प्रकार के क्लेशों और बन्धुओं से पीड़ा युक्त चित्त वाला होता है, जिससे न गाँव या नगर में और न मतवाले मयूरों से युक्त वन में भी उसको शान्ति की प्राप्ति होती है॥२६॥

मणिगुणनिकर छन्द से पाँचवी राशिगत गुरु का फल कथन

जनयति च तनयभवनमुपगतः परिजनशुभसुतकरितुरगवृषान् ।
सकनकपुरगृहयुवतिवसनकृन्मणिगुणनिकरकृदपि विबुधगुरुः ॥२७॥

भाषा—जिसकी जन्म राशि से पञ्चम राशिगत बृहस्पति परिजन, धर्मादि, पुत्र, हाथी, घोड़ा और बैल का लाभ के साथ सुवर्ण, नगर, गृह, स्त्री, वस्त्र और मणियों के समूहों का भी लाभ कराने वाला होता है। यह मणिगुणनिकर छन्द है॥२७॥

हरिणप्लुत छन्द से षष्ठ राशिस्थ गुरु फल कथन

न सखीवदनं तिलकोज्ज्वलं न च वनं शिखिकोकिलनादितम् ।
हरिणप्लुतशावविचित्रितं रिपुगते मनसः सुखदं गुरौ ॥२८॥

भाषा—जब जन्म राशि से छठे स्थान में बृहस्पति हो, तो उसके गृह में सखी का मुख तिलक से उज्ज्वल नहीं होता तथा मयूर और कोकिलों से शब्दायमान, मृगों के कूदने-फाँदने से और हरिण शिशुओं से रम्य वन भी उसके मन के लिये आनन्ददायक नहीं होता है। यह हरिणप्लुत छन्द है॥२८॥

ललित पद छन्द से सातवीं राशिगत गुरु फल कथन

त्रिदशगुरुः शयनं रतिभोगं धनमशनं कुसुमान्युपवाह्यम् ।
जनयति सप्तमराशिमुपेतो ललितपदां च गिरं धिषणां च ॥२९॥

भाषा—जिसका बृहस्पति सातवीं राशि में स्थित हो तो शय्या, सुरतिभोग, धन, भोजन, वाहन तथा ललित पद वाली वाणी और बुद्धि करने वाला होता है। यह ललितपद छन्द है॥२९॥

शालिनी छन्द से आठवीं और नौवीं राशिगत गुरु फल कथन

बन्धं व्याधिं चाष्टमे शोकमुग्रं मार्गक्लेशान् मृत्युतुल्यांश्च रोगान् ।
नैपुण्याज्ञापुत्रकर्मार्थसिद्धिं धर्मे जीवः शालिनीनां च लाभम् ॥३०॥

भाषा—जिसकी जन्मराशि से अष्टम राशि में बृहस्पति हो तो बन्धन, पीड़ा, कठोरता, शोक, मार्ग में क्लेश और मृत्यु तुल्य रोग करने वाला होता है। यदि वह नवम राशि में हो तो समस्त कार्यों में निपुणता, आदेश, पुत्र, कार्य और अर्थ की सिद्धि तथा धान्ययुत भूमि का लाभ कराने वाला होता है। यह शालिनी छन्द है॥३०॥

रथोद्धता छन्द से दशवी आदि राशिगत गुरु फल कथन

स्थानकल्यधनहा दशर्क्षगस्तत्प्रदो भवति लाभगो गुरुः ।
द्वादशेऽध्वनि विलोमदुःखभाग् याति यद्यपि नरो रथोद्धतः ।।३१।।

भाषा—जिसकी जन्म राशि से दशम राशि में स्थित बृहस्पति स्थान, आरोग्य और धन का नाश करने वाला होता है। एकादश राशि में स्थित बृहस्पति स्थान, आरोग्य और धन को देने वाला होता है। द्वादश राशि में स्थित बृहस्पति हो तो रथ पर भी चढ़ा हुआ मनुष्य मार्ग में कुपथ गमनवश दुःख भोगने वाला होता है। यह रथोद्धता छन्द है।।३१।।

विलासिनी छन्द से जन्म राशिगत शुक्र फल कथन

प्रथमगृहोपगो भृगुसुतः स्मरोपकरणैः
सुरभिमनोज्ञगन्धकुसुमाम्बरैरुपचयम् ।
शयनगृहासनाशनयुतस्य चानुकुरुते
समदविलासिनीमुखसरोजषट्चरणताम् ।।३२।।

भाषा—जिसकी जन्मराशि में स्थित शुक्र कामदेव के उपकरणों (शयन, भूषण, आच्छादन, अनुलेपन, गीत, वाद्य और नृत्यों), चित्ताह्लादक, सुगन्ध द्रव्य, पुष्प, वस्त्र आदि से लाभ कराने वाला होता है तथा शय्या, गृह, आसन और भोजनों से सम्पन्न मनुष्य को मद्यपान से मतवाली विलासिनी स्त्री के मुखकमल पर भ्रमर के समान होने का अनुभव कराने वाला होता है। यह विलासिनी छन्द है।।३२।।

वसन्ततिलका छन्द से दूसरी राशि गत शुक्र फल कथन

शुक्रे द्वितीयगृहगे प्रसवार्थधान्य-
भूपालसन्नतकुटुम्बहितान्यवाप्य ।
संसेवते कुसुमरत्नविभूषितश्च
कामं वसन्ततिलकद्युतिमूर्धजोऽपि ।।३३।।

भाषा—जिसकी जन्म राशि से द्वितीय राशि में शुक्र हो तो सन्तान, धन, धान्य, राजप्रियता और बन्धुओं से हित कार्यों को लब्ध कर पुष्प और रत्नों से विभूषित हुआ वसन्ततिलका वृक्ष के पुष्प समान अति श्वेत बाल हो जाने पर भी कामदेव की सेवा करने वाला होता है। यह वसन्ततिलका छन्द है।।३३।।

इन्द्रवज्रा छन्द से तीसरी और चौथी राशिगत शुक्र फल कथन

आज्ञार्थमानास्पदभूतिवस्त्रशत्रुक्षयान् दैत्यगुरुस्तृतीये ।
दत्ते चतुर्थश्च सुहृत्समाजं रुद्रेन्द्रवज्रप्रतिमाश्च शक्तिम् ।।३४।।

भाषा—जिसकी जन्म राशि में तृतीय राशिगत शुक्र प्रभुत्व, धन, मान, स्थान,

समृद्धि, वस्त्र और शत्रु का नाश करने वाला होता है। चतुर्थ राशिगत शुक्र के होने पर मित्रों के साथ समागम तथा शिव, इन्द्र और वज्र की तरह शक्ति प्रदाता होता है। यह इन्द्रवज्रा छन्द है।।३४।।

अनवसिता छन्द से पाँचवी राशिगत शुक्र फल कथन

जनयति शुक्रः पञ्चमसंस्थो गुरुपरितोषं बन्धुजनाप्तिम्।
सुतधनलब्धिं मित्रसहायानवसितत्वं चारिबलेषु ।।३५।।

माया—जिसकी जन्म राशि में पञ्चम राशिगत शुक्र हो, वह अधिक सन्तोष, बन्धुओं की प्राप्ति, पुत्र और धन का लाभ तथा शत्रु के सैन्यों में अनवस्थिति करने वाला होता है। यह अनवसिता छन्द है।।३५।।

लक्ष्मी छन्द से छठी आदि राशिगत शुक्र फल कथन

षष्ठो भृगुः परिभवरोगतापदः स्त्रीहेतुकं जनयति सप्तमोऽशुभम्।
यातोऽष्टमं भवनपरिच्छदप्रदो लक्ष्मीवतीमुपनयति स्त्रियं च सः ।।३६।।

माया—जिसकी जन्म राशि में षष्ठ राशिगत हो, वह शुक्र अनादर, रोग और सन्ताप सहन करता है। सप्तम राशिगत शुक्र स्त्री के सम्बन्ध को लेकर अनिष्टकारी होता है। अष्टम राशिगत शुक्र गृह और वस्त्र देने वाला तथा लक्ष्मीवती स्त्री का सुख लाभ प्रदान करने वाला होता है। यह लक्ष्मी छन्द है।।३६।।

प्रतिमाक्षरा छन्छ से नौवीं और दशवीं राशिगत शुक्र फल कथन

नवमे तु धर्मवनितासुखभाग् भृगुजेऽर्थवस्त्रनिचयश्च भवेत्।
दशमेऽवमानकलहान् नियमात् प्रमिताक्षराण्यपि वदन् लभते ।।३७।।

माया—जिसकी नौवीं राशि में शुक्र स्थित हो, तो वह धर्म, स्त्री और सुख का भोक्ता तथा धन और वस्त्रों से सम्पन्न होता है। जिसके दशम राशिगत शुक्र हो, तो वह मनुष्य परिमित वक्तव्य सम्पन्न होकर भी अपमान और कलह का शिकार होता है। यह प्रमिताक्षरा छन्द है।।३७।।

स्थिर छन्द से ग्यारहवीं और बारहवीं राशिगत शुक्र फल कथन

उपान्त्यगो भृगोः सुतः सुहृद्धनान्नगन्धदः।
धनाम्बरागमोऽन्त्यगः स्थिरस्तु नाम्बरागमः ।।३८।।

माया—जन्म राशि से एकादश राशिगत शुक्र मित्र, धन, अन्न और सुगन्ध द्रव्य देने वाला तथा द्वादश राशिगत शुक्र धन और वस्त्रों का लाभ कराने वाला होता है; किन्तु वस्त्र का लाभ स्थिर नहीं रहता। यह स्थिर छन्द है।।३८।।

तोटक छन्द से जन्म राशिगत शनि फल कथन

प्रथमे रविजे विषवह्निहतः स्वजनैर्वियुतः कृतबन्धुवधः।
परदेशमुपैत्यसुहृद्भवनो विमुखार्थसुतोऽटकदीनमुखः ।।३९।।

माया—जिसकी जन्मराशि में शनि हो वह विष और अग्नि से पीड़ित, बन्धुओं से रहित, बन्धु का वध करने वाला, परदेश में रहने वाला, मित्र और गृह से रहित, धन और पुत्र से रहित, भ्रमणशील तथा दीन मुखाकृति वाला होता है। यह तोटक छन्द है॥३९॥

वंशपत्रपतित छन्द से दूसरी राशिगत शनि फल कथन

चारवशाद् द्वितीयगृहगे दिनकरतनये
रूपसुखापवर्जिततनुर्विगतमदवलः ।
अन्यगुणैः कृतं वसुचयं तदपि खलु भव-
त्यम्ब्विव वंशपत्रपतितं न वहु न च चिरम् ॥४०॥

माया—जिसके चारवश जन्मराशि से द्वितीय राशि में शनि हो, तो वह रूप तथा सुख से हीन शरीर वाला, अहंकारहीन और निर्वल होता है। दूसरे विद्या आदि गुणों से धन को इकट्ठा करने पर भी वंशपत्र पर पतित जलबिन्दु के समान वह पर्याप्त नहीं होता और अधिक समय तक नहीं ठहरता। यह वंशपत्रपतित छन्द है॥४०॥

ललिता छन्द से तीसरी राशिगत शनि फल कथन

सूर्यसुते तृतीयगृहगे धनानि लभते
दासपरिच्छदोष्ट्रमहिषाश्वकुञ्जरखरान् ।
सद्मविभूतिसौख्यममितं गदव्युपरमं
भीरुरपि प्रशास्त्यधिरिपूंश्च वीरललितैः ॥४१॥

माया—जिसके तीसरी राशि में शनि हो वह धन, भृत्य, परिवार, ऊँट, भैंस, घोड़ा, हाथी, गदहा, गृह, ऐश्वर्य, अति सौख्य और आरोग्य-लाभ से सम्पन्न होता है तथा डरपोक होने पर भी वीर चरित्रों के द्वारा प्रबल शत्रु को भी अपने वश में करता है। यह ललिता छन्द है॥४१॥

भुजङ्गप्रयात छन्द से चौथी राशिगत शनि फल कथन

चतुर्थं गृहं सूर्यपुत्रेऽभ्युपेते सुहृद्वित्तभार्यादिभिर्विप्रयुक्तः ।
भवत्यस्य सर्वत्र चासाधु दुष्टं भुजङ्गप्रयातानुकारञ्च चित्तम् ॥४२॥

माया—जिसके चौथी राशि में शनि हो, तो वह मित्र, धन, स्त्री आदि से हीन तथा उसका चित्त सर्वत्र असाधु, दुष्ट और भुजङ्ग (सर्प) के प्रयात (गमन) का अनुसरण करने वाला (अति कुटिल) होता है। यह भुजङ्गप्रयात छन्द है॥४२॥

पुटा छन्द से पाँचवीं और छठी राशिगत शनि फल कथन

सुतधनपरिहीणः पञ्चमस्थे प्रचुरकलहयुक्तश्चार्कपुत्रे ।
विनिहतरिपुरोगः षष्ठयाते पिबति च वनितास्यं श्रीपुटोष्ठम् ॥४३॥

माया—जिसके पाँचवीं राशिगत शनि हो वह पुत्र तथा धनों से रहित और कलहों से युत होता है। छठी राशिगत शनि हो तो शत्रुहीन, नीरोग और सुन्दर ओठों से युत स्त्री के मुख का पान करने वाला होता है। यह पुटा छन्द है॥४३॥

वैश्वदेवी छन्द से सातवीं आदि राशिगत शनि फल कथन

गच्छत्यध्वानं सप्तमे चाष्टमे च हीनः स्त्रीपुत्रैः सूर्यजे दीनचेष्टः।
तद्वद्धर्मस्थे वैरहृद्रोगबन्धैर्धर्मोऽप्युच्छिद्येद् वैश्वदेवीक्रियाद्यः॥४४॥

माया—जिसकी जन्मराशि से सप्तम या अष्टम गृहगत शनि हो, वह मार्ग में गमन करने वाला तथा स्त्री, पुत्र से रहित और दीन हीन चेष्टा से युत होता है। नवम राशिगत शनि हो तो पूर्ववत् फल होता है तथा द्वेष और हृदय के रोग से उसका वैश्वदेवी क्रिया आदि धर्म नष्ट होता है। यह वैश्वदेवी छन्द है॥४४॥

ऊर्मिमाला छन्द से दशवीं आदि राशिगत शनि फल कथन

कर्मप्राप्तिर्दशमेऽर्थक्षयश्च विद्याकीर्त्योः परिहानिश्च सौरे।
तैक्ष्ण्यं लाभे परयोषार्थलाभश्चान्त्ये प्राप्नोत्यपि शोकोर्मिमालाम्॥४५॥

माया—जन्म राशि से दशम राशिगत शनि के होने पर कर्म का लाभ तो होता है, लेकिन धन, विद्या और कीर्ति का नाश होता है। एकादश राशि में शनि के होने पर कठोर स्वभाव तथा दूसरे की स्त्री और धन का लाभ करने वाला होता है। द्वादश राशि में शनि के होने पर शोक की ऊर्मि (तरंगों) की माला रूप समूह की प्राप्ति होती है। यह ऊर्मिमाला छन्द है॥४५॥

वितान छन्द से सभी जीवों के गोचर फलों में भेद के कारण का कथन

अपि कालमपेक्ष्य च पात्रं शुभकृद्विदधात्यनुरूपम्।
न मधौ बहु कं कुडवे वा विसृजत्यपि मेघवितानः॥४६॥

माया—जिस प्रकार वसन्तकाल में मेघसमूह से बहुत जल की वृष्टि होने पर भी कुडव (प्रस्थांघ्रितुल्य पात्र) में बहुत जल नहीं होता है, उसी प्रकार शुभ करने वाला ग्रह काल और पात्र के अनुसार फल प्रदान करता है। यह वितान छन्द है॥४६॥

भुजङ्गविजृम्भित छन्द से अशुभकारक ग्रहशान्ति कथन

रक्तैः पुष्पैर्गन्धैस्ताम्रैः कनक
कनकवृषबकुलकुसुमैर्दिवाकरभूसुतौ
भक्त्या पूज्याविन्दुर्धेन्वा सितकुसुमर-
जतमधुरैः सितश्च मदप्रदैः।

कृष्णद्रव्यैः सौरिः सौम्यो मणिरजत-
तिलककुसुमैर्गुरुः परिपीतकैः
प्रीतैः पीडा न स्यादुच्चाद्यदि
पतति विशति यदि वा भुजङ्गविजृम्भितम् ।।४७।।

माया—रक्तपुष्प, सुगन्ध द्रव्य, समालम्भन (रक्तचन्दन आदि), ताम्बा, सोना और बैल से सूर्य तथा मंगल का भक्तिभाव से पूजन करना चाहिए। धेनु, सफेद पुष्प, चाँदी और मिष्ठान्न से चन्द्र का; कामोद्दीपक द्रव्य (गन्ध, पुष्प, धूप और बलि) से शुक्र का; काले द्रव्यों से शनि का; मणि, चाँदी और तिल-पुष्प से बुध का एवं पीले द्रव्यों (पुष्प, सुगन्ध द्रव्य और उपहारों से बृहस्पति का भक्तिपूर्वक पूजन करना चाहिए। यदि ऊँचे स्थान से गिरे या क्रीड़ासक्त सर्पों में प्रवेश करे तो भी इस प्रकार के पूजन से परितुष्ट ग्रहों से पीड़ा नहीं ही होती है। यह भुजङ्गविजृम्भित छन्द है।।४७।।

उद्‌गता छन्द से ग्रहों के पूजन की प्रशंसा

शमयोद्गतामशुभदृष्टिमपि विबुधविप्रपूजया ।
शान्तिजपनियमदानदमैः सुजनाभिभाषणसमागमैस्तथा ।।४८।।

माया—देवता और ब्राह्मणों की पूजा से, शान्ति, मन्त्रजप, नियम, दान, जितेन्द्रियता आदि से तथा सुजनों से भाषण और उनके साथ सत्सङ्ग करने से अशुभ दृष्टिजन्य गोचरोक्त सकल दोषों का नाश समझना चाहिये। यह उद्‌गता छन्द है।।४८।।

सूर्य, मङ्गल, चन्द्र और शनि का फल प्रदान समय का कथन

रविभौमौ पूर्वार्धे शशिसौरी कथयतोऽन्त्यगौ राशेः ।
सदसल्लक्षणमार्यागीत्युपगीत्योर्यथासङ्ख्यम् ।।४९।।

माया—सूर्य, मंगल राशि के पूर्वार्ध में एवं चन्द्र और शनि राशि के अन्त में शुभाशुभ फल करते हैं। जिस छन्द में आर्या के पूर्वार्ध सम दोनों अर्ध हो, उसको गीति और जिसका उत्तरार्ध सम दोनों अर्ध हो, उसको उपगीति छन्द कहते हैं। यह गीति और उपगीति का लक्षण है।।४९।।

उपगीति आर्या छन्द से बुध फल प्राप्ति का समय कथन

आदौ यादृक् सौम्यः पश्चादपि तादृशो भवति ।
उपगीतेर्मात्राणां गणवत् सत्सम्प्रयोगो वा ।।५०।।

माया—उपगीति की मात्राओं के गण की तरह या साधुओं के समागम की तरह बुध राशि के आदि और अन्त में समान फल करता है। अर्थात् जिस प्रकार उपगीति छन्द में दोनों अर्ध तुल्य लक्षण लक्षित होते हैं तथा जैसे साधुओं का समागम सदा

एक-सा रहता है, उसी प्रकार बुध राशि के आदि और अन्त में तुल्य फल होता है। यह उपगीति छन्द है॥५०॥

आर्या लक्षण ज्ञानार्थ गुरु गोचर फल का कथन

आर्याणामपि कुरुते विनाशमन्तर्गुरुर्विषमसंस्थः।
गण इव षष्ठे दृष्टः स सर्वलघुतां जनं नयति॥५१॥

माया—जैसे विषम गण में स्थित अन्तर्गुरु वाला (मध्य गुरु वाला = जगण) आर्या छन्द का और विषम स्थित (अप्रसन्न) गण (देवताविशेष) उत्तम पुरुषों का भी नाश करता है, वैसे ही विषम स्थित गुरु राशि के मध्य भाग में उत्तम पुरुषों का भी नाश करता है तथा जिस प्रकार आर्या छन्द के षष्ठ गण में स्थित जगण सर्वलघुत्व (चारो लघुता) को प्राप्त होता है, उसी प्रकार षष्ठ राशिस्थ गुरु जन की सर्वलघुत्व (सम्पूर्णता से अहं रहित) करता है। यह आर्या छन्द है॥५१॥

शुभाशुभ ग्रहों की पारस्परिक दृष्टि से गोचर फल का निष्फलता का कथन

अशुभनिरीक्षितः शुभफलो बलिना बलवा-
नशुभफलप्रदश्च शुभदृग्विषयोपगतः।
अशुभशुभावपि स्वफलयोर्व्रजतः समता-
मिदमपि गीतकं च खलु नर्कुटकं च यथा॥५२॥

माया—जिस तरह संस्कृत में नर्कुटक और प्राकृत में गीतक—ये दोनों छन्द समान प्रस्तार वाले होते हैं, उसी तरह बली शुभ फल देने वाला ग्रह बली अशुभ फल देने वाले ग्रह से और बली अशुभ फल देने वाला ग्रह बली शुभ फल देने वाले ग्रह से दृष्ट होने पर अपने-अपने शुभ और अशुभ फलों की समता के कारण न शुभ न अशुभ; अपितु मध्यम फल करने वाले होते हैं। यह नर्कुटक छन्द है॥५२॥

दुर्बल ग्रहों की निष्फलता का विलास छन्द से कथन

नीचेऽरिभेऽस्ते चारिदृष्टस्य सर्वं वृथा यत्परिकीर्तितम्।
पुरतोऽन्धस्येव कामिन्याः सविलासकटाक्षनिरीक्षणम्॥५३॥

माया—जिस तरह अन्धे के आगे कामयुक्ता स्त्री का विलास और कटाक्ष के साथ देखना व्यर्थ होता है, उसी तरह नीच राशिगत, शत्रु राशिगत, अस्त और शत्रु ग्रह से दृष्ट ग्रह के जितने भी शुभ फल कहे गये हैं, वे सभी निष्फल होते हैं अर्थात् अशुभ फल की वृद्धि होती है। यह विलास छन्द है॥५३॥

आर्यागीति छन्द से ग्रहों के शुभाशुभ फल कथन

सूर्यसुतोऽर्कफलसमश्चन्द्रसुतश्छन्दतः समनुयाति यथा।
स्कन्धकमार्यागीतिर्वैतालीयं च मागधी गाथाऽऽर्याम्॥५४॥

भाषा—सूर्य के समान शनि का फल होता है तथा जिस प्रकार संस्कृत में आर्या गीति, प्राकृत में स्कन्धक के, संस्कृत में वैतालीय, प्राकृत में मागधी के और संस्कृत में आर्या, प्राकृत में गाथा का अनुसरण करती है, उसी प्रकार बुध छन्द (परचित्त-ग्रहण) से फल करता है अर्थात् शुभ ग्रह से युत शुभ और पाप से युत पाप फल करने वाला होता है॥५४॥

अस्त शनि का अत्यन्त अशुभ फलों का पथ्या छन्द से कथन

सौरोऽर्करश्मियोगात् सविकारो लब्धवृद्धिरधिकतरम्।
पित्तवदाचरति नृणां पथ्यकृतां न तु तथाऽऽर्याणाम् ॥५५॥

भाषा—जैसे सूर्य के किरण संयोग से पित्त का प्रकोप बढ़ जाता है, वैसे सूर्य की किरणों के योग से अस्तगत शनि विकारयुत होकर अशुभ फल देने में अधिक प्रवृत्त रहता है और मनुष्यों को तापित करता है; किन्तु पथ्य भोजन करने वाले आर्यों को पूर्वोक्त प्रकार अशुभ फल नहीं देता है। यह पथ्या छन्द है॥५५॥

ग्रहों के साथ चन्द्र के विशेष फल का वक्त्र छन्द से कथन

यादृशेन ग्रहेणेन्दुर्युक्तस्तादृग्भवेत् सोऽपि।
मनोवृत्तिसमायोगाद्विकार इव वक्त्रस्य ॥५६॥

भाषा—जैसे मनोवृत्ति के संयोग से मुख का विकार मनोवृत्ति के समान होता है, अर्थात् प्रसन्न मन रहने से प्रसन्न मुख और दुःखित मन रहने से उदास मुख रहता है, वैसे जैसे शुभाशुभ ग्रह से युक्त चन्द्र होता है, वैसे शुभाशुभ फल करता है। अर्थात् शुभ ग्रह से युत चन्द्र शुभ फल और पापग्रह से युत चन्द्र पापफल करता है। यह वक्त्र छन्द है॥५६॥

दुष्टस्थानस्थ ग्रह से मनुष्यों की हीनता का श्लोक छन्द से कथन

पञ्चमं लघु सर्वेषु सप्तमं द्विचतुर्थयोः।
यद्वच्छ्लोकाक्षरं तद्वल्लघुतां याति दुःस्थितैः ॥५७॥

भाषा—जैसे श्लोक के चारो पादों में पञ्चम तथा द्वितीय और चतुर्थ पाद में सप्तम अक्षर लघु होता है, वैसे प्रतिकूल ग्रहों से मनुष्य लघुता अर्थात् हीनता को प्राप्त करता है। यह श्लोक छन्द है॥५७॥

सुस्थित ग्रहों से मनुष्यों की सुस्थितता का अनुष्टुप छन्द से कथन

प्रकृत्यापि लघुर्यश्च वृत्तबाह्ये व्यवस्थितः।
स याति गुरुतां लोके यदा स्युः सुस्थिता ग्रहाः ॥५८॥

भाषा—जैसी प्रकृति लघु अक्षर भी वृत्तबाह्य (पादान्त) में व्यवस्थित होने से गुरु हो जाता है, वैसे जो पुरुष प्रकृति से लघु (दूषित कुल में उत्पन्न) और वृत्तबाह्य

(बाह्येन्द्रिय) में व्यवस्थित है अर्थात् दु:शील है, वह भी अनुकूल ग्रह आने पर लोगों से पूजित होता है। यह अनुष्टुप् छन्द है॥५८॥

कुस्थित ग्रहों के समय आरम्भ हुआ कर्म अपने कर्ता के घातक का वैतालीय छन्द से कथन

प्रारब्धमसुस्थितैर्ग्रहैर्यत् कर्मात्मविवृद्धये बुधैः।
विनिहन्ति तदेव कर्म तान् वैतालीयमिवायथाकृतम्॥५९॥

भाषा—जैसे अविधान से वेताल-सिद्धि के लिये किया हुआ कर्म साधकों का ही नाश करता है, वैसे पण्डित लोग कुस्थित ग्रहों के आने पर आत्मवृद्धि के लिये जिस कर्म का प्रारम्भ करते हैं, वह कर्म ही उनका नाश करता है। यह वैतालीय छन्द है॥५९॥

सुस्थित ग्रहों के समय स्वल्प प्रयत्न से कार्य सिद्धि का औपच्छन्दसिक छन्द से कथन

सौस्थित्यमवेक्ष्य यो ग्रहेभ्यः काले प्रक्रमणं करोति राजा।
अणुनापि स पौरुषेण वृत्तस्यौपच्छन्दसिकस्य याति पारम्॥६०॥

भाषा—सुस्थित ग्रहों को देखकर जो राजा शत्रु के ऊपर आक्रमण करता है, वह अल्प सैन्य से युत होने पर भी औपछन्दसिक वृत्त (वेदोक्त क्रिया) के पार जाता है। यह औपच्छन्दसिक छन्द है॥६०॥

रविवार विहित कर्म का दण्डक छन्द के प्रथम पाद से कथन

उपचयभवनोपयातस्य भानोर्दिने कारयेद्धे-
मताम्राश्वकाष्ठास्थिचर्मोर्णिकाद्रिद्रुमत्वग्-
नखव्यालचौरायुधीयाटवीक्रूरराजोपसेवा-
भिषेकौषधक्षौमपण्यादिगोपालकान्तार-
वैद्याश्मकूटावदाताभिविख्यातशूराहवश्लाघ्य-
याय्यग्निकर्माणि सिद्ध्यन्ति लग्नस्थिते वा रवौ।

भाषा—जन्मराशि से उपचय (३, ६, १०, ११) भाव या लग्न में स्थित सूर्य हो और सूर्यवार हो तो सोना, ताँबा, घोड़ा, लकड़ी, हड्डी, चमड़ा, ऊनी वस्त्र, पर्वत, वृक्ष, त्वचा, शुक्ति, सर्प, चोर, खड्ग-सम्बन्धी, वन, क्रूर, राजा का आराधन, राजा आदि का अभिषेक, औषध, क्षौम, क्रय-विक्रय आदि, वन में उत्पन्न हुये द्रव्यों के ग्रहण-पोषण आदि, गोपाल, मरुभूमि, वैद्य, पत्थर, दम्भ, सत्कुलोत्पन्न, कीर्तियुक्त, शूर, युद्ध में कथनीय, गमनशील, अग्निकर्म आदि सब वस्तु सम्बन्धी कर्मों की सिद्धि होती है।

चन्द्रवारविहित कर्म का दण्डक छन्द के द्वितीय पाद से कथन

शिशिरकिरणवासरे तस्य वाप्युद्गमे केन्द्र-
संस्थेऽथवा भूषणं शङ्खमुक्ताब्जरूप्याम्बु-
यज्ञेक्षुभोज्याङ्गनाक्षीरसुस्निग्धवृक्षक्षुपानूप-
धान्यद्रवद्रव्यविप्राध्वगीतक्रियाशृङ्गिकृष्यादि-
सेनाधिपाक्रन्दभूपालसौभाग्यनक्तञ्चर-
श्लैष्मिकद्रव्यमातुल्यपुष्पाम्बरारम्भसिद्धिर्भवेत् ।।

भाषा—चन्द्रवार में अथवा कर्क लग्न या केन्द्रस्थित चन्द्र हो तो भूषण, शङ्ख, मोती, कमल, चाँदी, जल, यज्ञ, इक्षु (ईख = गन्ना), भोज्य, स्त्री, दूध, सुस्निग्ध वृक्ष (अखरोट आदि) तृण, जलप्राय देश, धान्य, अवलेह, ब्राह्मण, मार्ग, गानकर्म, शृङ्गी (हरिण आदि), कृषि आदि, सेनाधिप, पार्ष्णिग्राह (पार्श्वरक्षक), राजा, जनप्रियता, रात्रिचर, कफ करने वाले द्रव्य, मामा का हित, फूल, वस्त्र आदि वस्तु सम्बन्धी कर्मों की सिद्धि होती है।

मङ्गलवार विहित कर्म का दण्डक छन्द के तीसरे पाद से कथन

क्षितितनयदिने प्रसिद्ध्यन्ति धात्वाकरादीनि
सर्वाणि कार्याणि चामीकराग्निप्रवालायुध-
क्रौर्यचौर्याभिघाताटवीदुर्गसेनाधिकारास्तथा
रक्तपुष्पद्रुमा रक्तमन्यच्च तिक्तं कटुद्रव्यकूटा-
हिपाशार्जितस्वाः कुमारा भिषक्छाक्यभिक्षु-
क्षपावृत्तिकोशेशशाठ्यानि सिद्ध्यन्ति दम्भास्तथा ।

भाषा—मंगलवार में धातुओं के आकर आदि से सम्बन्धित समस्त कार्य, सोना, प्रवाल, शस्त्र, क्रूरता, चोरी, दूसरे को उपद्रव, वन, दुर्ग, सेनापति, रक्तपुष्प वाले वृक्ष, रक्त वस्तु, तिक्त (निम्ब आदि), कटु द्रव्य (मरीचादि), कूट, सर्प के बन्धन से उपार्जित धन वाले, कुमार, वैद्य, शाक्यभिक्षु (संन्यासी), रात्रि में कार्य करने वाले, खजानची, शठता, दम्भ आदि इन सब वस्तु सम्बन्धी कर्मों की सिद्धि होती है।

बुधवार विहित कर्म का दण्डक छन्द के चौथे पाद से कथन

हरितमणिमहीसुगन्धीनि वस्त्राणि साधारणं
नाटकं शास्त्रविज्ञानकाव्यानि सर्वाः कलायुक्तयो
मन्त्रधातुक्रियावादनैपुण्यपुण्यव्रतायोगदूता-
स्तथाऽऽयुष्यमायानृतस्नानह्रस्वाणि दीर्घाणि

मध्यानि च च्छन्दतश्चण्डवृष्टिप्रयातानुकारीणि
कार्याणि सिद्ध्यन्ति सौम्यस्य लग्नेऽह्नि वा ।।६१।।

माया—बुध के लग्न या दिन में हरित मणि, पृथ्वी, सुगन्ध द्रव्य, साधारण कार्य, नाटक, शास्त्र, विज्ञान, काव्य, सभी कलायें, द्रव्यों का संयोग, मन्त्रक्रिया, धातुक्रिया, किसी के साथ विवाद, निपुणता, पुण्य, व्रतग्रहण, दूत, आयु के लिये हित कार्य, माया, मिथ्या, स्नान (पुण्यस्नान आदि), शीघ्र होने वाला कार्य, देर में होने वाला कार्य, मध्य समय में होने वाला कार्य, परचित्त-ग्रहणपूर्वक प्रचण्ड वृद्धि में पदन्यास के अनुकरण करने वाला कार्य अर्थात् कोई ह्रस्व, कोई दीर्घ और कोई मध्यम कार्य आदि इन सब वस्तु सम्बन्धी कर्म की सिद्धि होती है।।६१।।

बृहस्पतिवार विहित कर्म का वर्णक दण्डक छन्द से कथन

सुरगुरुदिवसे कनकं रजतं तुरगाः
करिणो वृषभा भिषगौषधयः ।
द्विजपितृसुरकार्यपुरःस्थितधर्म-
निवारणचामरभूषणभूपतयः ।।
विबुधभवनधर्मसमाश्रयमङ्गल-
शास्त्रमनोज्ञबलप्रदसत्यगिरः ।
व्रतहवनधनानि च सिद्धिकराणि तथा
रुचिराणि च वर्णकदण्डकवत् ।।६२।।

माया—बृहस्पति दिन में सोना, चाँदी; घोड़ा, हाथी, बैल, वैद्य, औषधि, ब्राह्मणों का तर्पण, पितृश्राद्ध, देवताओं का कार्य, पुरःस्थित (पदाति), छत्र, चामर, भूषण, राजा, देवगृह, देवप्रतिष्ठा, गृहप्रतिष्ठा, धर्माश्रय, मंगल, शास्त्र, सुन्दर, बलप्रद, सत्य वचन, व्रत (चान्द्रायण आदि , हवन, धन आदि सभी वस्तु सम्बन्धी कार्य वर्णक (सर्प आदि) से युत मनोहर दण्ड की तरह सिद्ध और सुन्दर होते हैं। यह वर्णकदण्डक छन्द है।।६२।।

शुक्रवार विहित कर्म का समुद्रदण्डक छन्द के पूर्वार्ध से कथन

भृगुसुतदिवसे च चित्रवस्त्रवृष्यवेश्य-
कामिनीविलासहासयौवनोपभोगरम्यभूयमः ।
स्फटिकरजतमन्मथोपचारवाहनेक्षुशारद-
प्रकारगोवणिक्कृषीवलौषधाम्बुजानि च ।

माया—शुक्रवार में चित्र कर्म, वस्त्र, वीर्य-वृद्धि के लिये प्रयोग, वेश्या, कामासक्त स्त्री, विलास, उपहास, यौवनोपभोग (स्त्रीप्रसङ्ग आदि), चाँदी, कामदेव का

उपचार, वाहन, इक्षु (ईख = गन्ना), शारदीय धान्य, वाणिज्य, खेती, औषध, जलज (कमल आदि) आदि-आदि वस्तु सम्बन्धी कार्य सिद्ध होते हैं।

शनिवार विहित कर्म का समुद्रदण्डक छन्द के उत्तरार्ध से कथन

सवितृसुतदिने च कारयेन्महिष्यजोष्टकृष्ण-
लोहदासवृद्धनीचकर्मपक्षिचोरपाशिकान् ।
च्युतविनयविशीर्णभाण्डहस्त्यपेक्षविघ्नकारणानि
चान्यथा न साधयेत् समुद्रगोऽप्यपां कणम् ।।६३।।

भाषा—शनिवार में भैंस, छाग, ऊँट, कृष्णलोह (शस्त्र, आयुध आदि), भृत्य, वृद्ध, नीच, पक्षी, चोर, बन्धन आदि जानने वाले, नम्रता से रहित, फूटा भाण्ड, हस्त्यपेक्षा (हाथी के ग्रहणादि), विघ्न के कारण इनके आश्रित समस्त कार्य सिद्ध होते हैं। इन पूर्वोक्त नियमों का त्याग कर समुद्र में जाने से भी जलबिन्दु की प्राप्ति नहीं होती है। यह समुद्रदण्डक छन्द है।।६३।।

अध्याय-प्रशंसार्थ विपुला आर्या छन्द से कथन

विपुलामपि बुद्ध्वा छन्दोविचितिं भवति कार्यमेतावत् ।
श्रुतिसुखदवृत्तसंग्रहमिममाह वराहमिहिरोऽतः ।।६४।।

भाषा—बहुत विस्तीर्ण छन्दों के प्रस्तारों को जानकर भी इतना ही कार्य होता है। अतः वराहमिहिर आचार्य ने कर्णसुखजनक यह छन्दसंग्रह कहा है। यह विपुला आर्या छन्द है।।६४।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां भाषा नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां ग्रहगोचरविचारो नाम चतुरधिकशततमोऽध्यायः ।।१०४।।

□□□

अथ पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः-१०५

रूपसत्रनिरूपणम्

सर्वप्रथम कालपुरुष के विभिन्नाङ्गों में नक्षत्रों की स्थिति का कथन

पादौ मूलं जङ्घे च रोहिणी जानुनी तथाश्विन्यः।
ऊरू चाषाढाद्वयमथ गुह्यं फल्गुनीद्वितयम् ।।१।।
कटिरपि च कृत्तिका पार्श्वयोश्च यमला भवन्ति भद्रपदाः।
कुक्षिस्था रेवत्यो विज्ञेयमुरोऽनुराधा च ।।२।।
पृष्ठं विद्धि धनिष्ठां भुजौ विशाखा स्मृतौ करौ हस्तः।
अङ्गुल्यश्च पुनर्वसुराश्लेषासंज्ञिताश्च नखाः ।।३।।
ग्रीवा ज्येष्ठा श्रवणं श्रवणौ पुष्यो मुखं द्विजाः स्वातिः।
हसितं शतभिषगथ नासिका मघा मृगशिरो नेत्रे ।।४।।
चित्रा ललाटसंस्था शिरो भरण्यः शिरोरुहाश्चार्द्रा।
नक्षत्रपुरुषकोऽयं कर्तव्यो रूपमिच्छद्भिः ।।५।।

भाषा—नक्षत्रपुरुष के दोनों पैरों में मूल, दोनों जङ्घाओं में रोहिणी, दोनों जानुओं में अश्विनी, दोनों ऊरुओं में पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा, गुह्य (लिङ्ग और गुदा) में पूर्वफाल्गुनी और उत्तरफाल्गुनी, कमर में कृत्तिका, दोनों पार्श्व में पूर्वभाद्रपदा और उत्तरभाद्रपदा, पेट में रेवती, छाती में अनुराधा, पीठ में धनिष्ठा, दोनों भुजाओं में विशाखा, दोनों हाथों में हस्त, अंगुलियों में पुनर्वसु, नखों में श्लेषा, ग्रीवा में ज्येष्ठा, दोनों कानों में श्रवण, मुख में पुष्य, दाँतों में स्वाति, हास्य में शतभिषा, नासिका में मघा, दोनों आँखों में मृगशिरा, ललाट में चित्रा, शिर में भरणी तथा केशों में आर्द्रा को स्थापित किया जाना चाहिये। सुन्दर रूप की इच्छा करने वाले पुरुषों को यह नक्षत्रचक्र बनाना चाहिये।।१-५।।

रूपसत्र संज्ञक व्रत को आरम्भ करने का काल कथन

चैत्रस्य बहुलपक्षे ह्यष्टम्यां मूलसंयुते चन्द्रे।
ह्युपवासः कर्तव्यो विष्णुं सम्पूज्य धिष्ण्यं च ।।६।।

भाषा—चैत्र शुक्ल अष्टमी में यदि मूल नक्षत्र और चन्द्रवार हो तो उस दिन विष्णु और नक्षत्र की पूजा कर प्रथम उपवास शुरु करना चाहिए और जैसे-जैसे रोहिणी आदि आता जाय तत्तदनुसार आर्द्रा तक उपवास करना चाहिये।।६।।

व्रत समापन पश्चात् के कर्त्तव्य

दद्याद् व्रते समाप्ते घृतपूर्णं भाजनं सुवर्णयुतम् ।
विप्राय कालविदुषे सरत्नवस्त्रं स्वशक्त्या च ।।७।।

भाषा—व्रत समाप्त होने के बाद अपनी शक्ति के अनुसार कालज्ञ ब्राह्मण के लिये सुवर्ण, रत्न और वस्त्रों के साथ घृत से पूर्ण पात्र दान देना चाहिये।।७।।

तदनन्तर के कर्त्तव्य

अन्नैः क्षीरघृतोत्कटैः सह गुडैर्विप्रान् समभ्यर्चयेद्
दद्यात् तेषु सुवर्णवस्त्ररजतं लावण्यमिच्छन्नरः ।
पादर्क्षात् प्रभृति क्रमादुपवसन्नङ्गर्क्षनामस्वपि
कुर्यात् केशवपूजनं स्वविधिना धिष्ण्यस्य पूजां तथा ।।८।।

भाषा—लावण्य की इच्छा करने वाला मनुष्य को दूध, घृत और गुड़ से मिश्रित अन्नों से ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए तथा उन ब्राह्मणों को सोना, वस्त्र और चाँदी अर्पण करें। पैर के नक्षत्र से आरम्भ करके उपवास करता हुआ विष्णु और अंग के नक्षत्रों की पूजा करनी चाहिए।।८।।

इस व्रत को करने वाला मनुष्य अपने अन्य जन्म में कैसा होगा का कथन

प्रलम्बबाहुः पृथुपीनवक्षाः क्षपाकरास्यः सितचारुदन्तः ।
गजेन्द्रगामी कमलायताक्षः स्त्रीचित्तहारी स्मरतुल्यमूर्तिः ।।९।।

भाषा—पूर्वोक्त पूजा करने से मनुष्य लम्बी भुजाओं से युत, विस्तीर्ण और पुष्ट छाती वाला, चन्द्र के समान मुख वाला, सफेद-सुन्दर दाँतों से युत, गजेन्द्र के समान गति वाला, कमल के समान विस्तीर्ण नेत्र वाला, स्त्री के चित्त को हरने वाला और कामदेव के समान स्वरूप वाला होता है।।९।।

उपरोक्त व्रती स्त्री की दशा कथन

शरदमलपूर्णचन्द्रद्युतिसदृशमुखी सरोजदलनेत्रा ।
रुचिरदशना सुकर्णा भ्रमरोदरसन्निभैः केशैः ।।१०।।
पुंस्कोकिलसमवाणी ताम्रोष्ठी पद्मपत्रकरचरणा ।
स्तनभारानतमध्या प्रदक्षिणावर्तया नाभ्या ।।११।।
कदलीकाण्डनिभोरु सुश्रोणी वरकुकुन्दरा सुभगा ।
सुश्लिष्टाङ्गुलिपादा भवति प्रमदा मनुष्यश्च ।।१२।।

भाषा—जब पूर्वोक्त व्रत को स्त्री करे तो शारदीय चन्द्र के समान मुखकान्ति, कमलदल के समान नेत्र, सुन्दर दाँत, सुन्दर कान, भ्रमरोदर के समान केश, पुंस्कोकिल के समान वाणी, ताम्र वर्ण के समान ओंठ, कमल के समान हाथ और

पाँव, स्तनों के भार से नत मध्य भाग, दक्षिणावर्त नाभियों से युत, केले के खम्भे के समान ऊरु, सुन्दर नितम्बकूप, स्वामिप्रिया और मिली हुई अँगुलियों से युत पैरों वाली होती है। इसी तरह इस व्रत को करने से पुरुष भी होता है॥१०-१२॥

रूपसत्र व्रती की प्रशंसा

यावन्नक्षत्रमाला विचरति गगने भूषयन्तीह भासा
तावन्नक्षत्रभूतो विचरति सह तैर्ब्रह्मणोऽह्नोऽवशेषम्।
कल्पादौ चक्रवर्ती भवति हि मतिमांस्तत्क्षयाच्चापि भूयः
संसारे जायमानो भवति नरपतिर्ब्राह्मणो वा धनाढ्यः॥१३॥

माया—इस लोक में अपनी कान्ति से शोभा उत्पन्न करती हुई नक्षत्रमाला जब तक आकाश में रहती है, तब तक स्त्री या पुरुष नक्षत्ररूप होकर नक्षत्रों के समान कल्पान्त तक विचरण करने वाला होता है तथा वह पुरुष दूसरे कल्प के आदि में बुद्धिमान चक्रवर्ती राजा होता है एवं चक्रवर्त्तित्व नष्ट होने के अनन्तर संसार में जन्म लेकर राजा या धनाढ्य ब्राह्मण होता है॥१३॥

मार्गशीर्ष आदि द्वादश मासों के नाम कथन

मृगशीर्षाद्याः केशवनारायणमाधवाः सगोविन्दाः।
विष्णुमधुसूदनाख्यौ त्रिविक्रमो वामनश्चैव॥१४॥
श्रीधरनामा तस्मात् सहृषीकेशश्च पद्मनाभश्च।
दामोदर इत्येते मासाः प्रोक्ता यथासङ्ख्यम्॥१५॥

माया—केशव, नारायण, माधव, गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर आदि क्रम से मार्गशीर्ष आदि बारह मासों के नाम हैं। जैसे कि मार्गशीर्ष का केशव, पौष का नारायण इत्यादि॥१४-१५॥

द्वादशी की प्रशंसा

माससनामसमुपोषितो नरो द्वादशीषु विधिवत् प्रकीर्तयन्।
केशवं समभिपूज्य तत्पदं याति यत्र नहि जन्मजं भयम्॥१६॥

माया—मनुष्य विधिपूर्वक द्वादशी में मास के नाम के साथ व्रत रखकर केशव, नारायण आदि की पूजा के अनन्तर उनके नाम का संकीर्तन करता हुआ उनके पद को प्राप्त होता है, जहाँ पर पुनर्जन्म का ही भय नहीं॥१६॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमाग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां रूपसत्रनिरूपणं नाम पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः॥१०५॥

□□□

अथ षडधिकशततमोऽध्यायः-१०६

उपसंहार कथनम्

सर्वप्रथमा शास्त्र तथा बुद्धि का महत्त्व कथन

ज्योतिःशास्त्रसमुद्रं प्रमथ्य मतिमन्दराद्रिणाऽथ मया।
लोकस्यालोककरः शास्त्रशशाङ्कः समुत्क्षिप्तः ॥१॥

माया—मैंने (वराहमिहिर ने) बुद्धिरूप मन्दराचल के द्वारा ज्यौतिष शास्त्ररूप समुद्र को उत्तम प्रकार से मन्थन कर संसार में प्रकाश फैलाने वाले शास्त्ररूप चन्द्र निकाला गया है॥१॥

पूर्वाचार्यग्रन्था नोत्सृष्टाः कुर्वता मया शास्त्रम्।
तानवलोक्येदं च प्रयतध्वं कामतः सुजनाः ॥२॥

माया—इस शास्त्र को बनाते हुये मैंने पूर्वाचार्यकृत ग्रन्थों के आशयों को नहीं छोड़ा है। अतः उन पूर्वाचार्यकृत ग्रन्थों को और इस शास्त्र को यत्नपूर्वक देखकर पण्डितों को प्रयत्न करना चाहिये अर्थात् जो अच्छा हो, उसको ग्रहण करना चाहिये॥२॥

साधु और असाधु की चेष्टा भेद कथन

अथवा कृशमपि सुजनः प्रथयति दोषार्णवाद् गुणं दृष्ट्वा।
नीचस्तद्विपरीतः प्रकृतिरियं साध्वसाधूनाम् ॥३॥

माया—अथवा सज्जन मनुष्य दोषरूप समुद्र में थोड़ा-सा भी गुण देखकर उसका विस्तार करते हैं; परन्तु नीच पुरुष इससे विपरीत स्वभाव वाला होता है अर्थात् गुणों को छिपाता है और स्वल्प दोष को भी विस्तरित करता है। यही साधु (सज्जन) और असाधु (दुष्ट) का लक्षण है॥३॥

नवनीतकाव्य असज्ज्नों को भी दिखाने का परामर्श कथन

दुर्जनहुताशतप्तं काव्यसुवर्णं विशुद्धिमायाति।
श्रावयितव्यं तस्माद् दुष्टजनस्य प्रयत्नेन ॥४॥

माया—काव्यरूप सुवर्ण दुर्जनरूप अग्नि से तपाये जाने पर विशुद्धि को प्राप्त होता है। इसलिये दुर्जन मनुष्य को यत्नपूर्वक शास्त्र चाहिये॥४॥

विद्वानों की प्रार्थना का कथन

ग्रन्थस्य यत् प्रचरतोऽस्य विनाशमेति
लेख्याद् बहुश्रुतमुखाधिगमक्रमेण।

यद्वा मया कुकृतमल्पमिहाकृतं वा
कार्यं तदत्र विदुषा परिहृत्य रागम् ।।५।।

माया—प्रचारोन्मुख इस ग्रन्थ में लेखक दोष से जो अशुद्धियाँ रह गई हों या जो हमसे आगम-विरुद्ध किया गया हो और जो नहीं किया गया हो, उन सब मत्सरता को बहिष्कृत कर बहुश्रुत मनुष्यों के मुख से सुन कर पण्डितों को यहाँ पर ठीक कर लेना चाहिये।।५।।

पूर्वाचार्यों के निमित्त अभिवादन योग्य कथन

दिनकरमुनिगुरुचरणप्रणिपातकृतप्रसादमतिनेदम् ।
शास्त्रमुपसङ्गृहीतं नमोऽस्तु पूर्वप्रणेतृभ्यः ।।६।।

माया—सूर्य, मुनिगण और गुरुजनों के चरणों में नमस्कारजन्य अनुग्रह से उत्पन्न बुद्धि के द्वारा इस ग्रन्थ का संग्रह मैंने किया है। अतः पूर्वाचार्यों के लिये मेरा नमस्कार है।।६।।

।। इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां उपसंहारकथनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः ।।१०६।।

□□□

अथ सप्ताधिकशततमोऽध्यायः-१०७

शास्त्रानुक्रणीविचारः

सर्वप्रथम अध्यायों का संकलन प्रदर्शनार्थ कथन

शास्त्रोपनयः पूर्वं सांवत्सरसूत्रमर्कचारश्च ।
शशिराहुभौमबुधगुरुसितमन्दशिखिग्रहाणां च ॥१॥

माया—सर्वप्रथम शास्त्रोपनय, तदनन्तर क्रम से सांवत्सरसूत्र, अर्कचार, चन्द्रचार, राहुचार, भौमचार, बुधचार, गुरुचार, शुक्रचार, शनिचार, केतुचार॥१॥

चारश्चागस्त्यमुनेः सप्तर्षीणां च कूर्मयोगश्च ।
नक्षत्राणां व्यूहो ग्रहभक्तिर्ग्रहविमर्दश्च ॥२॥

माया—अगस्त्यचार, सप्तर्षिचार, कूर्मविभाग, नक्षत्रव्यूह, ग्रहभक्तियोग, ग्रहयुद्ध॥२॥

ग्रहशशियोगः सम्यग्ग्रहवर्षफलं ग्रहाणां च ।
शृङ्गाटसंस्थितानां मेघानां गर्भलक्षणं चैव ॥३॥

माया—शशिग्रहसमागम, ग्रहवर्षफल, ग्रहशृङ्गाटक, मेघों के गर्भलक्षण॥३॥

धारणवर्षणरोहिणिवांयव्याषाढभद्रपदयोगाः ।
क्षणवृष्टिः कुसुमलताः सन्ध्याचिह्नं दिशां दाहः ॥४॥

माया—गर्भधारण, प्रवर्षण, रोहिणीयोग, स्वातियोग, आषाढ़ीयोग, वातचक्र, सद्योवर्षण, कुसुमलता, सन्ध्यालक्षण, दिग्दाहलक्षण॥४॥

भूकम्पोल्कापरिवेषलक्षणं शक्रचापखपुरं च ।
प्रतिसूर्यो निर्घातः सस्यद्रव्यार्घकाण्डं च ॥५॥

माया—भूकम्पलक्षण, उल्कालक्षण, परिवेषलक्षण, इन्द्रायुधलक्षण, गन्धर्वनगरलक्षण, प्रतिसूर्यलक्षण, निर्घातलक्षण, सस्यजातक, द्रव्यनिश्चय, अर्घकाण्ड॥५॥

इन्द्रध्वजनीराजनखञ्जनकोत्पातबर्हिचित्रं च ।
पुष्याभिषेकपट्टप्रमाणमसिलक्षणं वास्तु ॥६॥

माया—इन्द्रध्वजसम्पत्, नीराजनविधि, खञ्जनलक्षण, उत्पातलक्षण, मयूरचित्रक, पुष्यस्नान, पट्टलक्षण, खड्गलक्षण, वास्तुविद्या॥६॥

उदकार्गलमारामिकममरालयलक्षणं कुलिशलेपः ।
प्रतिमा वनप्रवेशः सुरभवनानां प्रतिष्ठा च ॥७॥

माया—उदकार्गल, वृक्षायुर्वेद, प्रासादलक्षण, वज्रलेप, प्रतिमालक्षण, वनप्रवेश, सुरभवन-प्रतिष्ठा॥७॥

चिह्नं गवामथ शुनां कुक्कुटकूर्माजपुरुषचिह्नं च।
पञ्चमनुष्यविभागः स्त्रीचिह्नं वस्त्रविच्छेदः ॥८॥

भाषा—गोलक्षण, श्वानलक्षण, कुक्कुटलक्षण, कूर्मलक्षण, छागलक्षण, पञ्चमहापुरुषलक्षण, स्त्रीलक्षण, वस्त्रविच्छेदलक्षण॥८॥

चामरदण्डपरीक्षा स्त्रीस्तोत्रं चापि सुभगकरणं च।
कान्दर्पिकानुलेपनपुंस्त्रीकाध्यायशयनविधिः ॥९॥

भाषा—चामरलक्षण, दण्डपरीक्षा, स्त्रीप्रशंसा, सौभाग्यकरण, कान्दर्पिक, गन्धयुक्ति, पुंस्त्रीसमागम, शयनविधि॥९॥

वज्रपरीक्षा मौक्तिकलक्षणमथ पद्मरागमरकतयोः।
दीपस्य लक्षणं दन्तधावनं शाकुनं मिश्रम् ॥१०॥

भाषा—वज्रपरीक्षा, मुक्तालक्षण, पद्मरागपरीक्षा, मरकतपरीक्षा, दीपलक्षण, दन्तकाष्ठलक्षण, शाकुनमिश्रफल॥१०॥

अन्तरचक्रं विरुतं श्वचेष्टितं विरुतमथ शिवायाश्च।
चरितं मृगाश्वकरिणां वायसविद्योत्तरं च ततः ॥११॥

भाषा—अन्तरचक्र, विरुत, श्वचक्र, शिवारुत, मृगचेष्टा, अश्वचेष्टा, वायसविद्या। यहाँ पर शिवारुताध्याय के अन्तर्गत श्वचेष्टित और गोचेष्टिताध्याय के अन्तर्गत उष्ट्री, व्याघ्री, सिंही आदि प्रधान सभी जीवों का लक्षण कहा गया है तथा मृग जातियों के मध्य में मार्जार, व्याघ्र, सूकर, ऊँट आदि जीवों के शृगाल के समान लक्षण कहा गया है॥११॥

पाको नक्षत्रगुणास्तिथिकरणगुणाः सधिष्ण्यजन्मगुणाः।
गोचरमथ ग्रहाणां कथितो नक्षत्रपुरुषश्च ॥१२॥

भाषा—पाकाध्याय, नक्षत्रगुण, तिथिगुण, करणगुण, नक्षत्रजातक, ग्रहगोचर, नक्षत्रपुरुष, रूपसत्र—ये अध्याय इस ग्रन्थ के अन्तर्गत हैं॥१२॥

अध्यायों और उनमें सन्निविष्ट श्लोकों की संख्या का कथन

शतमिदमध्यायानामनुपरिपाटिक्रमादनुक्रान्तम् ।
अत्र श्लोकसहस्राण्याबद्धान्यूनचत्वारि ॥१३॥

भाषा—यहाँ पर जिस क्रम से अध्याय पठित किये गये हैं, उसी क्रम से इस ग्रन्थ में एक सौ अध्याय बनाये गये हैं। इसमें एक सौ कम चार हजार श्लोक दिये गये हैं। वातचक्र, अङ्गविद्या, पिटकलक्षण, अश्वलक्षण, गजलक्षण आदि ये पाँच

अध्याय इस प्रमाण से अलग हैं। इन अध्यायों की पद्यसंख्या मिलाकर कुल चार हजार श्लोक होते हैं॥१३॥

उक्त्योपसंहार कथन

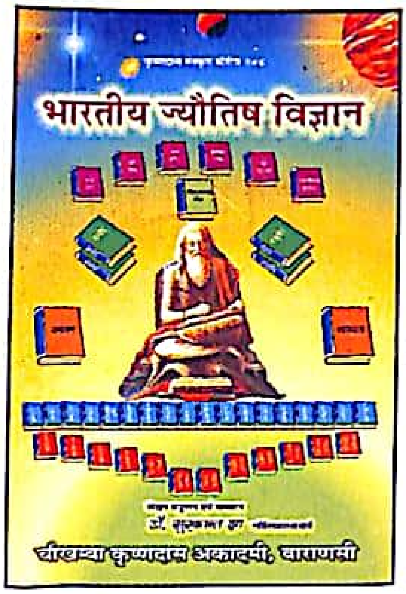
अत्रैवान्तर्भूतं परिशेषं निगदितं च यात्रायाम्।
बह्वाश्चर्यं जातकमुक्तं करणं च बहुचोद्यम् ॥१४॥

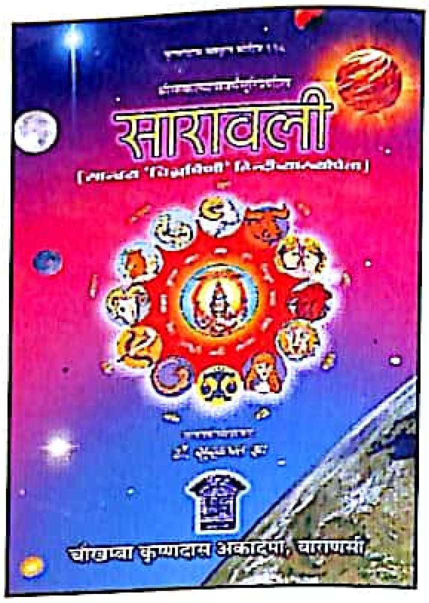
माया—इसी के अन्तर्भूत परिशेष सभी विषय 'यात्रा' नामक पुस्तक में सन्निवेशित किये गये हैं तथा मैंने बहुत आश्चर्य करने वाला जातक और बहुत प्रशस्त करण (पञ्चसिद्धान्तिका) ग्रन्थ लिखा है॥१४॥

॥ इति वराहमिहिराचार्यविरचितायां बृहत्संहितायां मिथिलाञ्चलस्थसहरसामण्डलदोरमा-ग्रामवास्तव्य डॉ. सुरकान्त झा संरचितायां माया नाम्नि हिन्दी व्याख्यायां शास्त्रानुक्रमणी विचारो नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥१०७॥

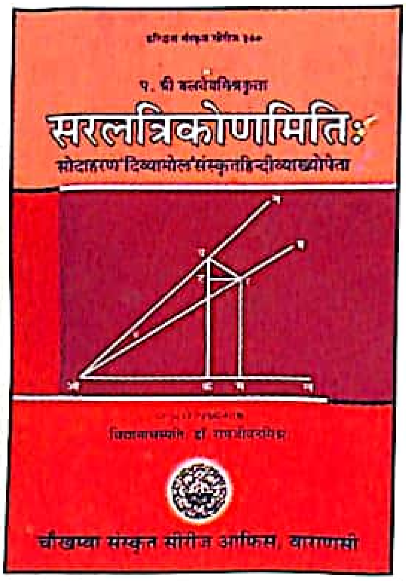
□□□

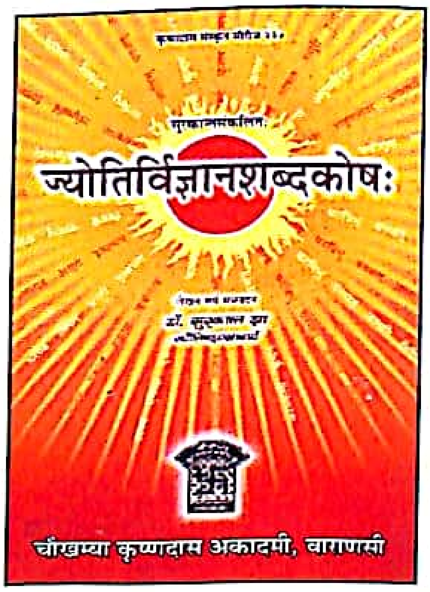
॥ समाप्त ॥



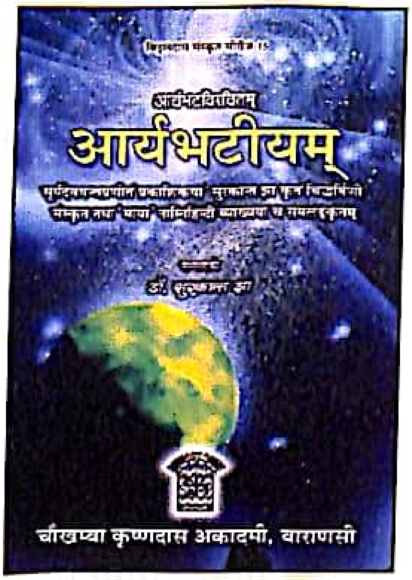


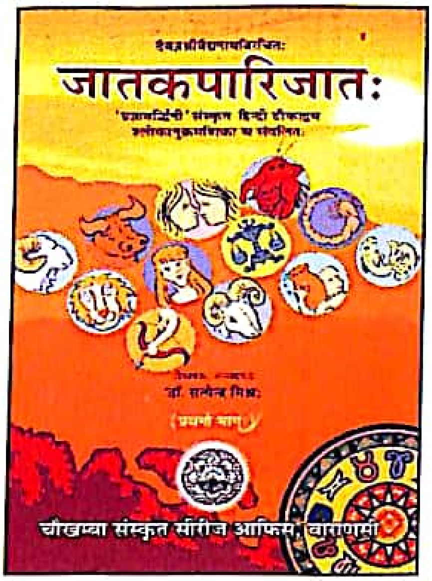


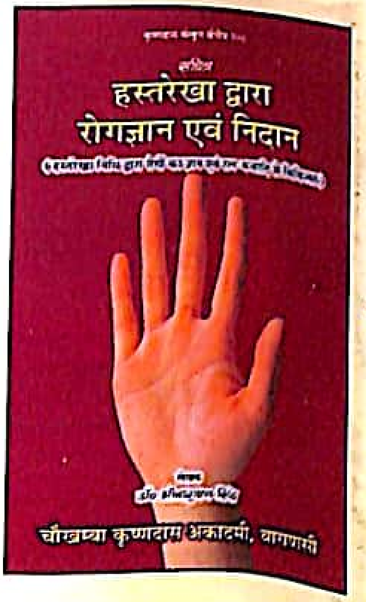












Also can be had from : **Chowkhamba Sanskrit Series Office,** Varanasi.

ISBN : 978-81-218-0273-3 Price : Rs. 300.00